गांधी हरीभाई देवकरण जैनग्रंथमाला ।

९

स्वर्गीय विद्वद्वर्य सदासुखजी काशलीवाल-द्वारा विरचित

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार वचनिका ।





जिसको

भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्थाके महामंत्री

पन्नालाल बाकलीवालने

शोलापुर-वासी गांधी हरीभाई देवकरण एण्ड सन्सकी प्रदत्त द्रव्यसे

अपने जैनसिद्धांतप्रकाशक पवित्र प्रेस

६ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्तामे

छपाकर प्रकाशित किया ।

श्रुतपञ्चमी, वी॰नि॰सं॰ २४५१] [न्योछावर ५॥) रुपया

प्रकाशक—

पन्नालाल बाकलीवाल

महामंत्री—भारतीयजैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्था

९ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्ता ।



मुद्रक—

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ,

जैनसिद्धांतप्रकाशक पवित्र प्रेस

९ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्ता ।





स्वर्गीय पंडित सदासुखजीकृत देशभाषामयवचनिकासहित

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार ।

इहां इस ग्रंथकी आदिमैं स्याद्वादविद्याके परमेश्वर परमनिर्ग्रंथ वीतरागी श्रीसमंतभद्रस्वामी जगतके भव्यानिके परमोपकारकेअर्थि रत्नत्रयका रक्षणको उपायरूप श्रीरत्नकरंड नाम श्रावकाचारकूं प्रगटकरनेके इच्छक विघ्नरहित शास्त्रकी समाप्तिरूप फलकूं इच्छाकरता इष्ट विशिष्ट देवताकूं नमस्कार करता सूत्र कहैं हैं—

सूत्र—

नमः श्रीवर्द्धमानाय निर्द्धूतकलिलात्मने । सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥ १ ॥

अर्थ—श्रीवर्धमान तीर्थंकरकेअर्थि हमारा नमस्कार होहु । श्रीकहिये अंतरंगस्वाधीन जो अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप अविनाशीक लक्ष्मी अर बाहिरंग इंद्रादिक देवनिकरि वंदनीक जो समवसरणादिक लक्ष्मी तिसकरि वृद्धिकूं प्राप्त होय सो श्रीवर्द्धमान कहिये है। अथवा अव—समंतात् कहिये समस्त प्रकारकरि ऋद्ध कहिये परमअतिशयकूं प्राप्त भया है केवलज्ञानादिक मान कहिये प्रमाण जाका सो वर्द्धमान कहिये । इहां "अवाप्योरल्लोपः" इस व्याकरण शास्त्रके सूत्रकरि अकारका लोप भया है । कैसाक है श्रीवर्द्धमान निर्द्धूतकलिल है आत्मा जाका, निर्द्धूत कहिये नष्ट किया है आत्मातैं कलिल कहिये ज्ञानावरणादि पापमल जानैं ऐसा है । बहुरि जाकी केवलज्ञानविद्या अलोकसहित समस्त तीनलोककूं दर्पणवत् आचरण करै है ।

भावार्थ—जाके केवलज्ञानविद्यारूप दर्पणविषै अलोकाकाशसहित षद्द्रव्यनिका समुदायरूप समस्त लोक अपना भूत भविष्यत् वर्तमान समस्त अनंतानंत पर्यायनिकरि सहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं ऐसा अर जाका आत्मा समस्त कर्ममलरहित भया ऐसा श्रीवर्द्धमान देवाधिदेव अंतिमतीर्थंकर ताकूं अपने आवरणकषायादिमलरहित सम्यग्ज्ञानप्रकाशके अर्थि नमस्कार किया । अब आगें धर्मके स्वरूपकूं कहनेकी प्रतिज्ञारूप सूत्र कहैं हैं:—

देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणं । संसारदुःखतः सत्त्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥

अर्थ—मैं जो ग्रंथकर्ता हूं सो इस ग्रंथविषै तिस धर्मकूं उपदेश करूं हूं जो प्राणीनिनै पंचपरिवर्तनरूप संसारके दुःखतैं निकाल स्वर्गमुक्तिके बाधारहित उत्तमसुखनिमैं धारण करै । बहुरि कैसेक धर्मकूं कहूं हूं जो समीचीन कहिये जामें वादीप्रतिवादीकरि तथा प्रत्यक्ष अनुमानादिककरि बाधा नहीं आवै, अर जो कर्मबंधनकूं नष्ट करनेवाला है तिस धर्मकूं कहूं हूं ।

भावार्थ—संसारमें धर्म ऐसा नाम तो समस्त लोक कहैं हैं परन्तु शब्दका अर्थ तो ऐसा जो नरकतिर्यंचादिक गतिमैं परिभ्रमणरूप दुःखतैं आत्माकूं छुडाय उत्तम आत्मीक अविनाशी अतींद्रिय मोक्षसुखमैं धारण करै सो धर्म है । सो ऐसा धर्म मोल नहीं आवै जो धन खरचि दानसन्मानादिकतैं ग्रहण करिये तथा किसीका दिया नहीं आवै, जो सेवा उपासनातैं राजी कर लिया जाय । तथा मंदिर, पर्वत, जल, अग्नि, देवमूर्ति, तीर्थादिकनमैं नहीं धरया है जो वहां जाय ल्याइये । तथा उपवास व्रत कायक्लेशादि तपमैं हू शरीरादि कृश करनेतैं हू नहीं मिलै । तथा देवाधिदेवके मंदिरनिमैं उपकरणदान मंडल पूजनादिकरि तथा गृह छोड वन श्मशानमें बसनेकरि तथा परमेश्वरके नामजाप्यादिककरि नहीं पाईये है । धर्म तो आत्माका स्वभाव है जो परमैं आत्मबुद्धि छोड अपना ज्ञाता दृष्टारूप स्वभावका श्रद्धान अनुभव तथा ज्ञायकस्वभावमैं ही प्रवर्तनरूप जो आचरण सो धर्म है । तथा उत्तमक्षमादि दशलक्षणरूप

अपना आत्माका परिणमन तथा रत्नत्रयरूप तथा जीवनकी दयारूप आत्माकी परणति होय तादि आत्मा आप ही धर्मरूप होयगा। परद्रव्यक्षेत्रकादिक तो निमित्तमात्र हैं । जिसकाल यह आत्मा रागादिरूप परणति छोड वीतरागरूप हुवा देखै है तादि मंदिर, प्रतिमा, तीर्थ, दान, तप, जप, समस्तही धर्मरूप है। अर अपना आत्मा उत्तम क्षमादि वीतरागरूप सम्यग्ज्ञानरूप नहीं होय तो वहां कहीं हू धर्म नहीं होय। शुभराग होय जादि पुन्यबंध होय है अर अशुभ राग द्वेष मोह होय तहां पापबंध होय है। जहां शुभअशुभरागद्वेषरहित श्रद्धानज्ञानस्वरूपाचरण धर्म है तहां बंधका अभाव है । बंधका अभाव भये ही उत्तम सुख होय है। अब ऐसा सुखका कारण जो आत्माका स्वरूप धर्म ताकूं प्रगट करनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः। यदीयप्रत्यनीकानि भवन्ति भवपद्धतिः ॥ ३ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इन तीनोंको धर्मके ईश्वर भगवान तीर्थंकर परमदेव धर्म कहैं हैं अर इनतैं प्रतिकूल जे मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र हैं ते संसारपरिभ्रमणकी परिपाटी होय हैं ।

भावार्थ—जो आपका अर अन्य द्रव्यनिका सत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान आचरण सो तो संसारपरिभ्रमणतैं छुडाय उत्तम सुखमैं धारण करनेवाला धर्म है । अर आपका अर अन्य द्रव्यनिका असत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान आचरण संसारके घोर अनंतदुःखनिमैं डबोवनेवाले हैं ऐसें भगवान वीतराग कहैं हैं। हम हमारी रुचिविरचित नहीं कहैं हैं। अब प्रथम ही सम्यग्दर्शनका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम्। त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥ ४ ॥

अर्थ—सत्यार्थ जे आप्त आगम तपोभृत तिनका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन होय है। आप्त तो समस्त पदार्थनिकूं जान तिनका स्वरूपकूं सत्यार्थ प्रगट करनेहारा है अर आगम आप्तका कह्या पदार्थनिकी शब्दद्वारकरि रचनारूप शास्त्र है अर आप्तका प्ररूप्या शास्त्रके अनुसार आचरणकूं आचरनेवाला तपो-

भूत कहिए गुरु है। इहां जो सांचा आप्त सांचा शास्त्र सांचा गुरुका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। अर असत्य आप्तआगमगुरुका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन नहीं है। सो सम्यग्दर्शन तीन मूढताकरि रहित है अर अपने अष्टअंगनिकरि सहित है अर अष्टमद जामैं नहीं हैं। भावार्थ—सत्यार्थ आप्त आगम गुरुका तीन मूढतारहित निःशंकितादि अष्टअंगसहित अष्टमदरहित श्रद्धान होय सो सम्यग्दर्शन है।

इहां कोऊ कहै जो सप्ततत्त्व नवपदार्थनिका श्रद्धानकूं आगममें सम्यग्दर्शन कह्या है सो इहां कैसैं नहीं कह्या? ताका समाधान,—जातैं निर्दोष बाधारहित आगमका उपदेश विना सप्ततत्वनिका श्रद्धान कैसे होय। अर निर्दोष आप्त विना सत्यार्थ आगम कैसैं प्रगट होय है तातैं तत्त्वनिका श्रद्धानकाहू मूल कारण सत्यार्थ आप्त ही है। अब सत्यार्थ आप्तहीका लक्षणकूं प्रगट करै हैं,—

आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना। भावितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत्॥ ५॥

अर्थ—धर्मका मूल भगवान आप्त है ताके तीन गुण हैं निर्दोषपणा, सर्वज्ञपणा, परमाहितोपदेशकपणा। तिनिमैं जाकै क्षुधा, तृषादिक दोष नष्ट होय गये, तातैं निर्दोष, अर त्रिकालवर्ती समस्त गुण पर्यायनिकरि सहित समस्त जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल आकाशनिकी अनंत परणति तिनकूं युगपत् प्रत्यक्ष जाणै तातैं सर्वज्ञ, अर परमाहितोपदेशकपणाकरि आगम जो द्वादशांग ताका मूलकर्ता तातैं आगमका स्वामी ऐसें यह कहे जे तीनगुण तिनकरि संयुक्त होय सो निश्चयकरि आप्त होय है याहीकूं देव कहिये है। अन्य प्रकार इन तीन गुणनि विना आप्तपणा नहीं होय है जातैं जो आप ही दोषनिकरि सहित है सो अन्य जीवनिकूं निराकुल सुखित निर्दोष कैसे करैगा। जो क्षुधाकी बाधा तृषाकी बाधा कामक्रोधादिक दोषसहित होय सो तो महादुःखित है, ताकैं ईश्वरपणा कैसैं होय। अर जो निरंतर भयवान भया शस्त्र आदिक ग्रहण कऱ्या रहै ताकै वेरी विद्यमान है सो निराकुल कैसैं होय। अर जाकै द्वेष चिंता खेदादिक निरंतर वर्तै सो सुखित नहीं होय। अर जो कामी रागी होय सो तो निरंतर परकै वश है वाकै

स्वाधीनता नाहीं, पराधीनतातैं सत्यार्थवक्तापणा बणैं नहीं। अर मदके वशीभूत निद्राके वशीभूत होय ताकै सत्यार्थवक्तापणा नहीं होय सकै है। अर जो जन्ममरणसहित है ताकै संसारपरिभ्रमणका अभाव नहीं संसारी ही है ताकै आप्तपणा नहीं बणै। जातैं निर्दोष होय ताहीके सत्यार्थपणाकरि आप्त नाम बणै है। रागी द्वेषी तो आपका अर परका रागद्वेष पुष्ट करनेरूप ही कहै यथार्थवक्तापणा तो वीतरागकै ही संभवै है। बहुरि सर्वज्ञ नहीं होय तो इंद्रियानिके आधीन ज्ञानवाला पूर्वैं भये जे राम रावणादिक तिनकूं कैसैं जानैं? अर दूरवर्ती जे मेरु कुलाचल स्वर्ग नरक परलोकादिकनकूं कैसैं जाने? अर सूक्ष्म-परमाणू इत्यादिकानिकूं कैसैं जानैं? इंद्रियजनित ज्ञान तो स्थूल विद्यमान अपने सन्मुखहीकूं स्पष्ट नहीं जानै है। इस संसारमैं पदार्थ तो जीव पुद्गल कालादिक अनंत हैं अर एककालमैं अपनी भिन्न भिन्न परणतिरूप परिणमैं हैं यातैं एकसमयवर्ती अनंत पदार्थांकी भिन्नाभिन्न अनंत ही परणति हैं। अर इंद्रिय-जनितज्ञान क्रमवर्ती स्थूल पुद्गलकी अनेक समयमें भई जे एक स्थूल पर्याय ताकूं जाननेवाला है। अनेकपदार्थनिकी अनेकपर्याय हैं। जो एक समयवर्ती ही जाननेकूं समर्थ नहीं तो अनंतकाल गया अर अनंतकाल आवैगा तिनकी अनंतानंत परणतिकूं इंद्रियजनित ज्ञान कैसैं जानैं। तातैं सर्व त्रिकालवर्ती समस्तद्रव्यनिकी परणतिकूं युगपत् जाननेकूं समर्थ ऐसा सर्वज्ञहीके आप्तपणा संभवै है। अर जो परम हितोपदेशक है सोई आप्त है ए तीन गुण जामैं होंय सो ही देव है। यद्यपि अरहंतदेव मनुष्यपर्यायकूं धारण करता मनुष्य है तो हू ज्ञानावरणादि चारिघातिया कर्मनिके नाशतैं प्रगट भया जो अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतवीर्य, अनंतसुखरूप निजस्वभाव तिसमैं रमनेतैं तथा कर्मनिके विजयतैं अप्रमाण शरीरकी कांति प्रगट होनेतैं अनंत आनंदसुखमैं मग्न होनेतैं तथा इंद्रादिक समस्त देवनिकरि स्तुति-योग्य होनेतैं तथा अनंतज्ञानदर्शनस्वभावकरि समस्त लोकालोकमें व्याप्त होनेतैं अनन्त शक्ति प्रगट होनेतैं अन्यदेव मनुष्यनितैं असाधारण आत्मरूपकरि दिपै है। तातैं मनुष्य पर्यायहीमें अपने अनंत ज्ञानवीर्यसुखादि गुणनितैं याकूं देवाधिदेव कहिये है।

इहां कोऊ प्रश्न करै जो आप्तका लक्षण तीन काहेतैं कह्या ? एक निर्दोष कहनेतैं ही समस्त गुण लक्षण आवता ? ताकूं कहिये है,—निर्दोषपणा तो आकाश धर्म अधर्म पुद्गल कालादिकके हू है इनके हू अचेतनपणातैं क्षुधातृषा रागद्वेषादिक नहीं हैं यातैं निर्दोषपणातैं आप्तपणाका प्रसंग आवता तातैं निर्दोष होय अर सर्वज्ञ होय सोई आप्त है। अर निर्दोष सर्वज्ञ होय ही गुण कहैं तो भगवान सिद्धनिके आप्तपणाका प्रसंग आवता तब सत्यार्थ उपदेशका अभाव आवता तातैं निर्दोष सर्वज्ञ परमहितोपदेशकता इन तीन गुणनिकरिसहित देवाधिदेव परम औदारिक शरीरमैं तिष्ठता भगवान सर्वज्ञ वीतराग अरहंतहीके आप्तपणा है ऐसें निश्चय करना योग्य है॥ अब अरहंतदेव जिन दोषनिकूं नष्टकरि आप्त भये तिन दोषनिके नाम कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

क्षुत्पिपासाजरातंकजन्मान्तकभयस्मयाः। न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते ॥ ६ ॥

अर्थ—क्षुत् कहिये क्षुधा १ पिपासा कहिये तृषा २ जरा कहिये वृद्धपणा ३ आतंक कहिये शरीरसंबंधी व्याधि ४ जन्म कहिये कर्मके वशतैं चतुर्गतिमैं उत्पत्ति ५ आंतक कहिये मृत्यु ६ भय कहिये इस लोकका भय परलोकका भय मरनभय वेदनाभय अनरक्षाभय अगुप्तिभय अकस्मात्भय ऐसें सप्त प्रकारका भय ७ स्मय कहिये गर्व मद ८ राग ९ द्वेष १० मोह ११ च शब्दतैं ग्रहण किये चिंता १२ रति १३ निद्रा १४ विस्मय कहिये आश्चर्य १५ विषाद १६ स्वेद कहिये पसेव १७ खेद व्याकुलता १८ ए अष्टादशदोष जाके नहीं सो आप्त कहिये।

अब यहां कोऊ श्वेताम्बरमतकाधारक प्रश्न करै है,—भो दिगम्बरधर्मधारक हो! जो केवली भगवानके क्षुधा तृषाका अभाव है तो आहारादिकनिमैं प्रवृत्तिका अभाव होतैं केवली देहकी स्थिति नहीं रही चाहिये अर देहकी स्थिति तुम्हारे मान्य ही है तातैं केवलीके आहार करनेकी सिद्धि भई। जैसें आहार किये विना अपने देहकी स्थिति नहीं रहै तैसें केवलीकै भी आहार विना देह नहीं रहै अर देहकी स्थिति

है तो अवश्य आहार करै ही है। तिसकूं उत्तर करैं हैं,—केवलीके आहारमात्र साधिये है कि कवलाहार साधिये है ? जो आहारमात्रहीकी सिद्धि चाहो तदि तो सयोगकेवलीपर्यन्त समस्त जीव आहारक ही हैं। ऐसा परमागमका वाक्य है क्योंकि समस्त ही एकेंद्रियकूं आदि लेय सयोगीपर्यन्त जीव समय समयमैं सिद्ध राशिके अनंतवें भाग अर अभव्यराशितैं अनंतगुणा कर्मपरमाणु अर नोकर्मपरमाणूंनिकूं निरंतर ग्रहण करै हैं। अर जो तुम या कहो हम तो केवलीके कवलाहार कहिये ग्रासग्रास मुखमैं ले अन्नजलादिक अपना भक्षण करनेकी ज्यों आहार करना कहैं हैं ? कवलाहार जो ग्रासरूप आहार तिस बिना केवलीके देहकी स्थिति नहीं रहै। जैसैं अपना देह कवलाहार विना नहीं रहै। ताकूं कहैं हैं—देवनिका देह कवलाहार विना सागरांपर्यन्त कैसैं तिष्ठै है ? समस्त देवानिके कवलाहार कदाचित् नहीं है अर देहकी स्थिति है ही, तातैं तुम्हारा हेतु व्यभिचारी भया। अर जो या कहो देवनिके देहकी स्थिति तो मानसीक आहारतैं है जो मनमें आहारकी इच्छा उपजते ही कंठमैं अमृत झरै है तातैं तृप्ति होय है सो मानसीक आहार है सो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी कल्पवासी चतुरनिकायके देवानिकै कवलाहार विना मानसीक आहारतैं ही देहकी स्थिति है तो तैसैं ही केवली भगवानके कर्मनोकर्मवर्गणाके आहारतैं देहकी स्थिति है। अर जो या कहो केवलीकी तो मनुष्य देहमैं स्थिति है यातैं अपने देहकी तुल्य कवलाहारतैं ही देहकी स्थिति मानिये है तो अपना देहज्यों पसेव, खेद, उपसर्ग, परीषहादिक भी मानना चाहिये । अर जो या कहोगे केवलीके अतिशय प्रभावतैं नहीं होय है तो भोजनका अभावरूप भी अतिशय कैसैं नहीं मानो हो। बहुरि अपने देहमैं देखिये तैसैं केवलीकै हू मानो हो तो जैसैं अपने इंद्रियजनित ज्ञान है तैसैं केवलीके हू ज्ञान इंद्रियजनित मानो। देखना, श्रवण करना, आस्वादना, चिन्तवना, इंद्रियानितैं भया तदि केवलज्ञानरूप अतीन्द्रियज्ञानको जलांजलि दीनी, सर्वज्ञपणाका अभाव आया। अर जो या कहोगे ज्ञानकरि समान होते हू केवलीके अतीन्द्रियज्ञान ही है तो देहमैं स्थिति समान होते हू कवलाहार अभाव

कैसैं नहीं मानो हो ? अर जो या कहोगे केवलीकै वेदनीयकर्मका सद्भाव है यातैं भोजनकी इच्छा उपजै है यातैं कवलाहारमैं प्रवृत्ति होय है। सो ऐसैं कहना हू उचित नहीं, जातैं मोहनीयकर्मके सहायसहित ही वेदनीयकर्मकै भोजनकी इच्छा उपजावनेमें समर्थपणा है क्योंकि भोजनकी इच्छा सो बुभुक्षा है। इच्छा है सो मोहनीयकर्मका कार्य है यातैं नष्ट हुवा मोहनीयकर्मजाके ऐसे भगवान केवलीके भोजन करनेकी इच्छा काहेतैं उपजै ? अर मोहनीय विना हू इच्छा उपजै है तो मनोहरस्त्रीकूं भोगनेकी इच्छा हू उपजनेका प्रसंग आया तथा सुंदर शय्यामें शयन, आभरण, वस्त्रादि भोगोपभोगकी इच्छाका प्रसंग आया तदि वीतरागताका अभाव भया जहां इच्छा तहां वीतरागता नहीं।

बहुरि तुम्हारे केवली आहार करैं हैं सो एक दिनमें एक बार करैं हैं कि अनेकबार करैं हैं कि एक दिनके अन्तर कि दोय दिन, पांच दिन, पक्ष मासादि केता अन्तर करि भोजन करैं हैं ? जेता अंतर कहोगे तितना प्रमाण ही शक्ति रही, शक्ति घटे भोजन करैं हैं भोजनके आश्रय बल भया तदि अनंतवीर्य भगवान केवलीकै कहना असत्य भया। केवलीकै आहारकै आधीन ही बल रह्या। बहुरि केवली बुभुक्षाका उपशम करनेकै अर्थि भोजनका आस्वादन करै है सो केवलज्ञानतैं भोजनका स्वाद ले हैं कि रसना इंद्रियतैं आस्वादै हैं ? जो केवलज्ञानतैं आस्वादै हैं तो दूर क्षेत्रमें तिष्ठता हू भोजनका आस्वादन कर लें तदि कवलाहारकरि कहा प्रयोजन रह्या ? अर जो रसनाइंद्रियतैं स्वाद ले हैं तो मतिज्ञानका प्रसंग आया क्योंकि इंद्रियनिकरि देखना, स्वादना, श्रवण करना, स्पर्शना, चिन्तवन करना सो तो मतिज्ञान है। बहुरि जो तुम यह कहो कि सर्वज्ञपणाकै अर कवलाहारकै वीरोध नहीं। जैसैं इहां आहार करि मनुष्यनिकै ज्ञानकी हीनता नहीं देखिये है तैसैं भोजन करते हू केवलज्ञानकी हीनता नहीं होय है। ताकूं कहिये है—जो हम पूछैं हैं द्रव्य, आभरण, वस्त्र, वाहन, काम, विषय भोगनेमैं हूं सर्वज्ञपणाका विरोध नाहीं। अर जो तुम या कहो सर्वज्ञकै मोहके उदयका अभाव है यातैं द्रव्य, आभरण, काम, विषयभोगा-

दिक ग्रहण करनेकी इच्छा नहीं है अर असातावेदनीयका उदय विद्यमान है तातैं आहार ग्रहण करैं हैं क्योंके
कर्मनिकी शक्ति भिन्न भिन्न है कर्मनिकी शक्ति एकसी होय तो कर्मनिमैं जुदा जुदा भेद नहीं होय। मोहके
उदयका अभाव भया तातैं द्रव्यादिक नहीं ग्रहण करै है । ताकूं कहै हैं—जो मोहका अभाव भया तदि
ग्रास उठाय मुखमैं देना चाबना, निगलना, यह इच्छा काहेतैं भई ? जो या कहो कि—अन्तरायकर्मका
अभाव भया तातैं इच्छा बिना ही मुखमैं ग्रास क्षेपै है तो अन्तरायकर्मका अभाव भोगोपभोगकामसेव-
नादिकका हू ग्रहण क्यों नहीं करावै ? जो यह कहोगे कि—द्रव्य आभरण काम विषयादिक ग्रहण करनेतैं
व्रत भंग हो जाय दीक्षाका भंग हो जाय साधूपणा नष्ट हो जाय है अर आहार करनेतैं व्रतका तथा
दीक्षाका भंग नहीं होय है कवलाहार करनेतैं तो साधूके धर्मका कारण देहकी स्थिति रहै । ताका उत्तर
करैं हैं,—तुम्हारे श्वेताम्बरमतमैं व्रतधारणतैं अर दीक्षाग्रहण करनेतैं ही केवलज्ञान उपजनेका नियम नाहीं
है । मल्लीकुमारीके गृहस्थ अवस्थाहीमैं केवलज्ञानकी उत्पत्ति कहो हो तथा भरतचक्रवर्तीके समस्त छह
खंडका राज भोगतेसंते हू आरीसाका महलमैं केवलज्ञान उपज्या कहो हो तथा मरुदेवी हाथीचढी पुत्रके
अर्थि रुदन करतीकै केवलज्ञान कहो हो । बांस चढ्या नटके केवलज्ञान कहो हो । उपासरामैं बुहारी देती
दासीकै केवलज्ञान कहो हो तथा गृहस्तोके वा स्त्रीके तथा अन्यधर्मी कोऊ भेषधारी होहु दंडी त्रिदंडी
संन्यासी कपाली फकीर जटाधारी मुंडनकरनेवाला मृगछाला बाघम्बर ओढनेवाला समस्त कुलिंगीनिके
मोक्ष कहो हो। समस्त नाई धोबी खटीक चांडालादि समस्तकै मोक्ष कहो हो। हृषिकेश चांडालके केवल
ज्ञान अर मोक्ष कहो हो। तुम्हारे व्रततैं दीक्षातैं ही प्रयोजन नहीं तुम्हारे केवलज्ञान तो पहिले गृहस्तके
उपजि आवै अर दीक्षा पाछैं होय यतीपणा पाछैं होय ऐसे कहो हो । सर्वज्ञपणा पहले हो जाय अर दीक्षा
पाछैं होय तदि दीक्षातैं कौन प्रयोजन सध्या ? अर गृहस्थके मोक्ष होय अर अन्य कुलिंगीनके हू मोक्ष
हो जाय तदि तुम्हारा दीक्षाग्रहण मुंहपट्टीबंधन दंडग्रहण बोघा पात्रांका ग्रहण निरर्थक रह्या । इत्यादिक

तुम्हारे हजारां दोष आवैं हैं। अर जो तुम कहो असातावेदनीय उदयतैं केवलीके क्षुधा तृषा रोग मल मूत्रादिक होय सो नहीं है इसका उत्तर सुनहु—क्षुधा तो असातावेदनीयकर्मकी उदीरणातैं होय है सो असाताकी उदीरणाकी छट्ठे गुणस्थानमैं व्युच्छित्ति है तादि सप्तम गुणस्थानादिकानिमैं क्षुधादि वेदनाका अभाव है। बहुरि और सुनहु,—जिस काल मुनि श्रेणी चढै तादि सातिशय अप्रमत्तगुणस्थानमैं अधः करणके प्रारंभमैं चार आवश्यक होय हैं एक तो प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि १ अर दूजा स्थितिबंधका अपसरण कहिये घटना २ अर सातावेदनीयादिक पुण्यप्रकृतनिमैं अनंतगुणकाररूप रसका वर्द्धित होना ३ अर असातादिक अशुभ प्रकृतानिका रस अनंतगुणा घट निंबकांजीररूप दोय स्थानरूप रहै है विष हलाहलरूप शक्ति घट जाय है ४ पाछें अपूर्वकरणमैं गुणश्रेणी निर्जरा १ गुणसंक्रमण २ स्थितिखंडन ३ अनुभागखंडन ४ ये चार आवश्यक होय हैं। तातैं तिन करणपरिणामानिके प्रभावतैं असातादिक अप्रशस्त प्रकृतिके रसके असंख्यात बार अनंतका भाग लाग घटनेतैं ऐसी मंद शक्ति रही सो सर्वज्ञके असातावेदनीयपरीषह उपजायवेकूं समर्थ नहीं। अर घातिया कर्मका सहाय रह्या नाहीं तातैं परीषह देनेमैं समर्थ नहीं है। बहुरि उक्तं च गोमट्टसारे,—

“समयट्ठिदिगो बंधो सादस्सुदयप्पगो जदो तस्स। तेणासादस्सुदओ सादसरूवेण परिणमदि ॥ १ ॥
एदेण कारणेण हु सादस्से बहुणिरंतरो उदओ। तेणासादणिमित्ता परीसहा जिणवरे णात्थि ॥ २॥
णट्ठा य रायदोसा इंदियणाणं च केवलम्हि जदो। तेण हु सादासादज सुहदुक्खं णत्थि इंदियजं” ॥ ३ ॥

अर्थ—पूर्वली बांधी जो असातावेदनीय ताका असंख्यातबार अनंतका भाग लागि रस घटि अति मंद रह गया। अर नवीन असाताका बंध होय नहीं। जातैं सप्तम गुणस्थानतैं एक सातावेदनीयका ही बंध नवीन होय है अर असाताका बंध होय नहीं। अर केवलीके साताकर्म बंधे सो भी एक समयकी स्थितिरूप बंधे सो उदय होता हुवा ही होय है तातैं असाताका उदय भी सातारूप ही परिणमै है।

भावार्थ—साताका उदय तो नवीन निरंतर अनंतगुणा रसरूप सर्वज्ञके उदयमैं आवै अर असातावेदनीयका रस अनंतवें भाग, सो जैसैं अमृतके समुद्रकूं एक विषकी काणिका विषरूप करनेकूं समर्थ नहीं होय तैसैं सर्वज्ञके अतितीव्र अनंतगुणा साताकर्मके रसका उदयमैं अनंतभागरूप अतिमंद असाताका उदय कैसैं क्षुधाकी वेदना उपजावै ? या कारणतैं भगवान सर्वज्ञके निरंतर साताकर्मका ही उदय है, यामैं किंचित् असाताका उदय हू सातारूप ही परिणमै है ता कारण असाताका उदयजनित परीषह जिनेंद्रकै नहीं है। जातैं भगवान केवलीके राग द्वेष नष्ट भया तथा इंद्रियजनित ज्ञानका अभाव भया तातैं साता असातातैं उपज्या इंद्रियजनित सुख दुःख हू केवलीके नहीं है। अर और हू कहैं हैं,—अतिमंद उदयरूप असाता अपना कार्य करनेमैं समर्थ नहीं है। जैसैं मंदउदयरूप संज्वलनकषाय अप्रमत्तादि गुणस्थाननिमैं प्रमाद नहीं उपजाय सकै तथा जैसैं अतितीव्र वेदके उदयतैं उपजी मैथुनसंज्ञा सो मंदवेदका उदयरूप नवमे गुणस्थानमैं नहीं है तथा निद्रा प्रचलाका उदय तो बारवैं गुणस्थानमैं द्विचरम समय पर्यंत है परंतु उदीरणा विना निंद्राकू नहीं कर सकै है तातैं जागृत अवस्था विना आत्मानुभवनरूप ध्यान नहीं बन सकै; तैसैं असाताका उदीरणा विना असाता कर्म क्षुधा तृषादिक नहीं उपजाय सकै है। अर और भी समझो कि—अप्रमत्त हू साधू आहारकी इच्छामात्रतैं प्रमत्तपणानैं प्राप्त होय है तो भोजन करता हू केवली प्रमत्त नहीं होय सो बडा आश्चर्य है। बहुरि केवली भगवान त्रैलोक्यके मध्य मारण ताडन छेदन ज्वालन मद्य मांसादि अशुचि द्रव्यनिकूं प्रत्यक्ष देखता कैसैं भोजन करै है ? अल्प शक्तिका धारक गृहस्थ हू अयोग्य वस्तु निंद्य कर्म देख अन्तराय करै है अर केवली अन्तराय नहीं करै तो केवलीकै गृहस्थनितैं हू अधिक भोजनमैं लम्पटता रही अर शक्तिकी हीनता रही तदि अनंतशक्ति कहां रही ? अर जाके क्षुधा वेदना होय ताके अनंतसुख कहां रह्या ? क्षुधा समान वेदना जगतमैं अन्य नाहीं है। यातैं क्षुधा वेदना सर्वज्ञके होतैं अनन्तवीर्य अनंतसुख नहीं ठहरै। तथा ऋद्धिजनित अतिशयवान मुनिविषै अन्य

मनुष्यनिमैं नहीं पाइये ऐसा कार्य करनेका सामर्थ्य पाइये है तो अनंतवीर्यका धारक केवली भगवान के आहार विना देहकी स्थिति रहना कहा नहीं संभवै है। अर जो सर्वज्ञकै हू अन्य मनुष्यनिकी ज्यों आहार, निहार, निद्रा, रोग, स्वेद, खेद, मल, मूत्र विद्यमान होय तो सामान्य आत्मामैं अर परमात्मामैं कहा भेद रहया? बहुरि जीवना कवलाहारतैं ही नहीं है आयुकर्मके उदयतैं है। उक्तं च गाथा—

"णोकम्मकम्महारो कवलाहारो य लेपमाहारो। उज्जमणो वि य कमसो आहारो छव्विहो भणिओ ॥४॥
णोकम्मं तित्थयरे कम्मं णिरये माणसो अमरे। कवलाहारो णरपसु उज्जो पक्खी य इगि लेपो" ॥५॥

अर्थ—आहार छहप्रकार है—कर्मआहार १ नोकर्मआहार २ कवलाहार ३ लेपआहार ४ ओजआहार ५ मानसीकआहार ६ ऐसैं छह प्रकार है। भगवान अरहंतके तो अन्य जीवनिके असंभव ऐसे शुभ सूक्ष्म नोकर्मवर्गणाका ग्रहण सो ही आहार है। अर नारकीनके कर्मका भोगना सो ही आहार है। अर चारप्रकारके देवनिकै मानसीक आहार है, मनमैं वांछा होतैं ही कण्ठमैंतैं अमृत झरे है ताकरि तृप्तता होय है। मनुष्य अर पशुवनिकै कवलाहार है। अर पक्षीनकै अंडेमैं तिष्ठतोनिकै माताकी उदरकी ऊष्मारूप ओजाहार है। अर एकेंद्रिय पृथिव्यादिकनकै लेप आहार है अर्थात् पृथिव्यादिकनका स्पर्श ही आहार है। बहुरि भोगभूमिके औदारिक देहके धारक मनुष्यनिका शरीर तीनकोस प्रमाण अर भोजन आंवला प्रमाण तीन दिनके अन्तर गये ले हैं यातैं कवलाहार ही देहकी स्थितिका कारण नहीं है। अर जो आहारकपनातैं कवलाहारकी ही कल्पना करो हो तो सयोगीपनातैं मनके माननेका अर प्राण माननेतैं पंच इन्द्रियनिका अर शुक्ललेश्यातैं कषायका हू प्रसंग आवेगा। अर एकादश परीषह जिनके हैं ऐसे कहना तो उपचारमात्र है। वेदनीयकर्म विद्यमान है यातैं कह्या है। परंतु जैसैं मंत्र औषधि आदिकके प्रभावकरि जाकी विषशक्ति नष्ट भई ऐसा विष मारनेकूं समर्थ नहीं तैसैं शक्तिरहित असातावेदनीय क्षुधा उपजावनेकूं समर्थ नहीं है। मणि मंत्र औषधि विद्या ऋद्ध्यादिकनिका आचिंत्य प्रभाव है।

श्वेताम्बरनिके कल्पित सूत्र हैं तिनमैं अनेक काल्पित असंभव रचना रची है। कोऊ एक गौसाला नाम गारोड्या महावीरस्वामीके निकट दीक्षित होय विद्याका मदकरि महावीर स्वामीसूं विवाद करनेकूं समोसरणमैं जाय विवाद किया तो विवादमैं हार गयो तदि क्रोधकरि भगवान उपरि तेजोलेश्या कोऊ ऋद्धि अग्निमय प्रज्वलित चलाई। तिसकरि समोसरणमैं दोय मुनि सिंहासन नीचैं दग्ध भए। अर उस तैजस ऋद्धितैं उपजी आग्निमयज्वाला भगवानके ऊपर भी जाय पहुंची, भगवानकूं उपसर्ग भारी भया। तिस अग्निकी गरम बाधातैं भगवानके आंवरुधिरका पेचस (अतीसार) भया। सो छह महीना रह्या। पाछैं केवलज्ञानतैं जानकरि शिष्यकूं कहि सेठका घरतैं सुपक्षी जीवका पका मांसकूं मँगाय भक्षण करि व्याधि मेटी। अर कहीं मैं ऐसे कुपात्रकूं बिना समझ्यां दीक्षा दीनी ऐसा अवर्णवाद लिखैं है। तथा तीन ज्ञान लिये उपजे वीर जिनेंद्रका चटशालामें पढना कहैं हैं। तथा तीर्थंकर तो पहले दीक्षित नग्न होय हैं। पीछै इंद्र स्कंध ऊपरि वस्त्र धरि देवै तब वस्त्रकूं (ग्रहण कर) लेहैं। तथा वीरजिनकी वाणी गणधर बिना निष्फल खिरी कोऊ भी मानी नहीं। तथा आदिनाथकूं जुगलिया कहैं हैं। अर कोउ एक अन्य जुगलियो मर गयौ ताकी स्त्री विधवा भई। तिस विधवा स्त्रीको ऋषभदेव अंगीकार करी तदि दूजी सुनंदा रानी नाताकी भई। इन ढुंढ्यादिक श्वेतांबारिनिकै ऐसे अनर्थरूप वचन कहनेका भय नहीं है। तथा ऐसा बिरुद्ध कहैं हैं कि— वीर जिन पहिली देवनंदा नाम ब्रह्मणीके गर्भमें अवतार लेय अस्सी दिन पर्य्यंत रह्या, ता पीछैं इन्द्रने बिचारी के ऐसे नीच घरमें इनका जन्म योग्य नहीं तातैं हरिणगवेषी देवनैं आज्ञा करी, तदि देव जाय देवनंदा नाम ब्राह्मणके गर्भमैंतैं निकालि राजा सिद्धार्थकी रानी त्रिसला ताके गर्भमैं धरया। विचारो कि जीव अपने बांधे कर्मनिकरि कुलादिकमें उपजैं हैं देवनिकरि जन्म कैसें फिरै ? परंतु मिथ्यादर्शनके प्रभावकरि कहनेका ठिकाना नहीं। तथा तीर्थंकर केवलीकूं सामान्य केवली नमस्कार करै है। बाहूबलीने ऋषभदेवकूं नमस्कार किया कहैं हैं। सप्तम गुणस्थानतैं ही वंद्यवंदक भाव

नहीं। जहां आत्मस्वभावका अनुभव तहां विभाव कैसैं कहै हैं। कृतकृत्य भगवान सर्वज्ञदेव तिनके नमस्कारकरि कहा साध्य है। बंदनेयोग्य परमेष्ठी अर मैं बंदना करनेवाला ऐसा भाव तो प्रमत्त नाम छट्ठा गुणस्थानपर्यंत ही है। तथा ऐसैं कहै हैं एक स्कंधक नाम त्रिदंडी कुलिंगी भेषीकूं अपने निकट आवता जान वीरजिन गौतमगणधरकूं कही कि—यह स्कंधक संन्यासी आवै है यह जवर है थारे इनके मेल है सामैं जाय याकूं ल्यावो। तदि गौतम गणधर बडी भक्तिसूं सन्मुख जाय ल्यायो। बडा अनर्थ है अव्रतसम्यग्दृष्टी भी कुलिंगीका सन्मान नहीं करै तो महाव्रती गणधर कैसैं भक्तिपूर्वक सन्मान करै ?। स्त्रीकै पंचमगुणस्थान सिवाय गुणस्थान ही नहीं, आदिके तीन संहनन नहीं, अहमिंद्रलोक नहीं, अर सप्तम नरकमें गमन नहीं, ता स्त्रीके मुक्ति कैसैं कहै है ? तथा मल्लिजिनकूं नारी कहै हैं ताकी प्रतिमा पुरुषरूप बनाय पूजैं हैं ऐसे महा असत्यवादी हैं। तथा कोऊ एक हरिक्षेत्रका निवासी मनुष्य जाका दोयकोस ऊंचा काय तिसकूं कोऊ पूर्वजन्मका वैरी देव हर ल्याया अर दोय कोसके देहको छोटा करिकैं भरतक्षेत्रमैं ल्याय मथुरा नगरका राज देय अर मांस भक्षण कराय पापी करि नरक पहुंचाया। तासूं हरिवंशकी उत्पत्ति कहै हैं। तिन मूर्खनिकी मिथ्या कल्पनाका कुछ ठिकाना नहीं। दोय कोसकी काय ताकूं कैसैं छोटी बनाई ? ऊपरसे छेद्या कि नीचैंसे कि बीचमेंसैं छेद्या, ताका कछु उत्तर नहीं। अर भोगभूमिके तो समस्त मनुष्य तिर्यंच देवगतिगामी हैं तथा भोगभूमिमें तो पुरुष स्त्री प्रमाणिक हैं। माता पिता मरै तिनकी एवज पहिले उपजैं हैं। जो अनंत काल गये भी एक एक घटै तो समस्त भोगभूमि रीति हो जाय। परंतु मिथ्यादृष्टीनिकै कुछ कुबुद्धिका ओर (अंत) नहीं है। तथा छह द्रव्य कहना अर मुख्य कालद्रव्यका अभाव कहना समयादिक विनाशीककूं ही काल जानना।

तथा और कहै हैं कि—साधुके निंदकके मारनेका पाप नहीं। जो देव गुरु धर्मका द्रोही चक्री हू होय तो चक्रवर्तीका कटककूं हू विध्वंस करता साधुके पाप नहीं। जो आपके ऋद्ध्यादिक करि उपजी

शक्ति होते हू नहीं मारै तो वह साधु अनंतसंसारी है ऐसे पापी साधुके कहां साम्यभाव ? कहां वीतरागता रही ? तथा पापिष्ठ महान शीलवंतीनिकै हू दोष लगाय निर्दोष कहैं हैं। भरत नामा चक्रवर्ती तो ब्राह्मी नामा बहनकूं पराणि लीनी कहै है। अर द्रोपदीकूं पंचभर्तारी कहैं हैं अर पंचभर्तारी हीकूं सती कहैं हैं। अर कोऊ पूछे तुम सती कहो हो तो पंचभर्तारी मति कहो अर पंचभर्तारी कहो हो तो सती मत कहो। ताकूं ये कहै हैं कोऊ राजादिक सौ स्त्रीका नियम राखै ताकै शीलवानपणा ही है, तैसैं स्त्रीहू कितनेक पुरुषनिका प्रमाण करै तातैं सिवाय ग्रहण नहीं ताकै शीलवतीपणा ही है। तथा देवनिकै अर मनुष्यनिकै कामभोग सेवन कहैं हैं सो वैक्रियिकदेहधारीकै अर सप्तधातुमय मलीन देहकै संगम कदाचित् नहीं होय है। बहुरि कोऊ साधुकै उपवास होय अर अन्य साधुकै आहार उबरि जाय तो उपवासीक साधु भक्षण कर ले है गुरुकी आज्ञातैं व्रत भंग नहीं है। तथा उपवासमैं औषधि भक्षण करै तो दोष नहीं लागै। तथा समोसरणमैं भगवान नग्न बैठैं हैं अर वस्त्रसहित दीखता कहैं हैं। तथा साधु यतिकै लाठी पात्र वस्त्रादिक चौदह उपकरण रखना ही धर्म है। तथा चांडालादिकनिकै मुक्ति कहैं हैं तथा वीरजिनका समोसरणमैं चंद्रमा सूर्य विमानसहित आये कहैं हैं। सरस्वती गतिकी मर्यादाका भंग कहैं हैं। तथा साधुका मन चल जाय तो श्रावक अपनी स्त्रीकूं देय कामवेदना मिटाय मन थिर करै। तथा गंगादेवीसे पचपन हजार वर्षपर्यंत भरत चक्रीने कामभोग किया कहैं हैं तथा भोगभूमिके युगल मलमूत्र धारण करैं हैं अर मर जाय तदि तीनकोसके मुरदेके शरीरकूं देवता उठाय भैरूंडादिक पक्षीनको खुवाय देय हैं। जादव आदिक समस्त क्षत्रियनकूं मांसभक्षी कहैं हैं। तथा गौतम नाम गणधर आनंद नाम श्रावकके घर शरीरकी कुशल पूछने गया तदि झूंठ बोल्या, गणधर भी चूक कर झूंठ बोलैं हैं। तथा जन्मके समयमैं वीरजिन मेरुकूं कंपायमान किया कहैं हैं। चर्मका नीर घृतादिक निर्दोष कहैं हैं। इत्यादि हजारां अनर्थरूप न करि कल्पितसूत्र बनाये हैं तिनकी विशेष कथा कहांतक कहिये ?

इनही श्वेतांबरीनमैं महाभ्रष्ट ढूंडिया भए हैं ते प्रतिमाके वंदनका अभाव कहैं हैं। अर भोले लोगनिकूं कहैं हैं ए प्रतिमा एकेंद्रिय पाषाण तिनके आगैं पंचेंद्रिय होय कैसैं नाचो हो कैसैं वंदन करो हो? तुमकूं क्योंकर शुभगति देयगी तातैं साधु ढूंडियानिकी वंदना दर्शन करो तिनकूं कहिये है कि–तुम्हारा चर्ममय मलीन चामकर ढक्या मलमूत्रादि करि भऱ्या कफ लालाकरि लिप्त देह ताका दर्शन करनेतैं कहा साध्य? तुम आत्मज्ञानकरि रहित समस्त जगतके अभक्ष वस्तुनिकूं भक्षणकरनेहारे तुम्हारा दर्शन तो बंधहीका कारण है। अर तुम्हारा कल्पितसूत्रका श्रवण सम्यक्त्वका विध्वंस करनेहारा बंधका कारण है। अर जिनेंद्रका धातु पाषाणका प्रतिबिंब, तिनका दर्शनमात्रसे परम वीतराग सर्वज्ञका ध्यान प्रगट होय जाय परमशांतता शुभोपयोग प्राप्त होय जाय अर तुम्हारे पापमय देहके दर्शनतैं पापका बंध होय जाय। कैसे हो तुम महाविद्रूप विकारी रागद्वेष कषायादि पापमलसहित अयोग्य अभक्ष आहारके लंपटी हिंसादिक पापनिमैं प्रवृत्ति करनेवारे अन्य जीवनिकूं मिथ्यामार्गमैं प्रवर्तावनेहारे तुम्हारे देखनेकरि घोर पापबंध होय। सराहनेवालेके सत्तर कोडाकोडी सागरकी स्थिति लिये मोहनीयकर्मका बंध होय है। इस कलिकालमैं जैनधर्मका सत्यार्थ मार्गकूं श्वेताम्बरोंने बिगाड्या है। यातैं इनका स्वरूप जाननेके अर्थि ऐसे प्रकरण पाय श्वेताम्बरानिके मतका स्वरूप दिखाया। इनके सत्यार्थ आप्तता कैसैं होय? और हू मतवाले जे देव प्रत्यक्ष भयभीत तथा असमर्थ होय चक्र त्रिशूल खड्ग ग्रहण करि राखे हैं और कामी होय स्त्रीनिके आधीन होय रहे हैं अरु क्षुधा, तृषा, काम, राग, द्वेष, निद्रा, नीहार, वैर, विरोध प्रगट जाके प्रसिद्ध है तिनके निर्दोषपना कैसैं होय। अरु जे इंद्रियज्ञानसहित ज्ञानी तिनके सर्वज्ञपना आप्तपना कहांसैं होय? तातैं सर्वज्ञ वीतराग परमहितोपदेशकहीके आप्तपना बने है। अब पूर्वापरविरोधादि दोषनिकरि रहित सत्यार्थ पदार्थनिका उपदेश देनेवाला जो शास्ता ताका नाम प्रगट करता सूत्र कहैं हैं,–

परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती । सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७ ॥

अर्थ—जो अर्थसहित अष्ट नामनिकूं धारण करै है सो शास्ता कहिये है । परमेष्ठी, परंज्योतिः, विरागः, विमलः, कृती, सर्वज्ञः, अनादिमध्यान्तः, सार्वः, एते सार्थक नाम जाके हैं सो शास्ता है याहीकूं आप्त कहिये है ॥ ७ ॥ परमेष्ठी कहिये परम इष्ट जो इंद्रादिकनिकरि वंद्य जो परमात्मा स्वरूपमैं तिष्ठै सो परमेष्ठी है । कैसा है परमेष्ठी अंतरंग तो घातियकर्मनिके नाशतैं प्रगट भया अनंतज्ञानदर्शनसुखवीर्यस्वरूप अपना निर्विकारअविनाशी परमात्मस्वरूप तिसमैं तिष्ठै है । अर बाह्यमैं इंद्रादिक असंख्यातदेवनिकरि बंद्यमान समवसरण नाम सभाके मध्य तीन पीठके ऊपरि दिव्यसिंहासनमैं चार अंगुल अंतरीक्ष (अधर) चौसठ चमरनिकरि युक्त विराजमान छत्रत्रयादिक दिव्य संपदाकरि विभूषित इंद्रादिक देव तथा मनुष्यादिक निकट भव्यनिको धर्मोपदेशरूप अमृतपान कराय जन्मजरामरनका संतापकूं निराकरण करता तिष्ठै है यातैं भगवान आप्तकूं परमेष्ठी कहिये है । अर जो कर्मनिकी आधीनतातैं इंद्रियनिके कामभोगादिविषयनिमैं तथा विनाशीक सम्पदारूप राज्यसंपदामैं लीनभये स्त्रीनिके आधीन भये विषयांकी आताप सहित तिष्ठैं तिनिके परमेष्ठीपणा नहीं संभवै है । बहुरि जो परंज्योति है जाका परं कहिये आवरणरहित ज्योतिः कहिये अतीन्द्रियअनंतज्ञानमैं लोक अलोकवर्ती समस्त पदार्थ अपने त्रिकालवर्ती अनंत गुणपर्यायनिकरि सहित युगपति प्रतिबिंबित होय रहे हैं, सो भगवान परंज्योतिस्वरूप आप्त है । अन्य जे इंद्रियजनित ज्ञानकरि सहित अल्पक्षेत्रवर्ती वर्तमान स्थूल पदार्थनिकूं अनुक्रमकरि जानै ताकूं परंज्योति कैसैं कह्या जाय ? बहुरि जाके मोहनीयकर्मके नाशतैं समस्त परवस्तुमैं रागद्वेषका अभावतैं वांछारहित परमवीतरागता प्रगट भई वस्तुका सत्यार्थस्वरूप जानै तदि कौनमैं राग करै ? कौनमैं द्वेष करै ? जैसा वस्तुका स्वभाव है तैसा रागद्वेषरहित जानैं ऐसा विराग नामसहित अर्हंत ही आप्त है । जो कामी विषयनिमैं आसक्त गीत नृत्य वादित्रनिमैं आसक्त जगत्की स्त्रीनिकूं राजी करनेमैं वैरीनकूं मार

लोकनिमैं अपणा शूरपणा प्रगट करनेमैं बांछासहित होय तिसके विरागपणा नहीं संभवै है। बहुरि जाके काम क्रोध मान माया लोभादिक भावमल नष्ट भया अर ज्ञानावरणादिक कर्ममल नष्ट भया अर मूत्र, पुरीष, पसेव, वात पित्तादिक शरीरमल नष्ट होय निगोदरहित परम औदारिक छायारहित कांतियुक्त क्षुधा, तृषा, रोग, निद्रा, भय विस्मयादिक रहित शरीरमैं तिष्ठै सो आप्त भगवान अरहंत ही विमल हैं। अन्य जे काम क्रोधादि मलसहित ते विमल नहीं है। बहुरि जिनकैं कछु करना नहीं रह्या जो शुद्ध अनंत ज्ञानादिमय अपना स्वरूपकूं प्राप्त होय कृतकृत्य व्याधिउपाधिरहित भया सो भगवान आप्त ही कृती हैं। अन्य जे जन्ममरणादिसहित चक्र त्रिशूल गदादिक आयुध अर कनककामिनीमैं आसक्त भोजनपान कामभोगादिककी लालसासहित शत्रुनिके मारनेकी आकुलता सहित हैं ते कृती नहीं हैं। बहुरि जो इंद्रियादिक परकी सहायरहित युगपत् समस्त द्रव्यगुणपर्यायनिकूं क्रमरहित प्रत्यक्ष जानैं सो भगवान आप्त ही सर्वज्ञ हैं। अन्य इन्द्रियाधीन ज्ञानकरि सहित सो सर्वज्ञ नहीं है। बहुरि जाका जीव द्रव्यकी अपेक्षा तथा ज्ञान दर्शन सुख वीर्यकी अपेक्षा आदि मध्य अंत नहीं तातैं अनादिमध्यान्त है अथवा भगवान आप्त अनादि कालतैं हैं अर अन्तको प्राप्त नहीं होयगा तातैं अनादिमध्यान्त है अर जिनके मतमैं आप्तके जन्म मरण तथा जीवका नवीन प्रगट होना तथा जीवके ज्ञानादि गुण नवीन प्रगट होना मानै हैं तिनके अनादिमध्यान्तपणा नहीं बनै है। बहुरि जिनके वचनकी अर कायकी प्रवृत्ति समस्त जीवनिके हितके अर्थि ही है सो भगवान आप्त सार्व कहिये है। अन्य जे काम क्रोध संग्रामादिक हिंसाप्रधान समस्त पापनिकरि अपना परका अहितमैं प्रवर्तन करै हैं करावै हैं तिनके सार्व ऐसा नाम हू नहीं है। ऐसैं अष्ट विशेषणसहित सार्थक नामनिकरि शास्ता जो आप्त, ताका असाधारणस्वरूप कह्या। 'शास्तीति शास्ता' इस निरुक्तिका ऐसा अर्थ है जो शिष्य जे निकटभव्य तिनकूं हितरूप शास्ति कहिये शिक्षा करै सो शास्ता कहिये। अब कहैं हैं जो शास्ता कहिये आप्त है सो सत्पुरुषनिकूं स्वर्गमुक्तिके

प्राप्तकरनेवाली शिक्षा करता आपके कुछ विख्यातता तथा लाभ तथा पूजादिक फलकूं वांछा नाहीं करै है, ऐसा दिखावैं हैं,—

अनात्मार्थं विना रागैः शास्ता शास्ति सतो हितं। ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शान्मुरजः किमपेक्षते ॥ ८ ॥

अर्थ—शास्ता जो धर्मोपदेशरूप करनेवाला अरहंत आप्त सो अनात्मार्थं कहिये अपना ख्याति
लाभ पूजादिक प्रयोजन बिना तथा शिष्यनिमैं रागभाव बिना सत्पुरुष जो निकट भव्य तिननैं हितरूप
शिक्षा करै है जैसैं शिल्पी जो वादित्र बजानेवाला ताका हस्तका स्पर्शमात्रतैं नाना शब्द करता जो
मृदंग, सो किंचित् अपेक्षा नहीं करै है ॥ ८ ॥ भावार्थ—संसारी जन लोकमैं जितना कार्य करै हैं तितना
अपना अभिमान लोभ जस प्रशंसादिकके अर्थि करै हैं अर भगवान अरिहंत आप्त अपना प्रयो-
जन विना इच्छा विना ही जगतके जीवानिकूं हितरूप शिक्षा करैं हैं जैसैं मेघ प्रयोजन विना ही लोक-
निका पुण्य उदयका निमित्ततैं पुण्यदेशानिमैं गमन करै अर गर्जना करै अर प्रचुर जलकी वरषा करै
है। तैसैं भगवान आप्त हू लोकानिके पुण्यके निमित्ततैं पुण्य देशानिमैं विहार करै अर धर्मरूप अमृतकी
वरषा करता उपदेश करैं है जातैं सत्पुरुषनिकी चेष्टा जो आचरण सो परका उपकारके अर्थि है। तथा
जैसैं कल्पवृक्षादिक वृक्ष तथा धान्यादिक तथा आम्रादिक वृक्ष परजीवनिका उपकारके अर्थ ही फलै
हैं। पर्वतादिक सुवर्ण रत्नादिकानिनै तथा प्रचुर जलनै अनेक वृक्षादिकानिनै इच्छा विना ही जगतका
उपकारके अर्थ धारण करै हैं तथा समुद्र हू रत्नादिकानिने तथा गौ दुग्धनै परके अर्थि ही धारण करै है
तथा दातार परके उपकार निमित्त धनकूं धारण करै है तैसैं ही सत्पुरुष वचानिनै परोपकारके अर्थि ही
इच्छा विना धारण करै हैं। बहुत कहनेकरि कहा? जेते उपकारक पदार्थ हैं तितने इच्छा बिना ही लोक-
निकै पुण्यके प्रभावतैं प्रगटैं है तैसैं ही भगवान आप्त इच्छा बिना ही लोकानिका परमोपकारके निमित्त
धर्मरूप हितोपदेश करैं है। ऐसैं आप्तका स्वरूप तो च्यार श्लोकानिमैं कह्या अब एक श्लोकमैं सत्यार्थ
आगमका लक्षण कहैं हैं,—

आप्तोपज्ञमनुल्लंघ्यमदृष्टेष्टाविरोधकं । तत्त्वोपदेशकृत् सार्वं शास्त्रं कापथघट्टनं ॥ ९ ॥

अर्थ—शास्त्र ताकूं कहिये है जो सर्वज्ञ वीतरागका कह्या होय अर किसी वादी प्रतिवादी करि उलंघन नहीं किया जाय अर दृष्ट जो प्रत्यक्ष अर इष्ट जो अनुमान तिनकरि जामैं विरोध नहीं आवै अर तत्त्व कहिये जैसा वस्तुका स्वरूप होय तैसा उपदेश करनेवाला होय अर सर्व जीवनिका हितरूप होय अर कुमार्ग जो मिथ्यामार्ग ताकूं निराकरण करै ऐसैं छह विशेषण सहित शास्त्रका स्वरूप वर्णन किया ॥९॥

इहां ऐसा भाव जानना—जो कालके निमित्तकरि मिथ्यामार्गी बहुत पैदा भये हैं तिनने अपना अभिमान विषय कषाय पुष्ट करनेकूं अनेक खोटे शास्त्र रचि जगतकूं सत्यार्थ धर्मतैं भ्रष्ट किए हैं। जेते मत संसारमें प्रवर्तै हैं तितने समस्त शास्त्रानितैं ही प्रवर्तै हैं। शास्त्र विना कोऊ मत है ही नहीं। ब्राह्मणादिक तो वेद स्मृति पुराण तिनमैं हिंसाकी प्रधानताकरि अश्वमेध नरमेधादिक यज्ञ अर जीवनिका शिकार समस्त जलचारी थलचारीनिकी हिंसा करनेमैं धर्म कहै हैं। तथा देवतानिके अर पित्र्य व्यंतरादिकनिकूं तृप्तताके अर्थि मांसपिंडका देना ही धर्म बतावैं हैं। अर भवानी भैरवादिक देव भैंसा बकरा इत्यादिकनिकूं मार चढावै अर भक्षण किए ही प्रसन्न होय हैं। तथा देवता मांसाहारी ही है। राजनिका धर्म शिकार ही है इत्यादिक शास्त्रानिके वचनतैं ही प्रवर्तै है तथा हरिहर ब्रह्मादिक भगवान हैं परमेश्वर हैं ऐसे कह करिकै हरीकूं तो निरंतर ग्वालनिकी स्त्रीनिमैं आसक्त होय बांसुरी बजावना नाचना तथा गोवर्द्धन अहीरकू मार स्त्रीका हरना अनेक न्याय अन्याय लीला करना सो सब शास्त्रानिमैं लिखी ही जगत मानै है। तथा हर जो शिव ताके अर्द्धअंगमैं नारीका धसना, अर भस्म लगावना, अनेक हत्या तथा सरापनै प्राप्ति होना त्रिशूलादिक आयुध रखना फिर लोकका संहार करना ए समस्त शास्त्रानिमैं लिखनेतैं ही जगतके लोक निश्चय करैं हैं। तथा शिवका लिंग पार्वतीकी योनिमैं तिष्ठतेकूं निरंतर जल सींचना आक धतूरा चढावना इत्यादिक समस्त शास्त्रानिमैं लिखनेतैं ही जगतमैं अनेक मनुष्य ऐसी प्रवृत्तिकूं ही धर्म जानि सेवन

करैं हैं। तथा ब्रह्माकूं समस्त सृष्टिका कर्ता अर पितामह कहैं हैं तिस ब्रह्माकूं आतिकामी होय अपनी पुत्रीसूं विषय करि भ्रष्ट हुआ कहैं हैं। उर्वसी नाम अपछरामैं मोहित होय अपने चार हजार वर्षके तपके फलतैं चार मुख धारण करि उर्वसीकूं अवलोकन करि तपतैं भ्रष्ट भया अर उर्वसीका सरापकूं प्राप्त भया सो समस्त उनके शास्त्रनिमैं ही लिखा है। तथा जगतकी रचना करनेवाला अर पालन करनेवाला भगवान नारायण कच्छ मच्छ सूर सिंहादिक अनेक अवतार धारण करि दानवांका संहार करना तथा हनूमानकूं बांदरा गणेशकूं हस्तीरूप अर मूसापारि चढ्या अर मोदक (लाडू)के भक्षणमैं अतिरागी सो समस्त शास्त्र हीमैं लिखे हैं। तथा जीव मारनेमैं जीव मारि देवतानिकूं तृप्ति करनेमैं तलाव कूए वा बावडी खुदावनेमैं बडा धर्म होना शास्त्रहीमैं लिखा है। तथा श्वेतांबर अनेक कल्पित सूत्र रचे हैं तिनका भ्रष्टाचार समस्त शास्त्रनितैं ही प्रवर्तै है। तथा कलिकालके भेषधारी कुलदेव्यांकी पूजा क्षेत्रपालादिव्यंतरांकी आराधना तथा पद्मावती चक्रेश्वरी इत्यादिक देवीनिकी पूजा तथा अनेक मिथ्या प्ररूपणा तर्पणादिक लिख दिये हैं। तथा अन्य भील म्लेच्छ मुसलमानादिक समस्तके शास्त्र हैं। शास्त्रां विना मिथ्या कल्पना कैसैं प्रवर्तै ? तातैं जगतमैं शास्त्र बहुत हैं शास्त्रनिके बलतैं ही अनेक पाखंड, भेष, मिथ्या धर्म प्रवर्तै हैं तातैं परीक्षा प्रधानी होय परीक्षा करि शास्त्रकूं ग्रहण करना। पूर्वोक्त छह विशेषणकरि सहित ही आगम है। प्रथम तो सर्वज्ञ वीतरागका कह्या होय जो सर्वज्ञ विना इंद्रियजनित ज्ञानकरि जीव अजीव अतींद्रिय अमूर्तीक पदार्थनिकूं नहीं प्रगट कर सकेगा। तथा पाप पुण्यादिक अदृष्ट पदार्थनिकूं तथा परमाणु इत्यादिक सूक्ष्म पदार्थनिकू कैसैं प्ररूपण करैगा। तथा स्वर्ग नरककी पर्यायनिकूं अर स्वर्ग नरकमैं उपजे सुखदुःखके कारण अनेक संबंधनिकूं कैसैं जानैगा। तथा मेरु कुलाचलादिकनिका प्ररूपण कैसैं करैगा। तथा जीवादिक द्रव्यनिके अनंत पर्याय होय गया अर अनंत होयगा अर अनंत वस्तुके अनंत गुण अर अनंतपर्यायनिका एक समयमैं युगपत् परिणमन तिनको क्रमवर्ती इंद्रियजनित ज्ञानका धारी कैसैं प्ररूपण करैगा।

तातैं सर्वज्ञ विना इंद्रियजनितज्ञानिकै आगमका कहना यथार्थ नहीं बनै है । तातैं सत्यार्थ आगमका कहना सर्वज्ञके ही बनै है अर रागद्वेषका धारक अपना अभिमान पुष्ट करनेका इच्छुक अपनी विख्यातता करनेका इच्छुक तथा विषयांका लोभी होयगा सो सत्यार्थ नहीं कहैगा । तातैं सर्वज्ञ वीतरागका कह्या हुआ ही आगमकै प्रमाणता है । बहुरि जिस आगममैं वादी प्रतिवादी करि दिखाया अनेक दोष आजाय सो आगम प्रमाण नहीं जातैं वादी प्रतिवादी जाकूं उलंघन नहीं कर सकै बाधा नहीं दे सकै ऐसा अनुल्लंघ्य ही आगम है । बहुरि जिस आगममैं प्रत्यक्ष अनुमानकरि बाधा नहीं आवै सो आगम है । जिसमैं प्रत्यक्ष प्रमाणतैं तथा अनुमान प्रमाणतैं बाधा आय जाय सो आगम प्रमाण नहीं है । बहुरि जिस आगममैं आपका अर परका निर्णय नहीं तथा हेय उपादेय कृत्य अकृत्य देव कुदेव धर्म अधर्म हित अहित ग्राह्य अग्राह्य भक्ष अभक्षका निर्णय करि सत्यार्थ वस्तुका स्वरूप नहीं वृथा शब्दोंका आडंबररूप लोकरंजन असत्य कथा तथा देशकथा राजकथा स्त्रीकथा कामकथा इत्यादिकथा अनेक विकथा संसारमैं उरझानेवाला है, अर आत्माका संसारतैं उद्धार करनेका उपायरूप कथन नहीं कहै सो मिथ्या आगम है । यातैं तत्त्वभूत जीवके हितका उपदेशरूप जामैं कथन होय सो तत्त्वोपदेशकृत् ही आगम है । बहुरि जो सर्व प्राणीनिका हितरूप उपदेश करनेवाला होय सो ही सार्वविशेषण सहित आगम है । जामैं प्राणीनिकी हिंसाप्ररूपण करी तथा मांसभक्षण तथा जलथलआकाशगामी जीवानिके मारनेके उपाय तथा महा आरंभके तथा मारण उच्चाटन करनेका परधन हरनेका संग्राम करनेका सैन्याके विध्वंस करनेका नग्र ग्राम विध्वंस करनेका परिग्रह परस्त्रीमैं रुचनेका उपाय वर्णन किया सो आगम सार्व कहिये समस्त प्राणीनिका हितरूप नाहीं । बहुरि जो कुमार्गका निराकरण करि स्वर्ग मोक्षके मार्गका उपदेश करनेवाला होय सो कापथघट्टनविशेषण सहित आगम है अर जो शृंगार वीर रसादिकका वर्णनकरि कुमार्गमैं प्रवर्तावनेवाला तथा जुवा मांसभक्षणादिक खोटे विसनिरूप मार्गमैं तथा संसारमैं डबोवनेके कारण जो रागी, द्वेषी,

विषयी, कषायी देव तिनकी सेवा तथा पाषंडी भेषीनिकी उपासना मिथ्या धर्मरूप कुमार्ग तिनमैं प्रवर्तिरूप कथनी जामैं होय सो खोटा आगम है। जो विशेष नहीं समझैं तिनकूं भी इतना समझना चाहिये जो वीतरागका आगम होयगा तामैं रागादिक विषय कषायका अभाव अर समस्त जीवनिकी दया ये दोय तो प्रधान होय ही। ऐसैं एक श्लोकमैं आगमका लक्षण कह्या। अब तपस्वी जो सत्यार्थगुरु ताका स्वरूप कहैं हैं,—

विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः। ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥ १० ॥

अर्थ—जो पांच इंद्रियनिकी विषयानकी जो आशा कहिये वांछा ताकरि रहित होय, छह कायके जीवनिका घात करनेवाला आरंभ करि रहित होय अर अंतरंग बहिरंग समस्त परिग्रहकरि रहित होय अर ज्ञान ध्यान तपमैं आसक्त होय ऐसैं चारि विशेषण सहित जो तपस्वी कहिये गुरु सो प्रशंसा करिये है ॥ १० ॥

जो रसना इंद्रियका लंपटी होय, नाना रसनिके स्वादकी आशाके वशीभूत होय रह्या होय तथा कर्ण इंद्रियका वशीभूत होय, अपना यश प्रशंसा सुनवाका इच्छुक होय, अभिमानी होय तथा नेत्रादिककरि रूप महल मंदिर वन बाग ग्राम आभरण वस्त्रादिक देखनेका इच्छुक तथा कोमल शय्या कोमल ऊंचा आसन ऊपरि सोवने बैठनेका इच्छुक, सुगंधादिक ग्रहण करनेका इच्छुक, विषयोंका लंपटी होय सो औरनिकूं विषयनितैं छुडाय वीतराग मार्गमैं नहीं प्रवर्तावै, सराग मार्गमैं लगाय संसार समुद्रमें डबोय देय है। तातैं विषयनिकी आशाके वश नहीं होय सो ही गुरु आराधन करने वंदने योग्य है। जातैं विषयनिमैं जाके अनुराग होय सो तो आत्मज्ञानरहित बहिरात्मा है गुरु कैसैं होय बहुरि जाकै त्रसस्थावर जीवनिका घातका आरंभ होय ताकै पापका भय नहीं पापिष्ठकै गुरुपना कैसैं संभवै। बहुरि जो चौदहप्रकार अंतरंगपरिग्रह अर दसप्रकार बहिरंगपरिग्रहसहित होय? सो गुरु कैसैं होय परिग्रही तो आप ही

संसारमैं फंसरह्या है सो अन्यका उद्धारक गुरु कैसैं होय। इहां मिथ्यात्व १ वेद जो स्त्री पुरुष नपुंसक २ राग ३ द्वेष ४ हास्य ५ रति ६ अराति ७ शोक ८ भय ९ जुगुप्सा १० क्रोध ११ मान १२ माया १३ लोभ १४ ऐसैं चौदहप्रकार अंतरंग परिग्रह हैं। इनका स्वरूप कहिये है,—यद्यपि मनुष्यादि पर्याय अर शरीर अर शरीरका नाम शरीरका रूप तथा शरीरके आधार जाति, कुल, पदस्थ, राज्य, धन, कुटुंब, जस अपजस, ऊंच नीचपना, निर्धनपना, मान्यता अमान्यता, ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादिक वर्ण, स्वामी सेवक, जती गृहस्थपना इत्यादिक वहुत प्रकार हैं ते पुद्गलनिकी रचनामय कर्मनिके कियेहुये प्रत्यक्ष देखै है, सुनै है, अनुभवै है जो ये विनाशीक हैं पुद्गलमय हैं मेरा स्वरूप नहीं है ऐसैं आछीतरह वारंवार निर्णय करि राख्या है तो हू अनादिकालतैं मिथ्यात्वकर्मका उदयकरि ऐसा संस्कार दृढ होय रह्या है जो इनका नाशतैं आपका नाश मानै है। इनके घटनेतैं अपना घटना, वढनेतैं अपना वधजाना ऊंचापना नीचापना मानि समस्त देहादिकमय होय रहैं हैं। यद्यपि अपने वचनकरि इन समस्तकूं पररूप कहैं हैं हमारा नहीं, पराधीन विनाशीक है तथापि अभ्यंतर इनका संयोग वियोगमैं रागद्वेषसुखदुःखरूप अपने आत्माका होना सो मिथ्यत्वनाम परिग्रह है॥ १॥ वहुरि स्त्री पुरुष नपुंमकादिकमैं कामसेवनेरूप राग अंतरंगमैं होना सो वेद नामका परिग्रह है ॥ २॥ परद्रव्य जो देह धन स्त्री पुत्रादिकनिमैं रंजायमान होना सो रागपरिग्रह है॥ ३॥ परका ऐश्वर्य यौवन धन संपदा यश राज्य विभवादिकतैं वैर रखना सो द्वेषपरिग्रह है॥ ४॥ हास्यके परिणाम सो हास्यपरिग्रह है॥ ५॥ अपना मरण होनेतैं वियोग वेदनादि होनेतैं डरपना सो भयपरिग्रह है ॥ ६॥ आपके रागकरनेवाला पदार्थमैं आसक्ततातैं लीन होना सो रतिपरिग्रह है ॥ ७॥ आपकूं अनिष्ट लागै तिसमैं परिणाम नहीं लगना सो अरातिपरिग्रह है ॥ ८॥ इष्टका वियोग होतैं क्लेशरूप परिणाम होना सो शोकपरिग्रह है ॥ ९॥ घृणावान वस्तुको देख श्रवण स्पर्शन चिंतवनादिक करि परिणाममैं ग्लानि उपजना सो जुगुप्सापरिग्रह है अथवा परका उदय

देख सुहावे नहीं सो जुगुप्सापरिग्रह है ॥ १० ॥ रोषके परिणाम सो क्रोधपरिग्रह है ॥ ११ ॥ ऊंच जाति कुल तप रूप ज्ञान विज्ञान ऐश्वर्य बल इत्यादिका मद करनेकरि आपकूं ऊंचा अर परकूं नीचा समझि कठोर परिणाम होना सो मानपरिग्रह है ॥ १२ ॥ कपटालिये वक्रपरिणाम सो मायापरिग्रह है ॥ १३ ॥ परद्रव्य-निमैं चाहरूप परिणाम सो लोभपरिग्रह है ॥ १४ ॥ ऐसैं संसारका मूल आत्माका घातक तीव्रबंधके कारण चतुदर्शप्रकार अभ्यंतरपरिग्रह हैं । अर क्षेत्र १ वास्तु २ हिरण्य ३ सुवर्ण ४ धन ५ धान्य ६ दासी ७ दास ८ कुप्य ९ भांड १० ऐसैं दशभेदरूप बाह्यपरिग्रह है। ऐसैं अंतरंग बहिरंग चौवीसप्रकारके परिग्रहरहित निर्ग्रंथ मुनिकैं ही गुरुपना निश्चय करना। संयमधारण करके भी अंतरंग बाहिरंग परिग्रह-करि जिनका मन मलीन है तिनके गुरुपना नहीं बनै है । बहुरि जे निरंतर दिवस रात्रिविषै चालते हालते बैठते भोजन करते हू ज्ञानाभ्यासमैं धर्मध्यानमैं इच्छानिरोध नाम तपमैं आसक्त हैं ते गुरु प्रशंसायोग्य मान्य हैं पूज्य हैं वंद्य हैं इन गुणनि विना अन्यकूं सम्यग्दृष्टि वंदनादिक नाहीं करै है। अथवा "ज्ञानध्यानतपोरत्नः" ऐसा हू पाठ है याका अर्थ ऐसा है ज्ञान ध्यान तप ही हैं रत्न जाके ऐसा गुरु होय है। ऐसा गुरुका स्वरूप कह्या। ऐसैं देव गुरु आगमका श्रद्धान है लक्षण जाका ऐसा सम्यग्दर्शन ताका निःशंकित नाम गुण कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

इदमेवेदृशमेव तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा । इत्यकम्पायसाम्भोवत्सन्मार्गेऽसंशया रुचिः ॥ ११ ॥

अर्थ—इदं कहिए यह आप्त आगम गुरुका लक्षण कह्या सो ही तत्त्वभूत सत्यार्थ स्वरूप है। ईदृशं कहिये इसप्रकार ही है अन्यप्रकार नाहीं। ऐसैं अकंप जो खड्गको जल तिसकी ज्यों सन्मार्गमैं संशयरहित जो रुचि कहिये श्रद्धान सो निःशंकित गुण है ॥ ११ ॥ भावार्थ—संसारमें जब अनेक प्रकारके गदा चक्र त्रिशूलादिक आयुध अर स्त्रीनिमैं अति आसक्त क्रोधी मानी मायाचारी लोभी अपना कर्तव्य दिखावनेके इच्छकानिकूं देव कहैं हैं अर हिंसा तथा काम क्रोधादिकनिमैं धर्मका प्ररूपक आगमकूं आगम

कहैं हैं, अनेक पाखंडी लोभी कामी अभिमानीनिकूं गुरु कहैं हैं सो कदाचित् नहीं है। ऐसा जाके दृढ श्रद्धान है मूढनिकी खोटी युक्तिकरि जाका चित्त चलायमान नहीं होय तथा खोटे देवतानिके विकार करनेकरि मंत्र तंत्रादिककरि परिणाम विकारी नहीं होय है। जैसैं खड्गका जल पवनकरि चलायमान नहीं होय तैसैं परिणाम सत्यार्थ देव गुरु धर्मके स्वरूपतैं मिथ्यादृष्टीनिके वचनरूप पवनकरि संशयकूं नहीं प्राप्त होय तिसके निःशंकितगुण होय है। इहां और हू विशेष कहिये हैं,—

जो आत्मतत्त्वका स्वरूप निर्दोष आगममैं कह्या ताकूं स्वानुभवकरि आपकूं आप जाण्या अर पर पुद्गलनिके संबंधकूं पररूप जाण्या सो सम्यग्दृष्टि सप्तभयकरिरहित होय निःशंकितगुणकूं प्राप्त होय है। सो सप्तभयके नाम कहैं हैं—इसलोकका भय १ परलोकका भय २ मरणका भय ३ वेदनाभय ४ अनरक्षक भय ५ अगुप्तिभय ६ अकस्मात्भय ७। तिनिमैं अपना परिग्रह कुटुंबादिक तथा आजीविकादिक बिगडि जानेका भय सो इसलोकका भय है सो समस्त संसारी जीवनिकै है। बहुरि जो परलोकमैं कौन गति क्षेत्रकूं प्राप्त हूंगा ऐसा परलोकका भय है। बहुरि मरण होनेका बडा भय जो मेरा नाश होयगा, नहीं जानिये कैसा दुःख होयगा मेरा अभाव होयगा ऐसा मरणभय है। बहुरि रोगादिक कष्ट आवनेका भय सो वेदना भय है। बहुरि अपना कोऊ रक्षक नहीं ऐसा जानि भय करना सो अनरक्षक भय जानना। बहुरि अपनी वस्तुका चोरनेका भय सो अगुप्ति भय है। बहुरि अकस्मात् अचानक दुःख उपजनेका भय सो अकस्मात् भय है। अपना अर परका स्वरूपकूं सम्यक् जाननेवाला सम्यग्दृष्टिकै ये सप्त भय नाश होय हैं। इस देहमैं पगके नखतैं लगाय मस्तकपर्यंत जो ज्ञान है चैतन्य है सो हमारा धन है इस ज्ञानभावतैं अन्य एक परमाणूं मात्र हू हमारा नाहीं है। देह अर देहके संबंधी जे स्त्री पुत्र धन धान्य राज्य विभवादिक हैं ते मोतैं भिन्न परद्रव्य हैं संयोगतैं उपजैं हैं हमारा इनका कहा संबंध? संसारमैं ऐसे संबंध अनंतानंत होय वियोग भये हैं। जिनका संयोग भया है तिनका वियोग निश्चयतैं होयहीगा।

जो उपजा है सो विनसैगा। मैं ज्ञानस्वरूप आतमा उपज्या नाहीं, विनसूंगा नाहीं, ऐसा जाके दृढ निश्चय है तिसकै देह छूटनेका अर दसप्रकार परिग्रहका वियोग होनेका भय नहीं तदि इसलोकके भयरहित सम्यग्दृष्टि निःशंक है। बहुरि सम्यग्दृष्टिकै परलोकका भय हू नहीं है। जिसमें समस्त वस्तु अवलोकन करिये सो लोक है। जातैं हमारा लोक तो हमारा ज्ञानदर्शन है जिसमैं समस्त प्रतिबिंबित होय रहे हैं।

भावार्थ—जो समस्त वस्तु झलकैं हैं सो हमारा ज्ञानस्वभावमैं अवलोकन करूं हूं हमारे ज्ञानके बाह्य किसी वस्तुकूं मैं नहीं देखू हूं, नहीं जाणूं हूं। जो कदाचित् हमारा ज्ञान है सो निद्राकरि मुद्रित होय जाय तथा रोगादिक करि मूर्छाकरि मुद्रित होय जाय तो समस्त लोक विद्यमान है तो हू अभावरूपसा ही भया यातैं हमारा लोक तो हमारा ज्ञान ही है। हमारा ज्ञान बाह्य किसी वस्तुकूं देखने जाननेमैं आवै नहीं है अर हमारे ज्ञानतैं बाह्य जो लोक है जिसमैं नानाप्रकार नरकस्वर्ग सर्वज्ञके प्रत्यक्ष है सो सब मेरा स्वभावतैं अन्य है। पुण्यका उदय है सो देवादिक शुभगतिका देनेवाला है। अर पापका उदय है सो नरकादिक अशुभगतिका देनेवाला है यातैं पाप पुण्य दोऊ ही विनाशीक हैं अर स्वर्गनरकादिक पुण्य पापका फल हू विनाशीक है। अर मैं आतमा ज्ञानदर्शनसुखवीर्यका अविनाशपणानै धारण करता अखंड हूं अविनाशी हूं मोक्षका नायक हूं मेरा लोक मेरे मांहीं ही है। तिसहीमैं समस्त वस्तूकूं अवलोकन करता बसूं हूं। ऐसैं परलोकका भयकूं नहीं प्राप्त होता सम्यग्दृष्टि निश्शंक है। बहुरि स्पर्शन रसना घ्राण नेत्र कर्ण ये पंच इंद्रिय अर मनवचनकायका बल अर आयु अर श्वासोश्वास ये कर्मनिकरि रचे बाह्यप्राण हैं पुद्गलमय हैं इन प्राणनिका नाशकूं जगतमैं मरण कहै हैं अर आत्माका ज्ञान दर्शन सुख सत्तारूप भावप्राण हैं तिनका नाश कोऊ कालमैं हू नाहीं है। यातैं जो उपजैगा सो मरैगा सो पुद्गल परमाणु संचयकूं प्राप्त होय इंद्रियादिक प्राणस्वरूपकरि उपजैं हैं ये ही विनसैं हैं मेरा स्वभावरूप ज्ञान दर्शन सुख सत्ता कदाचित तीन कालमैं हू विनाशीक नाहीं हैं। इंद्रियादिक प्राण पर्यायकी लार उपजैं हैं विनसैं हैं

मैं तो चैतन्य अविनाशी हूं ऐसा निश्चयका धारक सम्यग्दृष्टिके मरणके भयकी शंका नाहीं है। बहुरि वेदना भयकूं जीत निःशंक है। वेदना नाम जाननेका है सो जाननेवाला मैं जीव हूं सो अपना एक अचलज्ञानका ही अनुभव करूं हूं सो तो वेदना अविनाशीक है। सो ज्ञानका अनुभव वेदना तो शरीरविषै नाहीं है अर वेदनीयकर्मजनित सुखदुःखरूप वेदना है सो मोहकी महिमातैं आपमैं ही दीखै है परन्तु मेरा रूप नाहीं है शरीरमैं है। मैं इसतैं भिन्न ज्ञाता हूं ऐसैं ज्ञानवेदनातैं देहकी वेदनाकूं भिन्न जानता सम्यग्दृष्टि निःशंक है। बहुरि अनरक्षकभय हू सम्यग्दृष्टिकै नाहीं होय है जातैं जगतविषै जो सत्तारूप वस्तु है ताका त्रिकालहूमैं नाश नाहीं है ऐसा हमारे दृढ निश्चय है तातैं मेरा ज्ञानस्वरूप आत्मा हू स्वयं किसीकी सहाय विना ही सत् है। यातैं याका कोऊ रक्षा करनेवाला हू नाहीं अर कोऊ याका विनाश करनेवाला भी नाहीं है। जाका कोऊ विनाश करनेवाला होय ताका रक्षक हू कहूं देख्या चाहिये तातैं सम्यग्दृष्टि अविनाशी स्वरूपकूं अनुभव करता अनरक्षाभयरहित निःशंक है। बहुरि अगुप्तिभय जो कपाटादिककी रक्षाविना हमारा धन नष्ट होय जासी ऐसा चोरको भय सो हू नहीं है जो वस्तुका स्वरूप निजरूप अपने स्वरूपके मांहीं ही है अपना रूप आपतैं बाहर नाहीं है यातैं चैतन्यस्वरूप जो मैं आत्मा ताका चैतन्यरूप हमारे मांही ही है यामैं परका प्रवेश नाहीं। यो अनंत ज्ञान दर्शन हमारा रूप सो ही हमारा अप्रमाण अविनाशी धन है यामैं चोरका प्रवेश नाहीं चोर हर सकै नहीं तातैं सम्यग्दृष्टि अगुप्तिभयरहित निःशंक है। बहुरि सम्यग्दृष्टिके अकस्मात्‌भय हू नाहीं है जातैं मेरा आत्मा तो सदा काल शुद्ध है दृष्टा है अचल है अनादि है अनंत है स्वभावतैं सिद्ध है अलक्ष है चैतन्य प्रकाशरूप सुखका स्थानक है इसमैं अचानक कछु हू होना नाहीं है ऐसैं दृढभावयुक्त सम्यग्दृष्टि निःशंक है। जाके सम्यग्दर्शन है ताके परिणाममैं सप्त भय नहीं है सत्यार्थ अपना स्वरूप जानै विना सप्तभयरहित अपना आत्मा नहीं होय है। बहुरि सम्यग्दृष्टि अहिंसाकूं ही धर्म निश्चयरूप जानै है जाकै ऐसी शंका नाहीं

उपजै है जो यज्ञ होमादिक जीव घातके आरम्भ इनमैं हू धर्म कछु तो होयगा ऐसी शंकाका अभाव सो निःशंकित अंग है। अब एक श्लोक करि दूजे निःकांक्षितगुणकूं कहैं हैं—

कर्मपरवशे सांते दुःखैरन्तरितोदये। पापबीजे सुखेऽनास्था श्रद्धानाकाङ्क्षणा स्मृता ॥ १२ ॥

अर्थ—जो इंद्रियजनित सुखमैं सुखपनाकी आस्थारहित श्रद्धानभाव सो अनाकांक्षणा नामा सम्यक्त्व-का गुण भगवान कह्या है। कैसाक है इंद्रियजनित सुख, कर्मनिके परवश है स्वाधीन नहीं है पुण्यकर्मके उदयके आधीन है। पुण्यकर्मका उदयके सहाय बिना कोट्यां उपाय महान पुरुषार्थ करते हू सुखकी प्राप्ति नहीं होय है इष्टका लाभ नहीं होय है बहुत अनिष्टको प्राप्त होय है अर कदाचित् पुण्यके उदय करि सुखकूं प्राप्त भी होय तो सो सुख अन्तकरि सहित है पराधीन कितने काल भोगेगा? जातैं इंद्रियजनितसुख है सो अपने इष्ट विषयके आधीन है अर इष्टको समागम है सो विनाशीक है। इंद्रधनुषवत् विजुरीका चमत्कारवत् क्षणभंगुर है तथा पराधीन है शरीरकी नीरोगताके आधीन तथा धनके आधीन स्त्रीके आधीन पुत्रके आधीन आयुके आधीन जीविकाके आधीन तथा क्षेत्रके आधीन कालके आधीन इंद्रियनिके आधीन इंद्रियनिके विषयके आधीन इत्यादिक हजारां पराधीनताकरि सहित अर पतनके सम्मुख केतक काल भोगनेमैं आवै है तातैं इंद्रियजनित सुख है सो अवश्य अंतकरि सहित ही है। अर अन्तकरि सहित है तो हू अखंड धारा प्रवाहरूप नहीं है बीचि बीचिमैं अनेक दुःखनिके उदय सहित है। कदे तो रोग आय जाय है, कदे स्त्री पुत्र मित्रको वियोग होना, कदे अपमानको होना, कदे धनकी हानि होना, कदे अनिष्टको संयोग होना, ऐसैं अन्तरित अनेक दुःखनिसहित है। बहुरि पापका बीज है इंद्रियजनित सुखनिमैं लीन होते अपना स्वरूप भूलै ही अर महाघोर आरम्भमैं तो प्रवर्तै ही अन्यायके विषयसेवन करै ही यातैं पापबंध होय ही तातैं इंद्रियजनित सुख नरक तिर्यंचादिक गतिमैं परिभ्रमण करावनेवाला पापबंधका बीज है। ऐसा पराधीन अंतसहित दुःखनिकरि व्याप्त जे इंद्रियजनित

सुख हैं ते सम्यग्दृष्टिकूं सुख नहीं दीखैं हैं तदि सुखमैं आस्थारूप श्रद्धान कैसैं होय? जब श्रद्धान ही नहीं तदि वांछा कैसैं करै? भाव ऐसा जानना जो सम्यग्दृष्टि है ताकै आत्माका अनुभव होय ही अर आत्माका अनुभव भया तब आत्माका स्वभाव जो अतींद्रिय अनंतज्ञान अर निराकुलतालक्षण अविनाशीक सुख तिसका अनुभव होय है। जातैं संसारीनिकै जो इंद्रियनिके आधीन सुख है सो तो सुखाभास है, सुख नाहीं है, वेदनाका इलाज है जाकै क्षुधाकी तीव्र वेदना उपजैगी सो भोजन करि सुख मानैगा। तृषा उपजैगी सो शीतलजल पीया चाहैगा। शीतकी वेदना व्यापैगी सो रुईका वस्त्र तथा रोमादिकका वस्त्र ओढ्या चाहैगा। गरमीकी वेदना उपजैगी सो शीतल पवन चाहैगा जातैं वेदना विना इलाज कौन चाहै? नेत्ररोग विना खपऱ्यो नेत्रानिमैं कौन क्षेपै? कर्णरोग बिना बकराका मूत्र तथा तैलादिक कर्णमैं कौन क्षेपै? तथा शीतज्वरकी वेदना विना अग्निका ताप तथा सूर्यका आताप आदरतैं कौन सेवन करै? तथा वातरोग विना दुर्गंध तैलादिकका मर्दनादिक कौन आदरै? तातैं इन संसारीक पांचू इंद्रियनिके विषयनिकी तीव्र चाहरूप आताप उपजै है तदि विषयनिकै भोगनेकी इच्छा उपजै है। तातैं विषय भोगना तो उपजी हुई वेदनाकूं थोरे काल शांति करै है फिर अधिक अधिक वेदना उपजावै है यातैं इंद्रियनिके विषयनिकै भोगनेतैं उपज्या सुख है सो तो दुःख ही है। बाह्यशरीर इंद्रियादिककूं ही आत्मा जाननेवाला बहिरात्मा है सो विषयनिकी वेदनापूर्वक इलाजकूं सुख मानै है। सो मानना मोहकर्मजनित भ्रम है सुख तो वेदना ही नाहीं उपजै ऐसा निराकुलतालक्षणरूप है। विषयनिके आधीन सुख मानना मिथ्या श्रद्धान है, यातैं सम्यग्दृष्टिकूं अहमिंद्रलोकका हू सुख पराधीन आकुलतारूप विनाशीक केवल दुःखरूप ही दीखै है। तातैं सम्यग्दृष्टिकै इंद्रियजनित सुखमैं वांछा कदाचित् नहीं होय है। इस जन्ममैं तो धन सम्पदा विभवादिक नाहीं चाहै है अर परलोकमैं इंद्रपना चक्रीपना इत्यादिक कदाचित् हू नाहीं चाहै है ए इंद्रियनिके विषय तो अल्पकाल हैं अर आगैं इनका फल

असंख्यातकाल नरकका दुःख तथा अनंतकाल असंख्यातकाल तिर्यंचादिक गतिनिमें तथा महादरिद्री महारोगी नीच कुलके धारक कुमानुषनिमें अनेक जन्म धारणकरि दुःख भोगवै है। इस जगतमें आशा अर शंका दोऊ मोहके उदयकरि जीवके निरंतर वर्तें हैं। सो आशा किये कुछ प्राप्ति होय नाहीं है। समस्त जीव अपने नित्य ही धनकी प्राप्ति नीरोगता कुटुम्बकी वृद्धि इंद्रियनिका बल अपनी उच्चता चाहैं हैं परंतु चाह किये कुछ होय नहीं है समस्त जीव चाहकरि निरंतर पापका बंध अर अंतरायका तीव्र बंध करैं हैं। अर केतक भोगाभिलाषी होय दान तप व्रत शील संयम धारण करैं हैं परंतु वांछा करि पुण्यका घात होय है। पुण्यबंध तो निर्वांछककै होय है। तथा शुभ अशुभ कर्मके दिये विषयनिमें संतोषी होय निराकुल होय विषयनिमें वांछा नहीं करै तिसके पुण्यका बंध होय है। बहुरि समस्त जीव नित उठ यह चाहैं हैं मेरे वियोग मरण हानि अपमान धनका नाश रोग वेदना मत होहु। निरंतर इनकी शंका करैं हैं बहुत भय करैं हैं तोहू वियोग होय ही मरण होय ही तथा धनहानि बलहानि अपमान रोग वेदना पूर्वकर्मबंध किये तिनके अनुकूल होय ही। तिनकूं टालनेकूं इंद्र जिनेंद्र मंत्र तंत्रादिक कोऊ समर्थ नहीं क्योंकि मरण होय है सो आयुकर्मका नाशतैं होय है। अलाभादिक अंतरायकर्मके उदयतैं होय रोग वेदनादिक असाता कर्मके उदयतैं होय है। अर कर्मकूं हरनेमें अर देनेमें अर पलटनेमें कोऊ देव दानव इंद्र जिनेंद्रादिक समर्थ हैं नहीं। अपने भावनिकरि बंध किये कर्मनितैं अपने किये संतोष क्षमा तपश्चरणादिक भावनिकरि छुडावनेकूं आप ही समर्थ है अन्य नहीं। ऐसैं दृढनिश्चयका धारक निःशंक निर्वांछक सम्यग्दृष्टि ही होय है।

इहां कोऊ प्रश्न करै है,—जो सकल परिग्रहके त्यागी जे मुनीश्वर साधु तिनकै तथा त्यागी गृहस्थनिकै तो शंकारहितपना तथा वांछाका अभावपना होय सकै है परन्तु व्रतरहित गृहस्थोनिकै निःशंकित निकांक्षित कैसैं संभवै। अव्रतसम्यग्दृष्टि गृहस्थीके भोगनिकी इच्छा देखिये है। वणिज व्यवहारमें सेवा

करनेमैं लाभ चाहै ही है अपने कुटुम्बकी वृद्धि धनकी वृद्धि वांछै ही है तथा रोगकी शंका कुटुम्बके वियोगकी शंका जीविकाके बिगाडि जानेकी धनके नाश होनेकी शंका निरंतर वर्तै है। तादि निःशंकपना निर्वांछकपना कैसैं होय ? अर निःकांक्षितभाव विना सम्यक्त्व कैसैं होय, तातैं अव्रती गृहस्थीकै सम्यक्त्व होना कैसैं संभवै ? तिसका उत्तर ऐसा जानना—

जो सम्यक्त्व होय है सो मिथ्यात्व अर अनंतानुबंधी कषायके अभावतैं होय है यातैं अव्रतसम्यग्दृष्टि गृहस्थकै मिथ्यात्वका अभाव भया अर अनंतानुबंधी कषायका हू अभाव भया तातैं मिथ्यात्वके अभावतैं तो सत्यार्थ आत्मतत्वका अर परतत्वका श्रद्धान प्रगट होय है। अर अनंतानुबंधी कषायके अभावतैं विपरीत रागभावका अभाव भया तादि ज्ञान श्रद्धानकी विपरीतताका अभावतैं इसलोक परलोक मरणभय आदिक सप्त भय अव्रतसम्यग्दृष्टिकै नहीं है याहीतैं अपने आत्माकूं अविनाशी टंकोत्कीर्ण ज्ञान दर्शन स्वभाव श्रद्धान करै है। अर विपरीत जो पर वस्तुमैं वांछा ताका अभावतैं समस्त इंद्रियानिके विषयानिमैं वांछा-रहित है। स्वर्गलोकमैं उपजे इंद्र अहमिंद्रानिके हू विषयभोगानिकूं विष समान दाह दुःखके उपजावने-वाले जानि कदाचित् स्वप्नमैं हू वांछा नहीं करै है। अपना आत्माधीन निराकुलतालक्षणरूप अविनाशी ज्ञानानंदहीकूं सुख मानै है अर अपने देहकूं धन सम्पदादिकनिकूं कर्मजनित पराधीन विनाशीक दुःख-रूप जानि ये हमारा है ऐसा विपरीत झूंठा संकल्प हू नाहीं करै है। यातैं अनंतानुबंधी कषायके उदय-जनित विपरीत झूठा भय शंका परवस्तुमैं वांछा अव्रतम्यग्दृष्टिके कदाचित् नाहीं है। परंतु अप्रत्याख्या-नावरण कषाय प्रत्याख्यानावरण कषाय संज्वलन कषाय तथा हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुंसक वेद इन इकवीस कषायके तीव्र उदयतैं उपज्या रागभावका प्रभावकरि इंद्रिय-निका आतापका मारचा त्यागतैं परिणाम काँपै हैं। यद्यपि विषयानिकूं दुःखरूप जानै है तथापि वर्त-मानकालकी वेदना सहनेकूं समर्थ नाहीं। जैसैं रोगी कवडी औषधिकूं कदाचित् पीवना भला नहीं जानै

है तथापि वेदनका मार्‍या कडवी औषधिकूं बडा आदरतैं पीवै है परंतु अंतरंगमैं औषधि पीवना महा बुरा जानै जो ऐसा दिन कब आवैगा जिस दिन औषधिका नाम भी ग्रहण नहीं करूंगा तैसैं अव्रतसम्यग्दृष्टि हू भोगनिकूं भला कदाचित् नहीं जानै है परंतु तिन विना निर्वाह होता दीखै नाहीं परिणामनिकी दृढता दीखै नाहीं। कषायनिका प्रबल धक्का लागि रह्या है इंद्रियनिका आताप सह्या जाय नहीं यातैं वेदनाका मार्‍या वांछे है। संहनन कच्चा, कोऊ सहाई दीखै नहीं, कषायनिका उदयकरि शक्ति नष्ट होय रही है, परवासि पड्या है तथा जैसैं बन्दीगृहमैं पड्या पुरुष बन्दीगृहमैं अति विरक्त है तथापि पराधीन पड्या महादुःखका देनेवाला बन्दीगृहकूं ही लीपै है धोवै है भूवारै है। तैसैं सम्यग्दृष्टि हू बंदीगृह समान देहकूं जानता क्षुधा तृषादिक वेदना सहनेकूं असमर्थ हुआ देहकूं अपना नाहीं जानै है। वर्तमानकालकी वेदनाका ही याकै भय है। अर वेदना मेटने मात्रही अव्रतसम्यग्दृष्टिकै वांछा है। कर्मके उदयके जालमैं फँसा है। निकल्या चाहै है। तथापि राग द्वेष अभिमान अप्रत्याख्यानका संबंधही ऐसा है सो त्याग व्रतादिक चाहै है तो हू नाहीं होने देहै। उदयकी दशा बडी बलवान है संसारी जीव अनादितैं कर्मके उदयके जालमैंसैं निकल नाहीं सकै हैं। देहका संयोग बनि रह्या तितने देहका निर्वाहकेअर्थि जीविका भोजन वस्त्रकूं वांछैही है। तथा अप्रत्याख्यान कषायका उदयकरि लोकमैं अपनी नीची प्रवृत्तिका अभावरूप उच्चप्रवृत्ति चाहै ही है। धन संपदा जीविका बिगड जानेका भय करै ही है तिरस्कार होनेका भय करै ही है। इंद्रियनिका संताप सहनेकी असमर्थपनातैं विषयानिकूं वांछै है जातैं कषाय घटी नाहीं, राग घट्या नाहीं तातैं आगामी बहुत दुःख उपजतो दीखै ताकूं टाल्या चाहै ही है तथापि राज्यभोगसंपदानिकूं सुखकारी जानि बांछा नाहीं करै है। ऐसैं निःकांक्षित अंगका लक्षण कह्या। अब निर्विचिकित्सा नामा तीसरा अंगका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं,–

स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते। निर्जुगुप्सागुणप्रीतिर्मता निर्विचिकित्सिता ॥ १३ ॥

५

अर्थ—यो मनुष्य पर्यायका काय है सो स्वभावहीतैं अशुचि है यामैं कोऊ उत्तम मनुष्यके रत्नत्रय प्रकट होजाय तो अशुचि भी काय पवित्र है । यातैं व्रतीनिका देह रोगादिकतैं मलिन हू देख इसमैं जुगुप्सा जो ग्लानि ताका अभाव अर रत्नत्रयमैं प्रीति सो निर्विचिकित्सित नाम अंग है ॥ १३ ॥

भावार्थ—यो देह तो सप्तधातुमय तथा मलमूत्रादिकमय है । स्वभावहीतैं अशुचि है । यो देह तो रत्नत्रयस्वरूप प्रगट होनेतैं पवित्र है यातैं रोगसहित तथा वृद्धता तथा तपश्चरणकरि क्षीणता मलीनता देख ग्लानि जाकै नाहीं होय अर गुणनिमैं प्रीति होय ताकै निर्विचिकित्सा नाम अंग है । यहां ऐसा विशेष जानना । जो सम्यग्दृष्टि है सो वस्तुका सत्यार्थ स्वरूप जानै है । यातैं पुद्गलके नानास्वभाव जानि मल मूत्र रुधिर मांस राध सहित तथा दरिद्र रोगादिक सहित मनुष्य तिर्यंचनिका शरीरादिककी मलीनता दुर्गंधतादिक देखि करि तथा श्रवण करि ग्लानि नाहीं करै है । जो कर्मनिके उदय करि अनेक क्षुधा तृषा रोग दारिद्रादिककरि दुःखित होना तथा पराधीन बंदीगृहादिकमैं पडना नीच कुलादिकमैं उत्पन्न होना तथा नीचकर्मकरि मलीन भोजन करना महामलीन वस्त्र धारना खोटा रूप अंग उपांगादिकनिका पावना होय है । सम्यग्दृष्टि यामैं ग्लानि करि अपने मनकूं नाहीं बिगाडै है । तथा कषायांके आधीन होय निंद्य आचरण करते देख अपने परिणाम नाहीं बिगाडै है ताकै निर्विचिकित्सा अंग होय है । तथा मलीन क्षेत्र मलीन ग्राम तथा गृहादिकनिमैं मलीनता दरिद्रता देख ग्लानि नाहीं करै । तथा अंधकार वर्षा ग्रीष्म शीत वेदना ताकरि सहित कालकूं देख ग्लानि नाहीं करै बहुरि आपकै दरिद्रता तथा रोग आवता तथा वियोग होना तथा अशुभकर्मके उदयकूं आवता परिणामकूं मलीन नाहीं करै । जो मैं कर्मबंध किया ताके फलकूं मैं ही भोगूंगा अशुभ कर्मका फल तो ऐसा ही होय है ऐसैं जानि अपना परिणामकूं मलीन नाहीं करै । तिस पुरुषकै निर्विचिकित्सा अंग होय है । जिसके निर्विचिकित्सा अंग है तिसहीके दया है, तिसहीके वैयावृत्य होय, तिसहीके वात्सल्य स्थितिकरणादिक गुण प्रगट होय हैं ।

ऐसैं सम्यक्त्वका निर्विचिकित्सा नामा तीसरा अंग कह्या । अब अमूढदृष्टिनामा सम्यक्त्वका चौथा अंग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

कापथे पथि दुःखानां कापथस्थेऽप्यसंमतिः । असंपृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा दृष्टिरुच्यते ॥ १४ ॥

अर्थ—नरक तिर्यंच कुमानुषादि गतिनिका घोर दुःखनिका मार्ग ऐसा जो मिथ्यामार्ग तिसविषैं अर कुमार्गी जो मिथ्यामार्गमें तिष्ठनेवाले पुरुषनिविषैं जाकै मनकरि प्रशंसा नाहीं वचनकरि स्तवन नाहीं तथा कायकरि प्रशंसा जो अंगुलिनिके नखादिकनिका मिलाप नाहीं सराहनां नाहीं सो अमूढदृष्टि है ॥१४॥

इहां संसारी जीव मिथ्यात्वके प्रभावतैं रागद्वेषीदेवनिका पूजन प्रभावना देखि प्रशंसा करैं हैं देवी-निकै जीवनिकी विराधनाकी प्रशंसा करैं हैं तथा दशप्रकारके कुदानकूं भला जानैं हैं तथा यज्ञ होमादि-ककूं तथा खोटे मंत्र तंत्र मारण उच्चाटनादिक कर्मनिकी प्रशंसा करैं हैं तथा कुआ बावडी तालाब खुदा-वनेकी प्रशंसा करैं हैं तथा कंदमूल शाक पत्रादिक भक्षण करनेवालेनिकूं उच्च जानि प्रशंसा करैं हैं तथा पंचाग्निकरि तपनेवाले वाघंबर ओढनेवाले भस्म लगावनेवाले ऊर्ध्वबाहु रहनेवालेनिकूं महान उच्च जानैं हैं तथा गेरुकरि रंगे वस्त्र तथा रक्तवस्त्र तथा श्वेतवस्त्रादिकनिकूं धारण करते कुलिंगीनके मार्गनिकी प्रशंसा करैं हैं तथा खोटे तीर्थनिकी अर खोटे रागद्वेषी मोही वक्रपरिणामी शस्त्रधारी देवनिकूं पूज्य जानै हैं तथा जोगिनी यक्षिणी क्षेत्रपालादिकनिकूं धनके दातार मानैं हैं तथा रोगादिक मेटनेवाले मानैं हैं यक्ष क्षेत्रपाल पद्मावती चक्रेश्वरी इत्यादिकनिकूं जिनशासनके रक्षक मानि पूजैं हैं तथा देवतानिके कव-लाहार मानि तेल लापसी पूवा बडा अतर पुष्पमाला इत्यादिककरि देवतानिकूं राजी करना मानैं हैं तथा देवतानिकूं रिसवत देनाकरि विचारैं हैं जो मेरा अमुक कार्य सिद्ध होजाय तो तेरे छत्र चढाऊं तेरे मंदिर बनवाऊं तेरे रुपया चढाऊं तथा जीव मारि चढाऊं सवामणका चूरमा करि चढाऊं तथा बालक-निके जीवनेके अर्थि चोटी जडूला उतराऊं इत्यादिक अनेक बोली बोलना सो समस्त तीव्रमिथ्यात्वका

उदयका प्रभाव है। जहां जीवनिकी हिंसा तहां महा घोर पाप है जातैं देवतानिके निमित्त गुरुनिके निमित्त हिंसा संसार समुद्रमें डबोवनेवाली है। कोऊ देवादिकानिके भयतैं तथा लोभतैं तथा लज्जातैं हिंसाके आरंभमैं कदाचित् मत प्रवर्तो। दयावानकी तो देव रक्षा ही करै है जो किसीका अपराध नाहीं करै ताकी विराधना देव हू नाहीं कर सकै हैं। रागी द्वेषी शस्त्रधारी देव हैं ते तो आप ही दुःखी हैं भयभीत हैं असमर्थ हैं। समर्थ होय अर भयरहित होय सो शस्त्र कैसैं धारण करै। अर क्षुधावान होय सो ही भोजनादिक करि पूजा चाहै तातैं खोटे मार्ग जे संसारमैं पतनके कारण ऐसे मिथ्यादृष्टीनिके त्याग व्रत तप उपवास भक्ति दानादिक अर इनके धारण करनेवालेनिकी मनवचनकायकरि प्रशंसा नाहीं करै सो अमूढदृष्टिनामा सम्यक्त्वका अंग है। जातैं जाकै देव कुदेवका तथा धर्मकुधर्मका तथा गुरुकुगुरुका तथा पापपुण्यका तथा भक्ष्यअभक्ष्यका तथा त्याज्यअत्याज्यका आराध्यअनाराध्यका तथा कार्यअकार्यका तथा शास्त्रकुशास्त्रका दानकुदानका पात्रअपात्रका तथा देनेयोग्य नाहीं देनेयोग्यका तथा युक्तिकुयुक्तिका तथा कहनेयोग्य नाहीं कहनेयोग्यका ग्रहण करनेयोग्य नाहीं ग्रहण करनेयोग्यका अनेकांतरूप सर्वज्ञ वीतरागका परमागमतैं आछीतरह जानि निर्णय करि मूढतारहित होय पक्षपात छोड करकै व्यवहार परमार्थमैं विरोधरहित होय तैसैं श्रद्धान करना सो अमूढदृष्टिनामा चौथा अंग है। अत्र उपगूहन नामा सम्यक्त्वका पांचमा अंग प्ररूपण करनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

स्वयंशुद्धस्य मार्गस्य बालाशक्तजनाश्रयां। वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदन्त्युपगूहनं ॥ १५ ॥

अर्थ—यो जिनेंद्रभगवानको उपदेश्यो हुवो रत्नत्रयरूप मार्ग है सो स्वयमेव शुद्ध है निर्दोष है इस रत्नत्रयमार्गकै कोऊ अज्ञानीजनका आश्रय तथा कोऊ अशक्तजनकरि निंद्यता प्रगट भई होय ताहि जो दूर करैं शुद्ध निर्दोष करैं तानै उपगूहन कहिये हैं ॥ १५ ॥

इहां ऐसा जानना जो यो जिनेंद्र भगवानका उपदेश्या हुवा दशलक्षणरूपधर्म तथा रत्नत्रयधर्म

है सो अनादिनिधन है जगतके जीवनिका उपकार करनेवाला है। समस्तप्रकार निर्दोष है कोऊका हू यातैं अकल्याण नाहीं होय है अर कोऊकरि बाधा नाहीं दी जाय है ऐसा धर्मविषै कोऊ अज्ञानीके चूकनके निमित्ततैं तथा कोऊ शक्तिहीनके निमित्ततैं जो धर्मकी निन्दा होती होय ताकूं दूर करै आच्छादन करै सो उपगूहननामा अंग है। भावार्थ—अन्य मिथ्यादृष्टि लोक सुनैगें तो धर्मकी निंदा करैंगे तथा एक अज्ञानीकी चूक सुनि समस्त धर्मात्मानिकूं दूषण लगावैंगे। कहैंगे—इस जिनधर्ममैं तो जेते ये ज्ञानी तपस्वी त्यागी व्रती हैं ते पाखण्डी हैं गैरमार्गी हैं। एकका दोष देखि समस्त धर्म अर समस्त धर्मात्मा दूषित होय जांयगे तातैं धर्मात्मापुरुष होय सो धर्मात्मामैं कोऊ दोष हू लागि जाय तो धर्मसूं प्रीतिकरि धर्ममैं परके निमित्ततैं आगया दोषकूं ढांकै है। जैसैं माताकी पुत्रमैं ऐसी प्रीति है जो पुत्र कदाचित् अन्याय खोट हू करै तो ताके खोटकूं आच्छादन करै ही तैसैं धर्मात्मापुरुषकी साधर्मीतैं तथा धर्मतैं ऐसी प्रीति है जो कर्मके प्रबलउदयकरि कोऊ साधर्मीके अज्ञानतातैं तथा अशक्ततातैं व्रतमैं संयममैं शीलमैं दोष आजाय बिगडि जाय तो आपका सामर्थ्यप्रमाण तो आच्छादन ही करै। इहां विशेष ऐसा और हू जानना जो सम्यग्दृष्टिका स्वभाव ही ऐसा है जो कोऊ ही जीवका दोष प्रगट नाहीं करै अर अपना उच्चकर्तव्य प्रकाश नाहीं करै अपनी प्रशंसा परकी निंदा नाहीं करै है। सम्यग्दृष्टिकै परजीवनिके दोष हू देखि ऐसा विचार उपजै है जो इस संसारमैं जीवनिके अनादि कालका कर्मनिके वशीभूतपना है यातैं जहां मोहनीयका उदय तथा ज्ञानावरण दर्शनावरणका उदय प्रवर्तै है तहां दोषमैं प्रवर्तनेका अर चूकनेका कहा आश्चर्य है। जीवनिकूं काम क्रोध लोभादिक निरंतर मारैं हैं भुलावैं हैं भ्रष्ट करै हैं। हम हू संसारमैं रागद्वेष मोहके वशीभूत होय कौन २ अनर्थ नाहीं किये हैं अब कोऊ जिनेंद्रका परमागमका शरणका प्रसादतैं किंचित् दोषकी अर गुणकी पाहिचाण भई है तो हू अनादिकालका कषायनिका संस्कारकरि अनेक दोषनिमैं प्राप्त होय रहा हूं तातैं अन्यजीवनिके कर्मके उदयकी पराधीनतातैं भये दोषनिकूं देखि

करुणा ही करना। संसारी जीव विषयनिके अर कषायनिके वशभूत होय पराधीन हैं। ए कषाय अर विषय ज्ञानकूं बिगाडि नानाप्रकार नाच नचावैं हैं अर आपा भुलावैं हैं। तातैं अज्ञानी जनकृत दोषकूं देखि आप संक्लेश नाहीं करै है। क्षेत्रपालादिकके निमित्ततैं, जो भावी है, ताहि टालनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं है। ऐसैं उपगूहन नामा सम्यक्त्वका पंचम अंग कह्या। अब स्थितिकरणनामा सम्यक्त्वका छठा अंग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

दर्शनाच्चरणाद्वापि चलतां धर्मवत्सलः। प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः स्थितीकरणमुच्यते ॥ १६ ॥

अर्थ—कोऊ पुरुष सम्यग्दर्शनकरि सहित श्रद्धानी था तथा चारित्रधारक व्रत संयमसहित था फिर कोऊ प्रबल कषायके उदयकरि तथा खोटीसंगतिकरि तथा रोगकी तीव्र वेदनाकरि तथा दरिद्रताकरि तथा मिथ्याउपदेशकरि तथा मिथ्यादृष्टीनिके मंत्र तंत्रादिकचमत्कार देखि सत्यार्थ श्रद्धान आचरणतैं चलायमान होता होय तिनिकूं चलते जानि जिनकी धर्ममैं वात्सल्यता है ऐसे धर्मात्मा प्रवीण पुरुष ताकूं उपदेशादिककरि फिर सत्यार्थ श्रद्धानमैं चारित्रमैं स्थापन करैं सो स्थितिकरण कहिये॥ १६ ॥

इहां ऐसा जानना कोऊ धर्मात्मा अव्रतसम्यग्दृष्टि तथा व्रती पुरुषका परिणाम रोगकी वेदनाकरि तथा दारिद्रताकरि वियोगकरि धर्मतैं चिग जाय तो धर्ममैं प्रीतिके धारक प्रवीण पुरुष ताकूं धर्मतैं छूटता जानि ताकूं उपदेशकरि धर्ममैं स्थिर करै ताकै स्थितिकरण अंग है। भो धर्मके इच्छुक! धर्मानुरागी होय मनुष्यभव अर यामैं उत्तम कुल इंद्रियनिकी शक्ति धर्मका लाभ ये बहुत दुर्लभ मिल्या है अर छूटे पाछै इनका पावना अनंतकालमैं हू कठिन है तातैं कर्मका उदयकरि प्राप्त भया रोग वियोग दारिद्रादिक दुःख तिनकरि कायर होय आर्त्तपरिणामी होना योग्य नाहीं। दुःखित भये कर्मका अधिक बंध होयगा कायर होय भोगोगे तो कर्म नाहीं छाडैगा। अर धीरवीरपनाकरि भोगोगे तो हू नाहीं छाडैगा। तातैं दुर्गतिका कारण जो कायरता ताकूं धिकार होऊ। अब साहस धारण करो। मनुष्य जन्मका फल तो

धीरता तथा संतोषव्रतसहित धर्मका सेवन करि आत्माका उद्धार करना है। अर जो मनुष्यका देह है सो रोगनिका घर है इसमैं रोग उपजनेका कहा आश्चर्य है। यामैं तो धर्म ही शरण है। अर रोग तो उपजैहीगा अर संयोग है सो वियोगकरि सहित ही है। कौन कौन पुरुषनिपै दुःख नाहीं आये ? तातैं अपना साहस धारण करि एक धर्मका ही अवलम्बन करो। बहुरि जे जे वस्तु उपजै हैं ते ते समस्त विनाशसहित हैं जो देहहीका वियोग होयगा तो अन्य अपने कर्मके आधीन उपजैं मरैं तिनिका हर्ष विषाद करना वृथा, बन्धका कारण है।

बहुरि इस दुःषमकालके मनुष्य हैं ते अल्पआयु अल्पबुद्धि लिये ही उपजै हैं इस कालमैं कषायकी आधीनता अर विषयनिकी गृद्धिता बुद्धिकी मंदता रोगकी अधिकता ईर्षाकी बहुलयता दारिद्रतालिये ही बहुधा उपजै हैं तातैं सम्यग्ज्ञानकूं प्राप्त होय कर्मके जीतनेकूं उद्यम करना योग्य है कायर मति होहु। ऐसैं उपदेश देय परिणामकूं स्थिर करै। रोगी होय तो औषधि भोजन पथ्यादिक करि उपचार करै। द्वादशभावनाका स्मरण करावै शरीरकी टहल मलमूत्रादिक विकृतिको दूर करनेकरि जैसैं तैसैं परिणामनिकूं धर्मविषै दृढ करना सो स्थितिकरण है। तथा कोऊके रोगकी अधिकताकरि ज्ञान चलायमान हो जाय, व्रत भंग करने लागि जाय, अकालमैं भोजन पानादिक जाचवा लागि जाय, त्याग करी वस्तुकूं चाहिवा लगि जाय, ताकूं दयालु होय ऐसा मधुर उपदेशादिक करै जाकरि फिर सचेत होजाय वाकी अवज्ञा नहीं करै। कर्म वलवान है वातपित्तादिककरि ज्ञानका बिगडनेका कहा प्रमाण है। सो यहां बहुत उपदेश लिखनेकरि ग्रंथ वधि जाय तातैं थोरा ही करि वहुत समझना। तथा दारिद्रादिकरि पीडित ताकूं अपनी शक्तिप्रमाण उपदश तथा आहार पान वस्त्र जीविका रहनेका मकान तथा पात्र तथा जैसैं स्थंभन होय जाय तैसैं दान सन्मान उपाय करि स्थिर करना सो स्थितिकरण नामा सम्यक्त्वका छठा अंग है। जो अपना आत्मा हू नीतिमार्ग छोडता होय तथा काम मद लोभके वश होय अन्यायका विषय अन्याय

धनकी चाहरूप हो जाय तथा अयोग्य वचनमैं प्रवृत्ति करने लग जाय, तथा अभक्ष्यभक्षणमैं प्रवृत्ति होय जाय, अभिमानके वशी होय जाय, संतोषतैं चिगि जाय, अनेक परिग्रहोंमैं लालसा वधि जाय, कुटुंबमैं अतिराग बधि जाय, तथा रोगमैं कायर होय जाय, आर्तध्यानी हो जाय वियोगमैं शोकसहित होय जाय, तथा दरिद्रतातैं दीन होय जाय, उत्साहरहित आकुलतारूप हो जाय, ताकूं हू अध्यात्मशास्त्रका स्वाध्याय कराय भावनाको शरण ग्रहण कराय अपना आत्माका स्वभाव अजर अमर अविनाशी एकाकी अन्य परद्रव्यका स्वभावरहित चिंतवनकराय धर्मतैं नहीं छूटने देना। तथा असातादिक कर्म अंतराय-कर्म तथा अन्य हू कर्मका उदयकूं आपतैं भिन्न मानि कर्मका उदयतैं अपना स्वभावकूं नहीं चलने देना सो स्थितिकरण नामा छठा अंग है। अब वात्सल्यनामा सम्यक्त्वका सप्तम अंगके कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

स्वयूथ्यान् प्रति सद्भावसनाथापेतकैतवा। प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं वात्सल्यमभिलप्यते ॥ १७ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप धर्मके धारकानिका जो यूथ (समूह) सो धर्मात्माकै अपना यूथ है। रत्नत्रयके धारकानिका यूथमैं भये ऐसे मुनि आर्यिका श्रावक श्राविका तथा अव्रत सम्यग्दृष्टि तिनतैं सत्यार्थभावसहित अर कपटरहित यथायोग्य प्रतिपत्ति कहिये उठि खडा होना सन्मुख जाना बंदना करना गुणनिका स्तवन करना अंजुलि करना आज्ञा धारण करना पूजा प्रशंसा करना उच्चस्थान बैठाय आप नीचे बैठना तथा जैसैं कोऊ दरिद्रीकै महा निधानका लाभतैं हर्ष होय तैसैं धारना महान् प्रीतिका उपजाना अर यथाअवसरमैं आहार पान वस्तिका उपकरणादिक करि वैयावृत्य करि आनन्द मानना सो वात्सल्यनामा अंग कहिये है ॥ १७ ॥

बहुरि यहां और विशेष जानना। जाके अहिंसा धर्ममैं प्रीति होय जे हिंसारहित कार्य होंय तिनकूं प्रीतिसहित करै अर हिंसाके कारणनिकूं दूरहीतैं टाल्या चाहै तथा सत्यवचनमैं सत्यवचनके धारकानिमैं अर सत्यार्थधर्मकी प्ररूपणामैं प्रीति होय तथा परका धन परकी स्त्रीनिके त्यागमैं राग होय परधन पर-

स्त्रीका त्यागीनिमैं जाके प्रीति होय, तिसहीके वात्सल्यअंग होय है । तथा दशलक्षणधर्ममैं अर धर्मके धारक साधर्मीनिमैं जाकै अनुराग होय ताकै वात्सल्यअंग होय है । बहुरि जाकै धर्ममैं अनुरागकरि त्यागी संजमीनिमैं महान् आदरपूर्वक प्रिय वचनकरि प्रवर्त्तन होय ताकै वात्सल्य अंग होय है । यद्यपि सम्यग्दृष्टिकै अंतरंग तो अपना शुद्ध ज्ञानदर्शनमैं अनुराग है अर बाह्य उत्तम क्षमादिधर्मके धारकनिमैं तथा धर्मके आयतनमैं अनुराग है तथापि अन्य मिथ्याधर्मीनितैं द्वेष नाहीं करै है । जातैं प्रवचनसार सिद्धांतमैं ऐसैं कह्या है जो राग द्वेष मोह ये बंधके कारण हैं तिनिमैं मोह जो मिथ्यात्व अर द्वेष ये दोऊ तो अशुभभाव ही हैं एकांतकरके संसारपरिभ्रमणका कारण पापकर्मका ही बंध करै । अर राग भाव है सो शुभ अर अशुभ दोय प्रकार है तिनिमैं अरहंतादिक पंचपरमेष्ठिनमैं तथा दशलक्षणधर्ममैं तथा स्याद्वादरूप जिनेंद्रका आगममैं तथा वीतरागका प्रतिबिंब, वीतरागप्रतिबिंबके आयतनमैं अनुरागरूप शुभ राग है सो स्वर्गादिकका साधक पुण्यबंधका करनेवाला तथा परंपरायकरि मोक्षका कारण है। अर विषयनिमैं अनुराग तथा कषायनिमैं अनुराग तथा मिथ्याधर्ममैं मिथ्यादृष्टिनिमैं परिग्रहादि पंच पापनिमैं अनुराग है सो अर मोहभाव अर द्वेषभाव है ते नरकनिगोदादिकनिमैं अनंतकाल परिभ्रमणके कारण हैं। यातैं सम्यग्दृष्टि है सो अन्य अज्ञानी मिथ्यादृष्टि पातकीनिमैं हू द्वेषभाव नाहीं करै है। जातैं समस्त जीव मिथ्यात्वकर्मके तथा ज्ञानावरणादिकर्मके वशीभूत होय आपा भूल रहे हैं अज्ञान हैं इनमें वैर करि कहा साध्य है ? इनकूं तो इनकी विपरीतबुद्धि ही मारि राखे हैं यातैं सम्यग्दृष्टि दयाभाव ही करै है रागद्वेष रहित मध्यस्थ रहै है । जातैं सम्यग्दृष्टि है सो तो वस्तुका स्वभावनै सत्यार्थ जानि एक-इंद्रियादिक जीवनिमैं करुणाभावरूप प्रीति ही करै है तथा समस्त मनुष्यनिमैं वैररहित होय किसी जीवकी विराधना अपमान हानि नाहीं बांछै है तथा मिथ्यादृष्टिनिकरि किये जे देवनिके मंदिर स्थान मठ तिनतैं वैर करि बिगाडना नाहीं चाहै है तथा सरागदेवनिकी मूर्ति तथा देवीनिकी क्रूरमूर्ति तथा योगिनी यक्ष भैरवा-

दिक व्यंतरनिकी स्थापनास्थान इनसूं कदाचित् वैर नाहीं करै जातैं ये देवनिकी मूर्ति अर इनके स्थान तो अनेक जीवनिके अभिप्रायके आधीन पूजनेकूं आराधनेकूं बनाये हैं। अन्यका अभिप्रायकूं अन्य-प्रकार करनेकूं कौन समर्थ है? समस्त ही मनुष्य अपना अपना धर्म मानि देवतानिका स्थापन करै हैं। जाकूं जैसा सम्यक् तथा मिथ्या उपदेश मिल्या तैसें प्रवर्त्तन करै हैं। तातैं वस्तुका यथावत् स्वरूपकूं जानता समस्तमैं साम्यभाव करता सम्यग्दृष्टि किसी मनुष्य हीकूं रैकारो तूकारो नाहीं देहै तो अन्यके धर्म अन्यके देवनिकूं अन्यके मंदिरानिकूं गाली अवज्ञाके वचन कैसें कहै, नाहीं कहै। समस्त जीवनिमैं मैत्रीभाव धारता सम्यग्दृष्टि है सो अचेतन जे स्थान पाषाण गृहादिक अन्यके विश्रामस्थानतैं स्वप्नामें हू वैर नाहीं करै है। अर अन्य जे दुष्ट बलवान होयकरि अपना धन धरती आजीविका तथा कुटुंबका घात अर आपका मरण करै तिसमें हू वैर नाहीं करै। ऐसा विचार करै जो हमारा पूर्वोपार्जित कर्मके उदय करि मोतैं वैर विचारि बलवान शत्रु उपज्या है। सो अब मैं जेता सामर्थ्य है तिस प्रमाण साम जो प्रियवचन, दाम जो धन देना तथा अपना बल प्रमाण दंड देना इनमैं परस्पर भेद करना इत्यादिक उपायनितैं रोकि अपनी रक्षा करूं अर जो नाहीं रुके तो आप विचारै जो मेरे पूर्व उपजाये कर्मनिका उदय आया सो याकूं बलवान उपजाया। मोकूं निर्बल उपजाय मोकूं दंड दिया है सो मैं कौनसूं वैर करूं? मेरा वैरी कर्म निर्जर जाय तैसैं साम्यभाव धारणकरि कर्मका विजय करूं। अन्यसूं वैर करि वृथा कर्म-बंध नाहीं करूं। सम्यग्दृष्टिके वात्सल्य समस्तमैं है कोऊसे वैर नाहीं करै है। बहुरि कोऊ दुष्ट जीव धर्मसूं वैर करि मंदिर प्रतिमाका विध्न कन्या चाहै तो ताकूं आपका सामर्थ्यसूं रोक्या जाय तो रोकै अर प्रबल होय तो विचार करै जो कालनिमित्तसूं धर्मका घातक प्रगट होय अपना वैर साधै है सो प्रबल कैसे रुकै? हमारे उत्तम क्षमादिक तथा सम्यग्ज्ञान श्रद्धानादिक कोऊ घातनेकूं समर्थ नाहीं है अर मंदिरादिक दुष्ट बिगाडैं ही हैं अर धर्मात्मा फिर करावैं ही हैं। कालके निमित्तसूं अनेक दुष्ट उपजैं हैं उनके

रोकनेकों कौन समर्थ है। भावी बलवान है। आछी होनी होय तो दुष्ट मिथ्यादृष्टि प्रबल बलके धारक नाहीं उपजते तातैं वीतरागता ही हमारे परम शरण होहू। ऐसैं वात्सल्यनामा सम्यक्त्वका सप्तम अंग वर्णन किया। अब प्रभावना नामा सम्यक्त्वका अष्टम अङ्ग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

अज्ञानातिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथं। जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥ १८ ॥

अर्थ—संसारी जीवनिके हृदयविषै अज्ञानरूप अंधकारकी व्याप्ति होय रही है। ताहि सत्यार्थ स्वरूपके प्रकाशतैं दूरिकरिकैं जिनेंद्रके शासनका माहात्म्यका प्रकाश करना सो प्रभावना नामा सम्यक्त्वका आठवां अंग है ॥ १८ ॥

इहां ऐसा विशेष है अनादिकालका संसारी जीव सर्वज्ञ वीतरागका प्रकाश्या धर्मकूं नाहीं जानै है याहीतैं ऐसा हू ज्ञान नाहीं है जो मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप कैसा है, मैं यहां जन्म नाहीं लिया तदि कैसा था, कौन था, इहां मोकूं कौन उपजाया, अब रात्रि दिन व्यतीत होय आयु विनसै है मेरे कहा करने-योग्य है, मेरा हित कहा है, आराधने योग्य कौन है, जीवनिकै नानाप्रकार, नानाजीवनिके सुख दुःख कैसैं है तथा देवका गुरुका धर्मका स्वरूप कैसा है तथा मरणका जीवनका कहा स्वरूप है तथा भक्ष्य अभक्ष्यका स्वरूप कहा है, इस पर्यायमें मेरे कौन कार्य करनेयोग्य है, मेरा कौन है, मैं कौन हूं इत्यादि विचाररहित मोहकर्मकृत अंधकारकरि आच्छादित होय रहे हैं। तिनिका अज्ञानरूप अंधकारकूं स्याद्वादरूप परमागमका प्रकाशतैं दूरकरि स्वरूप पररूपका प्रकाश करना सो प्रभावना नामा अंग है। बहुरि सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र करि आत्माका प्रभाव प्रगट करना सो प्रभावना है तथा दानकरि तपकरि शील संयम निर्लोभता विनय प्रियवचन जिनेंद्रपूजन गुणप्रकाशनकरि जिनधर्मका प्रभाव प्रगट करना सो प्रभावना है। जिनका उत्तम परिणामकरि उत्तमदानकूं तथा घोर तप निर्वांछकताकूं देखिकरि मिथ्यादृष्टि हू प्रशंसा करै। अहो जैनीनके वात्सल्यतासहित बडा दान है यह निर्वांछक ऐसा तप जैनी-

नतैं ही बनै अहो जैनीनका बडा व्रत है जो प्राण जाते हू व्रतभंग जिनके नाहीं । अहो जैनीनके बडा आहिंसाव्रत जो प्राण जाते हू अपने संकल्पतैं जीवहिंसा नाहीं करैं हैं तथा जिनकै असत्यका त्याग तथा चोरीका त्याग परस्त्रीका त्याग परिग्रहका परिमाण करि समस्त अनीतितैं पराङ्मुख है अर भक्ष्य नाहीं खावना प्रमाणसहित दिवसमैं देखि सोधि भोजन करना इन जिनधर्मीनिका बडा धर्म है जिनके महा विनयवंतपना है अर प्रियहित मधुरवचन ही करि समस्तकै आनंद उपजावै हैं । तथा आतिशयकारी जिनकै बडी क्षमा है। अपना इष्ट देवमैं आतिशयकारी भक्ति है। आगमकी आज्ञाका बडा दृढ श्रद्धानी जिनकै बडी प्रबल विद्या, जिनकै महान् उज्वल आचरण है। वैरभावरहित हुआ समस्त जीवनिमैं जिनकै मैत्रीभाव है । ऐसा आश्चर्यरूप धर्म इनतैं ही बनै ऐसी प्रशंसा जिनधर्मकी जिनके निमित्ततैं मिथ्याधर्मीनिमैं हू प्रगट होय तिनकरि प्रभावना होय है। जो अनीतिका धन कदाचित् नाहीं वांछै है अर अन्याय विषय भोग स्वप्नामैं हू अंगीकार नाहीं करैं है जो हमारा निमित्तसूं जिनधर्मकी निन्दा होय जाय तो हमारा जन्म दोऊलोकका नष्ट करनेवाला भया तातैं सम्यग्दृष्टि अपना तथा कुलका तथा धर्मका तथा साधर्मीनिका तथा दानशीलतपव्रतका अपवाद नाहीं होय तैसैं प्रवर्तन करै है। धर्मके दूषण लगवा बडा भय करै है। धर्मकी प्रशंसा उच्चता उज्वलता ही प्रगट होय तैसैं प्रवर्तन करै, तिसके प्रभावना नामा अष्टम अंग होय है। ऐसैं सम्यक्त्वके अष्टअंगनिका संक्षेपतैं वर्णन किया। इन अष्ट अंगनिका समुदाय सो ही सम्यग्दर्शन है। अंगनितैं अंगी भिन्न नाहीं अंगनिका समूहकी एकता सो ही अंगी है। तैसैं ही निःशंकितादिक गुणानिके समुदाय सो ही सम्यग्दर्शन होय है। अर इन अंगनिका प्रतिपक्षी जे शंका कांक्षा ग्लानि मूढता अनुपगूहन आस्थितिकरण अवात्सल्य अप्रभावना इत्यादिककरि धर्मकूं दूषित नाहीं करै है। अब निःशंकितादिक अंगनिका पालनमैं जे आगममैं प्रसिद्ध भये तिनका नाम दोय श्लोकनिमैं कहै है,—

तावदञ्जनचौरोऽङ्गे ततोऽनंतमतिः स्मृता । उद्दायनस्तृतीयेऽपि तुरीये रेवती मता ॥ १९ ॥

ततो जिनेंद्रभक्तोऽन्यो वारिषेणस्ततः परः । विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्षतां गतौ ॥ २० ॥

अर्थ,–तावत् अंगे कहिये प्रथम अंग जो निःशंकित अंग तिसविषै अंजनचोर आगम विषै कह्या है द्वितीय अंगविषै अनंतमतीनामा सेठकी पुत्री कही। तृतीय अंगविषै उद्दायननामा राजा अर चतुर्थ-अंगविषै रेवती नामा राणी कही। पंचम अंगविषैं जिनेंद्रभक्त नामा श्रेष्ठी हुआ। छठा अंगविषै वारिषेण नामा राजपुत्र हुआ। बहुरि शेष जे सप्तम अर अष्टम अंगविषै विष्णुकुमार मुनि अर वज्रकुमार मुनि दृष्टान्तपनानैं प्राप्त होते भये । ऐसैं सम्यक्त्वके अष्टअंगनिमैं प्रसिद्ध भये तिनकी कथा प्रथमानुयोगके आगममैं प्रसिद्ध है, तहांतैं जाननी । अब अंगहीन सम्यक्त्वके संसारपरिपाटीके छेदनेमैं असमर्थता दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं,–

नांगहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्ततिं । न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो निहन्ति विषवेदनां ॥ २१ ॥

अर्थ,–अंगकरिहीन जो सम्यग्दर्शन सो संसारकी परिपाटीके छेदनेकूं समर्थ नाहीं होय है । जैसैं अक्षर करि हीन जो मंत्र सो विषकी वेदनाकूं नाहीं हनै है ॥ २१ ॥ जातैं जाके परिणाममैं निःशंकितादिक अंग प्रगट होय हैं सो ही सम्यग्दृष्टि संसारपरिभ्रमणकूं हनै है अर जाकै एक भी अंग नाहीं भया होय ताके संसारका अभाव नाहीं होय है। अक्षरकरि हीन मंत्र जैसैं सर्पादिकानिका विष दूर नाहीं करै। अब तीन प्रकार मूढता है ते सम्यक्त्वके घातक हैं यातैं तीन प्रकार मूढताका स्वरूप जानि सम्यग्दर्शनको शुद्ध करना योग्य है सो तिनमैंतैं लोकमूढताके स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,–

आपगासागरस्नानमुच्चयः सिकताश्मनां । गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २२ ॥

अर्थ–जो लौकिक जे मिथ्याधर्मी जन तिनकी रीति देख जे नदीस्नानमैं धर्म मानैं हैं समुद्रके स्नानमैं धर्म मानैं हैं बालू रेतका पुंज करै हैं तथा पाषाणका ढेर करनेमैं धर्म मानै हैं धर्म मानि पर्वततैं

पडना अग्निविषै पडना ताहि लोकमूढता कहिये है सो लोकमूढताकरिरहित सम्यग्दर्शन होय है ॥२२॥

इहां मिथ्यात्वके उदयतैं देशकालके भेदतैं लौकिक अज्ञानी परमार्थरहित जन अनेकप्रकारकी प्रवृत्तिकरि अपने धर्म होना पवित्रता होना लाभ होना वियोग नाहीं होना दीर्घ जीवना मानै हैं सो लोकमूढताकूं प्रगट अज्ञानता जानि याका त्याग करि सम्यक्त्वभावकी विशुद्धता करो। इहां केते एकांती जन हैं ते स्नान करि आपकूं पवित्र मानै हैं सो ज्ञानीनिकूं आगमज्ञानपूर्वक विचार करना जो आत्मा है सो तो अमूर्तीक है तिसपर्यंत तो स्नान पहुँचे नाहीं अर काय है सो महा अपवित्र है जाका संगमतैं पवित्र हू चंदन गंगाजल पुष्पादिक स्पर्शने योग्य नाहीं रहै अर जो हाड मांस रुधिर चाम इत्यादिक अशुचि सामग्रीकरि रच्या अर जो दुर्गंध विष्ठा मूत्रादिक अशुचि द्रव्यनिकरि भऱ्या अर जाके मुखके द्वार होय तो महा अशुचि कफ अर लाल अर दंतमल जिह्वामल निरंतर बहै है अर नेत्रनिमैं सचिक्कण दुर्गंध गीड स्रवै है अर कर्णनितैं कर्णमल स्रवै है अर नासिकातैं निरंतर दुर्गंध घृणा योग्य सिणक बहै है अर अधोद्वार मल मूत्र दुर्गंध आंव कृमिनिकूं निरंतर बहै है अर समस्त शरीरके रोमतैं महा दुर्गंध मलीन पसेव स्रवै है ऐसैं जाके नवद्वार निरंतर मल स्रवै है ऐसा शरीर जलका स्नानतैं कैसैं शुद्ध मानिये? जैसैं मलकरि बनाया घडा अर मलकरि भऱ्या अर समस्त तरफ मलहीकूं बहै सो जल करिकैं धोवनेतैं कैसैं शुद्ध होय? इस लोकमैं जो कोऊ वस्तु तथा भूम्यादिक क्षेत्र अशुचि अपवित्र कहिये हैं ते समस्त इस शरीरके संगमतैं ही अपवित्र होय हैं। कोऊ चाम पडनेतैं कोऊ केश पडनेतैं कोऊ उच्छिष्ट (ओठि) पडनेतैं तथा रुधिर मांस हाड वसा (चरबी) राध मल मूत्र थूक लाल कफ नासिकामल इनका स्पर्श होनेतैं ही तथा स्नानके जलके छांटेनिके कुरलेनिके स्पर्शतैं ही अपवित्र (अशुचि) देखिये हैं सुनिये हैं यातैं अछीतरह विचारो जो देहका संग बिना कोऊ अशुचि है ही नाहीं। ऐसा देह जलके स्नानतैं कैसैं शुद्ध होय अर जो जलके स्नानादिकतैं शुद्ध होय गया तो फिर कोऊके स्नानका छांटा लागे

जायगा तो अपवित्र हुआ ही मानैगा । तथा गंगा पुष्करादिकमैं हजारबार स्नान कुरला करि फिर कोऊ वस्तु ऊपर कुरला करैगा तो महा अपवित्रता मानैगा । जल करि तो देहके ऊपर मैल लाग्या होय तथा वस्त्रादिक मालिन होय तो धोवनेतैं उज्वल होय है अर देहकूं उज्वल पवित्र नाहीं करै है। जैसैं—कोयलाकूं ज्यों धोवो त्यों कालिमा ही निकलै है। तैसैं ज्यों ज्यों देहकूं धोइये त्यों त्यों महा मलिनता प्रगट होय है। स्नानतैं पवित्र होना मानना सो तीव्रमिथ्यात्व है। अर और हू विचारो जगतमैं जल बराबर कोऊ अपवित्र ही नाहीं है। जामैं निरंतर मींडका, काछवा, सर्प, ऊंदरा, विसमरा, मांखी मांछरादिक अनेक जीव नित्य मरै हैं अर जामैं चर्म हाड समस्त गालि जाय हैं अर अनेक त्रसनिका घात जामैं होय है ऐसा महा निंद्य अपवित्र जल तिसके स्पर्श होनेतैं कैसैं पवित्र होय? अर गंगादिक नदीनमैं कोट्यां मनुष्यनिके मल मूत्र रुधिर मांस कर्दम तथा मनुष्यनिके तिर्यंचनिके मृतक कलेवर घुल रहैं तिस गंगाका जल कैसैं पवित्र करै? जलका सूतक कदैं ही मिटै नाहीं यातैं बाहिर लाग्या मैल दूर हो जाय यातैं मनकी ग्लानि मिट जाय अर यातैं पवित्र होना तथा स्नानमैं धर्म मानना सो तो मिथ्यादर्शन है जो गंगाका जलतैं ही पवित्र हो जाय वा स्नानकरि धर्म होजाय वा स्नानकरि मुक्ति होय जाय तो कीर धीवरानिके पवित्रता ठहरै वा मुक्ति होय। अन्य दान पूजादिक समस्त निष्फल हुवा । मिथ्यात्वका प्रभावतैं सब विपरीत श्रद्धानी होय रहे हैं। जे अष्ट प्रकार लौकिक शुचि कही हैं ते व्यवहार आचार कुलाचारके उज्वल करनेकूं तो समर्थ हैं परंतु देहकूं पवित्र नाहीं करै हैं । ए तो मनमैं ग्लानि आप मानि राखी है सो संकल्पतैं दूरि करले है जो मैं स्नान कर लिया है। सो ही श्रीराजवार्तिकजीमैं अशुचिभावनामैं कह्या है।

शुचिपना है सो दोयप्रकार है—एक लौकिक एक लोकोत्तर, ताहि अलौकिक हू कहिये है। तहां जिसके कर्ममल कलंक दूर भया ऐसा आत्माका अपने स्वभावविषै स्थित रहना सो लोकोत्तरशुचिपना है अर तिसका साधन सम्यग्दर्शनादिक हैं, अर सम्यग्दर्शनादिकका धारक साधु है अर तिनिका आधार

निर्वाणभूम्यादिक हू सम्यग्दर्शनादिकका उपाय है तातैं शुचिनामके योग्य है। अर लौकिक शौचपना है सो अष्टप्रकार है—कालशौच १ अग्निशौच २ भस्मशौच ३ मृत्तिकाशौच ४ गोमयशौच ५ जलशौच ६ पवनशौच ७ ज्ञानशौच ८ ए आठ शौच शरीरके पवित्र करनेकूं समर्थ नाहीं हैं लौकिकजनोंके व्यवहार छोडे बडा अनर्थ होय जाय, हीन आचारकी ग्लानि जाती रहै तो समस्त एक होय जांय तादि परमार्थ हू नष्ट होय जाय यातैं अनादिकालतैं बाह्यशुचिनाकी मानता देखि मनकी ग्लानि मेट लेहैं। जातैं केती वस्तु तो जगतमैं कालव्यतीत भये शुद्ध मानिये हैं जैसैं रजस्वला स्त्री तीन रात्रि गये शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो कोऊ काल हू शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि केतेक उच्छिष्ट धातुके पात्र भस्मकरि मांजनेतैं शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो भस्मकरि शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि केतेक शूद्रादिक स्पर्श किये हुये धातुमय पात्र अग्निके संस्कारकरि शुद्ध मानिये है परंतु शरीर तो अग्निका संसर्ग करे हू शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि मलमूत्रादिकका स्पर्श मृत्तिकातैं धोय शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो मृत्तिकातैं शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि गोमयकरि भूम्यादिककूं लीप शुद्ध माने हैं परंतु गोमयतैं शरीर तो शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि कर्दमादिक लगनेतैं तथा अस्पृश्यका स्पर्श होनेतैं जलकरि धोवनेतैं तथा जलकरि स्नान करनेतैं शौच मानिये है परंतु शरीर तो स्नानतैं शुद्ध नाहीं होय है स्नान किये पीछे हू चंदन पुष्पादिक पवित्र वस्तु हू शरीरके स्पर्शमात्रतैं मलीन होय जाय है। बहुरि केतेक भूमि पाषाण कपाट काष्ठादिक पवनकरिही शुद्ध मानिये है परंतु शरीर तो पवनकरि शुचि नाहीं होय है। बहुरि केतेक वस्तु अपने ज्ञानमैं जाका अशुद्धताका संकल्प नाहीं होनेतैं शुद्ध मानिये है परंतु शरीरमैं तो शुद्धपनाका संकल्प हू नाहीं उपजै है तातैं शरीर तो अष्टप्रकारका लौकिक शौचकरि शुद्ध नाहीं होय है लौकिकशौच परिणामनिकी ग्लानि मेटै है। व्यवहारमैं उज्ज्वलता जानि कुलकी उच्चता जनावे है परंतु शरीरकूं तो शुचि नाहीं करै है। देह तो सर्वप्रकार अशुचि ही है। यामैं जो आत्मा परका धन अर परकी स्त्रीमैं अभिलाष-

रहित होय अर जीवमात्रका विराधनारहित होजाय तो हाडमांसका मलीन देह हू देवनकरि पूज्य महा पवित्र होय जाय। इस देहकूं पवित्र करनेका और कारण ही नाहीं है सो ही श्रीपद्मनंदी नाम दिगम्बर वीतराग मुनि कह्या है सो जानहु। जिसकी निकटतातैं सुगंध पुष्पमालाचंदनादिपवित्र द्रव्य हू अस्पर्श्यताकूं प्राप्त होय है अर विष्टा मूत्रादिककरि भर्‍या रुधिर रस हाड चामादिककरि रच्या अर महासूगला अर महा दुर्गंध महामलीन समस्तअशुचिका रहनेका एक संकेतगृह ऐसा मनुष्यका शरीर जलकरि स्नान करनेतैं कैसैं शुद्ध होय। आत्मा तो अपने स्वभावतैं ही अत्यंत पवित्र है अर अमूर्तिक है ताकूं जल पहुंचै ही नाहीं ऐसा पावित्रमैं स्नान वृथा है अर यो काय है सो अशुचि ही है सो स्नानकरि कदाचित् शुचिताकूं प्राप्त नाहीं होय है यातैं स्नानके दोऊ प्रकारकरि विफलता भई। अर जे फिर हू स्नान करैं हैं तिनके पृथ्वीकाय जलकायादिक अर अनेक त्रसनिका घात होनेतैं पापबंधके अर्थि अर रागभावके अर्थि ही है। भावार्थ—गृहस्थके स्नान बिना सरै नाहीं परंतु अज्ञानी गृहस्थ स्नानमैं धर्म मानै है अर स्नानतैं पवित्रता मानै है ऐसी मिथ्याबुद्धि लग रही है सो याका स्वरूपकूं समझै तो याकूं धर्म तो नाहीं मानै अर यातैं पवित्रपना नाहीं मानै। यद्यपि गृहस्थके स्नान विना व्यवहार समस्त दूषित होय जाय अर व्यवहार दूषित होय जाय तादि परमार्थकी शुद्धता नाहीं करसकै परंतु याकूं राग बधावनेतैं अर हिंसा होनेतैं पापरूप तो श्रद्धान करै। बहुरि और हू शिक्षा जाननी,—चित्तकेविषै पूर्वकालका कोटिनभवकरि संचय किया कर्मरूप रज ताका संबंध करि उपज्या जो मिथ्यात्वादिक मल ताका नाश करनेवाला जो आपापरका भेद जाननेरूप विवेक सो ही सत्पुरुषनिकै मुख्य स्नान है। सत्पुरुषनिकै तो मिथ्यात्वमलका नाश करनेवाला एक विवेक ही स्नान है अर अन्य जो जलकरि स्नान है सो तो जीवनिका समूहका घात करनेतैं पापका करनेवाला है यातैं धर्म नाहीं होय है। ताहीकारणतैं स्वभावहीतैं अशुचि जो काय तिसविषै पवित्रता नाहीं है। बहुरि कहै हैं भो ज्ञानीजन हो! आपकी शुद्धताके अर्थि

परमात्मा नामा तीर्थमैं सदा काल स्नान करो। वृथा खेदकरि व्याकुल भये गंगादिक तीर्थनप्रति क्यों दौडो हो? कैसाक है परमात्मानामा तीर्थ? सम्यग्ज्ञानरूप ही जामैं निर्मल जल है अर दैदीप्यमान सम्यग्दर्शनरूप जामैं लहरि है अर अविनाशी अनंतसुख करि शीतल है अर समस्त पापानिकै नाश करनेवाला है ऐसा परमात्मस्वरूप तीर्थमैं लीन होहू। बहुरि जगतके पापिष्ठ मिथ्यादृष्टि जननिनै निर्मल तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रह नाहीं देख्या है अर कठै हू ज्ञानरूप रत्नाकर समुद्र हू नाहीं देख्या। अर समता नामा अतिशुद्ध नदी हू नाहीं देखी, तिसकारण करि पापके हरनेवाले सत्य तीर्थनिकूं छांडि करि मूर्ख लोक हैं ते तीर्थ जिनकूं कहै हैं ते संसारके तारनेवाले नाहीं ऐसे गंगादिक नदीनिमैं डूबकरि हर्षित होय हैं। भावार्थ—जिनमूर्खनिनै तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं नाहीं देख्या अर ज्ञानरूप समुद्र नाहीं देख्या अर समता नाम नदी नाहीं देखी ते गंगादिक तीर्थाभासनिमैं दौडता फिरै हैं जो तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं देखता अर ज्ञानरूप समुद्रकूं देखता अर समतानामा नदीकूं देखता तो इनमैं गरक होय मिथ्यात्वकषायरूप मलकरि रहित होय आपकूं उज्वल कर लेता। बहुरि इस भुवनमैं ऐसा कोऊ तीर्थ नाहीं है तथा ऐसा जल हू नाहीं तथा और हू कोऊ द्रव्य नाहीं है जिसकरि यो समस्त अशुचि मनुष्यका शरीर साक्षात् शुद्ध होजाय अर यह शरीर कैसाक है—आधिव्याधि जरा मरणादिक करि निरंतर व्याप्त अर निरंतर तापकरनेवाला ऐसा है जातैं सत्पुरुषनिके याका नाम हू सहनेयोग्य नाहीं है। बहुरि समस्त तीर्थनिके जलतैं नित्य स्नान करिये अर चंदनकपूरादिकका विलेपन करिये तो हू यह शुद्ध नाहीं होय सुगन्ध नाहीं होय रक्षा करते हू विनाशके मार्गमैं ही तिष्ठै है। जो नदीमें स्नानतैं ही शुद्ध होजाय तो कोट्यां मच्छी मच्छ काछिवा कीर धीवरादिक शुद्ध होजांय तातैं यह लोकमूढता त्यागने योग्य है।

अब इहां इतना विशेष और जानना जो स्नान करनेतैं पवित्र नाहीं होय अर धर्म हू नाहीं होय परंतु

जलतैं पादप्रक्षालन कराय भोजन करै हैं तातैं व्यवहार आचारकूं नाहीं छांडैं है। यो भगवान जिनेंद्रका धर्म अनेकांतरूप है अर निश्चयव्यवहारका विरोधरहित ही धर्म है। सर्वथा एकांतरूप जिनेंद्रधर्म नाहीं है। लौकिकशुचितारहित होय सो धर्मकी निंदा करावै कुलकी निंदा करावै तादि अपना आतमा मलीन होय ही है। बहुरि मैथुनसेवन किया होय अर मृतककूं दग्ध करि आया होय अर केश क्षौर कराया होय अर चांडाल म्लेच्छादिकनिका स्पर्श भया होय मृतक पंचेन्द्रीका स्पर्श भया होय रजस्वलादि अशुचिका स्पर्श भया होय इत्यादिक और कारण होय तहां अवश्य स्नान करना अर अन्य कारण-निमैं जहां मल मूत्र हाड चामादिकका जिस अंगसों स्पर्श भया होय तिसकूं धोवना शीघ्र ही उचित है। अष्टप्रकार शौच लौकिकमैं अनादिका प्रवर्तै हैं। यातैं आगमकी आज्ञा मानना अपना हित है। बहुरि जगतमैं प्रगट देखिये है कर्णके मलतैं नेत्र मलकूं, अर यातैं नासिका मलकूं, यातैं कफ लालादिक मुखके मलकूं, यातैं मूत्रकूं, यातैं विष्ठाकूं, अधिक २ अशुचि मानिये है। अर जो समस्त मलकूं समानही मानिये तो समस्त आचार उपद्रित होय विपरीत होय जाय। यद्यपि द्रव्यार्थिकनयतैं समस्त एक पुद्गल जाति हैं तथापि बहुत भेद हैं। यद्यपि हाड मांस रुधिर मल मूत्रादिक समस्त पृथ्वीरूप जला-दिरूप होजाय है अर पृथ्वी जलादिकनिका मांस रुधिर मलादिकरूप होजाय है तथापि पर्यायनिमैं बडा भेद है। द्रव्यके अर पर्यायके सर्वथा एकता माननेतैं समस्त व्यवहार परमार्थका लोप होय तातैं द्रव्यके पर्यायके कथंचित् एकपना कथंचित् अनेकपना मानना ही श्रेष्ठ है। बहुरि वालूके पिंड करनेमैं तथा पर्वततैं पडनेमैं अग्निमैं दग्ध होनेमैं हिमालय गलनेमैं पंचाग्नि तपनेमैं धर्म मानै हैं सो लोकमूढता है। तथा ग्रहणमैं सूतक मानना, स्नान करना चांडालादिककूं दान देना, संक्रांति मानि दान देना, कुवा पूजना, पीपल पूजना, गायकूं पूजना, रुपया मोहरकूं पूजना, लक्ष्मीकूं पूजना, मृतक पितरकूं पूजना छींक पूजना, मृतकानिके तृप्ति करनेकूं तर्पण करना, श्राद्ध करना, देवतानिका रतजगा करना, गंगा-

है तदि समस्त जाति व्यवहारके लोप होनेतैं उत्तम कुलका अर नीचकुलका आचार समान होजाय तदि व्यवहार आचारके बिगडनेतैं धर्मका मार्ग भ्रष्ट होजाय । निंद्यकर्म करनेकी लज्जा छुटि जाय तदि कुलके मार्ग बिगाडनेतैं महापापका बन्ध होय है । परमार्थशौच तो व्यवहारकी शौचता करि ही शुद्ध होय है । जाका भोजनमैं, पानमैं, स्पर्शनमैं, संगतिमैं, प्रवृत्तिमैं मलीनता होजाय तदि परमार्थ धर्म मलीन हो ही जाय । जिनधर्मी हैं सो चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमानादिककी शरीरकी छायाहीतैं मलीनता मानै हैं अर धोबी कलाल लुहार खाती सुनार भडभूजा इत्यादिकनिका स्पर्शनकूं हिंसाकर्म करनेतैं दूर ही छाडिये हैं । मुनीश्वर तो नीच जातिके मनुष्यका स्पर्श होतैं दंड स्नान करैं अर तिस दिन उपवास करैं । अर नाहीं जाननेतैं नीच कुलके गृहनिमैं प्रवेश होजाय तो भोजनका अंतराय करै हैं । अर मदिरा मांस अर शरीरतैं चार अंगुल बहता रुधिर राधि अर पंचेंद्रिय जीव मृतकका कलेवर भोजन करते देखैं तो भोजनका अन्तराय करैं हैं । तो जिनधर्मी गृहस्थ हाड कौडी चाम केश ऊन इनके स्पर्शनतैं भोजन कैसैं नाहीं छांडे याहीतैं गृहस्थ है सो हस्तपाद प्रक्षालनकरि शुद्धभूमिमैं शुद्ध भोजन करै हैं। अधम जातिका स्पर्श्या भोजन नाहीं करैं । बहुरि जिनेंद्रका पूजन वास्तैं स्नान करना योग्य ही है क्योंकि स्नानकरि देवका स्पर्शन पूजन करना यह बडा विनय है । यद्यपि स्नानतैं शुद्धता नाहीं, तो हू, देवके उपकरणनिकूं स्नानकरि स्पर्शना धोया हुआ द्रव्य चढावना सो देवविनय ही है । विनय है सो ही आराधना है । जातैं जिनमन्दिरकै उपकरणका हू विनय करिये है तो जिनेंद्रके आगमकी वाणीका पूजनके द्रव्यका हू स्नानकरि स्पर्शना हस्त धोय लगावना मन्दिरमैं हस्त पाद प्रक्षालनकरि प्रवेश करना सो हू विनय ही है । यद्यपि पापमलकी शुद्धता करना प्रधान है तो हू भगवान जिनेंद्रका आगममै अष्टप्रकार लौकिकशुद्धि कही है लौकिकशौचके विना परमार्थधर्मतैं भ्रष्ट होजाय है । मुनीश्वरका देह रत्नत्रयका प्रभावतैं महापवित्र है तो हू बाह्यशौचके निमित्त कमण्डलु राखैं हैं हस्तपाद धोय स्वाध्याय करैं हैं अत्यंत मंद

जलतैं पादप्रक्षालन कराय भोजन करै हैं तातैं व्यवहार आचारकूं नाहीं छांडैं है। यो भगवान जिनेंद्रका धर्म अनेकांतरूप है अर निश्चयव्यवहारका विरोधरहित ही धर्म है। सर्वथा एकांतरूप जिनेंद्रधर्म नाहीं है। लौकिकशुचितारहित होय सो धर्मकी निंदा करावै कुलकी निंदा करावै तादि अपना आत्मा मलीन होय ही है। बहुरि मैथुनसेवन किया होय अर मृतककूं दग्ध करि आया होय अर केश क्षौर कराया होय अर चांडाल म्लेच्छादिकनिका स्पर्श भया होय मृतक पंचेन्द्रीका स्पर्श भया होय रजस्वलादि अशुचिका स्पर्श भया होय इत्यादिक और कारण होय तहां अवश्य स्नान करना अर अन्य कारणनिमैं जहां मल मूत्र हाड चामादिकका जिस अंगसों स्पर्श भया होय तिसकूं धोवना शीघ्र ही उचित है। अष्टप्रकार शौच लौकिकमैं अनादिका प्रवर्तैं हैं। यातैं आगमकी आज्ञा मानना अपना हित है। बहुरि जगतमैं प्रगट देखिये है कर्णके मलतैं नेत्र मलकूं, अर यातैं नासिका मलकूं, यातैं कफ लालादिक मुखके मलकूं, यातैं मूत्रकूं, यातैं विष्ठाकूं, अधिक २ अशुचि मानिये है। अर जो समस्त मलकूं समानही मानिये तो समस्त आचार उपद्रित होय विपरीत होय जाय। यद्यपि द्रव्यार्थिकनयतैं समस्त एक पुद्गल जाति हैं तथापि बहुत भेद हैं। यद्यपि हाड मांस रुधिर मल मूत्रादिक समस्त पृथ्वीरूप जलादिरूप होजाय है अर पृथ्वी जलादिकनिका मांस रुधिर मलादिकरूप होजाय है तथापि पर्यायनिमैं बडा भेद है। द्रव्यके अर पर्यायके सर्वथा एकता माननेतैं समस्त व्यवहार परमार्थका लोप होय तातैं द्रव्यके पर्यायके कथंचित् एकपना कथंचित् अनेकपना मानना ही श्रेष्ठ है। बहुरि वालूके पिंड करनेमैं तथा पर्वततैं पडनेमैं अग्निमैं दग्ध होनेमैं हिमालय गलनेमैं पंचाग्नि तपनेमैं धर्म मानै हैं सो लोकमूढता है। तथा ग्रहणमैं सूतक मानना, स्नान करना चांडालादिककूं दान देना, संक्रांति मानि दान देना, कुवा पूजना, पीपल पूजना, गायकूं पूजना, रुपया मोहरकूं पूजना, लक्ष्मीकूं पूजना, मृतक पितरकूं पूजना छींक पूजना, मृतकानिके तृप्ति करनेकूं तर्पण करना, श्राद्ध करना, देवतानिका रतजगा करना, गंगा-

जलकूं शुद्ध मानना, तिर्यंचनिके रूपकूं देव मानना, कुवा बावडी वापिका तलाव खुदावनेमैं धर्म मानना बाग लगावनेमैं धर्म मानना, मृत्युंजय आदिके जप करावनेतैं अपनी मृत्युका टलजाना मानना, ग्रहांका दान देनेतैं अपने दुःख दूर होना माननां, सो समस्त लोकमूढता है। बहुत कहनेकरि कहा जो योग्य अयोग्य, सत्य असत्य, हित अहितका, आराध्य अनाराध्यका विचाररहित लौकिक जनकी प्रवृत्ति देख जैसैं अज्ञानी अनादिके मिथ्यादृष्टि प्रवर्तें तैसी प्रवृत्तिकूं सत्य मानना, विचाररहित लौकिकजननिकी प्रवृत्ति देख प्रवर्त्तन करना सो लोकमूढता है। अर केतेक जिनधर्मी कहाय करके हू आत्मज्ञानकररहित परमागमकी आज्ञाकूं नहीं जानते भेषधारीनिके कल्पे हुए अनेक क्रियाकांड तथा तीर्थंकरादिकनिका तर्पण कराना अपना पिता पितामहका तर्पण कराना तथा यक्षादिकनिके अर्थि होम यज्ञादिकनिमैं अपना कल्याण होना मानैं हैं। शकलीकरणादिक विधान कराना सो लोकमूढता है। तथा केतेक स्नान करि रसोई करनेमैं तथा स्नानकरि जीमनेमैं तथा आला वस्त्र पहिर जीमनेमैं अपनी पवित्रता शुद्धता मानै हैं परम धर्म मानै हैं अर अभक्ष्यभक्षण अर हिंसादिकका विचार नाहीं करै हैं सो समस्त मिथ्यात्वके उदयतैं लोकमूढता है॥ अब देवमूढता कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसाः। देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते॥ २३॥

अर्थ—अपने वांछित होय ताकूं वर कहिये वरकी वांछा करके आशावान् हुवा संता जो रागद्वेष करि मलीन देवताकूं सेवन करै सो देवतामूढ कहिये है॥ २३॥

संसारी जीव हैं ते इस लोकमें राज्यसंपदा स्त्री पुत्र आभरण वस्त्र वाहन धन ऐश्वर्यनिकी वांछा सहित निरंतर वर्तै हैं। इनकी प्राप्तिके अर्थि रागी द्वेषी मोही देवनिका सेवन करैं सो देवमूढता है। जातैं राज्यसुखसंपदादिक तो सातावेदनीयका उदयतैं होय है सो सातावेदनीयकर्मकूं कोऊ देनेकूं समर्थ है नाहीं तथा लाभ है सो लाभांतरायका क्षयोपशमतैं होय है अर भोग सामग्री उपभोग सामग्रीका प्राप्त

होना सो भोगोपभोग नाम अंतरायकर्मका क्षयोपशमतैं होय है अर अपने भावनिकरि बांधे कर्मनिकूं कोऊ देव देवता देनेकूं तथा हरनेकूं समर्थ है नाहीं। बहुरि कुलकी वृद्धिके अर्थि कुलदेवीकूं पूजिये है अर पूजते पूजते हू कुलका विध्वंश देखिये हैं अर लक्ष्मीके अर्थी लक्ष्मीदेवीकूं तथा रुपया मोहरानिकूं पूजते हू दरिद्र होते देखिये हैं। तथा शीतलाका स्तवन पूजन करते हू संतानका मरण होते देखिये हैं। पितरानिकूं मानते हू रोगादिक बधै है तथा व्यंतर क्षेत्रपालादिकानिकूं अपना सहायी मानै है सो मिथ्यात्वका उदयका प्रभाव है। बहुरि केतक कहैं हैं जो चक्रेश्वरी पद्मावती देवी ये शस्त्रधारण किये जिनशासनकी रक्षक हैं तथा सेवकनिकी रक्षा करनेवाली एक एक तीर्थंकरनिकी एक एक देवी है। एक एक यक्ष है इनका आराधन करने पूजनेतैं धर्मकी रक्षा होय है ये धर्मात्माकी रक्षा करैं हैं तातैं इन देवीनिका और यक्षनिका स्तवन करना पूजन करना योग्य है। देवी समस्त कार्यके साधनेवाली तीर्थंकरनिकी भक्त है इस विना धर्मकी रक्षा कौन करै याहीतैं मन्दिरनिके मध्य पद्मावतीका रूप जाके चार भुजा तथा वत्तीस भुजा अर नाना आयुधनिकरि युक्त अर तिनके मस्तक ऊपर पार्श्वनाथस्वामीका प्रतिबिंब अर ऊपर अनेक फणनिका धारक सर्पका रूपकरि बहुत अनुरागकरि पूजैं हैं सो सब परमागमतैं जानि निर्णय करो। मूढलोकनिका कहिबो योग्य नाहीं। प्रथम तो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी इन तीनप्रकारके देवनिमैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै है। सम्यग्दृष्टिका भवनत्रिकदेवानिमैं उत्पाद ही नाहीं अर स्त्रीपना पावै ही नाहीं सो पद्मावती चक्रेश्वरी तो भवनवासिनी अर स्त्रीपर्यायमैं अर क्षेत्रपालादिक यक्ष ये व्यंतर इनमैं सम्यग्दृष्टिका उत्पाद कैसैं होय? इनमैं तो नियमतैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै हैं ऐसा हजारांवार परमागम कहै हैं। बहुरि जो इनके जिनधर्मसूं प्रीति है तो जिनधर्मके धारीनतैं अपनी पूजा वन्दना नाहीं चाहै जैनी होय सो आपकूं अव्रती जानता सम्यग्दृष्टिसे वंदना पूजा कैसैं करावै? साधर्मीनिका उपकार विना कहे ही करै। बहुरि भगवानका प्रतिबिंब तो अपने मस्तक ऊपरि है अर भगवानके भक्तनितैं अपनी

पूजा करावै ऐसा अविनय धर्मात्मा होय कैसैं करे ? बहुरि अनेक आयुध धारण करि अपनी वीतराग धर्ममैं प्रवृत्तिकूं बिगाडे हैं। अर अपना असमर्थपना प्रगट दिखावे हैं तथा जिनशासनके रक्षक एक २ यक्ष यक्षणी ही कैसैं कहो हो ? भगवानके शासनके तौ सौधर्म इन्द्रकूं आदि लेय असंख्यात देव देवी समस्त सेवक हैं अर जिनका हृदयमैं सत्यार्थ धर्मतैं पूर्वकृत अशुभकर्म निर्जर गया होय ताकै समस्त पुद्गल राशि अचेतन है सो हू देवतारूप होय उपकार करैं हैं देव मनुष्य उपकार करैं सो कहा आश्चर्य है। अर शासनमैं हू ऐसी कैई कथा हैं जो शीलवान तथा ध्यानी तपस्वीनिके धर्मके प्रसादतैं देवनिके आसन कम्पायमान भये अर देव जाय उपसर्ग टाले अर नाना रत्ननि करि पूजा करी ऐसी कथा तो शासनमें बहुत हैं अर ऐसी तो कहूं कथा भी नाहीं जो धर्मात्मा पुरुष देवनिकूं पूजे अर पद्मावती चक्रेश्वरीकी भी कैई कथा हैं जो शीलवंती व्रतवंतिनीकी देव देवियोंने पूजा करी अर शीलवंती व्रतवंती तो जाय कोऊ देव देवीकी पूजा करी नाहीं लिखी है। तथा कार्तिकेय स्वामी कही है,—

गाथा,—ण य का वि देदि लच्छी ण को वि जीवस्स कुणइ उवयारं।
उवयारं अवयारं कम्मं पि सुहासुहं कुणादि ॥ ३१९ ॥
भत्तीए पुज्जमाणो विंतरदेवो वि देदि जदि लच्छी।
तो किं धम्मं कीरदि एवं चिंतेहि सद्दिट्ठी ॥ ३२० ॥

अर्थ—इस जीवकूं कोऊ लक्ष्मी नाहीं देवै है अर जीवका कोऊ उपकार अपकार हू नाहीं करै है जो जगतमैं उपकार अपकार करता देखिये है सो अपना किया शुभ अशुभकर्म करि करे है। बहुरि जो भक्तिकरि पूजे व्यंतरदेव ही लच्छी देवैं तो दान पूजा शील संयम ध्यान अध्ययन तप रूप समस्त धर्म काहेकूं करिये ? बहुरि जो भक्तिकरि पूजे बंदे कुदेव ही संसारके कार्य सिद्ध करैंगे तो कर्म कछु बात ही नाहीं ठहरें ? व्यंतर ही समस्त सुखका दायक रहे धर्मका आचरण निष्फल रह्या। भावार्थ—जगतविषै इस

जीवका जो देव दानव देवी मनुष्य स्वामी माता पिता बांधवमित्र स्त्री पुत्र तथा तिर्यंच तथा औषधादिक जो उपकार तथा अपकार करै हैं सो समस्त अपने किये पुण्यकर्म पापकर्म तिनके उदयके आधीन करै हैं। ये तो समस्त बाह्यनिमित्त मात्र हैं। देखिये हैं—भला कर्या चाहै है उपकार किया चाहै है अर अपकार होय जाय है अर अपकार किया चाहै है अर उपकार होजाय है। यातैं प्रधान कारण पुण्यपापरूप कर्म है। बहुरि शास्त्रनिमैं कह्या है चांडालके अहिंसाव्रतका प्रभावतैं देवता सिंहासनादि रचे अर नीलीका शीलके प्रभावतैं देवता सहायी भये अर सीताके शीलका प्रभावतैं अग्नीकुंड जलरूप होय गया अर सेठ सुदर्शनका देव आय उपसर्ग टाल्या अर और हू केतेकानिके सहायी देवता भये उपसर्ग टाले अर देवांका आसन कंपायमान भये अर देव आय सहायी भये ऐसा हजारां कथा प्रसिद्ध हैं। अर भगवान आदीश्वरकै छह महीना अंतराय भोजनका भया तादि कोऊ देव आय काहूकूं आहार देनेकी विधि नाहीं जनाई पहली तो गर्भमैं आनेके छहमास पहली इन्द्रादिक समस्त देव भगवानकी सेवामैं तथा स्वर्गलोकतैं आहार वस्त्र वाहनादिक लावनेमैं सावधान भये हाजिर रहते थे। ते सब देव कैसैं भूल गये। तथा भरतादिक सौ पुत्रनिकूं अर ब्राह्मी सुन्दरी पुत्रनिकूं मुनि श्रावकका समस्त धर्म पढाया ते हू विचार नाहीं किया जो भगवान हू मुनि होय आहारके अर्थि चर्या करै हैं सो अंतराय कर्मका मंद हुआ विना कौन सहायी होय? तथा युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल सहदेव ये महा वीतरागी होय वनमैं ध्यान करते थे तिनकूं दुष्ट वैरी आय आभरण अग्निमैं लाल करि पहराय दीये अर जिनका चाम मांसादिक भस्म होते हू कोऊ भी देव सहायी नाहीं भया तथा सुकुमाल महामुनि तिनकूं तीन दिन पर्यंत श्यालिनी अपने बच्चानिसहित भक्षण करवो किया तहां कोऊ देव सहायी नाहीं भये। अर जाकी माताका इतना ममत्व था जो शोकरुदनादिक संतापहीमैं लगी रही अर पुत्र कहां गया ऐसी खबर भी नाहीं मँगाई। तथा पांचसे मुनिनिकूं घानीमैं पेल दिया तहां कोऊ देव सहायी नाहीं भया। तथा पद्म नाम बलभद्र अर कृष्ण

नाम नारायण जिनकी पूर्वैं हजारां देव सवा करैं थे जब हीनकर्म उदय आया अर पुण्य क्षीण भया तादि कोऊ देव पानी प्यायबेवाला एक मनुष्य हू नाहीं रह्या तथा जो सुदर्शनचक्रसूं नाहीं मर्‍या अर भीलका एक बाणतैं प्राणरहित होय गया ऐसैं अनेक ध्यानी तपस्वी व्रती संयमी घोर उपसर्ग भोगे तिनका तो देव सहायी कोऊ नाहीं भये अर हरेकनिके सहायी भये तातैं ऐसा निश्चय है जो अशुभकर्मका उपशम हुआ बिना अर शुभकर्मका उदय बिना कोऊ देवादिक सहायी नाहीं होय है। अपना देह ही वैरी हो जाय है तथा खरदूषणका पुत्र शंबुकुमार महापुरुषार्थकरि द्वादशवर्षपर्यंत बाँसका बीडामैं सूर्यहास खड्ग सिद्ध किया अर लक्ष्मण सहज ही लिया अर उसही खड्गसूं खरदूषणका पुत्र संबुकुमारका मस्तक छेद्या गया। अपना हितके अर्थि साधन करी विद्या आपहीका घात किया तातैं पूर्वकर्मका उदयकरि अनेक उपकार अपकार प्रवर्तैं हैं। कोऊ देवादिक आराधन किये हुये धन आजीविका स्त्रीपुत्रादिक देनेमैं समर्थ नाहीं हैं। बहुरि यहां प्रत्यक्ष ही देखो नगरका राजा समस्त देव देवी पीर पैगम्बर स्वामी फकीर समस्त मतका भेषी अर समस्त देव पुराणके पाठी नित्य यज्ञ होम पाठ करनेवाले ब्राह्मणनिको बहुत आजीविका देवैं हैं अर बडा सत्कार अर लक्षां रुपयाका दान देहैं। अर बडा पूजा वलिदान सवकै पहुंचै है तो हू संयोग वियोग हानि वृद्धि जीत हारके टालनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं है। तातैं ऐसा निश्चय जानहु जो श्रद्धान नाहीं करकैं भी अनेक देवदेवीनिकूं आराधैं हैं पूजैं हैं सो सव देवमूढता है वहुरि जो मंत्रसाधन विद्याराधन देवआराधन समस्त पाप पुण्यके अनुकूल फलैं हैं तातैं जो सुखका अर्थी हैं ते दया क्षमा संतोष निर्वांछकता मंदकषायता वीतरागता करि एक धर्महीका आराधन करो अन्य प्रकार वांछा करि पापबंध मत करो अर जो देवनिका समागममैं ही प्रीति करो हो तो उत्तम सम्यग्दृष्टि सौधर्म इंद्र तथा शची इंद्राणी तथा लौकांतिकदेवनिका संगममैं बुद्धि करो। अन्य अधम देवनिका सेवन करि कहा साध्य है? बहुरि मिथ्याबुद्धिकरि स्थापन करे हैं और नित्य पूजन करे हैं तादि प्रथम तो क्षेत्रपालका

पूजन करै हैं अर क्षेत्रपालका पूजन किया पाछैं जिनेन्द्रका पूजन करै हैं अर ऐसी कहै हैं जैसैं पहली द्वारपालका सन्मान करके पीछैं राजाका सन्मान करना द्वारपाल बिना राजासौं कौन मिलावै तैसैं क्षेत्रपाल विना भगवानका मिलाप कौन करावै? जिन मूढनिके ऐसा विचार नाहीं जो भगवान तो मोक्षमैं हैं भगवान परमात्माका स्वरूपकूं यो मिथ्यादृष्टि अज्ञानी कैसैं जानैगा अर कैसैं मिलावैगा? अर विघ्नकूं कैसैं विनाशैगा? आपका विघ्न ही नाश करनेकूं समर्थ नाहीं सो विचाररहित मिथ्यादृष्टि लोक क्षेत्रपालका महाविपरीत रूप बनाय वीतरागके मन्दिरमैं प्रथम स्थान करै हैं जाका हस्तमैं मनुष्यका कटा मूंड अर गदा खड्ग अर कूकरा वाहन करि सहित स्थापन करि तैल गुड़का भक्षणतैं क्षेत्रपाल प्रसन्न होय है ऐसैं लोकनिकूं बहकाय पूजै हैं अर इनका पाहिली दर्शन पूजन स्तवन करै हैं सो मिथ्यादर्शन अर कुज्ञानका प्रभाव जान हु। बहुरि पार्श्वजिनेंद्रकी प्रतिमाके मस्तक ऊपरि फण बिना बनावैं ही नाहीं अर भगवान पार्श्व अरिहंतके समवसरणमैं धरणेंद्रका फण मस्तक ऊपर कैसैं संभवै? धरणेन्द्र तो भगवानके तपके अवसरमैं फणामण्डप किया था सो फेर फणामंडपका प्रयोजन नाहीं अर पार्श्वजिनेंद्र अरहंत भये अर इंद्रकी आज्ञातैं कुबेर समोसरण रच्यो तहां भगवान फणसहित नाहीं विराजे हुते चारनिकायके देव मनुष्य तिर्यंच धर्मश्रवण स्तवन वंदना करते ही तिष्ठे यातैं स्थापनाविषै अर्हंतकी प्रतिबिंबनिके फण कैसैं संभवै? वीतरागमुद्रा तो ऐसे सम्भवै नाहीं परंतु कालके प्रभावतैं धरणेंद्रकी प्रभावना प्रगट करनेकूं लोक विपरीत कल्पना करने लागि गये सो कौन दूर करि सकै। जैसैं पाषाणमय भगवानका प्रतिबिंब महा अंगोपांग सुन्दरताके कर्णनिकूं मस्तककी रक्षाके अर्थि लम्बा करि स्कंधसौं जोड देहैं तिनकौं देखि समस्त धातुके प्रतिबिंबनके भी कर्ण स्कंधसौं जोड देहैं सो देखादेखी चल गई। तैसैं ही अर्हंत प्रतिबिंबनिके ऊपरि फणका-आकार करते लोकनिकूं देखि तत्त्वकूं समझे बिना फण करनेकी प्रवृत्ति चल गई सो फणके करदेनेतैं प्रतिमा तो अपूज्य होय नाहीं क्योंकि चार प्रकारके समस्त ही देव

सर्व तरफतैं सदैव ही भगवानका सेवन करै हैं। अर जो फणामंडप करनेतैं ही धरणेंद्रकूं पूज्य मानै सो देवमूढता है। ऐसैं अनेक प्रकारकरि देवमूढता है तथा गणेश हनुमान योनि लिंग चतुर्मुख षट्मुखका रूप देवत्वरहित प्रगट असंभव तिर्यंचरूपकूं देव मानना वड पीपलादि वृक्षानिकूं, नदीकूं, जलकूं, आग्निकूं, पवनकूं, अन्नकूं, देव मानना सो समस्त देवमूढता है बहुत कहा लिखिये। अब आगे गुरुमूढताका वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

सग्रन्थारम्भहिंसानां संसारावर्तवर्तिनां। पाखाण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखाण्डिमोहनम् ॥ २४ ॥

अर्थ—परिग्रह आरम्भ अर हिंसाकरि ज साहित अर संसाररूप भंवरानिमैं प्रवर्तन करते ऐसे पाखंडीनिकी जो प्रधानता उनके वचनमैं आदर करि प्रवर्तन करना सो पाखंडमूढता है ॥ २४ ॥ भावार्थ—जिनेंद्रधर्मका श्रद्धान ज्ञानकरि रहित होय जो नाना प्रकारका भेष धारण करिकै आपकूं ऊंचा मानि जगतके जीवनितैं पूजा बंदना सत्कार चाहता जो परिग्रह राखैं हैं अर अनेक आरम्भ करै हैं हिंसाके कार्यनिमैं प्रवर्तन करै हैं इंद्रयनिके विषयानिका रागी संसारी असंयमी अज्ञानीनितैं गोष्टी करता अभिमानी होय आपकूं आचार्य पूज्य धर्मात्मा कहावता रागी द्वेषी हुआ प्रवर्तैं हैं अर युद्धशास्त्र शृंगारके शास्त्र हिंसाके कारण आरम्भके शास्त्र रागके बधावनेवाले शास्त्रनिकूं आप महंत भये उपदेश करै हैं. ते पाखण्डी हैं, जिनके नाना प्रकारके रसानि करि सहित भोजनमैं तत्परता याहीतैं कामादिककी कथामैं लीन होय रहे अर परिग्रहके बधावनेके अर्थि दुर्ध्यानी होरहे हैं। बहुरि जे मुनि साधु आचार्य महंत पूज्य नाम कहावैं अर लोकानितैं नमस्कार कराया चाहैं अर विकथा करनेमैं, विषयनिमैं मंत्र, यंत्र, तंत्र, जप, होम, मारण, उच्चाटन, वशीकरणादिक निंद्य आचरण करै हैं तैं पाखण्डी हैं। तिन पाखण्डीनिका वचनकूं प्रमाण करना अर सत्कार करना धर्मकार्यमैं प्रधान मानना सो पाखंडमूढता है। अब सम्यक्त्वकूं नष्ट करनेवाले अष्ट मद हैं तिनके नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ज्ञानं पूजां कुलं जातिं बलमृद्धिं तपो वपुः । अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहुर्गतस्मयाः ॥ २५ ॥

अर्थ—नष्ट भये हैं मद जिनके ऐसे गणधर देव हैं ते ऐसैं स्मय कहिये मद ताहि कहै हैं जो ज्ञाननै पूजानै कुलनै जातिनै बलनै ऋद्धिनै तपनै शरीरके रूपादिक इन अष्टकूं आश्रयकरि जो मानीपना सो स्मय कहिये हैं ॥ २५ ॥ भावार्थ—ज्ञानका मद १ पूजाका मद २ कुलका मद ३ जातिका मद ४ बलका मद ५ ऋद्धिका मद ६ तपका मद ७ शरीरका मद ८ सम्यग्दृष्टिकै नाहीं होय है । जिनकै एक हू मद होय सो सम्यक्त्वी कैसैं होय ? सम्यग्दृष्टिकै सत्यार्थ चिंतवन है सो विचारै है—हे आत्मन् ? जो तू इन्द्रियनि करि उपज्या ज्ञान पाया है सो याका गर्व कैसैं करै है ? यह ज्ञान तो ज्ञानावरणकर्मके क्षयोपशमके आधीन है विनाशिक है इंद्रियानिके आधीन है वातापित्तकफादिकके आधीन है याके विनशनेका प्रमाण मत जानो । याका गर्व कहा करो हो इंद्रियांकूं नष्ट होते ही ज्ञान हू नष्ट होजाय है तथा वातापित्तादिककी घटत बधत होते क्षणमात्रमैं ज्ञान विपरीत होजाय बावला होजाय । अर इंद्रियजनित ज्ञान पर्यायका लार ही विनसैगा अर केई बार एकेंद्रिय भया तहां चार इंद्रिय ही नाहीं पाई एकेंद्रियनिमैं जडरूप पाषाण धूल पृथ्वीरूप होय असंख्यात काल अज्ञानी भया अर केई बार विकलत्रयमें हित अहितकी शिक्षारहित भया । तथा केई बार कूकर शूकर व्याघ्र सर्पादिकविषै विपरीत ज्ञानी होय भ्रम्या । अर निगोदमैं अक्षर के अनंतवें भाग ज्ञानरहित भया । अर व्यंतरादिक अधम देवनिमैं हू मिथ्यात्वके प्रभावतैं आपापरकूं नाहीं जानता नष्ट होय एकेन्द्रियमैं उपजि अनंतकाल परिभ्रमण किया । अर मनुष्यनिमें हू कोऊ विरले मनुष्यनिके ज्ञानावरणके क्षयोपशमकी अधिकतातैं तीक्ष्ण ज्ञान होय जाय तो कोई मनुष्य तो नीच कर्मनिमैं प्रवीण होय अनेक जलके जीव तथा थलके जीव तथा आकाशचारी जीवनिके मारनेमैं पकड-नेमैं बांधनेमैं अनेक यंत्र पींजरा जाल फांसी बनावनेमैं प्रवीण होय हैं केई नानाप्रकारके खड्ग बंदूक तोप बाण जहर विष आदिक विद्यामैं प्रवीणता पाय अपना चातुर्यका मद करि उन्मत्त भये ग्रामके देशके

विध्वंश करनेमैं प्रवीण होय हैं । केई सिंह व्याघ्र बराहादिक जीवनकी शिकारमैं प्रवीण होय हैं । केई ज्ञान पाय अनेक जीवनिके धन हरनेमैं लूटनेमैं मार्गमैं गमन करतेनिका धन हरनेमैं प्राण हरनेमैं प्रवीण होय हैं। केई ज्ञानकी तीक्ष्णता पाय भोले प्राणीनिका तिरस्कार करनेमैं तथा झूठेनिकूं सांचे कर देनेमैं अर सांचेनिकूं झूठे कर देनेमैं धन अर प्राण दोऊनिके हरनेमैं प्रवीण होय हैं । केतक अपने ज्ञानकी तीक्ष्णता करिकैं अन्य मनुष्यनिकी चुगली करनेमैं लुटाय देनेमैं धन धरती आजीविकादिक विनष्ट करा देनेमैं राजादिकनिकरि दंड करा देनेमैं मरण कराय देनेमैं प्रवीण होय हैं। केतक मनुष्यनिके काष्ठ पाषाण धातु रत्ननिके अनेक वस्तु बनावनेमैं केतकनिके चित्र कर्मादिक अनेक आभरण वस्त्र महलादिक अनेक रचना बनाय देनेमैं प्रवीणता पाय गर्वके वश भये नष्ट होय हैं। अर केतक मनुष्य ज्ञानकी प्रबलता पाय अनेक शृंगारशास्त्र युद्धशास्त्र वैद्यक शास्त्रादिक बनाय राजानिकूं रिझावै हैं। अनेक छंद अलंकार विद्या एकांतरूप न्यायविद्या वेद पुराण क्रियाकांडादिककी प्ररूपणा करि गर्विष्ठ भये आत्मज्ञानरहित होय संसार परिभ्रमण करै हैं। अर केई वीतराग धर्मकूं पाय करकैं हू मिथ्यात्वका तीव्र उदयतैं सत्यार्थज्ञान-श्रद्धानकूं नाहीं प्राप्त होय अपना अभिमान वचन पक्ष पुष्ट करनेकूं सूत्रविरुद्ध मार्गकूं प्रवर्तन कराय आपकूं कृतार्थ मानै हैं । ऐसैं ज्ञानकी अधिकता पाय करके हू मिथ्यात्वके प्रभावतैं अधिक अधिक बंध करि नष्ट ही भया । अर तातैं अब वीतरागी सम्यग्ज्ञानी गुरुनिका उपदेश पाय ज्ञानका गर्व मत करो। भो आत्मन्! तेरा स्वभाव तो सकल लोकालोकका जाननेवाला केवलज्ञानरूप है। अब कर्मके क्षयोपशमतैं उपज्या इंद्रियांके आधीन शास्त्रनिका किंचित् ज्ञान ताका कहा गर्व करो हो ? जैसैं कोऊ प्रबल अपना वैरी मंडलेश्वर राजाकूं बांध बंदीखाने मेलि किंचित् कुत्सित भोजन देय नाना त्रास देता राखै अर किसी कालमैं कोऊ किंचित् मिष्ट भोजन हू देवै तो तिस भोजनिकूं पाय मंडलेश्वर राजा कैसैं गर्व करै ? तैसैं तुम्हारा अनंतज्ञान स्वरूप केवलज्ञानकूं इन कर्मनिनै लूट देहरूप बंदीगृहमैं पराधीन करि इंद्रियद्वारे

किंचित् ज्ञान दिया ताकूं पाय कहा गर्व करो हो यो ज्ञान विनाशीक पराधीन है पर्यायकी लार तो अवश्य नष्ट होयहीगा। अर इस पर्यायमैं हू रोगतैं वृद्धपनातैं इंद्रियनिकी विकलतातैं दुष्टनिकी संगातैं कषाय विषयनिकी अधिकतातैं क्षणमात्रमैं विनाश होनेका भरोसा नाहीं। तातैं विनाशीक ज्ञान पाय मद करोगे तो समस्त गुण नष्ट होय ज्ञानरहित एकेन्द्रियादिकनिमैं जाय उपजोगे। अर इस कालमैं तुम कोऊ कविता छंद चरचा समझिकैं तथा नवीन काव्य श्लोक शास्त्र छंद युक्ति बनाय करिकै तथा जिनमतके सिद्धांतनिका किंचित् ज्ञान पाय मदकूं प्राप्त होय रहे हो सो मदकूं प्राप्त होना योग्य नाहीं। पूर्वकालमैं भये ज्ञानी वीतरागीनिके रचे ग्रंथनिके वाक्यनिकूं देख हू जो अकलंकदेवकारि रची लघुत्रयी बृहत्त्रयी चूलिका ये सात ग्रंथ तिनिमैं प्रवेशके अर्थि माणिक्यनंदी नामा मुनीश्वरां परीक्षामुख रच्या तिसकी बडी टीका प्रमेयकमलमार्तंड बारह हजार प्रभाचंद्रजी रची अर लघुत्रयी ऊपरि न्यायकुमुदचंद्रोदय सोलह हजार श्लोकनिमैं प्रभाचंद्रजी रच्या तथा तत्त्वार्थसूत्रनिकी भाष्य तो चौरासी हजार श्लोकनिमैं रची सो इस अवसरमैं प्रसिद्ध नाहीं है तो हू तिसका मंगलाचरण जो देवागमनामा स्तोत्रके ऊपरि विद्यानंदीस्वामी आप्तमीमांसा नामा अष्टसहस्री रची तथा अकलंकदेवजी राजवार्तिक रच्या तथा विद्यानंदस्वामी अठारह हजार श्लोकनिमैं श्लोकवार्तिकजी रच्या तथा आप्तपरीक्षा रची तिनिका निर्बाध वचनके प्रभावकूं देखते बडे बडे वादीनिके गर्व गलजांय तथा नाटकत्रय सारत्रय इत्यादिक अनेकांतरूप निर्बाध युक्ति वचनकूं जानि करि कैसैं ज्ञानका मद करो हो। कदाचित् श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं किंचित् ज्ञान पाया है तो बडा दुर्लभ लाभ याका जानि आत्माकूं विषयनितैं तथा अभिमानादिक कषायनितैं छुडाय परम समता धारणकरि संसारपरिभ्रमणका अभावमैं यत्न करो। ज्ञानका मदकरि आत्माकूं अनंतसंसारी मत करहु। ऐसैं ज्ञानके मदका अभावका उपदेश किया॥ १॥

अब दूजा पूज्यपनाका मद ऐश्वर्यका मद सम्यग्दृष्टि नाहीं करै है जातैं यो राज्य ऐश्वर्य आत्माका

स्वभाव नाहीं, कर्मका किया है विनाशीक है पराधीन है दुर्गतिका कारण है मेरा ऐश्वर्य तो अनंत चतुष्टयमय अक्षय अविनाशी अखंड सुखमय है तथा अनंतज्ञानदर्शनमय है अनंतशक्तिरूप है। तातैं ये कर्मकृत महाउपाधिरूप आत्माकूं क्लेशितकरि दुर्गति पहुंचानेवाले स्वरूपको भुलवानेवाले ऐश्वर्य आत्माका स्वरूप नाहीं। कलहका मूल वैरका कारण क्षणभंगुर परमात्मस्वरूपकूं भुलवानेवाले महादाहके उपजानेवाले दुःखस्वरूप हैं। अनेक जीवनिके घातक हैं। महाआरंभ महापरिग्रहमैं अंधकरि नरक पहुंचानेवाले हैं। इस ऐश्वर्यकरि मैं केते दिन पूज्य रहूंगा। क्षणमैं विध्वंस होय रंक होजाऊंगा। जगतमैं धनके लोभी तथा अज्ञानी लोक मोकूं ऊंचा मानै हैं सत्कार करैं है सो राज्यसंपदादिकानिका मेरे कै दिनका स्वामीपना है? मृत्युका दिन नजीक आवै है मुझसारिखे अनंतानंत जीव संपदाकूं अपनी मानते नष्ट हो गये परमाणुमात्र हू परद्रव्य मेरा नाहीं है अन्य द्रव्य अन्यका कैसैं होय? इस पर्यायमैं कर्मकृत परका संयोगरूप ऐश्वर्य है सो दान सन्मान शील सयंम परजीवनिका उपकारकरि प्रशंसा योग्य है। ऐश्वर्य पाय गर्वरहित वांछारहित समतासहित विनयवंतपना ही शुभगतिका कारण है। अन्यप्रकार मिथ्यादर्शनजनित मिथ्याभाव जीवकूं आपा भुलाय ऐश्वर्यमैं उलझाय नरक पहुंचावै है ऐसैं दृढ श्रद्धान करता सम्यग्दृष्टि पूज्यपनाका मद ऐश्वर्यका मद नाहीं करै। अर अन्य जीवनिकूं अशुभके उदयवशतैं दारिद्रकरि पीडित अशुभ सामग्री सहित देखि अवज्ञा तिरस्कार नाहीं करै है करुणा ही करै है ॥ २ ॥ अब सम्यग्दृष्टिके कुलका मद नाहीं होय ऐसा दिखावै हैं,—जगतमैं पिताके वंशकूं कुल कहै हैं। सम्यग्दृष्टि विचारै है मेरा आत्मा कोऊ करि उपजाया नाहीं है तातैं ज्ञानस्वरूप जो मैं, ताकै कुल ही नाहीं है। ज्ञाता दृष्टा स्वभाव ही मेरा कुल है अर जो अनादिकालका कर्मकरि पराधीन मैं इस पर्यायमैं जो उत्तम कुल पाया तो इसका गर्व करना महा अनर्थ है। पूर्व भवनिमैं मैं अनंतवार नारकी भया। अनंतवार सिंह व्याघ्र सर्पनिके उपज्या अनंतवार सूकर, गीदड़, गधा, ऊंट, मीढा, भैंसा इत्यादिकानिके कुलमैं उपज्या। अनेक

वार म्लेच्छनिके भीलनिके चांडाल चमारनिके धीवरनिके कषायीनिके कुलमैं उपज्या। अर अनेकवार
वार म्लेच्छनिके भीलनिके चांडाल चमारनिके धीवरनिके कषायीनिके कुलमैं उपज्या हूं अर अनेक
नाई, धोबी, तेली, खाती, लुहार, भडभूजा, चारन, भाट, डूम, भांडानिके कुलमैं उपज्या हूं अर अनेक
बार दरिद्रीनिके कुलमैं उपज्या हूं। कदाचित् कोऊ शुभ कर्मका उदयतैं ब्राह्मण क्षत्री वैश्यनिके कुलमैं
आय उपज्या तो अब कर्मका किया कुलमैं आय गर्व करना सो बडा अज्ञान है। इस कुलमैं मेरा केता
दिन वास? अर अनादिसूं इस कुल जातिमैं मेरा वास था नाहीं, नवीन उपज्या हूं अर विनाशिकरि
अन्यकुलमैं पुण्यपापके आधीन उपजना होयगा। तातैं उत्तम कुल पावनेका फल तो ये है जो मोक्षमार्ग
का साधक रत्नत्रयमैं प्रवर्तन करना तथा अधम आचरणका त्याग करना। बहुरि ऐसा विचार करो जो
मैं पुण्यका प्रभावकरि उत्तम कुल पाया है सो मोकूं नीच कुलके मनुष्य ज्यों अभक्ष्य भक्षण करना योग्य
नाहीं। तथा कलह विसंवाद मारण ताडन गाली भण्डवचन बोलना योग्य नाहीं तथा जुवाकी क्रीडा
वेश्यासेवन परधनहरणादिक करना योग्य नाहीं तथा निंद्यकर्मकरि आजीविका करना अयोग्य है।
तथा हास्यवचन असत्यवचन छल कपटकरना योग्य नाहीं। अर उत्तम कुलकूं पायकरिकै हू जो निंद्य-
कर्म करूंगा तो इस लोकमैं धिकारयोग्य होय दुर्गतिका पात्र होऊंगा। ऐसैं कुलका मद सम्यग्दृष्टि
नाहीं करै है॥ ३॥ बहुरि माताकी पक्ष जाति है सो सम्यग्दृष्टि जीव जातिका गर्व नाहीं करै है। जातैं
अनेकबार नीच जातिमैं उपज्या बहुरि एकबार उच्च जातिमैं उपज्या। अनंतवार नीच जातिमैं अर एक
बार उच्च जातिमैं उपज्या ऐसैं नीच जाति अनंतबार पाई अर उच्च जाति हू अनंतवार पाई है। अब उच्च
जातिके पायेका कहा गर्व करो हो। अनेकबार निगोदमैं उपज्या तथा कूकरी सूकरी चांडाली भीलनी
चमारी दासी वेश्यानिके गर्वमैं अनेकबार जन्मधारण किया। अब नीच जातिमैं उपज्या पुरुषका तिर-
स्कार तो कैसैं करो हो अर उच्चजातिकी माताके जन्म लेय मदोन्मत्त कैसैं भये हो? या जाति तो पुण्य-
पापकर्मका फल है। सो रस देय निर्जरैगा जाति कुलमैं ठहरना केै दिनका है। तातैं जातिकुलको विना-

शीक अर कर्मके आधीन जानि उत्तम शील पालनेमैं क्षमा धारणमैं स्वाध्यायमैं परोपकारमैं दानमैं विनयमैं प्रवर्तन करि जातिका उच्चपणा सफल करो। जातिका मदकरि संसारमैं नष्ट मत होहु ॥ ४ ॥

अब बलका मद हू सम्यग्दृष्टिकै नाहीं होय है——सम्यग्दृष्टि विचारै है——मैं आत्मा अनंत बलका धारक हूं सो कर्मरूप मेरा प्रबल वैरी मेरा बलकूं नष्टकरि बलरहित एकेंद्रिय विकलत्रयादिकमें समस्त बल आच्छादनकरि मेरी बलरहित ऐसी दशा करी जो जगतकी ठोकरांतैं कुचलया गया चींथ्या गया। अब कोऊ वीर्यांतरायनामकर्मका किंचित् क्षयोपशमतैं मनुष्य शरीरमैं आहारके आश्रयतैं किंचित् बलका उघाड हुआ है अब जो इस देहके आधार पराधीन बलतैं जो मैं तपश्चरणकरि कर्मनिका नाश करूं तो बल पावना सफल है। तथा इस बलके लाभतैं मैं व्रत उपवास शील संयम स्वाध्याय कायोत्सर्ग करूं तथा कर्मके प्रबल उदय होतैं आये हुए उपसर्ग परीसहनितैं चलायमान नाहीं होऊ। रोगदारिद्रादिक कर्मनिके प्रहारतैं कायर नाहीं होऊं, दीनताकूं प्राप्त नाहीं होऊं तो मेरा बल पावना सफल है। तथा दीन दरिद्री असमर्थनिके दुर्वचन श्रवण करके हू क्षमा ग्रहण करूं तो मेरी आत्माकी विशुद्धताका प्रभावतैं दुर्जय कर्मनिकूं मारि क्रम क्रम करि अनंतवीर्यकूं प्राप्त होय अविनाशी पद पाऊं। अर जो बलवान होय निर्बलनिका घात करूं अर असमर्थनिकी धन धरती स्त्रीनिकूं हरण करूं तथा अपमान तिरस्कार करूं तो सिंह व्याघ्र सर्पादिक दुष्ट तिर्यंचनिकी ज्यों परजीवनिके घातके अर्थ ही मेरे बल पावना रह्या, ताका फल दीर्घकाल नरकनिके दुःख तिर्यंचनिके दुःख भोग निगोदमैं अनंतानंत काल परिभ्रमण करूंगा। तातैं बलका मद समान मेरी आत्माका घातक अन्य नाहीं है ॥५॥ बहुरि ऋद्धि जो धन सम्पदा पावनेका ज्ञानीके गर्व नाहीं होय है सम्यग्दृष्टि तो धनादिकके परिग्रहका महाभार मानै है। ऐसा दिन कदि आवेगा जो समस्त परिग्रहका भारकूं छांडिकरि मेरी आत्मीक धनकी संभाल करूं। यो धन परिग्रहको भार महा बंधन है अर राग द्वेष भय संताप शोक क्लेश वैर हानिकूं कारण है। मद उपजावनेवाला है। महा आरं-

भादिकका कारण है। दुःखरूप दुर्गतिका बीज है। परंतु करिये कहा? जैसैं कफमैं पडी मक्षिका आपकूं छुडावनेकूं समर्थ नाहीं अर कर्दमके समूहमैं फंस्या वृद्ध अशक्त बलद निकलनेकूं समर्थ नाहीं अर कर्दमके द्रहमैं पड्या हस्ती आपकूं निकासनेकूं समर्थ नाहीं होय है तैसैं मैं हू इस धन कुटुंबादिकके फंदमैंसूं निकस्या चाहूं हूं तो हू आसक्तपनातैं तथा रागादिकका प्रबल उदयतैं तथा निर्वाहहोनेकी कठिनताके देखनेतैं कंपायमान हूं ऐसैं अपमान भयादिकका करनेवाला परिग्रहतैं निकसनेका इच्छुक सम्यग्दृष्टि पराधीन विनाशीक दुःखरूप संपदाका गर्व नाहीं करै। याका संगमकी बडी लज्जा है जो मैं मेरी स्वाधीन अविनाशी आत्मीक लक्ष्मीकूं छांडि ज्ञानी होय करके भी इस खाक समान लक्ष्मीकूं नाहीं छांडूं हूं इस समान मेरी निर्लज्जता और कहा होयगी और हीनता कहा होयगी ॥ ६ ॥ अब सम्यग्दृष्टिकै तपका मद नाहीं होय है मद तो तपका नाश करनेवाला है अर जे तपके प्रभावकरि अष्टकर्मरूप वैरीनिकूं नष्ट करि परमात्मापनाकूं प्राप्त भये ते धन्य हैं। मैं संसारी आसक्त हुआ इंद्रियनिकूं भी विषयनितैं रोकनेकूं समर्थ नाहीं। कामका विजय किया नाहीं। निद्रा, आलस्य, प्रमादकूं हू जीता नाहीं। इच्छा रोकनेमैं समर्थ नाहीं। पर्यायमैं लालसा घटी नाहीं। जीवनेकी वांछा मिटी नाहीं। मरनेका भय दूर हुवा नाहीं। स्तवनमैं, निंदामैं, लाभमैं, अलाभमैं, समभाव हुवा नाहीं तितने हमारे काहेका तप? तप तो वह है जातैं कर्म वैरीनिके उदयकूं जीत शुद्धात्मदशामैं लीन होय जाय। धन्य हैं जिनके वीतरागता प्रगट हुई है। ऐसा विचार करि संयुक्त सम्यग्दृष्टिकै तपका मद कैसैं होय ॥ ७ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिकै शरीरके रूपका गर्व नाहीं है। जातैं सम्यग्दृष्टि तो अपना रूपकूं ज्ञानमय देखै है। जिसमैं समस्त वस्तुकूं यथावत् अवलोकन करिये और यो चामडामय शरीरको रूप हमारो रूप नाहीं है। यो देहका रूप क्षण क्षणमैं विनाशीक है। एक दिन आहार पान नाहीं करै तो महाविरूप दीखै है। इस देहका रूप समय समय विनाशीक है अर जरा आजाय तदि महा सूगला भयंकर दीखने लगि जाय है अर रोग तथा दारिद्रता आजाय तदि कोऊके देखनेयोग्य स्पर्शने

योग्य नाहीं रहै। इस रूपका गर्व कौन ज्ञानी करै? एक क्षणमैं अंध होजाय एक क्षणमैं काणा, कूबडा, लूला, टूटा, वक्रमुख, वक्रग्रीव, लंब-उदरादिक विडूरूप होजाय। इहां रूपका गर्व करना बडा अनर्थ है। सुन्दर रूप पाय शीलकूं मलीन मत करो। दरिद्री दुःखी रोगी अंगहीन कुरूप मलीन देखि तिनका तिरस्कार मत करो ग्लानि मत करो संसारमैं महा कुरूप मनुष्य तिर्यंचनिमैं महासूगला भयंकररूप अनेकवार पाया है तातैं रूपका गर्व मत करो॥ ८॥ ऐसैं सम्यग्दर्शनका नाश करनेवाला अष्टमदनिका स्वप्नमैं भी जैसैं संसर्ग नाहीं होय तैसैं निरंतर करना योग्य है। अब जो पुरुष मदोन्मत्त होय अन्य धर्मात्माजनका तिरस्कार करै है तिसके दोषका उपजना दिखावता संता सूत्र कहै हैं—

स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः। सोऽत्येति धर्ममात्मीयं न धर्मो धार्मिकैर्विना॥ २६॥

अर्थ—गर्वरूप है अभिप्राय जाका ऐसा जो कोऊ पुरुष गर्वकरि धर्मके धारक अन्य धर्मात्मा पुरुषनिनै तिरस्कार करै है सो आपका धर्मका तिरस्कार करै है जातैं धर्मात्मा पुरुष विना धर्म नाहीं पाइये है। तातैं जो धन ऐश्वर्य रूपादिकका मद करिकैं धर्मात्माकूं तिरस्कार करै सो आपका धर्महीका तिरस्कार किया। क्योंकि धर्म तो कोऊ पुरुषके आधार है पुरुष विना है नाहीं॥ २६॥

भावार्थ—संसारमैं धन ऐश्वर्य आज्ञाका बडा मद है मदकरि गर्विष्ठ होय जाय तादि देवगुरुधर्मका हू विनय भूलै है। ऐसा विचार करै है जो मन्दिर कहा वस्तु है, मैं अन्य नवीन बनाय लूंगा वा हमारा ही बनाया है अर जो ये तपस्वी त्यागी हैं सो हू हमारे ही आधीन भोजन वस्त्रकरि जीवै हैं अर यो धर्म हू धन खरचनेतैं ही होय है धन खरच्यांसूं ही ठाकुरजीकी पूजा प्रभावना होय है ऐसैं अवज्ञा करै है। तथा अनेक पापाचरण करतो हू कोऊ अभिमानके वश होय दान पूजा प्रभावनामैं पांच रुपया लगाय आपकूं धन्य मानै है तथा धन आज्ञा ऐश्वर्यका मदकरि अन्ध होय ऐसा मानै है जो जगतमैं धन ही बडा है जो धनवानके घर बडे बडे ज्ञानी शास्त्रनिके पारगामी काव्य श्लोकनिके बनावनेवाले नित्य आवै हैं बडे २

ज्ञानी शास्त्रनिके अर्थि धनवानानिकूं घरमैं आप श्रवण कराता फिरै है। तथा अनेक कला चतुराईवाला धनवानके घर नित्य आवै हैं। तथा पूजन करनेवाला प्रभावना करनेवाला तथा भजनकरनेवाला अनेक धनवानका आश्रय लेय धनवानकूं श्रवण करावता फिरै है तथा उपवास व्रत वेला तेला करनेवाला त्यागी तपस्वी धनवाननिकै ही घर भोजनकूं आवै हैं तथा मंत्र जापादिक हू धनवंत पुरुषनिके भले होनेकूं करै हैं। तातैं समस्त धर्म और समस्त गुण हमारे धनके आधीन है ऐसैं धन ऐश्वर्यकरि अपना आत्माकूं ऊंचा मानता कृतकृत्य भये धर्मात्मानिकी अवज्ञा करै हैं जातैं आत्मज्ञानी परमार्थी परम संतोषीनिकूं तो देखे नाहीं जिनको चक्रीकी सम्पदा अर इंद्रलोककी सम्पदा हू दुःखरूप दीखै है वे पुरुष धनवन्तनिका समागम स्वप्नहूमैं नाहीं चाहै हैं। अर जगतके अल्पपुण्यवाले निर्धन लोक गृहकुटुम्बके पालनेकी आशा करि संतप्त भये अपना अभिमान छांड धनवानके घर आये दयावान उपकारी जानिकरिकै तथा धर्मसूं प्रीति अर पावनेका फललेनेवाला जानि धनवानके द्वारै आवै हैं परंतु धनका मदकरि अन्ध होय ताकै तो दान नाहीं होय है उपकार नाहीं करै है दयारहित निर्दयी होय है। केवल हमारा मान मत छीजो मत बिगाडो ऐसैं मानता मरण करि बहुत ममता कृपणताका प्रभावकरि नरक तिर्यंचगतिमैं बहुतकाल परिभ्रमण करै हैं। बहुरि जे धन सम्पदा पाय करिके मदरहित हैं तिनके ऐसा विचार है जो या धनसम्पदा हमारा रूप नाहीं हमारी नाहीं, कोऊ पूर्वकृत पुण्य फला है सो विनाशीक है अब इससंपदा करि किसीका उपकार करूं, दरिद्री लोगनिका संताप दूर करूं, करुणाकरि दुःखित जीवनिका उपकार करूं, तथा जिनधर्मके श्रद्धानी ज्ञानी तिनका दारिद्रादिक संताप मेटि निराकुल करूं। समस्त जन धनवानकी आशा करै हैं मैं दरिद्री होता तो मोतैं कौन उपकार चाहता तातैं मेरे शुभकर्म फल्या है तो आश्रितनिका भरण पोषण करूं बालक वृद्ध रोगी अनाथ विधवा अशक्तनिका उपकार करिहीं मेरा धन पावना सफल है तथा ऐसा कार्यमैं लगाऊं जातैं जिनधर्मकी परिपाटी बहुतकाल प्रवर्तै, ज्ञानाभ्या-

सकी परंपरा चली जाय, नित्य पूजन ध्यान अध्ययन तप शील करि संसारके उद्धार करनेवाला कार्यका प्रवर्त्तन करै, ये धन पायेका फल है लाभ है जो पर उपकारमैं धन नाहीं लागैगा तो अवश्य विनाश होसी ही। किसीकी लार सम्पदा परलोक गई नाहीं। दान विना केवल पाप दुर्ध्यान कराय यह संपदा संसारमैं डबोय देगी। इस संपदा पाइबेका तो दान करना ही फल है। कोट्यां मनुष्य पूर्वै दान नाहीं दिया ते घर घर द्वारै अन्न मांगता फिरै है उदर भर भोजन नाहीं मिलै है। शरीर ऊपरी कपडा नाहीं मिलै है। दरिद्री दान हुवा परकी उच्छिष्टादिकनिमैं आशा करता फिरै है सो दानरहितताका तथा कृपणताका फल है। मनुष्यनिका पशुवनिका दासपना करता हू उदर नाहीं भर सकै है दान विना मोकूं आगामी कालमैं संपदा नाहीं प्राप्त होयगी दानमैं धर्मके स्थाननिमैं जो लगाऊंगा तो पावना सफल है मरण हुवा परलोक साथि जायगी नाहीं जहां धरी है तहां ही धरी रहैगी तातैं कोऊ जीवनिके उपकारमैं खरच होय तो सुफल है वाही संपदा हमारी है ऐसा विचारसहित सम्यग्दृष्टि है सो परोपकारके कार्यनिमैं लगावनेमैं उद्यमी रहै है। यद्यपि धर्मात्मा पुरुषनिके तो या संपदा ग्रहण करने योग्य ही नाहीं मोहकरि अंध करनेवाली है, आत्माकूं भुलावनेवाली है यामैं सम्यग्दृष्टि अपनापन ही नाहीं करै तथापि चारित्र मोहके उदयतैं राग नाहीं घटै तो परजीवनिके उपकारमैं तो अवश्य लगावना बहुत कष्टतैं उपजाई ताकूं उत्तम कार्यमैं लगावना छांडिकरि मरजानेमैं अपना कहा भला होयगा? या विचारि जे पापरहित जन हैं ते निर्धन रोगी दुःखित जननिकूं देखि अवज्ञा नाहीं करै हैं धन देय दुःख मेटै हैं। धर्ममैं प्रवर्त्तावनेवाले शुभ कार्यमैं खरचि करावनेवालेनिकूं देखि बडा आनंद मानै हैं। धर्म साधन करनेवालेनिके सामिल होय धनके भोगनेमैं आनन्द मानै हैं ते संपदा पावनेका फल लिया है अर आगैं परलोकमैं देवनिकी संपदा चक्रीनिकी संपदाकूं दानी ही प्राप्त होय हैं। अर आगैं जे संपदामैं रागी हैं तिनकूं संपदाका स्वरूप दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

यदि पापनिरोधोऽन्यसंपदा किं प्रयोजनं । अथ पापास्रवोऽस्त्यन्यसंपदा किं प्रयोजनं ॥ २७ ॥

अर्थ—सम्यग्दृष्टि विचारै है जो ज्ञानावरणादि, अशुभ पापप्रकृतिनिका आस्रव होना मेरै रुक गया तो इसतैं अन्य संपदाकरि मेरे कहा प्रयोजन है? अर जो हमारे पापका आस्रव होय है अर संपदा आवै है तो इस संपदा करि कहा प्रयोजन है ॥ २७ ॥

भावार्थ—इस जीवके जो त्यागरूप संयमरूप प्रवृत्तिकरि पापका आस्रव होना रुक गया तो अन्य जो इंद्रियनिके विषयनिकी संपदा राज्य ऐश्वर्य संपदा नाहीं भई तो इस संपदातैं कहा प्रयोजन है। आस्रव रुकनेतैं तो निर्वाणसंपदा अहमिंद्रलोककी स्वर्गलोककी संपदा प्राप्त होय है। या खाक धूलि समान क्लेशकी भरी क्षणभंगुर संपदाकरि कहा प्रयोजन है अर जो इस जीवके त्यागरूप संयमरूप प्रवृत्तिकरि पापका आस्रव नाहीं है सो निर्बंध नाम संपदा बडी विभूति महालक्ष्मी है अर जो अन्याय अनीति कपट छल चोरी इत्यादिककरि मेरे पापका आस्रव निरंतर होय है अर धन संपदा प्राप्त हो गई तो इस करि कहा प्रयोजन है। शीघ्र ही मरणकरि अंतर्मुहूर्तमें नरकका नारकी जाय उपजैगा । तातैं सम्यग्दृष्टिके तो पाप कर्मके आस्रव आवनेका बडा भय है अर पापका आस्रव रुक जानेकूं ही महासंपदाका लाभ मानै है। अर इस संसारकी संपदाकूं तो पराधीन दुःखकी देनेवाली जानि यामैं लालसा नाहीं करै हैं अर कदाचित् लाभांतराय भोगांतराय कर्मका क्षयोपशमतैं प्राप्त होय ताकूं पराधीन विनाशीक बंध करनेवाली जानि इस संपदामें लिप्त नाहीं होय है। वर्तमानकी किंचित् वेदनाकूं मेटनेवाली मानि उदासीन भया कडवी औषधि ज्यों ग्रहण करै है संपदाकूं अपना हित जानि बांछा नाहीं करै है।

अब छह अनायतनका ऐसा स्वरूप जानना—कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर कुदेवका श्रद्धान वा सेवन करनेवाला अर कुगुरुकी सेवा करनेवाला अर कुशास्त्रका पढनेवाला ऐसैं छहप्रकार ये धर्मके आयतन कहिये स्थान नाहीं। इनतैं कदाचित् अपना भला होना नाहीं यातैं छहूं अनायतन हैं । इनका संक्षेप

स्वरूप ऐसा जानना–जामैं सर्वज्ञपना नाहीं वीतरागपना नाहीं जाकूं कामी क्रोधी तथा चोरनिका अर जारनिका शिरोमणि कहिये तथा जाकूं भोजनका इच्छुक मांसका भक्षक क्रोधी लोभी अपनी पूजा करावनेका इच्छुक जीवनिका संघारकरनेवाला अपने भक्तानिका उपकारक अभक्तानिका विनाशक कहैं जिनको बहुत मूढ लोग देवबुद्धिकरि पूजै हैं अर देवपनाका आयतन नाहीं उसमैं देवबुद्धि करना मिथ्या है। वे देवपनाका आयतन नाहीं हैं। बहुरि जो व्रतसंयमरहित अनेक पाखंड भेषका धारक तिनिमैं व्रत त्याग विद्याध्ययनादिक परिग्रहत्याग देखि करकैं तथा मंत्रजंत्रतंत्रविद्या ज्योतिष वैद्यक तथा शकुन-विद्या तथा इंद्रजालादिक विद्यानिकरि अनेक मूढ लोगनिकै मान्य पूज्य देख करि पाखंडी जिनआज्ञा-बाह्य भेषीनिमैं पूज्य गुरुपना नाहीं जानना। बहुरि खोटे मिथ्याशास्त्र हिंसाके पोषक तिनिमैं आत्महित नाहीं सो शास्त्र सम्यग्ज्ञानका आयतन नाहीं है। अर कुदेव कुगुरु कुशास्त्रनिके सेवन करनेवाले इनकी उपासनातैं अपना कल्याण माननेवालेनिकूं सम्यग्दृष्टि प्रशंसा नाहीं करै है। ऐसैं सम्यग्दर्शनके घात करनेवाले तीन मूढता अष्ट मद अष्ट शंकादिक दोष छह अनायतन इन पचीस दोषनिका परिहार करि व्यवहार सम्यग्दर्शनके धारणतैं निश्चयसम्यग्दर्शनकूं प्राप्त होहू। अर जाकै पचीस दोषरहित आत्माका श्रद्धानभाव है ताहीकै निश्चय सम्यग्दर्शन होनेका नियम है। जाकै बाह्यदोष ही दूर नाहीं होय ताकै अंतरंग हू सम्यग्दर्शन शुद्ध नाहीं होय है। अब सम्यक्त्वके भेद अर उत्पत्ति कैसैं होय है सो कहै हैं,–

सम्यक्त्व तीन प्रकार है। उपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशमसम्यक्त्व २ क्षायिकसम्यक्त्व ३। संसारी जीवकै अनादिकालतैं अष्टकर्मनिका बंधन है तिनमैं मोहनीयकर्मका भेद जो दर्शनमोहनी ताका तीन भेद है। मिथ्यात्व १ सम्यग्मिथ्यात्व २ सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्व ३ अर चारित्रमोहनीका भेद जो अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ऐसैं सात प्रकृति सम्यक्त्वका घात करनेवाली हैं। इन सप्त प्रकृतिनिका उपशमतैं उपशमसम्यक्त्व होय है। अर इन सप्त प्रकृतिनिका क्षयतैं क्षायिकसम्यक्त्व होय है। इन ही सप्त

प्रकृतिनिका क्षयोपशमतैं क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होय है याहीकूं वेदकसम्यक्त्व हू कहिये है। तहां
अनादिमिथ्यादृष्टि जीवकै पहली उपशमसम्यक्त्व ही होय है अर मिथ्यादृष्टिकै मिथ्यात्व छूटि सम्यक्त्व
होय ताकूं प्रथमोपशमसम्यक्त्व कहिये है। अर जो उपशमश्रेणीकी आदिमैं क्षयोपशमसम्यक्त्वतैं उप-
शमसम्यक्त्व होय सो द्वितीयोपशमसम्यक्त्व है। अब मिथ्यादृष्टिकै मिथ्यात्वगुणस्थानतैं उपशमसम्यक्त्व
कैसैं होय ताकूं श्रीलब्धिसारजीके अनुसार किंचित् लिखिये है,—

सम्यग्दर्शन उपजै है सो चारों गतिहीमैं अनादिमिथ्यादृष्टि वा सादिमिथ्यादृष्टिकै उपजै है परंतु
संज्ञीकै ही उपजै है असंज्ञीकै नाहीं उपजै। पर्याप्तकै ही उपजै अपर्याप्तकै नाहीं उपजै। मंद कषायीहीकै
उपजै तीव्रकषायीकै नाहीं उपजै भव्यहीकै उपजै अभव्यकै नाहीं उपजै गुण दोषनका विचार सहित
साकारोपयोग ज्ञानोपयोगयुक्तहीकै उपजै दर्शनोपयोगीकै नाहीं उपजै। जाग्रतअवस्थाहीमैं उपजै निद्रा-
करि अचेतकै नाहीं उपजै सम्मूर्छनकै नाहीं उपजै अर पांचमी करणलब्धिमैं उत्कृष्ट जो अनिवृत्तिकरण
तिसका अंत समयमैं प्रथमोपशमसम्यक्त्व प्रगट होय है। अब पंचलब्धिके नाम ऐसे हैं—क्षयोपशम-
लब्धि १ विशुद्धिलब्धि २ देशनालब्धि ३ प्रायोग्यलब्धि ४ करणलब्धि ५ इन पांच लब्धि विना सम्यक्त्व
नाहीं उपजै। तिनमैं चार लब्धि तो कदाचित् संसारी भव्य तथा अभव्यकै भी होय जाय है परंतु करण-
लब्धि तो जाकै सम्यक्त्व तथा चारित्रकूं अवश्य प्राप्त होना होय तिसहीकै होय है। अब क्षयोपशमलब्धिकूं
आगममैं ऐसैं कहै हैं—जिस कालमैं ऐसा योग आ मिलै जो अष्ट कर्मनिमैं ज्ञानावरणादिक समस्त अप्र-
शस्त प्रकृतीनकी शक्ति जो अनुभाग सो समय समय प्रति अनंतगुणा घटता अनुक्रमकरि उदय आवै
तिसकालमैं क्षयोपशमलब्धि होय है। जातैं उत्कृष्ट अनुभागका अनंतवां भाग परिणाम जे देशघातिस्पर्द्धक
तिनका उदय होते हू उत्कृष्ट अनुभागका अनंत बहुभाग मात्र जे सर्वघातिस्पर्द्धक तिनकी सत्तामैं अव-
स्थिति सो उपशम ऐसा संयोगकी प्राप्ति जिस कालमैं होय सो क्षयोपशमलब्धि जाननी। प्रथम भई जो

क्षयोपशमलब्धि तिसके प्रभावतैं उपज्या जो जीवकै सातावेदनीय आदि शुभ प्रकृतिके बंधकूं कारण धर्मानुरागरूप शुभ परिणामनिकी प्राप्ति होय सो विशुद्धिलब्धि है। सो ठीक ही है जातैं अशुभकर्मनिका रस देय घटि जाय तदि जीवकै संक्लेशपरिणामकी हानि होजाय तदि विशुद्धपरिणामनिकी वृद्धि होनी युक्त ही है। ऐसैं दूजी विशुद्धिलब्धि कही। अब देशनालब्धिका ऐसा स्वरूप जानना,—छहद्रव्य नवपदार्थनिके उपदेश करनेवाला आचार्यादिकनिका लाभ अर तिनिका उपदेशकी प्राप्ति अर तिनकरि उपदेश्या पदार्थनिका धारण करनेकी प्राप्ति सो देशनालब्धि है। नरकादिकनिमैं उपदेशदाता जहां नाहीं है तहां पूर्व जन्ममैं धारया जो तत्त्वार्थ तिसके संस्कारका वलतैं सम्यग्दर्शन होय है। अब चौथी प्रायोग्यलब्धिका स्वरूप आगममैं जैसा है सो कहै हैं,—ए कही जे तीन लब्धिकरि संयुक्त जे जीव समय समय विशुद्धताकी वृद्धिकरि आयुकर्म विना सात कर्मनिकी अंतःकोटाकोटिसागरमात्र स्थिति अवशेष राखै तिसकालविषै जो पूर्वै स्थिति थी ताको एक कांडक घात करि छेदि, तिस कांडकके द्रव्यको अवशेष रही स्थिति विषै निक्षेपण करै है अर घातिकर्मनिका जो अनुभाग कहिए रस सो तो दारू अर लतारूप अवशेष रहै है। अर शैलास्थितिरूप नाहीं रहै है अरु अघातियानिका अनुभाग निंब कांजीर रूप रहै। विष अर हलाहलरूप नाहीं रहै है। पूर्वै जो अनुभाग था ताके अनंतका भाग दीए बहुभाग मात्र अनुभागकूं छेदि अवशेष रह्या अनुभागविषै प्राप्ति करै है। तिस कार्य करनेकी योग्यताकी प्राप्ति सो प्रायोग्यलब्धि है सो भव्यके वा अभव्यकै भी समान होय है। बहुरि संक्लेशपरिणामी संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्तके जो संभवै ऐसा उत्कृष्टस्थितिबंध अर उत्कृष्टस्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्त्व होतैं जीवके प्रथमोपशमसम्यक्त्व नाहीं ग्रहण होय है अर विशुद्ध क्षपकश्रेणीविषै संभवता ऐसा जघन्यस्थितिबंध अर जघन्यस्थितिअनुभागप्रदेशका सत्त्व होतं हू प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति नाहीं होय है। प्रथमोपशमसम्यक्त्वके सम्मुख भया जो मिथ्यादृष्टि जीव सो विशुद्धताकी वृद्धिकरि बधता संता प्रायोग्यलब्धिका प्रथम समयतैं लगाय

पूर्वस्थितिके संख्यातवें भागमात्र अंतःकोटाकोटिसागरप्रमाण आयु विना सातकर्मनिका स्थितिबंध करै है। तिस अंतःकोटाकोटिसागरस्थितिबंधतैं पल्यका संख्यातवां भागमात्र घटता स्थितिबंध अंतर्मुहूर्त पर्यंत समानतालिए करै है। बहुरि तातैं पल्यका संख्यातवां भागमात्र घटता स्थितिबंध अंतर्मुहूर्तपर्यंत समानतालिये करै। ऐसैं क्रमतैं संख्यात स्थितिबंधापसरणनिकरि पृथक्त्व सौ सागर घटे पहला प्रकृतिबंधापसरणस्थान होय। बहुरि इसही क्रमतैं तिसतैं हू पृथक्त्व सौ सागर घटे दूजा प्रकृतिबंधापसरणस्थान होय। ऐसैं ही क्रमतैं इतना स्थितिबंध घटे एक एक स्थान होय ऐसैं प्रकृतिबंधापसरणके चौतीस स्थान होय हैं। यहां पृथक्त्व नाम सात-आठका है तातैं यहां पृथक्त्वसौसागर कहनेतैं सातसै वा आठसै सागर जानना। अब यहां कैसी कैसी प्रकृतीनिका बंधमैंतैं व्युच्छेद होय है(?) यहांतैं लगाय प्रथमोपशमसम्यक्त्वपर्यंत बंध नाहीं होय ऐसैं बंधापसरण हैं (?) तिन चौतीस बंधापसरणका वर्णन किए कथनी बहुत होजाय जो विशेष जान्या चाहै सो श्रीलब्धिसारग्रंथतैं जानहू। अर और हू विशेष प्रायोग्यलब्धिमैं जानना। अब पंचमी करणलब्धि सो भव्यहीकै होय अभव्यकै नाहीं होय है। अधःकरण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ ऐसैं तीन करण हैं। इहां करण नाम कषायनिकी मंदतातैं विशुद्धरूप आत्मपरिणामनिका है। तिनमैं अल्पअंतर्मुहूर्तप्रमाण काल तो अनिवृत्तकरणका है। यातैं संख्यातगुणा अपूर्वकरणका काल है। यातैं संख्यातगुणा अधःप्रवृत्तिकरणका काल है। सो हू अंतर्मुहूर्तप्रमाण ही है। जातैं इस अंतर्मुहूर्तके असंख्यात भेद हैं। इस अधःप्रवृत्तिकरणकालके विषै अतीत अनागत वर्तमान त्रिकालवर्ती नानाजीवसंबंधी इस करणके विशुद्धतारूप परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हैं, ते परिणाम अधःप्रवृत्तिकरणके जेते समय हैं तितनेमैं समान वृद्धि लिए समय २ वृद्धि लिए हैं। जातैं इस करणके नीचले समयके परिणामनिकी संख्या अर विशुद्धता ऊपरले समयवर्ती किसी जीवके परिणामनितैं मिलै है। तातैं याका नाम अधःप्रवृत्तिकरण नाम है। याका परिणामनिकी संख्या शिद्धताके लौकिक दृष्टांत अलौकिक संदृष्टि गोमट्टसा-

रमैं तथा लब्धिसारमैं है तहांतैं विशेष जानना। इहां एता वडा विस्तार कैसैं लिखा जाय ग्रंथ बहुत बडा होजाय। बहुरि अधःप्रवृत्तिकरणके परिणामनिका प्रभावतैं चार आवश्यक होय हैं एक तो समय समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धताकी वृद्धि होय है। दूजा स्थितिबंधापसरण होय है पूर्वैं जेता प्रमाण लिए कर्मनिका स्थितिबंध होता था तिसतैं घटाय घटाय स्थितिबंध करै है। बहुरि सातावेदनीयकूं आदि देकर प्रशस्तकर्मप्रकृतिनिका समय समय अनंतगुणा बधता गुड खांड सर्करा अमृत समान चतुःस्थानालिए अनुभागबंध होय है। बहुरि असातावेदनीयादि अप्रशस्तकर्मप्रकृतिनिका अनंतगुणा घटता निंब कांजीर समान द्विस्थानालिये अनुभागबंध होय है। विष हलाहलरूप नाहीं होय है। ऐसैं अधःप्रवृत्तिकरणके परिणामतैं चार आवश्यक होय हैं। अधःप्रवृत्तिकरणका अंतर्मुहूर्तकाल व्यतीत भये दूजा अपूर्वकरण होय है। अधःकरणके परिणामतैं अपूर्वकरणके परिणाम असंख्यात लोकगुणे हैं सो नानाजीवनिकी अपेक्षा है। एक जीवकी अपेक्षा एक समयमें एकही परिणाम होय है। एक जीवकी अपेक्षा तो जेते अपूर्वकरणके अंतर्मुहूर्त कालके समय हैं ते ते परिणाम हैं ऐसे ही अधःकरणके भी एक जीवके एक समयमें एक परिणाम ही होय है। नाना जीवनिकी अपेक्षा एक समयकै योग्य असंख्यात परिणाम हैं ते अपूर्वकरणके परिणामभी समय समय सदृश चय करि वर्द्धमान हैं। इस अपूर्वकरणके परिणाम हैं ते नीचले समय संबंधी परिणामनितैं समान नाहीं हैं। प्रथम समयकी उत्कृष्ट विशुद्धतातैं द्वितीय समयकी जघन्य विशुद्धता हू अनंतगुणी है ऐसैं परिणामनिका अपूर्वपणा है तातैं दूसरा करणकूं अपूर्वकरण कह्या है। अपूर्वकरणका प्रथम समयतैं लगाय अंतसमयपर्यंत अपने जघन्यतैं अपना उत्कृष्ट अर पूर्वसमयका उत्कृष्टतैं उत्तर समयका जघन्य क्रमतैं परिणाम अनंतगुणी विशुद्धतालिये सर्पकी चालवत् जानने। इहां अनुकृष्टि नाहीं है। अपूर्वकरणके पहले समयतैं लगाय यावत् सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीका पूर्ण काल जो जिसकालमैं गुण संक्रमण करि मिथ्यात्वकों सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीरूप परिणमावे है तिसकालका अंतसमय-

पर्यंत गुणश्रेणी १, गुणसंक्रमण २, स्थितिखंडन ३, अनुभागखंडन ४ ये चार आवश्यक होय हैं। बहुरि
स्थिति बंधापसरण है सो अधःकरणका प्रथम समयतैं लगाय तिस गुणसंक्रमण पूर्ण होनेका कालपर्यंत
होय है। यद्यपि प्रायोग्यलब्धितैं ही स्थितिबंधापसरण होय है तथापि प्रायोग्यलब्धिके सम्यक्त्व होनेका
अनदास्थितिपना है नियम नाहीं तातैं ग्रहण नाहीं किया। बहुरि स्थितिबंधापसरणका काल अर स्थि-
तिकांडकांडोत्करणका काल ए दोऊ समान अंतर्मुहूर्तमात्र हैं। तहां पूर्वैं बांध्या था ऐसा सत्तामैं कर्मप-
रमाणुरूप द्रव्य तामैंसूं काढ़ि जो द्रव्यगुणश्रेणीमैं दिया ताका गुणश्रेणीका कालमैं समय समय प्रति
असंख्यात गुणा अनुक्रमलिये पंक्तिबंध जो निर्जराका होना सो गुणश्रेणीनिर्जरा है ॥ १ ॥ बहुरि
समय समय प्रति गुणकारका अनुक्रमतैं विवक्षित प्रकृतिके परमाणु पलट करि अन्यप्रकृतिरूप होय
परिणमै सो गुणसंक्रमण है ॥ २ ॥ बहुरि पूर्वैं बांधी थी ते सत्तामैं तिष्ठती कर्मप्रकृतीनिकी स्थितिका
घटावना सो स्थितिखंडन है ॥ ३ ॥ बहुरि पूर्वैं बांधा था ऐसा सत्तामैं तिष्ठता अशुभ प्रकृतीनिका अनु-
भागका घटावना सो अनुभागखंडन कहिये ॥ ४ ॥ ऐसैं चार कार्य अपूर्वकरणविषै अवश्य होय है।
अपूर्वकरणके प्रथमसमयसंबंधी प्रशस्त अप्रशस्त प्रकृतीनिका जो अनुभागसत्त्व है तातैं ताके अंतसम-
यविषै प्रशस्तप्रकृतीनिका अनंतगुणा बधता अर अप्रशस्तप्रकृतिनका अनंतगुणा घटता अनुभागसत्त्व
होय है। इहां समय समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धता होनेतैं प्रशस्तप्रकृतीनका अनंतगुणा अर अनु-
भागकांडकका महातमकरि अप्रशस्तप्रकृतीनका अनंतवें भाग अनुभाग अंतसमयविषै संभवै है। इन
स्थितिखंडादि होनेके विधानका कथन बहुत विस्ताररूप लब्धिसारतैं जानना इहां संक्षेपमात्र प्रकरणके
वशतैं जनाया है। ऐसैं अपूर्वकरणविषै कहे जे स्थितिखंडादि कार्य विशेषतैं तीसरा अनिवृत्तिकरण
विषय भी जानना। विशेष इतना इहां समान समयवर्ती नाना जीवनिके सदृशपरिणाम ही हैं। जातैं जि-
तने अनिवृत्तिकरणके अंतर्मुहूर्तके समय हैं तितने ही अनिवृत्तिकरणके परिणाम हैं तातैं समय २ प्रति

एक २ ही परिणाम है अर इहां जो स्थितिखंड अनुभागखंडादिकका प्रारंभ और ही प्रमाणलिये होय है। जातैं अपूर्वकरणसंबंधी है स्थितिखंडादिक जिनका ताकैं अंतसमयविषै ही समाप्तपना भया। इहां अंतकरणादिविधि हैं सो लब्धिसारजीतैं जाननी।

इहां प्रयोजन ऐसा है जो अनिवृत्तिकरणका अंतसमयविषै दर्शनमोहनीय अर अनंतानुबंधी-चतुष्क इनके प्रकृतिस्थितिप्रदेशअनुभागनिका समस्तपने उदय होनेकी अयोग्यतारूप उपशम होनेतैं तत्वार्थनिका श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनकूं पाय औपशामिकसम्यग्दृष्टि होय है। तहां प्रथम समयविषै द्वितीय स्थितिविषै तिष्ठता मिथ्यात्वके द्रव्यको स्थितिकांडक अनुभागकांडक घात विना गुणसंक्रमणका भाग देय मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्व सम्यक्त्वमोहनीरूपकरि मिथ्यात्वके द्रव्यकूं तीन प्रकार करै है। भावार्थ—अनादिकालका दर्शनमोहनी एकरूप था तिसका द्रव्य करणानिके प्रभावतैं तीनप्रकार शक्तिरूप न्यारे २ होय तिष्ठै है। ऐसैं मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्व होनेका कारण पंचलब्धिनिका संक्षेपतैं स्वरूप जनाया। इस उपशम सम्यक्त्वका जघन्य तथा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त ही काल है। अंतर्मुहूर्त पूर्ण भए पाछे नियमतैं तीन दर्शनमोहनीका प्रकृतीनिमैं एकका उदय होय है। तहां जो सम्यक्त्वमोहनीका उदय होय तो उप-शमसम्यक्त्व छूटि जीवकै वेदकसम्यक्त्व होय है। सो सम्यक्त्वमोहनीका उदयतैं वेदकसम्यग्दृष्टि चल मल अगाढरूप तत्वकूं श्रद्धान करै है। सम्यक्त्वमोहनीका उदयतैं श्रद्धान विषै चलपना होय है तथा मल जो अतिचारसहित होय है वा शिथिलश्रद्धान रहै है। इस वेदक सम्यक्त्वहीकूं क्षयोपशमसम्यक्त्व कहिए है। जातैं दर्शनमोहनीके सर्वघाती स्पर्द्धकानिका उदयका अभावं सो ही इहां क्षय है। अर देशघातिस्प-र्द्धकरूप सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय होतैं बहुरि तिस सम्यक्त्वमोहनीहीकै वर्तमानसमयसंबंधीतै ऊपरिके निषेक उदयकूं नाहीं प्राप्त भए तिनसंबंधी स्पर्द्धकनिका सत्तामैं अवस्थितिरूप है लक्षण जाका ऐसा उपशम होतैं क्षयोपशमसम्यक्त्व होय है इसहीकूं सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयका वेदन जो अनुभवन तातैं वेदकसम्यक्त्व

कहिए है। बहुरि जो इस उपशमसम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्त काल वीते पीछैं जो सम्यङ्मिथ्यात्वका उदय होय तो मिश्रगुणस्थानी होजाय ताकै तत्त्व अतत्त्व दोऊनका मिल्याहुवा श्रद्धान होय है। अर जो मिथ्यात्वका उदय होजाय तो मिथ्यादृष्टि विपरीतश्रद्धानी होय। जैसैं ज्वरकरि पीडित पुरुषकूं मिष्टभोजन नाहीं रुचै, तैसैं ताकूं अनेकांतरूप वस्तुका सत्यार्थस्वरूप तत्त्व नाहीं रुचै। तथा रत्नत्रयरूप मोक्षका मार्ग नाहीं रुचै। तथा दसलक्षणरूप स्वपरकी दयारूप धर्म नाहीं रुचै अर जो उपशमसम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्तकालमैं ते जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली अवशेष रहै जो अनंतानुबंधी क्रोधमानमायालोभमैंतैं कोऊ उदय होय जाय तो सम्यक्त्वतैं छूटि सासादन नाम गुणस्थान पाय जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली सासादन नाम पाय नियमतैं मिथ्यादृष्टि होय है। ऐसैं उपशम सम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्तकाल पूर्ण भए पाछैं चार मार्ग हैं। जो सम्यक्त्वमोहनीका उदय होय जाय तो क्षयोपशम सम्यक्त्वी होय। अर मिश्रप्रकृतिका उदय होय तो मिश्रगुणस्थानी होय। अर मिथ्यात्वका उदय होय तो नियमतैं मिथ्यात्वी होय। अनंतानुबंधी चार कषायमैंतैं कोऊ एकका उदय होय तो सासादनगुणस्थानी नाम पाय पाछे मिथ्यादृष्टि होय है। अब क्षायिकसम्यक्त्व होनेका संक्षेप कहै हैं—दर्शनमोहके क्षयतैं क्षायिक सम्यक्त्व होय है। अर दर्शनमोहका क्षपावनेका आरंभ करै सो कर्मभूमिका मनुष्य ही करै भोगभूमिका मनुष्य नाहीं करै। समस्त देव नारकी अर तिर्यंचनिकै क्षायिकसम्यक्त्व आरंभ नाहीं होय है अर कर्मभूमिका मनुष्य आरंभ करै सो हू तीर्थंकर वा अन्यकेवली श्रुतकेवलीके पादमूलके नजीक तिष्ठता होय सो ही दर्शनमोहकी क्षपणाका आरंभ करै है। जातैं केवली श्रुतकेवलीकी निकटता विना ऐसी विशुद्धता नाहीं होय है। यहां अधःकरणका प्रथमसमयसौं लगाय जेते मिथ्यात्वका अर मिश्रमोहनीका द्रव्यकूं सम्यक्त्वप्रकृतिरूप होय संक्रमण करै तावत् अंतर्मुहूर्तकालपर्यंत दर्शनमोहनीकी क्षपणाका आरंभ कहिए है तिस आरंभकालके अनंतरवर्ती समयतैं लगाय क्षायिकसम्यक्त्वके ग्रहणके प्रथम समयमैं पहिले निष्ठापक होय हैं। सो

जहां प्रारंभ किया था कर्मभूमिका मनुष्य वेही निष्ठापक होय तथा सौधर्मादिक कल्प वा कल्पातीत अहमिंद्रानिविषै वा भोगभूमिके मनुष्यातिर्यंचनिविषै वा धम्मानाम नरकपृथ्वीविषै भी निष्ठापक होय हैं। जातैं पूर्वैं बांधी है आयु जानै ऐसा कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि मरकरि च्यारों गतिनविषै उपजै है। तहां क्षपणाकूं पूर्ण करै है। अब अनंतानुबंधी क्रोधमानमायालोभ अर मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्व सम्यक्त्व इन तीनकी कैसैं क्षपणा करै है सो कहै हैं। कोऊ मनुष्य वेदक सम्यग्दृष्टि असंयत वा देशसंयत वा प्रमत्त वा अप्रमत्त इन चार गुणस्थननिमैंतैं कोऊ एक गुणास्थानमैं तिष्ठता पूर्वैं तीन करणकी विधि करकैं अनंतानुबंधी क्रोधमानमायालोभके उदयावलीमैं तिष्ठते निषेकानिकूं छांडि अर उदयावली बाह्य तिष्ठते समस्त निषेकानिकूं विसंयोजन करता अनिवृत्तिकरणके अंतके समयविषै समस्त अनंतानुबंधीके द्रव्यकूं द्वादश कषाय अर नव नोकषायरूप परिणमन करावे है सो अनंतानुबंधीका विसंयोजन है। यहां हू विसंयोजनमें गुणश्रेणी अर स्थितिकांडघातादिक बहुत विधि हैं। अनंतानुबंधीका विसंयोजन किये पीछे अंतर्मुहूर्तकाल विश्रामकरि अन्य क्रिया नाहीं करि ता पाछे बहुरि तीन करण करि अनिवृत्तिकरणका कालविषै मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीको क्रमतैं नष्ट करै है। सो इन करणानिके सामर्थ्यतैं जो जो कर्मनिका स्थिति अनुभागनिका घात होनेका विधान है सो लब्धिसारतैं जानहु। ऐसे सप्त प्रकृतिनका नाशकरि क्षायक सम्यक्त्वी होय है। ऐसैं तीनप्रकार सम्यक्त्व होनेका विधान संक्षेपते वर्णन किया। अब सम्यग्दृष्टिके अन्य हू अष्ट गुण प्रकट होय हैं तिनकरि आपकै वा अन्यकै सम्यक्त्व जाना जाय है। संवेग १, निर्वेद २, आत्मनिन्दा ३, गर्हा ४, उपशम ५, भक्ति ६, वात्सल्य ७, अनुकंपा ८ ये आठ जाके होय उसके सम्यग्दर्शन होय है। संवेग कहिये धर्ममैं अनुराग ताके होय ही जातैं संसारी मिथ्यादृष्टिका अनुराग तो देहसूं लागि रह्या है। जो मेरा देह उज्वल रहै बलवान् रहै पुष्ट रहै तथा देहसूं ममता करि अभक्ष भक्षणकरि आनन्द मानै है। अन्यायके विषै शृंगारादिक करि देहहीकूं भूषित करै है पापी-

निका संबंधमैं आनन्द मानै है तथा विकथामैं राग करै है तथा स्त्रीपुत्रधनसंपदामैं नगरदेशराज्यऐश्वर्यमैं
अनुराग करै है। सम्यग्दृष्टिके देहादिकनिमैं आत्मबुद्धि नाहीं तातैं दशलक्षणधर्ममैं अनुराग करै है अर
सम्यग्दृष्टिका अनुराग तो धर्मात्मा पुरुषनिमैं धर्मकी कथामैं धर्मके आयतनिमैं होय है। ऐसा संवेग गुण
है सो सम्यग्दृष्टिके होय ही है॥ १॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिके पंच परिवर्तनरूप संसारतैं अर कृतघ्नदेहतैं अर
दुर्गतिके लेजानेवाले भोगनितैं विरक्तपना नियमतैं होय ही सो दूजा गुण निर्वेद प्रगट होय है ॥ २॥
बहुरि अपना प्रमादीपना करि तथा असंयमभावकरि तथा सांसारिक पापमैं प्रवृत्तिकरि निरंतर परिणा-
ममैं निंद्यपनाका चिंतवन जो ऐसा दुर्लभ मनुष्यपनाकी एक क्षण भी धर्मका आश्रय विना जाय है सो
बडा अनर्थ है ऐसैं अपने परिणामनिकरि अपना दोष सहित प्रवर्तनकूं विचारि अपने मनमैं अपनी
निंदा करना सो तीजा आत्मनिंदानाम गुण है॥ ३॥ बहुरि जो अपने गुरु होंय तथा बहुज्ञानी साधर्मी
होय तिनके निकट विनय सहित अपने निंद्य दोषादिक प्रगट करना सो चौथा सम्यग्दृष्टिका गर्हानाम
गुण है॥ ४॥ बहुरि जो क्रोधमानमायालोभकी सम्यग्दृष्टिके मंदता होय ही है। राग द्वेष काम उन्माद
वैरादिक सम्यग्दृष्टिकै अपना घातक जानि मंद होय ही है सो ही उपशमगुण है॥ ५॥ बहुरि सम्यग्दृष्टि-
के पंच परमेष्ठीमैं तथा जिनवाणीमैं जिनेंद्रके प्रतिबिंबमैं दशलक्षणधर्ममैं धर्मके धारक धर्मात्मानिमैं तप-
स्वीनिमैं अनेक गुण स्मरण करि गुणनिमैं अनुराग करना सो सम्यग्दृष्टिके भक्ति नाम छट्टा गुण होय ही
है॥ ६॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिके धर्मात्मामैं प्रीति होय ही जैसैं दरिद्रीनिके धनकूं देखि प्रीति आनंद प्राप्त
होय तैसैं धर्मात्माकूं सम्यग्दृष्टिकूं वा सम्यग्ज्ञानीके धर्मके व्याख्यानकूं श्रवण करि वा देखने करि सम्य-
ग्दृष्टिकै अत्यन्त आनंद प्रगट होना सो वात्सल्यनामा सप्तमगुण है॥ ७॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिकै षट्कायके
जीवनिकी दया प्रगट होय ही है। पर जीवनके दुःख देख अपना परिणाम कंपायमान होजाय जातैं
आपमैं दुःख आया तथा ताके दुःख मेटजाने प्रति परिणामका होना सो सम्यग्दृष्टिकै अनुकंपागुण प्रगट

होय है ॥ ८ ॥ ऐसैं और हू अपरिमाणगुण सम्यग्दृष्टिके स्वयमेव प्रगट होय हैं जातैं जिनके सत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान प्रगट होगया तिनके समस्त बाह्य अभ्यंतर गुण ही होय परिणमै हैं । अब जो जीव सम्यग्दर्शनसंयुक्त है ताहीके महानपना है ऐसा कहनेकूं सूत्र कहै हैं:-

सम्यग्दर्शनसंपन्नमपि मातङ्गदेहजं । देवा देवं विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसं ॥ २८ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त चांडालके देहतैं उपज्या जो चांडाल ताहि हू देवा कहिये गणधरदेव जे हैं ते देव कहै हैं। जैसैं भस्मकरि दबा जो अंगार ताके अभ्यंतर तेज है। भावार्थ—सम्यग्दर्शनकरि सहित चांडाल है ताकूं हू भगवान गणधरदेव हैं ते देव कहै हैं। जातैं यो हाडमांस मय देह चांडालतैं उपज्या तातैं देह चांडाल है। परंतु सम्यग्दर्शन जाकै हुआ ऐसा आत्मा तो दिव्य गुणनिकार दिपै है तातैं मनुष्य शरीरकूं भी उत्तमगुणका प्रभावकरि देव कह्या है। जैसैं भस्मकरि आच्छादित अंगारा अभ्यंतर झकझकाट करता तेजकूं धारण करै है तैसै सम्यग्दृष्टि हू मलीनदेहके अभ्यंतर गुणनिकरि दिपै है तातैं स्वामी श्रीसमंतभद्रजी कहै हैं, जो सम्यग्दृष्टिकी महिमा हमारी रुचिकरि नाहीं कहै हैं भगवानका द्वादशांगरूप आगममैं गणधरदेव सम्यग्दृष्टि चांडालकूं हू देव कहै हैं। जातैं यह देह तो महामलीन मलमूत्रका भरचा हाडमांसचाममय जाके नवद्वारानितैं निरंतर दुर्गंध मल झरै है ऐसा अपवित्र मलीन हू साधुनका देह है सो रत्नत्रयका प्रभावकरि इंद्रादिक देवनिके दर्शन करनेयोग्य स्तवन करनेयोग्य नमस्कार करनेयोग्य होय है। गुण विना चामडाका कफमलमूत्रका भरचा मलीनकूं कौन बंन्दना करै, पूजै, अवलोकन करै। यातैं सम्यग्दर्शनहीतैं बंदने पूजने योग्य है। अब धर्मअधर्मका फल प्रगट करता सूत्र कहै हैं—

श्वापि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकिल्बिषात्। कापि नाम भवेदन्या संपद्धर्माच्छरीरिणां ॥ २९ ॥

अर्थ—धर्मके प्रभावतैं श्वान जो कूकरो सो हू स्वर्गलोकमैं देव जाय उपजै है । अर पापके प्रभावतैं

स्वर्गलोकका महान् ऋद्धिधारी देव हू पृथ्वीमैं कूकरो आय उपजै है। अर प्राणीनिकै धर्मका प्रभावतैं और हू वचनद्वारे नाहीं कही जाय ऐसी अहिमिंद्रानिकी संपदा तथा अविनाशी मुक्तिसंपदा प्राप्त होय है। भावार्थ—मिथ्यात्वका प्रभावतैं दूजा स्वर्गपर्यंतका देव एकेंद्रियनिमैं आय उपजै है अनंतानंतकाल त्रसस्थावरनिमैं परिभ्रमण करता फिरै है। अर बारमा स्वर्गपर्यंतका देव मिथ्यात्वके प्रभावतैं पंचेंद्री तिर्यंचनिमैं आय प्राप्त होय है। तातैं मिथ्यात्वभाव महाअनर्थकारी जानि सम्यक्त्वहीमैं यत्न करना योग्य है। अब कुदेवादिक सम्यग्दृष्टिके वंदनेयोग्य नाहीं है ऐसा दिखावता सूत्र कहै हैं—

भयाशास्नेहलोभाच्च कुदेवागमलिङ्गिनां। प्रणामं विनयं चैव न कुर्युःशुद्धदृष्टयः ॥ ३० ॥

अर्थ—शुद्ध सम्यग्दृष्टि हैं ते भयतैं आशातैं स्नेहतैं लोभतैं कुदेवनिकूं कुआगमकूं कुलिंगीनिकूं प्रणाम नाहीं करै विनय नाहीं करै। जे काम, क्रोध,भय, इच्छा, क्षुधा तृषा, राग, द्वेष, मद, मोह, निद्रा, हर्ष, विषाद, जन्म, मरणादि दोषनिकरि संयुक्त हैं ते समस्त कुदेव हैं। तिनकी व्याप्ति जगतमैं पंचमकालके प्रभावतैं प्रगट बहुत है। एक सर्वज्ञ वीतराग विना समस्त कुदेव हैं। अर हिंसाके पोषक रागीद्वेषी मोहनिकरि प्रकाश्या पूर्वापरदोषसहित विषय कषाय आरंभकूं पुष्ट करनेवाले प्रत्यक्ष अनुमान प्रमाणकरि दूषित ऐसे शास्त्र कुआगम हैं अर जो हिंसादिक पंचपापनिका त्यागी आरंभपरिग्रहरहित देहके संबंधमैं निर्ममत्व उत्तमक्षमादि दशधर्मके धारी दोष टारि अजाचीकवृत्तिसहित दीनतारहित निर्जनस्थानमैं वसते ध्यान अध्ययनमैं निरंतर प्रवर्त्तते पांच इंद्रियनिके विषयांका त्यागी षट्कायका जीवांका विराधनाका त्यागी एकबार मौनतैं परका दिया रसनीरस आपके निमित्त नाहीं किया ऐसा भोजन रत्नत्रयका सहकारी कायकी रक्षाके निमित्त ग्रहण करता ऐसा नग्नमुनिराजका लिंग (भेष) तथा एक वस्त्रका धारक तथा कोपीनधारक क्षुल्लकका लिंग (भेष) तथा तीजा अर्जिकाका लिंग (भेष) एकवस्त्रका

१ यह पंक्ति हस्तलिखित प्रतिमें नहीं है।

धारक इन तीन लिंग विना जो अन्य अनेक लिंग (भेष) धारण करै हैं ते समस्त कुलिंगी हैं एक मुनिका लिंग तथा कोपीन धारक छुल्लक तथा वस्त्रकी धारनहारी अर्जिका इन तीन भेष सिवाय समस्त भेषीनिकूं सम्यग्दृष्टि विनय नमस्कार नाहीं करै है। ऐसैं कुदेव कुशास्त्र कुलिंगीनिकूं भय आशा स्नेह लोभतैं सम्यग्दृष्टि नमस्कार नाहीं करै विनय नाहीं करै। भावार्थ—सम्यग्दृष्टि है सो कुदेवकूं भयतैं नमस्कार नाहीं करै। जो यो देव हैं याकूं राजादिक हजारां मनुष्य पूजैं हैं जो याकूं बंदना नाहीं करूंगा तो यो देव रोष करि मेरा बिगाड करैगा संपदा हरैगा तथा स्त्रीपुत्रादिकको घात करैगा। तथा कदाचित् याका द्वेषतैं मेरे रोग विद्यमान है दुःख विद्यमान है तथा द्वेषकरि अब मेरे हानि करैगा रोग करैगा तथा इस क्षेत्रमैं समस्त लोक पूजे हैं तथा हमारे कुलमैं बडा पिता तथा पिताका पिता माता भाई बंधु पूजते आवै हैं अब मैं इनकी वंदना पूजा उठादूंगा अर कदाचित् मेरा घर अनेक पुत्रपौत्रादिक लक्ष्मीकरि भऱ्या है जो किसीका मरण वा धनहानि तथा रोगादिक होजाय तो मोकूं दूषण आवै अर मेरे बडा दुःख खडा हो जाय तो बडा अनर्थ है अर सारा लोक हू ऐसैं कहै हैं यो देवता आगैं नाहीं माननेवालेनिकूं अन्धा कर दिया था। याकी पूजा बोलारी सत्कारतैं अनेकानिके रोग दूरि करि दिये। तथा या जगन्नाथ स्वामी है याकी पुरीमैं नाई धोबी मीणा खटीक चमार परस्पर सामिल होय औठि (उच्छिष्ट) भक्षण करै हैं याकी अवज्ञा करे ताकै कोढ निकाल देहै ऐसा भय दिखावै तथा अंधेनिकूं आखें दी हैं संपदा दी है याकी निंदाकरि संपदा भ्रष्ट होगई थी तथा आगैं यह शनीश्चर देव रोष करि विक्रमादीत राजानै चोरंग्यो करा दियो छो ऐसैं अनेक देवी भैरों क्षेत्रपाल हनुमान गणेश दुर्गा चंडी सूर्यादिक ग्रह योगिनी जक्ष इत्यादिकानिका भय मानि सम्यग्दृष्टि इनकूं नमस्कार विनयादिक नाहीं करै। बहुरि कुछ पुत्र संपदा आजीविका राज्य धन ये देवता देगा ऐसा आशा करि हू बंदना नाहीं करै। तथा हमारे माहिं इस देवताका स्नेह है हमारे तो दुःख आजाय तादि हमारा रक्षक तो देवता ही है ऐसा स्नेहतैं हू बंदना

नाहीं करै। बहुरि लोभतैं हू कुदेवनिका सत्कार बंदना नाहीं करै जो मैं तो जिस दिनतैं आराधना यो देवताकी करूं हू तिस दिनतैं मेरे लाभ है उच्चता है ऐसैं लाभका कारण संकल्पकरि कुदेवनिका आराधन नाहीं करै। तथा राजाका भयतैं पिता माताका भयतैं कुटुंबका भयतैं तथा लोकलाजतैं कुदेवनिकूं वंदना नाहीं करै। ऐसैं ही जो शास्त्र राग द्वेष हिंसाका पुष्ट करनेवाला तथा शृंगारकथा युद्धकथा स्त्रीकथादिक विकथाका प्ररूपक एकांतरूप वस्तुकूं कहै यज्ञ होम मंत्र यंत्र तंत्र वशीकरण मारण उच्चाटनादिक तथा महाहिंसाके आरंभके कहनेवाले तथा कुदेव कुधमकी आराधना करानेवाले संसारमैं उलझावनेवाले शास्त्रनिकूं सम्यग्दृष्टि बंदना सत्कार नाहीं करै है। तिसके कथनकू रचनाकूं प्रशंसा नाहीं करैं संसारमैं उलझावनेवाला शास्त्रका व्याख्यानादिकर प्रकाश नाहीं करै। भय अर आशास्नेहलोभतैं खोटा आगमका प्रकाश नाहीं करैं। जो मैं मेरा बाप दादा आदिक करि मेरे इन शास्त्रनिकरि वहुत द्रव्यका उपार्जन हुआ है तथा इस शास्त्रतैं मैं हू बहुत धन उपार्जन करूं तथा मेरी प्रतिष्ठा बधाऊं तथा जगतके मान्य होजाऊं तथा सबके ऊपरि होय राजादिकनै अपने सेवक करूं ऐसा लोभते कुशास्त्रनिका सेवन सम्यग्दृष्टि नाहीं करै तथा जो शास्त्रसेवन नाहीं करूंगा तो मेरी आजीविका नष्ट हो जायगी तथा समस्त लोकनिमैं मेरी मान्यता पूज्यता घट जायगी ऐसा भयतैं कुशास्त्रसेवन नाहीं करै। तथा इस शास्त्रके वांचने पढनेमैं बड़ा रस है मन रंजायमान हो जाय है बडी रसीली कथा है तथा लोकनिनैं रंजायमान करनेवाला है ऐसा स्नेह करि हू कुशास्त्रनिका आराधन सम्यग्दृष्टि नाहीं करै है। बहुरि कोऊ आशा करकैं हू सम्यग्दृष्टि कुशास्त्रनिका सेवन नाहीं करै है। जो इसतैं देवता वश हो जायगा वा विद्या सिद्ध हो जायगी। इत्यादिक इस लोकसंबंधी आशा करकै हू कुशास्त्रनिकी प्रशंसा वंदना नाहीं करै है। बहुरि सम्यग्दृष्टि है सो कुलिंगीनिकूं हू भय आशा स्नेह लोभतैं प्रणाम वंदना प्रशंसा नाहीं करै है। जो यो तपस्वी है वा विद्यावान है तथा राजमान्य है लोकमान्य है तथा इसमें दृष्टि मुष्टि

मारण उच्चाटनादिक अनेक शक्ति है मेरा विगाड मत कदाचित् कर द्यो ऐसा भयतैं प्रणामादि नाहीं करै। तथा यो करामाती है वा विद्यावान है यातैं कोऊ विद्या सीखनी है तथा यो राज्यमान्य है यातैं हमारा कार्य लेना है ऐसा लाभतैं हू पाखंडीनिकूं वंदना नमस्कार सम्यग्दृष्टि नाहीं करै। तथा यो भेषधारी मोकूं रसायण देनी करी है तथा एक औषधि यासूं वाकिफ करनी वा सीखनी है तथा व्याकरणविद्या तथा न्याय तथा ज्योतिषविद्या मोकूं सीखनी है। यातैं याका सेवन है इत्यादिक आशा लोभ करी पाखंडी विषय आरंभी परिग्रहधारीकूं सम्यग्दृष्टि नमस्कार नाहीं करै ताकी प्रशंसा नाहीं करै ताकूं सत्यवादी नाहीं कहै धर्मरूप जानै नाहीं। अब यहां कोऊ कहै जो कोऊ बलवान जबरीतैं नमावै तथा आप नाहीं नमै तो बडा उपद्रव करै तदि कहा करै ? ताका उत्तर कहै हैं—जो परकी जबरीतैं नमस्कार किये श्रद्धान नाहीं विगडै है जातैं देवतादिकनिके भयतैं तथा आशातैं स्नेहतैं लोभतैं जो नमस्कार करै तदि श्रद्धान विगडै अर जबरीतैं दुष्ट म्लेच्छादिक व्रतीके मुखमैं अभक्ष देदेवै तो व्रत नाहीं विगडैगा तथा अन्यमतीनके ग्रंथनिमैं तथा वाक्यनिमैं कुदेवनिकूं नमस्कार लिखा है। तथा कुदेवनिकी स्तुति लिखी है तो उनके वांचनेमात्रतैं तो कुदेवनिकूं नमस्कार स्तुति नाहीं हो जायगी सम्यग्दर्शन तो आत्माका भाव है अपने भावनितैं जो कुदेवादिकनिमैं वंदना योग्य अर आपकूं वंदनेवाला मानि नमस्कार स्तवन वंदना करै कुछ इनतैं अपना भला होना जानै तिसके सम्यक्त्वका अभाव है। बहुरि इस कालमैं म्लेक्ष मुसलमान राजा भए जब वे कुछ पूछै अर आप कुछ उनसूं कहा चाहै तदि हाथ जोड ही अर्ज करी जाय इसमैं अपना श्रद्धान ज्ञान नाहीं नष्ट होय है। चारित्रधारी त्यागी साधुजन होय सो हाथ हू नाहीं जोडै अर अपनी खंड २ कर तो हू धर्मकार्य विना वचन नाहीं कहै अर त्यागीनतैं दुष्ट मनुष्य म्लेक्ष राजादिक महापापी हू प्रणाम नाहीं चाहै हैं। तातैं संयमी तो राजाकूं चक्रीकूं माताकूं पिताकूं विद्यागुरुकूं कदाचित् ही नमस्कार नाहीं करै है। ये द्विजन्मा हैं अर अव्रत सम्यग्दृष्टि हू अपना

वशतैं कुदेव कुगुरु कुधर्मकूं नमस्कार नाहीं करै। अन्य व्यवहारीनिकूं यथायोग्य विनय सत्कारादि करै हैं। अर परकी जबरीतैं देश त्यागै आजीविका त्यागै धन त्याग जाय परतु कुधर्मका सेवन कुदेवादिककी आराधना नाहीं करै है। अब रत्नत्रयमैं हू सम्यग्दर्शनके श्रेष्ठपना दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

दर्शनं ज्ञानचारित्रात् साधिमानमुपाश्नुते। दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्षते ॥ ३१ ॥

अर्थ—ज्ञान और चारित्रतैं सम्यदर्शन जो है ताहि अतिशय करकैं साधिमान कहिए सर्वोत्कृष्ट है ऐसा जानि सेवन करै है। तिस ही कारणतैं मोक्षके मार्गविषै सम्यग्दर्शनकूं कर्णधार कहिए है। जैसैं समुद्रके विषै जहाजकूं खेवटिया पार करै है तैसैं अपार ऐसा संसार समुद्रविषै रत्नत्रयरूप जहाजको पार करनेमैं सम्यग्दर्शन खेवटिया है। भावार्थ—रत्नत्रयमैं सम्यग्दर्शन ही अति उत्कृष्ट है। अब सम्यग्दर्शनकै उत्कृष्टपनाका हेतु कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः। न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव ॥ ३२ ॥

अर्थ—विद्या कहिए ज्ञान अर व्रत कहिए चारित्र इनकी उत्पत्ति अर स्थिति अर वृद्धि अर फलका उदय यह सम्यक्त्व नाहीं होतैं संतै नाहीं होय है। जैसैं बीजका अभाव होतैं वृक्षकी उत्पत्ति स्थिति वृद्धि फलका उदय नाहीं होय है। भावार्थ—बीज ही नाहीं तदि वृक्ष कैसैं उपजैगा अर वृक्ष ही नाहीं उपज्या तदि स्थिति कौनकी होय अर वृद्धि कौनकी होय अर फलका उदय कैसैं होय ? जातैं सम्यग्दर्शन नाहीं होय तदि ज्ञान चारित्र हू नाहीं होय सम्यक्त्व विना ज्ञान है सो कुज्ञान है अर चारित्र है सो कुचारित्र है जब सम्यक्त्व विना ज्ञानचारित्रकी उत्पत्ति ही नाहीं तदि स्थिति कहांतैं होय अर ज्ञानचारित्रकी वृद्धि कैसैं होय अर ज्ञानचारित्रका फल जो सर्वज्ञ परमात्मारूप होना कैसैं होय ? तातैं सम्यक्त्व विना सत्यश्रद्धान ज्ञानचारित्र कदाचित ही नाहीं होय। सो ही भगवान् गुणभद्राचार्य महाराजनैं आत्मानुशासनमैं कह्या है—

आर्या—समबोधवृत्ततपसां पाषाणस्येव गौरवं पुंसः। पूज्यं महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वसंयुक्तं ॥ १ ॥

अर्थ—सम कहिए कषायनिकी मंदता अर बोध कहिए अनेकशास्त्रनिका प्रवल ज्ञान होना अर व्रत कहिये त्रयोदशप्रकार दुर्द्धरचारित्रका पालना अर कायरानितैं नाहीं धारि सकै ऐसा बारा प्रकारका घोर तप ये चारों ही पुरुषकै बडे भारी हैं परंतु पुरुषकै इनका बडा भारीपणा पाषाणका भारीपणाके तुल्य है अर एही समभाव ज्ञान चारित्र तप जो सम्यक्त्व संयुक्त होय तो महामणि चिन्तामणि ज्यों पूज्य हो जाय। भावार्थ—जगतमैं अनेक पाषाण हू हैं अर मणि हू हैं। मणि भी पाषाण ही है अर झाझडा पत्थर हू पाषाण ही है परंतु कांतिकरि बडा भेद है, पाषाण २ समान नाहीं। जो झाझडा पत्थर तीन मण हू लेजाय तो एक पैसा मिलै अर मणि जो पद्मरागमणि तथा वज्रमणि रत्यां मासा हू हाथ लागि जाय तो लक्ष्यां धन उपजै है। अपने पुत्र पौत्रादिकताईंका दरिद्र नष्ट होजाय है। तैसैं सम्यक्त्वसहित अल्प हू समभाव अल्प हू ज्ञान अल्प हू चारित्र तप भाव इस जीवकूं कल्पवासी इंद्रादिकनिमैं उपजाय जन्ममरणके दुःखरहित परमात्मा कर देहै। अर सम्यक्त्व विना बहुत हू समभाव तथा बहुत हू ग्यारा अंगपर्यंत ज्ञानका अभ्यास बहुत हू उज्वल चारित्र घोररूप हू तप किया हुआ सो कषायनिकी मंदता होय तो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषीनिमैं तथा अल्परिद्धिधारी कल्पवासीनमैं उपजाय फिर चतुर्गति संसारमैं भ्रमण करावै है। तातैं सम्यक्त्वसहित ही समबोध चारित्र तप शरण जीवका कल्याण है। अब कोऊ आशंका करै जो सम्यक्त्व नाहीं होय अर चारित्र तप ग्रहण करै ऐसा मुनि है सो आरंभादिकमैं लीन ऐसा गृहस्थतैं तो उत्तम होयगा तिसकूं उत्तर करता सूत्र कहै हैं—

गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान्। अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥ ३३ ॥

अर्थ—जाके दर्शनमोह नाहीं ऐसा गृहस्थ है सो मोक्षमार्गमैं तिष्ठै है अर मोहवान ऐसा अनागार कहिये गृहरहित मुनि सो मोक्षमार्गी नाहीं है। याहीतैं मोहवान जो मुनि तातैं दर्शनमोहरहित गृहस्थ है सो

श्रेयान कहिये सर्वोत्कृष्ट है। भावार्थ—जाके मोह जो मिथ्यात्व सो नाहीं ऐसा अव्रतसम्यग्दृष्टि हू मोक्ष-मार्गी है। जाकै सात आठ भव देव मनुष्यनिके ग्रहण होय करि नियमतैं मोक्ष होजायगा अर जाकै मिथ्यात्व है अर मुनिके व्रतधारी साधु भया तो हू मरि करि भवनत्रिकादिकमैं उपजि संसारहीमैं परिभ्रमण करेगा सो ही कुन्दकुन्दस्वामी दर्शनपाहुडमैं कह्या है—

गाथा।

दंसणभट्टा भट्टा दंसणभट्टाण णत्थि णिव्वाणं। सिज्झंति चरियभट्टा दंसणभट्टा ण सिज्झंति ॥ १ ॥
सम्मत्तरयणभट्टा जाणंता बहुविहाइ सत्थाइं। आराहणाविरहिया भमंति तत्थेव तत्थेव ॥ २ ॥
सम्मत्तविरहियाणं सुद्धुविओगां तवं चरंताणं। ण लहंति बोहिलाहं अवि वाससहस्सकोडीहिं ॥ ३ ॥
जे दंसणेसु भट्टा णाणे भट्टा चरित्तभट्टा ये। एदे भट्टविभट्टा सेसं वि जणं विणासंति ॥ ४ ॥
जह मूलम्मि विणट्ठे दुमस्स परिवार णत्थि परिवड्ढी। तह जिणदंसणभट्टा मूलविणट्ठा ण सिज्झंति ॥५॥
जे दंसणेसु भट्टा पाए पाडंति दंसणधराणं। ते हुंति लुल्लमूया वोही पुण दुल्लहा होदि ॥ ६ ॥
जे विपडंति च तेसिं जाणंता लज्जगोरवभयेण। तेसिं पि णत्थि वोही पावं अणुमोदमाणाणं ॥ ७ ॥
जिणवयणमोसहमिणं विसयेसु य विरेयणं अमियभूदं। जरमरणवाहिवेयणखययरणं सव्वदुक्खाणं ॥८॥
एक्कं जिणस्सरूवं वीयं उक्कस्ससावयाणं च। अवरट्ठियाण तिदयं चउत्थ पुण लिंग दंसणे णत्थि ॥ ९ ॥
जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्केइ तं च सद्दहई। केवलजिणेहिं भणियं सद्दहमाणस्य संमत्तं ॥ १० ॥
ण वि देहो वंदिज्जइ ण वि कुलो ण विय जाइसंपण्णो। को वंदमि गुणहीणो ण हु समणु ण सावओ होई ११

अर्थ—जो सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं ते भ्रष्ट हैं क्योंकि सम्यग्दर्शनतैं भ्रष्ट हैं तिनके अनन्तकालहूमैं निर्वाण नाहीं होय है। अर जिनकै सम्यग्दर्शन नाहीं छूट्या अर चारित्रतैं भ्रष्ट भए तो तीजे भवमैं निर्वाण पाय जाय है अर सम्यक्त्व छूटि जाय तो अनंतभवमें हू संसारभ्रमण नाहीं छूटे है ॥ १ ॥ जे

सम्यक्त्व रत्नकरि भ्रष्ट हैं ते बहुतप्रकार शास्त्रानिकूं जानते हू च्यार आराधनारहित भये संसारहीमैं भ्रमण करै हैं॥ २ ॥ जे सम्यक्त्व रत्नकरि रहित हैं ते हजार कोटि वर्ष आछीतरह उग्रतपकूं आचरण करता हू रत्नत्रयका लाभकूं नाहीं पावे है ॥३॥ जे सम्यग्दर्शनरहित है ते ज्ञानके विषै हू विपरीतज्ञानी भए भ्रष्ट ही हैं अर जाका आचरण हू भ्रष्ट है ते तो भ्रष्टनितै हू भ्रष्ट हैं। जे इनकी संगति करै हैं तिनकूं हू धर्मरहित कर विनाश करै हैं ॥४॥ जैसें जिस वृक्षका मूल कहिए जड़ ताका नाश भया तिसके डाहला पत्र पुष्प फलादिक परिवारकी वृद्धि नाहीं होय है तैसे सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं ते मूल भ्रष्ट हैं तिनके ज्ञान चारित्रादिका की कैसें सिद्धी होय ?॥५॥ जे सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं अर सम्यग्दर्शनके धारकानिकूं अपने पगनिमें पडावनेकूं चाहै हैं ते परलोकमैं चरणराहित लूला अर वचनरहित गूंगा होय है। भावार्थ—सम्यग्दर्शनरहितैं होय सम्यग्दृष्टीनितैं बंदना नमस्कार करावै है तथा करावा चाहै हैं ते बहुत काल एकेंद्रिय होय हैं॥ ६ ॥ अर जे पुरुष लज्जा करकें तथा गौरव जो अपना बडापणा करके भय करकैं मिथ्यादृष्टिनिके चरणनिमें बंदना करैं हैं तिनके हु पाप जो मिथ्यात्व ताका अनुमोदनातैं रत्नत्रयकी प्राप्ति दुर्लभ है ॥७॥ सम्यग्दृष्टिकै यो जिनेंद्रका वचनही अमृतरूप औषधि है अर विषयनिका सुखरूप आमाशयका विरेचन करनेवाला है अर जरामरणरूप वेदनाके क्षय करनेका कारण है अर समस्त संसारके दुःखनिका क्षयका कारण है। भावार्थ—सम्यग्दृष्टिकै ऐसा निश्चय है जो जन्मजरामरणादिक समस्तदुःखरूप रोगकूं दूर करनेवाला अमृतरूप तो जिनेंद्रका वचन ही है इस बिना इस अनादिकालका विषयनिकी चाहरूप दाहका करनेवाला आमाशयकूं काढि ज्ञान सुखादि अंगानिकूं अमृतवत पुष्ट करनेवाला अन्य उपाय है ही नाहीं ॥ ८ ॥ एक लिंग तो जिनेंद्रका धारण किया नग्नस्वरूप समस्त वस्त्रशस्त्रादिरहित है अर दूजा उत्कृष्ट श्रावकका एक कोपीन तथा खंडवस्त्र सहित है तीजा आर्यिकाका है, चौथा लिंग (भेष) जिनमतमैं नाहीं, जो है सो जिनधर्मबाह्य है बंदने योग्य नाहीं ॥९॥ जिनेंद्रकी जो आज्ञा है तिसको पा-

लनेका सामर्थ्य होय सो तो आप आचरण करै अर जाका करनेकी सामर्थ्य नाहीं होय तो ताका श्रद्धान ही करता जीवकै केवली जिन सम्यक्त्व कह्या है ॥१०॥ सम्यग्दृष्टिके रत्नत्रयरहित देह बंदनीक नाहीं है। जातिसंयुक्त कुल हू बंदने योग्य नाहीं है जातैं सम्यग्दर्शनादिक गुणरहित श्रावक हू बंदनीक नाहीं अर मुनि हू बंदनीक नाहीं। रत्नत्रयके प्रभावतैं देह बंदनीक हो जाय है कुल जात्यादिक हू बंदनीक होय हैं अब इस जीवका सर्वोत्कृष्ट उपकार करनेवाला अर अपकार करनेवाला कौन है सो कहनकूं सूत्र कहै हैं—

न सम्यक्त्वसमं किंचित्त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि। श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्वसमं नान्यत्तनूभृताम् ॥ ३४ ॥

अर्थ—इन प्राणीनिके सम्यग्दर्शन समान तीन कालमैं अर तीन जगतमैं अन्य कोऊ कल्याण है नाहीं अर मिथ्यात्व समान तीन कालमैं तीन जगतमैं अन्य कोऊ कल्याण है नाहीं। भावार्थ—अनंत काल तो व्यतीत होगया अर वर्तमानकाल एक समय अर अनंत काल आगैं आसी ऐसे तीन कालमैं अर अधोभवनलोक अर असंख्यात द्वीप सागरपर्यंत मध्यलोक अर स्वर्गादिक ऊर्द्ध्वलोक इन तीन लोकमैं सम्यक्त्व समान अन्य कोऊ सर्वोत्कृष्ट उपकार करनेवाला जीवनिका है नाहीं हुआ नाहीं होसी नाहीं। जो उपकार इस जीवका सम्यक्त्व करै है ऐसा उपकार तीन लोकमैं भये ऐसे इंद्र, अहमिंद्र, भुवनेंद्र, चक्री, नारायण, बलभद्र, तीर्थंकरादिक समस्त चेतन अर मणि मंत्र औषधादिक समस्त अचेतन द्रव्य कोऊ सम्यक्त्व समान उपकार नाहीं करै। अर इस जीवका सर्वोत्कृष्ट अपकार जैसा मिथ्यात्व करै है तैसा अपकार करनेवाला तीन लोकमैं तीनकालमैं कोऊ चेतनद्रव्य अचेतनद्रव्य है नाहीं हुआ नाहीं होसी नाहीं। तातैं मिथ्यात्वका त्यागहीमैं परम यत्न करो। समस्त संसारका दुःखकूं मेटनेवाला आत्मकल्याणका परमहद्द एक सम्यक्त्व है तातैं इसका उपार्जनमैं ही उद्यम करो। अब सम्यग्दर्शनका प्रभाव वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

सम्यग्दर्शनशुद्धा नारकतिर्यङ्नपुंसकस्त्रीत्वानि। दुष्कुलविकृताल्पायुर्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः ॥ ३५ ॥

अर्थ—जो जीव सम्यग्दर्शनकरि शुद्ध हैं ते व्रतरहित हू नारकीपणा तिर्यंचपणा नपुंसकपणा स्त्रीपणाकूं नाहीं प्राप्त होय हैं। अर नीचकुलमैं जन्म अर विकृत कहिये आंधा काणा बहरा टूंटा लूला गूंगा कूबडा बावन्या हीनअंग अधिकअंग मांजरा बिटरूप नाहीं होय तथा अल्प आयुका धारक अर दरिद्रीपनाकूं नाहीं प्राप्त होय है। बहुरि व्रतरहित अव्रत सम्यग्दृष्टिकै एक तौ इकतालीस कर्मप्रकृतिका बंध होय नाहीं ऐसा नियम है। मिथ्यात्व १ हुंडकसंस्थान २ नपुंसकवेद ३ असृपाटिकसंहनन ४ एकेंद्री ५ स्थावर ६ आताप ७ सूक्ष्मपना ८ अपर्याप्त ९ वेंद्री १० त्रीन्द्री ११ चतुरिंद्री १२ साधारण १३ नरकगति १४ नरकगत्यानुपूर्वी १५ नरकआयु १६ ए षोडशप्रकार प्रकृति तो मिथ्यात्वभावतैं ही बंधै हैं अर अनंतानुबंधीके प्रभावतैं बंधकूं प्राप्त होंय ऐसी पच्चीस प्रकृति और हैं। अनंतानुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ स्त्यानगृद्धि ५ निद्रानिद्रा ६ प्रचलाप्रचला ७ दुर्भग ८ दुःस्वर ९ अनादेय १० न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान ११ स्वातिसंस्थान १२ कुब्जकसंस्थान १३ बामनसंस्थान १४ वज्रनाराचसंहनन १५ नाराचसंहनन १६ अर्द्धनाराचसंहनन १७ कीलितसंहनन १८ अप्रशस्तविहायोगति १९ स्त्रीपना २० नीचगोत्र २१ तिर्यग्गति २२ तिर्यग्गत्यानुपूर्वी २३ तिर्यंचआयु २४ उद्योत २५ इसप्रकार इकताली कर्मकी प्रकृति मिथ्यादृष्टि ही बंध करै है अर सम्यग्दृष्टिकै मिथ्यात्व अनंतानुबंधीका अभाव भया तातैं अव्रतिसम्यग्दृष्टिके इकतालीसप्रकृतिका नवीन बंध ही नाहीं होय है और जो सम्यक्त्व ग्रहण नाहीं हुआ तदि मिथ्यात्व अवस्थामैं बंद करीते प्रकृति सम्यक्त्वके प्रभावतैं नष्ट होजाय हैं परंतु आयुबंध किया सो नाहीं छूटै तो हू सम्यक्त्वका ऐसा प्रभाव है जो पूर्वैं सप्तमनरककी आयु बांधी होय अर पाछैं सम्यक्त्व हो जाय तो प्रथम नरक ही जाय द्वितीयादिकनिमैं नाहीं जाय और जो तिर्यंचमैं निगोदकी एकेंद्रीकी आयु बांधी होय तो सम्यक्त्वका प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिको पंचेन्द्रिय तिर्यंच ही होय एकें-

द्रियादिक कर्मभूमिको जीव नाहीं होय और जो पूर्वं लब्धिपर्याप्त मनुष्यकी आयु बांधी होय तो सम्यक्त्वके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिको मनुष्य होय है। अर व्यंतरादिकनिमैं नीचदेवका आयु बंध न किया होय तो कल्पवासी महर्द्धिक देव ही होय है अन्य भवनत्रिक देवनिमैं तथा चारदेवनिकी स्त्रीनिमैं समस्त मनुष्यणी तिर्यंचणीनिमैं नाहीं उपजै है ऐसा सम्यक्त्वका प्रभाव है। नीचकुलमैं दरिद्रीनिमैं अल्पआयुका धारक नाहीं होय है। अब सम्यग्दर्शनका प्रभावतैं कैसा मनुष्य होय सो कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ओजस्तेजोविद्यावीर्ययशोवृद्धिविजयविभवसनाथाः।
महाकुला महार्था मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः॥ ३६॥

अर्थ—सम्यग्दर्शनकरि पवित्र पुरुष है ते मनुष्यनिका तिलक कहिये समस्त मनुष्यनिका मंडन करनेवाला वा समस्त मनुष्यनिके मस्तक ऊपरि धारण करने योग्य ऐसा मनुष्यनिका तिलक होय है। केसेक होय है ओजः कहिये पराक्रम अर तेजः कहिये प्रताप अर विद्या कहिये समस्त लोकमैं अतिशयरूप ज्ञान अर अतिशयरूप वीर्य कहिये शक्ति अर उज्वल यश और वृद्धि कहिये दिनदिनप्रति गुणनिकी अर सुखकी वृद्धि, विजय कहिये समस्तप्रकारकरि जीतनरूप अर अतिशयकारी विभव ऐसैं ओज, तेज, विद्या, वीर्य, यश, विजय, विभव इन समस्त गुणनिका स्वामी होय है। बहुरि महानकुलका स्वामी होय है अर महानधर्म महाअर्थ महाकाम महामोक्षरूप चार पुरुषार्थका स्वामी होय है। सम्यग्दर्शनके धारणतैं ऐसैं अप्रमाणप्रभावके धारक मनुष्य होय है। अब सम्यक्त्वके प्रभावतैं देवनिका विभव प्राप्त होय है ताकूं कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अष्टगुणपुष्टितुष्टा दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्टशोभाजुष्टाः।
अमराप्सरसां परिषदि चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे॥ ३७॥

अर्थ—जिनेंद्रके भक्त ऐसे सम्यग्दृष्टि जे हैं ते देवनिमैं अप्सरानिकी सभाविषै चिरकालपर्यंत रमै

हैं। कैसे भये संते रमै हैं? अणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्वादि जो अष्ट गुण तिनकी पुष्टता जो अन्य असंख्यात देवनिमैं नाहीं पाइये अधिकता करि संतोषित भए तथा सर्व देवनितैं उत्कृष्ट ऐसी कांति तेज यश तिनकर युक्त ऐसे हुए स्वर्गलोकमैं तिष्ठै हैं। भावार्थ—अव्रतसम्यग्दृष्टि स्वर्गलोकमैं देव होय हैं सो हीणपुन्नी नाहीं होय। इंद्रतुल्य विभव कांति ज्ञान सुख ऐश्वर्यका धारक महर्द्धिक होय सामानिक वा त्रायस्त्रिंशत् वा लोकपालादिकनिमैं उपजै है अन्य असंख्यात देवनिके ऐसी अणिमादिक ऋद्धि तथा देहकी कांति आभरण विमान विक्रिया नाहीं होय ऐसा उत्कृष्ट विभव पाय असंख्यातकालपर्यंत कोट्यां अप्सरानिकी सभामैं रमै हैं। अब स्वर्गका सागरांपर्यंत इंद्रियनितैं उपजै सुख भोग मनुष्यलोकमैं आय कैसा होय सो कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

नवनिधिसप्तद्वयरत्नाधीशाः सर्वभूमिपतयश्चक्रं। वर्तयितुं प्रभवन्ति स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः॥ ३८॥

अर्थ—जिनकै उज्वल सम्यग्दर्शन है ते स्वर्गलोकमैं आयु पूर्ण करकै यहां मनुष्यलोकमैं आय अर नवनिधि चौदहरत्ननिका स्वामी समस्त भरतक्षेत्रके बत्तीस हजार देशनिका पति अर बत्तीस हजार मुकटबंध राजानिके मस्तक ऊपरि मुकुटरूप है चरण जिनका ऐसा चक्रकूं प्रवर्तन करनेकूं समर्थ चक्रवर्ती होय है। भावार्थ—सम्यग्दृष्टि स्वर्गतैं मनुष्यभवमैं आय नवनिधि चौदह रत्ननिका स्वामी समस्त राजानिका मस्तक उपरि आज्ञा प्रवर्तन करता षट्खंड पृथ्वीका पति अर्थात् चक्रवर्ती होय है। अब सम्यक्त्वका प्रभावतैं तीर्थंकर होय हैं ऐसैं सूत्र कहै हैं—

अमरासुरनरपतिभिर्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः।
दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः॥ ३९॥

अर्थ—जे पुरुष सम्यग्दर्शनकरि सम्यक् निर्णय किए हैं पदार्थ जिननै ते अमरपति असुरपति नरपति अर संयमीनिका पति गणधर तिनकरि बंदनीक हैं चरणकमल जिनका अर लोकानिके शरणमैं

उत्कृष्ट ऐसे धर्मचक्रके धारक तीर्थंकर उपजे हैं। भावार्थ—सम्यग्दृष्टि तीर्थंकर होय अनेक जीवनिके संसारदुःखके छेदन करनेवाला धर्मचक्रकूं प्रवर्तन करावे है जिनकूं इंद्र असुरेंद्र गणधरादिक नित्य वंदना करै हैं। जीवनकूं परम शरण हैं। अब सम्यग्दृष्टिके ही निर्वाण होय है ऐसा सूत्र कहै हैं—

शिवमजरमरुजमक्षयमव्याबाधं विशोकभयशङ्कं ।
काष्ठागतसुखविद्याविभवं विमलं भजान्ति दर्शनशरणाः ॥ ४० ॥

अर्थ—जिनके सम्यग्दर्शन ही शरण है ते पुरुष शिव जो निराकुलता लक्षण मोक्ष ताहि अनुभवै है। कैसाक है शिव जामैं जरा नाहीं अनंतानंकालहूमैं आत्मा जहां जीर्ण नाहीं होय है अर अरुज कहिए जामैं रोग पीडा व्याधि नाहीं है अर अक्षय कहिए जामें अनंत चतुष्टय स्वरूपका नाश नाहीं है अर जहां कोऊप्रकार बाधा नाहीं है अर नष्ट हुआ है शोकभयशंका जातैं ऐसा शोकभयशंकारहित है। बहुरि परम हदकूं प्राप्त भया है सुखका अर ज्ञानका विभव जामैं ऐसा है अर द्रव्यकर्म तो ज्ञानावरणादिक अर भावकर्म रागद्वेषादिक अर नोकर्म शरीरादिक इसप्रकार कर्ममलका अभावतैं विमल है ऐसा अद्वितीय स्वरूप मोक्षकूं सम्यग्दृष्टि ही अनुभवै है। ऐसैं सम्यक्त्वका प्रभाव वर्णन करि अब दर्शनाधिकारको समाप्त करता दर्शनकी महिमाकूं उपसंहार करता सूत्र कहै हैं—

देवेन्द्रचक्रमहिमानममेयमानं राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्रशिरोऽर्चनीयं ।
धर्मेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्वलोकं लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः ॥ ४१ ॥

अर्थ—जिन जो परमात्मा तिसका स्वरूपमैं है भक्ति कहिए अनुराग जाकैं ऐसा सम्यग्दृष्टि भव्य है सो इस मनुष्यभवतैं चय करि स्वर्गलोकमैं अप्रमाण हैं ऋद्धि शक्ति सुख विभवका प्रभाव जामैं ऐसा देवेंद्रनिका समूहकी महिमा पायकरि पाछै पृथ्वीमैं आय अर बत्तीस हजार राजानिका मस्तककरि पूजनीय ऐसा राजेंद्र जो चक्रवर्ती ताका चक्रकूं पाय करके फिर अहिमिंद्रलोकका महिमाकूं पाय नीचे किया है

समस्त लोक जानै ऐसा भगवान तीर्थंकरनिका धर्मचक्र ताहि प्राप्त होय करि निर्वाणकूं प्राप्त होय है। सम्यग्दर्शनका धारी इन अनुक्रमकरि निर्वाणकूं प्राप्त होय है। ऐसैं दर्शनमोहनीका अभावतैं सत्यार्थश्रद्धान सत्यार्थज्ञान प्रगट होय है अर अनंतानुबंधीके अभावतैं स्वरूपाचरण चारित्र सम्यग्दृष्टिके प्रगट होय है यद्यपि अप्रत्याख्यानावरणके उदयतैं देशचारित्र नाहीं भया है अर प्रत्याख्यानावरणका उदयतैं सकलचारित्र नाहीं प्रगट भया है तो हू सम्यग्दृष्टिके देहादिक परद्रव्य तथा रागद्वेषादिक कर्मजनित परभाव इनमैं दृढ भेदविज्ञान ऐसा भया है जो अपना ज्ञानदर्शनरूप ज्ञानस्वभावहीमैं आत्मबुद्धि धारनेतैं अर पर्यायमें आत्मबुद्धि स्वप्नमैं हू नाहीं होनेसे ऐसा चिंतवन करै है—हे आत्मन्! तू भगवानका परमागमका शरण ग्रहण करकैं ज्ञानदृष्टितैं अवलोकन कर अष्टप्रकारका स्पर्श पंचप्रकारका रस दोयप्रकार गंध पंचप्रकार वर्ण ये तुम्हारा रूप नाहीं है पुद्गलका है ये क्रोध मान माया लाभ तुम्हारा स्वरूप नाहीं है कर्मका उदयजनित ज्ञानदृष्टितैं विकार है तथा हर्ष विषाद मद मोह शोक भय ग्लानि कामादिक कर्मजनित विकार हैं तैं तुम्हारे स्वरूपतैं भिन्न हैं बहुरि नरक तिर्यंच मनुष्य देव ये चार गति आत्माका रूप नाहीं कर्मका उदयजनित है विनाशीक है। देव मनुष्यादिक तुम्हारा रूप नाहीं सम्यग्ज्ञानीके ऐसा चिंतवन होय है जो मैं गौरा नाहीं, मैं श्याम नाहीं, मैं राजा नाहीं, मैं रंक नाहीं, मैं बलवान नाहीं, मैं निर्बल नाहीं, मैं स्वामी नाहीं, मैं सेवक नाहीं, मैं रूपवान नाहीं, मैं कुरूपा नाहीं, मैं पुण्यवान नाहीं, मैं पापी नाहीं, मैं धनवान नाहीं, मैं निर्धन नाहीं, मैं ब्राह्मण नाहीं, मैं क्षत्रिय नाहीं, मैं वैश्य नाहीं, मैं शूद्र नाहीं, मैं स्त्री नाहीं, मैं पुरुष नाहीं, मैं नपुंसक नाहीं, मैं स्थूल नाहीं, मैं कृश नाहीं, मैं नीच जात नाहीं, मैं ऊंच जाति नाहीं, मैं कुलवान नाहीं, मैं अकुलीन नाहीं, मैं पंडित नाहीं, मैं मूर्ख नाहीं, मैं दाता नाहीं, मैं जाचक नाहीं, मैं गुरु नाहीं, मैं शिष्य नाहीं, मैं देह नाहीं, मैं इंद्रिय नाहीं, मैं मन नाहीं ये समस्त कर्मका उदय जनित पुद्गलका विकार है मेरा स्वरूप तो ज्ञाता है दृष्टा है ये रूप आत्माका नाहीं, पुद्ग-

लका है। मुनिपना क्षुल्लकपना हू पुद्गलका भेष है। ये लोक हमारा नाहीं यो देश यो ग्राम यो नगर समस्त परद्रव्य हैं। कर्म उपजाय दिया कौन २ क्षेत्रमैं अपना संकल्प करूं सम्यग्दृष्टिकै ऐसा दृढ विचार होय है अर मिथ्यादृष्टि परकृत पर्यायमैं आपामानै है। मिथ्यादृष्टिका आपा जातमैं कुलमैं देहमैं धनमैं राज्यमैं ऐश्वर्यमैं महल मकान नगर कुटुंबानिमैं है। याकी लार हमारी घटी, हमारी बढी, हमारा सर्वस्व पूरा हुआ, मैं नीचा हूआ, मैं ऊंचा हुआ, मैं मरा, मैं जीया, हमारा तिरस्कार हुआ, हमारा सर्वस्व गया इत्यादिक परवस्तुमैं अपना संकल्प करि महा आर्त्तध्यान रौद्रध्यान करि दुर्गतिको पाय संसार परिभ्रमण करै है। बहुरि मिथ्यादृष्टि जीव किंचित् जिनधर्ममैं अधिकार पाय अर नवीन नवीन अपना परिणामतैं युक्ति बनाय लोकानिकै भ्रम उपजाय आप पांच आदम्यांमैं महान् ज्ञानीपना का अभिमानकरि सूत्रविरुद्ध अनेक कथनी करै है। कृतघ्न भया जिनसूत्रनिकी हू निंदा करै है। बहु-ज्ञानिनिकी निंदा करै है। दुष्ट अभिप्रायी पांच आदम्यांमैं मान्यता वा पक्षपात ग्रहण करि निराधार रहित हुआ हठग्राही आप थापी एकांती स्याद्वादरूप भगवानकी वाणीतैं पराङ्गमुख हुआ कलह वि-संवाद परकी निंदाहीकूं धर्म मानता तिष्टै है। तथा केतक मिथ्यादृष्टि किंचित मात्र बाह्यत्याग ग्रहण करकैं तथा स्नानकरि भोजन करते तथा अन्य देवादिकी बंदनाका त्यागकूं कृत्यकृत्य मानता जगतके जीवनकी निंदा करि आपकूं प्रशंसा योग्य मानै है अर अन्यायतैं आजीविका अर हिंसादिकके अरंभमैं निपुण होय अन्यधर्मीनिके छिद्र हेरते फिरै है। तथा निर्दोष पुरुषनिके दोष विख्यात करि मदमैं छके फिरै है आपकूं ऊंचा मानै है अन्यकूं अज्ञानी भ्रष्ट मानै है पापिष्ठ आपकी प्रशंसा कराय फूलो फूलो फिरै है अपना स्वरूपकी शुद्धताकूं नाहीं देखता नाना चेष्टा करै है भोले जीवानिकूं मिथ्या उपदेश देय एकां-तके हठकू ग्रहण करावे है। अर कुगुरु कुदेवानिकूं नमस्कारके त्याग करनेतैं अर अन्य देवानिकी निंदा करकै अर सभामैं बैठ मिथ्या भेषधारीनिकी निंदा करकै ही आपकूं सम्यग्दृष्टि मानै है। तथा लोग

हमकूं दृढ श्रद्धानी धर्मात्मा मानैंगे ऐसा अनंतानुबंधीमानके उदयतैं परकी निंदा करनेतैं ही आपकूं उच्च जानतैं जगतकूं अधर्मी मानै है जातैं कुदेव कुगुरुकूं नमस्कार तो समस्त तिर्यंच भी नाहीं करै हैं अर नारकी नाहीं करै हैं। भोगभूमिके कुभोगभूमिके हू नमस्कार नाहीं करै हैं अर समस्त देवता हू नाहीं पूजै हैं। नमस्कार पूजा नाहीं करनेतैं ही सम्यग्दृष्टि होय तो समस्त नारकी मनुष्य तिर्यंचादिक सम्यग्दृष्टि होय जाय सो है नाहीं। बहुरि जगतके समस्त मिथ्यादृष्टि मनुष्य देवादिकनिकी निंदा करनेतैं ही सम्यक्त्व नाहीं होयगा। जगतकी निंदा करनेवाला अर पापीनतैं वैर करनेवाला तो कुगतिहीका पात्र होयगा। जातैं मिथ्याभाव तो जीवनिके अनादिका है सम्यग्दृष्टि तो इनकी हू करुणा करै अर समस्तमैं साम्यभाव ही करै है। यातैं सम्यग्दर्शन तो आपापरका सत्य श्रद्धान ज्ञान विनय सहित स्याद्वादरूप परमागमके सेवनतैंही होयगा।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके सूत्रनिकी देशभाषामयवचनिकाविषै सम्यग्दर्शनका स्वरूपवर्णन नामवाला प्रथम अधिकार समाप्त भया ॥ १ ॥

अब सम्यग्ज्ञानरूप धर्मकूं प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं—

(आर्या छंद।)

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात। निस्सन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागामिनः ॥ ४२ ॥

अर्थ—आगमके जाननेवाले श्रीगणधर देव तथा श्रुतकेवली हैं ते ताकूं ज्ञान कहै हैं जो वस्तुका स्वरूपकूं परिपूर्ण जानै न्यून नाहीं जानै अर वस्तुका स्वरूप जैसा है तातैं अधिक नाहीं जानै अर जैसा वस्तुका सत्यार्थस्वरूप है तैसा ही जानै अर विपरीतपनाकरि रहित जानै अर संशयरहित जानै ताहि भगवान ज्ञान कहै हैं। इहां सम्यग्ज्ञानका स्वरूप कह्या है, सो जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून जानै सो

मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो अनंतज्ञानस्वरूप है अर आत्माकूं इंद्रियजनित मतिज्ञान-मात्र ही जानै सो न्यूनस्वरूप जाननैतैं मिथ्याज्ञान भया। अर वस्तुके स्वरूपकूं अधिक जानै सो हू मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्तीक है ताकूं ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्त भी जानना अर पुद्गलके गुणरूप स्पर्श गंध वर्ण रस मूर्तीक हू जानना सो अधिक जाननैतैं मिथ्याज्ञान है। अर सीपकूं सुपेद अर चिलकता देख वामैं रूपाका ज्ञान होना सो विपरीतज्ञान हू मिथ्याज्ञान है। अर यह सीप है कि रूपो है ऐसैं दोऊमैं संशयरूप एकका निश्चयरहित जानना सो संशयज्ञान है सो हू मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका जैसा स्वरूप है तैसैं जानना सो सम्यग्ज्ञान है अथवा जैसैं सोलाकूं पांचगुणा करिये तो अस्सी होय ताकूं अठहत्तर जानै सो न्यून ज्ञान भया अर अस्सीका बियासी जानिये सो अधिकका जानना भया अर अस्सी होय ताकूं सोलह जानना वा पांच जानना सो विपरीतज्ञान भया अर सोलहकूं पांचगुणा किये अस्सी भये कि अठहत्तर भये ऐसा संदेहरूप ज्ञान सो संशयज्ञान है। ऐसैं न्यून जानना तथा अधिक जानना तथा विपरीत तथा संशयरूपजानना ऐसैं चार-प्रकारका मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून नाहीं जानै अधिक नाहीं जानै विपरीत (अंवली) नाहीं जानै संशयरूप नाहीं जानै जैसा वस्तुका स्वरूप है तैसा संशयरहित जानै ताहि सम्यग्ज्ञान कहिये है। अब सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगकूं जानै है ऐसा सूत्र कहै हैं—

प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यं। बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समचीनः ॥ ४३ ॥

अर्थ—सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगनै जानै है, कैसाक है प्रथमानुयोग—अर्थ जे धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप चार पुरुषार्थ तिनका है कथन जामैं बहुरि चरित कहिये एक पुरुषके आश्रय है कथा जामैं, बहुरि त्रिषष्ठिशलाका पुरुषनिकी कथनीका संबंधका प्ररूपक यातैं पुराण है। बहुरि बोधिसमाधिको निधान है सो सम्यग्दर्शनादिक नाहीं प्राप्त भए तिनकी प्राप्ति होना सो बोधि है अर प्राप्ति भए जे

सम्यग्दर्शनादिकनकी जो परिपूर्णता सो समाधि है। सो यो प्रथमानुयोग रत्नत्रयकी प्राप्तिको अर परिपूर्णताको निधान है उत्पत्तिको स्थान है अर पुण्य होनेका कारण है तातैं पुण्य है। ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—जामैं धर्मका कथन अर धर्मका फलरूप कहे जे धन संपदा रूप अर्थ काम जो पंच इंद्रियानिका विषय अर संसारतैं छूटनेरूप मोक्ष ताका कथन है अर एक पुरुषका आचरणका है कथन जामैं ऐसा चारित्ररूप है। अर त्रिशष्ठिशलाका पुरुषनिका है वर्णन जामैं तातैं पुराणरूप है। अर वक्ता श्रोतानिके पुण्यके उपजावनेका कारण है तातैं पुण्यरूप है। अर चार आराधनाकी प्राप्ति होनेका अर चार आराधनाकी पूर्णता करनेका निधान है ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब करणानुयोगका जाननेवाला हू सम्यग्ज्ञान है ऐसा सूत्र कहै हैं—

लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च। आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥ ४४ ॥

अर्थ—तैसैं ही मति कहिये सम्यग्ज्ञान जो है सो करणानुयोग जो है ताहि जानै है। कैसाक है करणानुयोग लोक अर अलोकके विभागको अर उत्सर्पिणीके छह काल अर अवसर्पिणीके षटकालके परिवर्तन कहिये पलटनेका अर चार गतिनिके परिभ्रमणका आदर्शमिव कहिये दर्पणवत् दिखावनेवाला है। भावार्थ—जामैं षटद्रव्यका समुदायरूप तो लोक अर केवल आकाश द्रव्य ही सो अलोक अपने गुणपर्यायनिसहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं। अर छहूकालके निमित्ततैं जैसे जैसे जीवपुद्गलनिकी परणति है ते प्रतिबिंबरूप होय जामैं झलकै हैं अर जामैं चार गतिनिका स्वरूप प्रगट दिपै है सो दर्पण समान करणानुयोग है। तिनै यथावत् सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब चरणानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम्। चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥ ४५ ॥

अर्थ—गृहमें आसक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे गृहस्थी अर गृहतैं विरक्त होय गृहका त्यागी ऐसा

अनगार कहिये यति तिनके चारित्र जो सम्यक् आचरण ताकी उत्पत्ति अर वृद्धि अर रक्षा इनकी अंग कहिये कारण ऐसा चरणानुयोग सिद्धांत ताहि सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—मुनिका अर गृहस्थका जो निर्दोष आचरण ताकी उत्पत्तिका अर दिन दिन वृद्धि होनेका अर धारण किया तिनकी रक्षाका कारण चरणानुयोगरूप ज्ञान ही है। अब द्रव्यानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

जीवाजीवसुतत्त्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च। द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥ ४६ ॥

अर्थ—यो द्रव्यानुयोग नाम दीपक है सो जीव अर अजीव ये दोय जे निर्बाध तत्त्व तिनने अर पुण्य पापनै अर बध मोक्ष जे हैं तिननै भावश्रुतज्ञानरूप प्रकाश होय जैसें होय तैसें विस्तारता है। भावार्थ—द्रव्यानुयोगनामा दीपक ऐसा है जो बाधारहित जीव अजीवका स्वरूपकूं अर पुण्यपापकूं अर कर्मके बंधकूं अर कर्मतैं छूट जानेकूं आत्मामें उद्योत हो जाय तैसें विस्तार करि दिखावै है। ऐसें चार अनुयोगरूप श्रुतज्ञानका स्वरूप वर्णन किया। ज्ञानके वीस भेद अर अंग तथा पूर्वरूप वर्णन किये ग्रंथ बहुत हो जाय।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिका विषै सम्यग्ज्ञानका स्वरूप वर्णन करनेवाला द्वितीय अधिकार समाप्त भया ॥ २ ॥

अब सम्यक्चारित्रनामा तृतीय अधिकारकूं वर्णन करते चारित्रस्वरूप धर्मके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः। रागद्वेषनिवृत्त्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥ ४७ ॥

अर्थ—दर्शनमोहरूप तिमिरको दूर होते संते सम्यग्दर्शनका लाभतैं प्राप्त भया है सम्यग्ज्ञान जाकै ऐसा साधु जो निकटभव्य है सो रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र है ताहि अंगीकार करै है। भावार्थ—इस संसारी जीवकै अनादिकालका दर्शनमोहनीयका उदयरूप तिमिरकरि ज्ञाननेत्र ढाकि रह्या है

तिस मोह तिमिरतैं अपना अर परका भेदविज्ञानरहित हुआ चारों गतिनिमें पर्यायहीकूं आपा जानता अनंतकालतैं भ्रमण करै है। कोऊ जीवकै करणलब्धादिक सामग्रीतैं दर्शनमोहका उपशमतैं तथा क्षयतैं तथा क्षयोपशमतैं सम्यग्दर्शन होय है तदि मिथ्यात्वका अभावतैं ज्ञान हू सम्यक्पनाकूं प्राप्त होय है तदि कोऊ सम्यग्ज्ञानी रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र अंगीकार करै। अब रागद्वेषका अभावतैं ही हिंसादिकका अभाव होनेका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

रागद्वेषनिवृत्तेर्हिंसादिनिवर्तना कृता भवति। अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥

अर्थ—रागद्वेषका अभावतैं हिंसादिक पंच पापनिकी निवृत्ति कहिए अभाव परिपूर्ण होय है। पंचपापनिका अभाव सो ही चारित्र है। अभिलाषरूप नाहीं है प्रयोजनकी प्राप्ति जाकै ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? भावार्थ—जाकै अर्थ जो प्रयोजन तथा धनादिक फलके प्राप्त होनेकी अभिलाषा नाहीं ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? नाहीं करै। राजानिकी महाकष्टरूप सेवा तो जाकै भोगनिकी चाह तथा धनकी तथा अभिमानादिककी अभिलाषा होय सो करै। जाकै कुछ अपेक्षा चाहना नाहीं सो राजाका सेवन नाहीं करै जाकै रागद्वेषका अभाव भया सो पुरुष हिंसादिक पंच पापनिमें प्रवृत्ति नाहीं करै। अब चारित्रका लक्षण रागद्वेषका अभाव कह्या सो इसहीका विशेष कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च। पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रं ॥ ४९ ॥

अर्थ—हिंसा अनृत चौर्य मैथुनसेवन परिग्रह ये पाप आवनेके प्रनाला हैं इनतैं जो विरक्त होना सो सम्यग्ज्ञानीके चारित्र है। भावार्थ—निश्चय चारित्र तो बहिरंग समस्त प्रवृत्तितैं छूटे परमवीतरागताके प्रभावतैं परमसाम्यभावकूं प्राप्त होय अपना ज्ञायकभावरूप स्वभावमें चर्या सो स्वरूपाचरण नामा सम्यक्चारित्र है तौ हू पंच पापनितैं विरक्त होय अंतरंग बहिरंग प्रवृत्तिकी उज्वलतास्वरूप व्यवहार

चारित्र विना निश्चयस्वरूप चारित्रकूं प्राप्त नाहीं होय है। तातैं हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करना ही श्रेष्ठ है। पंच पापका त्याग करना ही चारित्र है। अब इस चारित्रकै दोय प्रकारका कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानां। अनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानां ॥ ५० ॥

अर्थ—सो चारित्र समस्त अंतरंग परिग्रहतैं विरक्त जे अनगार कहिए गृह मठादि नियत स्थानरहित वन खंडादिकमें परम दयालु हुआ निरालंब विचरै ऐसे ज्ञानी मुनीश्वरानिकै सकलचारित्र है अर जे स्त्रीपुत्रधनधान्यादिक परिग्रहसहित घरमें तिष्ठै ते जिनवचनके श्रद्धानी न्यायमार्गकूं नाहीं उलंघन करिकैं पापतैं भयभीत ऐसे ज्ञानी गृहस्थीनिकै विकलचारित्र है। भावार्थ—गृहकुटुंबादिकके त्यागी अपने शरीरमें निर्ममत्व साधूनिकै सकलचारित्र होय है। गृहकुटुंबधनादिकसहित गृहस्थीनिके विकलचारित्र होय है। अब गृहस्थीनिकै विकलचारित्र कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणाशिक्षाव्रतात्मकं चरणं। पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासंख्यमाख्यातं ॥ ५१ ॥

अर्थ—गृहस्थनिकै चारित्र है सो अणुव्रत गुणव्रत शिक्षाव्रतस्वरूप तीनप्रकारकरि तिष्ठै है। सो यो तीन प्रकार चरित्र है सो यथासंख्य पांच भेदरूप तीनभेदरूप च्यार भेदरूप परमागममें कह्या है। भावार्थ—जो गृहवास छोडनेकूं समर्थ नाहीं ऐसा सम्यग्दृष्टि गृहमें तिष्ठता ही पंच प्रकार अणुव्रत तीन प्रकार गुणव्रत च्यार प्रकार शिक्षाव्रत धारण करि चारित्रकूंपालै है। अब पंच प्रकार अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्छाभ्यः। स्थूलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥

अर्थ—प्राणनिका जो अतिपात कहिये वियोग करणा सो प्राणातिपात कहिये हिंसा अर वितथ असत्य ऐसा व्यवहार कहिये वचन कहना सो वितथव्याहार कहिये असत्य वचन अर स्तेय कहिये चोरी और काम कहिये मैथुन अर मूर्छा कहिये परिग्रह ये पांच पाप हैं। इनमें स्थूलपापनितैं विरक्त होना

सो अणुव्रत है। भावार्थ—मारनेका संकल्प करकैं जो त्रसकी हिंसाका त्याग सो स्थूलहिंसाका त्याग है। बहुरि जिस वचन कर अन्य प्राणीका घात होजाय तथा धर्म विगड जाय अन्यका अपवाद होजाय कलह संक्लेश भयादिक प्रगट होजाय ऐसा वचनका क्रोध अभिमान लोभके वश होय कहनेका त्याग कर सो स्थूल असत्यका त्याग है। अर बिना दिया अन्यके धनका लोभके वशतैं छलकरि ग्रहण करनेका त्याग सो स्थूल चोरीका त्याग है। बहुरि अपनी विवाही स्त्री विना समस्त अन्यस्त्रीनिमैं कामका अभिलाषका त्याग सो स्थूल कामत्याग है। बहुरि दशप्रकार परिग्रह परिमाण करि अधिक परिग्रहका त्याग सो स्थूल परिग्रहका त्याग है। ऐसैं पाप आवनेके प्रनाले ये पांच हिंसादिक तिनका त्याग सो ही पंच अणुव्रत है। अब अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहैं है—

संकल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान्। न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥ ५३ ॥

अर्थ—जो गृहस्थ मनवचनकायके कृतकारित अनुमोदनारूप संकलपतैं चर प्राणी द्वीन्द्रियादिक त्रसप्राणीनका घात नाहीं करै ताही निपुण जे गणधरदेव हैं ते स्थूलहिंसातैं विरक्त कहे हैं। इहां ऐसा जानना जो गृहस्थ सम्यग्दर्शन संयुक्त दयावान हिंसातैं भयभीत होय त्यागके सम्मुख हुआ तो गृहस्थके एकेन्द्रिय जे पृथिवीकायादिक तिनकी हिंसाका त्याग तो वन सकै नाहीं गृहका त्यागी योगीश्वरनिकै ही त्रसस्थावर दोऊनका हिंसाका त्याग वने अर प्रत्याख्यानावरणादिक कषायका उदयतैं गृहतैं ममता छूटी नाहीं तिस गृहस्थके त्रसजीवनका संकलपीहिंसाके त्यागतैं भगवान अहिंसा अणुव्रत कह्या है। संकलपीहिंसाका त्याग ऐसे जानना—दयावान गृहस्थ अपने परिणामनिकर मारनेरूप संकलपतैं तो त्रस जीवका घात करै नाहीं करावै नाहीं घात करनेका मनवचनकायतैं प्रशंसा करै नाहीं ऐसा परिणाम रहै। अर जो कोऊ दुष्ट वैर ईर्षादिककरि आपकूं मारया चाहै तथा आजीविका धनादिक हरया चाहै तिसका भी घात करनेकूं नाहीं चाहै तथा कोऊ आपकूं बहुत धन देकर मरावै तो कीडीमात्रकूं मार-

नेका संकल्पकरि कदाचित् नाहीं मारै । तथा एक जीव मारनेतैं अपना रोग आपदा दूर होय तो जीव-
नके लोभतैं त्रसजीवकूं नाहीं मारन करै। हिंसातैं अत्यन्त भयभीत है तो हू गृहस्थके आरंभमैं त्रस
जीवनिका घात हुआ बिना रहै नाहीं याहीतैं गृहस्थके मारनेका संकल्पकरि त्रसकी हिंसाका त्याग है
अर आरंभी हिंसाका त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं है केवल आरंभमैं यत्नाचारसहित दयाधर्मकूं नाहीं
भूलता प्रवर्तै है क्योंकि गृहस्थके आरंभ बिना निर्वाह नाहीं । केते आरंभ नित्य होय है, चूल्हा बा-
लना चाकी पीसना ओंखलीमें कूटना बुहारी देना जलका आरंभ करना उपार्जन करना ये छह पापके
कर्म तो नित्य ही हैं बहुरि केतेक और हू नित्य भी कदाचित् अन्य कारणतैं हू आरंभ बहुत हैं अपने पुत्र
पुत्रीका विवाह करना मकान बनाना लीपना धोवना झाडना होय ही । रात्री गमनादि आरंभ करना
धातुका पाषाणका काष्ठका आरंभ करना शय्या बिछावना उठाना पात्र पसारना समेटना जातिकूं जि-
मावना दीपकादिक जोवना इत्यादिक पापहीके कार्य हैं । तथा गाडी रथ ऊपरि चढ़ि चालना हस्ती घोड़ा
ऊंट बलद इत्यादिक ऊपर चढ़ि चालना गाय भैंस इत्यादिक राखना तिनमैं त्रस जीवका घात होय ही
तथा जिनमंदिर करावना दानका देना पूजन करना इनमें हू आरंभ है तो कैसे त्रसहिंसाका त्याग होय?
ताका उत्तर करै हैं, जो आपका परिणाम तो जीव मारनेका है नाहीं अर जीव मारने वास्ते आरंभ करै
नाहीं इस कार्य करनेमैं जीव मर जाय तो भला है ऐसा राग हू नाहीं आप तो जीव विराधनातैं भयभीत
हुआ गृहचाराका कार्य करनेको आरंभ करै है । जीव मारनेके वास्ते नाहीं करै है । अपने परिणाममें ता
मेलता धरता उठता बैठता लेता देता जीवनिकी रक्षा करनेहीका संकल्प करै है, मारनेका संकल्प नाहीं
करै, तिसके पापबंध कैसैं होय ? जीव अपने आयुकर्मके आधीन उपजैं अर मरै है अपने हाथ नाहीं आप
तो जेता आरंभ करै तितना दयारूप हुआ यत्नाचारतैं करै यत्नाचारीकै भगवानका परमागममें हिंसा
होते हू बंध होना नाहीं कह्या है । समस्त लोक जीवनिकरि भर्‌या है जीवनिके मरने जीवनिके आधीन

अपना उपयोग बिना हिंसा अहिंसा नाहीं है। अपने परिणामके आधीन हिंसा अर अहिंसा है। जातैं सिद्धांतमें ऐसा कह्या है जो मुनिराज चार हस्त परमाण आगेको सोधता गमन करै है अर जो पगको उठाय धरबो होय तहां जीव उछलकरि आय पड़े अर जीव मर जाय तो मुनीश्वरनिकै किंचित हू बंध नाहीं होय है क्योंकि साधुके परिणामनिमें तो इर्यासमिति पालना चित विषैं तिष्ठै था तातैं बंध नाहीं। आहार प्रासुक जानि देखि सोधि करिये है अर सूक्ष्म जीव आय पड़े तो कौन जानैं? भगवान् केवलज्ञानी ही जानै। आप प्रमादी होय यत्नतैं देखे सोधे बिना भोजन करै तो दोषतैं लिपै। याहीतैं श्रावक प्रमाद छांडि बड़ी सावधानीतैं प्रवर्तन करता दोषकूं कैसैं प्राप्त होय? चूल्हाकूं दिनमें सोधि बुहारि ईंधन झड़काय यत्नतैं अग्नि जलावै है ऐसे ही चाकी ओखली भी सोधि झाड़ि अन्नकूं सोधि पीसण षोटणका आरंभ करै है बीधा अन्नकूं नाहीं ग्रहण करै है। अर बुहारि हू दिवसमें देखि कोमल कूंची मूंज इत्यादिकतैं जीव विराधनाका भयसहित हुआ देवैं हैं कजोडा बुहारैं हैं तथा जलकूं दोहरा दृढ वस्त्रतैं छानि जतन पूर्वक वरतै है तथा द्रव्यका उपार्जन हू अपना कुलके योग्य सामर्थ्य सहायादिकके योग्य जैसैं यश अर धर्म नीति नाहीं विगड़ै तैसैं यत्नतै असि मसि कृषी विद्या वाणिज्य शिल्प इन षट् कर्मनिकरि करै हैं क्योंकि श्रावकका व्रत तो चारों वर्णोंमें होय है आपके उज्वल हिंसा रहित कर्मसूं आजीवका होती ही तो निंद्य कर्म करि संक्लेश कर्मकारि लोभादिकके वश होय पापरूप आजीवका करै नाहीं अर आपकूं अन्य आजीवकाका उपाय नाहीं दीखै तो घटायकरि पापतैं भयभीत हुआ न्यायतैं करै। क्षत्रिकुलका शस्त्र धारक होय तो दीन अनाथकी रक्षा करता दीन दुःखित निर्बलको घात नाहीं करै शस्त्र रहितकूं नाहीं मारै गिर पड्या ऊपरि घात नाहीं करै पीठ देय भाग जाय दीनता भाषै तिन ऊपरि घात नाहीं करै है अर धनके लूटनेको घात नाहीं करै अभिमानतैं वैरतैं घात नाहीं करै अपने ऊपर घात करता आवै ताकूं तथा दीनानिकूं मारनेकूं आवै तिनकूं शस्त्रतैं रोकै जो शस्त्रतै जीविका

करता होय सो केवल स्वामिधर्मतैं तथा अनाथनिका स्वामीपना आपके होय सो शस्त्रधारण करै जाकै शस्त्रसंबंधी सेवा नाहीं अर प्रजाका स्वामीपना नाहीं ताकै वृथा शस्त्र धारण नाहीं होय है। अर स्याही तैं आमद खरच लिखनेकी जीविका होय तो मायाचारादिक दोष रहित स्वामीके कार्यकूं यथावत् सही लिखता जीविका करै। और माली जाट इत्यादिक कुलमें अन्य जीविका नाहीं होय तो कृषि जो खेती करि आजीविका करता हू दयाधर्मको छांडै नाहीं जो खेत पहली बहता आया होय तिसकूं परिमाण करि अधिकका त्यागी हुआ खेती करै है अधिक तृष्णा नाहीं करै यामें हू बहुत घटाय आपाकूं निंदता खेती करै है। बहुत जल सींचै है तो हू आप अनछाण्या जल एक चल्लू मात्र हू नाहीं पीवै है कोऊ आय बहुत धन भी देवै अर कहै तुम यहां धान्यके बहुत वृक्ष छेदो हो हमतैं एक मोहर लेय हमारे एक वृक्षकी एक डाहली काट आवो तो लोभके वशि होय कदाचित् नाहीं छेदै है तथा खेतीमें बहुत जीव मरै हैं तो भी इसके जीव मारनेका अभिप्राय नाहीं केवल आजीविकाका अभिप्राय है कोऊ सौ मोहर देवै तो लोभके वशि होय अपना संकल्पतैं एक कीडी हू मारै नाहीं ऐसा व्रतमैं दृढता है। अर उत्तम कुलवाला खेती करै नाहीं। बहुरि विद्याकरि आजीविका करै ऐसा ब्राह्मणादिक श्रावक हैं सो मिथ्यात्वभावका पुष्ट करनेवाला तथा हिंसाका प्रधानता लिये रागद्वेषका बधावनेवाला शास्त्रनिकूं त्याग करि उज्वलविद्या पढावै सो ही दया है। बहुरि श्रावक है सो बहुत हिंसाके खोटे वाणिज्य त्याग न्यायपूर्वक तीव्र लोभकूं त्याग आपकी निंदा करता संतोष सहित घटाय प्रमाणीक सांचसूं ब्यौहार करै दयाधर्मकूं नाहीं भूलता समस्त जीवनिकूं आप समान जानता वाणिज्य करै है। बहुरि शिल्पकर्म करनेवाला शूद्र हू श्रावकका व्रत ग्रहण करै है सो बहुत निंदकर्मनिकूं तो टालै ही अर टालवेकूं समर्थ नाहीं तीमैं बहुत हिंसा टालि दयारूप प्रवर्तै है संकल्पतैं याकूं मारना या जाणि घात नाहीं करै। अर मंदिर बनवाना पूजन करना दान देना इन कार्यनिमैं तो निरंतर बडा यत्नाचारतैं केवल दयाधर्मके निमित्त

ही प्रवर्तन करे है। हिंसाका भाव काहेतैं होय जातैं पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामा ग्रंथमें श्रीअमृतचन्द्रस्वामी ऐसैं कह्या है—

यत्खलु कषाययोगात्प्राणानां द्रव्यभावरूपाणां। व्यपरोपणस्य करणं सुनिश्चिता भवति सा हिंसा ॥ ४३ ॥

अर्थ—जे कषायके संयोगतैं द्रव्यप्राण जे इंद्रिय कायादिक अर भावप्राण जे ज्ञानदर्शनादिक तिनके वियोग् करवो सो निश्चितहिंसा होय है। भावार्थ—जो कषायके वशि होय परके द्रव्यप्राण भावप्राणनिको वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। कषायरहितकै प्राणीका मरणमात्रतैं हिंसा नाहीं होय है आप परजीवकै मारनेकी कषायसहित होय ताकैं हिंसा होय है।

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति। तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः ॥ ४४ ॥

अर्थ—जो रागद्वेषादिको आत्माके नाहीं प्रगट होवो सो अहिंसा है अर आत्माके परिणाममें रागद्वेषादिकनिकी उत्पत्ति होय सो ही हिंसा है। जिनेन्द्रभगवानके आगमका संक्षेप तो इस प्रकार है—बाह्यप्राणीनिका हिंसा होहू वा मत होहू जो परिणाम रागद्वेषादि कषायसहित होय सो ही अपना ज्ञानदर्शनादिरूप भावप्राणनिका घात है सो ही आत्महिंसा है जाकै आत्महिंसा है ताकै परकी हिंसा भी होय ही है ॥

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेशमन्तरेणापि। न हि भवति जातु हिंसा प्राणव्यपरोपणादेव ॥ ४५ ॥

अर्थ—योग्य आचरण करता सत्पुरुषकै रागद्वेषादि कषाय विना प्राणनिका घाततैं ही हिंसा कदाचित् नाहीं होय है। भावार्थ—यत्नतैं दयासहित प्रवर्तन करता पुरुषकै जीवघात होतै हू हिंसाकृत बंध नाहीं होय है।

व्युत्थानावस्थायां रागादीनां वशप्रवृत्तायां। म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा ॥ ४६ ॥

अर्थ—रागद्वेषादिकनिके आधीन प्रवृत्ते जे गमन आगमन उठना बैठना धरना मेलना ऐसे आरंभ

तिनमें जीवनिका मरण होहू वा मत होहू हिंसा तो निश्चयतैं आगैं दौडती है। यत्नाचाररहित होय आरंभ करै है ताकै जीव अपने आयुके आधीन मरण करौ वा मत करौ आप तो अपने परिणामतैं निर्दय भया ताकै हिंसाकृत बंध आगैं आगैं दौडै है ॥

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानं। पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राण्यन्तराणां तु ॥ ४७ ॥

अर्थ—जातैं आत्मा कषायसहित हुवो संतो प्रथम ही आप करिकै आपनै हनै है पाछैं अन्य प्राणीनिकी हिंसा उत्पन्न होय वा नाहीं होय। जिस काल कषायसहित आत्मा भया तिस ही कालमें अपना ज्ञानानंद वीतरागस्वरूपका घात तो अवश्य करि हो चुका।

हिंसायामविरमणं हिंसापरिणमनमपि भवति हिंसा। तस्मात्प्रमत्तयोगे प्राणव्यपरोपणं नित्यं ॥ ४८ ॥

अर्थ—जातैं हिंसाके विषै विरक्त होय त्याग नाहीं करना सो भी हिंसा है अर हिंसामें प्रवर्तन है सो हू हिंसा है तातैं प्रमत्तयोग होतैं प्राणनिका घात नित्य है। भावार्थ—अपना अर परका घात होनेकी सावधानीरहित प्रवर्तते जे मनवचनकायके योग सो प्रमत्तयोग है जहां प्रमत्तयोग है तहां सासती हिंसा है जो कोऊ हिंसा तो नाहीं करै परंतु हिंसातैं विरक्त होय हिंसाका त्याग नाहीं करै सो सूते बिलाव समान सदाकाल हिंसक ही है अर हिंसामें प्रवर्तन करै है सो हू हिंसक ही है। भावनितैं तो दोऊ हिंसक हैं बाह्यनिमित्त हिंसाका मिलो वा मति मिलो ॥

सूक्ष्मापि न खलु हिंसा परवस्तुनिबन्धना भवति पुंसः।
हिंसायतननिवृत्तिः परिणामविशुद्धये तदपि कार्या ॥ ४९ ॥

अर्थ—अन्यवस्तु है कारण जाकूं ऐसी तो सूक्ष्म हू हिंसा नाहीं है जातैं पुरुषकै जो हिंसा होय है सो तो अपना परिणाममें हिंसा करनेका भाव होतैं हिंसा होय है। इहां कोऊ पूछै जो परद्रव्यके निमित्ततैं सूक्ष्महिंसा नाहीं होय है तो बाह्यवस्तुका त्याग व्रत संयम किसवास्तै करिये हैं ? ताका उत्तर करै हैं—

यद्यपि हिंसकपरिणाम होय तादि ही जीवके हिंसा होय परंतु हिंसा होनेके स्थाननिमें प्रवर्तैगा ताकै हिंसाके परिणाम कैसैं नाहीं होयगा? तातैं परिणामकी विशुद्धताके अर्थि जहां हिंसा होय ऐसे खान पान ग्रहण आसन वचन चिंतवनादिक त्याग करने योग्य है।

निश्चयमबुद्ध्यमानो यो निश्चयतस्तमेव संश्रयते। नाशयति करणचरणं स बहिःकरणालसो बालः ॥५०॥

अर्थ—जो जीव निश्चयनयका विषय रागादि कषायरहित शुद्धात्मा रूपकूं तो जाण्या नाहीं अर मेरा भाव कषायरहित है मेरे समस्त प्रवृत्तिमें हिंसा नाहीं ऐसा वृथा निश्चय करता निरर्गल यथेच्छ प्रवर्तै है सो अज्ञानी बाह्य आचरणमें प्रवृत्ति छांडि प्रमादी हुआ करणचरणरूप चारित्रका नाश करै है। भावार्थ—जाका परिणाम रागद्वेषरहित भया ते अयोग्य भोजन पान धन परिग्रह आरम्भादिकमें कैसैं प्रवर्तन करैगा जो हिंसासूं विरक्त है सो हिंसा होनेके कारण दूरहीतैं छांडैगा। अब और हू पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहे हैं, कोऊ तो हिंसा नाहीं करकै अर हिंसाके फलका भोगनेवाला होय है जैसैं आयुध बनावनेवाले लुहार सिकलीगर हिंसा नाहीं करिकैं हू तंदुलमच्छकी ज्यों हिंसाके फलकूं प्राप्त होय हैं। अर कोऊ दयावान होय यत्नाचारतैं जिनमंदिर बनावनेवाला बाह्यहिंसा होते हू हिंसाके फलकूं नाहीं प्राप्त होय है। कोऊ पुरुष हिंसा तो अल्प करी परंतु तीव्र रागद्वेषरूप भावनितैं करने करि उदयकालमें महाफलकूं प्राप्त होय है। बहुरि केई अनेक पुरुष मिलि करकें एक हिंसा करी परंतु उस हिंसा करनेमें कोऊ तो तीव्र रागवाला सो तीव्रफलकूं प्राप्त होय है मंदकषायवाला मंदफलकूं प्राप्त होय है मध्यमकषायवाला मध्यमफलकूं प्राप्त होय है। तथा कोऊ पुरुषके हिंसा तो पाछैं काल पाय बनेगी परंतु हिंसाके परिणाम करनेतैं हिंसाका फल पहले ही उदय होय रस दे है। अर कोऊके हिंसा करतां करतां फल है जैसैं कोऊ पुरुष अन्य कोऊकूं मारण करै तिस कालमें ही उसका प्रहारतैं आपहू मार्‍या जाय है। कोऊकै पूर्वै करी पाछैं फलै है। कोऊ हिंसाका आरंभ तो किया अर पाछैं बन सकी नाहीं सो हू फलै है जैसैं कोऊका घात

करनेका उपाय किया सो तो बणि सक्या नाहीं अर पाछैं वे जानि आपका घात किया ही। बहुरि हिंसा तो एक करै अर हिंसाका फल अनेक पुरुष भोगै जैसैं चोर तथा हत्याराकूं मारै वा सूली चढावै तो एक चांडाल अर देखनेवाले अनेक तमासगीर पापबंधकरि फल भोगवै हैं। अर संग्राममें हिंसा करनेवाला तो बहुत योद्धा होय हैं अर फल भोगनेवाला एक राजा होय है तातैं करै एक अर भोगै अनेक हैं अर करै अनेक भोगै एक है। बहुरि कोऊके तो हिंसा करी हुई हिंसाहीका फल देहै अर अन्यके सो ही हिंसा अहिंसाका फल देहै जैसैं कोऊ पुरुष किसी जीवकी रक्षा करनेकूं यत्न करै छा यत्न करते हू उसका मरण होय गया तो वाकै रक्षाका अभिप्रायतैं अहिंसाहीका फल होयगा अर कोऊका परिणाम तो किसीके मारनेका था आपदाकूं प्राप्त करनेका था अर उसका पुण्यका उदयतैं आपदा हू नाहीं भई अर मरण हू नाहीं भया अनेक लाभ भया तो मारनेके अर्थीकों तो पापहीका बंध होय है। अर कोऊका परिणाम किसीकूं दुःख देनेका नाहीं था सुख देनेका वा रक्षा करनेका था अर उसके दुःख होगया वा मरण होगया तो सुख देनेका परिणामकरि वाकै पुण्यबंध ही होयगा। इसप्रकार अनेक भंगनिकरि गहन यो जिनेन्द्रका मार्ग है यामें एकांती मिथ्यादृष्टिनिका पार होना अतिकष्टतैं हू नाहीं होय। अनेकांतके प्रभावतैं नयसमूहके जाननेवाला गुरु ही शरण है। यो जिनेंद्रभगवानको नयचक्र तीक्ष्णधाराकूं धारण करता एकांती दुष्टआग्रहसहित मिथ्यादृष्टिनिका मिथ्यायुक्तिनिकी हजारां खण्ड करनेवाला है। यातैं भो ज्ञानीजन हो! भगवान वीतरागकी आज्ञातैं प्रथम ही हिंसा होने योग्य जे जीवनिके स्थान इंद्रियकायादिक जीवनिके कुलकोड तिनकूं जानो। बहुरि हिंसा करनेवाला भाव ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका स्वरूप कहा है ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका फलकूं जानो। ऐसैं हिंस्य हिंसक हिंसा हिंसाकाफल इन चारकूं यत्नतैं जानि करिके पाछैं देशकाल सहाय अपना परिणाम अर निर्वाह होना जानि अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय गृहस्थपणामें हू अपने पदके योग्य हिंसाका त्याग ही करो तथा त्रसजी-

वनिकी संकल्पी हिंसाका तो त्याग करो अर समस्त आरम्भमें दयावान हुआ यत्नाचारतैं प्रवर्तन करो अर पंचस्थावरनिका आरम्भमें घटाय करि दयावान होय प्रवर्तो। ऐसैं अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कह्या। अब अहिंसाणुव्रतका पंच अतीचार जनावनेकूं सूत्र कहै हैं—

छेदनबंधनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः। आहारवारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पंच ॥ ५४ ॥

अर्थ—ये स्थूलहिंसाका त्याग नामक व्रतके पंच अतीचार हैं ते गृहस्थके त्यागने योग्य हैं। छेदन कहिये अन्य मनुष्यतिर्यंचनिके कर्ण नासिका ओष्ठादिक अंगनिका छेदना सो छेदन नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर मनुष्यनिकूं बंधनादिककरि बांधना तथा बंदीगृहमें रोकना तथा तिर्यंचनिकूं दृढबंधनकरि बांधना पक्षीनिकूं पींजरेमें रोकना इत्यादिक बंधन नाम अतीचार है ॥ २ ॥ अर मनुष्यतिर्यंचनिकूं लात घमूका लाठी चाबुक आदिका घातकरि ताडना करना सो पीडन नाम अतीचार है ॥३॥ बहुरि मनुष्य-तिर्यंच गाडा गाडी इत्यादिक ऊपरि बहुत बोझका लादना सो अतिभारारोपण नाम अतीचार है॥ ४ ॥ अर मनुष्यतिर्यंचनिको खावने पीवनेको रोकना सो अन्नपानका निराकरण नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ये पांच अतीचार स्थूलहिंसाका त्यागीकूं त्यागने योग्य है। अब सत्य नाम अणुव्रतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे। यत्तद्वदन्ति सन्तःस्थूलमृषावादवैरमणं ॥ ५५ ॥

अर्थ—जो स्थूल असत्य नाहीं बोलै अर परकूं असत्य नाहीं बुलावै अर जिस वचनतैं आपकै अन्यकै आपदा आवै ऐसा सत्य हू नाहीं कहै ताहि सत्पुरुष स्थूलझूंठका त्याग कहै हैं। भावार्थ—सत्य अणुव्रतका धारक होय सो क्रोधमानमायालोभके वशीभूत होय ऐसा वचन नाहीं कहै जाकरि अन्यका घात होजाय अन्यका अपवाद होजाय अन्यकै कलंक चढि जाय सो वचन निंद्य है। जिस वचनतैं मिथ्याश्रद्धान होजाय तथा धर्मसूं छूटि जाय व्रत संयम त्यागतैं शिथिल होजाय श्रद्धान विगडि जाय

सो वचन नाहीं कहै तथा कलह विसंवाद पैदा हो जाय विषयानुराग बधि जाय महाआरंभमें प्रवृत्ति होजाय अन्यके आर्त्तध्यान प्रगट होजाय कामवेदना प्रगट होजाय परके लाभमें अंतराय होजाय परकी जीविका विगाडि जाय अपना परका अपयश होजाय ऐसा निंद्यवचन योग्य नाहीं तथा ऐसा सत्य वचन हू नाहीं कहै जाकरि आपको अन्यको विगाड होजाय आपदा आजाय अनर्थ पैदा होजाय दुःख पैदा होजाय मर्म छेद्या जाय राजका दंड होजाय धनकी हानि होजाय ऐसा सत्यवचन हू झूठ ही है। बहुरि गालीके वचन भंडवचन नीचकुलवालेनिके बोलनेके वचन तथा मर्मछेदके वचन परके अपमानके वचन परके तिरस्कारके वचन अहंकारके वचनकूं कदाचित नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल तथा आपका परका हितरूप अर बहुत प्रलाप रहित प्रमाणीक संतोषका उपजानेवाला धर्मका उद्योत करनेवाला वचन कहै जातैं न्यायरूप आजीविका सधै अनीतिरहित होय ऐसे वचनको कहता गृहस्थके स्थूल असत्यका त्यागरूप द्वीतिय अणुव्रत होय है। अब सत्याणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

परिवादरहोभ्याख्या पैशून्यं कूटलेखकरणं च। न्यासापहारितापि च व्यतिक्रमाः पंच सत्यस्य ॥ ५६ ॥

अर्थ—इहां परिवाद तो मिथ्याउपदेश है जो स्वर्गमोक्षका कारण जो चारित्र तिस चारित्रकूं अन्यथा उपदेश करना सो परिवाद नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कोऊ आपकूं छानी बात कही होय सो किसीकूं कह देना विख्यात करि देना तथा कोऊ स्त्रीपुरुषादिकनिका एकान्तमें गुह्य चेष्टा देख करिकैं तथा गुह्यवचन श्रवण करि किसीकूं प्रगट करना सो रहोभ्याख्यान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यका छिद्र जानि बिगाडि करानेके अर्थि कोऊकूं छिपकरि कह देना चुगली करना सो पैशून्यनाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यके विना कह्या तथा विना आचरण किया झूठा लिख देना जो इसने ऐसा कह्या है ऐसा आचरण किया है सो कूटलेखकरण नामा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि कोऊ आपको धन सौंपि गया तथा वस्त्र आभरणादिक मेलि गया फिर संख्या भूलि अल्प मांगने आया ताकूं कहै तुम्हारा है

सो ही लेजावो सो न्यासापहारिता अतीचार है ॥५॥ ऐसैं स्थूल असत्यका त्याग नाम अणुव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं । इहां ऐसा विशेष जानना जो अनादितैं अनंकाल तो यो जीव निगोदमें ही वास किया फिर कदाचित् निगोदिमैंतैं निकसि करिकैं फिर पंच स्थावरनिमें असंख्यातकाल परिभ्रमणकरि बहुरि निगोदमें अनंतकाल बारंबार अनंतानंत परिवर्तन एकेन्द्रियमें किए तहां तो वचन पाया नाहीं जिह्वा इंद्रिय ही नाहीं भई बहुरि द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिंद्रिय असैनी सैनी पंचेन्द्रियमें उपज्या तहां जिह्वा पाई तो अक्षरात्मक कहने सुननेरूप वचन नाहीं पाया । कदाचित् अनंतानंतकालमें मनुष्य जन्ममें वचन बोलनेंकी शक्ति पाई तो नीच कुलनिमें अयोग्य वचन हिंसाके वचन असत्य वचन परकै अर आपकै संताप करनेवाला वचन बोलि महापापबंध करि दुर्गतिका पात्र भया अपने वचन करि अपना घातक भया । कदाचित् कोऊ पूर्वपुण्यके उदयकरि मनुष्यजन्म पाया है तो यामें वचन बोलनेंमें बडा यत्न करो । भोजनपान करना कामसेवन करना नेत्रानितैं देखना काननितैं श्रवण करना तो शूकर कूकर गधा कागलाकै भी होय है क्योंकि आंख नाक कान जीभ कामेन्द्रिय ये तो समस्त ढोरनिके भी होय हैं । इस मनुष्यजन्ममें तो एक वचन ही सार है करामाति है जो इस वचनकूं बिगाड्या सो अपना समस्त जन्म बिगाड्या । वचनतैं ही जानिये है यो पंडित है यो मूर्ख है यो धर्मात्मा है यो पापी है यो राजा है वा राजाका मंत्री है यो रंक है यो कुलीन है यो अकुलीन है यो हीणाचारी है यो उत्तमाचारी है यो संतोषी है यो तीव्रलोभी है यो धर्मवासनासहित है यो धर्मवासनारहित है यो मिथ्यादृष्टि है यो सम्यग्दृष्टि है यो संस्कृती है यो संस्कृत रहित है यो उत्तम संगतिको राजसभामें रह्यो हुवो है यो ग्राम्यजन गंवारनिमें रह्यो है यो लौकिकचतुर है यो लौकिकमूढ है यो हस्तकलासहित है यो कलाविज्ञानरहित है यो उद्यमी पुरुषार्थी है यो आलसी प्रमादी है यो शूर है यो कायर है यो दातार है यो कृपण है यो दयावान है यो निर्दय है यो दीन याचक है यो महंत है यो क्रोधी है यो क्षमावान है

यो मदोद्धत है यो मदरहित है यो विनयवान है यो कपटी है यो निष्कपट है यो सरल है यो वक्र है इत्यादिक आत्माके गुणदोषादिक समस्त वचनद्वारे ही प्रगट होय है, यातैं मनुष्य जन्म पावना सफल किया चाहो तो एक वचनहीकी उज्वलता करो। इस वचनहीतैं सत्यार्थ उपदेशकरि भगवान अरहंत त्रैलोक्यकरि बंदनीक होय जगतको मोक्षमार्गमें प्रवर्तन कराया है वचनहीतैं अनेक जीवनिका मिथ्यात्वरागादिक मल दूरकरि अजर अमर अविनाशी पद दिया है। पंचपरमेष्ठीमें भी वचनकृत उपकारके प्रभावतैं प्रथम अरिहंतनिकूं ही नमस्कार किया है। ज्ञानी वीतरागीके वचनकरि स्वर्ग नरकादिक तीन लोक प्रत्यक्षकी ज्यौं दीखैं है। वचनहीकी सत्यताके प्रभावकरि पंचमकालमें धर्म प्रवर्तै है। अर उज्वल वचन विनयका वचन प्रियवचनरूप पुद्गलनि करि समस्त लोग भर्या है मोल नाहीं लागे तथा किसीकूं जीकारो देनेमें अपना अंगमें दुःख नाहीं उपजै है जीभ तालू कंठ नाहीं भिदै है यातैं समस्त प्राणीनिकै सुख उपजावै ऐसा प्रियवचन ही कहो अर असत्यवचनके प्रभावकरि ही मिथ्यादेवनिकी आराधना तथा यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक वेदादिक ग्रंथनिमें मांस भक्षणादिक कुकर्मनिमें प्रवृत्ति हू असत्य वचनतैं ही भई है तथा खोटे शास्त्रनिकी रचना नानाप्रकारके मिथ्यात्वरूप मत नरक तिर्यंचनिमें परिभ्रमण करावनेवाला समस्त दुष्ट आचार इस असत्य वचनके प्रभावकरि ही प्रवृत्तैं है अर अयोग्य-वचनतैं ही घर घरमें कलह विसंवाद परस्पर वैर परस्पर ताड़न मारन प्राणापहार क्रोधभय संतापभय अपमानादिक देखिये है अर अप्रतीत अविश्वास खेदका कारण एक असत्य वचनहीकूं जानो। अर असत्यका प्रभावकरि परलोकमें नरकातिर्यंचगतिकूं प्राप्त होय अरु कुमानुषनिमें तथा नीच चांडाल चमार भील कषायी इत्यादिक कुलमें हू असत्य ही उपजावै तथा अनेक भवनिमें दरिद्री रोगी गूंगो बहरो हीण दीन असत्यका प्रभावतैं होय है तातैं समस्त दुःखका मूल एक असत्यवचन है सो शीघ्र ही त्याग करि एक सत्यवचन प्रियवचनहीमें प्रवृत्ति करो। तातैं तुम्हारा वचन समस्तके आदरने योग्य

अनेक देव मनुष्यनिके ऊपरि आज्ञा करने योग्य होय तथा समस्तश्रुतका परिगामी श्रुतकेवलीपना गणधरपना सत्यहीका प्रभावतैं प्राप्त होय है यातैं असत्यका त्याग ही जीवका कल्याण है। बहुरि पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहे हैं—

हेतौ प्रमत्तयोगे निर्दिष्टे सकलवितथवचनानां। हेयानुष्ठानादेरनुवदनं भवति नासत्यं ॥ १०० ॥
भोगोपभोगसाधनमात्रं सावद्यमक्षमा मोक्तुं। ये तेऽपि शेषमनृतं समस्तमपि नित्यमेव मुञ्चन्तु ॥ १०१॥

अर्थ—समस्त असत्यवचनको कारण प्रमत्तयोग भगवान कह्या है कषायके आधीन होय जो वचन कहै है सो असत्य है यातैं कषायविना देना मेलना धरना त्यागना ग्रहण करना इत्यादिकका कहना सो असत्य नाहीं है अर जे गृहस्थ अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचन त्यागनेकूं समर्थ नाहीं हैं ते गृहस्थ अन्य निरर्थक पापबंध करनेवाला समस्त असत्यवचनकूं तो त्याग अवश्य ही करो। भावार्थ—अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचनका त्याग नाहीं होय सकै तो ताका त्याग करनेमें बडा उद्यम राखणा अर बृथा बहु आरम्भ बहुपरिग्रहका कारण दुर्ध्यानका कारण अन्यकै आपकै संतापका कारण ऐसा सदोष निंद्यवचनका तो त्याग अवश्य करना ही श्रेष्ठ है। ऐसैं स्थूलअसत्यका त्याग नामा दूजा अणुव्रतकूं कह्या है। अब स्थूलचोरीका त्याग नामा तीजा अणुव्रतकूं कहे हैं—

निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं। न हरति यन्न च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणं ॥ ५७ ॥

अर्थ—जो किसी पुरुषका जमीमें गड्या हुआ धन होय वा कोऊ स्थानमें महल मन्दिर गृहादिकमें स्थापन किया हुआ धन होय अथवा आपकूं अमानत सौंपि गया होय वा अपने मकानमें तथा परके स्थानमें आपकूं नाहीं जनाया धर गया होय अथवा ग्राममें नगरमें वनमें बागमें पटकि गया होय अथवा आपको सौंपि भूलि गया होय वा हिसाब लेखामें चूकि गया होय वा आपके स्थानमें भूलिकरि पटकि गया होय अथवा लेनेदेनेमें गिनतीमें विस्मरण हुआ पैसा रुपया महोर आभरण वस्त्रादिक

बहुत वा अल्प द्रव्य बिना दिया नाहीं ग्रहण करै अर परका द्रव्य उठाय किसीकूं देवे भी नाहीं सो स्थूल चोरीका त्यागरूप अणुव्रत है। अर कार्तिकेयस्वामी ऐसैं कह्या है—

जो बहुमुल्लं वत्थुं अप्पमुल्लेण णेय गिण्हेदि। वीसारियं पि ण गिण्हेदि लाहे थूवेहि तूमेदि ॥ ६३५ ॥

अर्थ—जाके स्थूलचोरीका त्याग होय सो बहुत मोलकी वस्तु अल्पमोलमें नाहीं ग्रहण करै जैसैं कोऊ पुरुष आपको वस्तुको चौकासि करि बेचै तो सवारुपयामें बिक जाय अर आपकूं आय सौंपी जो इसकी कीमत होय सो आप देवो तो तहां सवारुपयाका वस्तुकूं प्रगट जानता लोभके वाशि हो एक रुपयामें हू नाहीं लेवै। अन्यकी भूली हुई वस्तु ग्रहण नाहीं करै तथा ऐसा परिणाम नाहीं करै जो कोऊ निर्धन तथा अज्ञानीकी वस्तु हमारे थोडे मोलमें आजाय तो भला है अर अल्प लाभहीमें बहुत संतोष राखै। भावार्थ—बनजके व्यवहारमें तथा सेवामें लाभ थोरा होय तो संतोष ही करै अधिकमें लालसा नाहीं करै तिसकै स्थूलचोरीका त्याग जानना। अब अचौर्य नामा अणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

चौरप्रयोगचौरार्थादानविलोपसदृशसन्मिश्राः। हीनाधिकविनिमानं पंचास्तेये व्यतीपाताः ॥ ५८ ॥

अर्थ—अचौर्य नाम अणुव्रतके ये पंच अतीचार हैं आप तो चोरी नाहीं करै परंतु अन्यकूं प्रेरणा करै तथा चोरी करनेका प्रयोग (उपाय) बतावै सो चोरप्रयोग नामा अतीचार है ॥ १ ॥ अर चोरका ल्याया धनको ग्रहण करणा सो चौरार्थादान नामा दूसरा अतीचार है ॥ २ ॥ अर उचित न्यायतैं छांडि अन्यरीतितैं ग्रहण करना अथवा राजाकी आज्ञासूं जाका निषेध होय तिस कार्यका करना विलोप नामा अतीचार है ॥ ३ ॥ अर बहुत मोलकी वस्तुमैं अल्पमोलकी वस्तु मिलाय चला देना सो सदृशसन्मिश्र नामा अतीचार है जैसैं घृतमैं तेल मिलाय देणा शुद्धसुवर्णमैं कृत्रिमसुवर्ण मिलाय देना सो सदृशसन्मिश्र है ॥ ४ ॥ बहुरि देनेके बांट ताखडी घाटि परिमाण राखना लेनेकूं बधती राखना सो हीनाधिकमानो-

न्मान नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं स्थूल चोरीका त्याग नामा अणुव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इस चोरी समान जगतमें अपराध नाहीं है समस्त उच्चता कुलकर्म धर्मविनाश करनेवारी समस्त प्रतीति बडापनाका विध्वंस करनेवाली है अर चोरीका धन हू वेश्यासेवनमें परस्त्रीमें व्यसननिमें अभक्षमें खरच होय है वा अन्य किसीमें रही जाय है संतोष नाहीं आवै है क्लेशित होय रहे है अर प्रगट होय तो राजा तीव्र दंड देहै समस्त लोक मारे है हस्तनासिकाका छेदन सर्वस्वहरणादिक दंड यहां ही प्राप्त होय है परलोकमें नरकादिक कुयोनिनमें परिभ्रमण होय है। अब स्थूल ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

न च परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्। सा परदारनिवृत्तिः स्वदारसंतोषनामापि ॥ ५९ ॥

अर्थ—जो पापका भयतैं परकी स्त्रीप्रति आप नाहीं प्राप्त होय अर परकी स्त्री प्रति अन्य पुरुषनिनैं गमन नाहीं करावै सो स्वदारसंतोषनामधारक परस्त्रीका त्याग नामा चौथा अणुव्रत है। भावार्थ—जो अपने जाति कुलकी साखतैं विवाही स्त्री तिसविषै संतोष धारण करके तिसतैं अन्य समस्त स्त्रीमात्रमें रागभावका त्यागी होय परस्त्री तथा वेश्या दासी तथा कुलटा तथा कन्या इत्यादिक स्त्रीनिमें विरागताको प्राप्त होय स्त्रीनिसूं रागभावकरि संगम वचनालाप अवलोकन स्पर्शनका त्याग करै ताकूं परस्त्रीका त्यागी कहिये तथा स्वदारसंतोषी हू कहिये है। अब स्वदारसंतोषव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषाः। इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पंच व्यतीचाराः ॥ ६० ॥

अर्थ—ये अस्मर जो स्थूल ब्रह्मचर्य ताके पंच अतीचार हैं ते त्यागने योग्य हैं। अपने पुत्र पुत्री विना अन्यके पुत्रपुत्रीनिका विवाहकूं आ संमतात् कहिये आप रागी होय करवो सो अन्य विवाहकरण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कामके अंग छांडि अन्य अंगनितैं क्रीडा करिवो सो अनंगक्रीडा नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि भंडिमारूप पुरुषकूं स्त्रीका रूप स्वांगादिक बनाय मनवचनकायकी प्रवृत्ति

सो विटत्व नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि कामकी अतितृष्णा कामकी तीव्रता सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि इत्वरिका जे व्यभिचारिणी स्त्री तिनके घर जावना व्यभिचारिणीकूं आपके घर बुलावना देन लेन रखना परस्पर वार्ता करना रूप शृंगार देखना सो इत्वरिकागमन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ये स्थूल ब्रह्मचर्यव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। जो देवनिकरि पूज्य यो ब्रह्मचर्यव्रत ताकी रक्षा किया चाहै सो अपनी विवाही स्त्री विना अन्य माता भगिनी पुत्री पुत्रवधूके नजीक हू एकांतस्थानमें नाहीं रहै अन्य स्त्रीका मुख नेत्रादिककूं अपना नेत्र जोड नाहीं देखै। शीलवंतपुरुषनिका नेत्र अन्यस्त्रीकूं देखत प्रमाण मुद्रित हो जाय हैं। अब परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

धनधान्यादिग्रन्थं परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता। परिमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणनामापि ॥ ६१ ॥

अर्थ—अपने परिणामनिमें जेतामें संतोष आजाय तितना धन धान्य द्विपद चतुष्पद गृहक्षेत्र वस्त्र आभरणादि परिग्रहका परिमाण करकैं अधिक परिग्रहमें निर्वांछकपनो सो परिमितपरिग्रह नाम व्रत है याहीकूं इच्छापरिमाण नाम कहिये है। बहुरि कोऊकै वर्तमानमें परिग्रह अल्प है अर वांछा अधिक करि बहुत धनमें परिमाण करि मर्याद करै है सो हू धर्मबुद्धि है व्रती है परंतु अन्यायतैं लेवाका त्याग दृढ राखै जैसैं कोऊकै परिग्रह तो सौ रुपयाका है परिमाण हजारका करै जो हजार सिवाय नाहीं ग्रहण करूं यो भी व्रत है परंतु हजार अन्यायतैं नाहीं ग्रहण करूंगा ऐसा दृढ नियम करै जातैं परिग्रहका परिमाण विना निरंतर परिणाम अनेक वस्तुनिमें परिभ्रमण करै है। समस्त पापनिका मूलकारण परिग्रह है समस्त दुर्ध्यान याहीतैं होय है जातैं भगवान मूर्छाकूं परिग्रह कह्या है। बाह्यपरिग्रह अन्य वस्त्रमात्र तथा रहनेकूं कुटीमात्र नाहीं होतैं हू परवस्तुमें ममता (वांछा) करिसहित है सो परिग्रही ही है परमागममें अंतरंग परिग्रह चौदह प्रकार कह्या है—मिथ्यात्व १ वेद २ राग ३ द्वेष ४ क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८

हास्य ९ रति १० अरति ११ शोक १२ भय १३ जुगुप्सा १४। तहां मिथ्यात्व तो देहादिक परद्रव्यानिमें अनादिकालतें ममतारूप परिणाम हैं यह देह है सो मैं हूं जाति मैं हूं कुल मैं हूं इत्यादिक परपुद्गलनिमें आत्मबुद्धि अनादितें लाग रही है सो मिथ्यात्व है तथा रागद्वेषभाव क्रोधादिकभाव मोहकर्मकरि किए भावनिमें आत्मपनाको संकल्प सो मिथ्यात्वपरिग्रह है। तथा कामतें उपज्या विकारमें लीन हो जाना तथा राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ हास्यादिक छह नोकषायनिमें आपा धारन सो अतरंग परिग्रह है जाके अंतरंगपरिग्रहका अभाव है ताके बाह्यपरिग्रहमें ममता नाहीं होय है समस्त अनीति परिग्रहकी ममतासूं करे है। परिग्रहकी बांछातें हिंसा करे झूठ बोले हो चोरी करे हो कुशीलसेवन करे हो परिग्रहके वास्ते मरजाय अन्यकूं मारे महा क्रोध करे परिग्रहका प्रभावतें महाअभिमान करे परिग्रहवास्ते अनेक मायाचार करे परिग्रहकी ममतातें महालोभ करे बहुत आरंभ बहुत कषायको मूल परिग्रह ही है समस्त पापनितें छूट्या चाहै सो परिग्रहतें विरक्त होय है सो ही कार्तिकेयस्वामी कह्या है—

को ण वसो इत्थिजणे कस्स ण मयणेण खंडियं माणं। को इंदिएहिं ण जिओ को ण कसाएहि संतत्तो २८१
सो ण वसो इत्थिजणे सो ण जिओ इंदिएहिं मोहेण। जो ण य गिण्हदि गंथं अब्भंतरबाहिरं सव्वं २८२
जो लोहं णिहणित्ता संतो सरणायणेण संतुट्ठो। णिहणदि तिण्णा दुट्ठा मण्णंतो विणस्सरं सव्वं ॥ ३३१ ॥
जो परिमाणं कुव्वदि धणधाणसुवण्ण खित्तमाईणं। उवओगं जाणित्ता अणुव्वयं पंचमं तस्स ॥ ३४० ॥

अर्थ—इस जगतमें स्त्रीनिके वश कौन नाहीं है अर कामविकारनें कौनका मान खंडन नाहीं किया अर इंद्रियनिकरि कौन नाहीं जीत्या गया अर कषायनिकरि तप्तायमान कौन नाहीं है? समस्त संसारी जीव है ते स्त्रीनिके वश होय रहे हैं अर कामविकार समस्त संसारीनिका अभिमान खंडन करे है अर समस्त संसारी इंद्रियनिके वश पराधीन होय रहे हैं अर चार प्रकार कषायनिकार समस्त प्राणी दग्ध होय रहे हैं जो पुरुष अभ्यंतर अर बाह्य समस्त परिग्रहकूं ग्रहण नाहीं करे है सो ही स्त्रीनिके वश नाहीं

सो ही इंद्रियानिके आधीन नाहीं तिसहीकूं मोह नाहीं जीतै सो ही कामकरि नाहीं खंडन होय है सो ही कषायकरि दग्ध नाहीं होय है। जो पुरुष लाभको नष्टकरि संतोषरूप रसायणकरि आनंदित हुआ समस्त धन संपदादिकानिनै विनाशीक मानि दुष्ट तृष्णाकूं आगामी वांछाकूं छांडिकरि धन धान्य सुवर्ण क्षेत्र स्थानादिकनिको अपना अभिप्राय जानि परिणाम करै है. जो इतना परिग्रहसूं मेरा निर्वाह करना अधिकमें मेरा प्रवृत्ति करनेका त्याग है ऐसे पापरूप जानि वांछा छांडै ताकै परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत होय है। बहुरि परमागममें परिग्रहका लक्षण मूर्छा कह्या है जीवकै जो परपदार्थनिमें ममताबुद्धि सो ही मूर्छा है जातैं परवस्तुमें ऐसा अपना मानकरि राग है जो आत्माका मरण जीवन हित अहित योग्य अयोग्यके विचारमें अचेत होय रह्या है मोहकी उदीरणातैं म्हारो म्हारो ऐसो परद्रव्यमें परिणाम सो ही मूर्छा है। मूर्छा हीकूं भगवान परिग्रह कह्या है याहीतैं वाह्यपरिग्रह अल्प होहु वा मति होहु समस्त परिग्रहरहित है तो हू मूर्छावान परिग्रही है सो ही कहै है—

बाहिरगंथविहीणा दलिद्दमणुआ सहावदो हुंति। अब्भंतरगंथं पुण ण सक्कदे को वि छंडेदुं॥ ३८७॥

अर्थ—बाह्य परिग्रह रहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीतै होय है सो देखिये ही है. हजारां लाखां मनुष्य ऐसे हैं जिनकूं जन्मलिये पीछे पीतल तांबा कांसाका पात्र मिल्या ही नाहीं जे जन्मतैं घृत भक्षण किया नाहीं मोदकादिक खाया नाहीं पाग अंगरखी जामा कदे पहरह्या ही नाहीं स्त्री विवाही ही नाहीं कदे उदर भर भोजन मिल्या नाहीं सुवर्णादिक देख्या नाहीं समस्त जन्ममें दोय चार दिनके खावने योग्य अन्नमात्रका हू संग्रह हुआ नाहीं अन्य सुवर्णरूपादिकनिका तो दर्शन ही नाहीं पैसा रुपया एक भी जिनकूं कदे प्राप्त हुआ नाहीं रहनेकूं कुटीमात्र हू अपनी भई नाहीं ऐसैं अनेक मनुष्य देखिये हैं परंतु अभ्यंतर ममता छोडनेकूं कोऊ सामर्थ नाहीं तातैं मूर्छा ही परिग्रह है। यहां कोऊ पूछे जो मूर्छा ही परिग्रह है तो वाह्य धनधान्यवस्त्रादिक बाह्यवस्तुका संगमकै परिग्रहपना नाहीं ठहरया ताकूं उत्तर कर

हैं—ये बाह्यपरिग्रह अंतरंगपरिग्रहके निमित्त हैं इन बाह्यपरिग्रहका देखना श्रवण करना चिंतवन करना शीघ्र ही परिग्रहमें लालसा उपजावै है ममता उपजावै है अचेत करे है तातैं बाहिरंगपरिग्रह मूर्छाका कारण त्यागने योग्य है अर अंतरंग बहिरंग दोऊ प्रकार परिग्रहके ग्रहणकूं भगवान हिंसा कही है अर दोय प्रकारका परिग्रहका त्याग सो अहिंसा है ऐसें परमागमके जाननेवाले कहे हैं। जातैं मिथ्यात्वकषायादिक अंतरंगपरिग्रह तो हिंसाहीके दूजे पर्यायनाम हैं अर बाह्यपरिग्रहमें मूर्छा सो ही हिंसा है। बहुरि ये कृष्णादिक लेश्याके अशुभपरिणाम हू परिग्रहमें रागकरि ही होय हैं क्योंकि परिणामनिकी शुद्धता मंदकषायकरि होय है कषायनिकी मंदता होय सो परिग्रहके अभावतैं होय अर महान आरंभ भी परिग्रहका अधिकतातैं ही होय है ऐसें जानि समस्त परिग्रह छांडनेका राग नाहीं घट्या तो परिग्रहमें उपयोग माफिक परिणाम करिकैं तो रहो। अर जो परिग्रह तो अल्प है अर अधिककी बांछा बनि रही है सो इस बांछातैं प्राप्त नाहीं होयगा लाभ तो अंतरायकर्मका क्षयोपशमत होयगा बांछातैं तो और पाप कर्मका बंध ही होयगा तातैं पापका कारण परिग्रहकी ममता छांडि जेता प्राप्त भया तितनामें संतोष धारण करि ही रहो। यहां ऐसा विशेष जानना, यद्यपि समस्त परिग्रह त्यागने योग्य है परंतु जो गृहस्थपनामें रहि धर्मसेवन कर्या चाहै सो अपने पुण्यके अनुकूल परिग्रह राखै ही जो परिग्रह गृहस्थके नाहीं होय तो काल दुकालमें रोगमें वियोगमें व्याहमें मरणमें परिणाम ठिकाने रहै नाहीं परिणाम बिगडि जाय तातैं गृहस्थधर्मकी रक्षावास्तै परिग्रह संचय करै ही अर आजीविकाको उपाय न्यायमार्गत करै ही क्योंकि साधु तो परिग्रह अल्प हू राखै तो दोऊ लोक तैं भ्रष्ट होजाय अर गृहस्थ परिग्रह नाहीं राखै तो भ्रष्ट होजाय जातैं गृहस्थाचारमें रहै तो ताके अल्प तथा बहुत परिग्रह बिना परिणाममें समता नाहीं रहै अर अजीविका नाहीं होय तो निराधारका परिणाम धर्मसेवनमें ठहर सकै नाहीं परिणाममें तीव्र आर्ति मिटै नाहीं भोजनपान मिलने योग्य आजीविका बिना स्वाध्यायमें पूजनमें शुभभावनामें

परिणाम ठहरि सके नाहीं अकुलता करि संक्लेश बधतो जाय संतोष रहै नाहीं । जातैं रोग आवतैं वृद्धपना आवतैं वियोग होतैं अन्न वस्त्रका आधार विना अपना परिणाम कोऊ देशमैं कोऊ कालमैं थिरता पावै नाहीं देहकी रक्षा अजीविका बिना नाहीं, देह बिना अणुव्रत शील संयम काहेतैं होय ? यातैं अपना पुण्यकी अनुकूलता अर उद्यम सामर्थ्य सहाय साधनादिक देशकालके योग्य विचारि न्यायमार्गतैं आजीविका करि धर्म सेवन करो । अहिंसातैं सत्यप्रवृत्तितैं अदत्त परके धनका त्याग करि आपकूं जगतकै लोकानिकै विश्वास आवनेयोग्य पात्र बनो । तथा विद्या कला चातुर्य करि आजीविका होने योग्य आपकूं करो । पाछैं लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण लाभ अलाभ अल्पलाभ होय ताहीमैं संतोष करो । अर कुंटुबका पोषण देहका पोषण पुण्यके उदयतैं लाभ भया तिस परिमाण करो । ऋण-वान मत होहु ऋण हुआ पाछैं समस्त धीरज प्रतीतका अभाव हो जायगा दीनता प्रगट हो जायगी एक वार अपनी प्रतीति बिगडै पाछैं आजीविका होना काठिन है बहुरि अजीविकाकै अनुकूल खरच राखो पुण्वाननिकूं देख आधिक खरच करोगे तो जस अर धर्म अर नीति तीनों नष्ट हो जायंगे अर अन्य पुण्यवानोंका खरच देख बराबरी करोगे तो दरिद्री होय दोऊ लोकतैं भ्रष्ट हो जावोगे अर या जानो हो जो हमारी बडी आबरू है पूर्वैं हमारे बडा २ कार्य भया है अब कैसैं घटावैं जो घटावैं तो हमारा समस्त बडापना बिगडि जाय ऐसी बुद्धि मति करो पुण्य अस्त होजाय तब बडापना कैसैं रहेगा अब बडा-पना तो सांच संतोष धारणकरि शीलकरि विनयकरि दीनता रहितपनाकरि इंद्रियनिके विषयनिकी चाह घटावनेकरि है । जातैं दोऊ लोकमें उज्वलता होय पुण्यको उदय आजाय तदि जीवकूं स्वर्गलोकका मह-र्द्धिक देव बना दे चक्रवर्ती करदे अर पापका उदय आवै तदि नरकका नारकी तथा एकेन्द्रिय बनादे तथा भार बहनेवाला रोगी दरिद्री मनुष्य करदे तिर्यंच करदे इसही भवमें राजा होय रंक होजाय कौनसा बडापनाकूं देखो हो अर अपने धन तो अल्प अर अभिमानी होय बहुत धन खरच करोगे तो दरिद्री

अर ऋणवान दीन होय समस्ततैं नीचे होजावोगे निंद्यताकूं प्राप्त होय आर्तध्यानतैं दुर्गतिके पात्र होजावोगे तातैं आजीविका होय तातैं अल्प खरच करो यो ही प्रवीणपणो है पंडितपणो है जो आंवदनीतैं अल्प खरच करै सो ही कुलवानपणो है सो ही उत्तम धर्म है क्योंकि आंवदनीतैं खरच बधावोगे तो अपनी ही बुद्धितैं दरिद्री होय मूर्खता दिखावोगे अर ऋणवान हो जावोगे तदि उत्तम कुल योग्य आदर सत्कार आचरण समस्त नष्ट होजायगा अर मलीनता प्रगट होजायगी अर पूजन स्वाध्याय शुभ भावनामें बुद्धि निर्धन हुआ पीछैं ऋणवान हुआ पीछैं नाहीं तिष्टैगी। तातैं आजीविकातैं अल्प खरच करना ही गृहस्थकी परम नीति है अर अभिमानी होय अधिक खरच करै ताकै अन्यका विना दिया धन ऊपरि चित्त चलि जाय है अनेक असत्य कपटादिक पापमैं प्रवृत्ति होय संतोष धर्म नष्ट हो जाय है । कोऊ या कहै जो आजीविका तो पूर्वकर्मके आधीन है धर्मसेवन अपने आधीन है ताकूं कहिये है जो—यहां आजीविका पुण्यके आधीन ही है परंतु धर्मग्रहण होजाना हू पुण्यकर्मका सहाय विना नाहीं होय है। धर्मग्रहणकी योग्यतामैं हू एती सामग्री मिले होय है उत्तमकुलमें जन्म पावना, जातैं चांडाल चमार भील शूद्रादिकके कुलमें धर्मका लाभ कैसैं होय ? बहुरि सुदेशमें उपजना, इंद्रियांकी पूर्णता पावना, रोगरहित देह पावना शुभ संगति पावना, आजीविकाकी स्थिरता पावना सम्यक्धर्मका उपदेश पावना, इत्यादिक पुण्यका उदयजनित बाह्यसामग्री पाये बिना धर्मग्रहण वा धर्मका सेवन नाहीं होय है। तातैं जाकैं पूर्वपुण्यका उदयतैं आजीविकाकी स्थिरता होय ताकै धर्मसेवनमैं योग्यता होय है। बहुरि जाके इंद्रियनिकी पूर्णता नीरोगता होजाय अर न्याय अन्यायका विवेक तथा धर्म अधर्म योग्य अयोग्यका विवेक होय तथा प्रियवचन विनय अन्यके धन अर अन्यकी स्त्रीसूं पराङ्मुखता अर आलस्य प्रमादरहितता धीरता कालदेशके योग्य वचन होय ताकै आजीविकाका लाभ अर धर्मका लाभ होजाय। गुणवानकै निर्लोभीकै आलस्यरहित उद्यमीकै विनयवानकै जीविका दुर्लभ नाहीं है । आप जीविका योग्य पात्र बन जाय तो जीविका कदाचित् दूर

नाहीं लाभांतराय कर्मका क्षयोपशम प्रमाण आजीविका थोडी वा बहुत नियमतैं बन ही जाय तिसमैं संतोष करि अधिकमैं वांछाका त्याग करि परिग्रहपरिमाणव्रत धारण करो। अर पुण्यका उदयके आधीन आजीविका प्राप्त होजाय तो अनीतिमैं प्रवृत्ति करि आजीविकाकूं नष्ट मत करो आजीविका नष्ट हो जायगी तो धर्म अर जस नष्ट होजायगा अर अपने भावनिकरि जो नीति धर्म नाहीं छांडोगे न्यायमार्ग चालोगे फिर हू असाताका उदयतैं अग्नितैं जलतैं चोरनितैं राजाके उपद्रवतैं आजीविका बिगडि जाय तथा धन बिगाडि जायगा तो धर्म नाहीं बिगडैगा यश नाहीं बिगडैगा जगतमैं अप्रतीतका पात्र नाहीं होवोगा, अर प्रबल लाभांतरायका उदयतैं न्यायरूप उद्यम करते हू जो लाभ नाहीं होय तो समता ही ग्रहण करो। जो आयुकर्म बाकी है तो भोजनादिककी विध कर्म मिलाय देगो कर्म बलवान है। वनमैं पहाडमैं जलमैं नगरमैं अंतरायका क्षयोपशम प्रमाण सबकूं मिले है। कोऊका पुण्य तो ऐसा है जो बहुत लोकनिकूं भोजनादिक देय आप भोजन करै है अर कोऊके अंतरायका ऐसा उदय है जो अपना उदर हू नाहीं भरै है। कोऊकूं आधा उदर भरनेलायक मिलै है। कोऊकूं एक दिन मिलै एक दिन नाहीं मिलै। कोऊकूं दिनके आंतरै तीन दिनके आंतरै नीरस भोजन मिलै तो हू धर्मात्मा समताकूं नाहीं छाडैं। जो पूर्वं तिर्यंचनिके भवमैं कदे उदरभर भोजन मिल्या नाहीं तथा क्षुधा तृषाके मारे अनेक बार मरे हैं तातैं अब धैर्य धारण करि जैसैं हमारे धर्म नाहीं छूटै तैसैं यत्न करना जिनका परिणाममैं ऐसा गाढ प्रगट होय तो स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव होय है। बहुरि कोऊ या कहै जो आप तो गाढ पकडि समता राखै परंतु कुटुंब जाकी गैलि होय तो कहा करै? तो ऐसे कुटुंबकूं कहै भो कुटुंबके जन हो! जो आपां पूर्व-जन्ममैं दान दिया नाहीं व्रत पाल्या नाहीं अभक्ष भक्षण किये अन्यायतैं परका धन ग्रहण किया तिस पापके उदय करि ऐसे दरिद्री भये जो उदरकूं भोजन अर वस्त्र भी नाहीं सो अपना किया पापका फल है जो अब अन्य पुण्यवाननिके आभरण भोजनादिक देखि क्लेशित होवोगे तो केवल आगानै हू तिर्य-

चगतिके घोर दुःखनिका कारण पापकर्म तथा कोटनि भवपर्यंत दरिद्रादिकके कारण पापबंध करोगे परकी संपदा आपके नाहीं आवैगी। क्लेश दुर्ध्यान तृष्णादि कियेतैं दुःख नाहीं मिटैगा अर दुःख वधैगा अर जो अल्प मिल्यामैं संतोष करि निर्वांछक होओगे तो वर्तमानमैं तो दुःख ही नाहीं व्यापैगा अर समस्त पापकर्मकी निर्जरा ऐसी होयगी जो घोर तपश्चरणतैं हू नाहीं होय। अर अल्पभोजन वस्त्रादिक मिलै अर परिणाममैं आकुलतारहित समतासूं रहै तो बडा तप है। अर कर्म मुझे थांके सामिल उपजायो सो अब मैं दैव पुरुषार्थ दोऊनिके अनुकूल द्रव्य उपार्जनमैं उद्यम करूं हूं परंतु लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण न्यायमार्गतैं प्राप्त होजायगा सो तुम्हारे निकट लाऊं हूं। अब यामैंसूं हमारे विभागका बांटा होय सो हमकूं द्यो अर तुम्हारा होय सो तुम विभाग करि भोजनादिक करो परंतु अब हम भगवानका उपदेश्या दुर्लभ धर्म ग्रहण किया है सो अब तुम्हारे वास्तै अनीति कपट घोर पापकरि धन नाहीं ग्रहण करैंगे न्यायनीतितैं जैसैं धर्म नाहीं बिगडै तैसैं उद्यमकरि उपार्जन करैंगे। तुम भी जैसैं हमारा धर्म बिगडि जाय तैसैं प्रवर्तन मत करो। अपना अपना पुण्यपापका फल भोगो। आकुलता छांडि जेता मिलै तितनामैं संतोष धारि सुखतैं रहो ऐसा जाके निश्चय है ताके परिग्रहपरिमाण नाम स्थूल व्रत होय है। और जो कुटुंबका पोषणके अर्थि पाप क्रियामैं प्रवर्तै है असत्य चोरी कपट हिंसा इत्यादिक पापनिमैं प्रवर्तै है तिनके घोरपापका बंध होय पापतैं दुर्गतिका पात्र होय है तातैं अल्प जीतव्यमैं व्रत शील संयममैं ही दृढता करो। केतक लोक कहै हैं जो धन तो पापहीतैं आवै है पाप बिना धन आवै नाहीं त्यागी व्रती हुयां धन कैसैं आवै? ताकूं कहिये है—ऐसा तो तुम्हारी भ्रांति है जो पाप बिना धन आवै नाहीं ऐसा कहना अयुक्त है। जो पापहीतैं धन आवै तो इस जगतमैं लाखां भील चांडाल चोर चुगुल मनुष्यनिकूं मारनेवाले ग्राम दग्ध करनेवाले मार्ग लूटनेवाले समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र समस्त जाति समस्त कुल पापीनि करि भरचा है समस्त पुरुष स्त्री बालकादि हिंसाके करनेकूं असत्य बोलनेकूं

चोरी करनेकूं तय्यार हैं परंतु जो पूर्वजन्ममें कुपात्र दान दिया है कुतपकरि खोटा पुण्य बांध्या है तिनके कुमार्गतैं धन आवै है पुण्यहीन तो मार्या जाय पूर्वपुण्य विना पापतैं ही तो नाहीं आवै है अर जो पुण्य बांध्या ते यहां चोरी चुगुली कर्यां बिना ही संपदाकूं प्राप्त होय है। राजाके घर जन्म ले है तातैं कोट-धनके धणीनिके घर जन्म लै है। बहुत कहा कहिये समस्त पुण्यका फल है खोटे पुण्यकी लक्ष्मी भोगि नरक तिर्यंचमें जाय डूबै है। अब परिग्रहपरिमाण व्रतके पंच अतीचार वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

अतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि। परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पंच लक्ष्यन्ते ॥ ६२ ॥

अर्थ—परिमितपरिग्रह नाम व्रतके ये पंच अतीचार जानिये है जो घोडा ऊंट बैल इत्यादिक तिर्यंचानिकूं तथा दासी दास सेवकादिकानिकूं अतिलोभके वशतैं मर्यादारहित अतिदूरका मंजल करावै बहुत चलावै सो अतिवाहन नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि अपने गृहमें प्रयोजनरहित हू बहुत वस्तुनिका संग्रह करै भोजनवस्त्रपात्र इत्यादिक थोरेका प्रयोजन होय अर बहुतका संग्रह करै तथा धान्यादिक अर वस्त्रादिक तथा औषधादिक तथा काष्ठ पाषाण धातु इत्यादिकानिका संग्रहमें बहुत परिणाम रहै सो अतिसंग्रह नाम दूजा अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यके बहुत संपदा बहुत परिग्रह तथा अनेक देशांतरनिकी वस्तु वा कदे नाहीं देखे ऐसे वस्तुका देखनेकरि श्रावक आश्चर्य करना सो विस्मय नाम तीजा अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि कोऊ बनिजमें तथा सेवामें तथा कलाहुन्नरतैं आपके अंतरायके क्षयोपशम परिमाण लाभ होय तो हू तृप्त नाहीं होना संतोष नाहीं आवना सो अतिलोभ नामा चौथा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि तिर्यंचनि ऊपरि लोभके वशतैं अधिक भार लादि चलावना सो अतिभारवाहन नामा पांचमा अतीचार है ॥ ५ ॥ जो गृहस्थ परिग्रह परिमाण करै सो इन पांच अतीचारका हू परित्याग करै। ऐसैं गृहस्थनिके धारण करनेयोग्य पंच अणुव्रत कह करिके अब अणुव्रतानिके फल कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकं । यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ६३ ॥

अर्थ–अतीचारनिकरि रहित ये पूर्वोक्त पंच अणुव्रतरूप निधि हैं सो देवलोकरूप फलकूं फले हैं जिस देवलोकमैं अवधिज्ञान अर आणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्व ये अष्ट महागुण हैं अर धातु उपधातुरहित दिव्यशरीर पाइये है। भावार्थ–अणुव्रतनिके धारण करनेवाला मरकरि स्वर्गलोकमैं महान् अणिमादिक ऋद्धिके धारक देव ही होय अन्य पर्याय नाहीं पावै ऐसा नियम है। स्वर्गमैं धातु उपधातुरहित रोग वृद्धत्वादिकरहित दिव्यशरीरकूं प्राप्त होय असंख्यात वर्षपर्यंत सुखसंपदामैं लीन हुआ तिष्ठै है। अब जे पंच अणुव्रतनिकूं धारण करि इस लोकमैं विख्यात महिमाकूं प्राप्त भये तिनके नाम प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं–

मातङ्गो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः । नीली जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमं ॥ ६४ ॥

अर्थ–अहिंसा नाम अणुव्रतकरि मातंग जो चांडाल अर सत्य अणुव्रतकरि धनदेव नाम वणिकपुत्र अर अचौर्यव्रत करि वारिषेण नाम राजपुत्र अर ब्रह्मचर्यव्रतकरि नीली नाम श्रेष्ठीकी पुत्री अर परिग्रह परिमाणकरि जयकुमार ये व्रतके माहात्म्य करि उत्तम पूजाके अतिशयकूं प्राप्त भये इस ही भवमैं देवनिकरि पूज्य भये। यद्यपि इन व्रतनिके प्रभावतैं अनेक भव्य इस लोकमैं महिमा पाय देवलोकमैं गये तथापि आगमप्रसिद्ध इनकी ही कथा है। अब पंच पापनिके प्रभावतैं जे इस लोकमैं घोर क्लेश पाय दुर्गति गये तिनका नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

धनश्रीसत्यघोषौ च तापसारक्षकावपि । उपाख्येयास्तथा श्मश्रुनवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥

अर्थ–हिंसा करि तो धनश्री असत्य करि सत्यघोष चोरीकरि तापसी कुशीलकरि कोतवाल परिग्रहकरि श्मश्रु नवनीत ये इस लोकमैं राजानितैं तीव्र दंड पाय दुर्गतिकूं प्राप्त भये इनका यथाक्रम दृष्टांत जानना। अब अष्टमूल गुणनिकूं कहै हैं–

मद्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकं । अष्टौ मूलगुणानाहुर्गृहिणां श्रमणोत्तमाः ॥ ६६ ॥

अर्थ—श्रमणोत्तम जे गणधर तथा श्रुतकेवली हैं ते गृहस्थके मद्यमांसमधुके त्याग सहित जे पंच अणुव्रत ताहि अष्टमूलगुण कहे हैं। भावार्थ—जीव मारनेके संकल्पकरि त्रस जीवनके मारनेका त्याग ॥ १ ॥ अन्यके अर आपके क्लेश उपजावनेवाला अर सांचा श्रद्धान ज्ञान आचरणका घातकरनेवाला वचनका त्याग ॥ २ ॥ बिना दिया धर्या गड्या पड्या भूल्या परके धनके ग्रहण करनेका त्याग ॥ ३ ॥ अपना कुलके योग्य विवाही स्त्री बिना अन्य समस्त स्त्रीनिमें रागका त्याग ।४। न्यायकरि उपजाया परिग्रहके मांहि परिमाण करि अधिक परिग्रहका त्याग । ५ । ये पांच तो अणुव्रत अर जिसतैं परिणाम मोहित होय अर अपना हित अहि-तकी सावधानीं बिगाडि जाय सो मद्य है ताका त्याग ॥ ६ ॥ अर द्वींद्रियादिक जीवनिके देहतैं उपज्या मांसका त्याग ॥७॥ अर मक्षिकानिकरि संचय किया मधु छत्तातैं उपज्या मधुका त्याग ॥८॥ इन अष्टका त्याग सो अष्टमूलगुण हैं। जातैं गृहस्थके पंच पाप अर तीन मकारका त्यागमैं दृढता होजांय तदि समस्त गुणरूप महलकी नींव लग गई। अनादिकालतैं संसारमें परिभ्रमणका कारण मिथ्यात्व अन्याय अर अभक्ष था तिनका अभाव हुआ तब अनेक गुण ग्रहणका पात्र भया तातैं ये अष्ट त्याग हैं तेही मूलगुण हैं। बहुरि अन्य ग्रंथनिमें पंच उदंबरफल अर तीन मकारका त्यागतैं अष्टमूलगुण कहे हैं। इहां उदुंबर ॥ १ ॥ कठूंबर ॥ २ ॥ पीलू ॥ ३ ॥ पीपलका गोल ॥ ४ ॥ बडका बडवाल्या ॥ ५ ॥ ये पांच उदंबर फल कहिये हैं इनमें बहुत त्रस जीवनिकूं प्रगट देखिये है तातैं इन फलनिका भक्षण मांसके समान है और हू केतेक फल जिनमैं काल पाय त्रस मरि जाय तिनका भक्षणमैं हू रागभावकी अधिकतातैं महा हिंसा होय है जाकैं ऐसा परिणाम होय जो याकूं मैं सुकाय खाऊंगा तिसकैं अभक्षमैं तीव्र अनुरागतैं बहुत बंध होय है। मदिरा है सो मनकूं मोहित करै है अचेत करै है अर मन मोहित होय जाय सो धर्मकूं विस्मरण होजाय अर धर्म भूलि जाय सो पुरुष निःशंक हिंसाकूं आचरण करै है ऐसा विशेष जानना

जो–मनकूं उन्मत्त करै स्वरूपकी सावधानी भुलाय विषयांमैं आसक्तता उपजावै रसना इंद्रिय अर उपस्थ इंद्रियके विषयमैं अतिराग उपजावै सो ही मद्य है यातैं भंग पीवना तथा अमल (अफीम) पोस्त आदिक नशाकी वस्तु तथा इनके संयोगतैं उपजे पाक माजूम इन समस्त मदकारी वस्तुके भक्षण करनेतैं धर्मबुद्धिका नाश होय है अर अभक्ष्य भक्षणमैं रक्त होजाय बुद्धिकी उज्वलता परमार्थका विचार नष्ट होजाय है तातैं जिनेंद्रकी आज्ञाकूं धारण कर्‍या चाहै तो अवश्य अमलकारी वस्तुका भक्षणका त्याग करै है। बहुरि भांगमैं त्रस जीव बहुत उपजै हैं अर मदिरामैं तो अपरिमाण त्रस जीवानिकी उत्पत्ति है महा दुर्गंध है। उत्तमकुलके पुरुष मदिराकी धारा दूरतैं हू भोजन करते देख लें तो भोजनका शीघ्र त्याग करैं अर स्पर्शनतैं वस्त्र सहित स्नान करैं। मदिराकरि उन्मत्त होय सो माताकूं पुत्रीकूं स्त्रीरूप आचरण करै है अर अपनी स्त्रीकूं मातापुत्रीरूप आचरण करै है। भय ग्लानि क्रोध काम लोभ हास्य रति अरति शोक ये समस्त दोष हिंसाहीतैं हैं ते समस्त मद्यपायीकैं होय हैं तातैं धर्मका अर्थी मद्यपानका दूरहीतैं त्याग करै। बहुरि द्विइंद्रियादिक प्राणीनिके घातकरनेतैं मांस उपजै है अर जाकी आकृति महाघृणा उपजावै है मांसका स्पर्शन अर दुर्गंध अर नाम ही परिणाममैं महाग्लानि उपजावै है जे धर्मरहित नरकादिकके जानेवाले महा निर्दय परिणामी होय ते मांस भक्षण करै हैं अर जो स्वयमेव मरे हुए बलध भैंसा अजा मृगादिकानिका मांस है ताके आश्रय अनंत तो वादर निगोदिया जीव अर असंख्यात त्रसजीवं तिनका घात होय है बहुरि कच्चा मांसमैं अर अग्निकरि पक्या मांसमैं अर जिस काल नीचें अग्नि लाग करि सीझै है तिस काल पकता हुआ मांसमैं हू अनंत जीव निरंतर उपजै हैं तैसी ही जातिका समय समय उपजै हैं तातैं कच्चा मांस पक्या हुआ मांस वा पकता हुआ मांस सूका हुआ मांसकूं जो खाय हैं तथा मांसकी डलीको स्पर्शन करै हैं ते मनुष्य निरंतर संचय किया ऐसा बहुत जीवानिका घात करै हैं। बहुरि चांडालनिकी उच्छिष्ट कषायीनिकी म्लेछानिकी कूकरानिका उच्छिष्ट तो

मांस होय ही है मांस भक्षीनिके दया नाहीं आचार नाहीं जाति कुल धर्म दया क्षमादिक समस्त गुणनिकरि भ्रष्ट हैं। दुर्गतिगामी महापापी महानिर्दयीनिनैं मांस भक्षणकूं शास्त्रनिमें धर्म कह्या है। मांसकरि देवता तथा पितरनिकूं तृप्त होना कहैं देवतानिकूं मांसभक्षी कहैं श्राद्धनिमें ब्रह्मणनिकूं मांसपिंड भक्षण कराय देवनिका पितरनिका तृप्त होना कहै हैं सो ये समस्त मिथ्यादर्शनका प्रभाव है। बहुरि मधु समान कोऊ अधम नाहीं मक्षिकानिका वमन भीलचडांलनिकी उच्छिष्ट अनंतजीवनिका स्थान है बहुत मक्षिकानिकूं मारि भील चांडाल ल्यावैं वा स्वयमेव मरै हैं तिनमें हू असंख्यात त्रसजीवनिकी उत्पत्ति है याकूं पवित्र मानना पंचामृतनिमें कहना याकूं शुद्ध कहना इस समान विपरीत और नाहीं। सहतका एक कणमात्र हू जो औषधादिकनिकैं अर्थि ग्रहण करै हैं रोगके दूर करनेकूं भक्षण करै हैं सो नरकनिके घोर दुःख भोगि असंख्यात वा अनंत जन्मनिमें अनेक रोगनिका पात्र होय है। मधु मद्य मांस नवनीत (मगवल) ये चार महाविकृति भगवानके परमागममें कहै हैं जो जिनधर्म ग्रहण करै सो मद्य माखन मांस मधु इन चार विकृतिनका प्रथम ही परित्याग करै। इन चारनिकूं भगवान महाविकृति कही है इनका परिहार विना धर्मका उपदेशका पात्र ही नाहीं होय है। धर्म है सो अहिंसारूप है ऐसैं जिनेंद्रनकी आज्ञा वारंवार श्रवण करते हू जो स्थावरनिकी हिंसाकूं छाडनेकूं असमर्थ हैं ते त्रस जीवनिकी हिंसाकूं तो शीघ्र ही छोडो। हिंसाका त्याग नव प्रकार करि है मनकरि हिंसा करै नाहीं अन्यकरि हिंसा करावै नाहीं अन्य हिंसा करै ताकूं सराहै नाहीं। ऐसैं ही वचनकरि हिंसा करै नाहीं करावै नाहीं करतेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं ही कायकरि हिंसा करै नाहीं परकूं हिंसा करनेकूं प्रेरणा करै नाहीं करनेवालेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं मनवचनकायद्वारै कृतकारितअनुमोदनाकरि हिंसाकूं छाडै है तिसके औत्सर्गिक त्याग कहिये उत्कृष्ट त्याग है। अर नव भंग विना जो त्याग सो अपवादिकत्याग कहिये सो अनेक प्रकार है। या अहिंसाधर्म मोक्षको कारण अर समस्त संसारके परिभ्रमणका

दुःखरूप रोगके मेटनेकूं अमृत समान पाय करके अज्ञानी मिथ्यादृष्टिनिका अयोग्य आचरण देखि अपने परिणाममैं आकुल मत हो हू। संसारमैं कर्मके प्रेरे अनेक प्रकारके जीव हैं। केई हिंसक हैं कई अभक्ष्य भक्षण करनेवाले हैं कई क्रोधी लोभी मानी मायावी महाआरंभी महापरिग्रही हैं अन्यामार्गी हैं तिनकी अनीति देखि अपने परिणाम मत विगाडो कर्मके प्रेरे जीव आपा भूल रहे हैं आप तो साम्यभाव ही ग्रहण करो। कोऊ या कहै भगवानका धर्म सूक्ष्म है धर्मके अर्थि हिंसा होनेमैं दोष नाहीं ऐसैं धर्ममूढ होय करिकैं प्राणीनिकी हिंसा नाहीं करिये। बहुरि जो देवके निमित्त गुरुके कार्य करनेके निमित्त करी हुई हिंसा हू शुभ नाहीं है हिंसा तो पाप ही है। धर्म तो दयारूप है जो देवगुरुके कार्य करनेके निमित्त हिंसाका आरम्भ ही धर्म होय तो हिंसारहित धर्म है ऐसा जिनेंद्रका वाक्य असत्य होजाय यातैं हिंसाकूं धर्म कदाचित् श्रद्धान मत करो। कोऊ कहै धर्म तो देवतानितैं होय है, देवतानिके निमित्त समस्त देना योग्य है ऐसी विपरीत बुद्धिकरि प्राणीनिकी हिंसा करना योग्य नाहीं। बहुरि केतक कहै हैं देवी कहिए कात्यायनी चंडिका भवानी दुर्गा पारवती इत्यादिक नाम करिकैं प्रसिद्ध हैं ताकै बकरा तथा भैंसा मारि चढाइए या भवानी इनतैं ही प्रसन्न है सो मिथ्यादृष्टिनिके वाक्यतैं चलायमान नाहीं होना। एक तो यह विचार करो जो देवी जीवनिका मांसकूं भोगना चाहै है तो आप अनेक भुजानिमैं शस्त्रधारण करि भौंह वक्र करि खडी है आप ही जीवनिकूं मारि करि भक्षण क्यों नाहीं करै है ? अपने भक्तानितैं दीन अनाथ जीवनिकूं भयभीतनिकूं क्यों मरावै है ? आप ही सिंह व्याघ्रादिक ज्यों सिंहादिकांनै मारि क्यों नाहीं भक्षण करै है ? और आप देवता होय करि हू कागला कूकरा भील चांडालकी ज्यों मांस भक्षणमैं रत है क्षुधातुर है दुःखी है ताकै काहेका देवपना ? जो आपही दुःखी आसक्त सो भक्तानिकूं कैसैं सुखी करैगा ? महादुर्गंध तिर्यंचानिके दुर्गंधमय घृणा देनेवाला मांसका इच्छुक महा पापीनिकै देवपना नाहीं होय है। पापीनिनै झूठे शास्त्र बनाय आपके मांस भक्षण करनेकूं अर मूढलोकनिकूं

देवीनिका प्रसादके संकल्पतैं मांस भक्षणमैं प्रवृत्ति कराय जगतके जीवनिकूं अपनी इन्द्रियनिके पुष्ट करनेकूं नरकमैं डबोवै है। जिनेंद्रके परमागममैं तो भवनवासी व्यन्तर ज्योतषी कल्पवासी चार प्रकारके देवानिकै कवलाहार नाहीं है मानसीक आहार कह्या है। कोऊ कालमैं इच्छा उपजते प्रमाण अपने कंठहीमैं अमृत झरै है तिसकरि लेशमात्र क्षुधावेदना रहै नाहीं। तिनकै दिव्य वैक्रियिक देह सातधातु-उपधातुरहित महादिव्यरूप सुगंध शरीर है। देवनिके मांस भक्षण कहना महाविपरीतबुद्धि है। जो देवता मांसभक्षी है तो कागला कूकरा गीध स्यालतैं हू देवता नीच ठहरया तातैं देवताके अर्थि हिंसा करना योग्य नाहीं अर कोऊ मांसभक्षी गुरुके अर्थि मांसका दान मत करो। जो पापी मांसादिक अभक्ष्य भक्षण करै मदिरा पीवै वह पापी काहेका गुरु? वो तो मांसादिक भक्षण कराय नरक पोहचावनेका गुरु है। ताके स्पर्शने देखनेतैं घोर पापका बंध होय है। बहुरि कोऊ कहै अन्नादिकके भक्षणमैं तो बहुत जीवनिका घात है तातैं एक जीवकूं मारि भक्षण करना श्रेष्ठ है ऐसा विचार करि बडा प्राणीकूं मारि खावना योग्य नाहीं जातैं एकेंद्रिय प्रत्येक वनस्पती पृथ्वी जल अग्नि पवन समस्त त्रैलोकमैं भरे हुए अर समस्त विकलत्रय अर समस्त देव मनुष्य तिर्यंच इन समस्तनिकूं इकट्ठा करि गिणिए तो समस्त असंख्यात परिमाण हैं अर मनुष्य तिर्यंचनिके मांसका एक कणामैं एते बादर निगोदिया जीव हैं जो त्रैलोक्यके एकेंद्री बेंद्री तेइंद्री चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय समस्त मनुष्य तिर्यंच देव नारकीनितैं अनंतगुणा भगवान सर्वज्ञ देखि परमागममैं कह्या है तातैं अन्न जलादिक असंख्यात वरस भक्षण करै तिसमैं जो एकेंद्रीकी हिंसा होय तातैं अनंतगुणे जीवनिकी हिंसा सूईकी अणीमात्र मांसके भक्षण करनेमैं है। बहुरि एकेंद्रीकी हिंसा अर त्रसहिंसा बराबर नाहीं है दुःखमैं हू बडा अंतर है ज्ञानमैं बडा अंतर है एकेंद्रीका शरीर रस रुधिर हाड मांस चामादिक धातुकरि रहित है अर मांसभक्षणमैं तीव्र परिणाम तीव्र निर्दयपना है तैसा अन्नके भक्षणमैं नाहीं है। जैसैं अपनी स्त्रीकूं स्पर्शकरनेमैं अर अपनी पुत्रीके माताके स्पर्शकरनेमैं

परिणाम कैसैं समान होय बडा अन्तर है तातैं बहुत कहनेकरि कहा त्रसजीवका घात करना घोर पाप जानना। बहुरि ऐसी आशंका हू मत करो जो यह सिंह व्याघ्र सर्पादिक बहुत प्राणीनिका घातक हैं इनकूं मारे बहुत जीवनिकी रक्षा होयगी ऐसी मिथ्याबुद्धिकरि हिंसक जीवनिकी हिंसा हू मत करो। जातैं कौन कौन हिंसककूं मारोगे? चिडी कागला सूवा मैना तीतर इत्यादिक समस्त पक्षी हिंसक हैं तथा कीडा कीडी लट मकडी माखी सर्प बीछू इत्यादिक तथा ऊंदरा कूतरा बिलाव स्याल सिंह अनेक तिर्यंच मनुष्यादिक समस्त जीव पापकर्मके संतापतैं हिंसक ही हैं। तुम कौन कौनकी हिंसा करोगे? और तुम्हारे हिंसक जीवनिके मारनेका विचार भया तब तुम समस्त हिंसकनिके घात करनेवाले महाहिंसक भये। तुमारे समान पापी कौन रह्या तातैं हिंसक जीवनिकी हिंसाके परिणाम कदाचित् मत करो। हिंसक कौननै किया? पूर्वै उपजाये अपने कर्मके आधीन समस्त जीव उपजे हैं पापका संतान अनंतकालतैं चल्या आया है कौन दूर करि सकै। पापी जीव कौननै किया पुण्यवान कौननै किया? समस्त कर्मकी विचित्रता है। कालके प्रभावतैं पापी जीवनिको पापके फल देनेकूं अनेक पापी जीव उपजै हैं कौन दूरि करनेकूं समर्थ है तातैं दयावान होय समस्त जीवनिकी करुणा ही करो। बहुरि ऐसा विचार हू मत करो जो यो बहुत जीवैगा तो पापका बंध करैगा जो इस पापरूप पर्यायतैं छूटि जाय तो याकै बहुत पापका बंध नाहीं होय ऐसी करुणा करकैं हू पापी जीवनिकूं मत मारो जातैं तुम तो समस्तकी दया ही करो। बहुरि ये जीव बहुत दुःख करि पीडित है जो मरण करि जाय तो शीघ्र ही दुःखसों छूटि जाय सो ऐसा मिथ्या विचार हू मत करो जातैं मरण करि जो जायगा तो वर्त्तमानकी पर्याय ही छूटैगी असाताकर्म नाहीं छूटैगा जो यहांतैं छूटि अन्य पर्याय तिर्यंच नरक मनुष्यादिक पावैगा तहां बहुतगुणा रोग दरिद्र प्राप्त होयगा बहुतकाल दुःख भोगैगा बहुत कहने करि कहा है जो कदाचित् सूर्यका उदय पश्चिम दिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल होजाय चंद्रमाकी किरण

उष्ण होजाय अर सूर्यका आताप शीतल होजाय और समस्त पृथ्वी जगतके ऊपरि होजाय अर पाषाणमय भारी गोला जलतैं तिर जाय अर अग्निमैं कमल उपजि जाय अर सूर्यकूं अस्त होतैं दिनका प्रारंभ होजाय सर्पका मुखमैं अमृत होजाय कलहतैं यश होजाय अजीर्णतैं रोग नष्ट होजाय कालकूट जहरके भक्षणतैं जीवना बधि जाय विवादतैं प्रीति बधि जाय तो हू हिंसातैं तो धर्म नाहीं उपजैगा जगतमैं एते नाहीं होने योग्य कार्य होजांय तो हो हू परंतु हिंसाके परिणामतैं तो कोऊ देश कोऊ कालमैं धर्म नाहीं हुआ नाहीं होय है अर नाहीं होयगा। अब यहां कोऊ आशंका करै जो गृहस्थ जिनमंदिर करावै है उपकरण करावै है जिनपूजा करै है इनमैं हू आरंभ ही है अर आरंभ है तहां हिंसा होय ही तातैं जिनमंदिरादिक बनावनेमैं धर्म कैसैं संभवै है? ताकूं उत्तर कहिये है जो गृहस्थ आरंभादिकका त्यागी है अर जाका परिणाम वीतरागतारूप होय धनका उपार्जनादिकसूं विरक्त होयगा ताकूं मंदिरादिक बनावना योग्य नाहीं अर जाका राग धन परिग्रहसूं आरंभसूं घट्या नाहीं अभिमान घट्या नाहीं अपनी जाति कुलादिकमैं ऊंचे होनेके अर्थि अभिमानतैं विख्याततताके अर्थि अपने भोगनिके अर्थि हवेली महल चित्रशालादिक बनावै है बाग बनावै है अनेक अपने विहार करनेके स्थान बनावै है संतानादिकके विवाहादिकमैं बहुत धन लगावै है जाति कुल नगर निवासीनिकूं जिमावै है तिनकूं कोऊ धर्मात्मा शिक्षा करै है जो तुम्हारा राग आरंभादिकतैं नाहीं घट्या तो ये केवल पापबंधके कारण अभिमानादिक पुष्टकरनेवाले पापके आरंभनिकूं त्याग करि जिनमंदिर बनावनेका आरंभ करो। जिसके प्रभावतैं तुम्हारा अशुभ राग घाटि जाय अर आगेकूं तुम्हारे परिणाम वीतरागके सम्मुख होजांय अर अहिंसाधर्मका प्रवर्तन बधि जाय अनेक जीव स्वाध्याय करि शास्त्रश्रवणकरि वीतरागका दर्शन भावना पापाचारका रोकना शील संयम ध्यानकी वृद्धि करना इत्यादिक उत्तम कार्य करि धर्मकी वृद्धि करै। जिनमंदिर है सो अहिंसाधर्मका आयतन है जिनमंदिरका निमित्तसूं अनेक जीव पापाचार छांडि जिनमंदिरमैं आवै तादि जिनधर्मके शास्त्रश्रवण करै तादि अपना अर परद्रव्य-

निका भेदविज्ञान उपजै तादि मिथ्यादेव मिथ्यागुरु मिथ्याधर्मकी उपासना छांडि सर्वज्ञ वीतरागके धर्ममैं प्रवर्तन करै तादि हिंसादिक पापनितैं सप्तव्यसनतैं अन्यायतैं अभक्षतैं विरक्त होय वीतरागके ध्यानमैं पूजनमैं कायोत्सर्गमैं सामायिकमैं संयममैं उपवास शील संयम दान व्रत प्रभावनामैं लीन होय मोक्षमार्गमैं प्रवर्तन करै तातैं ऐसा निश्चय जान हू जिनमंदिरका निमित्त विना मोक्षमार्ग नाहीं प्रवर्तै तातैं जापुरुषनै जिनमंदिर कराया सो बहुत जीवनिका उपकार किया। बहुरि आपका हू बडा उपकार है आप करावनेवालेका परिणाम सुलटे मार्गमैं लगि जाय है जो मैं जिनेन्द्र वीतरागका मंदिर कराया है अब जो मैं अन्यायमार्ग चलूंगा तो जगतमैं निंद्य हो जाऊंगा। मैं अभक्ष्य भक्षण कैसैं करूं झूठ कैसैं बोलूं व्यसनिमैं प्रवृत्ति कैसैं करूं कलह करना गाली देना लोकनिंद्यकर्म करना ये अयोग्य दुराचार तो लोकलाजतैं ही अति दूर जाता रहै है अर परिणाम ऐसा होजाय जो मंदिरमैं मैं मंदिर करानेवाला ही प्रवर्तन नाहीं करूंगा तो और कौन प्रवर्तैगा ऐसा विचार करि अभिषेकमैं जिनपूजनमैं शास्त्रश्रवणमैं जापमैं व्रतमैं जागरण भजनमैं प्रवर्तन लगि जाय तादि आपके धर्ममैं अतिप्रीति बधि जाय शास्त्रके वाचनेवालेनितैं शास्त्रश्रवण करनेवालनितैं धर्ममैं प्रीति करनेवाले साधर्मीनिसूं सिद्धांतकी चर्चा कथनी करनेवालेनिमैं अनुराग बधता चल्या जाय पढनेवालेनिसूं अतिहर्ष बधै। बहुरि आज मंदिरमैं पूजन कौन कौन किया दर्शनमैं कौन कौन आवै है यहां व्याख्यानमैं कौन २ बैठे है आज उपवासवाले केतेक हैं अबकैं बेला तेला कौन कौन किया प्रोषधोपवासवाले केतेक हैं जागरणमैं केतक लोग लुगाई प्रवर्तै हैं भजन गान बहुत सुंदर भये ऐसैं धर्मकी प्रवृत्ति देखि बहुत आनंद बधै समस्त साधर्मीनिमैं वात्सल्यता दिन दिन बधै अर हजारां लोग लुगाईनिमैं प्रभाव जैसैं जैसैं प्रगट होय तैसैं तैसैं धर्मानुराग बधता चल्या जाय। बहुरि गृहचारका नुकता व्योहार विवाह करना वस्त्र बनावना आभरण बनावना अपने रहनेका जायगामैं मकान बनावना चित्राम करावना सुवर्ण लगावना इत्यादि रागके

बधावनेवाले पाप कार्यनिमैं तो प्रीति घटि जाय है जो इनकरि कहा प्रयोजन है कौनकूं दिखवना है पापका कारण है निंद्य है ऐसा विराग आजाय है लज्जा आजाय जो पाप कार्यकूं कहा दिखाऊं ? जो एता धन मन्दिरमैं लगाऊं तो बहुत जीवनिकै बहुत कालपर्यंत धर्ममैं अनुराग बधै ऐसा विचार जो धन लगावै सो मंदिरके उपकरणनिमैं सिंहासन छत्र चामर भामंडल घंटा ठोणा कलश तथा थाल रकाबी झांरी धूपदहनादिक समवशरणादि अनेक उपकरण सुवर्ण रूपाके कांसीके पीतलके उपकरणनिमैं धन लगाय आपकै धर्मात्माजननिकै धर्ममैं अनुराग बधावै तथा गदेला चांदनी पडदा सायबान इत्यादिकनिकरि साधर्मी धर्मसेवन करनेवालेनिका वडा वैयाव्रत्य होय है तथा विवाहादिकमैं लगाया धनतैं ऐसी कीर्ति उच्चपना प्रकट नाहीं होय जैसा मन्दिर करानेवालेका बहुतं कालपर्यंत कीर्ति (यश) प्रकट हो जाय अपने देशके समस्त लोक पूजन प्रभावना दर्शन धर्मश्रवण करि महान पुण्य उपार्जन करै हैं। यहां कोऊ कहै मंन्दिर करावना उपकरण कराय जिनमंदिरमैं मेलना अपना अर अन्यका उपकार तो करै हैं परंतु मंदिर करावनेमैं छहकायके जीवनिकी हिंसा तो धर्मके घात करनेवाली होय ही। ऐसैं कहनेवालेकूं उत्तर करिए है—यामैं हिंसा नाहीं होय है हिंसा तो अपना जीवघातकरनेकी परिणाम होयगा तादि होयगी। मंदिर करानेवालेके हिंसा करनेका परिणाम नाहीं है अहिंसाधर्ममैं प्रवृत्ति करनेका परिणाम है जैसैं मुनीश्वरनिकूं यत्नाचारतैं आहार देता गृहस्थके हिंसा नाहीं तथा जैसैं साधुनिकी बंदनाके आर्थि वा धर्मश्रवणके आर्थि गमन करता गृहस्थके हिंसा नाहीं होय है तथा जैसैं नित्य विहार करता ईर्यापथ सोधि गमन करता मुनीश्वरनिके हिंसा नाहीं है तथा मुनीश्वर नित्य उपदेश करै हैं गमन करै हैं शयन करै हैं उठै हैं बैठै हैं आहार करै हैं निहार करै हैं बंदना करै हैं कायोत्सर्ग करै हैं तीर्थ बंदना गुरुवंदनाकूं जाय हैं तिन कार्यनिमैं हिंसक परिणामविना जीवकी विराधना होते हू हिंसा नाहीं है जीवनि करि तो समस्त धरती आकाश समस्त वस्तु भऱ्या है परंतु कषायके वशि होय दयाभाव रहित होय

प्रवर्तन करैगा तिसकै जीव मरो वा मत हिंसा ही है। जातैं अपना परिणाममैं दया नाहीं। हिंसा भाव अर अहिंसाभाव तो जीवके परिणाम है बाह्यमैं जीवका घात अघातके आधीन नाहीं सो पूर्वैं बहुत वर्णन किया है। अब यहां मन्दिर बनावनेवालेका परिणाम विचारो जाकूं हवेली बनावनेमैं बाग बनावनेमैं कूआ बावडी बनावनेमैं महाहिंसा दीखै है अर जिसकै लाभ घट्या हैं धनसूं ममता टूटी है पापतैं भयभीत भया है सो मंन्दिर करावै है। पाहिले गृहस्थके व्यापारनिमैं तो प्रवर्तनि करै था तादि दयाधर्मकूं याद हू नाहीं करै था अब सब काममैं धर्महीसूं परिणाम जोडै है जो यत्नसूं करो यो मन्दिरको काम है जल दोहरा नातणासूं छान २ लगावै है। कली चूना तगार दो दिन सिवाय नाहीं राखै दो दिनमैं उठावनेमैं यत्न करै है अर उठावना मेलना धरना इनमैं अपना परिणाम तो यही राखै है जो यत्नसूं करो विरधनाकूं टालो। इत्यादिक कार्यनिमैं हिंसाका परिणाम तो नाहीं करै है अपना परिणाम तो धर्मके आयतन बनावनेका है जो धर्मका स्थान बनि जायगा तो यामैं अखंड अहिंसाधर्म प्रवर्तैगा अर यो मंदिर है सो महान धर्मको आयतन है गृहसंबंधी बहुत हिंसा आरंभ घटाय परिणामनिमैं दयारूप प्रवर्तनमैं यत्न किया है मंदिरमें पग धरतां प्रमाण ईर्यापथ सोधि चालो यो मंदिर है मत विराधना हो जाओ। मंदिरमैं प्रवेश किए पीछैं जैनीनिकै इतने त्याग तो विना करै ही है—भोजनका त्याग जलपान का त्याग विकथाका त्याग गालीका त्याग शयनका त्याग पवनलेनेका त्याग बनज करनेका त्याग इत्यादिक पापबंधके कारण समस्त दुराचारका त्याग होय है तातैं जिनमंदिर तो समस्त प्रकार अहिंसा धर्महीका प्रवर्तक जानना जामैं आरंभ विषय कषायनिका त्याग करनेकी ही महिमा है। ऐसैं मांसादिका त्यागरूप मूलगुण कहि अब तीन प्रकार गुणव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणं। अनुबृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ६७ ॥

अर्थ—आर्य जे भगवान गणधरदेव हैं ते दिग्व्रत अनर्थदण्डव्रत भोगोपभोगपरिमाण ये तीन

वृत हैं ते तिन अणुवृतनिकूं गुणकाररूप बधावनेतैं गुणवृत कहै हैं। दश दिशानिमें गमन करनेकी मर्यादा करना सो दिग्वृत है ॥ १ ॥ अर जिनके कुछ कार्य तो सधै नाहीं अर जिनतै सासतो पाप होय बिना प्रयोजन दंड भुगतना पडै सो अनर्थदंड है, अनर्थदंडनिका त्याग सो अनर्थदंडविरति नामका गुणवृत है ॥ २ ॥ अर एकबार भोगनेमैं आवै सो भोग अर बारम्बार भोगनेमैं आवै सो उपभोग कहिए है, भोग उपभोगनिका परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाणवृत है ॥ ३ ॥ अब दिग्वृत नाम गुणवृतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्यामि । इति संकल्पो दिग्वृतमामृत्यणुपापविनिवृत्त्यै ॥ ६८ ॥

अर्थ—दश दिशानिका समूहमैं परिमाण करिकैं अर परिमाण करी तातैं बाहर मैं नाहीं गमन करूंगा अणुमात्र हू पापतैं निवृत्तिके अर्थि इसप्रकार मरणपर्यंत संकल्प करना सो दिग्व्रत नाम गुणव्रत है। भावार्थ—गृहस्थ है सो अपना प्रयोजन जानै जो हमारे इस दिशामैं एता क्षेत्रतैं अधिक बनज व्यौहारका प्रयोजन नाहीं तथा इस दिशामैं एता क्षेत्र सिवाय मोकूं व्यौहार नाहीं करना लोभनाशकै अर्थि अहिंसाधर्मकी वृद्धिके अर्थि ऐसा विचार करि मरणपर्यंत दश दिशानिमैं मर्यादा करि बाहर जावनेका कोऊको बुलावनेका भेजनेका वस्तु मंगावनेका त्याग करि लोभकूं जीतना सो दिग्वृत नाम गुणवृत है। अब दश दिशानिकी मर्यादा कौन परिमाणतैं करिए यातैं सूत्र कहै हैं—

मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः । प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥ ६९ ॥

अर्थ—दश दिशानिकी मर्यादारूप संकोचविषै प्रसिद्ध विख्यात मर्यादा परमागमविषै समुद्र नदी पर्वत वन देश योजन कहे हैं। मरणपर्यंत मर्यादाबाह्यक्षेत्रमैं गमनागमनादि नाहीं करै समुद्रादिक लोक विख्यात चिह्नतैं मर्यादा करै। अब दश दिशाकी मर्यादा धारण करनेवालेकै कहा होय सो कहै हैं—

अवधेर्बहिरणुपापं प्रतिविरतेर्दिग्वृतानि धारयताम् । पञ्चमहावृतपरिणतिमणुवृतानि प्रपद्यन्ते ॥ ७० ॥

अर्थ—दिग्व्रतानिनै धारण करते गृहस्थनिकै मर्यादा बाहर अणुमात्र हू पापप्रवृत्तिकी विरक्ततातैं अणुव्रत हैं ते ही पंच महाव्रतनिकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। भावार्थ—जो गृहस्थ दश दिशानिकी मर्यादा करिकैं रहै है ताकै मर्यादामांहि तो अणुव्रत रह्या अर मर्यादाबाहर समस्त त्रसस्थावरनिकी हिंसादिक पंच पापनिके त्यागतैं अणुव्रत ही महाव्रतपनाकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। अब या कहै हैं जो सम्बर कियो तितना क्षेत्र बाहर अणुव्रत हैं ते महाव्रतका परणतिकूं प्राप्त होना ही कैसैं कहो हो? मर्यादा बाहर साक्षात् महाव्रती कहो, ताकूं उत्तर करनेरूप सूत्र कहै हैं—

प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः। सत्त्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥ ७१ ॥

अर्थ—अणुव्रती गृहस्थकै सकलसंयमका विरोधी जो प्रत्ययाख्यानावरणका उदयका मंदपनातैं मंदतर चारित्र मोहका परिणाम सत्त्वेन दुरवधारा कहिये अस्तिपनाकरि महा कष्टकरिकै हू धारण नाहीं किया जाय तातैं महाव्रतके अर्थि कल्पना करिये है। भावार्थ—जाकै चारित्रमोहकर्मकै मंदउदयका परिणाम संज्वलनकषायरूप होय ताकै तिसकालमैं महाव्रत होय है अर गृहस्थ देशव्रतीकै प्रत्याख्यानावरणका उदय विद्यमान है तातैं संज्वलन कषायका मंदउदयरूप परिणाम कष्टतैं हू होना दुर्लभ है तातैं समस्त पापनिका त्याग होते हू महाव्रत नाहीं होय है। महाव्रतकी कल्पना ही करिये है। महाव्रत तो प्रत्याख्यानावरण कषायका उदयका अभावतैं होय हैं। अब महाव्रत कैसैं होय सो कहै हैं—

पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचःकायैः। कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महतां ॥ ७२ ॥

अर्थ—हिंसादि पंच पापनिका मनवचनकायकरि कृतकारितअनुमोदनाकरि त्याग सो महंत पुरुषनिके महाव्रत होय हैं। अब दिग्व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनां। विस्मरणं दिग्विरतेरत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥ ७३ ॥

अर्थ—दिशानिकी मर्यादा करी तिनमैं अज्ञानतैं वा प्रमादतैं पर्वतादिक ऊपरि चढावना सो ऊर्द्ध्वा-

तिपात अतीचार है। कूप बावडी इत्यादिकनिमैं नीचैं उतरवो सो अधःआतिक्रम है। तिर्यक् गुफादिकनिमैं प्रवेश करना सो तिर्यग्व्यतिक्रम है। बहुरि क्षेत्र बधाय लेना सो क्षेत्रवृद्धि अतीचार है। त्याग किया तिसका विस्मरण हो जाना सो विस्मरण नाम अतीचार है। ये दिग्वूतके पंच अतीचार हैं। अब अनर्थदंडत्यागवूत कहनेकूं अष्ट सूत्र कहै हैं—

अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थकेभ्यः सपापयोगेभ्यः। विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥ ७४ ॥

अर्थ—आप जो दिशानिकी मर्यादा करी ताके मांहि वृथा जे मनवचनकायके योगनिकी प्रवृत्ति तिनतैं विरक्त होना ताहि वूतधरनिमैं अग्रणी जे भगवान ते अनर्थदंडवूत कहै हैं। भावार्थ—मर्यादा करि लीनी तहां हू ऐसा कर्म करै जातैं अपना प्रयोजन हू नाहीं सधै अर वृथा पापका बंध होय दंड भुगतना पडै सो अनर्थदंड है सो अनर्थदंड त्यागने योग्य है जातैं जिसके करनेतैं अपना विषयभोग हू नाहीं सधै कुछ लाभ हू नाहीं होय यश हू नाहीं होय धर्म हू नाहीं होय अर पापका बंध निरंतर होय जाका फल कडवा दुर्गतनिमैं भोगना पडै सो अनर्थदंड त्यागने ही योग्य है। अब अनर्थदंड पांच प्रकार है तिनकूं कहै हैं—

पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पंच। प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥ ७५ ॥

अर्थ——पापका उपदेश हिंसादान अपध्यान दुःश्रुति प्रमादचर्या ए पंच अनर्थदंड हैं तिनने अदंडधर जे गणधर देव हैं ते कहै हैं। भावार्थ—अशुभ मन वचन कायके योग तिनकूं दंड कहिये है, जातैं समस्त जीवनिकूं अपने अपने अशुभ मनवचनकायके योग ही दुर्गतिनिमैं नानाप्रकार दंड दे हैं तातैं अशुभ मनवचनकायकूं दंड कहिये, ताकूं अदंडधर जे अशुभ योगनिकूं नाहीं धारैं ऐसे गणधरदेव हैं ते पांच प्रकार अनर्थदंड कह्या है। पापका उपदेश देना सो पापोपदेश ॥ १ ॥ हिंसाके उपकरणनिका दान सो हिंसादान ॥ २ ॥ खोटा ध्यान सो अपध्यान ॥ ३ ॥ खोटा श्रवण करना सो दुःश्रुति ॥ ४ ॥ प्रमा-

दरूप चर्या करणा सो प्रमादचर्या ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार अनर्थदंड हैं। पापोपदेश नाम अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

तिर्य्यक्क्लेशवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम्। प्रसवः कथाप्रसंगः स्मर्तव्यः पाप उपदेशः ॥ ७६ ॥

अर्थ—जे तिर्यंचानिके क्लेश उपजनेकी तथा बनज कहिये बेचनेकी खरीदनेकी अर हिंसाकी अर आरंभकी अर प्रलंभ कहिये कपट ठगपनाकी इत्यादिक पाप उपजनेकी कथामैं वारंवार प्रवृत्तिरूप उपदेश करनेतैं पापोपदेश नामा अनर्थदंड है। भावार्थ— तिर्यंचनिकूं मारनेका डाहनेका दृढ बांधनेका मर्मस्थानमैं पीडा करनेका बहुत बोझ लादनेका बाधी करनेका नाशिका फोडनेका तिर्यंचनिको पकडनेका पिंजरेनिमैं रोकनेका जो उपदेश सो तिर्यक्क्लेश नाम पापोपदेश है, तथा अनेक वस्तुनिमैं पाप उपजानेवाला बनजका उपदेश तथा जिनतैं छहकायके जीवनिकी हिंसा होय ऐसा उपदेश सो हिंसोपदेश है, अर बाग बनावना जायगा बनाबना विवाह करना इत्यादि पापके आरंभका उपदेश सो आरंभोपदेश, अर कपट छल करनेका उपदेश सो प्रलंभनोपदेश है, अनेक प्रकार पापरूप उपदेशकी कथा करना पापमैं प्रेरणा करना, सो पापोपदेश नाम अनर्थदंड है। अब हिंसादान नामा दूजा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधशृङ्गिशृङ्खलादीनां। वधहेतूनां दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः ॥ ७७ ॥

अर्थ—हिंसाका कारण जे फरसी खडग कुदाल अग्नि आयुध विष बेडी सांकल इत्यादिकनिका दान ताहि ज्ञानी हैं ते हिंसादान नाम अनर्थदंड कहै हैं। जिनतैं हिंसा ही उपजै ऐसा वस्तुका अन्यकूं देना फावडा कुदाल खुरपा कुशि हथोडा तरवार छुरी कटारी तमंचा भाला बाण धनुष बंदूक तोप दारू गोला गोली चाबुक दांतला दतीला बेडी सांकल जहर अग्नि इत्यादिक वस्तुकूं दान करना मांगी देना बेचना भाडै देना सो समस्त हिंसादान नाम अनर्थदंड है। अब अपध्यान नामा अनर्थदंडकूं कहै हैं—

वधबन्धच्छेदादेर्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः । आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥ ७८ ॥

अर्थ—जो वैरतैं वा अपने विषय साधनेके रागतैं परकी स्त्री पुत्रादिकनिका बंधन मारण वा छेदनादिकका चिंतवन ताहि जिनशासनविषै प्रवीण हैं ते अपध्यान नामा अनर्थदंड कहै हैं । भावार्थ—जाकै रागद्वेषतैं ऐसा परिणाममैं चिंतवन रहै जो याका पुत्र मर जाय याकी स्त्री मरजाय याकै दंड होजाय याका हस्त नाक कर्ण छेद्या जाय याका धन लुट जाय याकी आजीविका नष्ट होजाय याकी इंन्द्रियां नष्ट होजायं याका लोकमैं अपवाद होजाय यो स्थानभ्रष्ट होजाय बुद्धिभ्रष्ट होजाय ऐसा चिंतवन वारंवार करै ऐसैं अन्यके दुःख आपदा चाहना अपने कुछ लाभादिक होय नाहीं आपका चिंतवनतैं कुछ होय नाहीं अपने वृथा महापापका बंध होय अन्यका बुरा भला आपका पापपुण्यके अनुकूल होय है वृथा दुर्ध्यान करै ताकै अपध्यान नामा अनर्थदंड कहिये है । अब दुःश्रुति नामा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आरम्भसंगसाहसमिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनैः । चेतः कलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥ ७९ ॥

अर्थ—आरम्भ कहिए असि मसि कृषि विद्या वाणिज्य शिल्प अर संग कहिए धन धान्यादिक परिग्रह अर साहस कहिए आश्चर्यकारी वीरकर्मादिक अर मिथ्यात्व कहिए ब्रह्माद्वैत ज्ञानाद्वैत क्षणिक याज्ञकादिक विरुद्ध अर्थका प्रतिपादक शास्त्र अरु राग कहिये आसक्तता द्वेष कहिये वैर अष्ट मद अर कामवेदनाकृत विकार इनकरि चित्तकूं कलुषित करनेवाले ऐसे अवधि जे शास्त्र तिनको जो श्रवण सो दुःश्रुति नामा अनर्थदंड है । भावार्थ—जो मिथ्यात्व राग द्वेषका उपजानेवाला पदार्थनिका विपर्यय स्वरूप ग्रहण करावनेवाला शास्त्रका विकथाका श्रृंगार वीर हास्यका प्ररूपक तथा मारण उच्चाटन वशीकरण कामका उत्पादक शास्त्रनिका श्रवण करना तथा जांगलिक सर्पनिका भूतनिका रसकर्म इंद्रजाल रसायण मायाचारादिके प्ररूपक यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक दुष्टशास्त्र दुष्टकथा दुष्टराग दुष्टचेष्टा दुष्टक्रिया

दुष्टकर्मनिका श्रवण करना सो दुःश्रुति नामा अनर्थदण्ड है। अब प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्डकूं कहै हैं–

क्षितिसलिलदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदं। सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥ ८० ॥

अर्थ–पृथ्वी खोदनेका पाषाणादिक फोडनेका आरम्भ, जलपटकनेका सींचनेका छिडकनेका जल विलोवनेका अवगाह करनेका आरम्भ, विना प्रयोजन अग्नि बधावनेका बालनेका बुझावनेका दाबनेका आरम्भ, पवन घालनेका पवनके यंत्र रोकनेका अग्निमैं धमनेका वृथा आरम्भ, तथा प्रयोजन विना बनस्पतिका छेदना तथा विना प्रयोजन गमन करना विना प्रयोजन गमन करावना ते समस्त प्रमादचर्या नामा अनर्थदंड कह्या है। यहां ऐसा विशेष जानना, गृहस्थके गृहाचारामैं अनेक पापहीके आचरण हैं जो गृहाचारके पापतैं निराला नाहीं हुआ जाय तो जिनसूं कुछ प्रयोजन तुम्हारा सिद्ध नाहीं होय ऐसैं विना प्रयोजन पापबंधका कारण जिनका फल दुर्गतिनिमैं असंख्यातकाल अनंतकाल दुःख भोगो ऐसे निंद्यकर्म तो छोडो जो उत्तम कुलमैं जिनेंद्रको उपदेश उत्तमधर्म अतिदुर्लभ पायो है तो विना प्रयोजनके पाप बंधतैं भयभीत होना योग्य है पशुकी ज्यों जन्म वृथा मत व्यतीत करो आपका घरका पापतैं नाहीं छूट्या जाय तो अन्यकूं ऐसा पापका उपदेश मत करो गृह जायगा बणावनेमैं महा हिंसा होय है, यातैं गृह बनावनेका जायगा धवल करावनेका जायगाकी मरम्मत करावनेका बागबगीचा बनावनेका रोडीखुदावनेका गली खुदावनेका कुआ बावडी बनावनेका तालाव खुदावनेका जल निकासनेका तालावकी पाल बंधावनेका तालाबकी पाल फुडावनेका नदीकी पाल बंधावनेका बना हुआ मकान गृह डहावनेका बागबगीचा डहावनेका वृक्ष कटावनेका बनकटी करावनेका कोयला बनावनेका घास खुदावनेका दाहलगावनेका मिथ्या देवनिका मकान बनावनेका मिथ्या देवतानिका मंदिर तथा मूर्तिका विगाडनेका खेती करनेका सुंदर मकानकूं मलीन करनेका कदाचित् उपदेश मत करो। तथा तिर्यंचनिके

दुःख होनेका मारनेका दृढ बांधनेका दाघी करनेका डाह देनेका नाशिका फोडनेका उपदेश मत करो
मनुष्य तिर्यंचानिके भोजनपानके रोकनेका बंदीगृहमें धरनेका संतानानितैं वियोग करनेका पक्षीनिकूं
पिंजरानिमैं धरनेका सर्प बीछू सिंह व्याघ्र मूसा न्योला कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवनिके मारनेका
जूवां लीखां मारनेका उटकण खटमल मारनेका खाट तावडै देनेका छिडकाव करावनेका जीवनिके
पकडने मारनेके यंत्र जाल बनावनेका उपदेश मत करो। खोटे पापरूप शास्त्र पढनेका जिन शास्त्रनिमें
शृंगार मायाचारादिककी अधिकता मिथ्या श्रद्धान करानेवाले जिनग्रंथनिमें मारणक्रिया विष बनावने-
की क्रिया मारण उच्चाटन वशीकरण मंत्र तंत्रादिक तथा इंद्रजालादिक अनेक कपटनिका उपदेश तथा
रसनिका दग्ध करना रसायण करना इत्यादिक पापके शास्त्र वीररसके शास्त्र हिंसाप्रधान क्रियाके शास्त्र
मत पढो अन्यकूं उपदेश मत करो तथा अभक्ष्य भक्षण करनेका रात्रिभोजन करनेका झूठ बोलनेका
चुगली करनेका चोरी करनेका खोटी साख भरनेका व्याभिचार करावनेका व्यवहारादिक महाआरम्भ
करनेका रोशनी प्रज्वालित करनेका दारूके (बारूदके) छुडावनेके तथा बागबागीचा देखवेकूं प्रेरणा
करनेका उपदेश मत करो।

तथा इस देशतैं दूसरे देशमें व्यौपार बहुत है वहां जावो ऐसा उपदेश मत करो। तथा परिणा-
मनिमें दुर्ध्यानके कारण ऐसा मेला ख्याल कौतुक व्यभिचारादिक कर्म मनुष्यतिर्यंचनिकी राडि-
कलहादिक देखनेका उपदेश मत करो। तथा युद्धादिक करनेका गाली देनेका परकी आजीविका बिगाडि
देनेका उपदेश मत करो। तथा खोटे गीत गान नृत्य वादित्र कलह विसंवाद श्रवण करनेका उपदेश
मत करो। तथा इस देशमें दासी दास सुलभ है इनकूं अमुक देशमें लेजाय बेचै तो बहुत लाभ होय
ऐसा उपदेश क्लेशवणिज्या है तथा गाय भैंस अश्वादिक अमुक देशतैं ग्रहण करि अन्य देशमें बेचै तो
बहुत धनका लाभ होय सो तिर्यक्वणिज्या है तथा चिडीमार शिकारानिकूं शाकुनीनिकूं ऐसैं

कहै जो अमुक देशमें मृग सूकर पक्षी इत्यादिक जीव बहुत हैं ऐसा कहना सो वधकोपदेश है तथा खेती करनेवालेनिकूं पृथ्वीके आरंभका जल अग्नि पवन वनस्पति छेदनादिकका उपदेश देना सो आरंभोपदेश है ये समस्त पापोदेश त्यागने योग्य हैं। तथा हुक्का जरदा तमाखू भांग अमल छोंतरादिक पीवनेका सूंघनेका खावनेका उपदेश महापापका कारण है सो मत करो जातैं हुक्को जर्दो तो उत्तम कुलके योग्य ही नाहीं जिसतैं जाति कुल भ्रष्ट होजाय धुवांका अर जलका संयोगतैं बहुत जीव हुकाके जलमें उपजैं अर जल महादुर्गंध होजाय अर जहां पडै तहां छहकायके जीवनिकी विराधना ही करै अर चूना ईंट पकावनेका उपदेश मत करो। बहुरि बहुत पापके वानिजका उपदेश मत करो। गाय भैंस बलद ऊंट गाडा गाडीनिका राखनेका उपदेश मत करो। कोऊ दातार मनुष्य तिर्यंचानिकूं भोजन वस्त्र धनादिक देता होय ताके अंतराय मत करो। कुपात्र दानका उपदेश मत करो देतेमें विघ्न मत करो। व्रत भंग करनेका उपदेश मत करो। इत्यादि बहुत कहा कहिये अपने धर्म अर्थ कामना कुछ भी सिद्ध होय नाहीं केवल आपके पापहीका बंध होय ऐसा पापरूप उपदेश मत करो। बहुरि जिनतैं हिंसा बहुत होय ऐसे उपकरण किसीकूं मत द्यो मांगे मत द्यो भाडे मत द्यो प्रीतिकरि मत द्यो मोलकरि मत द्यो जिनके देनेमें किंचित लाभ ही होय तो हू महापापके कारण जानि देना योग्य नाहीं जिनकूं हस्तमें लेते ही दुष्ट परिणाम होजाय घातहीका विचार रहै ऐसे खडग छुरी भाला बाण धनुष बंदूक कटारी इत्यादिक आयुध देना योग्य नाहीं। बहुरि भूमि खोदनेके कारण जिनकरि गलीनिमें रोडीनिमें खेतिनमें बडे बडे जीव सर्प विछू गिंडोला लट कीडा मूसा इत्यादिक जीव कटि जांय छिद जांय कोटनि जीवनिकी हिंसा होजाय ऐसा फावडा कुदाल कुस खुरपा हल मुद्गर हथोडा किसीकूं मत द्यो। तथा अनेक त्रसस्थावरानिकूं चीरनेवाला मारनेवाला परसी कुलहाडा बसोला करोंत दातला दतीला किसीकूं मत द्यो। तथा तिर्यंच मनुष्यनिके मारनेके कारण लाठी घोटा चाबुक चामडा लोढा किसीको मत द्यो।

बहुरि अग्नि विष बेडी सांकल पिंजरा जाल जीव पकडनेका यंत्र किसीको मत द्यो। मार्जार कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवानिकूं अपनाकरि मत पालो। सूआ तीतर बुलबुल कूकडा मैना कबूतर बाज इत्यादिक पक्षीनिकूं पींजरामें रखना पालना मत करो। बहुरि केतेक बहुत पापके उपकरण घरमें हू मत राखो घरमें रहै देखते हू हिंसाके उपकरण परिणाम ही बिगाडे हैं। बहुरि एते निंद्य बानिज हू महा-पापके कारण जिनमें किंचित लाभ होय तो हू पापसूं भयभीत होय त्याग करो लोहा नील मैण लवण लकडा साजी सण सावण लाख चामडा ऊन केश कसूंभा गुड खांड अन्न चावल सिंहाडा शस्त्र दारू गोला सीसा लहसन कांदा आदो जमीकंद तथा घृत तैल आंम नीबू इत्यादिक वनस्पतिकाय भांग तमाखू जर्दा तिल खल काकडा पिंजरा फांसी गांजा चरस दासी दास घोडा ऊंट बलध भैंसा गाडा-गाडी ईंट इनके बेचनेमें खरीदनेमें संचयमें महा हिंसा होय है यातैं त्याग करो। समस्तका त्याग नाहीं बन सके तो यामैं महापाप जानि कोऊ अन्नादिकमैं अल्प संग्रह अल्प प्रमाण राखि अन्य समस्तका तो त्याग करो। बहुरि केतीक खोटी आजीविका महापापबंधकरि दुर्गति लेजाय ते परिहार करो। कोट-वाली करनेकी कोटवालका पियादापनाकी बनकटी करानेकी गाडा गाडी ऊंट बलध भाडे देनेकी ऊंट बलध गाडा गाडी भाडे करानेवाला दलाल यो नाहीं देखै है जो याका कांधा गल गया है कि नासिका गल गई है कि पीठ गल गई है कि पग दूखै है कि याका अंगमैं कीडा पडि रह्या है कि वृद्ध है कि रोगी है ऐसा विचार भाडाकी दलालीवालाकै नाहीं है चतुर्मासमैं भी बहुत बोझ लदाय दे अर भाडाकी आजीविका अर भाडाकी दलाली दोऊ महापाप हैं अर लोभकै वश होय वृद्ध पुरुषका व्याह सगाई मत करावो। राजका हासिल मत चुरावो।

तथा अन्य अपराधीकी चुगली खानेकी झूठी साखि भरनेकी गवाही होजानेकी वैद्यपनाकी आजीविका मत करो जंत्र मंत्र भूत भूतणी डाकनिके इलाज करनेकी रसायणादिक धूर्त्ताईतैं दिखाय ठग

लेनेकी आजीविका मत करो। यह दुर्गतिको ले जानेवाली है तथा काठ वेचनेवाला मादिरा करनेवाला कलाल कषायी धोबी चमार ईंट चूना पकावनेवाला नीलगर जुवारी घसियारा घास खोदनेवाला इनकूं व्याजपर धन मत दो। मांसभक्षीनिकूं वेश्यानिकूं निंद्यपापकी आजीविका करनेवालेनिकूं व्याजपर रुपया मत दो अपना मकान भाडे मत दो। बहुरि अशुभ परिणामके धारक अन्य मार्गी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामैं आसक्त परस्त्रीलंपटी अधर्मीनितैं मित्रता प्रीति करनेका हू त्याग करो। परके दोष ग्रहण मत करो। अन्यकी लक्ष्मीमैं बांछा मत करो अन्यकी लक्ष्मीकूं देखि आश्चर्य मत करो अपना दीनपना मत चिन्तवन करो अन्यकी स्त्रीके देखनेमैं अभिलाषा मत करो। अन्य मनुष्य तिर्यंचनिकी कलह मत देखो। अन्यके पुत्रका स्त्रीका वियोगकी बांछा मत करो। परका अपमान अपयश अपवाद सुनि हर्षित मत होहू। अन्यकै लाभ देख विषाद मत करो। अन्यके रससहित भोजन आभरणादिक देखि अपने परिणाममैं दुःखित मत होहु। आपकै दारिद्र वियोग रोग होते आर्तपरिणामकरि क्लेशित मत होहु धनवाननिसूं ईर्षा मति करो। बहुरि कोऊ सिंघ व्याघ्र सर्पादिकनिकी शिकार चिंतवन मत करो। कोऊका संग्राममैं जय पराजय मत चाहो। परकी स्त्रीका संसर्ग वचनालाप करनेमैं वेश्यादिकनि-का हावभाव नृत्यका विलास देखनमैं अभिलाषा मत करो। गाली भंडवचन लिए गीत मत सुनो। खोटे राग सांग कोतूहल परिणाम मलिन करनेका कारणका श्रवण देखना दूरहीतैं छांडो। दारिद्र आवते हू नीच प्रवृत्तिकरि आजीविका मत करो किसीतैं याचना मत करो दीनता मत भाखो निर्धनपणाकूं होते हू प्रवृत्ति विकाररूप मत करो। नीच कुलवालेनिके करनेयोग्य वस्त्र रंगणा धोवना इत्यादिक निंद्यकर्म करनेका परिहार करो। बहुरि जिनालय आदिक धर्मके स्थाननिमैं स्त्रीनिका कथा राजकथा चोरकथा देशकथा महापापबंध करनेवाली कथा कदाचित् मत करो। बहुरि लेन देन व्याह सगाईका झगडा तथा न्याय पंचायती जिनमंदिरमैं बैठि जाति कुलका विसंवाद कदाचित् मत करो। मन्दिरमैं बैठि करोगे

तो धर्मस्थानकी मर्यादा तोडनेतैं नरक निगोदका कारण घोरकर्मका बंध होयगा तातैं धर्मायतनमैं पापका बधावनेवाला कर्म दूरहीतैं त्याग करो। बहुरि जिनमंदिरमैं भोजनपान तांबूल गंध पुष्प विषयादिक तथा शयन उच्चासन वानिज सगाई झगडा गालीके वचन हास्यके वचन अविनयके वचन आरम्भके वचनादिकमैं कदाचित् प्रवर्तन मत करो। बहुरि मिथ्याश्रुतका श्रवण मत करो जिनके श्रवणतैं विषयनिमैं राग बधै हास्य कौतुक उपजे काम जाग्रत होजाय भोजनके नाना स्वादनिमैं चित्त चालि जाय ऐसी कथनी श्रवण मत करो। तथा स्त्रीपुरुषनिके पापरूप चारित्रकी कथा तथा भूतप्रेतनिकी असत्य कथा तथा हिंसाकी प्रधानताके धारक वेद स्मृत्यादिककी कथा तथा कपोलकल्पित अनेक कहानी तथा फारसी किताबानिका लिख्या तिनकूं किस्सा कहै हैं ते महा दुर्ध्यानके करनेवाले श्रवण मत करो तथा भारत रामायणादिकनिकी कल्पित कथा कदाचित् श्रवण मत करो। बहुरि कषायनिके उत्पन्न करनेवाले क्रोधीनिके वचन अभिमानीनिके मदके भरे वचन मायाचारीनिके कुटिल वचन लोभीनिके लालसा उपजावनेवाले वचन मद्यमांसअभक्ष्यके स्वादकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मद्य अमल भांग तमाखू हुकानिकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मत श्रवण करो। बहुरि धर्मके अभाव करनेवाले परलोकादिकके अभाव कहनेवाले नास्तिकनिके वाक्य पापबंधके कारण मत श्रवण करो। बहुरि वृथा आरम्भ विसंवादकूं छोडो तथा माटी कजोडी कर्दम कांटा ठीकरा मल मूत्र कफ उच्छिष्ट जल अग्नि दीपक इत्यादिक भूमिकूं देखे विना मत पटको तथा शीघ्रतासूं पाषाण काष्ठ आसन शय्या पर्यंक धातुका पात्र चरवा चरी तबला परात चौकी पाटा वस्त्रादिकनिकूं जमीन ऊपरि घींसकरि रगडकरि प्रमादतैं मत सरकावो यामैं बहुत जीवनकी हिंसा होय है यत्नाचारका अभाव है तातैं देखि यत्नतैं उठावो मेलो। बहुरि बिना प्रयोजन भूमिका कुचरना वृक्षकी डाहलीनिका मोडना हरित तृणादिककूं छेदना मर्दन करना वृक्षनिके पत्र पुष्पादिकनिकूं चीरना तोडना वृथा जल पटकना इत्यादिक पापतैं भयभीत होय मत करो। बहुत कहा

कहिये गृहाचारामैं जेता वस्तु पात्र अन्न जलादिक हैं तिनकूं देख करि धरो जैसैं धर्म नाहीं बिगडै उजाड बिगाड नाहीं होय तैसैं करो। प्रमाद छाडि भोजनपान औषधि पकवानादिक नेत्रनितैं देखि सोधि भक्षण करो। शीघ्रतासूं प्रमादी होय विना सोध्या भोजन मत करो। गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं देखे विना सोधे विना प्रवर्तन मत करो। जातैं दया पलै अर अपना शरीरकै बाधा नाहीं होय हानि नाहीं होय तथा प्रमादी होय हित अहितका विचार किये विना सुपात्र कुपात्रका विचार विना किसीकूं वार्ता मत कहो कहनेमैं गुणदोषका विचार करि कहो। अर कोई आपकूं पूछै तो शीघ्रतासे उत्तर मत द्यो याही कहो मैं समझ करि विचार करि आपकूं जबाब देस्यों पाछैं अवकाश पाय धर्मअर्थकामसूं अविरुद्ध विचार विनयसहित उत्तर करो शीघ्रतातैं उत्तर देनेमैं उस कालमैं क्रोधमानमायालोभके वशतैं वचन निकसनेका ठिकाना नाहीं कषायके उदयतैं योग्य अयोग्य कहनेका विचार नाहीं रहै है अन्यका वाक्य हू परिपूर्ण श्रवण करि लेवे तथा कहनेका समस्त अभिप्राय जाननेमैं आजाय तदि उत्तर करना योग्य है तातैं प्रमाद जो असावधानतातैं वचन मत कहो। एकांतरूप हठग्राही पक्षपाती मत होहु धर्म विगडि जायगा तातैं दोऊ लोकके हितके अर्थी हो तो प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्ड छोडो ऐसैं पंच प्रकार अनर्थदण्डनिकूं समझ करि त्याग करै तातैं अनर्थदण्ड त्याग नामा वृत होय है।

बहुरि अनर्थदंडनिमैं महा अनर्थकारी द्यूतक्रीडा है जूवा समस्त व्यसननिमैं प्रधान है समस्त पापनिका संकेत स्थान है महान आपदाका कारण है समस्त अनीतिनिमैं महा अनीति है याका परिणाम ही महादुष्ट है जो अपना समस्त घर संपदा जूवामैं संकल्प करिकैं हू अन्यका धन लिया चाहै है जुवारीके एता बडा लोभ है जो कोऊ प्रकार परका धन मेरे आजाय ऐसैं रात्रि दिन चिंतवन करता रहै है मेरा धन जाय तो जावो अपयश होहु मरण होहु दरिद्रता होहु कोऊप्रकार परका धन मैं जीत ल्यूं तदि मेरा जीवतव्य सफल है लोभकषायकी तीव्रता सो ही महाहिंसा है । जुवारीका महा निर्दयी परिणाम

होय है परका घात ही चिंतवन करै है। जो जुवामैं धन हारि जाय तो चोरी करै धनवास्तै मनुष्यनिकूं मारै ही जुवारीनिके परस्पर महाक्लेश होय ही मारामारी होय ही मायचारी होय ही जिनसूं महाप्रीति होय तिनसूं भी महाकपट अनेक छल करि धनग्रहण कऱ्या ही चाहै जुवा कपटका तो स्थान ही है हजारां छल रचै है अपनी स्त्रीनै जुवामैं संकल्प करदे पुत्र पुत्रीनै करदे स्त्रीनै हारजाय पुत्रीनै हारजाय जुवारीनै देदे है जुवारी दरिद्री व्यसनीकूं पुत्री परणाय देहै जुवामैं अपना मकान रहनेका बेच देहै दावपर लगाय देहै तथा पुत्रकूं बेच देहै लक्ष धनका धनी एक क्षणमैं समस्त धन हार दरिद्री होजाय है तादि महाआर्तध्यान रौद्रध्यानतैं मरि दुर्गतिमैं भ्रमण करै है अर धन जीत ल्यावै तो मद उपजै है कुमार्गमैं ही जाका धन खर्च होय है महा रौद्रध्यानके प्रभावतैं मरि महा कुयोनि पाय भ्रमण करै है जुवारी मदपान भंगपानादिक करै है वेश्यामैं आसक्त होय जाय है सुमार्गमैं धन लगै नाहीं जुवारीतैं न्यायरूप अन्य आजीविका नाहीं करी जाय है जुवारीकी प्रतीति जाती रहै है याकूं कोऊ धन नाहीं धीजै है जुवारीके सत्य वचन कदाचित नाहीं होय है। जुवारीके शुभपरिणाम होय नाहीं अपना पूर्वोपार्जित कर्मका दिया न्यायका धनमैं संतोष कदाचित् आवै नाहीं। एकांतमैं एकाकीकूं मारि धन खोस लेजाय है अपना घना नातादार भाई होय ताकूं एकांतमैं मारि आभरणादि ले ही जाय है। जुवारीकी प्रतीति मूरख होय सो हू नाहीं करै है परधनकी अति तीव्र तृष्णाकरि कुदेवनिकी बोलारी बोलै है मिथ्याधर्म सेवन करै है संतोष शील निराकुलताकूं जलांजली दे है अति लोभके परिणामतैं विपरीत बुद्धि होजाय है। परमार्थ जानै नाहीं है। धर्मको श्रद्धान स्वप्नमैं हू नाहीं होय है। समस्त पापनिका मूल जुवाकूं जानि दूरहीतैं त्याग करो। जुवारीकी बुद्धि कोट उपायकरि हू विपरीतता नाहीं छाडै है परलोकमैं दुर्गति ही जाय है। जुवारी तो तीव्रलोभकरि अपना आत्माकूं घात्या है।

बहुरि केतेक अज्ञानी जुवामैं हार जीत धनकी तो नाहीं करै परंतु मनुष्य जन्मकूं वृथा व्यतीत

करनेका इच्छुक धन संकल्प कर तो जुवा नाहीं करै है अर क्रीडाके निमित्त चौपड शतरंज गंजफा इत्यादिक अनेक अविद्या करै हैं तिनके हारमैं अर जीतमैं रागद्वेषकी बडी तीव्रता है हरष विषाद बहुत होय है कपट बहुत करै हैं पिता पुत्र हू परस्पर विसंवाद कलह करै ही हैं परिणाममैं जीतहारमैं तीव्रतानै प्राप्त होय है। या ऐसी अविद्या हैं जो इस क्रीडामैं रचै है ताका इस लोकसंबंधी सेवा बानिज लिखना इत्यादिक समस्त कार्य बिगाडि जाय तो हू छाड नाहीं सकै है जाकै द्यूतक्रीडा है ताकै अन्य उद्यमका अभाव होय है। दरिद्रता नजीक आवै है। हीन नीच मलिन जातिके बरोबर बैठ द्यूतक्रीडा करै है यो नाहीं देखै है यो म्लेच्छ है नाई कलाल धोबी समस्त द्यूतक्रीडामैं सामिल प्रत्यक्ष देखिये हैं जिनकी महा दुर्गंध आवै है वस्त्रानिमैंतैं जूंवां झड झड पडै हैं तिनके बरोबर बैठ रमिये है। अन्य अधर्मनिका स्थानमैं आप जाय बैठै हैं मार्गमैं खेलते देखकर खडा रहजाय बैठनेकूं स्थान नाहीं होय तो आप खडा खडा ही देखै है ऐसा व्यसन है खावना पीवना देन लेन सब छांडि खडा हुआ देखै है मनिहार नीलगर कमनीगर बिसायती समस्त मांसभक्षी नीच कर्मीनिके सामिल ख्याल खेलै देखै है बहुत कहा कहिये अपना सर्व कार्य बिगाडि जाय तथा माता पितादिकका मरण होजाय तो हू इस ख्यालमैंतैं उठ्या नाहीं जाय है ऐसा तीव्र परिणामतैं नरक तिर्यंच बंध होय ही। जामैं धन कुछ नाहीं आवै बडा विसंवाद होय तिस क्रीडामैं तीव्र राचनेतैं धनकी हारजीतवालेतैं हू तीव्र पापका बंध करै है जाकै धनकी हारजीत होय सो तो अल्पकाल राचै है याका परिणाम समस्त कालमैं राचै है इस व्यसनमैं लागै है ताकूं धर्मका नाम नाहीं सुहावै है ताकै बुद्धि विपरीत होय पापक्रियामैं अन्यायमैं असत्यमैं विकथाहीमैं राचै है। देखहु यह मनुष्यजन्म अर उत्तमकुल अर नीरोगशरीर उत्तमधर्म ए अनंतकालमैं नाहीं पाया सो संयोग मिलि गया याका एक एक घडी कोड धनमैं नाहीं मिलै ऐसा अवसर सिद्धांतनिका स्वाध्याय जीवादिक द्रव्यनिकी चर्चा अनित्यादिक द्वादश भावना षोडशकारण भावना पंच परमगुरुका नमस्कार

जाप स्मरणादिककरि सफल करनेका था तानै चौपड गंजफो शतरंज ये महा अविद्यामैं राचि समस्त धर्मतैं धर्मके मार्गतैं पराङ्मुख होय महापाप उपजाय मरजाना यो फल ग्रहण करि तिर्यंच नरकादिकमैं जाय उपजै है। बहुरि ऐसा जानना भगवानका परमागममैं तो सप्त व्यसनका त्याग जाकै होयगा सो ही जिनधर्म ग्रहण करनेका पात्र होयगा जाकै ए व्यसन ग्रहण होजायं तिसकी बुद्धि ही विपरीत होजाय है पाप कार्यनिमैं प्रवीण होजाय है अनीतिमैं तत्पर होजाय है। इस लोकका कार्य तो न्यायमार्गतैं अपने कुलके योग्य षट्कर्मकरि आजीविका करना अर खानपानादिक शरीरका संस्कार तथा न्यायरूप लेना देना धरना जाना आना प्रयोजनरूप करना अर परलोकके अर्थि धर्मकार्यमैं प्रवर्तन करना यही गृहस्थके दोय करने योग्य कार्य हैं इन दोय कार्य विना जो प्रवृत्ति सो ही व्यसन है ते सप्त व्यसन हैं। द्यूतक्रीडा ॥ १ ॥ मांसभक्षण ॥ २ ॥ मद्यपान ॥ ३ ॥ वेश्यासेवन ॥ ४ ॥ शिकार करना ॥ ५ ॥ चोरी करना ॥ ६ ॥ परस्त्रीसेवन करना ॥ ७ ॥ ये महाघोरपापबंधके कारण सप्त व्यसन हैं। इन व्यसननिमैं उलझना सहज है छूटकरि सुलझना बडा कठिन है। इन व्यसननितैं पापबंध ही ऐसा होय है जो बुद्धि ही विपर्ययमैं होजाय है निकस नाहीं सकै है। यहां द्युत व्यसन वर्णन किया याहीमैं होड लगावना है। अब दस बीस बरससे अफीमके फाटकाको व्यौपार हू तीव्रतृष्णाकरि युक्त पुरुषके संतोषका बिगाडनेवाला प्रवर्त्या सो हू जुवाहीमैं गर्भित जानना। बहुरि मांस मद्य शिकार जैनीनिके कुलमैं है ही नाहीं ये लगे पीछैं महा व्यसन हैं परंतु आगै अभक्ष्यनिमैं कहैंगे तथा बीध्या अन्नादिकनिका समस्त भोजन अर चमडाका स्पर्श्या समस्त जल घृत तेल रसादिक रात्रि भोजन इत्यादिक समस्त अभक्ष्य मांसके दोष समान जानि त्यागै ही। बहुरि भांग तमाखू जर्दा (अफीम) हुक्का ये समस्त पराधीन करनेतैं अर ज्ञानके नष्ट करनेतैं परमार्थरूप बुद्धिकूं नष्ट करनेतैं मदिरा समान ही हैं यातैं त्याग ही करना। बहुरि अन्य जीवनिकी दया नाहीं करिके आजीविका बिगाड देना धन लुटाय देना तीव्रदंड

कराय देना सो समस्त शिकार ही है अन्यका मानभंग कराय देना स्थान छुडाय देना सो समस्त शिकारतैं अधिक अधिक है सो त्याग ही करना। बहुरि वेश्यासेवन किया जाका समस्त आचार भोजनपान भ्रष्ट है वेश्याकूं चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमान इत्यादिक समस्त सेवन करे हैं जो वेश्या मांसमद्यका खानपान नित्य ही करै है धनहीतैं जाके प्रीति है ऐसी वेश्याकी मुखकी लाल पीवे है जातिकुल आचार समस्त भ्रष्ट है तातैं त्याग ही श्रेष्ठ है वेश्याका संगम किया तिसके चोरी जूवा मद्यपानादिक समस्त व्यसन होय हैं। समस्त धनकी हानि होय है धर्मतैं पराङ्मुखता होजाय है बुद्धि विपरीत होजाय है मायाचारमैं झूठमैं छलमैं तत्परता होजाय है निंद्यकर्मकी ग्लानि जाती रहै है लज्जा नष्ट होजाय है वेश्याका देखनेमैं हाव भाव विलास विभ्रमादिक देखने चिंतवन करनेतैं अतिरागी होय कुलमर्यादा समस्त भंग करै है वेश्यामैं आसक्त हुआ पुरुष कफविषै पडी मक्षिकाकी ज्यों आपकूं नाहीं छुडाय सकै है महा अनीत है। बहुरि चोरपनाका महा व्यसन है। चोर आप भी निरंतर भयरूप रहै है अर चोरका अन्य जीवनिकै बडा भय रहै है माताकै भी चोरपुत्रका भय रहै है। चोर इस लोकमैं आपकी समस्त प्रतिष्ठा बिगाडि महाकलंकित होय है। राजासूं तीव्रदंड पावै है हस्तनाशिकादिक छेद्या जाय है। चोरका परिणाम संतोषरूप कदाचित नाहीं होय है। चोरके योग्य अयोग्य करने योग्यका विचार ही नाहीं रहै है। याहीतैं धर्मध्यान स्वाध्याय धर्मकथातैं पराङ्मुख रहै है। अर जिनशास्त्रनिका श्रवण पठन करता हू अन्यके धन ऊपर चित्त चलावे है सो ठग है जगतके ठगनेकूं शास्त्ररूप शस्त्र ग्रहण किया है तिसकै धर्मकी श्रद्धा कदाचित् नाहीं जानना जाकै जिनधर्मकी प्रधानता होय है ताकै चारित्रमोहका उदयतैं त्याग व्रत संयम नाहीं होय तो हू अन्यायके धनमें तो बांछा नाहीं चालै है चोरीतैं दोऊ लोक भ्रष्ट होना जानि विना दिया परका धनमैं बांछा मत करो। बहुरि परस्त्रीकी बांछा नाम व्यसन समस्त अनर्थनिमैं प्रधान है परस्त्रीलंपटकै इसलोक परलोकमैं जो घोरपाप आपदा अकीर्ति अपयश मरण रोग

अपवाद धनहानि राजदंड जगतका बैर दुर्गतिगमन मारन ताड़न बंदीगृहमें बंदनादिक होय हैं तिनकूं वचनद्वारे कौन कहनेकूं समर्थ है ? ऐसे सप्तव्यसन दूरतैं ही त्यागो इनके त्यागनेमैं कुछ हानि नाहीं है जानै सप्तव्यसन त्याग किया सो आपका समस्त दुःख अकीर्ति नरकादिक कुगति समस्त आपदाका निराकरण किया। अब अनर्थदंडव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

कंदर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च। असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥ ८१ ॥

अर्थ—चारित्र मोहनीयकर्मका उदयतैं रागभावकी अधिकतातैं हास्यतैं मिल्या हुआ भंडवचन बोलना सो कंदर्प नाम अतीचार है ॥१॥ बहुरि तीव्ररागका उदयतैं हास्यरूप भंडवचनकरि सहित जो कायकी खोटी चेष्टा शरीरकी निंद्याक्रिया करना सो कौत्कुच्य है ॥ २ ॥ अर विनाप्रयोजन बहुत सार-रहित बकवाद सो मौखर्य कहिये है ॥ ३ ॥ अर प्रयोजन रहित अधिकताकरि मनवचनकायको प्रवर्तावना सो असमीक्ष्याधिकरण कहिये है । रागद्वेषकरनेवाला काव्य श्लोक कवित्त छंद गीतनिका चिंतवन सो मन असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। बहुरि पापकथाकरि अन्यके मनवचनकायकूं बिगाडनेवाली खोटी कथा कहना सो वचन असमीक्ष्याधिकरण है। बहुरि प्रयोजन बिना गमन करना उठना बैठना दौड़ना पटकना फेंकना तथा पत्र फल पुष्पादिकनका छेदन भेदन विदारण क्षेपणादिक करना तथा अग्नि विष क्षारादिकका देना सो काय असमीक्ष्याधिकरण नामका अतीचार है ॥ ४ ॥ जेता भोग-उपभोगकरि प्रयोजन सधै तातैं अधिक बिना प्रयोजनका अतिसंग्रह करै सो अतिप्रसाधन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं अनर्थदंडव्रतके पांच अतीचार कहे ते त्यागने योग्य हैं अब भोगोपभोगपरिमाणव्रत अष्ट सूत्रनिकरि कहै हैं—

अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम्। अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥ ८२ ॥

अर्थ—प्रयोजनवान हू पंचइंद्रियनिके विषयनिका जो रागभाव करिकैं आसक्तताकौं घटावनेकै

अर्थि जो परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाण नामा व्रत है । भावार्थ—संसारी जीवनिकै इंद्रियनिके विषयनिमैं अतिराग वर्तै है रागतैं व्रत संयम दया क्षमादिक समस्त गुणनितैं पराङ्मुख होय रह्या है यातैं अणुव्रतका धारक गृहस्थ है सो हिंसा असत्य चोरी परस्त्रीसेवन अपरिमाणपरिग्रहतैं उपजी जो अन्यायके विषयनिमैं प्रीति तिसका त्याग करकें तो व्रती भया अब न्यायके विषयनिकूं हू तीव्रागके कारण जानि जाकै अति अरुचि भई होय सो रागकी आसक्तता घटावनेके अर्थि अपने प्रयोजनवान हू इंद्रियनिके विषयनिमैं परिमाण करै सो भोगोपभोगपरिमाण नामा गुणव्रत है । व्रतीनिकूं इंद्रियनिके विषयनिमैं निरर्गल प्रवृत्ति रोकि भोगोपभोगका परिमाण करना महान संवरका कारण है । अब भोग तो कहा होय है अर उपभोग कहा तिनका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भुक्त्वा परिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः । उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पाञ्चेन्द्रियो विषयः ॥ ८३ ॥

अर्थ—जो एकबार भोग करकैं फिर त्यागनेयोग्य होय सो भोग है बहुरि भोग करकैं फिर भोगने योग्य होय सो उपभोग है । भोग तो भोजनादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं अर उपभोग वस्त्रादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं । भावार्थ—जो एकबार ही भोगनेमैं आवे फिर भोगनेमैं नाहीं आवे ते भोग हैं । अर जो बारबार भोगनेके अर्थि आवै ते उपभोग हैं जैसैं भोजन नानारूप एकबार ही भोगनेमैं आवै है तथा कपूर चंदनादिकका विलेपन तथा पुष्प माला अतर फुलेल तथा मेला कौतुक इंद्रजालादिकस्तवनके गीतके शब्दादिक एकबार ही भोगनेमैं आवै हैं ते पंच इंद्रियनिके विषयभोग कहावै हैं । अर जैसे वस्त्र आभरण स्त्री सिंहासन पर्यंक महल बाग वादित्र चित्राम इत्यादिक वारंवार भोगनेमैं आवैं ते उपभोग हैं भोगोपभोग दोऊंनिका परिमाण करै ताकै व्रत होय है । अब जे परिमाण करनेयोग्य नाहीं यावज्जीव त्याग करने योग्य हैं तिनके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये । मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥ ८४ ॥

अर्थ—जिनेन्द्रभगवानके चरणनिकी शरणकूं प्राप्त भये ऐसे सम्यग्दृष्टि हैं तिननैं त्रसनिकी हिंसाका परित्यागके अर्थि क्षौद्र जो मधु अर पिशित कहिये मांस वर्जन करनेयोग्य है अर प्रमाद जो हितआहितमैं असावधानी ताका वर्जनके अर्थि मद्यका त्याग करना योग्य है। भावार्थ—जे पुरुष जिनेंद्रका चरणनिकी आज्ञाका श्रद्धानी हैं ते त्रसजीवनिकी हिंसाका त्यागके अर्थि मधुका अर मांसका त्याग ही करैं अर प्रमाद जो अचेतपना ताका त्यागके अर्थि मदिराका त्याग करैं ही। जाकै मधुमांसमद्यका त्याग नाहीं सो जिनआज्ञात पराङ्मुख है जैनी नाहीं है। बहुरि त्यागने योग्यनिकूं कहै हैं—

अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि। नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येवमवहेयम् ॥ ८५ ॥

यदनिष्टं तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात्। अभिसंधिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद् व्रतं भवति ॥ ८६ ॥

अर्थ—जिनके सेवनतैं फल जो अपना प्रयोजन सो तो अल्प सिद्ध होय अर जिनके भक्षणतैं घात अनंत जीवनिका होय ऐसे मूल कंद आदो शृंगबेर इत्यादिक कंद मूल अर नवनीत जो माखन निंबका फूल केवडा केतकीका फूल इत्यादिक जे अनंतकाय ते त्यागनें योग्य हैं। एक देहमैं अनंत जीव ते अनंतकाय हैं जो आपके अनिष्ट होय ताका व्रत करना त्याग करना अर जो सेवन योग्य नाहीं ते अनुपसेव्यनिका त्याग ही करना योग्य है। यद्यपि अनिष्ट अनुपसेव्यके सेवनेका प्रयोजन नाहीं है तो हू अपने अभिप्रायकरि योग्य विषयका हू त्याग सो व्रत है जातैं जाका फल तो एक जिह्वाका आस्वादनमात्र अर जाका एक बालमात्र कणहूमैं अनंतानंत वादरनिगोदजीवनिका घात होय ऐसे कंदमूलादिक अर निंबका पुष्प अर केतकी केवडाका पुष्प त्यागने योग्य है तथा अन्य हू पुष्प प्रत्यक्ष त्रसजीवनिकर भरे हैं ते जिनधर्मीनिके त्यागने योग्य हैं। बहुरि जो वस्तु शुद्ध हू है अर भक्षण करनेतैं अपना देहमैं वेदना उपजावै उदरशूलादिक उपजावनेवाला वाय पित्त कफादिक दोष तथा रुधिरविकार उदरविकारादिककूं उत्पन्न करनेवाला भोजनादिक तथा अन्य हू दुःखके कारण इंद्रियविषयनिका सेवन मत करो।

जातैं जो अति तीव्ररागी इंद्रियनिका लंपटी होयगा सो ही अनिष्टसेवन करैगा। जो अपना मरण होजाना तथा तीव्रवेदना भोगना ऐसैं तीव्र दुःखहूकूं नाहीं गिणता भक्षण करै है ताकै जिह्वाकी तीव्र विकलतातैं महापापका बंध होय है। अनेक मनुष्य भोजनके आस्वादनमैं अनुराग करकै अनिष्ट भोजनतैं रोग बधाय आर्तध्यानकरि दुर्गतिकूं जाय हैं तातैं अनिष्टका त्यागही श्रेष्ठ है। बहुरि केते ही वस्तु अपने कुलकूं तथा व्यवहारकूं धर्मकूं मलीन करनेवाले हैं ते सेवने योग्य नाहीं ते अनुपसेव्य हैं। संख हस्तीका दांत केश मृगमद गोलोचन इत्यादिकका स्पर्श्या हुआ भोजन जल सेवन योग्य नाहीं तथा ऊंटनीका दुग्ध तथा गधीका अर गायका मूत्र तथा मल मूत्र कफ लाल उच्छिष्ट भोजन ये सेवने योग्य नाहीं तथा म्लेच्छ भील अस्पर्श्यशूद्रानिका स्पर्शन किया हुआ भोजन तथा अशुद्धभूमिमैं पड्या चर्मका स्पर्श्या मार्जार श्वानादिक करि तथा मांसभक्षी मद्यपायीनिकरि बनाया हुआ स्पर्शन किया हुआ समस्त भोजन लोकनिंद्य भोजन अनुपसेव्य है। जिनधर्मीनिके भक्षण करने योग्य नाहीं। बुद्धिकूं विपरीत करै है। मार्गतैं भ्रष्ट करनेवाला धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला है। इहां ऐसा विशेष जानना, श्रीराजवार्तिकमैं हू पंच प्रकार भोग संख्या कही है तहां त्रसका घात जामैं होय॥ १ ॥ प्रमाद उपजावनेवाला होय॥ २ ॥ बहुबध कहिये जामैं अनंत जीवनिका घात होय॥ ३ ॥ अनिष्ट होय॥ ४ ॥ अनुपसेव्य होय॥ ५ ॥ ये पांच प्रकार त्यागने योग्य हैं यावज्जीवन त्यागने योग्य हैं। अर जिसका यावज्जीव त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं तो वाका त्याग कालकी मर्यादाकरि करना। यहां केतेक वस्तुनिमैं तो प्रगट त्रसनिका घात है अर केतेक वस्तूनिमैं अनंत जीवनिके संघट्ट इकट्ठे होय घात होय हैं बीधा अन्न है तामैं ईली घुन प्रगट हजारां फिरै हैं बीधे अन्न खानेवालेकै अप्रमाण त्रसनिका घात होय है जो गृहस्थ धान्यका संग्रह राखै है ताकै नित्य बीधा अन्नके भक्षणतैं महापाप प्रवर्तै है याहीतैं पापतैं भयभीत जैनी होय सो अबीधा अन्न खरीदै और दोय महीनाका खरच प्रमाण राखै दोय महीना भक्षण करि चुकै तदि और अबीधा अन्न देखि ग्रहण करै थोडा

संग्रहमैं अच्छीतरह सोधनेमैं आजाय थोडाका जावता यत्नाचारतैं बनि सकै बीधता देखि तदि बदलाय मगावै अन्य पांच जायगा अबीधा देखि लावै बहुत धान्य होय तो देय सकै नाहीं फटाकि सकै नाहीं बदल्या जाय नाहीं बहुत बीधा होजाय अर खावना पडै तदि नित्य छांणि छांणि ईली लट घुगानिकूं पात्र भर भर मार्गमैं पटकै तहां मनुष्यनिके तथा पशुनिके पगतलैं खुंदजाय मरजाय पशु चर जाय बहुरि धान्यमैं जीव पडने लगैं हैं तदि दिन प्रति दूना चौगुना सौगुना हजारगुना छोटा बडा नधता चल्या जाय है अर समस्त घरके मकाननिमैं अर रसोईमैं परींडा ऊपर दीवारपर चाकीपर फैलते खानपानकी वस्तुनिमैं जमींमैं छतानिमैं लाखां कोड्यां जीव विचरने लग जायं हैं तातैं लोभके वशतैं प्रमादके वशतैं अभिमानके वशतैं बहुत संग्रह मत करो बहुरि मूंग मोठ उडद तथा अन्य हू फलादिक जिनकै ऊपरि सुफेद फूली प्रगट होजाय तामैं त्रसजीव जानि भक्षण मत करो। बहुरि वर्षाकालके चार महीनेमैं केतीक वस्तुका संग्रह मत राखो नगर शहरमैं वसनेका सुख तो ये ही है कि जिस अवसरमें चाहै तिस अवसरमैं दश पांच दो चार दिनके खरचमैं आवै तितनी दश पांच जायगांमें आछी निर्दोष दीखै सो खरीदो। वर्षाऋतुमैं गुडमैं शक्करमैं खांडमैं बहुत चींटी लट सुलसुली पडै हैं तथा सूंठ अजवायणि इलायची डोडा सुपारी बहुत बीधै हैं दाख पिस्ता चारोली छिंवारा खोपरा इत्यादिकनमैं परिमाण रहित लट कीडा इल्यां बहुत हजारां लाखां उत्पन्न होय हैं। पुरवाई पवनका संयोगतैं ही गुडादिकमैं परिमाणरहित जीव उपजै हैं तथा मर्यादारहित वस्तु लाडू पेडा घेवर बरफी इत्यादिकमैं बहुत जीव प्रगट लट उपजै हैं। बहुरि हलदी धणां जीरा मिरच अमचूर कोथोडी इनमैं वर्षाऋतुमें बहुत त्रसजीव उपजै हैं तातैं अल्प संग्रह करो नित्य देख सोधि प्रवर्तो यो यत्नाचार ही धर्म है। चून शीत ऋतुमैं सात दिनका ग्रीष्मऋतुमैं पांच दिनका वर्षाऋतुमैं तीन दिनका सिवाय भक्षण मत करो चूनका संग्रह मति करो चूनमैं बहुत लट पैदा होजाय हैं दाल चावल इत्यादिक जब रांधो तदि दोय तीन बार सोधि

रांधो। बहुरि प्रश्नोत्तरश्रावकाचारमें ऐसा लिख्या है श्लोकार्द्ध—"सर्वाशनं च न ग्राह्यं दिनद्वययुतं नरैः" अर्थ—समस्त भोजन दोय दिनकर युक्त नाहीं भक्षण करना। यातैं एक रात्रि गयां सिवाय दूजी रात्रि व्यतीत होजाय सो भक्षण योग्य नाहीं। यामैं जलका संसर्ग युक्त पक्वान्नादिक हू आगये। बहुरि पुवा मालपुवा सीरो इत्यादिक तथा बडा कचोरी रात्रिवास्याको रस चालि जाय है। जातैं यामैं जलका संसर्ग बहुत रहै है। बहुरि रोटी खिचडी तरकारी लोंजी रात्रिवासी तो भक्षण ही नाहीं करना अर स्वादसों चलि जाय तो उस दिनमैं भी भक्षण नाहीं करना। बहुरि रात्रिका बनाया समस्त भोजनका भक्षण नाहीं करना बहुरि दही पहला दिनका जमाया दूजा दिन पर्यंत खावो अधिक नाहीं। बहुरि दोय दाल का अन्नकूं दही छाछके सामिल भक्षण मत करो जो मिलायकरि खावोगे तो यामैं विदलका दोष लागेगा जीभ नीचे कंठमें उतरते ही संमूर्छन जीव उपजै हैं याकूं विदल कहिए है। बहुरि दुग्ध दूह्यां पाछैं छानि दोय घडी पहली तप्त करो पाछैं सम्मूर्च्छन त्रसानिकी उत्पत्ति होय है। घृत हू छाछमैंसूं निकस्यां पाछैं शीघ्र ही तपाय छानि भक्षण करना योग्य है ताया छान्यां विना मत भक्षण करो। बहुरि घृत तेल जल इत्यादिक रस चामका पात्रमैं घाल्या हुआ भक्षण योग्य नाहीं यामैं असंख्यात त्रस जीव उपजै हैं। सींघडा (कुप्पा) बनै हैं ते मांसकूं गाडि पाछैं कूटि माटीके सांचे ऊपरि बनावै हैं इनका स्पर्श्या घृत तेल जल मांसके समान है। इनकी प्रवृत्ति मुसलमानांका राज्य हुआ तदि मुसलमानां चलाई है। जो चामका विना स्पर्श्या घृतादि नाहीं मिलै तो रूक्ष भोजन करो अर फागुन पीछैं तिलनिमें तथा सिंघाडेनिमैं बहुत त्रसजीव उपजै हैं यातैं फागुन पीछैं तेल अथवा सिंघाडा कदाचित् मत भक्षण करो। बहुरि जलकूं गाढी दोहरा कपडासूं छाणिकरि पीवो अन्यकूं छाणिकरि प्यावो छाणिकरि ही पशूनिकूं हू प्यावो अणछाण्यां जलतैं स्नान भोजन वस्त्रधोवन इत्यादि कोई भी क्रिया मत करो जलमैं यत्नाचार क्रियातैं दयावानपनाकी हद बनी रहै है। पात्रका मुखतैं तिगुना लांबा दोहरा वस्त्र नवीन होय तातैं छाणा अज-

वाण्या (विलछन) अन्य पात्रमें करि जलके स्थानमें पहुंचावो जलमें यत्नाचारकी याही मर्यादा है छाण्या पाछैं दोय घडीकी मर्यादा है फिरि काम पडै तो फिरि छाण करि वर्तौ। तप्तजल दोय पहर वर्तौ बहुत उकलतो तप्त कियो हुवो आठ पहर वर्तौ पाछैं निकाम है। बहुरि केतेक वस्तूनिकूं त्रसनिको घात जानि सर्वथा भक्षण मति करो जैसैं—बोर लटांको प्रत्यक्ष स्थान है भिंडीनिमैं बहुत लट उपजै हैं बैंगण तरबूज कोहला पेठा जामुन आडू बडत्राला गोल अंजीर कठूमर ऊमरफल पील्रू आलू जामफल टींडू अज्ञातफल सूक्ष्मफल वीधाफल चलितरस तथा साराफल तथा पत्र शाक कंदमूल आदो शृंगवेर सलगम प्याज लहसन गाजर किशोऱ्या इत्यादिक तथा कचनार महुवा क्षीरवृक्षका फल खिरनीकूं आदि लेय नीमका फल इत्यादिक अनेक फल हैं केवडा केतकी इत्यादिक फूल हैं तिनका तो प्रगट दोष आगमतैं वा प्रत्यक्षतैं है ही परंतु परमागमतैं वनस्पतीका ऐसा स्वरूप जानना—वनस्पती दोय प्रकार है एक प्रत्येक दूजी साधारण प्रत्येक तो एक देहमैं एक जीव है अर देह एक जामैं जीव अनंतानंत सो साधारणवनस्पती है यातैं साधारण भक्षण करै तामैं अनंतानंत जीवनिका घात जानि त्याग करना योग्य है। अब साधारण प्रत्येककी पहिचानके ऐसे लक्षण जानने—जिस वनस्पतीमैं लीक प्रगट नाहीं भई होय रेखसी नाहीं दीखी होय कली प्रगट नाहीं भई होय अर जामैं पैली प्रगट नाहीं भई होय अर जाका तोडता ही समभंग हो जाय वा कांटे फूटे नाहीं तथा जाके माही तांतू तूतडो प्रगट नाहीं भयो होय सो साधारण वनस्पती है यामैं एक अणुमात्रमैं अनंतानंत जीव हैं अर जिस वनस्पतीमैं धार तथा कला तथा रेखा तथा पैली प्रगट दीखै सो साधारण नाहीं प्रत्येकवनस्पती है तथा जाकूं तोडिये तो टेढा बांका टूटै सूधा शस्त्रसे बनाऱ्या जैसा साफ बरोबर नाहीं टूटै तथा जाकै माहीं तार तूतडा प्रगट होगया होय सो प्रत्येक वनस्पती है परंतु कोऊ वनस्पती पहली साधारण होय वाही एक अंतर्मुहूर्तमैं प्रत्येक होजाय है कोऊ साधारण ही बनी रहै पान फूल बीज डाहली कूंपल इत्यादिक समस्तमैं साधारण

प्रत्येककी याही पिछाण जानना। पत्रमैं समभंगादिक होय तो पत्र साधारण है अन्य समस्त वृक्ष साधारण नाहीं। बीज कूंपल समभंग सहित होय रेखादिक प्रगट नाहीं होय तेते बीज कूंपल साधारण हैं अन्य साधारण नाहीं ऐसैं इस वनस्पतिमैं कोऊ साधारण मिल जाय कोऊ प्रत्येक होजाय इत्यादिक दोषरूप तथा वनस्पतिमैं अनेक त्रस जीवनिका संसर्ग उत्पत्ति जानि जे जिनेंद्रधर्म धारणकरि पापनितैं भयभीत हैं ते समस्त ही हरितकायका त्याग करो जिह्वा इंद्रियकूं वश करो अर जिनका समस्त हरितकायके त्याग करनेका सामर्थ्य नाहीं है ते कंदमूलादिक अनंतकायका तो यावज्जीव त्याग करो। अर जे पंच उदंबरादिक प्रगट त्रस जीवनिकरि भऱ्या है ऐसा फल पुष्प शाक प्त्रादिकनिकूं छांडि करिकैं त्रसघातकरिरहित दीखै ऐसी तरकारी फलादिक दश वीशकूं अपने परिणामानिके योग्य जानि नियम करो। इन सिवाय अट्ठाईस लाख कोड कुल वनस्पतीकाय हैं तिनका तो त्याग करि भार उतारो। हरितकाय प्रमाणीकका नियम करै ताकै कोथ्यां अभक्ष टलै है तिसमैं पत्रजात भक्षण योग्य नाहीं। त्रसकी उत्पत्ति टालि अन्य बहुत घटाय नियम करो विना घटायां निरर्गल रह्यां असंयमीपना होय आस्रव होय है तातैं हरितकायका भक्षणमैं नियम व्रत करना योग्य है। बहुरि जिस भोजन ऊपरि ऊलण आजाय ऊपर फूलसा नीला हरा लाल आजाय सो भोजन मत करो यामैं अनंतजीवनिका घात है यातैं जिस ऊपर फूली आजाय सो दूरतैं ही त्यागो। बहुरि मोहके कारण प्रमादके उपजावनेवाले ज्ञानकूं बिगाडनेवाले जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रियकूं विकल करनेवाली ऐसी भांग तमाखू छोंतरा अमल हुका जरदा इत्यादिक अभक्ष्यनिका खावना पीवना जिनधर्मीनिकै त्यागने योग्य है। ये अमल पराधीन करै हैं इनमैं अफीमका भक्षण करनेवालेकूं एक घडी अफीम नाहीं होय तो जमीमैं बेहोश होय पडि जाय है वेदनाका आर्त्तपरिणामतैं पशुका ज्यों पग जमीमैं पछ्या पछ्या रगडै है निर्लज्ज हुआ याचना करै है नेत्रानितैं नीर पडै है और अफीम मिलि जाय तदि अमलमैं आया भूला हुआ ऊंगवो करै है जिह्वा इंद्रियकी

लोलुपता बधि जाय है स्वाध्याय धर्मश्रवण व्रत संयम उपवासादिकनिकूं दूरहीतैं त्यागै है बुद्धि धर्मतैं परांमुख होजाय है उत्तम आचार नष्ट होजाय है। बहुरि हुक्काकी महामलीनता दुर्गंध तमाखू और धुंवां का योगतैं पानीमैं जीवानिकी उत्पत्ति होय है जहां हुक्काका जल पडै तहां छहकायके जीवानेका घात होय है। अर याकी दुर्गंधतैं उत्तम आचारके धारक नजीक बैठ नाहीं सकै हैं अर बारम्बार घरघरमैं अग्नि हेरतो फिरै है घरमैं राखको ठीकरो धर्योही रहै है नीचकुलवाले नीचजनानिके पीवने योग्य है। हुक्का पीवनेवालेकूं गाडीवान घोडाका चाकर मीणा गूजर मुसलमान इत्यादिकनिकी संगति रुचै है उत्तम कुलवालेनिके योग्य नाहीं है अर हुक्का नाहीं मिलै तो नाई धोबी गूजर मीणा तेली तमोली मुसलमाननिकी चिलम याचना करि पीवै है अर नाहीं पीवै तो बडा रोग पैदा होजाय उदरमैं आफरो चाढि जाय नीहार बंद होजाय महान दुःख गले बांध्या है तातैं व्रत संयम उपवास स्वाध्यायादिक समस्त उत्तम कार्यनिकूं जलांजलि देहै। बहुरि जरदा महा अशुचि द्रव्य है याकूं मुखमैं राखि मलमूत्र मोचन करै है रास्तामैं मार्गमैं मलमूत्रादिक ऊपरि पगरखी पहरे जरदा खाय है मांसभक्षी मद्यपायीनिका तथा नीच जातिका घरका पानी मिल्या कत्था चूना खाय है नीच जाति अपना हस्तादिक बिना धोये अंग खुजावते जरदा मसल देहै उच्छिष्टकी ग्लानि नाहीं करै है समस्त शय्या आसन खूणा बारी जाली समस्त जायगां उच्छिष्टसूं लिप्त करिदेय है पशु हू रस्तै चालता सोता मुख नाहीं चलावै है याकै पशुतैं हू अधिक विकलता है। मुखमैं महादुर्गंध रहै है जरदाका पीका जहां पडै तहां माछी माछर डांस मकडी कीडा कीडी बडा बडा त्रस ही मरि जाय तहां पंचस्थावरानिका घात होय ही। व्रत संयम उपवास स्वाध्याय जाप्य शुभ भावनाका नाश होय है जरदा खानेवालेनिकी बुद्धि आत्माके हितमैं प्रवर्तन नाहीं करै है संयमके योग्य नाहीं होय है तामैं दया क्षमा शील संतोष इंद्रियविजय परिणाम कदाचित नाहीं प्रवर्तै हैं अनेक पापाचार कपट छलमैं बुद्धि प्रवीण होजाय है। अनेक व्यसननिमैं प्रवृत्ति होजाय है जरदा

खानेवालेके मांगनेकी लाज नाहीं रहै है। समस्त नीच जातिसूं भी मांगि करि खाय है। मद्य मांस खानेवाले जिसकाल मद्य पीवै हुक्का पीवै है उसका हस्ततैं दीया जरदा बीडी मांगि मांगि खाय है, जरदा खानेवाले बहुत मनुष्यनिकूं नीकेकरि देखिए है एककै हू परमार्थमैं बुद्धि परलोक शुद्ध करनेकी बुद्धि नाहीं होय है इस जरदेके प्रभावकरि हीनआचारकी वृद्धि होय तादि परमार्थतैं बुद्धि भ्रष्ट होय लौकिकजनमैं व्यभिचारमैं लोभमैं प्रबल होय है सांचा धर्म याकै नाहीं होय है ऐसा आपका परिणाममैं आप अनुभव करो। अर परका जरदा खानेका स्वरूप प्रत्यक्ष देखि जरदा खानेका त्याग करो। अर जरदा एक दिन हू नाहीं खाय तो परिणाममैं उपाधि उदरमैं व्याधि अनेक रोगव्याधि उपजावै है तातैं जरदा खाना महारोगकूं महाव्याधिकूं सूगलापनाकूं अंगीकार करना है। बहुरि भांग पीवना हू अपना बडापना शोभितपना नष्ट कर देहै भंगेराका दरजा घटि जाय है भंगेराके जिह्वा इंद्रियकी लंपटता बधि जाय है। विकलीपना होइ जाय है प्रमादी हुवा ऐश करना बहुत निद्रा लेना बहुत घृत खांडका भोजन करना चाहै है। पांचोंइंद्रियां विषयांकी लंपटतानै प्राप्त होजाय हैं ज्ञान शिथिल होजाय है बेमी होजाय है भांग पीवनेवालेके मीठा भोजनमैं ऐसी लंपटता होजाय है जो मीठा मिलै कृतकृत्य होजाय है आत्मज्ञान धर्मका ज्ञान कदाचित् नाहीं होय है बाह्य आचरण भ्रष्ट होय ही है अर भांगमैं हजारां त्रसजीव चालता दौडता उपजै है वर्षाऋतुमैं भांगमैं अपरिमाण त्रसजीव उपजै हैं भंगेरा भांग सोधै नाहीं घोटिकरि पीजाय है। ऐसैं हू अफीम खाना जरदा खाना हुक्का पीवना भांग पीवना अर और हू छौंतरा पीवना तमाखू सूंघना ये देहके तो महारोग ही हैं अमल करनेवालेकी आकृति बिगाडि जाय है धर्म बिगाडि जाय आचार बिगाडि जाय ऐसा नियम है। ये नसा सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका हू महाघातक है ये अमल अनर्थदंडनिमैं हू हैं अर व्यसनानिमैं हू हैं यातैं मनुष्यजन्म अर जिनधर्म उत्तम कुलादिक पायाकूं सफल किया चाहो हो तो अमल नसा करनेका त्याग ही करो।

बहुरि रात्रिके अवसरमैं भोजन करना त्यागने योग्य ही है रात्रिभोजन करै ताकै यत्नाचार तो रहै ही नाहीं अर जीवनकी हिंसा होय ही। रात्रिविषै कीडी मांछर मांखी मकडी कसारी अनेक जीव आय पडै हैं अर दीपक जोय भोजन करै तो दीपकके संयोगतैं दूरदूरके जीव दीपककूने शीघ्र आय भोजनमैं पडै हैं। अर रात्रिभोजन जिनधर्मी होय करै तो आगांने मार्ग भ्रष्ट होजाय अर रात्रिमैं चूल्हा चाकी परीडाका आरंभ करना मेलना धोवना मांजना ये घोरकर्म प्रगट होजांय तदि महान हिंसा अर महान दुःख प्रगट होजाय तदि घोर आरंभीके जिनधर्मका लेश हू नाहीं रहै है। बहुरि कोऊ कहै जो आरंभ तो नाहीं करै सीधा भोजन लाडू पेडा पूडी पूवा बरफी दुग्धादिक भक्षण करनेमैं रात्रि आरंभ नाहीं भया ताकूं ऐसा समझना जो दिवसकूं छांड रात्रि भोजन करै ताकै तीव्ररागरूप महान हिंसा होय है जैसैं अन्नके ग्रासका अनुराग अर मांसके ग्रासका अनुराग समान नाहीं होय है तैसैं रात्रि भोजनका अनुराग है सो दिनके भोजनका अनुरागके समान नाहीं है। दिवसमैं ही भोजन बहुत है रात्रिदिवस दोऊनिमैं भोजन करै ताके ढोर समान संवररहित प्रवृत्ति रही तथा रात्रिभोजन करनेवालेके व्रत तप नाहीं होय है। ऐसा विशेष जानना जो अनादिकालतै विदेहनिमैं एकबार वा दोयबार ही भोजन है रात्रिमैं कदाचित हू भोजन नाहीं जो रात्रि भोजन करै तो चूल्हा चाकी बुवारी जलादिकका समस्त आरंभ रात्रिमैं होजाय तदि भोजन करनेमैं तरकारी बनावनेमैं तथा पुरुषानिके भोजन करनेमैं स्त्रीनिके कुंटुंब सेवकादिकनिके भोजन करनेमैं धोयबेमैं बुहारिबैमैं मांजनेमैं दोय पहर रात्रि व्यतीत हो जाय है अनेक जीवनिका संहार होजाय समस्त यत्नाचारका अभाव होय जाय अर कीडा कीडी ईली कसारी मकडी इत्यादिक बडे बडे जीवानिका भोजनमैं पतन तथा ईंधनमैं चूल्हामैं तरकारीमैं जलमैं पात्रनिमै पतन होय है अर दीपकादिक तथा चूल्हाका निमित्तकरि माखी माछर डांस पतंगादिक अनेक जीवनिका नितप्रति होम होजाय अर दिनमैं भी आरंभ अर रात्रिमैं हू घोर आरंभ करि समस्त

कुटुंबजननिके महा दुःख पैदा होजाय। रात्रिमैं घोर धंधातैं समता नाहीं आसके तामैं धर्मसेवन तथा शास्त्रका पठन श्रवण तत्त्वार्थकी चर्चा सामायिक जाप्य शुभध्यानका तो अवसर ही रात्रिभोजन करनेवालेके नाहीं रहे है। यातैं जिनेन्द्रधर्मके धारक रात्रिभोजन कदाचित हू नाहीं करे हैं ऐसी सनातनरीति अब ताईं चली आवे है अर जिनधर्मी रात्रिभोजन नाहीं करै हैं ऐसैं कोट्यां मनुष्यानिमैं प्रसिद्धता अर उज्वलता अर प्रभावना अर उच्चता अर भोजनकी शुद्धताकूं बिगाड कोऊ विषयनिकरि प्रमादी अंध भया रात्रिमें दुग्ध कलाकंद पेडा खाय है तथा औषधि जलादिक पीवे है सो अपने उत्तम आचार धर्मनै अर कुल मर्यादानै अर जैनीपनानै जलांजलि देय सन्मार्गतैं भ्रष्ट हुआ उन्मार्गी है, उनका मार्ग तो बाह्य अभ्यंतर भ्रष्ट है अर आगानै अधर्मकी परिपाटी चलावे है। बहुरि रात्रिका किया भोजन दिनमैं हू भक्षण करना योग्य नाहीं है। बहुरि मिथ्याधर्मके धारकनिकै मांसभक्षीनिकै संग बैठि भोजन मत करो। नीचजातिकेसूं मित्रता मति करो देवताके चढ्या भोजन मत भक्षण करो। दांतका चूडा रोमका वस्त्र कामली पहिर भोजन बनावै तो भक्षण योग्य नाहीं मांसभक्षीनिके घरमें भोजन नाहीं करना नीचजातिके घरमैं भोजन नाहीं करना। बहुरि अत्तारनिका अर्क तथा माजूम तथा सरबत अन्य हू समस्त वस्तु भक्षण करना योग्य नाहीं। अत्तारके बिलायतका बण्यां म्लेछनिके जलकर बनाया उच्छिष्ट अर्कनिकी भरी हुईं बोतलां आवै हैं अर समस्त वस्तु अज्ञात हैं अर अर्कादिकनिमैं अनेक जलचर थलचर नभचर पंचेन्द्रियादिक जीवानिके मांसके कई अर्क हैं अर बहुत जातिकी मदिरा बनाय अर्क संज्ञा करै हैं बहुत जीवनिके अंडानिका रसकी बोतलां भरी हैं। अर मधु जो सहत सो समस्त सरबत मुरब्बा माजूम जवारसादिकानिमैं है अर अनेक जीवनिका अनेक अंग इन्द्रियां जिह्वा कलेजा इत्यादिक शुष्क हुआ मांसानिकूं अत्तार बेचैं है यहांके समस्त उत्तमकुलनिकी बुद्धि भ्रष्ट करनेकूं मुसलमान लोक अपनी उच्छिष्ट भक्षण करावनेकूं समस्त हिंदुस्थानके लोकनिकूं भ्रष्ट करनेकूं

अत्तारनिकी दुकानां करवाई हैं करोड कषायीनिकी दुकान समान एक अत्तारकी दुकान है। यहां इसदेशमैं राजालोक हिंदुधर्मकी रक्षावास्ते अठारासै चाईसका संवत तांई तो अत्तारका बसनां दुकान करना नाहीं होने दीया फिर कालके निमित्ततैं पापकी प्रवृत्ति फैली ही अब उत्तम कुलवाले हू इनका अर्कादिक खावने लगे हैं सो मुसलमाननिका झूंठन अर मांस मदिरादिक भक्षण करने लगे तदि ब्राह्मणपना महाजनपना वैश्यपना कहां रह्या सब कुल भ्रष्ट भये अर अभक्ष्यभक्षण करनेहीतैं सत्यार्थधर्मतैं रहित लोकनिकी बुद्धि होगई है अर अत्तारानिकी औषधिहीतैं रोग मिटै है ऐसा नियम नाहीं। अत्तारानिका अर्क पीवा करि धर्मभ्रष्ट होय बहुत लोक मरते देखिये हैं जिनके दुर्गतिका बंध होगया है तिनके ही इनकी भ्रष्ट औषधिसे आराम होय है। जैसैं राजा अरविंदके दाहज्वरका अनेक इलाज किया तो हू दाहज्वर शांत नाहीं भया अर पाछै अपना महलकी छाति ऊपर लडते विसमरानिका शरीरतैं रुधिरका बूंद अपने शरीर ऊपरि पडा तातैं शीतलता भई तदि पापी पुत्रानिसूं कही मोकूं रुधिरकी बावडी भराय द्यो जो मैं बामैं क्रीडा करि आतापरहित हो हूं तब पुत्र पापतैं भयभीत होय लाखका रंगकी बावडी भराई तदि राजा बावडीकूं देखि बडा आनंद मानि बावडीमैं गर्क होय अर कपटके लोहीकी बावडी जानि पुत्र ऊपर क्रोधित होय पुत्रकूं मारनेकूं छुरी लेय दौड्या सो मार्गमैं पडि अपना हाथकी छूरीतैं आप मरि नरक जाय पहुंच्या। ऐसैं ही जिनकी दुर्गति होनी है तिनकै अत्तारानिकी औषधिसूं आराम होय है तदि उनके पापरूप अत्तारी वस्तुनिमैं प्रवृत्ति होय है यातैं प्राणानिका नाश होते हू छह महीनेके बालकहूकूं अत्तारकी औषधि देना योग्य नाहीं। धर्म विगड्यां पाछैं यो जिनधर्म अनंतकालमैं हू नाहीं मिलेगा तातैं जैनधर्मके धारकनिकूं हजारां खंड होजाय तो हू अभक्ष्यभक्षण नाहीं करना बहुरि बजारकी दुकाननिका चून कदाचित् मति भक्षण करो बेचनेवालेनिके समस्त चमारी खटीकनी और मुसलमनिनी धोबिन इत्यादिक तो पीसै हैं मुसलमान धोबी बलाईनिके राजाका तबेला तोपखानानितैं

चून मिलै सो बजारवाले मोल लेय लेवै हैं अर महीनाका छह महीनाका पीस्याको प्रमाण नाहीं हजारां सुलसुल्यां पडि जाय हैं। घणा जणा बीधो नाज लेय मोदी लोग पिसावे हैं अर मुसलमान म्लेच्छ समस्त उसहीमैं हस्त घालि तुला लेजाय हैं मुसलमानांके नुकता विवाहमै काम नाहीं आवै सो आधा ओसणि आधो फेर जाय हैं बहुरि सरायका दुकानदारांका पीतलका कांसीका लोहेका पात्र भोजन करनेकूं लेना योग्य नाहीं समस्त मांसभक्षी दुराचारीनिकूं भी वेही पात्र देहैं तातैं अपना आचारकी उज्वलता चाहै हैं सो तीन चार पात्र अपने निकट राखि विदेशमें गमन करे हैं अर जहां जाय तहां दमडी बधती देय चून तराय भक्षण करे चूनकी नाहीं विधि मिलै तो खिचडी तथा घूघरी रांधि खाय। बहुरि बजारकी मिठाई लाडू बरफी घेवरादिक मत भक्षण करो। इनका चूनका घृतका जलका कुछ परिमाण नाहीं है। लोभी निंद्यकर्मीनिकै आचार नाहीं होय है बहुरि मैदाका खमीरा वाडिकरि सडावे हैं खट्टा पडते ही तामैं अनंतानंत जीव पडै हैं पाछैं कढाईमैं पकै हैं भुनै हैं सो जलेबी करै हैं माबूनी करै हैं सो भक्षण करने योग्य नाहीं तथा दहीमैं खांड बूरा मिलाय बहुतकालपर्यंत मति राखो दोय महूरतताईं खाना योग्य है अपना मित्र भाई पुत्रादिकके सामिल एक पात्रमैं भोजन करना योग्य नाहीं। मनुष्य कूकरा बिलाई इत्यादिकनिका उच्छिष्ट भोजन त्यागना योग्य है तथा गाय भैंस गधा इत्यादिक तिर्यंचनिका उच्छिष्ट जलादिकमैं स्नान मति करो पान तो कदाचित् हू मत करो तथा अन्नका खांडका लापसीका बनाया मनुष्य तिर्यंचनिका आकार ताकूं मत भक्षण करो तथा देवी दिहाडी व्यंतरादिकनिकी पूजाके वास्तै संकल्प किया भोजन त्यागने योग्य है तथा मांसभक्षीनिका भोजनमैं भाजन मत भक्षण करो। भाजन मांसभक्षीको मांग्या मत द्यो। नाईका भाजनका जलसौं छौर मत करावो रजस्वलाका स्पर्शन किया पात्र भोजन योग्य नाहीं। बहुरि अनुपसेव्य जानि विकाररूप वस्त्र आभरण मत पहरो जो उत्तम कुलके योग्य नाहीं ऐसा नीचकुलनिके पहरनेके वेश्या तथा विटपुरुषानिके पहरनेके

तथा म्लेच्छ मुसलमाननिके पहरनेके तथा स्वामी योगी फकीर भांडानिके पहरनेके वस्त्र आभरण परिणाम बिगाडै हैं अपने तथा परके विकार उपजावनेवाला तथा अपना पदस्थके योग्य लोकतैं अविरुद्ध ऐसा आभरण वस्त्र भेष धारना योग्य है बहुत करनेकरि कहा संक्षेपतैं जानना। जो समस्त संसार परिभ्रमणके कारण पंचइंद्रियनिका विषयानिमैं लालसा है तिन इंद्रियनिमैं हू जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रिय दोय इंद्रियनिकी लालसा इसलोक परलोक दोऊनिकूं विगाडदेनेवाली है इन दोय इंद्रियनिके विषयकी लोलुपता जिनके अधिक है ते मनुष्यजन्ममैं हू पशुके समान हैं। पशुयोनिमैं हू इन दोऊ इंद्रियांका विषयकी चाहकरि परस्पर लडि लडि मरजाय है अर मनुष्यजन्ममैं हू कलह करना मारना मरना निर्लज्ज होना उच्छिष्ट खावना दीनता भाषणा पुण्यदान लेना अभक्ष्य भक्षण करना इत्यादिक समस्त नीचकर्मनिमैं प्रवृत्ति रसनाइंद्रियके विषयानिकी लालसातैं ही होय है। अरु देखहु भोगभूमिके अर देवलोकके नानाप्रकारके भोगानितैं हू तृप्तता नाहीं भई अब ये किंचित् जिह्वाका स्पर्शमात्रका स्वाद अति अल्पकालमैं है भोजन गिल्यां पाछैं नाहीं अर पहली नाहीं ऐसा तृष्णाका बधावनेवाला आहारमैं लुब्धताका त्याग करि समस्त इंद्रियांको विजय करि रस नीरसकी कर्म जैसी विधि मिलाई तीसमैं संतोष धरि अभक्ष्यनिका त्याग करि देहका धारणमात्रके अर्थि भोजन करै है सो समस्त पापरहित होय देवलोकका पात्र होय है। अब यहां ऐसा जानना जो भोगोपभोगपरिमाण करै सो अपना परिणामानिकी दृढता देखै जो मेरे ऐता राग घट्या है ऐता हाल नाहीं घट्या है अर सामर्थ्य देखै जो ऐसा योग्य बनैगा तो मेरा देहका तथा परिणामका इसकूं निर्वाह करनेका सामर्थ्य है कि नाहीं है ऐसा विचार करि व्रत धारण करना अर देशकी रीति निर्वाह योग्य देखनी अर कालकूं अवसरकूं देखना अवस्था देखना अपना कोऊ सहायी है कि त्यागव्रतके विगाडनेवाला है ऐसा हू विचार करना शरीरका रोगरहितपना (नीरोगपना) देखना भोजनादिक मिलनेका नाहीं मिलनेका संयोग देखना तथा भोजनादिक मेरे आधीन है कि पराधीन है ऐसे त्यागव्र

तातैं हमारे तथा स्त्री पुत्र स्वामी इत्यादिकनिके परिणाममैं संक्लेश होयगा कि संक्लेश नाहीं होयगा अपना स्वाधीनपना पराधीनपना जानि जैसैं परिणामनिकी उज्वलता सहित व्रतका निर्वाह होय तैसैं नियमरूप त्याग करो तथा यम कहिये यावज्जीव त्याग करो । केतेक तो यावज्जीव ही त्यागने योग्य हैं—जामैं प्रगट त्रसनिका घात होय तथा अनंत जीवनिका घात होय अपने कुलमैं सेवने योग्य नाहीं होय तथा मद करनेवाला होय तथा मांस मद्य माखन मदिरा अचार महा विकृति अर रात्रिविषै भोजन द्यूतक्रीडादिक सप्तव्यसन विना दिया परधनका ग्रहण अर त्रसहिंसा अर स्थूल असत्य अन्यायका परिग्रह बिनाछान्या जल अनर्थदंड ये तो यावज्जीव ही त्यागने योग्य हैं । इनमैं नियम कहा करिये ये तो महा अनीति है इनके त्याग करनेमैं शरीर ऊपरि कुछ क्लेश भार दुःख नाहीं आवे है अपयश नाहीं होय है इनका त्यागमैं धन चाहिये नाहीं बल चाहिये नाहीं स्वामीका तथा स्त्रीका पुत्र कुटुंबादिकनिका सहाय चाहिये नाहीं किसीकूं पूछनेका वाकिफ करनेका हू काम नाहीं अपने परिणामके ही आधीन है कोऊ प्रकार इनका त्यागमैं शीत उष्ण क्षुधा तृषादिककी बाधा पीड़ा भोगना पडै नाहीं स्वाधीन है परिणामनिमैं देहमैं सुख करनेवाला है यातैं दुर्लभ सामग्री पाय भोगोपभोगका परिमाण करना श्रेष्ठ है । बहुरि कदाचित् प्रबलकर्मके उदयतैं यो मनुष्य कुदेशमैं पराधीनतामैं जाय पडै तथा प्रबल रोगतैं पराधीन होजाय तथा प्रबल जराके आवनेतैं उठने बैठने चालनेकी सामर्थ्य घटि जाय तथा कोऊ स्त्री पुत्रादिक सहायी नाहीं होय तथा नेत्रानिकरि अंध होजाय बधिर होजाय तथा लंबा रोग आजाय तथा बंदीखानामैं दुष्ट म्लेच्छादिक अपना भोजन जलादिक विगाडि दे तथा जवरीतैं समस्तके सामिल बैठाय खान पान करावै ऐसा उपद्रव आजाय तो तहां अंतरंगमैं तो व्रतसंयमकूं छांडै नाहीं बाहिर श्रीपंचनमोकार मंत्रको ध्यान करि ही शुद्ध है क्योंकि बाह्यदेहादिक पवित्र हो हू वा अपवित्र हो हू मलमूत्र रुधिरादिक करि लिप्त हो हू समस्त कुत्सित ग्लानियोग्य अवस्थाकूं प्राप्त हुआ जो पुरुष परमात्माकूं स्मरण करै है सो बाह्य हू पवित्र

है अर अभ्यंतर हू पवित्र है जातैं देह तो सप्तधातुमय मलमूत्रादिकी भरी हुई अर रोगनिका स्थान है एक क्षणमैं समस्त शरीरमैं कोढ झरने लगि जाय है हजारां फोडा फुनसी गूमडी लोहू राध स्रवणे लगि जाय मलमूत्र अबुद्धिपूर्वक स्रवणे लगि जाय है ऐसा अवसरमैं बाह्य व्यवहार शुद्धता कैसैं होय अर निर्धन एकाकीका सहायक कौन होय ? तहां धर्मात्मा पुरुष अशुभकर्मका उदयमैं ग्लानि त्याग करके धीरता धारण करि आर्त्तपरिणाम करि संक्लेश नाहीं करै है अशुभकर्मके उदयकूं निर्जरा मानता अंतरंग वीतरागताकरि संसार देह भोगनिका स्वरूप चिंतवन करता बारह भावना भावता कर्मके उदयतैं अपना आत्मस्वरूपकूं भिन्न ज्ञाता दृष्टा शुद्ध चिंतवन करता वीतरागताकरि ही राग द्वेष हर्ष विषाद ग्लानि भय लोभ ममतारूप आत्माके मलकूं धोय आपकूं शुद्ध मानै है ताकै समस्त शुद्धता होय है । अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके दोय प्रकारता कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

नियमो यमश्च विहितो द्वेधा भोगोपभोगसंहारात् । नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८७ ॥

अर्थ—भगवान है सो भोग अर उपभोगका घटावनेतैं नियम अर यम ऐसैं दोय प्रकार भोगोपभोग परिमाण व्रत कह्या है । तिनमैं कालका परिमाणकरि त्याग करना सो नियम कह्या है अर इस देहमैं जीवन है तितने तक तो त्याग करि रहना सो यम कह्या है । भावार्थ—जो एकवार भोगनेमैं आवैं ऐसे आहारादिक तो भोग हैं अर जे वारंवार भोगनमैं आवैं ऐसे वस्त्र आभरणादिक हैं ते उपभोग हैं । तिन भोग उपभोगनिका परिमाण यम नियम करि दोय प्रकार है तिनमैं जिस भोग उपभोगका एक मुहूर्त्त तथा दोय मुहूर्त्त तथा पहर तथा दोय पहर एक दिवस दोय दिवस पांच दिन पंद्रह दिन एक मास दोय मास चार मास छह मास एक वर्ष दोय वर्ष इत्यादिक कालकी मर्यादा करि त्याग करै सो नियम नामका परिमाण है । जातैं जो आपके उपयोगी होय शुद्ध होय ताका त्यागमैं तो कालकी मर्यादाकरि ही नियमका त्याग करना । अर जो आपके प्रयोजनरूप हू नाहीं होय तथा परिणामनिकूं

बिगाडनेवाला होय अथवा सदोष होय ताकूं यावज्जीव त्याग करि यमनामा परिमाण करना योग्य है इस भोगोपभोग परिमाणतैं अनेक पापके आश्रव रुक जाय हैं। इंद्रियां वशीभूत हो जाय हैं राग अतिमंद होजाय है व्यवहार शुद्ध होजाय है। मन वश होजाय व्यवहार परमार्थ दोऊ उज्वल होजाय तातैं भोगोपभोग परिमाण व्रत ही आत्माका हित है विरुद्ध भोग तो त्यागिये ही और अविरुद्ध भोग होय तिनमें हू अपनी शक्ति परिमाण देश काल देखि दिवस रात्रिके कालकी मर्यादा करो तामें हू फिर दोय घडीकी चार घडीकी मर्यादा करि रहना यातैं कर्मनिकी बडी निर्जरा है। अब और हू भोगोपभोगनिमें परिमाण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भोजनवाहनशयनस्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु। ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८८ ॥

अर्थ—भोगोपभोग परिमाणनाम व्रतमें नित्य हू नियम करै आजका दिनमें एक बार भोजन करूंगा वा दोय बार भोजन करूंगा वा तीन चार बार इत्यादिक भोजन करनेका परिमाण करै अथवा आजका दिन मैं एती जातिका अन्न तथा एते रस एते व्यंजन भक्षण करूंगा अधिक प्रकार भक्षण नाहीं करूंगा ऐसैं भोजनका नियम करै। बहुरि वाहन जे हस्ती घोडा ऊंट बलध पालकी रथ बहली नाव जहाज इत्यादिक वाहन ऊपरि चढनेका नियम करै। बहुरि पलंग खाट इत्यादिकविषै शयनका नियम करै जो आज मैं पलंगादिकमैं शयन करूंगा वा भूमिमैं ही शयन करूंगा। बहुरि आज एक बार स्नान करूंगा वा दोय बार स्नान करूंगा वा स्नान नाहीं करूंगा इत्यादिक नियम करै। बहुरि पवित्र जो अंगराग कहिये चंदन केसर कर्पूरादिकके विलेपन करना वा नाहीं करना इनमैं नियम करै बहुरि पुष्प तथा पुष्पनिकी माला आभरणादिक धारण करनेमैं नियम करै। बहुरि तांबूल इलाची सुपारी लवंगादिक भक्षण करूंगा वा नाहीं करूंगा ऐसा नियम करै। बहुरि वस्त्रनिका नियम करै जो आज एते वस्त्र पहरूंगा अधिक नाहीं पहरूंगा ऐसैं वस्त्रनिमैं नियम करै। बहुरि आज एते ही आभरण पहरूंगा अधिक नाहीं

ऐसैं आभरण प्रहरनेमैं नियम करै। बहुरि काम सेवनेका नियम करै। बहुरि नृत्य देखनेका नियम करै बहुरि गीत गावनेका वा अन्य वेश्या कलावंतादिकतैं गवावनेका नियम करै। बहुरि और हू हरितकायके भक्षणमैं नियम करै। बहुरि षटरसके भक्षणमैं जल पीवनेमैं नियम करै। बहुरि सिंहासन कुरसी चौकी इत्यादिक आसनमैं बैठनेका नियम करै। इत्यादिक अपने योग्य हू भोगउपभोगनिमैं नित्य नियम करै है ताके भोजनपानादिक करनेतैं हू निरंतर संवर होय है। अब नियमके अर्थि कालकी मर्यादा कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथर्तुरयनं वा। इति कालपरिच्छित्त्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥ ८९ ॥

अर्थ—अद्य कहिये एक घडी मुहूर्त प्रहर अर दिवा कहिये दिवस तथा रात्रि पक्ष तथा एक मास तथा दोय मासका ऋतु अर अयन कहिये छह मास इत्यादिक कालका परिमाण करि त्याग करना सो नियम है। ऐसैं भोगोपभोगका परिमाण वर्णन किया। अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

विषयविषतोऽनुपेक्षाऽनुस्मृतिरतिलौल्यमतितृषानुभवौ। भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ ९० ॥

अर्थ—ये भोगोपभोग व्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। विषय हैं ते संताप बधावै हैं अर विषयांका निमित्ततैं मरण होय है यातैं ये पंचइंद्रियनिके विषय विष हैं इनमैं परिणामका राग नाहीं घटना सो अनुपेक्षा नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि जे विषय पूर्वकालमैं भोगे थे तिनकूं बारंबार याद कर्‍या करै सो अनुस्मृति नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि विषय भोगे तिस कालमैं अतिगृद्धितातैं अति आसक्त हुआ भोगै सो अतिलौल्य नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि विषयनिकूं आगामी कालमैं भोगनेकी अति तृष्णा लगी रहै सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि विषयनिकूं नाहीं भोगै तिस कालमैं भी

जानै भोगूं ही हूं ऐसा परिणाम सो अनुभव नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पांच अतीचार छांडि वृतकूं शुद्ध करना ॥

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूळ सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिकाविषै तृतीय अधिकार समाप्त भया ॥ ३ ॥

अब च्यार शिक्षाव्रतनिके स्वरूपका निरूपण करनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोषधोपवासो वा । वैय्यावृत्त्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ ९१ ॥

अर्थ—देशावकाशिक ॥ १ ॥ सामायिक ॥ २ ॥ प्रोषधोपवास ॥ ३ ॥ वैयावृत्य ॥ ४ ॥ ऐसैं चार शिक्षाव्रत कहे हैं । भावार्थ—ए चार वृत हैं ते गृहस्थपनामैं मुनिपनाकी शिक्षा करै हैं । अब देशावकाशिक वृतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य । प्रत्यहमणुव्रतानां प्रतिसंहारो विशालस्य ॥ ९२ ॥

अर्थ—अणुव्रतनिके धारक पुरुषनिकै दिन दिन प्रति विस्तीर्ण देशकूं कालकी मर्यादा करि घटावना सो देशावकाशिक नाम शिक्षाव्रत है । भावार्थ—जो पूर्वकालमैं दश दिशानिमैं जावना मंगावना भेजनां बुलावना इत्यादिकनिकी मर्यादा यावज्जीव दिग्व्रतमैं करी थी सो तो बहुत थी तामैंतैं अब रोजीना क्षेत्रकूं घटाय कालकी मर्यादा करि व्रत करै सो देशावकाशिक व्रत है जैसैं पूर्वदिशामैं दोयसै कोसका परिमाण यावज्जीव किया सो तो दिग्वृत है फिर यामैंतैं रोजीना मर्यादा रूपकरि राखै जो आज चार कोसहीका म्हारै परिमाण है वा इस नगरका ही परिमाण है वा आज अपने घर बाहिर नाहीं जाऊंगा सो देशावकाशिक वृत है । अब देशावकाशिक वृतमैं क्षेत्रकी मर्यादा प्रगट करै हैं—

गृहहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनानां च । देशावकाशिकस्य स्मरंति सीम्नां तपोवृद्धाः ॥ ९३ ॥

अर्थ—तपोवृद्ध जे गणधर देव हैं ते देशावकाशिक व्रत करनेकूं सीमा मर्यादा कहै हैं। गृहकूं कटककूं ग्रामकूं क्षेत्रकूं नदीकूं वनकूं योजनकूं देशावकाशिक व्रतमैं मर्यादा करै हैं। इनकूं उलंघनका हमारे इतने काल त्याग है। अब देशावकाशिकमैं कालकी मर्यादा कहै हैं—

संवत्सरमृतुमयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च। देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥ ९४ ॥

अर्थ—प्रवीण पुरुष हैं ते एक वर्ष छह महीना दोय मास चार मास एक पक्ष एक नक्षत्र इस प्रकार देशावकाशिक व्रतके कालकी मर्यादा कहै हैं। अब देशावकाशिकका प्रभाव दिखावै हैं—

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपंचपापसंत्यागात्। देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यंते ॥ ९५ ॥

अर्थ—रोजीना जेता क्षेत्रका परिमाण किया ताके बारैं स्थूल अर सूक्ष्म जे पंच पाप तिनका त्यागतैं देशावकाशिक व्रत करकैं महाव्रतानिकूं सिद्ध करिये हैं। भावार्थ—मर्यादा करी तो बारैं समस्त पंचपापनिका त्यागतैं महाव्रत तुल्य भया। अब देशावकाशिक व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ। देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च ॥ ९६ ॥

अर्थ—आपके जेता क्षेत्रकी मर्यादा थी तिस बार प्रयोजनके अर्थि अपना सेवककूं वा मित्र पुत्रादिककूं कहै तुम जावो तथा या काम करदो ऐसैं कहना सो प्रेषण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमें तिष्ठतेनितैं बचनालाप करना तथा अन्य शब्दकी समस्या करि समझाय देना सो शब्द नाम अतीचार है।२। बहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं कोऊकूं बुलावना वा वस्त्रादिक वांछित वस्तुकूं शब्द कहि मंगावना सो आनयन नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बाह्य क्षेत्रमैं तिष्ठतेनिकूं समस्या वास्ते अपनारूप दिखावना सो रूपाभिव्यक्ति नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि मर्यादाके क्षेत्रके बाह्य क्षेत्रमैं वस्त्रादिक तथा कंकरी पाषाण काष्ठखंड आदिक फेंकि आपाकूं जितावना सो पुद्गलक्षेप नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं देशावकाशिकव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं ऐसैं देशावकाशिक व्रत कह करि अब सामायिकका स्वरूप कहै है—

असमयमुक्तिमुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन । सर्वत्र च सामयिकाः सामायिकं नाम शंसान्ति ॥ ९७ ॥

अर्थ—सामायिक कहिये परम साम्यभावकूं प्राप्त भये ऐसे गणधर देव हैं ते सामायिक नाम करि ताकी प्रगट प्रशंसा करै हैं जो सर्वत्र कहिये मर्यादा करी तिस क्षेत्रमैं अर मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं हू समस्त मनवचनकाय कृतकारितअनुमोदनाकरि कालकी मर्यादारूप जो समस्त पंचपापनिका त्याग सो सामायिक है। भावार्थ—समस्त पंचपापनिका कालकी मर्यादाकरि समस्तपनाकरि त्याग सो सामायिक है। अब सामायिकमैं पंचपापनिका त्याग करि कैसैं तिष्ठै सो कहै हैं—

मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यङ्कबन्धनं चापि । स्थानमुपवेशनं वा समयं जानान्ति समयज्ञाः ॥ ९८ ॥

अर्थ—समयज्ञ जे परमागमके जाननेवाले हैं ते मूर्द्धरुह जे केश तिनका बंधन अर मुष्टिबंधन अर वस्त्रबंधन अर पर्यंकासनबंधन हू जैसैं होय तैसैं स्थान कहियें खडा तथा उपवेशनं कहियें बैठा समय कहिये रागद्वेषादि रहित शुद्धात्मा जो है ताहि जानता रहै। भावार्थ—सामायिक करनैवाला कालकी मर्यादा परिणाम समस्त प्रकार पापनिका त्याग करि खडा होय करि तथा पर्यंकासन कर बैठै। अर पर्यंकासनमैं अपना वाम हस्ततल ऊपरि दक्षिण हस्ततलकूं स्थापन करै। अर अपना मस्तकका केश वा वस्त्र हलता होय तो परिणामके विक्षेप करै यातैं मस्तकके चोटी इत्यादिकके केश होय तिनकूं बांधिले अर वस्त्र हू बिखरि रह्या होय ताकूं हू गांठ देय बांधि करि सामायिक खडा हुआ करै वा बैठा हुआ करै। अब सामायिकके योग्य स्थानकूं कहै हैं—

एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तषु च । चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥ ९९ ॥

अर्थ—जिस स्थानमैं चित्तकूं विक्षेप करनेकें कारण नाहीं होय अर बहुत असंयमीनका आवना जावना नाहीं होय अर अनेक लोकनकरि वाद विवादादिकका कोलाहल नाहीं होय स्त्रीनिका नपुंसकनिका आगमन प्रचार नाहीं होय अर जहां गीत नृत्य वादित्रादिकनिका प्रचार नजीक नाहीं होय

अर तिर्यंचनिका अर पक्षीनिका संचार नाहीं होय और जहां बहुत शीतकी तथा उष्णताकी प्रचंड पवनकी वर्षाकी बाधा नाहीं होय तथा डांस माछर मक्षिका कीडा कीडी जवा मधुमक्षिका टांच्या सर्प बीछू कनसला इत्यादिक जीवनकृत बाधा नाहीं होय ऐसा विक्षेपरहित स्थान एकांत होय वा वन होय जीर्ण बागके मकान होय वा गृह होय वा चैत्यालय होय वा धर्मात्माजनानिका प्रोषधोपवास करनेका स्थान होय ऐसा एकान्त विक्षेपरहित वन होहु वा जीर्ण बाग तथा सूना गृहादिक चैत्यालयादिकमैं प्रसन्नचित्त हुआ सामायिकमैं परिचय करौ। अब सामायिककी और हू सामग्री कहिये है—

व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्त्यामन्तरात्मविनिवृत्त्या। सामायिकं बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा ॥ १०० ॥

सामायिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं। व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥ १०१ ॥

अर्थ—कायकी चेष्टारूप व्यापार तामैं विरक्तपनातैं बाह्य आरंभादिकतैं छूटि अर अंतरात्मा जो मन ताकूं विकल्परहित करिकैं अर उपवासके दिनविषै अथवा एकभुक्तिके दिनविषै सामायिकरूप तिष्ठै तथा आलस्यरहित पुरुष दिवस २ प्रति नित्य रोजीना यथावत् सामायिक जो है ताहि एकाग्र चित्तकरि युक्त हुवा परिचय करने योग्य है वृद्धि करने योग्य है। कैसाक है सामायिक अहिंसादिक पंचव्रतनिकी परिपूर्णताका कारण है। भावार्थ—सामायिक करनेमैं उद्यमी श्रावक है सो समस्त आरंभादिक कायकी क्रियाकूं त्याग करि अर मनका विकल्प छांडि सामायिक करै तिनमैं कोऊ तो पर्वका निमित्त पाय उपवास जिस दिन करै तिसही दिनमैं सामायिक करै कोऊ एक ठाणाके दिन सामायिक करै कोऊ नित्यप्रति सामायिक करै कोऊ एक दिवसकी आदि अंतमैं दोय बार नित्यप्रति सामायिक करै अथवा पूर्वाह्न मध्याह्न अपराह्न तीनकालविषै दोय दोय घडीका नियम करि साम्यभावकी आराधना करै सो एक स्थानमैं निश्चल पर्यंकासन तथा कायोत्सर्ग नाम निश्चल आसन धरि अंगउपंगानिका चलायमानपना छांडि काष्ठपाषाणकरि गढ्या प्रतिबिंबतुल्य अचल होय दशादिशानिकूं नाहीं अवलोकन करता

अपने अंगउपंगानिकूं नाहीं देखता किसीतैं वार्ता नाहीं करता समस्त पंच इंद्रियनके विषयानितैं मनकूं रोकि समस्त चेतन अचेतन द्रव्यनिमैं राग द्वेष हर्ष विषाद वैर स्नेहादिकानिकूं छांडि सामायिकमैं तिष्ठे है सामायिकमैं तिष्ठता समस्त जीवनिमैं मैत्री धारण करता परम क्षमा धारण करै है मैं सर्व जीवनिमैं क्षमा धारण करूं हूं कोऊ जीव मेरा बैरी नाहीं है मेरा उपार्जन किया मेरा कर्म ही बैरी है मैं अजानभावतैं क्रोधी अभिमानी लोभी होय करिकै विपरीत परिणामी हुआ जाकी प्रवृत्तिसूं मेरा अभिमानादिक पुष्ट नाहीं भया तिसकूं ही बैरी मान्या कोऊ मेरा स्तवन बडाई नाहीं करी मेरे कर्तव्यकी प्रशंसा नाहीं करी ताकूं वैरी समझ्या मेरा आदर सत्कार उठना स्थान देना इत्यादिकमैं मंद प्रवर्त्या ताकूं बैरी जान्या तथा कोऊ मेरा दोष छो ताकूं जनाया ताकूं बैरी जान्या तथा कोऊ मेरे आधिन नाहीं प्रवर्तन किया तथा मोकूं कुछ भोजन वस्त्र धनादिक नाहीं दिया ताकूं बैरी मान्या सो ये समस्त मेरी कषायतैं उपजी दुर्बुद्धितैं अन्य जीवनिमैं वैर बुद्धि ताहि छांडि क्षमा अंगीकार करूं हूं अर अन्य समस्त जीव हैं ते हू मेरा अज्ञानभाव विषयकषायांके आधीन जानि मेरे ऊपरि क्षमा करो मोकूं माफ करो ऐसैं बैर विरोधकी बुद्धिकूं छांडि मैं समस्तमैं समभाव धारि सामायिक अंगीकार करूं हूं जेते दोय घटिका परिमाणमैं मनकरि बचनकरि कायकरि समस्त पंच इंद्रियनिका विषयनिकूं समस्त आरंभ परिग्रहकूं त्यागकरि भगवान पंचपरमेष्ठीका स्मरण करता तिष्ठूं हूं ऐसैं सामायिकका अवसरमैं प्रतिज्ञाकरि पंच नमस्कारके अक्षरानिका ध्यान करता तथा पंच परमेष्ठीके गुणनिकूं स्मरण करता तथा जिनेन्द्रका प्रतिबिंबकूं चिंतवन करता सामायिकमैं तिष्ठे तथा अपणा आत्माका ज्ञाता द्रष्टा स्वभावकूं रागद्वेषतैं भिन्न अनुभव करता तिष्ठे तथा चार मंगल पद चार उत्तम पद चार शरण पदनिकूं चिंतवन करता तिष्ठे तथा द्वादशभावना षोडशकारणभावना चिंतवन करै अर चतुर्विंशाति तीर्थंकरनिका स्तवनमैं तथा एक तीर्थंकरकी स्तुति तथा पंच परम गुरुनिका स्तवनमैं इनके अर्थमैं एकाग्रचित्त धारण करि सामायिक करै तथा प्रतिक्रमण करनेकूं समस्त दिवसमें किये दोषानिकूं दिनका अंतमैं

चिंतवन करै अर समस्त रात्रिमैं जे दोष किये तिनकूं प्रभात समय चिंतवन करै जो यो मनुष्य जन्म अर तामैं भगवान सर्वज्ञ वीतरागका उपदेश्या धर्म अनंतकालमैं बहुत दुर्लभ प्राप्त भया है इस जन्मकी एक घडी हू धर्म विना व्यतीत मत होहू ऐसा विचार करै जो आजका दिनमें तथा रात्रिमैं जिनदर्शन पूजन स्तवनमैं केता काल व्यातीत किया अर स्वाध्याय सत्संगति तत्त्वार्थनिकी चर्चा तथा पंच परमेष्ठीनिका जाप ध्यानमैं तथा पात्रदानमैं केता काल व्यतीत किया अर बहुत आरंभमैं अर इंद्रियनिके विषयनिमैं अर व्यवहारादिक विकथामैं अर प्रमादमैं निंद्रामै काम सेवनमैं भोजनपानादि-कमैं आरंभादिकनिमै केता काल व्यतीत किया तथा मेरा मनवचनकायकी प्रवृत्ति तथा रागादिक संसारके कार्यनिमैं अधिक भई कि परमार्थमैं अधिक भई ऐसे समस्त दिवसका किया कर्तव्यकूं दिनका अंतमैं चिंतवन करै अर रात्रिका कियाकूं प्रभात समय चिंतवन करै जातैं जो पांच रुपयाकी पूंजी लेय बनिज करै है सो हू नित्य रोजाना अपना ठगावना कुमावना टोटा नफाकी संभाल करै है तो पूर्व पुण्यके प्रभावतैं इस जन्म लाया जो उत्तम मनुष्म जन्म वीतराग धर्म सतसंगति इंद्रियपरिपूर्णतादिक धन तिसमैं व्यवहार करता ज्ञानी अपनी आत्माके हानि वृद्धि नाहीं संभालि करै कहा? जो टोटा नफाकी संभाल नाहीं करै तो परलोकतैं ल्याया धर्मधनादिकनकूं नष्ट करि घोर तिर्यंच गतिमैं वा नारकीनिमै निगोदनिमें जाय नष्ट होजाय तातैं धर्मरूप धनका बधावनेका अर्थि एक दिनमैं दोय बार तो संभाल करै ही अर जो कषायनिके वशतैं जो अपने मनवचनकायकी दुष्ट प्रवृत्ति भई ताकूं वारंवार निंद्या करै हाय मैं दुष्ट चिंतवन किया तथा कायतैं दुष्ट क्रिया करी हाय मैं वचनकी प्रवृत्ति बहुत निंदा करी यामैं महा अशुभकर्मका बंध किया धर्मकूं दूषित किया अपयश प्रगट किया अब इस निंद्यकर्मकूं चिंतवन करते मेरे परिणाम पश्चात्तापकरि दग्ध होय हैं अहो! मोहकर्म बडा बलवान है जो मैं मेरे दुष्ट परि-णामनिकी दुष्टताकूं अर पापके करनेवाले अर दुर्गतिके ले जानेवाले हमारे निंद्य परिणामनिकूं नीकै

मेरा घात करनेवाले जानू हूं अर प्रयोजनरहित जानू हूं अर अपनी जीवितव्यकूं बहुत अल्प जानू हूं अर परलोकमें मेरे किये कर्मका फलकूं मैं ही अकेला ही भोगूंगा ऐसा अच्छी तरह वारंवार परिणामामैं निश्चय करूं हूं चिंतऊ हूं चिंतवन करते करते हू मेरा परिणाम जो अन्य जीवनितैं बैर अर विषयनिमैं राग नाहीं घटै है सो यो प्रबल मोहकर्मकी महिमा है याहीतैं मोहकर्मका नाश करि विजयकूं प्राप्त भये ऐसे पंच परमेष्ठीनिकूं स्मरण करूं हूं जो मोहकर्मके जीतनेवाले जिनेन्द्रका प्रभावकरि मेरे मोह कर्मतैं उपजे रागभाव द्वेषभाव कामादि विकारभाव तथा क्रोधभाव अभिमानभाव मायाचारके भाव लोभभाव मेरा नाशकूं प्राप्त होहू जैसी वीतरागता जिनेन्द्रभगवान पाई तैसी मेरे भी हो हू इस आभिप्रायतैं मैं कायतैं ममत्व छांडि पंचपरमेष्ठीका ध्यान सहित कायोत्सर्ग करूं हूं तथा अज्ञानभावतैं जो पूर्वकालमैं पृथ्वीकायका खोदना कुचरना कूटना इत्यादिक करि घात किया होय तथा अवगाहनेकरि बिलोवनकरि छिडकनेकरि स्नानादिककरि जलकायका जीवांकी विराधना करी तथा दाबनां बुझावना कसेरना कूटना इत्यादिककरि अग्निकायके जीवनिकी बिराधना करी तथा बीजणां इत्यादिक करि पवनकायका जीवांकी विराधना करी तथा जड कंद मूल छाल कूपल पत्र फूल फल डाहला डाहली सींख तृण घास बेल गुल्म वृक्षादिकानिका तोडना छेदना बनारना उपाडना चबाना रांधना वांटना इत्यादिककरि वनस्पतिकायकी विराधना करी तिनतैं उत्पन्न भया पापकर्म तिनका नाश परमेष्ठीके जाप्यके प्रभावतैं मेरे हो हू अर परमेष्ठीके ध्यानका प्रभावतैं अब मेरा परिणाम छह कायानिके जीवनिकी घाततैं पराङ्मुख हो हू संयमभावकी प्राप्त हो हू। बहुरि जो मेरे गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं पसारनेमैं संकोचनेमैं भोजनमैं पानीमैं आरंभमै उठावनेमै मेलनैमैं तथा चाकी चूल्हा औखली बुहारी जलका परीडा अर सेवा कृषी विद्या वाणिज्य लिखना शिल्पकर्म जीविकामैं तथा गाडी घोडा इत्यादिक बाहननिमैं प्रर्वतन करि जो मेरी यत्नाचाररहित प्रवृत्ति ताकरि जो द्विइंद्रिय त्रिइंद्रिय चतु-

रिन्द्रिय पंचेंद्रिय जीवनिकी विराधना भई होय सो मिथ्या होहु। मैं बुरी करी ये आरंभादिक भला नाहीं संसारमें डबोनेवाले हैं नरक देनेवाले हैं इन आरंभविषय कषायनिकरि ही यो जीव एकेन्द्रिया-दिक तिर्यंचनिमैं अनंतानंतकाल क्षुधा तृषा मारन ताडन लादन बंधन बालन छेदन फाडन चीरन चाबन इत्यादिक घोर दुःख भोगता ते हिंसातैं उपजाया कर्मको नाशके अर्थि अर आगाने हिंसारूप परिणामका अभावके अर्थि मैं पंच नमस्कार पदका शरण ग्रहण करूं हूं। बहुरि अज्ञान भावते व प्रमादतैं जो मैं असत्य वचन कह्या तथा गाली दीनी तथा भंडवचन कह्या तथा मर्मछेद करनेवाले कर्कश वचन व कठोर कह्या तथा किसीकूं चोरीका कलंक लगाया किसीकूं कुशीलका कलंक लगाया तथा धर्मात्मा ज्ञानी तपस्वी शीलवंतानिकूं दोष लगाया तथा धर्मात्मानिकी निंदा करी तथा सांचे देवधर्म-गुरुकी निंदा करी तथा मिथ्याधर्मकी पोषणा करी हिंसाकी प्रवृत्तिका उपदेश किया तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करी तथा स्त्रीनिकी कथा राजकथा भोजनकथा देशकथा इत्यादिक घोर पापनिमैं मेरा वचन प्रवर्त्या ताका अब पश्चात्ताप करूं हूं। मैं घोर कर्मका बंध किया जाका फल नरकानिके दुःख तथा तिर्यंचगतिनिके घोर दुःख अनंतकाल भोगने हैं अर अनंतकाल गूंगा बहिरा आंधा नीच जाति नीच कुलमैं महा दारिद्रसहित उपजवना है यातैं अब दुष्ट वचनके बोलनेकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर अब आगाने मेरे दुष्ट वचनमैं प्रवृत्ति कदाचित मत होहू इस वास्ते मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि अज्ञानभावतैं वा प्रमादतैं पूर्वकालमैं जो मैं परका विना दिया धन गिऱ्या पड्या भूल्या ग्रहण करनेमैं परिणाम किया कपटछलतैं ठग्या तथा जबर होय परका धन राखि मेल्या नाहीं दिया तो बहुत संक्लेश आपकै अर अन्यकै उपजाय दिया तातैं घोर पाप उपजाया ताका फल नरक तिर्यंचादि गतिनिमैं परिभ्रमण अनंतकालपर्यंत दरिद्रादिक घोर दुःख होना है यातैं चोरीकरि उपजाया जो पाप कर्म ताका नाशके अर्थि अर आगानै मेरा पराया धन विना दिया ग्रहण करनेमैं परिणाम कदाचित् मत होऊ

अशरण है यामैं अनंतानंत जन्म मरण करते अनंतकाल व्यतीत भयो अर समस्त पर्यायनिमैं क्षुधा तृषा रोग वियोग मारन ताडन भोगतैं कहूं शरण नाहीं जो कोऊ कालमैं कोऊ क्षेत्रमैं कोऊ रक्षा करनेवाला नाहीं तातैं संसार अशरण है। बहुरि अशुभकर्मके बंधनकरि दुःखका देनेवाला अशुभदेहरूप पिंजरामैं फस्या हुआ अशुभ कषायनिरूप अशुभभावनिमैं लीन हुआ निरंतर अशुभका ही बंध करता अशुभहीकूं भोगै है तातैं यो संसार अशुभ है। बहुरि इस संसारमैं जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण करते करते कदाचित सुक्षेत्रमैं वास उत्तमकुल इंद्रियपरिपूर्णता सुंदररूप प्रबलबुद्धि जगतमैं पूज्यता मानता तथा राज्यसंपदा धनसंपदा सुन्दर मित्रनिका संगम आज्ञाकारी महाप्रवीण सुपुत्र मनोहर बल्लभाका संगम तथा पण्डितपना सूरपना बलवानपना आज्ञा ऐश्वर्यादिक मनोवांछित भोग नीरोग शरीरादिक कर्मके उदयकरि पा जाय तो क्षणमात्रमैं विजुलीवत् इंद्र धनुषवत् इंद्रजालिका नगरवत् नियमतैं विलाय जाय हैं। फिर अनंतानंतकालमैं हू नाहीं प्राप्त होय हैं तातैं संसार अनित्य है अर समस्त कालमैं कर्मबंधनसहित देहपिंजरमैं फस्या अनंतानंत जन्ममरणादिकनिकरि सहित है अनंतकालहूमैं दुःखका अभाव नाहीं तातैं संसार दुःख ही है। बहुरि संसारपरिभ्रमणरूप मेरा आतमा नाहीं तातैं संसार अनातमा है ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ चिंतवन करै है अहो परिभ्रमणरूप संसार है सो अशरण है अनित्य है दुःखरूप है अर मेरा स्वरूप नाहीं ऐसा संसारमैं मिथ्याज्ञानका प्रभावकरि मैं अनंतकालतैं वास करूं हूं। अब मोक्ष जो संसारतैं छूटना है सो मेरा आतमाकूं शरण है फिर अनंतानंत कालमैं हू संसारमैं आवनेकरि रहित है बहुरि शुभ है अनंत कल्याणरूप है बहुरि नित्य है अविनाशी है बहुरि अनंतानंतस्वरूप है जामैं अनंतज्ञानादि अर अनाकुलतारूप है अर मेरा आतमाका स्वरूप है पररूप नाहीं ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ संसारका अर मोक्षका स्वरूप चिंतवन करै है। साम्यभाव सहित सामायिक दोय घडी मात्र हो जाय तो महान कर्मकी निर्जरा है सामायिककी महिमा कहनेकूं इंद्र हू समर्थ नाहीं है सामायिकके

प्रभावतैं अभव्य हू ग्रैवेयिक पर्यंत उपजै हैं। सामायिक समान धर्म कोऊ हुयो न होसी यातैं सामायिक अंगीकार करना ही आत्माका हित है। अर जाकै सामायिकादिकका पाठका ज्ञान नाहीं आवै नाहीं ते पंचनमस्कारमात्र ही एकाग्रतातैं मनवचकायकूं निश्चलकरि समस्त आरंभ कषायविषयनिका त्याग करि पंचनमस्कार मंत्रका ध्यान करता दोय घटिका पूर्ण करो। अब सामायिकके पंच अतीचार कहै हैं—

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥

अर्थ—ए पांच सामायिकका भावनिकरि अतीचार हैं सामायिक करते वचनकी संसारसंबंधी प्रवृत्ति करना सो वचनदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि शरीरकी संयमरहित चलायमानपनाकी चेष्टा सो कायदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि मनमैं आर्तरौद्रादिक चिंतवन करै सो मनोदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि सामायिककूं उत्साहरहित निरादरतैं करै सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि सामायिक करता देववंदनादिक पाठ भूलि जाय वा कायोत्सर्गादिक भूलि जाय सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचारसहित सामायिकका वर्णन किया। अब प्रोषधोपवासकूं वर्णन करै हैं—

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभिः ॥ १०६ ॥

अर्थ—पर्वणि जो चतुर्दशी अर अष्टमीका दिवसरात्रिविषै चार प्रकारका आहारका जो सम्यक् इच्छा करि त्याग करना सो प्रोषधोपवास जानने योग्य है। एकमासविषैं दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ए अनादितैं पर्व ही हैं इन पर्वनिमैं गृहस्थ व्रतसंयमसहित ही रहै जातैं धर्मात्मा संयमी हैं ते तो सदाकाल व्रती ही रहै हैं यातैं धर्ममैं अनुरागका धारक गृहस्थ एक महीनामैं चार दिन तो समस्त पापके आरंभ अर इंद्रियनिके विषयनिकूं नष्ट करि व्रतशीलसंयमसहित उपवास धारण करि चार प्रकारका आहारका त्याग करि संयम सहित तिष्ठै ताकै प्रोषधोपवास जानना। अब प्रोषधोपवासका विशेष कहैं हैं। सप्तमीके

इसवास्ते मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि परकी स्त्रीके रूप आभरण वस्त्र भाव विलासकूं राग भावतैं देखनेकी इच्छा करि तथा राग भावतैं देखी तथा संगमादिक किया तातैं उपार्जन किया घोर पाप जाका फल अनंतकालपर्यंत नरकगतिनिमैं परिभ्रमण करि अनेक भवनिमैं हजारां रोगका पावना तथा दरिद्रादि दुःख भोगना तथा बहुत कालपर्यंत कामरूप अग्निकरि दग्ध भया असंख्यात भवनिमैं कामवेदनाकरि पीडित हुआ लडि लडि मर जाना है तातैं परस्त्रीकी बांछाकरि उपजाया पाप-कर्मका नाशके अर्थि अर आगामी कालमैं मेरा अन्यकी स्त्रीमें अनुराग कदाचित् मत होऊ इसवास्ते मैं पंचपरमगुरुनिका पंचनमस्कारमंत्रका ध्यान करूं हूं। बहुरि मैं अज्ञानी परिग्रहमैं बडी ममता करि शरी-रादिक पुद्गलकूं मेरा मानि यामैं ही आपा जान्या तथा रागादिकभाव मोहकर्मके उदयतैं भया तिनिकूं अपना भाव मानि परद्रव्यनिमैं बडी आसक्तता करी धनधान्य कुटुम्बादिककी वृद्धिकूं अपनी वृद्धि मानी इनकी हानिकूं अपनी हानि मानी अर अब हू जायगा हाट आजीविका स्त्री पुत्र धन धान्य आभरण वस्त्रादिक हजारां वस्तुरूप परिग्रहमैं हमारा हमारा ऐसी बुद्धिमैं विपरीतता लग रही है जो आपका ज्ञान परका ज्ञान पापपुण्यका ज्ञान परलोकका ज्ञान नष्ट होय रह्या है कण्ठगत प्राण हो जाय तो हू ममता नाहीं घटै है अर जगतमैं प्रत्यक्ष देखै है जो किसीकी लार परिग्रह गया नाहीं मेरी लार जायगा नाहीं तो हू दिन प्रति बधाया चाहै है यामैं मरण करूं तहां पर्यंत किंचित् मत घट जावो इसप्रकार ही निरंतर चिंतवन रहै है इस परिग्रहरूप दावाग्निकूं संतोषरूप जलकरि नाहीं बुझाया चाहै है समस्त पापनिका मूल एक परिग्रहमैं मूर्छा है मैं अज्ञानी याहीका आरम्भमैं याहीमैं ममता धारण करनेकरि अनंतकालमैं दुर्लभ ऐसा मनुष्य जन्म जिनधर्म पाया ताहि बिगाडि अनंतभवनिमैं नरक तिर्यंच गातिनिके दुःखकूं अंगीकार किया ताका मेरे बडा पश्चात्ताप है अब ऐसे घोर पापकर्मके नाश करनेका उपाय भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण विना कोऊ दूजा है नाहीं अर आगामी कालहूमैं परिग्रहमैं विरक्तताका करानेवाला

भगवान पंचपरमेष्ठी विना कोऊ है नाहीं यातैं मूर्छाका नाशके अर्थि परम संतोष उपजनेके अर्थि परिग्रहका त्यागके अर्थि पंचनमस्कारका ध्यानपूर्वक कायोत्सर्ग करूं हूं ॥ अब सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ कैसा है सो कहै हैं—

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि। चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावं ॥ १०२ ॥

अर्थ—गृहस्थ जे हैं तिनके सामायिकके अवसरविषै आरम्भकरि सहित समस्त ही परिग्रह नाहीं है यातैं सामायिक करता गृहस्थ जो है सो वस्त्रसहित मुनिकी ज्यों यतिका भावकूं प्राप्त होय है। भावार्थ—सामायिकके अवसरमैं समस्त आरम्भ अर समस्त परिग्रह नाहीं है परन्तु गृहस्थ है यातैं वस्त्र पहरै है तातैं वस्त्रविना अन्य प्रकार तो मुनितुल्य ही है मुनिकै नग्नपना होय है याकै वस्त्रधारण है एता ही अंतर है तातैं मुनि नाहीं कह्या जाय है। बहुरि जो उपसर्ग परीषह आजाय तो मुनीश्वरनिकी ज्यों धीरता धारण करि सकै कायर नाहीं होय ऐसैं सूत्र कहै हैं—

शीतोष्णदंशमशकपरिषहमुपसर्गमपि च मौनधराः। सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ १०३ ॥

अर्थ—सामायिककूं धारण करता गृहस्थ मौनकूं धारण करै है अर मनवचनकायकूं नाहीं चलायमान करता शीत उष्ण देशमशकादि परीषह अर चेतन अचेतनकृत उपसर्गनिकूं सहै है। भावार्थ—सामायिक करनेके अवसरमैं जो शीतका उष्णताका वर्षाका पवनका डांस मांछर दुष्टनिके दुर्वचन रोगपीडादिका परीषह आजाय तथा दुष्ट वैरीकरि किया तथा सिंह व्याघ्र सर्पादिक तथा अग्निजलादिकजनित उपसर्ग आजाय तो बडा धैर्य धारणकरि मनवचनकायकूं साम्यभावतैं नाहीं चलायमान करता मौनसहित समस्तकूं सहै है। अब सामायिक करता संसारका स्वरूपकूं अर मोक्षके स्वरूपकूं ऐसैं चिंतवन करै है—

अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम्। मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ १०४ ॥

अर्थ—सामायिक धारता गृहस्थ संसारकूं ऐसे चिंतवन करै यो चतुर्गतिमैं परिभ्रमणरूप संसार

अशरण है यामैं अनंतानंत जन्म मरण करते अनंतकाल व्यतीत भयो अर समस्त पर्यायनिमैं क्षुधा तृषा रोग वियोग मारन ताडन भोगतैं कहूं शरण नाहीं जो कोऊ कालमैं कोऊ क्षेत्रमैं कोऊ रक्षा करनेवाला नाहीं तातैं संसार अशरण है। बहुरि अशुभकर्मके बंधनकरि दुःखका देनेवाला अशुभदेहरूप पिंजरामैं फस्या हुआ अशुभ कषायनिरूप अशुभभावनिमैं लीन हुआ निरंतर अशुभका ही बंध करता अशुभहीकूं भोगै है तातैं यो संसार अशुभ है। बहुरि इस संसारमैं जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण करते करते कदाचित सुक्षेत्रमैं वास उत्तमकुल इंद्रियपरिपूर्णता सुंदररूप प्रबलबुद्धि जगतमैं पूज्यता मानता तथा राज्यसंपदा धनसंपदा सुन्दर मित्रनिका संगम आज्ञाकारी महाप्रवीण सुपुत्र मनोहर वल्लभाका संगम तथा पण्डितपना सूरपना बलवानपना आज्ञा ऐश्वर्यादिक मनोवांछित भोग नीरोग शरीरादिक कर्मके उदयकरि पा जाय तो क्षणमात्रमैं विजुलीवत् इंद्र धनुषवत् इंद्र जालीका नगरवत् नियमतैं विलाय जाय हैं। फिर अनंतानंतकालमैं हू नाहीं प्राप्त होय हैं तातैं संसार अनित्य है अर समस्त कालमैं कर्मबंधनसहित देहपिंजरमैं फस्या अनंतानंत जन्ममरणादिकनिकरि सहित है अनंतकालहूमैं दुःखका अभाव नाहीं तातैं संसार दुःख ही है। बहुरि संसारपरिभ्रमणरूप मेरा आत्मा नाहीं तातैं संसार अनात्मा है ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ चिंतवन करै है अहो परिभ्रमणरूप संसार है सो अशरण है अनित्य है दुःखरूप है अर मेरा स्वरूप नाहीं ऐसा संसारमैं मिथ्याज्ञानका प्रभावकरि मैं अनंतकालतैं वास करूं हूं। अब मोक्ष जो संसारतैं छूटना है सो मेरा आत्माकूं शरण है फिर अनंतानंत कालमैं हू संसारमैं आवनेकरि रहित है बहुरि शुभ है अनंत कल्याणरूप है बहुरि नित्य है अविनाशी है बहुरि अनंतानंतस्वरूप है जामैं अनंतज्ञानादि अर अनाकुलतारूप है अर मेरा आत्माका स्वरूप है पररूप नाहीं ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ संसारका अर मोक्षका स्वरूप चिंतवन करै है। साम्यभाव सहित सामायिक दोय घडी मात्र हो जाय तो महान कर्मकी निर्जरा है सामायिककी महिमा कहनेकूं इंद्र हू समर्थ नाहीं है सामायिकके

प्रभावतैं अभव्य हू ग्रैवेयिकपर्यंत उपजै हैं। सामायिक समान धर्म कोऊ हुयो न होसी यातैं सामायिक अंगीकार करना ही आत्माका हित है। अर जाकैं सामायिकादिकका पाठका ज्ञान नाहीं आवै नाहीं ते पंचनमस्कारमात्र ही एकाग्रतातैं मनवचकायकूं निश्चलकरि समस्त आरंभ कषायविषयनिका त्याग करि पंचनमस्कार मंत्रका ध्यान करता दोय घटिका पूर्ण करो। अब सामायिकके पंच अतीचार कहै हैं—

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥

अर्थ—ए पांच सामायिकका भावनिकरि अतीचार हैं सामायिक करते वचनकी संसारसंबंधी प्रवृत्ति करना सो वचनदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि शरीरकी संयमरहित चलायमानपनाकी चेष्टा सो कायदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि मनमैं आर्तरौद्रादिक चिंतवन करै सो मनोदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि सामायिककूं उत्साहरहित निरादरतैं करै सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि सामायिक करता देववंदनादिक पाठ भूलि जाय वा कायोत्सर्गादिक भूलि जाय सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचारसहित सामायिकका वर्णन किया। अब प्रोषधोपवासकूं वर्णन करै हैं—

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभिः ॥ १०६ ॥

अर्थ—पर्वणि जो चतुर्दशी अर अष्टमीका दिवसरात्रिविषै चार प्रकारका आहारका जो सम्यक् इच्छा करि त्याग करना सो प्रोषधोपवास जानने योग्य है। एकमासविषैं दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ए अनादितैं पर्व ही हैं इन पर्वनिमैं गृहस्थ व्रतसंयमसहित ही रहै जातैं धर्मात्मा संयमी हैं ते तो सदाकाल व्रती ही रहै हैं यातैं धर्ममैं अनुरागका धारक गृहस्थ एक महीनामैं चार दिन तो समस्त पापके आरंभ अर इंद्रियनिके विषयनिकूं नष्ट करि व्रतशीलसंयमसहित उपवास धारण करि चार प्रकारका आहारका त्याग करि संयम सहित तिष्ठै ताकै प्रोषधोपवास जानना। अब प्रोषधोपवासका विशेष कहैं हैं। सप्तमीके

दिन वा त्रयोदशीके दिन मध्याह्नकाल पहली एक वार भोजनपानादिक करि समस्त आरंभ वाणिज सेवा लेन देनका त्याग करि देहादिकमैं ममत्व त्यागि एकांत वस्तिका तथा जिनमंदिरमैं एकांतस्थान वा वनके चैत्यालय वा शून्य गृह मठादिक वा प्रोषधोपवास करनेका स्थानमैं जाय समस्त विषय कषायनिका त्याग करि मनवचनकायकी प्रवृत्तिकूं रोकि धर्मध्यान करिकैं वा स्वाध्याय करिकैं सप्तमी वा त्रयोदशीका अर्द्ध दिनकूं व्यतीत करै। पाछैं संध्याकाल संबंधी देववंदनादिक करि रात्रिनै धर्मकथा वा जिनेन्द्रका स्तवनादिक करि रात्रि व्यतीत करै वा धर्मध्यान करता शोधित संथरामैं अल्पकाल प्रमाद टालि रात्रि व्यतीत करै अष्टमी चतुर्दशीका प्रातःकालमैं सामायिकादिक वंदना करि तथा प्राशुक द्रव्यनितैं पूजन-करि शास्त्रका अभ्यासकरि भावनाका चिंतवनकरि धर्मध्यानसहित अष्टमी चतुर्दशीका दिन अर समस्त रात्रिकूं व्यतीतकरि नवमी वा पूर्णिमाका प्रभातसंबंधी कर्म क्रिया करि पूजनादि वंदना करि उत्तम मध्यम जघन्य पात्रमैं कोऊ पात्रका लाभ होय ताकूं भोजन कराय आप पारनौ करै। ऐसैं षोडश प्रहर धर्मसहित व्यतीत करै ताकैं उत्कृष्ट प्रोषधोपवास होय है। तथा कार्तिकेयस्वामी कह्या है जो अष्टमी चतुर्दशीके दिन स्नान विलेपन आभूषण स्त्रीसंसर्ग पुष्प अतर फुलेल धूपदीपादिकानितैं त्याग जो ज्ञानी वीतरागतारूप आभरण करि भूषित हुआ दोऊ पर्वनिमैं सदा काल उपवास करै वा एक वार भोजन करै वा नीरस भोजन करै ताकै प्रोषधोपवास होय है तथा अमितगतिश्रावकाचारमैं परवीका दिनमैं उपवास अनुपवास एकभुक्त ऐसैं तीन प्रकार कह्या है। तिनमैं चार प्रकार आहारका त्यागकूं उपवास कह्या अर एक वार जल ग्रहण करै ताकूं अनुपवास कह्या अर एक वार अन्न जल ग्रहण करना ताकूं एकभुक्त ऐसी संज्ञा है परंतु तात्पर्य ऐसा जानना जो अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय करिकैं धर्ममैं लीन भया उपवास करै तथा आगैं प्रोषधप्रतिमा चतुर्थी कहसी तिसविषै तो षोडशप्रहरका नियम जानना अर दूजी व्रतप्रतिमामैं यथाशक्ति व्रत तप संयम धारण करि पर्वामैं धर्मध्यानसहित रहना ॥ अब उपवासमैं और हू वर्णन करै हैं—

पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणां । स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥ १०७ ॥

अर्थ—उपवासके दिन हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करि रहै अर अलंक्रिया कहिये आभरणादिक मंडनका त्याग करै अर गृहकार्यका आरंभ जीविकाका आरंभ छांडै अर सुगंधि केशर कपूरादिक तथा अतर फुलेलादिक गंधके ग्रहणका त्याग करै अर पुष्पनिका ग्रहण करनेका त्याग करै बहुरि स्नान करनेका नेत्रमें अंजन आंजनेका अर नास लेनेका त्याग करै तथा और हू नृत्य वादित्रके बजावनेका देखनेका श्रवणका त्याग करै। तथा और हू पंच इंद्रियनिके भोगका त्याग करै जातैं उपवास करि है सो इंद्रियनिका मद मारनेकूं अर इंद्रियनिका विषयनिमैं गमन है ताके रोकनेकूं अर कामके मारनेकूं प्रमाद आलस्यादिकनिके रोकनेकूं नष्ट करनेकूं आरंभादिकतैं विरक्त होनेकूं परीषह सहनेमैं सामर्थ्य होनेकूं धर्मके मार्गतैं नाहीं चिगनेकूं जिह्वाइंद्रिय उपस्थइंद्रियके दंड देनेकूं उपवास करिये है अर अपनी प्रशंसा वा लाभ वा परलोकमैं राज्यसंपदादिक प्राप्त होनेकूं उपवास नाहीं करिये है। केवल विषयानुराग घटावनेकूं शक्ति बधावनेकूं उपवास करिये है। जातैं इंद्रियां खानपानादिकके नाना स्वादमैं निरंतर प्रवर्तै हैं उपवास करनेतैं रसादिकके भोजनमैं लालसा नष्ट होजाय निद्राका विजय होजाय काम मार्या जाय तातैं उपवासका बडा प्रभाव जानि उपवास करिये है। अब उपवासका दिन कैसे व्यतीत करै सो कहै हैं—

धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान् । ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ १०८ ॥

अर्थ—उपवास करता गृहस्थ है सो निरालसी हुआ संता ज्ञानका अभ्यासमैं अर धर्मध्यानमैं तत्पर होहू अर अतितृष्णारूप हुआ धर्मरूप अमृतका पान कर्णइंद्रियकरि करि हू। अर अन्य भव्य जीवनिकूं धर्मरूप अमृतका पान करावो। भावार्थ—उपवासके दिन धर्मकथा श्रवण करो तथा अन्य धर्मात्मानिकूं धर्मश्रवण करावो ज्ञानका अभ्यासकरि वा धर्मध्यानमैं लीनता करि ही उपवासका अव-

सर व्यतीत करो। आलस्य निद्राकरि व्यतीत मत करो। तथा आरंभादिकमैं विकथामैं काल व्यतीत मत करो। उपवासका अर्थ कहै हैं—

चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः। स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥ १०९ ॥

अर्थ—असन पान खाद्य स्वाद्य ये च्यार प्रकारके आहार इनका त्याग सो उपवास है अर धारणाका दिन विषैं अर पारणाका दिनविषैं एकवार भोजन करना सो प्रोषध कहिये है ऐसैं षोडश प्रहर भोजनादिक आरंभ छांडि पाछैं भोजनादिक आरंभ आचरण करै सो प्रोषधोपवास है ॥ अब उपवासके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे। यत्प्रोषधोपवासे व्यतिलङ्घनपञ्चकं तादिदं॥११०॥

अर्थ—जो प्रोषधोपवासके पंच अतीचार हैं ते ऐसैं जानने, नेत्रनितैं देख्यां विना अर कोमल उपकरणतैं शुद्ध किये विना जो पूजाके तथा स्वाध्यायके उपकरण ग्रहण करना ॥ १ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना उपकरणनिका मेलना अथवा शरीरके हस्त पदादिक पसारना ॥ २ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना आस्तरण जो शयन करनेका उपकरण बिछावना बैठना ॥ ३ ॥ ऐसैं ए तीन अतीचार हैं। बहुरि उपवासमैं अनादर करना उत्साहित रहित करना सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि उपवासके दिन क्रिया पाठ करनेकूं भुल जाना सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं उपवासके पंच अतीचार कहे ते टालने योग्य हैं। अब वैयावृत्य नामा शिक्षाव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं इस व्रतकूं अतिथिसंविभाग नाम हू कहिये है—

दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये। अनपेक्षितोपचारोपाक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १११ ॥

अर्थ—यहां परमागममैं दानहीकूं वैयावृत्य कहिये है जाकै तपही धन है अर्थात् जो इच्छानिरोधादिक तपहीकूं अपना अविनाशी धन जानै है जातैं तप विना समस्त कर्मकलंकमलरहित आत्माका शुद्ध

स्वभावरूप अविनाशी धन नाहीं पाइये तातैं रागादिक कषायमलका दग्ध करनेवाला ऐसा तपरूप धन ग्रहण किया अर जो संसारमैं नष्ट करनेवाला जड अचेतन विनाशीक सुवर्णादिकका त्याग किया ऐसा जो तपकी निधि जो परम वीतरागी दिगंबर यतिनकूं आप दातारके अर पात्रके धर्मप्रवृत्तिके अर्थि जो दान देना सो वीतरागी यतीनकी वैयावृत्य है, कैसे हैं दिगंबर यति सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र इत्यादिक गुणनिका निधान हैं बहुरि कैसे हैं यातैं नाहीं है अंतरंग बहिरंग परिग्रह जिनके ऐसे मठ मकान उपासरा आश्रमादिकरहित एकाकी अथवा गुरुजनाकी चरणाकी लार कदे वनमैं कदे पर्वतनिकी निर्जन गुफानिमैं कदे घोर वनमैं नदीनके तटनिमैं नियम रहित है नित्य विहार जिनका असंयमीनिका गृहस्थनिका संगमरहित आत्माकी विशुद्धता जो परम वीतरागताकूं साधता अर लौकिकजनकृत पूजा स्तवन प्रशंसादिककूं नाहीं चाहता परलोकमैं देवलोकादिकनिके भोगनिकूं तथा इंद्रपनाका अहिमिंद्रपनाका ऐश्वर्यकूं रागरूप अंगारेनिकरि तप्त महान् आताप उपजावनेवाली तृष्णाके बधावनेवाले जानि परम अतींद्रिय आकुलतारहित आत्मीक सुखकूं सुख जानता देहादिकमैं ममत्वरहित आत्मकार्य साधै हैं ऐसे साधुजनका वैयावृत्यका लाभ अनंतकालमैं दुर्लभ है। कैसे हैं साधु यद्यपि इस देहतैं अत्यंत निर्ममत्व है तो हू देहकूं रत्नत्रयका सहकारी कारण जानि रस नीरस करडा नरम आहार देय रत्नत्रयका साधनकरि धर्मके अर्थि इस कृतघ्नदेहकी रक्षा करै हैं जो अकालमैं देह नष्ट होय जायगा तो मरकरि देवादिक पर्यायमैं असंयमी जाय उपजूंगा तहां असंख्यातकालपर्यंत असंयमी हुआ कर्मका बंध करूंगा तातैं जो आहारादिकका त्याग करि इस मनुष्यपनाका देहकूं मारूंगा तो कर्ममय कार्माण देह नाहीं मरैगा इस देहकूं मारूंगा तो नवीन और देह धारण करूंगा तातैं इन समस्त शरीरके उत्पन्न करनेका बीज जो कर्ममय कार्माणदेह है याके मारनेमैं यत्न करूं यातैं कषायनिकूं जीतता विषयनिका निग्रह करता छियालीस दोषटालि बत्तीस अंतरायरहित चौदहमलका परिहार

करिकैं आपके निमित्त नाहीं किया ऐसा शुद्ध आहारकी योग्यता मिल जाय तो अर्द्ध उदर तो भोजनतैं भरै चतुर्थभाग जलतैं भरै चतुर्थभाग ध्यान अध्ययन कायोत्सर्गादिकमैं सुखतैं प्रवृत्तिके अर्थि खाली राखै है। न्योंत्या बुलाया जाय नाहीं याचना करै नाहीं हस्तादिककी समस्या करै नाहीं ऐसैं साधुनकूं जो आहारादिकका दान सो वैयावृत्य है। कैसाक है दान अनपेक्षितोपचारोपक्रिय जो प्रत्युपकार कहिये हमारा हू कुछ उपकार करैगा वा उपक्रिय कहिये हमकूं प्रसन्न होय विद्या मंत्र औषधादिक देगा तथा मुनीश्वरनिके अर्थि देनेतैं मेरी नगरमैं दातापनाकरि मान्यता होजायगी वा राज्यमान्य हो जाऊंगा वा मेरे घरमैं अटूट धन हो जायगा तातैं आगैं पंचाश्चर्य भये हैं मेरे हू लाभ होयगा ऐसा विकल्प अर वांछा नाहीं करता केवल रत्नत्रयका धारकनिकी भक्तिकरि आपकूं कृतार्थ मानि अपना मनवचनकायकूं तथा गृहचारा पायाकूं कृतार्थ मानता दान करै है आनंदसहित आपकूं कृतकृत्य मानै है सो वैयावृत्य है। वैयावृत्यका अन्य हू स्वरूप कहै हैं—

व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात्। वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनां ॥ ११२ ॥

अर्थ—संयमीनके जो व्यापत्तिव्यपनोद कहिए नाना प्रकारकी जे आपदा ताहि दूर करना अर संयमीनका चरणमर्द्दनादिक करना और हू जो संयमीनका गुणमैं अनुराग करि यावन्मात्र उपकार करना सो वैयावृत्य है। भावार्थ—साधुनिके ऊपरि कोऊ देव मनुष्य तिर्यंच वा अचेतनकरि किया उपसर्ग आया होय तो अपनी शक्तिप्रमाण उपसर्ग दूर करै तथा चोर भील दुष्टादिक मार्गमैं खेदित किया होय अर परिणाम क्लेशित होय गया होय तिनकूं धैर्य धारण करावना तथा मार्गकरि खेदित भया होय ताका पादमर्दनादिक करना रोगी होय ताका संयम मलीन नाहीं होय तैसैं यत्नाचारतैं आसन शय्या वस्तिकाका सोधना यत्नाचारपूर्वक उठावना बैठावना शयन करावना मलमूत्रादिक कराय देना जो अबुद्धिपूर्वक मलमूत्रादिक अयोग्य स्थानमैं वा वस्तिकामैं भया होय तो यत्नतैं अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपना

तथा कफ नासिका मलादिककूं पूंछना उठाय अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपणा आहार औषधादिक संयमीके योग्य होय तिनकूं अवसरमैं देय वेदना दूर करना तथा कालके योग्य बाधारहित वस्तुका देना वेदना करि चलायमान चित्त होगया होय तो उपदेश देय चित्तकूं थांभना धर्मकथा करना अनुकूल प्रवर्तना गुणनिका स्तवन करना ऐसैं संयमीनिका गुणनिमैं अनुराग करि जेता उपकार करना सो समस्त वैयावृत्य है। अब वैयावृत्यमैं प्रधान आहारदान है ताकूं कहिये हैं—

नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन। अपसूनारम्भाणामार्याणामिष्यते दानं ॥ ११३ ॥

अर्थ—सप्त गुणनिकरि सहित जो दातार है सो सून अर आरम्भ करि रहित जे आर्य कहिये सम्यग्दर्शनके धारक मुनि तिनकूं नवपुण्य परिणामनिकरि जो प्रतिपत्ति कहिये गौरव आदर करि अंगीकार करना ताहि दान कहिये है। भावार्थ—दान करना सो तीन प्रकारके पात्रनिकूं करना तिनमैं जो चाकी चूल्हा ओखली बुहारी परींडा ये तो पंच सून अर द्रव्यका उपार्जनकूं आदि लेय समस्त आरंभ अर पंच सून करि रहित तो उत्तम पात्र दिगम्बर साधु है। अर व्रतनिका धारक श्रावक मध्यमपात्र है अर व्रतकरि रहित अर सम्यक्त्वकरि सहित जघन्य पात्र है तिनमैं उत्तमपात्रादिकनिकूं दानका देनेवाले दातारके सप्त गुण हैं। दान देय इस लोकसंबंधी विख्यातता लोकमान्यता राजमान्यता धनधान्यादिककी वृद्धि यशकीर्तनादिक इस लोकसंबंधी फल न चाहिये ॥ १ ॥ बहुरि दातार क्रोधकषायकूं नाहीं प्राप्त होय जो बहुत लेनेवाले हैं कौन कौनकूं देवैं ऐसा क्रोध नाहीं करै मुनि श्रावकादिकनिकूं दान देना ॥ २ ॥ बहुरि कपटकरि सहित दान नाहीं करै कहना और, करना और, लोकनिकूं भक्ति दिखावेमाहि संक्लेशित न होना ऐसा कपटकरि रहित दान करै ॥ ३ ॥ अन्य दातारतैं इर्ष्यारहित होय दान करै जो इसने कहा दिया है मैं ऐसा दान करूं जो मेरा दानतैं इसका यश घटि जाय ऐसैं ईर्ष्याभावकरि दान नाहीं करै ॥ ४ ॥ अर दान देय विषाद करै नाहीं जो कहा करूं मैं समस्तमैं उच्चता राखू हूं अर नाहीं दूं तो मेरी उच्चता

घटि जाय ऐसैं विषादी हुआ नाहीं देवै ॥ ५ ॥ बहुरि पात्रका संगम मिल जाय या निर्विघ्न दान होजाय तिसका अपूर्व निधि पायेकासा आनंद मानना सो मुदितभाव जानना । दान देनेका मद अहंकार नाहीं करना सो निरहंकारता नाम गुण है ॥ ७ ॥ ऐसैं पात्र दान करता दातार सप्तगुण सहित होय है। बहुरि पात्रकूं दान देवै सो मुनिश्रावकका जैसा पद होय तिस परिमाण नवधा भक्तिकरि देवै, नव प्रकार भक्तिके नाम—संग्रह ॥ १ ॥ उच्चस्थान ॥ २ ॥ पादोदक ॥ ३ ॥ अर्चन ॥ ४ ॥ प्रणाम ॥ ५ ॥ मनःशुद्धि ॥ ६ ॥ वचनशुद्धि ॥ ७ ॥ कायशुद्धि ॥ ८ ॥ एषणाशुद्धि ॥ ९ ॥ तिनमैं मुनीश्वरनिकूं तथा क्षुल्लककूं तो तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ याका अर्थ खडा रहो खडा रहो खडा रहो ऐसैं तीन बार कहना जामैं अति पूज्य-पनातैं अति अनुराग जाका चित्तमैं होयगा सो ही तीन बार आदरपूर्वक कहैगा अन्य हू श्रावकादिक योग्यपात्र घर आवैं तो आइये पधारिये विराजिये इत्यादिक आदरके वचनका कहना सो संग्रह वा प्रति-ग्रह है ॥ १ ॥ बहुरि उच्चस्थान देना ॥२॥ अर प्राशुक प्रमाणिक जलसूं चरण धोवना ॥ ३ ॥ जैसा अव-सर जैसा पात्र ताकै योग्य पूजन स्तवन पूज्यपनाके वचन कहना ॥ ४ ॥ अर मुनि वा श्रावकाकी यो-ग्यता प्रमाण नमस्कार आदि करना ॥५॥ मनकी शुद्धता करनी ॥६॥ वचनकी शुद्धता करनी अयोग्य वचन नाहीं बोलना ॥७॥ कायशुद्धि यत्नाचार सहित चलना उठना इत्यादिक ॥ ८ ॥ अर भोजनशुद्धि पात्रके योग्य होय सो देना यो ऐषणा शुद्धि है॥ ९ ॥ ऐसे जिन सूत्रके अनुसार पात्रके योग्य देशकाल के योग्य आहार देना जातैं पात्रके गुणनिमैं हर्ष अनुराग विना देना निष्फल है, अर जाकूं धर्म प्रिय होयगा ताकै धर्मात्मामैं अनुराग होयहीगा ऐसा नियम है । अर मुनीश्वरनिके जिनधर्मीकी नवधा-भक्तिहीतैं परीक्षा होय है जाकै नवधाभक्ति नाहीं ताका हृदयमैं धर्म हू नाहीं धर्मरहित के मुनीश्वर भोजन हू नाहीं करै है। अन्य हू धर्मात्मा पात्र गृहस्थादिक हैं ते हू आदर विना लोभी होय धर्मका निरादर कराय दास वृत्तितैं भोजनादिक कदाचित नाहीं ग्रहण करै हैं जैनीपना ही दीनतारहित परम

संतोष धारण करना है। अर दातार है सो ऐसा आहार औषधि शास्त्र वस्तिका वस्त्रादिक द्रव्यका दान करै जातैं रागद्वेष बधै नाहीं मद बधै नाहीं जातैं मोह काम आलस्य चिंता असंयम भय दुःख अभिमानका करनेवाला द्रव्यकूं देना योग्य नाहीं। जिस द्रव्यके देनेतैं स्वाध्याय ध्यान तप संतोषकी वृद्धि होय सो द्रव्य देने योग्य है। जातैं पात्रका दुख मिटि जाय रोग नष्ट होजाय परिणामका संक्लेश नष्ट होजाय ऐसा द्रव्य देना योग्य है। इहां अन्य विशेष जानना, दानविषै पांच प्रकार जानना दाता ॥ १ ॥ देय ॥ २ ॥ पात्र ॥ ३ ॥ विधि ॥ ४ ॥ फल ५ दाता तो कैसाक होय सप्त गुणका धारक होय धर्ममें तत्पर पात्रनिके गुणनिके सेवनमैं लीन भया पात्रकूं अंगीकार करै प्रमादरहित ज्ञानसहित शांतपरिणामी हुआ पात्रकी भक्तिमैं प्रवर्तै सो भक्तिक गुण दातारका है ॥ १ ॥ देनेमैं अति आसक्त हुआ पात्रका लाभकूं परम निधान लाभ मानै सो दातारका तुष्ट गुण है ॥ २ ॥ साधुनिकूं दान होजाना इसलोक परलोकमें परम कल्याण है ऐसा परिणाममैं गाढ सो दातारका श्रद्धा नाम गुण है ॥ ३ ॥ जो द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं सम्यक् विचार योग्य वस्तुका दान करै सो दातारका विज्ञान गुण है ॥ ४ ॥ दानकूं देय दानका प्रभावतैं संसारसंबंधी धन राज्य ऐश्वर्य विद्या मंत्र यश कीर्तनादि फलकूं नाहीं चाहै सो दातारका अलोलुप गुण है ॥ ५ ॥ जाकै अल्प हू वित्त होय तो हू दान देनेमैं बडा उद्यम होय जाका दानकूं देखि धनाढ्य पुरुषनिके हू आश्चर्य उपजै सो दातारका सात्विकगुण है ६ कलुषताका महान कारण हू आजाय तो हू किसीके अर्थि रोष नाहीं करै सो दाताका क्षमा गुण है ७ और हू मुनि तथा श्रावक तथा अव्रत सम्यग्दृष्टी ये तीन प्रकारके पात्र तिनके अर्थि देनेवाले उत्तम दातारके अनेक गुण हैं। विनयवान होय विनयरहितका दान निष्फल है जातैं कुछ देनेकूं नाहीं होय तो विनय करना ही महादान है। सत्कार करना प्रिय वचन बोलना स्थान देना गुण स्तवन करना यो ही बडो दान है धर्ममैं प्रीति होय दानका अनुक्रमका ज्ञाता होय दानका कालकूं जाननेवाला होय, जिनसूत्रका जाननेवाला होय भोगनिकी वां-

छारहित होय समस्त जीवनिका दयालु होय रागद्वेषकी मंदता जाकै होय सार असारका जाननेवाला होय समदर्शी होय इंद्रियानिकूं जीतनेवाला होय आया परीषहतैं कायरतारहित होय अदेखसका भावरहित होय स्वमत परमतका ज्ञाता होय प्रियवचनसहित होय व्रतीनिका पवित्र गुणकरि जाका चित्त व्याप्त होय लोकव्यवहार अर परमार्थ दोऊनिका जाननेवाला होय सम्यक्त्वादि गुणसहित होय अहंकारादि मदरहित होय वैयावृत्यमैं उद्यमी होय ऐसा उत्तम दातार प्रशंसायोग्य है । बहुरि जाका हृदयमैं निरंतर ऐसो विचार रहै कि जो द्रव्य व्रतीनिकी सेवामै लागै तथा साधर्मी जननिका उपकारमैं श्रावक जननिके आपदा दुःख निवारनमैं धर्मके बधावनेमैं धर्ममार्गके चलावनेमैं लागैगा सो धन मेरा है। अन्य संसारके कार्यनिमैं विषय भोगानिमैं कुंटुंबके विषय कषाय साधनेमैं जो धन खर्च होय सो केवल बंधके करनेवाला संसारसमुद्रमैं डबोनेवाला है ये कुंटुंबके धन खाय ते तो दायादार हैं धन बटावनेवाले हैं जबरीतैं धन लूटनेवाले हैं राग द्वेष क्रोधादि कषाय उपजाय व्रत संयमका घात करनेवाले हैं अर मोकूं पापमैं प्रेरणा करनेवाले हैं अर मेरे हू इनका संयोगतैं ऐसा अज्ञानरूप अंधकार छाया है जातैं धर्म अधर्म न्याय अन्याय यश अपयश कछू नाहीं दीखै है। स्त्री पुत्रादिकके विषय साधनेकूं अन्य निर्बल तथा भोले अज्ञानी जीवनिका धनके ठगनेमैं लूट लेनेमैं परिणाम उद्यमी होय जाय हैं। इस कुटुंबकूं धन वस्त्र आभरण भोजनादिककरि तृप्ति करनेके अर्थि झूठमैं चोरीमैं निरंतर परिणाम लग्या रहै हैं यातैं अब भगवान वीतरागका धर्मकूं पाय कुटुंबके अर्थि धनका उपार्जनके अर्थि अन्यायमैं अनीतिमैं तो नाहीं प्रवर्तन करना जो न्यायमार्गतैं धनका उपार्जन होइगा तिसमैंतैं मेरा कुंटुंबका अर धर्मके अर्थि दानका विभाग करि जीवनका दिन व्यतीत करूंगा । धन यौवन जीतव्य क्षणभंगुर है अवश्य जायगा मरण अचानक आवगा धन संपदा कुंटुंबादि कोऊ लार नाहीं जायगा । मेरा दान शील तप भावनाकरि उपजाया पुण्य एक परलोकमैं मेरा सहायी होय लार जायगा जो इहां

समस्त सामग्री मिली है सो पूर्वजन्ममैं जैसा दान दिया तैसी फली है। अब दानके देनेमैं धर्मात्मानिकी सेवामें दुःखित बुभुक्षितनिके उपकारमैं प्रवर्तूंगा तो परलोकमैं समस्त सुखकूं प्राप्त हूंगा मोक्षमार्गकी सम्यग्ज्ञानादिक सामग्रीकूं प्राप्त हूंगा भोजन तो दानपूर्वक भक्षण करै ताका भोजन करना सफल है अपना उदर भरना तो पशुके हू है। जाकै गृहमैं पात्रदान है ताका गृहाचार सफल है दान विना पशुनिके हू रहने योग्य बिल होय ही है। पक्षीनकै घूंमला होय ही हैं। समुद्रमैं जल हू बहुत अर रत्न हू बहुत परंतु जल तो महाक्षार अर रत्न मगर मच्छादिकन करि व्याप्त दोऊ उपकार विना निष्फल हैं। तैसैं धनवान कृपणका धन परके उपकार रहित है सो निष्फल है। जो गृहस्थ धन पाय साधर्मीनिका उपकारमें दीन अनाथानिके सत्कारमैं नाहीं खरच किया सो यो धन थाको नाहीं यो धन तो किसी अन्य पुण्यवानको है यो तो रखवालो भयो चोकसी करै है। धनका स्वामी तो अन्य ही पुण्यवान् है। जो दान भोगमें लगावेगा जाकै घरमैं पात्र आजाय अर देनेका सामग्री होय फिर नाहीं दिया जाय ताकै हस्तमैं चिंतामणिरत्न नष्ट भया जान हू। जो धनकूं पाय दानमैं नाहीं प्रवर्तै हैं सो मूढ अपने आत्माकूं ठगे है। धनकूं दानमैं लगावे है सो धनका स्वामी है जाका परिणाम दानका देनेमैं पात्रके हेरनेमैं निरंतर प्रवर्तै है तिनके दानका संयोग नाहीं होय तो हू निरंतर दान ही है। जो द्रव्यकूं होते वा बहुत होते हू पात्रकूं पाय अतिभक्तितैं देवै है सो दातार है। भक्ति रहितके दातापना नाहीं होय है।

बहुरि अवसर टालि अकालमैं दान देहै तिनकै अकालमें बोया बीजकी ज्यों निष्फल होय है अर जो अपात्रमैं दान देहै ताको दान खारडी भूमिमैं बोया बीजकी ज्यों निरर्थक है। अथवा दुष्टकूं दिया दान सर्पकूं पाया दुग्ध मिश्रीकी ज्यों दातारने संसारके घोर दुःख मरण आताप देनेकूं विष समान परिणमै है बहुरि अपना भाग्यप्रमाण जेता धन मिलै तितनामैं दानका विभागमैं परिणाम करै ऐसा नाहीं विचारै जो मेरे पास अधिक धन होय तो अधिक दान करूं ऐसैं दान वास्ते अभिमानी होय धनकी

बांछा मत करो। जेता आपके लाभांतरायका क्षयोपशमसूं लाभ भया तेतामैं संतोष करि अधिककी बांछा नाहीं करना सो ही बडा दान है। आपकूं जो न्यायपूर्वक द्रव्य प्राप्त भया तिसमैं जाका निरंतर ऐसा परिणाम रहै जो मेरा धनमैंतैं कोऊके अर्थि आजाय तो कुमावना मेरा सफल है अपने गृहके खरचमैं लेनेमैं देनेमैं कोई मोतैं कुछ कुमाय ले तो ही हमारे बड़ा लाभ है ऐसा परिणाम दातारका रहै है अर जो दान देय सो हर्षितचित्त होय देवै, जो देवै भी अर क्रोधकरि देवै अपमानकरि देवै तिरस्कारके वचन कहि देवै रोषकरि देवै दूषण लगाय देवै तिस दातारके इसलोकमें तो कलह अर अपयश होय है परलोकमैं अशुभकर्मका फलतैं दारिद्र अपमानादिक अनेक भवनिमैं प्राप्त होय है। अब देनेयोग्य नाहीं ऐसे खोटे दान कुदान ही हैं तिनिकूं देना योग्य नाहीं भूमिदान देना योग्य नाहीं जामैं हल फावडा खुरपादिकनिकरि भूमि विदारन करिये अर महान् हिंसा प्रवर्तै महा आरंभ पंचेन्द्रियादिक सर्प मूषा सूर हिरणादि बडे बडे जीवनिकूं धान्यादिक फलके बाधक मारियै हैं भूमिको ममताकरि भाई भाई परस्पर मारि मरजाय तीव्ररागको कारण ऐसा भूमिदानतैं महाघोरपापका बंध जानि बहुरि महाहिंसाका कारण तातैं अनेक हिंसा होय ऐसा लोहका दान महा कुदान जानि छांडना। बहुरि सुवर्णदान त्यागना जाकरि पात्रका नाश होजाय मारया जाय सदाकाल भय उपजावे संयमका नाश करै तथा इस धनतैं राग द्वेष काम क्रोध लोभ भय मद आरंभादिककी प्रचुर उत्पत्ति होय आत्मस्वरूपका विस्मरण होजाय तातैं वीतराग धर्मका इच्छुक सुवर्णदानकूं पाप समझि त्यागना। बहुरि कोट्यां त्रसजीवनिका उत्पत्तिका कारण ऐसा तिलदान त्यागने योग्य है। बहुरि चाकी चूल्हा छाजला बुहारी मूसल फावडा दतीला अन्न तेल दीपक गुडादि रस इत्यादिक महापाप सामग्रीका भरया महा आरंभ मोहका उपजावनेवाला गृहका दानकूं धर्म मानि मिथ्याधर्मी दे हैं सो कुदान है बहुरि जिस गौकूं बांधनेमैं हरित तृणादिक चरनेमैं तथा जीया (जवा) बुग (वग) उपजनेमैं मलमैं मूत्रमैं असंख्यात जीव उपजैं सींगनतै मारनेतैं खुर पूंछादि-

कनितैं जीवघात करनेवाला गौका दान सो कुदान है बहुरि संसारके बधावनेवाला महाबंधन करनेवाला जो कन्याका दान सो कुदान है इहां कहो जो कन्यादान तो गृहस्थकूं दिये विना कैसैं रह्या जाय सो ठीक है गृयस्थ है सो अपनी कन्याका विवाह योग्यकुलमैं उपज्या जो जिनधर्मी व्यवहारचातुर्यादिक वरके गुण देखि कन्या देवे है परंतु कन्यदानकुं धर्म तो श्रद्धान नाहीं करै जिनधर्मी तो कन्यादानकूं पाप ही श्रद्धान करै है जैसैं गृहचारका आरंभादिक अनेक पापका कारण है तैसैं कन्यादान हू पापका कारण है परंतु विषयनिका दंड है सो अंगीकार किया ही सरै। अन्यमतवाले तो कन्यादान देनेका बहुत बडा फल कहै हैं लक्षयज्ञ कियाका फल कहै हैं कोटि ब्राह्मणकूं भोजन करावनेतैं कोटि गऊनिका दान देनेतैं हू अधिक फल कहै हैं अन्यकी कन्याका विवाह कराय देनेका हू बडा धर्म कहै हैं सो जिनधर्ममैं तो याकूं संसारपरिभ्रमणका कारण कुदान कहै हैं। बहुरि और हू संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाले मिथ्या दृष्टि लोभी विषयनिका लंपटनिकरि कह्या कुदान त्यागने योग्य है। सुवर्णकी गाय बनाय देवें हैं तिलकी गाय घृतकी गाय रूपाकी गाय बनाय देवे हैं अर लेनेवाला घृतकी गायकूं लापसीकी गायकूं तिलकी गायकूं खाय है सुवर्णरूपाकीकूं कटावे है गलावे है अर गायकी पूंछमैं तेतीसकोटि देवता अर अडसठ तीरथ कहै हैं तथा दासी दासका दान देहै रथदान देहै तथा संक्रांति मानि ग्रहण मानि व्यतीपातादि मानि दान देवे हैं ते समस्त मिथ्यात्वका प्रभाव है। बहुरि मृतककूं तृप्ति करनेके अर्थि ब्राह्मणादिकनिकूं भोजन करावै है देखहू ब्राह्मणनिके जीमनेतैं मृतककूं कैसैं पहुंचेगा दान तो पुत्र देवै अर पिता पापतैं छूटै, बहुत कालका मऱ्या हुआका हाड गंगामैं क्षेपणेतैं मृतकका मोक्ष होय। गयामैं जाय श्राद्ध करनेतैं इकबीस पीढीका उद्धार कहै हैं गयामैं पिंड देनेतैं दश पीढी पहली दश पाछली एक आप ऐसैं इकबीस पीढी संसारमैं कुगतिमैं पडी हुई निकस बैकुण्ठ वास करै हैं अगाऊ बेटा पोतानिका संतान चाहै जेता पाप करो गया श्राद्ध इकबीस पीढीमैं कोऊ एक हू पिंडदान दिया तो सबकी मुक्ति होय जायगी तातैं

कोऊ पापको भय मत करो। बहुरि जे श्राद्धमैं ब्राह्मणनिकूं मांसपिंड जिमावे हैं मांस करि देवतानिकूं तृप्ति करे हैं देवता दुर्गा भवानी जीवनिका राक्षसनिका तिर्यंचनिका रुधिर पावनेतैं बहुत तृप्ति होती माने हैं देवीनिकै बकरा भैंसा काटि बलिदान करे हैं । पापी खोटा शास्त्र बनाय अपने मांसभक्षणके अर्थि महाघोर कर्मकरि नरकके मार्गकूं आप जाय है अन्यकूं नरक पहुंचावे हैं सो जिह्वाइन्द्रीका लोलुपी लोभी कौन घोरकर्म नाहीं करे ? वे पापी मनुष्यपनामैं भी स्याली स्याल कागला कूकरा व्याघ्रकासा आचरण करे हैं जिनका ऐसे घोरपापके शास्त्र तिनके धर्ममैं अर म्लेच्छ धर्ममैं कुछ फरक नाहीं। ये अक्षर म्लेच्छनिके हैं वेदके अक्षरनितैं लोकनिके अज्ञान उपजाय शिकारमैं धर्म जनाया। जलचर थलचर नभचर जीवनिके मारनेमैं धर्म बताया जगतकूं भ्रष्ट किया है अर करे हैं । अर जाका देवता तो मुंडमाला अर मांसभक्षक रुधिर पीवनेमैं अति लीन है तिनके सेवकनिके पापकी कहा कथा। तिन कुपात्रनिकूं दान देना सो महा दुःखका करनेवाला कुदान है । ऐसैं कुदानके बहुत भेद हैं कुदानके देनेतैं अर कुदानके लेनेतैं नरकतिर्यंचनिमैं बहुत जन्ममरणकरि निगोदमैं एकेन्द्रिय विकलत्रयमैं अनंतकाल पर्यंत असंख्यात परावर्तन करे है या जानि कुदान मत करो कुपात्रदान मत करो॥ अब यहां पहली सूत्रके अनुकूल दानका फल कहै हैं—

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानां। अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ ११४ ॥

अर्थ—गृहरहित ऐसे अतिथि जे मुनि तिनकी जो प्रतिपूजा कहिये दान सन्मानादिक उपासना है सो गृहस्थके षटकर्मकरि उपार्जन किया जो पापकर्मरूप मल ताहि शुद्ध करे है। जैसैं शरीर ऊपरि लग्या रुधिररूप मल तिने जल धोवै है। भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही आरंभादिककरि निरंतर पापका उपार्जन होय है तिस पापकूं धोवनेकूं एक मुनीश्वरादिकनिकूं दिया दान ही समर्थ है जैसैं रुधिर लग्या होय सो रुधिरतैं नाहीं धुवै है जलकरि धुवे है तैसैं गृहचारके आरम्भतैं उपज्या पाप मल है सो गृहके

त्यागी साधूनिके अर्थि दान देनेकरि धुवै है। अब दानका और हू प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा। भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ ११५ ॥

अर्थ—तपके निधान जे साम्यभावके धारक द्वाविंशति परीषहानिके सहनेवाले अपने देहमैं निर्ममत्व पंचइंद्रियनिके विषयनिमैं अत्यंत विरक्त अभिमान कषायादिरहित आत्मविशुद्धताके इच्छुक ऐसे उत्तम पात्र जो मुनि तिनके अर्थि नमस्कार प्रणाति करनेतैं उच्चगोत्र जो स्वर्गलोकमैं जन्म तथा स्वर्गतैं आय तीर्थंकरपनामैं जन्म वा चक्रीपनामैं जन्मरूप उच्चगोत्रकूं तथा सिद्धनिकी सर्वोत्कृष्ट उन्नताकूं प्राप्त होय है अर उत्तमपात्रके दान देनेतैं भोगभूमिके भोग वा देवलोकके भोग भोगि राज्यादिकनिके भोग पाय अहमिंद्र लोकके भोग पाय तीर्थंकर चक्रीपना पाय निर्वाणके अनंत सुखका भोगकूं पावै है। बहुरि साधुनिका उपासना जो सेवन ताकरि त्रैलोक्यमैं पूज्य केवली होय हैं बहुरि साधुनिकी भक्ति करनेतैं सुंदररूप ताहि प्राप्त होय हैं। बहुरि साधुनिका स्तवन करनेतैं त्रैलोक्यव्यापिनी कीर्ति इंद्रादिकनिकरि स्तवन कीर्तनकूं प्राप्त होय हैं। और हू दानके प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

क्षितिगतामिव वटबीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले। फलति च्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ॥ ११६ ॥

अर्थ—अवसरविषै सत्पात्रविषैं गया अल्प हू दान सुंदर पृथ्वीमैं प्राप्त भया वडका बीजकी ज्यों प्राणीनिके छाया जो माहात्म्य ऐश्वर्य अर विभव जे भोगोपभोगकी संपदारूप बांछित बहुत फलकूं फलै है जातैं पात्रदानका अचिंत्य फल है पात्रदानके प्रभावतैं सम्यक्त्व ग्रहण होजाय है। बहुरि सम्यक्त्वरहित मिथ्यादृष्टि हू पात्रदानके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिविषैं जाय उपजै है कैसाक है भोगभूमि जहां तीन पल्यका आयु तीन कोशका ऊंचा शरीर अमृतरूप समचतुरस्र संस्थान महाबल पराक्रमयुक्त मनुष्य होय है स्त्री पुरुषनिका युगल उपजै है तीन दिन गये कदाचित् किंचित आहारकी इच्छा उपजै सो बदरीफल प्रमाण आहार करनेकरि क्षुधाकी वेदनारहित होय है। दश जातिके कल्पवृक्षनितैं उपजे बांछित

भोगनिकूं भोगै है। जहां शीत उष्णताकी वेदना नाहीं है जहां वर्षाका ताडनाका उपजना नाहीं दिन रात्रिका भेद नाहीं सदा उद्योतरूप अंधकाररहित काल वर्ते है शीतल मंद सुगंध पवन निरंतर विचरै है जिसभूमिमैं रज पाषाण तृण कंटक कर्दमादि नाहीं होय है स्फटिकमणि समान भूमिका है यावत् जीव रोग नाहीं शोक नाहीं जरा नाहीं क्लेश नाहीं जहां सेवक नाहीं स्वामी नाहीं स्वचक्रका भय नाहीं षट्कर्मकरि जीवनोपाय करना नाहीं। दश प्रकारके कल्पवृक्ष हैं। तूर्यांग ॥ १ ॥ पात्रांग ॥ २ ॥ भूषणांग ॥ ३ ॥ पानांग ॥ ४ ॥ आहारांग ॥ ५ ॥ पुष्पांग ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग ॥ ७ ॥ गृहांग ॥ ८ ॥ वस्त्रांग ॥ ९ ॥ दीपांग ॥ १० ॥ तूर्यांगजातिका कल्पवृक्ष तो बासुरी मृदंग इत्यादिक करणइंद्रियनिकूं तृप्त करनेवाला वादित्र देहैं ॥ १ ॥ पात्रांगजातिका वृक्ष रत्नसुवर्णमय अनेक प्रकारके आनंदकारी कलश दर्पण झारी आसन पर्यंकादि समस्त जातिके पात्र देहैं ॥ २ ॥ भूषणांगजातिके अनेक आभुषण अनेक प्रकारके क्षण क्षणमैं पहरने योग्य हार मुकुट कुंडल मुद्रिकादि अंगकूं भूषित करनेवाले वा महलकूं द्वारकूं तथा शय्या आसन भूमिकूं भूषित करनेवाले अनेक आभूषण देहैं ॥ ३ ॥ पानांगजातिके वृक्ष नाना प्रकार पीवने योग्य शीतल सुगंध पान लिये खरे हैं ॥ ४ ॥ आहारांगजातिके कल्पवृक्ष अनेक स्वादरूप अनेक प्रकारके आहार धारै हैं परंतु क्षुधाकी पीडा ही नाहीं तादि रोग विना इलाज औषध कौन अंगीकार करै भोगभूमिमैं उपजनेवालेके क्षुधा नाहीं तीन दिन गये वदरीफल मात्र भोजन करै है ॥ ५ ॥ पुष्पांगजातिके वृक्ष नानाजातिके महा कोमल सुगंध पुष्पमाला आभरणादिक अनेक पुष्प धारै हैं ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग जातिके कल्पवृक्षनिकी ज्योतिकरि सूर्य चंद्रमा नजर ही नाहीं आवै हैं सूर्यके उद्योततैं बहुत गुणा उद्योत धारण करै हैं तातैं रात्रि दिनका भेद नाहीं है ॥ ७ ॥ गृहांग जातिके कल्पवृक्ष अनेक महल चौरासी खणनिपर्यंत विस्तीर्ण रत्ननिकरि चित्र विचित्र देहैं ॥ ८ ॥ वस्त्रांग जातिके कल्पवृक्ष नानाप्रकारके वांछित पहरने योग्य वस्त्र तथा शय्या आसन बिछायत आदि समस्त वस्त्र देहैं ॥ ९ ॥

बहुरि दीपांगजातिके अंधकार विना ही दीपमालिकाकी शोभाकूं विस्तरै हैं ॥ १० ॥ बहुरि भोगभूमिमैं स्त्रीपुरुषानिका युगल मरण समयमैं पुरुषकूं छींक अर स्त्रीकूं जम्भाई आवै है तिस समयमैं संतान युगल उत्पन्न होय है संतानकूं तो माता पिता नाहीं दीखै अर मातापिताकूं संतान नाहीं दीखै तातैं इनके वियोगका दुःख नाहीं है अर मरण किये पाछैं इनका देह शरद कालका मेघपटलवत् विलाय जाय है। बहुरि युगलिया उत्पन्न हुआ पाछैं सप्त दिन तो अपना अंगुष्ठ चाटै है। अर पाछैं सप्त दिनमैं सूधा औंधा पलटना होय पाछैं सप्त दिनमैं अस्थिर गमन करै हैं पाछैं सप्त दिनमैं परिपूर्ण यौवनवान होय हैं। बहुरि सप्त दिनमैं समस्त दर्शन ग्रहण चातुर्य कला ग्रहण करै हैं। ऐसै गुणचास दिनमैं परिपूर्ण होय अनेक पृथक् विक्रिया अपृथक् विक्रियासहित नानाप्रकारके महल मन्दिर वनविहार करते क्षणक्षणमैं अनेक कोटि नवीन नवीन विषय तिनकी सामग्री भोगतैं अनेक क्रीडा रागरंगादिक अनेक सुखरूप क्रीडा चेष्टाकरि तीन पल्य पूर्ण करि मरण समयमैं छींक जंभाई मात्रतैं प्राण त्याग सम्यग्दृष्टि होय सो तो सौधर्म ईशान स्वर्गमैं जाय है अर मिथ्यादृष्टि मरणकरि भवनवासी व्यंतर जोतषी देवनिमैं उपजै है कषायके मंदभावतैं देवलोकाविना अन्य गति नाहीं पावै है बहुरि सम्यग्दृष्टि होय तथा श्रावकके व्रतका धारक होय जो पात्र दान करै सो षोडश स्वर्गपर्यंत महार्द्धिक देव ही उपजै है। आगममैं पात्र तीन प्रकार हैं अर्थात् उत्तमपात्र, मध्यमपात्र और जघन्यपात्र। तिनमैं उत्तमपात्र तो महाव्रतानिके धारक अठाईस मूलगुण तथा उत्तरगुणनिके धारक देहमैं निर्ममत्व वीतरागी साधु हैं। मध्यम पात्र ग्यारा भेदरूप श्रावक सम्यग्दृष्टि व्रतनिकरि सहित है तथा स्त्रीपर्यायमैं व्रतनिकी हदकूं धारण करती तिनके एक वस्त्रतैं अन्य समस्त परिग्रहरहित परके घर एक वार याचनारहित मौनतैं भिक्षा भोजन करि आर्यिकानिका संगमैं धर्मध्यानसहित महातपश्चरण करती तिष्ठै ऐसी आर्यिका मध्यमपात्र हैं तथा अणुव्रत अर सम्यग्दर्शनसहित श्राविका मध्यमपात्र है अर व्रतरहित जिनेन्द्रवचनके श्रद्धानी सम्यग्दर्शन

सहित पुरुष तथा सम्यग्दर्शनसहित व्रत रहित स्त्री जघन्यपात्र है। इन तीन प्रकारका पात्रनिमें चार दान देना तथा सत्कार करना स्थानदान करना आदर करना तथा यथायोग्य स्तवन पूजा प्रशंसादिकके वचन बोलना उठि खडा होना उच्च मानना सो समस्त दान है अब चार प्रकार दान कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आहारौषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन। वैयावृत्त्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः॥ ११७॥

अर्थ—चतुरस्र जे प्रवीण ज्ञानी हैं ते आहार दान औषधि दान उपकरणदान अर आवासदान इन चार प्रकारके दान करके वैयावृत्यकूं चार स्वरूप करि कहैं हैं। आहारदान औषधिदान उपकरणदान आवासदान। या प्रकार गृहस्थके चार प्रकार दान कह्या जातैं अभयदानकी प्रधानता तो छहकायके जीवनिकी कृतकारितअनुमोदनाकरि विराधनाका त्यागी दिगंबर मुनीश्वरनिके है अर श्रावकनिके हू त्रसजीवनिका संकल्पीहिंसाका त्यागतैं अभयदान है ही परंतु अभयदानकी मुख्यता तो आरंभका त्यागतैं विषयनितैं अत्यंत पराङ्मुखतातैं होय है तातैं जेते गृहचारतै संपदातैं तथा न्यायरूप विषयनितैं परिणाम नाहीं निराला होय तितने आहारादिक चार प्रकारका दान करि पापका नाश करहू। संपदा आयु काय अत्यंत अस्थिर है गृहचारा तो दानकरि ही पूज्य है। आहारादिक दान विना गृहस्थपना पाप आरंभके भारकरि पाषाणकी नाव समान केवल संसारसमुद्रमें डबोवनेवाला है। बहुरि ज्ञानी गृहस्थ चिंतवन करै है जो यो धन मैं उपार्जन किया तथा पितादिकनिका धर्‌या हमारे विना खेद प्राप्त होगया तथा राज्य ऐश्वर्य देश नगर आभरण वस्त्र स्त्री सेवकनका समूह समस्त जो विना खेद प्राप्त होगया सो समस्त पूर्व जन्ममें दान दिया दुःखितनिका पालनपोषण किया ताका फल है। तथा परके धनमें स्वप्नमें हू चित्त नाहीं चलाया परम संतोष धारण करि विषयनिसूं विरक्त होय निर्वांछकता धारण करी ताका फल है। तथा दीन दुःखित रोगी असमर्थ बाल वृद्धनिका दया धारण करि उपकार किया ताका फल यह संपदा है सो दोय दिन याका संयोग है परलोक लार जायगी नाहीं जमीनमें गडी रहेगी

तथा अन्य दशांतरमें धरी रहैगी तथा अन्यमें रह जायगी वा स्त्री पुत्र कुटुम्ब दायेदार मालिक बनेंगे तथा राजा लूट लेगा तथा अचानक मरि दुर्गति चल्या जाऊंगा यो धन सेकडा दुर्ध्यानतैं महापापके आरंभतैं देश देशनिमें परिभ्रमणकरि बडा कष्टतैं उपार्जन किया था प्राणनिसूं हू अधिक याकी रक्षा करी अब इस धनका फल छोडकरि मरि जाना ऐसा विचारना तो योग्य नाहीं जगतमें देखो जो लाख धन होय भोगनेमें तो आवै नाहीं जातैं भोगनेमें तो आधा सेर अन्न आवे है अर तृष्णा ऐसी बधै है जो अब धन बधाऊं। अहो अन्यकै तो पचास लाख धन होगया मेरे पांच लाख ही हे। अब कैसें बधाऊं कोन आरंभ करूं कौन उपाय करूं कौन राजानिकूं रिझाऊं तथा कौन बनिज करूं तथा कोनसूं मित्रता करूं जाकी बुद्धितैं मेरे धन उपार्जन होजाय तथा कौनसा सेवककूं अंगीकार करूं जो मेरा अल्प धन खाय अर मोकूं बहुत धन उपार्जन करदे ऐसैं हजारां दुर्ध्यान करतो संसारी जीव समस्त संपदा राज्य ऐश्वर्य छांडि महा मूर्छातैं अतिरौद्र परिणामतैं मरि घोर नरकका घोर दुःख भोगै है। संसारमें अनंत दुःखरूप परिभ्रमण करता क्षुधा तृषा रोग दारिद्रकूं भोगता अनंतकाल असंख्यातकाल व्यतीत करै है। अब इस घोर कालमें कोऊ किंचित मोहनिद्राके उपशमतैं जिनेंद्रभगवानके वचनतैं कोऊ अति विरले पुरुष सचेत होय अपना हितकूं चिंतवन करता चार प्रकारके दानमें प्रवर्तन करै है। दानमें आहारदान प्रधान है इस जीवका जीवन आहारतैं कोटि सुवर्णका दान आहारदानसमान नाहीं है। आहारहीतैं देह रहै है। देहतैं रत्नत्रय धर्म पलै है। रत्नत्रयधर्मतैं निर्वाण होय है निर्वाणमें अनंत सुख है। त्यागी निर्वांछक साधुनिका उपकार तो एक आहारदानतैं ही है। आहार विना कोऊ तिलतुषमात्र वस्तु हू नाहीं अंगीकार करै आहार बिना देह रहै नाहीं आहार विना अनेक रोग उपजै हैं। आहार विना ज्ञानाभ्यास नाहीं होय। आहार विना व्रत संयम तप एक हू नाहीं पलै। आहार विना सामायिक प्रतिक्रमण कायोत्सर्गध्यान एक हू नाहीं होय आहार विना परमागमको उपदेश नाहीं होय। आहार बिना उपदेश ग्रहण करनेकूं

समर्थ नाहीं होय। आहार बिना कांति विनासि जाय मति विनासि जाय कीर्ति क्षांति नीति गति रति उक्ति शक्ति द्युति प्रीति प्रतीति नाशकूं प्राप्त होय है। आहार विना समभाव इंद्रियदमन जीवदया मुनि श्रावकका धर्म विनयमैं प्रवृत्ति न्यायमैं प्रवृत्ति तपमैं प्रवृत्ति यशमैं प्रवृत्ति समस्त विनाशनै प्राप्त होय जाय आहार विना वचनकी प्रवीणता नष्ट होजाय है आहार विना शरीरका वर्ण विगडि जाय शरीरमैं मुखमैं दुर्गंधता होजाय। शरीर जीर्ण होजाय। समस्त चेष्टा नष्ट होजाय। आहार नाहीं मिलै तो अपने प्यारे पुत्रकूं पुत्रीकूं स्त्रीकूं वेच देइ। आहार बिना नेत्रानितैं देखनेकूं समर्थ नाहीं होय कर्णनितैं श्रवण करनेकूं नासिकातैं गंध ग्रहण करनेकूं स्पर्शनइंद्रियतैं स्पर्शन करनेकूं समर्थ नाहीं होय। आहार विना समस्त चेष्टारहित मृतकसमान होय। आहार विना मरण होजाय आहार बिना चिंता शोक भय क्लेश समस्त संताप प्रगट होय हैं। दीनता होजाय संसारी लोक अपमान करैं ऐसैं घोर दुःख दुर्ध्यानकूं दूर करनेवाला जो आहारदान दिया सो समस्त व्रत संयममैं प्रवृत्ति कराई। समस्त रोगादिक दूर किया यातैं आहारदान समान कोऊ उपकार नाहीं है। बहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रासुक औषधिका दान श्रेष्ठ है। रोगकरि व्रत संयम विगडि जाय। स्वाध्याय ध्यानादिक समस्त धर्मकार्यका लोप होजाय है। रोगीकै सामायिकादिक आवश्यक नाहीं बनि सकै है। रोगकरि आर्त्तध्यान निरंतर होय है मरण विगडि जाय है रोगीके संक्लेश दिन दिनप्रति बधै है। अपघात कऱ्या चाहै है रोगी पराधीन होजाय है। मन इंद्रियां चलायमान होजाय हैं। उठना बैठना सोवना चालना बहुत कठिन होजाय है। स्वासकी लार वेदना बधै है। क्षणमात्र जक (चैन) नाहीं लेने देहै। बहुत कहा कहिये रोगीकूं खावना पीवना बोलना चालना देना सोवना उठना बैठना समस्त कार्य जहर पीवने समान बाधाकारी होय हैं यातैं प्रासुकऔषधिदानकरि रोग मेटने समान कोऊ उपकार नाहीं। रोग मिटै आहारादिक किया जाय समस्त तप व्रत संयम ध्यान स्वाध्याय कायोत्सर्गादि रोगरहित होय तदि करि सकै है। बहुरि ज्ञानदान समान

जगतमैं उपकार नाहीं। ज्ञान बिना मनुष्य जन्ममैं हू पशु समान है ज्ञानाभ्यास विना आपका परका ज्ञान नाहीं होय। ज्ञान बिना इसलोक परलोकका जानना कैसैं होय ज्ञान विना धर्मका स्वरूप पापका स्वरूप करनेयोग्य नाहीं करनेयोग्यका विचार नाहीं होय है। ज्ञान बिना देव कुदेवका गुरु कुगुरुका धर्म कुधर्मका जानना नाहीं होय है। ज्ञान बिना मोक्षमार्ग ही नाहीं। ज्ञान बिना मोक्ष नाहीं। ज्ञानरहित मनुष्यमैं अर पशुमैं भेद नाहीं इंद्रियनिका विषय पोषना कामसेवन करना तो तिर्यंचनिकै भी होय है जातैं मनुष्यजन्म तो ज्ञानहीतैं पूज्य है। तातैं ज्ञानदान दिया सो पुरुष समस्त दान दिया। परमोपकार तो ज्ञानदानही है। बहुरि वस्तिकादान जो स्थानका दान जामैं शीत उष्ण वर्षा पवनादिक बाधारहित ध्यान स्वाध्यायकी सिद्धताको कारण ऐसा स्थानका दान श्रेष्ठ है। यहां ऐसा जानना—उत्तम पात्र जे परमदिगम्बर महामुनि तिनका समागम तो कोऊ महाभाग पुरुषकै कदाचित् होय है। जैसें जगत पाषाणनिकरि बहुत भऱ्या है। परंतु चिंतामणिरत्नका समागम होना अति दुर्लभ है। तैसैं वीतराग साधुका समागम दुर्लभ है। फिर आहारदान होना अतिही दुर्लभ है। अर आहारहू आपके निमित्त नाहीं किया अर सोलह उद्‌गम दोष षोडश उत्पादन दश एषणा दोष ऐसैं वियालीस दोष अर प्रमाण १ संयोजन १ धूम १ अंगार १ ऐसैं छियालीस दोष बत्तीस अंतराय चौदह मलनिकूं टालि एकवार भोजन करै सो अर्द्ध उदर तो भोजनसूं भरै अर चतुर्थभाग जलकरि पूर्णकरै अर उदरका चतुर्थभाग खाली राखै सो हू एक उपवासकै पारनै कदै होय उपवासके पारन कदाचित् तीन उपवास भये कदाचित् उपवास पक्षोपवास मासोपवासादिकके पारन अजाचीक वृत्ति करि नवधा भक्तिकरि दिया हुआ भोजन कोऊ पुण्यवानके घर होय है अर अजाचीक वृत्तिकूं धारते मौनसहित मुनीश्वरनिकूं औषधिदानहूका देना दुर्लभ है। कोऊ गृहस्थ आपके निमित्त प्रासुक औषधि करी होय अर अचानक मुनीश्वरनिका समागम हो जाय अर शरीरकी चेष्टासूं रोगकूं विना कह्या जानि योग्य औषधि होय तो देवै तातैं साधुनिकूं औष-

धिदान हू दुर्लभ है। शास्त्रदान हू योग्य पुस्तक इच्छा होय तो पढै तिननै ग्रहण करै पाछैं वनमें तथा वनके चैत्यालयमें मेलि चल्या जाय है। बहुरि मुनीश्वरनिके अर्थि वास्तिका दान हू दुर्लभ है जातैं दिगंबरमुनि एकस्थानमें रहैं नाहीं कदे पर्वतनिकी गुफामें कदे भयंकर बनमें कदे नदीनिके पुलनिमें ध्यान अध्ययन करते तिष्ठै हैं। कदाचित् कोऊ वास्तिकामें एक दिन ग्रामके बाह्य अर पांच दिन नगरके बाह्य अर वर्षाऋतुमें चार महीना एक स्थानमें रहैं। अर कदाचित् कोऊ साधुके समाधिमरणका अवसर आ जाय तो मास दोय मास एक स्थान रहै। अन्यप्रकार जैनका दिगम्बर एक स्थानमें रहै नाहीं। अर एक रात्रि दोय रात्रि हू कोऊ कदाचित् निर्दोष प्रासुक वास्तिकामें रहै सो वास्तिका कैसी होय आपके निमित्त करी नाहीं होय। आपके निमित्त भुवारी नाहीं होय मुनि आयां पाछैं धोलै नाहीं उजालदान खोलै नाहीं वारणा मुद्या होय तो वारणा खोलै नाहीं भाडा देइ लेवै नाहीं। बदलके अपना वास्तिका देय परकी लेवै नाहीं याचना करि लीनी नाहीं होय राजाका भय दिखाय लीनी नाहीं होय। इत्यादिक छियालीस दोष रहित वास्तिका होय तथा जीर्ण बनमें तथा उजड ग्रामका मकान होय जहां असंयमीनका आर (आना) जार (जाना) नाहीं होय। स्त्री नपुंसक तिर्यंचनिका आगमन नाहीं होय जीवविराधनारहित होय अंधकारादि नाहीं होय तहां साधुजन एकरात्रि दोयरात्रि कदाचित् वसैं। अनेक देशनिमें विहार करै तिनकूं वास्तिकादान होना बहुत दुर्लभ है यातैं उत्तम पात्रकूं दान होना अति दुर्लभ है अर इस पंचमकालमें वीतरागी भावलिंगी साधु ही कोई विरला देशांतरमें तिष्ठै है तिनका पावना होय नाहीं पात्रका लाभ होना चतुर्थकालमें ही बडे भाग्यतैं होय था। परन्तु इस क्षेत्रमें पात्र तो बहुत थे अब इस दुःषम कालमें यथावत् धर्मके धारक पात्र कहीं देखनेमें ही नाहीं आवैं। धर्मरहित अज्ञानी लोभी बहुत विचरै हैं सो अपात्र हैं। इसकालमें धर्मपायकरिकैं गृहस्थ जिनधर्मके धारक श्रद्धानी कोई कहीं कहीं पाइए है। जे वीतराग धर्मकूं श्रवण करि कुधर्मकी आराधनाका दूरहीतैं त्याग करि नित्य ही अहिंसाधर्मके धरने-

वाले जिनवचनामृतपान करनेवाले शीलवान संतोषी तपस्वी ही पात्र हैं अन्य भेषधारी बहुत विचरै हैं। जिनके मुनि श्रावकके धर्मका सत्य सम्यग्दर्शनादिकको ज्ञान ही नाहीं ते कैसैं पात्रपना पावैं। मिथ्यादर्शनके भावकरि आत्मज्ञानरहित लोभी भये जगतमैं धनादिकनिका मिष्ट आहारदानका इच्छुक भये बहुत विचरै हैं ते अपात्र हैं। तातैं पात्रदान होना अति दुर्लभ है।

यहां ऐसा विशेष जानना जो इस कालिकालमैं भावलिंगी मुनीश्वर तथा अर्जिका तथा क्षुल्लकका समागम तो है ही नाहीं। अर जो कदाचित् चिंतामणिरत्नकी ज्यों किसी महाभाग्य पुरुषकूं उनका दानका समागम मिले तो आध सेर अन्नका भोजनमात्र उनके अर्थि देनेमैं आवै अर जो क्षुल्लक अर अर्जिकाके कदाचित् वस्त्र जीर्ण होजाय तो अर्जिका तो एक स्वेत वस्त्र ही ग्रहणकरि पुराणा वस्त्र वहां छांडि जाय अर क्षुल्लक एक कोपीन एक स्वेत ओछा वस्त्र जातैं समस्त अंग नाहीं ढकै ऐसा थोडे मोलका ग्रहण करि पुराणा वस्त्र वहां ही छांडि जाय है अन्य तिल तुषमात्र हू ग्रहण करै नाहीं। ऐसैं पात्रानिके दानमैं तो कुछ द्रव्यको खरच नाहीं। विना न्योता विना बुलाया कदाचित् अचानक आजाय तो गृहस्थ अपने निमित्त किया रूक्ष साचिकण भोजन तिसमैं दानका विभाग करिये हैं धनाढ्य पुरुष धनकूं कौन कार्यमैं लगाय सफल करै। जो भोगनिमैं लगाईये तो भोग तो तृष्णाके बधावनेवाले इंद्रियकूं विकल करनेवाले महापापमैं प्रवर्तन कराय नरकादिक कुगतिकूं प्राप्त करै हैं। जीवका हित अहितका जाननेकूं लुप्त करै है। अर मोह वश होय पुत्रादिकनिकूं समर्पण करिये है सो पुत्रादिक तो मम- बधावनेवाले विना दिये हू सर्वस्व लेवेंगे। पापाचारकरि दुर्ध्यानतैं संपदामैं ममता धारणकरि धर्मका सकरि संपदा बधाई ताका अर्द्धविभाग तो धर्मके अर्थि दयाके पात्रनिमैं दानकरि अपना हित । संपदा छांडि परलोक जावोगे। तहां पुत्र पौत्रादिकको देखनेकूं कैसैं आवोगे कुटुंबका अन्य तो रा यह चामडामय मुख नासिका नेत्रादिकतैं है। सो इनकी भस्म होजासी तथा मृत्तिकामैं जासी

कुटुंब तुमकूं अन्य पर्यायमैं देखने आवै नाहीं। तुम कुटुंबकूं देखने आवो नाहीं क्योंकि जिन नेत्र कर्णादिकनितैं कुटुंबकूं जानो हो तिन नेत्रादिकनिकी तो राख उडजायगी तदि कुटुम्बकूं कैसैं जानोगे अर पुत्रादिक कुटुम्बका सम्बन्ध तुम्हारे शरीरका चामतैं है। तुम्हारे आत्माकूं जानै नाहीं अर तुम्हारे अर तुम्हारा चामडाकी राख उड जायगी तदि कुटुम्बके तुमसूं कहां सम्बन्ध करैंगे तातैं भी ज्ञानीजन हो जीवन अल्प है पुत्रादिकनिका सम्बन्ध हू अल्पकाल है कोऊ संसारमैं शरण नाहीं है एक धर्म ही शरण है अर यो धन है सो हू तुम्हारा नाहीं है कोऊ पुण्यका प्रभावकरि दोय दिन इसका स्वामीपना अंगीकार करि छांडि मर जावोगे। यो धन लार जायगा नाहीं पुत्रका ममत्वतैं महा दुराचार करि धन संचय करो हो सो धनका ममत्व अर पुत्रादिकनिके ममत्वतैं संसारमैं आपा भूलि नरक जाय पहुंचोगे अर अनेक पर्यायनिमैं दीन दरिद्री भये विचरोगे। अर प्रत्यक्ष देखो हो हजारां मनुष्य अन्न अन्न करते मर जाय हैं दरिद्री रंक भये घरघरके बारने फिरैं हैं दीनता करै हैं जिनकी ओर कोऊ देखै हू नाहीं कोऊ उनकी श्रवण करै नाहीं सो समस्त प्रभाव पूर्व जन्मांतरमैं धनसूं तीव्र ममता बांधि कृपण होय धन संचय किया ताका फल है अर तुम्हारे विभव संपदा रत्न सुवर्ण रूपादिक हैं तथा नाना रसनिकरि सहित भोजन अर शीलवंती रूपवंती रागरस करि भरी स्त्रीनिका समागम अर आज्ञकारी प्रवीण सुपुत्र अर हितमैं सावधान कार्यसाधक चतुर सेवक अर महान विस्तीर्ण महल मंदिरनिमैं इत्यादिक जे सामग्री पाई हैं ते कोई पूर्वजन्ममैं दान दिया ताका फल है। दानके प्रभावतैं भोगभूमिमैं जन्म अर स्वर्गके विमाननिके स्वामीपना होय है तहां असंख्यात कालपर्यंत सुख भोगिये है सो यहांका तुच्छकाल क्लेशसहित महा मलीन देहादिक कहा बस्तु है ऐसी संपदा हू तुम्हारे थिर नाहीं रहैगी अर तुम्हारे ऐसा विचार है जो या लक्ष्मी हमारी है हमारा कुलमैं चली आवै है हम बुद्धिरहित नाहीं हैं जो हमारी विनसि जाय जे बुद्धिहीन चूक करि चालै हैं तिनकी संपदा विनसै है ऐसा तुम्हारा भ्रम है सो मिथ्यादर्शनके उदय करि बडा भ्रम

है अर अनंतानुबंधी कषायतैं अभिमान है सो थोरे दिननिमैं नरकके नारकी बनाय देगा तातैं हे आत्मन्! जो जिनेन्द्रके बचननिका श्रद्धान है अर धर्मसूं प्रीति है अर दुःखीलोकानिकूं देख दया आवै है तो चित्तमैं सम्यक् चिंतवन करो जो मैं मूढात्मा धनसूं ममता करि पूर्वला धन था ताकी तो बडा यत्नतैं रक्षा करी अर नवीन भी बहुत धन उपार्जन किया धनका उपार्जनके निमित्त क्षुधा तृषा शीत उष्णादिक भोगे अर अनेक आरंभ बनिज राजसेवा विदेशगमन समुद्रप्रवेश इत्यादिक किए अधर्मी म्लेच्छादिकानिके परिणामकूं राजीकरनेकूं निंद्य जो तो प्रकार धन उपार्जन किया तो अब मरण अचानक आवैगा धन रक्षा नाहीं करैगा तातैं अब मोकूं न्यायतैं अनीतितैं तथा पापके बनिजतैं अर पापीनिकी पापरूप सेवातैं तो धन उपार्जन करनेका शीघ्र ही त्याग करना चाहिये अर न्यायतैं उपार्जन किया धन तिसमैं मर्यादा-करि रहना अर जिनका धन अन्यायतैं जवर होय खोस लिया है तथा परिणामनिकी दुष्टतातैं भुलाय चुकाय राख्या तिस धनकूं उलटा देय क्षमा करावना बहुरि जो द्रव्य है तिसमैं पुत्रादिकनिका विभागका धन तो पुत्रादिकके अर्थि न्यारा करना अर दानके अर्थि निराला धन राख करके परका उपकारके अर्थि धर्मकी प्रवृत्तिके अर्थि दान करना अर जो नवीन धन उपार्जन होय तिसमैं हू चतुर्थभाग तथा छठा भाग तथा अष्टम भाग तथा जघन्य दशम भाग तो पुण्यदानधर्मके कार्यमैं धनवानकूं वा निर्धनकूं समस्तकूं ही दानादिकका विभाग करना योग्य है। जाके उदर पूर्ण भी नाहीं होय आधा चौथाई भोजनादिक मिलै ताकूं हू दानधर्मका विभाग उत्कृष्ट चतुर्थ भाग जघन्य दशम भाग मध्यम छट्ठो भाग अष्टम भाग न्यारो कर दुःखित बुभुक्षित जिनपूजनादिकका विभाग करना श्रेष्ठ है दान विना गृह है सो श्मशान है पुरुष है सो मृतक है अर कुटुम्ब हैं ते गृद्धपक्षी हैं ते इस पुरुषका धर्मरूप मांस चूंथि चूंथि खाय हैं अर गृहस्थ धनवान है जैनीनकी अनेक प्रकार पालना करै हैं जे धर्ममैं शिथिल होय ते हू धनाढ्यपुरुषनिका आदर देने करि मिष्ट वचन बोलनेकरि धर्ममै दृढ होजाय हैं। केतेक काम चाकरी करावने-

लायक होंय तो उनतैं काम हू लेना अर उनका भरण पोषण करना केतेक कुमाय पैदा करि लेने योग्य होय तिनकूं पूंजीका सहारा देय धन हू बन्या रखावै है अर ताकूं पांच रुपयांकी पैदासि कराय देय केतेकनिकूं बनिज व्योहारमैं अपने सामिलकरि निर्वाह करदे केतेनकी धीज प्रतीत करायकै पदाकै योग्य करदे केतेकानिकूं कहकरि रोजगार लगाय दे केतेकनिकूं दलाली वगैरह लगाय रोजगार कराय दे क्यों कि पुण्यवानका आश्रय विना पकव्या मनुष्यका खडा होना दुर्लभ है आप धर्मात्मा होय सो अपना धन बिगडवाका भय नाहीं करै है जो मेरा धन साधर्मीनिके कार्यमैं आवै सो धन मेरा है अर जो धन साधर्मीनिके कार्यमें नाहीं आया सो मेरा नाहीं बहुरि केतेक पुरुष पहली धनाढ्य थे प्रतिष्ठावान थे तिनके कर्मके उदयकरि धन नष्ट होयगया आजीविका नष्ट होयगई अर खानपानका ठिकाना रह्या नाहीं घरमें स्त्रीबालकादिकनिकी बडी त्रास ऐसे पुरुषनितैं मिहनत मजूरी होय नाहीं ओछा काम किया जाय नाहीं बडा आदमी जान कोउ अंगीकार करै नाहीं धन आभरण वस्त्र पात्र समस्त बेंच खाये अब कोनसौं कहैं कौन उपाय करैं ऐसे प्रतिष्ठावान पुरुषकूं आजीविका लगाय देना चिगतेनिकू दुःख समुद्रमैंतैं हस्तावलंबन देय काढना धर्ममें न्यायमें लगाय थोरा बहुत सहारा देय खडा कर देना जेती योग्यता होय तिस माफिक धीज करनी अन्य दूजाके कने राखि देना रोटीका निर्बाह होजाय तैसैं करना धर्मतैं जोड देना यो बडा उपकार है। केते स्त्री पुत्रादिरहित होय तिनकूं धर्मके कार्यमैं लगाय खानपानका दुःख मेटि देना केते वृद्ध होगये उद्यम करनेकूं समर्थ नाहीं होय केतेक जिनधर्मी धर्ममैं सावधान हैं तो हू इंद्रियां थक गईं रागसहित देह होगया सहाय विना समता रहै नाहीं तिनकी स्थितिकरण धनवानहीसूं बनै। केतेक पुत्रादिकरहित है तिनकूं धर्मका आश्रय ग्रहण करावना केती श्राविका विधवा होगई तिनके भोजनवस्त्रका ठिकाना नाहीं तिनमैं करुणाबुद्धितैं भोजन वस्त्रादिकका साधन कराय धर्ममैं लगाय देना धनाढ्य पुरुषनिका सहाय पाय केते पुरुष स्त्री कुधर्मका त्याग करि दृढ श्रद्धान करै हैं केतेक अणुव्रतादिक

ग्रहण करै हैं केई श्रद्धानादि सहित सचित्तका त्यागी केई परवीमैं उपवास केई दिवसमैं ब्रह्मचारी केई अपनी स्त्रीका त्यागी केई आरंभका त्यागी केई परिग्रहत्यागी केई पापकी अनुमोदनाका त्यागी केई उच्छिष्ट आहारका त्यागी ऐसैं ग्यारैं स्थान श्रावकके धारण करनेतैं दानके पात्र होय है ते हू धनाढ्य-पुरुषनिका सहायतैं धर्ममैं प्रवर्तते देख अनेक पुरुष धर्मकी प्रवृत्तिमैं लागि जाय है। बहुरि धनाढ्य पुरुष है सो विद्या पढनेके स्थान बनाय दे पढावनेवालेनिकूं जीविका देय व्याकरणविद्या काव्यविद्या गणितविद्या तर्कविद्या इत्यादिक अनेक विद्या पढावनेकी पाठशाला स्थापन करदे तो जैनीनिमैं सैकडां विद्याका पढवामैं लगिजाय बरसां वरस दस बीस पढकरि तैयार हुवा करैं तो धर्मको संतान चल्यो जाय। केई बुद्धिकरि अधिक होय तिनकूं आजीविकादिका सहायी होय निराकुल करदे तो धर्मकी प्रवृत्ति चली जाय तथा अनेक ग्रन्थानिकूं लिखावना पढनेवालेनिकूं पुस्तक देना ग्रन्थके सोधनेमैं सोधनेवाले-निकूं निराकुल कर देना ज्ञानके अभ्यास करनेवालेनिसूं प्रीति करना अपने आत्माकूं ज्ञानके अभ्यासमैं लगावना अपने संतानकूं तथा कुटुंबनिकूं ज्ञानके अभ्यासमैं लगावना जैसे बने तैसे लोकानिकी शास्त्रके अभ्यासमैं रुचि करावनी। ये शास्त्र धर्मके बीज हैं जो शास्त्रनिका ज्ञान हो जाय तो सैंकडां दुराचार नष्ट हो जांय सम्यग्ज्ञान ही व्यवहार परमार्थ दोऊंनिकूं उज्ज्वल करदे है तातैं शास्त्र पढावने समान दान नाहीं है। तथा रोग मेटनेवाली प्रासुक केतेक औषधि बनाय करि रोगीनिकूं देना जे निर्धन मनुष्य हैं तिनकूं औषधि तय्यार मिलजाय तो बडा उपकार है तथा कोऊ निर्धन नाहीं होय तिनका भी औषधि-करि बडा उपकार है निर्धन दुःखित जनानिकूं औषधिदान देने समान उपकार नाहीं है केतेक निर्धन-निकूं औषधि मिलैं नाहीं करनेवाला नाहीं बिना सहाय औषधि बन सकै नाहीं औषधि तय्यार मिले ताका बहुत कोटि धनका लाभ है रोग मेटने बराबर कोऊ दान नाहीं बड़ा अभय दान है।

बहुरि धर्मात्मा जननिके अर्थि रहनेके अर्थि धर्म साधन करनेके धर्मशाला वस्तिकादिक अपनी

शक्ति सारू मोल ले देना अपना घरका स्थान होय तहां राखि देना जातैं रहनेके स्थान बिना धर्मसेवनादिकमैं परिणाम थिर नाहीं रहै है। बहुरि जिनधर्मी परदेशी दुःखित आजाय तो महीना दो महीना को भोजनादिकके सहायमैं प्रवर्तना। कोऊ परदेशीके पासि मार्गमैं खरची अपने स्थान पहुंचनेकी नाहीं होय तथा मार्गमैं लुटिगया होय चोर ले गया होय जैनी जानि आपकनै आया होय ताकूं अपने गृह पहुचै तैसैं दानादिककरि पहुंचावना अर परदेशी रोगी होय आया होय ताकूं स्थान बतावना औषधादिककरि रोगरहित करना बारम्बार धर्मोपदेश देय समता देना बारम्बार पूछना वैयावृत्य करना। बहुरि निर्धनमनुष्यनितैं नाहीं बन सकै ऐसा औषधिका दान निरंतर करना। परिणाम चल गया होय रोगकरि वियोगके दुःखकरि दारिद्रकरि धैर्य छूट गया होय तिनकूं धर्मोपदेश करि धीरज धारण करावना। बहुरि अपने आत्माकूं निरंतर ज्ञानदान देना आप ज्ञानवान होय तो नित्य अनेक जीवनिकूं धर्मोपदेश देना तथा कोऊ शास्त्रके अर्थके जाननेवाले पुरुषकी प्राप्ति होय तो ताकूं कल्पवृक्षका लाभ तुल्य बडा हर्ष सहित आजीविकादिककी थिरता कर देना बहुत विनय आदरतैं राखि धर्मका ग्रहण आप करना धर्मकी वृद्धिके निमित्त ज्ञानीनिका सन्मानादिककरि धर्मके उपदेशकी तत्त्वनिके स्वरूपकी चर्चाकी गुणस्थान मार्गणा स्थानादिककी चर्चाकी प्रवृत्ति कराय धर्मकी प्रभावना सम्यग्ज्ञानकी प्रभावनाकी प्रवृत्ति करावना। जहां धर्मकी प्रवृत्ति मंद होगई होय तिन ग्रामनिमैं शास्त्र लिखाय भाषा वचनिका योग्य शास्त्र भेजना ज्ञानदान समस्त मंदकषायी भद्र परिणामीनिकूं करना चाहिये। बहुरि संपदा पाय दान सन्मानतैं प्रियवचनतैं अपने मित्रनिकूं कुटुम्बकूं आनंदित करना संपदाका समागम अर जीवन क्षणभंगुर है इस धनतैं अर देहतैं तथा वचनतैं अन्य जीवनिका उपकार करना ही श्रेष्ठ है। प्रियवचन बोलनेका बडा दान है वैरीनितैं अपना वैर छांडना प्रियवचनतैं अपराध क्षमा करावना बडा दान है अपना धन धरती देय करकैं हू संतोषित करना वैर धोवना अभिमान त्यागना कुटुम्बी निर्धन होय तिनकूं शक्तिप्रमाण दानसं-

मान करना अपनी बहन बेटी निर्धन होय तो बारम्बार भोजन पान वस्त्र आभरणादिककरि बारम्बार सन्मानदान करना दयावान होय ते अन्यकूं दुःखित जान सन्मानतैं दुःख मेटे हैं सो जिनका आपमैं उदर पहुंचै अर अपना अंग समान भूवा बहण बेटी जमाई इनका संताप कैसैं सहै. कोऊकरि अपना उजाड विगाड होगया होय तो कटुक वचन नाहीं कहना उनको या कहना जो भाई थैं परिणाममैं कुछ संताप मत करो गृहचाराभैं हानि वृद्धि लाभ अलाभ तो कर्मके अनुकूल है अर समस्त सामग्री विनासीक है तुम तो हमारे अनेक कार्य सुधारो हो तथा हमारे भले करनेकूं करो हो कर्मके अनुसार कोऊ बिगडै भी है ऐसैं प्रियवचनकरि संतोषित ही करै। बहुरि निरंतर ऐसा परिणाम ही रखै जो मेरा धनतैं किसी जीवका उपकार होय तो अच्छा है अन्य पुरुष अपने हितमैं प्रवर्त्तन करो वा अपने अहितमैं प्रवर्तन करो आप तो उपकार करनेमैं ही प्रवर्त्तन करै। बहुरि कोऊ बंदीखानामैं पड्या होय कोऊ झगडामैं फंस्या होय तो अपने घरके पांच रुपया देयकर छुडावना कोऊ चूकि अपना धन चोरया होय तो प्रियवचनादिकतैं समताभावतैं सुलझाय लेना निर्धन होय तासूं लेनेको इरादो वा झगडो नाहीं करना कोऊ चोर खाया ताका फजीता अपवाद नाहीं करना आपके आश्रित होय तिनका पालन पोषण करना विधवा होय अनाथ होय रोग वियोगादिक दुःखकरि संतापित होय तिनका दुःख संताप दूर करनेमैं सावधानी करना बालक होय बालविधवा होय तिनका बहुत प्रकार सम्हालितैं प्रतिपालन करना अपनेतैं जे वैर राखैं उपकार करेका हू अपकार मानैं तिनका हू गुण ग्रहण करना अर दान सन्मान करना। अवसर पाय अपने मित्र बांधवादिकनिका सन्मान नाहीं किया तो धन ऐश्वर्य पाय केवल अपयशकी कालिमा ही ग्रहण करी। बहुरि अपने पुत्र कुटुम्बादिककी पालना तो सूरडी कूकरी हू करै है अवसर पाय अपने बिगाड करनेवाले धन आजीविका हरनेवाले वैरीनिका हू दान सन्मान उपकार करि वैरका अभाव करना दुर्लभ है। मनुष्यजन्म धन संपदा यौवन ऐश्वर्य क्षणभंगुर है अनेकका धन जीवन नष्ट होगया जिनका

नाम अर स्थान हू नाहीं रह्या सोई कार्तिकेयस्वामी कह्या है—अतिशय करके आभरण वस्त्र स्नान सुगंध विलेपन नाना प्रकारके भोजन पानादिक करि अत्यंत पालन पोषण किया हुवा हू देह एक क्षणमात्रमें जलका भऱ्या काचा घडाकी ज्यों विनशै है। जो लक्ष्मी चक्रवर्तीनिकूं आदि लेय महापुण्यवाननिमें नाहीं रमी सो लक्ष्मी अन्य पुण्यरहित जननिमें कैसें प्रीति बांधि रहैगी या लक्ष्मी कुलवाननिमें नाहीं रमै है कोऊ जानै मेरा कुल ऊंचा है मेरे लक्ष्मी रहती आई है ऐसा नाहीं जानना कुलवानमें भी रहै वा नाहीं रहै नीच कुलवालेमें जाय रहै है धीरमें रमै वा नाहीं रमै पंडित प्रवीणके रहै वा नाहीं रहै मूर्खनिके हू होय है सूरवीरनिके वा कायरनिके मांहि रमै वा न रमै पूज्यपुरुषनिमें तथा सुंदररूपवालेनिमें वा सज्जननिमें वा महापराक्रमीनिमें वा धर्मात्मामें या लक्ष्मी राचै है ऐसा नियम जान सो नाहीं है।

भावार्थ—संसारी अज्ञानी भ्रमतैं ऐसा जानैं है जो मैं तो कुलवान हूं मोकूं छांडि लक्ष्मी कैसें जायगी तथा मैं धीर हूं धीरजवानके लक्ष्मी स्थिर रहै है चलायमानकै विनसै है तथा मैं महापंडित प्रवीण हूं मैं बडा प्रवीणतातैं बधाई है मूर्ख अज्ञानी चूक करि चाले ताकी लक्ष्मी नष्ट होय है तथा मैं सूरवीर हूं अन्यकी लक्ष्मीकी रक्षा करूं हू मेरी कैसें विनसै कायरके विनसै है तथा मैं पूज्य हूं समस्तकी लक्ष्मी पूज्यमें रही चाहिये कोऊ नीचकी विनसै है तथा मैं धर्मात्मा हूं नित्य ही दानपूजाशीलादिकमें प्रवर्तूं हूं मेरी कैसें नष्ट होय कोऊ पापीके संपदा विनसै है तथा मैं सुंदर रूपवान हूं हमारी सूरत ऊपरही लक्ष्मीको वास दीखै है कोऊ कुरूपके विनसै तथा मैं सुजन हू सबका प्रिय हूं मेरे लक्ष्मी कैसे विनसै दुष्ट होय सबका अप्रिय होय ताके विनसै तथा मैं महा पराक्रमी हूं उद्यमी हूं मैं प्रतिदिन नवीन उपार्जन करूं हूं मेरी लक्ष्मी कैसें विनसै आलसी होय उद्यमरहित होय ताके विनसै है ऐसा समझना मिथ्या भ्रम है या लक्ष्मी तो पूर्वले किये पुण्यकी दासी है पुण्यपरमाणु नष्ट होते ही विनसै है जैसें पचास हाथकी महलमें दीपक बुझते ही अंधकार होजाय कौन रोकै तथा जैसें जीव निकसते ही समस्त इंद्रियां चेष्टारहित हो

जांय तथा जैसैं तेल पूर्ण होते ही दीपक नष्ट होजाय तैसैं पुण्य अस्त होते ही समस्त लक्ष्मी कांति बुद्धि प्रीति प्रतीति एक क्षणमैं नष्ट होजाय है प्रथम तो या लक्ष्मी न्यायके भोगनिमैं लगावो अर परिणामनिमैं दयाभाव विचारि दुःखित बुभुक्षितनिकूं दान करो या लक्ष्मीका जलमैं तरंग क्षणमात्रमैं बिलाय जाय तैसैं कोई दोय दिन लक्ष्मीका संयोग है पाछैं नियमसूं वियोग होयगा जो पुरुष या लक्ष्मीकूं निरंतर संचय ही करै है न तो भोगै है अर न पात्रानिकूं दान देवै है सो अपने आत्माकूं ठगै है अचानक मरि अंतर्मुहूर्तमैं नारकी जाय उपजैंगे मनुष्यजन्मकूं निष्फल किया। जे पुरुष लक्ष्मीका संचय करके अति-दूर गाडैं हैं विनसनेके भयतैं पृथ्वीमैं बहुत ऊंडा गाडैं हैं सो पुरुष तिस लक्ष्मीकूं पाषाण समान करै है जैसैं जमीमैं अनेक पाषाण हैं तैसैं धन भी धरया रहेगा आपके दान भोगके अर्थि नाहीं तदि दरिद्री तुल्य रह्या। बहुरि जो पुरुष लक्ष्मीकूं निरंतर संचय करै है अर दान नाहीं करै अर भोगै हू नाहीं तिस पुरुषके अपनी हू लक्ष्मी परकी समान है जैसैं पडोसीकी लक्ष्मी तथा नगरनिवासीनिकी लक्ष्मी देखनेमैं आवै है अपने भोगनेमैं आवै नाहीं। देनेमैं आवै नाहीं बहुरि जो पुरुष लक्ष्मीमैं अति आसक्त भया प्रीतिरूप भया अपना आत्माकूं हू खावनेमैं पीवनेमैं औषधादिकनिमैं वस्त्र पहरनेमैं अपने रहनेका जायगामैं और हू भोगोपभोगनिमैं नित्य ही क्लेश भोगै है पण धनके खरच होनेका बडा दुःख दीखै है तातैं कष्टतैं आप दिन व्यतीत करै है सो मूढ राजानिका वा अपने दाइयादार पुत्रस्त्रीभ्राताादिकनिका कार्य साधै है आप तो धनकी ममताकरि दुर्गतिमैं जाय ऊपजैगा अर राजा ले जायगा अथवा पुत्र कुटुंबादिक लेवैंगे आप तो पापी ही धन उपार्जन करके हू केवल इसलोकमैं क्लेशका पात्र ही रह्या। जो मूढ बहुत प्रकार अपनी बुद्धि करकैं लक्ष्मीकूं बधावै है अर बधाता २ तृप्त नाहीं होय है अर लक्ष्मी बधावनेकूं अनेक आरंभ करै है पाप होनेतैं नाहीं डरै है रात्रिमैं अर दिनमैं धनके उपजानेके विकल्प करते २ बहुत रात्रि व्यतीत भए निद्रा ले है अर दिनमैं प्रातःकालहीतैं द्रव्यके उपार्जनके विकल्प करै है अवसरमैं भोजन हू नाहीं करै है

अनेक लेन देन बनिज व्यवहार बकवाद करते २ कठिन क्षुधाकी प्रेरणातैं भोजन करे है अर रात्रिविषे कागद पत्र लेखा हिसाब जबाव सवालकी बडी चिंतामैं मग्न भए तीन प्रहर रात्रि व्यतीत भए सोवे है सो मूढ केवल लक्ष्मीरूप तरुणीका दासपणा करिकै संकट भोगि दुर्गति गमन करे है । अर जो इस वर्द्धमान लक्ष्मीकूं निरंतर धर्मकार्यके आर्थि देहै सो पंडित प्रवीण पुरुषनिकरि स्तुति करने योग्य है अर तिसहीका लक्ष्मी पावना सफल है ऐसैं जान करि जे धर्मसंयुक्त दारिद्रकरि पीडित ऐसे मनुष्यनिनै स्त्रीनिनै निरंतर अपेक्षारहित ख्याति लाभ पूजाकूं नाहीं चाहता तथा उनतैं कुछ अपना उपकार नाहीं चाहता आदर प्रीति हर्ष सहित दान देवै है तिनका जीवना सफल है जातैं धन यौवन जीवन तो प्रत्यक्ष जलमैं बुदबुदाकी ज्यों अथिर देखिए हैं अर दानका फल स्वर्गकी लक्ष्मीका भोगभूमिकी लक्ष्मीका असंख्यातकालपर्यंत भोग संपदा देनेवाला है ऐसा जानि निरंतर दानहीमैं प्रवर्त्तन करो ।

इहां ऐसा विशेष और हू जानना जो पूर्वजन्ममें सुपात्रदान दिया है सम्यक्तप किया है ते पुरुष तो इस दुःषमकालमैं भरत क्षेत्रमें नाहीं उपजे हैं जातैं इस दुःषमकालमें यहां सम्यग्दृष्टिका उपजना है ही नाहीं जे सम्यग्दृष्टि देवगति नरकगतितैं आवैं ते विदेहक्षेत्रनिमैं ही पुण्यवान मनुष्य होय हैं अर मनुष्य तिर्यंच गतिका सम्यग्दृष्टि मरके स्वर्गलोकमें उपजै हैं जातैं इस क्षेत्रमें सम्यग्दृष्टि आय नहीं उपजै है यहां कोऊ पुण्याधिकारीके काललब्ध्यादि सामग्रीतैं सम्यक्त्व नवीन उपजै है अर पूर्व जन्ममें जिनधर्म पालिकरि पुण्य उपजाया सो हू यहां नाहीं उपजै है याहीतैं जिनधर्ममें राजा उपजते रह गये अर और हू बहुत धनाढ्य पुरुष हू जैनीनिके कुलमें नाहीं उपजै हैं और जो जैनीनिके कुलमें धनाढ्य उपजै तो ते जिनधर्मरहित होय हैं कोऊ पुण्याधिकारीने अठैं सतसंगति मिल जाय वा जिनसिद्धांत श्रवण मिलै तदि नवीन बीजतैं जिनधर्ममें सावधान हो जाय है। बहुरि इस कालमैं जैनी भी धनाढ्य होय अर धर्मकूं समझ त्याग आखडीमैं सावधान होय तो हू दानमैं धन नाहीं खरच्या जाय है लाखां धन छांडि मर

जाय है परंतु आधा चौथाई धन हू दान धर्ममें नाहीं लगाया जाय है। इस कलिकालके धनाढ्य पुरुषनिकी कैसी रीति वा परिणाम होय है सो कहिये है—परिणाम करि क्रोध बधै है अपने पुरुषार्थका बडा अभिमान बधै है वात्सल्यता मूलतैं जाती रहै है अन्यका किया कार्यकूं सराहै नाहीं समस्तकी अकल बुद्धि घाटि दीखै दया रहै नाहीं अन्य पुरुषका वचनादि करि अपमान तिरस्कार करता शंकै नाहीं अन्य पुरुष धर्मनीति लिए वचन कहै तिनकूं कुयुक्तितैं खण्डन किया चाहै धर्मात्मा पुरुष विनयसहित संभाषण करै तो मनमें बडी शंका उपजै जो मोतैं कदाचित् कुछ याचना करैगा निर्वांछक साधर्मीनिका भी भय हीं रहै जो मोकूं कदाचित् धन खरचनेका उपदेश देगा अभिमान दिन दिन प्रति बधै स्वभाव ऊपरि तेजी बधै जो अपना कार्य होय ताकूं बहुत शीघ्रतासू चाहै सेवकादिकका कष्ट दुःखकू नाहीं देखै अपना प्रयोजन साध्या चाहै परका प्रयोजन तथा दुःख क्लेशकूं तुच्छ जानै संपदा बधै ताकी लार खरच बधै खरचकी लारि दुःख बधै दिन दिन खरच घटावेकाही परिणाम रहै अपने भोगोपभोगकी वस्तु लेने मैं ऐसा परिणाम रहै जो अर्ध दामनिमें आजाय कुछ घाटि ले जाय मोकूं बडा आदमी समझि बहुत मोलकी वस्तु थोडे दामनिमें दे जाय कोऊ निर्धन तथा लूटका माल अति अल्प मोलमैं आजाय ताका बडा हर्ष मानै संचय करते २ तृप्ति नाहीं होय कोऊ आपकूं ठगाई जाय तासूं प्रीति करै धनवान दिखै ताकूं आप ठगावै धनवान पापी भी होय तासूं प्रीति करै धनवान अधर्मी भी होय ताकी बुद्धिकूं बडी मानै धनवानानै अपनी उदारता दिखावै निर्धनके निकट अपना अनेक दुःख रोवै दुःखी देखै तिसको अपना बहुत दुःख सुनावै अन्यकी वा निर्धनकी आबरू ओछी जानै धनरहितकूं अपना वस्तु धीजतां बडी अप्रतीत करै धनरहितकूं चोर दगाबाज समझै आप पैला सर्वस्व खा जाय तो हू आपकूं सांचा जानै अपनी बडाई करै अपने कर्तव्यकी प्रशंसा करै अन्यके उत्तम कार्यनिमें हू खोट प्रगट करै आपकूं निस्पृह निर्वांछक समझै जगतके अन्य जीवनिके तृष्णा समझै आपकूं अजर अमर समझै अनित्यपना

समझै अन्य जीवानिकूं अति लोभी समझै आपकूं न्यायमार्गी समझै आपकूं प्रभु समझै धनरहितानिकूं रंक समझै आरंभ परिग्रह बधावता धापै नाहीं तृष्णा अति बधै मरण पर्यंत संतोष नाहीं धारै अपयशका कार्य करै अर आपकूं यशस्वी समझै कपटी छलीकूं धन ठिगा देवै बहुत धूर्त कपटी छलीकूं अपना कार्य साधनेवाला पुरुषार्थी प्रवीण समझै सत्यवादी मर्यादा सहित प्रवृत्तिका धारी निरपेक्ष होय तिनकूं बुद्धिहीन समझै जहां अपना अभिमान बधै कषाय पुष्ट होय आपका नाम होता जानै तहां जायगामैं मंदिरमैं बागबगीचानिमैं विवाहमैं यात्रामें भाडानिमैं बहुत धन खरच करै मंदिरादिकानिमैं भी अपनी उच्चता होनेकूं पंचानिमैं अभिमान जहां बधै तहां धन खरचि करै जीर्णमंदिरादिकनमें नहीं देवै निर्धन भूखेनिके पालनमैं पीस्यो (पैसा) एक नाहीं देवै दुर्बल दीन अनाथ वृद्ध रोगी विधवा इनका पालानिमैं धन कदाचित नाहीं खरच करै निर्धन दुःखितकूं नष्ट हुवा समझै आपहू अच्छा भोजन न करै जो कुटुंबादिका विभाग करना पडैगा। ऐसा अभिमान धारै है जे घणे ही धर्मात्मा तपस्वी पण्डित हमारे घर आवै हैं अर अनेक आवैंगे समस्त देशी विदेशी गुणवान जैनीनिकूं बडा ठिकाना हमारा घर ही है अर हमही दातार हैं और कहां ठिकाना है अर केतेक अपने घरके कार्य सुधारनेवाले वा धर्म कार्यमें नियुक्त हैं तिनकी भी धनका मदकरि बडा अवज्ञा करै है इनको हम पालना करैं हैं हमारेतैं छूटे इनकूं कहां ठिकाना है ऐसे पंचमकालके धनवानानिके ऊपरि मोहकी बडी अंधेरी पड रही है पूर्व जन्ममें जिनधर्मरहित कुतपस्या करी है कुपात्रकूं दान दिया है इसबीजतैं धन संपदा पाई है सो धन संपदा छांडि धनकी मूर्छातैं मरि कषायनिकी मंदता तीव्रताके प्रभाव माफिक सर्पादिक तिर्यंचानिमें वृक्षादिकानिमें मधुमाक्षिकादिकानिमें उपजि नरकादिकनिमें बहुतकाल परिभ्रमण करेंगे या धनकी मूर्छा इसलोकमैं हू वैरको तथा अपयशको कारण है कृपणका सकल जन अपवाद करैं हैं कृपणका परिणाम निरंतर क्लेशित रहैं हैं दुर्ध्यानी रहैं अर दानके मार्गमें लगाया धन अपना धन जानहू पात्रदानमे गया धन मरणके समयमें परिणामनिकी उज्वलता

कराय अंतर्मुहूर्तमें स्वर्गकी संपदाकूं प्राप्त करै है। यहां उत्तम पात्र तो निर्ग्रंथ वीतरागी समस्त मूलगुण उत्तरगुणके धारक दशलक्षणधर्मके धारक बाईस परिषहके सहनेवाले साधु हैं दर्शनादिक उद्दिष्ट आहार का त्यागी पर्यंत ग्यारह स्थान श्रावकके हैं ते मध्यम पात्र हैं बहुरि जिनके व्रत तो नाहीं अर जिनेन्द्रके प्ररूपे तत्त्वके श्रद्धानी जन्ममरणादि रूप संसार परिभ्रमणतैं भयवान चारप्रकारके संघके हित होनेमें बांछासहित संसारदेहभोगनिमें विरक्तबुद्धि जिनशासनका उद्योतक अपनी निंदा गर्हा करता स्वपरतत्त्व का विचारमें चतुर जिनकथित तत्त्वमें धर्ममैं दृढताका धारक धर्म अधर्मके फलमैं अनुरागसहित सकल जीवनिकी दया करि व्याप्तचित्त मंदकषायी परमेष्ठीका भक्त इत्यादिक समस्त सम्यक्त्वके गुणनिका धारक सो जघन्यपात्र है। ऐसे तीन प्रकारके पात्रनिमें यथायोग्य आहार औषधि शास्त्र वस्तिकादिक स्थान वस्त्र जीविका जीवनेकी स्थिरताके कारण भक्ति विनयसहित दिये हुये भावनिके अनुकूल उत्तम मध्यम जघन्य भोगभूमिमैं दातारकूं उत्पन्न करै हैं अर सम्यग्दृष्टिकूं सौधर्मादिक स्वर्ग महर्द्धिक देवनिमें उत्पन्न करै हैं। अब कुपात्रके ऐसैं लक्षण जानना जिनके मिथ्याधर्मकी दृढ बासना हृदयमैं तिष्ठै है अर घोर तपके धारक अर समस्त जीवनिकी दया करनेमैं उद्यमी असत्य वचन कठोर वचनसूं परांमुख समस्तसूं प्रिय वचन कहै धनमैं स्त्रीमैं कुटुम्बमैं निस्पृह रहै मिथ्याधर्मका निरंतर सेवन करनेवाला जप तप शील संयम नियममैं जिनके दृढतासहित प्रीति हो मंदकषायी परिग्रहरहित कषायविषयनिका त्यागी एकांत बाग बनादिकमैं वसनेवाले आरंभरहित परीषह सहनेवाले संक्लेशरहित संतोषसहित रसनीरसके भक्षणमैं समभावके धारक क्षमाके धारक आत्मज्ञानरहित बाह्यक्रियाकांडतैं मोक्ष माननेवाले ऐसे कुपात्र हैं तथा केई जिनधर्मके पक्ष ग्रहणकरनेवाले हू एकांती हठग्राही अपनी बुद्धिहीतैं आपकूं धर्मात्मा मान रहै हैं सो केई तो जिनेंद्रका पूजन आराधन गान भजनहीसूं आपकूं कृतकृत्य मानि वाह्य पूजन स्तवनादिकमैं ही तत्पर हैं अन्य ज्ञानाभ्यास व्रतादिकमैं शिथिल रहै हैं। केतेक जलादिकतैं धोवना सोधना अन्नादिककूं

धोवना स्नान कर जीमना अपना हस्ततैं बनाया भोजन करना वस्त्रादिकनिका धोवना धायाहुवा स्थानमैं जीमना इत्यादिक क्रिया करके ही आपके धर्म मानै हैं। केई देखि सोधि चालना सोवना बैठना जलकूं बडा यत्नाचारतैं छानना याहीतैं आपकूं कृतकृत्य मानै हैं अन्यकूं क्रियारहितकूं निंद्य जानै हैं। केई उपवासादिक व्रत रसपरित्यागादि करि आपकूं ऊंचा मानैं हैं। केई दुःखित बुभुक्षितका दानहीकूं धर्म जानैं हैं। केई भद्रपरिणामी समस्त धर्महीकूं समान जानता विचाररहितपनाहीमैं लीन है। केई परमेश्वरका नाम मात्रहीकूं धर्म जानि विकथा निंदादिरहित तिष्ठै हैं। केतेक अन्यजीवनिका उपकार करि समस्तका विनय करनेकूं धर्म मानैं हैं केतेक अपनी इंद्रियनिकूं दण्ड देते रूखा सूखा एक बार भोजन कर मौनावलंबी भये अपनी आयुकूं जेठै तेठै तिष्ठते व्यतीत करैं हैं केतेक नानाभेषके धारक मंदकषायी परिग्रहरहित विषयरहित तिष्ठै हैं। केतेक कोऊ एकबार हस्तमैं भोजन धर दे सो भक्षण कर याचनारहित विचरै हैं इत्यादिक अनेक एकांती परमागमका शरणरहित आत्मज्ञानरहित मिथ्यादृष्टी कुपात्र हैं इनको दान देना अनेकप्रकार फलै है जैसा पात्र जैसा दातार जैसा भाव जैसा द्रव्य जैसी विधिसूं दिया तैसा फलै है। केई तो असंख्यात द्वीपनिमैं दानके प्रभावतैं पंचेंद्रिय तिर्यंचानिके युगलनिमैं उपजै हैं जहां च्यार २ अंगुल प्रमाण महामिष्ट सुगंध तृण भक्षण है महान अमृत समान जल पीवैं हैं परस्पर वैरविरोधरहित तिष्ठै हैं जहां शीतकी बाधा नाहीं उष्णताकी तावडा पवन वर्षादिककी बाधारहित एक पल्यपर्यंत आयु भोगैं हैं जहां विकलत्रयनिकी बाधारहित अनेकप्रकार स्थलचर नभचर तिर्यंच होय यथेच्छ विहार करते सुखतैं भोग भोगते जुगल ही लार उपजैं लार ही मरकरि व्यंतर भवनवासी ज्योतिषी देवनिमै उपजै हैं तथा केई कुपात्रदानके प्रभावतैं उत्तरकुरु देवकुरु भोगभूमिमैं तिर्यंच उपजैं तीनपल्यपर्यंत सुख भोगि देवनिमैं उपजै हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतैं हरिक्षेत्र रम्यकक्षेत्रनिमैं दोय पल्यकी आयुके धारक केई हिमवतक्षेत्रमैं हिरण्यवतक्षेत्रनिमैं एक पल्यकी आयुकूं धारण करि तिर्यंच युगलनिमैं उपजि मरि देवलोक

जाय हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतैं अन्तरद्वीप छिनवै हैं तिनमैं मनुष्य युगल उपजै हैं। इहां अंतर द्वीपनिमैं मनुष्य उपजै हैं तिनका स्वरूप ऐसा है—समुद्रकी पूर्वादिदिशामैं चार द्वीप हैं तिनमै पूर्वदिशाके द्वीपमै मनुष्य एक पगवाले उपजै हैं दक्षिणादिशामै पूंछवाले मनुष्य हैं पश्चिमदिशामै सींगवाले मनुष्य उत्तरदिशामै वचनरहित गूंगे मनुष्य उपजै हैं समुद्रकी चार विदिशाके चार द्वीपनिमै अनुक्रमतै सांकलकैसे कर्णवाले तथा शष्कुलीकर्ण मनुष्य उपजै हैं एक कर्णकूं ओढले एककूं बिछायले ऐसैं लंबकर्ण उपजै हैं बहुरि लम्बे कानवाले लम्बकर्णमनुष्य अर सुसाकेसे कर्णवाले मनुष्य ए समुद्रकी विदिशामैं उपजै हैं। बहुरि सिंहकासा मुख ॥ १ ॥ घोडाकासा मुख ॥ २ ॥ कूकराकासा मुख ॥ ३ ॥ सूकरकासा मुख ॥ ४ ॥ भैसाकासा मुख ॥ ५ ॥ व्याघ्रकासा मुख ॥ ६ ॥ घूघूकासा मुख ॥ ७ ॥ बानरकासा मुख ॥ ८ ॥ मच्छकासा मुख ॥ ९ ॥ कालमुख ॥ १० ॥ मीढाकासा मुख ॥ ११ ॥ गौकासा मुख ॥ १२ ॥ मेघकासा मुख ॥ १३ ॥ बिजलीकासा मुख ॥ १४ ॥ दर्पणकासा मुख ॥ १५ ॥ हस्तीकासा मुख ॥ १६ ॥ ये सोलह दिशा विदिशानिके अंतरालैमैं तथा पर्वतानिके अंतकी सूधिमैं द्वीप हैं तिनमैं मनुष्य ऐसे मुखवाले उपजै हैं। ऐसे २ लवणसमुद्रके एक तटमैं चौवीसै अंतरद्वीप हैं दोऊ तटके अडतालीस अर अडतालीस ही कालोदधि समुद्रके ऐसैं छिनवै अंतरद्वीपनिमैं कुभोगभूमि है तिनमैं कुपात्रदानतैं मनुष्य युगल उपजै हैं तिनमैं एक टांगवाले हैं ते गुफानिमै बसै हैं अर अत्यंत मीठीमृत्तिका भक्षण करै हैं इनतैं अन्य जे इसप्रकारके मनुष्य हैं ते वृक्षनिके नीचे बसै हैं अर कल्पवृक्षनिके दिये नानाप्रकारके फल भक्षण करै हैं अब कुभोगभूमिके मनुष्यनिमै उपजनेके कारण परिणामनिकूं तीन गाथानिमै त्रिलोकसारजीमै कह्या सो कहै हैं—

जिणलिंगे मायावी जोइसमंतोवजीविधणकंखा। अइगउरवसण्णजुदा करेंति जे परविवाहं पि ॥ १२२ ॥

दंसणविराहिया जे दोसं णालोचयंति दूसणगा। पंचग्गितवा मिच्छा मोणं परिहरिय भुंजंति ॥ १२३ ॥

दुब्भावअसुइसूदगपुप्फवई जाइसंकरादीहिं। कयदाणावि कुवत्ते जीवा कुणरेसु जायंते ॥ १२४ ॥

अर्थ—जो जिनेंद्रका निर्ग्रंथ लिंग धारण करकें अनेक परीषह सहते हू मायाचारके परिणाम धारैं हैं तथा केतेक जिनलिंग धारण करि हू ज्योतिषविद्या मंत्रविद्या वैद्यविद्या लोकनिमैं भोजनादिकरि जीवें हैं लोकनिकूं ज्योतिष वैद्यक मंत्र शास्त्रादि करि आपमैं भक्त करै हैं तथा जिनेंद्रका लिंग अर तपश्चरण करि धनकी बांछा करै हैं तथा जिनलिंग धारण करि ऋद्धिका गर्वकरि युक्त हैं हम जगतमैं पूज्य हैं तथा अपना यश जगतमैं विख्यात हैं ताका गर्वकरि युक्त हैं तथा अपने साताका उदयजनित सुखकरि गर्वकूं धारै हैं तथा जिनलिंग धारण करि आहारकी बांछा धारै हैं तथा अशुभका उदयको भय धारैं हैं तथा मैथुनकी बांछा करै हैं परिग्रह शिष्यादिककी बांछा करै हैं तथा जिनलिंग धारि परके विवाहमै प्रवृत्ति करैं हैं ते कुतपके प्रभावतैं कुमानुषनिमैं उपजैं है। बहुरि जे जिनलिंग धारणकरि सम्यग्दर्शनकी विराधना करैं हैं जे जिनलिंगधारणकरके हू अपने दोषनिकी आलोचना गुरुनिसूं नाहीं करै हैं तथा जिनलिंग धारणकरके हू अन्यके दोष कहै हैं बहुरि जे मिथ्यादृष्टि पंचाग्नितपकरि कायक्लेश करैं हैं तथा जे मौन छांडि भोजन करैं हैं तथा जे दुष्ट भावनिकरि दान देहैं तथा जे असूचिपणाकरि दान देवै है तथा सूतकादि सहित होय दान देवैं हैं तथा रजस्वला स्त्रीका संसर्ग करि दान देवै हैं तथा जातिसंकरादिकनिकरि दान देवैं हैं तथा कुपात्रनिमैं दान करैं हैं ते कुमानुषनिमैं उपजैं हैं ते कुमानुष हू समस्त क्लेशरहित एक पल्यपर्यंत स्त्री पुरुषका युगल साथि ही उपजै अर मरैं हैं। दानके तपके प्रभावतैं सदा काल सुखमैं मग्न काल पूर्ण करि मंद कषायके प्रभावतैं भवनत्रिकनिमैं जाय उपजैं हैं। बहुरि केई कुपात्रनिकूं दान देय बहुत भोगनि सहित म्लेच्छ उपजैं हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतैं नीचकुलनिमें बहुत धनके धनी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामैं आसक्त निरोग शरीर होय हैं। केई कुपात्रदानके प्रभावतैं राजानिके दासी दास हस्ती घोडा श्वान बानर इत्यादिकनिमैं सुंदर भोजन वस्त्र आभरणादिक प्रचुर भोग उपभोग सामग्री भोगि मरणकरि दुर्गति चले जांय हैं जातैं कुपात्र हू अनेकजातिके अर दातारके भाव हू अनेक जातिके हैं अर

दानकी सामग्री हू अनेक जातिकी हैं तातैं दानका फल हू अनेकजातिका है। बहुरि दयादान ऐसा जानना जो बुभुक्षित होय दरिद्री होय अंधा होय लूला होय पांगला होय रोगी होय अशक्त होय वृद्ध होय बालक होय विधवा होय वावरा होय अनाथ होय विदेशी होय अपने यूथतैं संघतैं बिछुडि आया होय तथा बंदीगृहमैं रुक्या होय बंध्या होय तथा दुष्टनिका आतापतैं भागि आया हो लुट आया होय जाका कुटुंब मार्या गया होय भयवान होय ऐसा पुरुष हो हू वा स्त्री हो हू तथा बालक होहू वा कन्या तथा तिर्यंच होहू इनकौं क्षुधा तृषा शीत उष्ण रोग तथा वियोगादिकनिकरि दुःखित जानि करुणाभावतैं भोजन-वस्त्रादिक दान देना सो करुणादानमैं हू उनका जाति कुल आचरणादिक जानि यथायोग्य दान करना। जो अभक्षादि भक्षण करनेवाले हैं उनकूं तो भोजन अन्न औषधि मात्र ही देना अर निंद्य आचरणवाले नाहीं इनका दुःख दूर करनेयोग्य रुपया पैसा हू देना स्थान हू देना ये दुःखित उपदेश योग्य हू हैं इनकूं भोजन वस्त्र औषधि स्थान उपदेश हू देना तथा जे स्थान देनेयोग्य नाहीं इनको दुःखी देखि रोटी अन्न-मात्र देय चलावना वैयावृत्य करनेयोग्य तिनका वैयावृत्य करना ज्ञानदान हू देना जातैं करुणादन पात्रकुपात्र अपात्रका विचाररहित केवल दया मात्र ही करि देना है तो हू देश काल परिणाम जाति कुलादि विचार यत्नसहित दान करो। मांसभक्षी मद्यपायीकूं रुपया पैसा नाहीं देना बहुत दुःखीमैं करुणा उपजै तो अन्नमात्र देना याका फल यशकीर्तनादिकी बांछा नाहीं करना। बहुरि दानके देनेयोग्य नाहीं ते अपात्र हैं। अब अपात्रनिके लक्षण कहैं हैं—जे दयारहित होय हिंसाके आरंभमैं आरक्त होय महालोभी परिग्रह वधाया ही चाहैं धनका धनी होय करकैं हू याचना करवो करै यज्ञादिकके करनेवाले वेदोक्त हिंसाधर्ममैं रक्त रहै चंडी भवानीके सेवक होंय बकरा भैंसानिका घात करावनेवाले तथा कुदानके लेने-वाले मद्यपीवनेमैं भंग पान करनेमैं वेश्यासेवनेमैं लीन जिनधर्मके द्रोही शिकारादि करनेमैं धर्म कहने-वाले परधन परकी स्त्रीके रागी अपनी प्रशंसा करनेवाले व्रती नाम कहाय व्रतभंग करि पंच पापनिमैं

आसक्तता युक्त बहुतआरंभी बहुपरिग्रही तीव्रकषायी असत्यमैं लीन खोटे शास्त्रके उपदेश देनेवाले तथा जिनशास्त्रमैं खोटे मिलाय मिथ्या प्ररूपणा करनेवाले व्यसनी पाखंडी अभक्षभक्षक अर व्रतशील संयम तपतैं पराङ्मुख विषयनिके लोलुपी जिव्हाइंद्रियके वशीभूत भए मिष्ट भोजनके लंपटी ये सब अपात्र हैं जातैं इनमैं पात्रपना तो रत्नत्रय धर्मके अभावतैं नाहीं अर कुधर्म जे मिथ्याधर्म सेवनेवाले भी परके उपकारी दयावानपना क्षमा संतोष सत्यशील त्यागादिक पूजा जाप्य नाम स्मरणादिक मिथ्याधर्म भी जिनमैं पाइये नाहीं तातैं कुपात्र हू नाहीं अर गरीब दीन दरिद्री दुःखित हू नाहीं तातैं दयादानके पात्र हू नाहीं। केवल लोभी मदोन्मत्त विषयांका लंपटी है धर्मके इच्छुक हू नाहीं तथा केई जैनी नाम करके हू जिनधर्मका भेष हू केवल जिह्वा इंद्रियका विषयरूप नाना प्रकारके भोजन जीमनेकूं धाऱ्या है तथा धन पैदा करनेकूं भेष धाऱ्या है तथा अभिमानी होय अपनी पूजा उच्चता धनका लाभके इच्छुक होय तप व्रत पठन वाचनादि अंगीकार करै हैं ते अपात्र हैं दानके योग्य नाहीं इनको दान देना कैसाक है पाषाणमैं बीज बोवने समान है तथा कटुक तूंबीमैं दुग्ध धारण तुल्य है तथा गहनवनमैं चौरके हस्तमैं अपना धन सोंपने तुल्य है तथा अपने जीवनेके अर्थि विषभक्षण समान है तथा रोग दूरि करनेकूं अपथ्यभोजन समान है तथा सर्पकूं दुग्धपान करावने समान दुःखकी उत्पत्तिका बीज है तातैं अंधकूपमैं अपना धनकूं पटाकि देना परन्तु अपात्रकूं दान मत करो अपात्रका दान है सो अपने घरमैं विषके वृक्षकूं पुष्ट करना है अपात्रका संगम दावाग्निवत् दूरहीतैं त्याग करो। जैसैं विषवृक्षकी वासना ही मूर्छित कर दे है तैसैं अपात्रकी वासना हू आत्मज्ञानतैं भ्रष्ट करै है ऐसा दानका वर्णनमैं पात्र कुपात्र अपात्रका वर्णन किया अब च्यार प्रकार सुपात्रदान देय जे प्रसिद्ध हुआ तिनके आगमपाठतैं नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

श्रीषेणवृषभसेने कोण्डेशः सूकरश्च दृष्टान्ताः। वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥ ११८ ॥

अर्थ—चार प्रकारके वैयावृत्यका चार दृष्टांत जानने योग्य हैं आहारदानका फलतैं श्रीषेण राजा

प्रसिद्ध हुआ और औषधिदानका फलतैं वृषभसेना नाम श्रेष्ठीकी पुत्री प्रसिद्ध भई अर शास्त्रदानके फलतैं कोंडेश नामा ग्वाल शास्त्रदान देय अन्यभवमै केवली भयो अर वस्तिकाके दानतैं सूअर मरि स्वर्गलोकमें महर्द्धिक देव हुवो दानका अचिंत्य प्रभाव है इस लोकमै हू दानी समस्तमैं उच्च होय जाय है। अब यहां ऐसा और हू जानना जो दान देय दानका फल विषयभोग मेरे होयगा ऐसैं विषयनिकी वांछा कदाचित मत करो। जे दानका फलतैं इंद्रियानिके भोग चाहै हैं ते चिंतामाणि देय काचखंडकूं ग्रहण करै हैं तथा अमृत छांडि विष पीवे हैं तथा सूत्रके अर्थि माणिमयहारकूं तोडै हैं तथा इंधनके अर्थि कल्पवृक्षकूं छेदै हैं तथा लोहके अर्थि नावकूं तोडै हैं तथा अपने कंठके अतिभारी पाषाण बांधि अगाध जलमैं प्रवेश करै हैं कैसेक हैं इंद्रियानिके विषय अग्निकी ज्यों दाह उपजावै हैं कालकूट जहरकी ज्यूं अचेत करै हैं मारै हैं पंचपापानिमैं प्रवर्तावनेवाले हैं तृष्णा उपजावनेवाले हैं नरकमैं प्राप्त करनेवाले हैं महा वैरके कारण हैं ज्वररोगकी ज्यों संताप मूर्छा प्रलाप दुःख भय शोक भ्रम उपजावनेवाले हैं विषयनिका चिंतवन ही जीवकूं अचेत करै है सेवनाकिये तो अनेक भवनिमैं मारै ही यातैं निर्वांछक होय दानधर्ममैं प्रवर्तन करो। आपकूं लाभांतरायका क्षयोपशमतैं जो प्राप्त भया तीमे संतोष करि आगामी वांछा मत करो पावभर धान हू मिलै तामैं भी दानका विभाग करो दान निमित्त धनकी वांछा मत करो वांछाका अभाव सो ही परम दान है सो ही परमतप है ऐसैं वैयावृत्यकूं ही अतिथिसंविभाग व्रत कहिये है। ऐसैं दानका वर्णन तो किया। अब वैयावृत्यहीमैं जिनेंद्रका पूजन है यातैं जिनेंद्रका पूजनका उपदेश करनेकूं सूत्र कहै हैं—

देवाधिदेवचरणे परिचरणं सर्वदुःखनिर्हरणं। कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यं ॥ ११९ ॥

अर्थ—देव जे इंद्रादिक तिनका अधिदेव कहिये स्वामी जो अरहंतदेव ताका चरणनिके समीप जो परिचरण कहिये पूजन सो आदरतैं नित्य ही करै। कैसाक है पूजन समस्त दुःखनिका नाश करने वाला है वांछितकूं परिपूर्ण करनेवाला है अर कामकूं दग्ध करनेवाला है भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही जि-

नेंद्रका पूजन समान सर्वोत्तम कार्य अन्य नाहीं है तातैं प्रथम ही नित्य जिनेंद्रका पूजन करना इहां ऐसा संबंध जानना जो किंचितमात्र अशुभकर्मका क्षयोपशमतैं मनुष्य तिर्यंचनिका ज्यों सप्तधातुमय देह जिनकै नाहीं तथा आहारादिके आधीन क्षुधा तृषादिक वेदनाका मेटना नाहीं स्वयमेव कण्ठमैंतें अमृत झरै है तिसकरि क्षुधा तृषा वेदना करि जिनके बाधा नाहीं अर जरा आवै नाहीं रोग आवै नाहीं इत्यादिक कर्मकृत किंचित बाधाके अभावतैं च्यारगतिमैं देवनिको उत्तम कहे हैं अर जिनके ज्ञानावरण वीर्यांतरायादिक कर्मका अधिक क्षयोपशम होनेतैं अन्य देवनिमैं नाहीं पाइये ऐसैं ज्ञान वीर्यादिक शक्तिकी अधिकतातैं देवनिके स्वामी इंद्र भये ये इंद्र समस्त असंख्यात देवनकरि वंद्य हैं अर जो समस्त ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय आत्माकी शक्तिके घातक समस्त कर्मका नाश करि जिनेंद्र भए ते समस्त इंद्रादिककरि वंदनीक भए ते देवाधिदेव हैं देवाधिदेवका चरणनिका पूजन है सो समस्त दुःखका नाश करनेवाला है अर इंद्रियनिके विषयनिकी कामनाका नाश कर मोक्ष होनेरूप सुखकी कामनाकूं पूर्ण करनेवाला है तातैं अन्य आराधना छांडि जिनेंद्रका आराधन करो। बहुत काल संसारी रागी द्वेषी मोही जीवनिकी आराधना सेवन करि घोर कर्मका बंधकरि संसारमैं परिभ्रमण किया वीतराग सर्वज्ञकूं आराधन करता तो कर्मके बंधका नाश करि स्वाधीन मोक्षरूप आत्माकूं प्राप्त होता तातैं संसारके समस्त दुःखका नाश करनेवाला जिनेंद्रका पूजन ही करो। इहां कोऊ आशंका करै भगवान अरहंत तो आयु पूर्णकरि लोकके अग्रभागमें मोक्षस्थानमैं हैं धातुपाषाणके स्थापना रूप प्रतिबिंबनिमैं आवै नाहीं तथा अपना पूजन स्तवन चाहै नाहीं अपना अनंतज्ञान अनंत सुखमैं लीन तिष्ठै हैं अपना पूजन स्तवन तो अभिमान कषाय करि संतापित अपनी बडाईका इच्छक अपना स्तवन करि संतुष्ट होय ऐसा संसारी रागद्वेषसहित होय सो चाहै भगवान परमेष्ठी वीतराग अनंतचतुष्टयरूपमैं लीन तिनके पूजाकी चाह नाहीं धातुपाषाणका प्रतिबिंबमैं आवै नाहीं किसीका उपकार करै नाहीं किसीका अपकार हू करै नाहीं पूजन

स्तवनादि करै तासूं प्रीत करै नाहीं निंदा करै तामैं द्वेष करै नाहीं फिर किस प्रयोजनके अर्थि पूजन स्तवन करिये है ताकूं उत्तर कहै हैं जो भगवान वीतराग तो पूजन स्तवन चाहै नाहीं परन्तु गृहस्थका परिणाम शुद्ध आत्मस्वरूपकी भावनामैं तो ठहरै नाहीं साम्यभावरूप रहै नाहीं निरालंबचित्त ठहरै नाहीं तदि परमात्मभावनाका अवलंबन करि वीतराग स्वरूपका ध्यानके अर्थि शुद्ध आत्माका अवलंबनके निमित्त विषय कषाय आरम्भका अवलम्बन छांडि साक्षात् परमागमस्वरूपका धातु पाषाणमैं प्रतिबिंबनिमैं संकल्पकरि परमात्माका ध्यान स्तवन पूजन करै है तिस अवसरमैं विषयकषायादिक संकल्पके अभावतैं दुर्ध्यानके छूटनेतैं अपने परिणामकी विशुद्धताका प्रभावतैं अशुभकर्मनिका रस सूकि जाय अशुभकर्मनिकी स्थिति घटि जाय अनुभाग घटि जाय सो ही पापकर्मका अभाव है अर परिणामनिकी विशुद्धताके प्रभावकरि शुभ प्रकृतिनिमैं रस बधि जाय है तिन शुभ आयु विना समस्त कर्मनिकी प्रकृतिकी स्थिति घटि जाय है याहीतैं वीतरागका स्तवन पूजन ध्यानके प्रभावतैं पापकर्मका नाश होय है सातिशय पुण्यकर्मका उपार्जन होय है और हू निश्चय करो पुण्यपापका बन्धका कारण तो अपना भाव ही है बाह्य जैसा अवलंबन मिलै तैसा अपना भाव होय है यद्यपि भगवान अरहंत धातुपाषाणके प्रतिबिंबमैं आवै नाहीं अर भगवान वीतराग किसीका उपकार अपकार करै नाहीं तथा वीतरागका ध्यान पूजन नाम अपने शुभ परिणाम करनेकूं रागद्वेषके नाश करनेकूं बाह्य कारण हैं तातैं परम उपकार जीवका होय है जैसैं काष्ठपाषाण चित्रामके स्त्रीनिके रूप रागकूं कारण है तथा अचेतन सुवर्ण मणि माणिक्य रूपी महल वन बाग ग्राम पाषाण कर्दम स्मशानादिका देखना श्रवण करना राग द्वेष उपजावै है तथा शुभ अशुभ वचन राग रुदन सुगंध दुर्गंध ये समस्त अचेतन पुद्गल द्रव्य हैं इनका श्रवण अवलोकन चिंतवन अनुभव करि रागद्वेष होय है तैसैं जिनेंद्रकी परमशांतमुद्रा ज्ञानीनिके वीतरागता होनेकूं सहकारी कारण है प्रेरक नाहीं अर भव्य जीवनिके वीतरागतातैं अन्य कुछ चाहना नाहीं है अर जिनेंद्रके चरणनिके पूजनेमैं जो जल

चंदनादि अष्ट द्रव्य चढाइये है सो कुछ भगवान भक्षण करै वा पूजन विना अपूज्य रहैंगे वा वासना लेवै हैं ऐसा अभिप्रायतैं चढावना नाहीं है भगवानके दर्शनका अति आनन्दतैं जलचंदनादिकरूप अर्घ उतारण करना है। जैसैं राजानिकी भेट करना नजर करना उतारना निछरावलि करनी अक्षतपुष्पादिक क्षेपना मोतीनिके थाल बार (फेर) के उतारन करै हैं तथा सुवर्णकी महोर रुपयांका थाल उतार करि लुटावै हैं रत्ननिके थाल भर निछरावलि करि क्षेपै हैं पुष्प अक्षतादिक उतारन करै हैं ते राजानिकी भक्ति अर आनंद प्रकट करना है राजानिकूं दान नाहीं राजानिके अर्थि नाहीं है निछरावलि राजानिके निकट करी हुई अर्थी जन याचक जन ग्रहण करै हैं तैसैं भगवान अरहंतानिके अग्रभागविषै अष्टद्रव्यनिका अर्घ चढावना जानना। अब पूजनके योग्य नव देवता हैं। उक्तं च गोमट्टसारे गाथा—

अरहंतसिद्धसाहुतिदयं जिणधम्मवयणपडिमाहू। जिणणिलया इदिराए णवदेवा दिंतु मे वोहिं॥ १॥

अर्थ—अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनवचन, जिनप्रतिमा, जिनमंदिर इसप्रकार ये नव देव हैं ते मोकूं रतनत्रयकी पूर्णता देवो सो जहां अरहंतानिका प्रतिबिंब है तहां नव रूप गर्भित जानना जातैं आचार्य उपाध्याय साधु तो अरहंतकी पूर्व अवस्था है अर सिद्ध है सो पूर्वै अरहंत होय करके ही सिद्ध भया है अरहंतानिकी वाणी सो जिनवचन है अर वाणीकरि प्रकाश किया अर्थ सो जिनधर्म है अर अरहंतका स्वरूप जहां तिष्ठै सो जिनालय है ऐसे नवदेवतारूप भगवान अरहंतके प्रतिबिंबका पूजन नित्य ही करना योग्य है अरिहंतके प्रतिबिंब अधोलोकमैं भवनवासीनिके चमर वैरोचनादिक इंद्र अर असंख्यात भवनवासी देवनिकरि पूजिये है अर मध्यलोकमैं चक्रवर्ती नारायण बलभद्रादिक अनेक धर्मात्मानि कर पूजिये है अर व्यंतरलोकमैं व्यंतरेंद्रादिक देवनि करि पूजिये है अर ज्योतिर्लोकमैं चंद्रसूर्यादिक असंख्यात ज्योतिषी देवनि करि पूजिये है स्वर्गलोकमैं सौधर्म इंद्रादिक असंख्यात कल्पवासी देवनिकरि पूजिये है ऐसैं त्रैलोक्यके भव्यनि करि वंद्य पूज्य अरहंतका तदाकार प्रतिबिंब है सो सदाकाल

भव्यजीवनिकूं पूजना योग्य है। अब पूजा दोय प्रकार है एक द्रव्यपूजा एक भावपूजा तहां जो अरहंत प्रतिबिंबका वचनद्वारै स्तवन करना नमस्कार करना तीनप्रदक्षिणा देना अंजुलि मस्तक चढावना जल चंदनादि अष्ट द्रव्य चढावना सो द्रव्यपूजा है अर अरहंतके गुणनिमैं एकाग्रचित होय अन्य समस्त विकल्पजाल छांडि गुणनिमैं अनुरागी होना तथा अरहंतप्रातिबिंबका ध्यान करना सो भावपूजा है अथवा अरहंतप्रतिबिंबका पूजनके अर्थि शुद्धभूमिमैं प्रमाणिकजलतैं स्नान करि उज्जल वस्त्र पहिर महाविनयसंयुक्त अंजुलि जोडि भक्तिसहित उज्ज्वल निर्दोष जलकरि अरहंतके प्रतिबिंबका अभिषेक करना सो पूजन है यद्यपि भगवानके अभिषेकका प्रयोजन नाहीं तथापि पूजकके ऐसा भक्तिरूप उत्साहका भाव है जो अरहंतकूं साक्षात् स्पर्श ही करूं हूं अभिषेक ही करूं हूं ऐसी भक्तिकी महिमा है। बहुरि उत्तम जलकूं झारीमैं धारण करि अरहंतप्रतिबिंबका अग्रभागविषै ऐसा ध्यान करै जो हे जन्म जरा मरणकूं जीतने वाले जिनेंद्र मैं जन्मजरामरणके नाशके अर्थि जलकी तीनधार आपका चरणारबिन्दांकी अग्रभूमिविषै क्षेपण करूं हूं हे जिनेंद्र हे जन्मजरामरणरहित आपका चरणांका शरण ही जन्मजरामरणरहित होनेकूं कारण है बहुरि हे संसारपरिभ्रमणका आतापरहित मैं अपने संसारपरिभ्रमणरूप आताप नष्ट करनेकूं चंदन कर्पूरादिक द्रव्यकूं आपका चरणनिका अग्रभागविषै चढाऊं हूं। हे अविनाशी पदके धारक जिनेंद्र मैं हू अक्षयपदकी प्राप्तिके अर्थि अक्षतनिकूं आपका अग्रस्थानमैं क्षेपण करूं हूं। हे कामबाणके विध्वंसक जिनेंद्र मैं हू कामका विध्वंशके अर्थि पुष्पनिकूं आपका अग्रस्थानमै क्षेपण करूं। हे क्षुधारोगरहित जिनेंद्र मैं हू क्षुधारोगका नाशके अर्थि नैवेद्यकूं आपका अग्रस्थानविषै स्थापन करूं हूं। हे मोहअंधकाररहित जिनेंद्र मै हू मोहअंधकार दूरि करनेकूं आपका अग्रस्थानविषै दीपक स्थापन करूं हूं। हे अष्टकर्मके दाहक जिनेंद्र मैं हू अष्टकर्मके नाशकेअर्थि आपका अग्रभागस्थानविषै धूप स्थापन करूं हूं। हे मोक्षस्वरूप जिनेंद्र मैं हू मोक्षरूपफलके अर्थि आपका अग्रस्थानविषै फलनिकूं स्थापन करूं हूं ऐसैं अपने देश कालकी योग्यता प्रमाण

एकद्रव्यतैं हू पूजन है दोयद्रव्यतैं तथा तीन च्यार पांच छह सात अष्टद्रव्यनितैं हू पूजन करि भावानिकूं परमेष्ठीके ध्यानमैं युक्त करै है स्तवन पढै है महा पुण्य उपार्जन करै है पापकी निर्जरा करै है । इहां ऐसा विशेष और जानना जो जिनेंद्रके पूजक समस्त च्यारप्रकारके देव तो कल्पवृक्षनितैं उपजे गंध पुष्प फलादि सामग्री करि पूजन करै हैं अर सौधर्म इंद्रादिक सम्यग्दृष्टि देव हैं ते तो जिनेंद्रकी भक्ति पूजन स्तवन करके ही अपनी देवपर्यायकूं सफल मानैं अर मनुष्यनिमैं चक्रवर्ती नारायण बलभद्रादिक राजेंद्र हैं ते मोतीनिके अक्षत रत्ननिके पुष्प फल दीपकादिक तथा अमृतपिंडादिकानिकरि जिनेंद्रका पूजन स्तवन नृत्य गानादिककरि महापुन्य उपार्जन करै हैं। अर अन्य मनुष्यनिमें हू जिनके पुण्यके उदयतैं सम्यक् उपदेशके ग्रहणतैं जिनेंद्रके आराधनमैं भक्ति उत्पन्न होय ते समस्त जातिकुलके धारक यथायोग्य पूजन करैं हैं। समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अपना अपना सामर्थ्य अपना अपना ज्ञान कुल बुद्धि संपदा संगति देशकालके योग्य अनेक स्त्री पुरुष नपुंसक धनाढ्य निरधन सरोग नीरोग जिनेंद्रका आराधन करै है। केई ग्रामनिवासी हैं केई नगरनिवासी हैं केई वननिवासी हैं केई अतिछोटे ग्राममैं बसनेवाले हैं तिनमैं केई तो अतिउज्वल अष्टप्रकारसामग्री बनाय पूजनके पाठ पढिकरि पूजन करैं हैं केई कोरा सूका जव, गेहूं, चना, मक्का, बाजरा, उडद, मूग, मोठ इत्यादिक धान्यकी मूठी ल्याय जिनेंद्रकै चढावै हैं केई रोटी चढावैं हैं केई राबडी चढावैं हैं केई अपनी बाडीतैं पुष्प ल्याय चढावैं है केई नानाप्रकारके हरित फल चढावैं हैं, केई जल चढावै हैं । केई दाल भात अनेक व्यंजन चढावै हैं, केई नाना मेवा चढावैं हैं, केई मोतीनिके अक्षत माणिकनिके दीपक सुवर्ण रूपानिके तथा पंचप्रकार रत्ननिकरि जडे पुष्प फलादि चढावैं हैं केई दुग्ध केई दही केई घृत चढावैं है केई नानाप्रकारके घेवर, लाडू, पेडा, बरफी, पूडी, पूवा इत्यादिक चढावैं हैं केई बंदना मात्रही करै हैं केई स्तवन केई गीत नृत्य वादित्र ही करैं हैं, केई अस्पर्श्यशूद्रादिक मंदिरके बाह्य ही रहि मंदिरके शिखरकी तथा शिखरनिमैं जिनेंद्रके प्रतिबिंबका ही दर्शन बंदना

करैं हैं ऐसैं जैसा ज्ञान जैसी संगति तैसी सामर्थ्य जैसा धन संपदा जैसी शक्ति तिस प्रमाण देशकालके योग्य जिनेंद्रका आराधक अनेक मनुष्य हैं ते वीतरागका दर्शन स्तवन पूजन बंदना करि भावानेके अनुकूल उत्तम मध्यम जघन्य पुण्यका उपार्जन करै हैं यो जिनेंद्रका धर्म जाति कुलके आधीन नाहीं धनसंपदाके आधीन नाहीं बाह्यक्रियाके आधीन नाहीं है। अपने परिणामानिकी विशुद्धताके अनुकूल फलै है कोऊ धनाढ्य पुरुष अभिमानी होय यशका इच्छुक होय मोतीनिके अक्षय माणिकानके दीपक रत्न सुवर्णके पुष्पानिकरि पूजन करै हैं अनेक वादित्र नृत्यगान करि बडी प्रभावना करै है तो हू अल्प पुण्य उपार्जन करै वा अल्पहू नाहीं करै केवल कर्मका बंध ही करै है कषायनिके अनुकूल बंध होय है। केई अपने भावानिकी विशुद्धतातैं अति भक्तिरूप हुवा कोऊ एक जल फलादिक करि वा अन्नमात्र करि वा स्तवनमात्रकरि महापुण्य उपार्जन करै है तथा अनेक भवनिके संचय किये पापकर्मकी निर्जरा करै हैं धनकरि पुण्य मोल नाहीं आवै है। जे निर्वांछक हैं मंदकषायी ख्याति लाभ पूजादिककूं नाहीं वांछा करता केवल परमेष्ठीका गुणांमैं अनुरागी हैं तिनके जिनपूजन अतिशयरूप फलकूं फलै है। अब इहां जिन पूजन सचित्त द्रव्यनितैं हू अर अचित्तद्रव्यनितैं हू आगममैं कह्या है जे सचित्तके दोषतैं भयभीत हैं यत्नाचारी तो प्रासुक जल गंध अक्षतकूं चंदन कुंकुमादिकतैं लिप्त करि सुगंध रंगीनमैं पुष्पानिका संकल्पकरि पुष्पानितैं पूजैं हैं तथा आगममैं कहे सुवर्णके पुष्प वा रूपाके पुष्प तथा रत्नजटित सुवर्णके पुष्प तथा लवंगादिक अनेक मनोहर पुष्पानि करि पूजन करै हैं अरु प्रासुक हो बहुआरंभादिकरहित प्रमाणीक नैवेद्य करि पूजन करै है बहुरि रत्ननिके दीपक वा सुवर्णरूपामय दीपकनिकरि पूजन करै है तथा सचिक्कणद्रव्यनिके केसरके रंगादिकतैं दीपका संकल्पकरि पूजन करै हैं तथा चंदनअगरादिककूं चढावै हैं तथा बादाम जायफल पूंगीफलादिक अबीध शुद्ध प्रासुक फलनितैं पूजन करै हैं ऐसैं तो अचित्त द्रव्यनिकरि पूजन करै हैं।

बहुरि जे सचित्त द्रव्यनितैं पूजन करै हैं ते जल गंध अक्षतादि उज्जल द्रव्यनिकरि पूजन करै हैं अर चमेली चंपक कमल सोनजाई इत्यादिक सचित्त पुष्पनितैं पूजन करै हैं घृतका दीपक तथा कपूरादिक दीपकनिकरि आरती उतारै हैं अर सचित्त आम्र केला दाडमादिक फल करि पूजन करै हैं धूपायनिमैं धूपदहन करै हैं ऐसैं सचित्त द्रव्यनिकरि हू पूजन करिये हैं दोऊप्रकार आगमकी आज्ञा प्रमाण सनातनमार्ग है अपने भावनिके आधीन पुण्यबंधके कारण हैं। यहां ऐसा विशेष जानना जो इस दुःखमकालमैं विकलत्रय जीवनिकी उत्पत्ति बहुत है अर पुष्पनिमैं बेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री त्रसजीव प्रगट नेत्रनिके गोचर दौडते देखिये है पुष्पनिकूं पात्रमैं झडकाय देखिये तो हजारां जीव फिरते दौडते नजर आवै हैं अर पुष्पनिमैं त्रसजीव तो बहुत ही हैं अर बादर निगोदजीव अनंत हैं अर चैत्रमासमैं तथा वर्षाऋतुमैं त्रसजीव बहुत उपजैं हैं तातैं ज्ञानी धर्मबुद्धि हैं ते तो समस्त कार्य यत्नाचारतैं करो। जैसे जीवनिकी विराधना नाहीं होय तैसैं करो। बहुरि फूलनिके धोवनेमें दौडते त्रसजीवनिकी बडी हिंसा है यातैं हिंसा तो बहुत है अर परिणामनिकी विशुद्धता अल्प है यातैं पक्षपात छांडि जिनेंद्रका प्ररूप्या अहिंसाधर्म ग्रहण करि जेता कार्य करो तेता यत्नाचाररूप जीवविराधना टालि करो इस कलिकालमैं भगवानका प्ररूप्या नयविभाग तो समझै नाहीं अर शास्त्रनिमैं प्ररूपण किया तिस कथनीकूं नयविभागतैं जानै नाहीं अर अपनी कल्पनाहीतैं पक्ष ग्रहण करि यथेष्ट प्रवर्तैं है। बहुरि केतेक पक्षपाती भादवामै दिवसमै तो पूजन नाहीं करै रात्रिमैं पूजन करै हैं बहुत दीपक जोवै है नैवेद्य चढावै है बहुत पुष्पनिका पुंज चढावै है तिनमै लाखां मच्छर डांस मक्षिकाका छत्ता पडै है दीपकके पात्रनिमैं अपरिमाण मच्छर डांस मक्षिका अर हरे पीत श्याम लालरंगके कोट्यां त्रसजीव अनेकरंगके छोटी अवगाहनाके धारक सामग्री करनेमै चढावनेके थालनिमै वस्त्रनिमै दीपकनिके निमित्त दूर दूरते आय पडि पडि मरैं हैं प्रत्यक्ष देखै है अपने मुखमैं नासिकामै नेत्रनिमै कर्णनिमै धसै है उडावै हैं मारै हैं तो हू अपनीपक्ष छांडै नाहीं दिवस

छांडि रात्रिमें ही पूजन करे है। रात्रिमें तो आरम्भ छांडि यत्नाचारसहित रहनेकी आज्ञा है धर्मका स्वरूप तो वाह्य जीवदया अर अंतरंगमें रागद्वेषमोहका विजयरूप है। जहां जीवहिंसा तहां धर्म नाहीं अर जहां अभिमानके वश होय एकांतपक्षका ग्रहण करि अपना पक्ष पुष्ट करनेकूं हिंसाका भय नाहीं करै हैं तहां धर्म नाहीं बहुरि केतेक एकांती मंडल मांडि आठदिन दशदिन राखैं हैं। तिन सामग्रीनिमैं प्रत्यक्ष नेत्रनिके गोचर लट कीडा विचरै हैं। फलादिक गलि चलितरस होय हैं। तथा नैवेद्यादिकनिकी गंधतैं कीडा कीडीनिके नाला खुल जाय हैं। प्रभावनाके अर्थि अनेक मनुष्य आवैं तिन करि खूंदि मरि जाय हैं ऐसें प्रत्यक्ष देखतै हू अपनी पक्षका अभिमानकी अंधेरी करि नाहीं देखै हैं। रात्रीकी बासी सामग्री रखना महान् हिंसाका कारण है। बहुरि अनेक पुराणनिमैं अर अनेक श्रावकाचारनिमैं अरहंतकी प्रतिमाका अष्ट द्रव्यनिकरि पूजन करनेका ही उपदेश है। अर कहूं अरहंत प्रतिबिंबका स्तवनवंदनाका कहूं अभिषेकका वर्णन है। अर प्रतिबिंब तदाकार होते किसी ग्रंथमैं हू स्थापनाका वर्णन नाहीं अर अब इस कलिकालमैं प्रतिमा विराजमान होते हू स्थापनाही कूं प्रधान कहै हैं। इस जयपुरमैं संवत् १८-५० अठारहसैपचासका सालमैं अपना मनकी कल्पनातैं कोई नव स्थापनाकी प्रवृत्ति रची है तिनमैं अरहंत १ सिद्ध २ आचार्य ३ उपाध्याय ४ साधु ५ जिनवाणी ६ दशलाक्षण धर्म ७ षोडश कारण ८ रत्नत्रय ९ ऐसें नवप्रकार स्थापना करै हैं अर ऐसैं कहै हैं जो सप्तव्यसनका त्याग अन्यायका त्याग अभक्षका त्याग जाकै होय सो स्थापनासंयुक्त पूजन करै अन्याय अभक्षका त्याग जाकै नाहीं होय सो स्थापना मत करो। स्थापनासहित पूजन तो सप्तव्यसनका अन्याय अभक्षका त्याग करनेवाला ही करै जाकै त्याग नाहीं सो स्थापना कऱ्यां विना पूजन करलो स्थापना नाहीं करना। अर स्त्रीनिकूं रंगीन कपडा पहरि स्थापनाविना पूजन करना कहै हैं। ऐसें कहनेवालेनिकै साक्षात् जिनेंद्रका प्रतिबिंब मानना नाहीं रह्या अर तदाकार चांवलाकी स्थापनाहीका विनय करना रह्या प्रतिबिंबका विनय करना मुख्य नाहीं रह्या

प्रतिमाका पूजन वंदना स्तवन तो चाहै सो ही करो अर पीततंदुलांमें स्थापना करना तो उत्तम होय व्यसन अभक्षादिक पापरहित होइ तिसहीके योग्य है। ऐसें पीतअक्षतानिमें स्थापना सो तो मुख्य विनय रह्या अर प्रतिमामें पूजनादिक गौण रह्या अर पक्षपाती कहै हैं जिस तीर्थंकरकी प्रतिमा होय तिनके आगें तिनहीकी पूजा स्तुति करनी अन्य तीर्थंकरकी स्तुति पूजा नाहीं करनी अर अन्य तीर्थंकरकी पूजा करनी होय तो स्थापना तंदुलादिकतैं करके अन्यका पूजन स्तवन करना ऐसा पक्ष करै हैं। तिनकूं इस प्रकार तो विचार किया चाहिये जे समंतभद्रस्वामी शिवकोटिराजाके प्रत्यक्ष देखते स्वयंभू स्तवन कियो तद चंद्रप्रभ स्वामीकी प्रतिमा प्रगट भई तब चंद्रप्रभके सन्मुख अन्य षोडश तीर्थंकरनिकी स्तवन कैसैं किया? बहुरि एक प्रतिमाके निकट एकहीका स्तवन पढना योग्य होय तो स्वयंभूस्तोत्रका पढना ही नाहीं संभवै तथा आदिजिनेन्द्रकी प्रतिमाविना भक्तामरस्तोत्र पढना नाहीं बनैगा। पार्श्वजिनकी प्रतिमा विना कल्याणमन्दिर पढना नाहीं बनैगा पंचपरमेष्ठीकी प्रतिमा विना वा स्थापना विना पंच नमस्कार कैसैं पढ्या जायगा कायोत्सर्ग जाप्यादिक नाहीं बनैगा वा पंचपरमेष्ठीकी प्रतिमाविना नाम लेना जाप्य करना सामायिक करना नाहीं संभवैगा तथा अन्यदेशमें नाहीं जान्या मन्दिरमें पहली प्रतिमाका निश्चय विना स्तुति पढना नाहीं संभवैगा तथा रात्रिका अवसर होय छोटी अवगाहनाकी प्रतिमा होय तहां पहली चिह्नका निश्चय करै पाछैं स्तवनमें प्रवर्त्या जायगा तथा जिस मंदिरमैं अनेक प्रतिमा हौंय तादि जाको स्तवन करै तिसके सन्मुख दृष्टिसमस्या हस्त जोर वीनती करना संभवै अन्य प्रतिमाके सन्मुख नाहीं संभवै बहुरि जिसमन्दिरमें अनेक प्रतिबिंब होय तहां जो एकका स्तवन वंदना किया तादि दूजेका निरादर भया। दूजेका स्तवन किया तादि तीजे चौथे पंचमादिकका भावनिमें निरादर भया तादि भक्ति नष्ट भई अर जो कहोगे बहुत प्रतिमा होय तहां चौवीसका स्तवन करैंगे तो तहां जो बीस ही तथा बाईस तेईस ही होंय तो पहली एकके चिह्नका आछीतरह निर्णयकरि तितनाहीका स्तवन किया जायगा

अन्य तीर्थंकरनिका स्तवन निकास्या जायगा अर जहां छोटे स्वरूप होंय दूरि विराजमान होंय तथा दृष्टि मंद होय तहां पांच आदम्याने पूछि स्तवन वंदना करना बनैगा ऐसें एकांती मनोक्त कल्पना करनेवालेके अनेक दोष आवैं हैं ।

बहुरि जो स्थापनाके पक्षपाती स्थापनाविना प्रतिमाका पूजन नाहीं करैं तो स्तवन वंदना करनेकी योग्यता हू प्रतिमाके नाहीं रही । बहुरि जो पीततंदुलनिकी अतदाकार स्थापना ही पूज्य है तो तिन पक्षिपातीनके धातुपाषाणका तदाकार प्रतिबिंब स्थापन करना निरर्थक है तथा अकृत्रिम चैत्यालयके प्रतिबिंब अनादिनिधन स्थापन हैं तिनमैं हू पूज्यपना नाहीं रह्या । बहुरि एकप्रतिमाके आगें एकका पूजन होय अन्य तेईसका पूजन करै सो पीतअक्षतनिकी स्थापन करकै करै तदि तेईसप्रतिमाका संकल्प पीतअक्षतनिमैं भया तदि जयमाल स्तवन पूजनमैं अपनी दृष्टि पीत अक्षतनिमैं ही रखनी । एक प्रतिमामैं चौईसका भाव अयोग्य ठहरै तेईस प्रतिमास्थापनके पुष्प रहैं । जो पूजन ही स्थापना विना नाहीं तदि घरमै वनमैं विदेशमैं अरहंतनिका स्तवन बंदना हू नाहीं संभवै एकांती आगमज्ञानरहित पक्षपाती हैं तिनका कहनेका ठिकाना नाहीं पापका भय नाहीं । बहुरि पूजन चौईसका करै शांतिमैं सोलमातीर्थंकरका स्तवन करै । तातैं अनेकांतका शरण पाय आगमकी आज्ञा विना पक्षका एकांत ठीक नाहीं है । ऐसा विशेष जानना—एक तीर्थंकरकै हू निरुक्ति द्वारै चौईस नाम संभवै हैं । तथा एकहजार आठ नाम करि एक तीर्थंकरका सौधर्म इंद्र स्तवन किया है तथा एक तीर्थंकरके गुणनिके द्वारै असंख्यात अनंत नाम संभवै हैं । बहुरि अब ए चौईस नाम तथा असंख्यात नाम अनंतकालतैं अनंत तीर्थंकरनिके होगए हैं अर मातापिताके हू ए ही नाम अर शरीरकी अवगाहना अर वरणादिक ए हू अनंत कालमैं अनंत होगये । तातैं हू एक तीर्थंकरमैं एकका भी संकल्प अर चौइसका भी संकल्प संभवै है । अर इस कालमैं अन्यमतीनकी अनेक स्थापना हो गई तातैं इसकालमैं तदाकार स्थापनाहीकी मुख्यता है जो अतदाकार स्थापनाकी प्रधानता होजाय तो चाहे

जोंमें वा अन्यमतीनकी प्रतिमामें हू अरहंतकी स्थापनाका संकल्प करने लागि जाय तो मार्ग भ्रष्ट होजाय। अर प्रतिमाके चिह्न है सो इंद्र जन्माभिषेक करि मेरूसूं ल्यायो तादि ध्वजामें जो चिह्न स्थापन किया था सो ही प्रतिमाके चरणचौकीमें नामादिक व्यवहारके अर्थि हैं अर एक अरहंत परमात्मा स्वरूपकरि एकरूप है अर नामादिककरि अनेकस्वरूप है। सत्यार्थ ज्ञानस्वभाव तथा रत्नत्रयरूपकरि वीतरागभावकरि पंच परमेष्ठीरूप एक ही प्रतिमा जाननी तातैं परमागमकी आज्ञा विना वृथा विकल्प करना शंका उपजावनी ठीक नाहीं जिनसूत्रकी आज्ञा हू सो प्रमाण है। बहुरि व्यवहारमें पूजनके पंच अंगनिकी प्रवृत्ति देखिये है आह्वानन ॥ १ ॥ स्थापना ॥ २ ॥ संनिधिकरण ॥ ३ ॥ पूजन ॥ ४ ॥ विसर्जन ॥ ५ ॥ सो भावनिके जोडवास्तैं आह्वाननादिकनिमें पुष्प क्षेपण करिये है। पुष्पनिकूं प्रतिमा नाहीं जाने है। ए तो आह्वाननादिकानिका संकल्पतैं पुष्पांजलि क्षेपणा है। पूजनमें पाठ रच्या होय तो स्थापना करले नाहीं होय तो नाहीं करै। अनेकांतनिके सर्वथा पक्ष नाहीं भगवान् परमात्मा तो सिद्धलोकमें हैं एक प्रदेश भी स्थानतैं चले नाहीं परंतु तदाकार प्रतिबिंबसूं ध्यान जोडनेके अर्थि साक्षात् अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुरूपका प्रतिमामें निश्चय करि प्रतिबिंबमें ध्यान पूजन स्तवन करना। बहुरि केतेक पक्षपाती कहैं है जो भगवान्का प्रतिबिंब विना सभाके श्रावक लोकानिमें हजूरी पद तथा स्तोत्र मत पढो। भगवान् परमेष्ठीका ध्यान स्तवन तो सदाकाल परमेष्ठीकूं ध्यान गोचर करि पढना स्तवन करना योग्य है जो प्रतिमाका सन्मुख तो विना स्तुतिका हजूरी पद पढनेकूं निषेध है तिनके पंच नमस्कार पढना स्तवन पढना सामायिक बंदनाका पढना प्रतिमाका सन्मुख विना नाहीं संभवैगा। शास्त्रका व्याख्यानमें नमस्कारके श्लोक पढनेका निषेध होजायगा तातैं अज्ञानीनका कहनेतैं स्तवनतैं अध्यात्ममें कदाचित् पराङ्मुख होना योग्य नाहीं।

यहां प्रकरण पाय अकृत्रिम चैत्यालयनिका स्वरूप ध्यानकी शुद्धताके अर्थि श्रीत्रिलोकसारके

अनुसार किंचित लिखिये है। अधोलोकमैं सात करोड बहत्तर लाख भवनवासीके भवन हैं तिनमें केतेक भवन असंख्यात योजनके विस्ताररूप हैं। केतेक संख्यात योजनके विस्ताररूप हैं तिन एक एक भवनमैं असंख्यात भवनवासी देवनिकरि वंदनीक एक एक जिनमंदिर ऐसैं सात कोड बहत्तरि लाख ही जिनमंदिर हैं। अर मध्यलोकमैं पंचमेरुनिमैं अस्सी जिनमंदिर हैं गजदंतानि ऊपरि बीस हैं अर कुलाचलनिमैं तीस। विजयार्द्धनि परि एक सो सत्तर। देवकुरु उत्तरकुरुमैं दश। वक्षारागिरनिमैं अस्सी। मानुषोत्तर उपरि चार। इष्वाकार उपरि चार। कुंडलगिरि उपरि चार। रुचिकगिरि ऊपरि चार। नंदीश्वरद्वीपमैं बावन ऐसे मध्यलोकमें चारसे अठावन हैं। ऊर्ध्वलोकमें स्वर्गनिमें अहमिंद्रलोकमें चौरासी लाख सत्तानवे हजार तेईस हैं। अर व्यंतरनिके असंख्यात जिनमंदिर हैं अर जोतिर्लोकमें असंख्यात जिनमंदिर हैं। ऐसें संख्यारूप जिनमंदिर तो आठ कोडि छप्पन लाख सत्तानवे हजार चारसे इक्यासी हैं। अर व्यंतरज्योतिषिनके असंख्यात जिनमंदिर हैं। अब जिनालयनिका स्वरूप कहिये है, जिनालय तीन प्रकार हैं उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तिनमैं उत्कृष्ट जिनमंदिरकी लंबाई सौ योजनकी है चौडाई पचास योजन हैं ऊंचाई पचहत्तर योजनकी है। अर मध्यम जिनमंदिर पचास योजन लंबे पचास योजन चौडे साढा सैंतीस योजन ऊंचे हैं अर जघन्य जिनमंदिर पचास योजन लंबा साढा बारा योजन चौडा पौणा उगणीस योजन ऊंचा है अर समस्तकी नींव जमीनमें आधा २ योजनकी है बहुरि इन जिनमंदिरानिके तीन तीन द्वार हैं तिनमें सन्मुख द्वार तो एक एक है और पसवाडे दोऊनिके दोय दोय द्वार हैं तिनमें सन्मुख द्वारका परिमाण ऐसा जानना उत्कृष्ट जिनमंदिरके द्वारकी ऊंचाई सोलह योजनकी है चौडाई आठ योजनकी है। मध्यम मंदिरनिका द्वारकी ऊंचाई आठ योजनकी अर चौडाई चार योजनकी है जघन्य जिनमंदिरनिका द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी अर चौडाई दोय योजनकी है। बहुरि पसवाडानिके दोय २ छोटे द्वारानिका परिमाण ऐसा जानना, उत्कृष्ट जिनमंदिरका छोटा द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी है

अर मध्यम जिनमंदिरनिका छोटा द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी है अर चौडाई दोय योजनकी है अर जघन्य जिनमंदिरनिके छोटे द्वार दोय योजन ऊंचे और एक योजन चौडे हैं इहां भद्रशालवन नंदनवन नंदीश्वरद्वीपमें अर स्वर्गके विमानमें उत्कृष्ट परिमाण सहित जिनालय हैं। अर सौमनसवनमें रुचक पर्वतमें कुंडलागिरी ऊपरि वक्षार गिरानि उपरि इष्वाकार उपरि मानुषोत्तर उपरि कुलाचलनि उपरि मध्यम प्रमाण लिये जिनमंदिर हैं। अर पांडुक वनके जिनालयनिका जघन्य प्रमाण है। वहुरि विजयार्द्ध पर्वतनके उपरि अर जंबूशाल्मलि वृक्षनिविषै जिनमंदिरनिकी लंबाई एक कोशकी है अवशेष जे भवनवासिनके भवननिमें तथा व्यंतरनिके जोतिषीदेवनिके जिनालय हैं ते यथायोग्य लंबाई जिनेंद्र भगवान देखी है तैसे तैसे प्रमाण लिये हैं। अब जिनमंदिरनिका वाह्यपरिकर सात गाथानिमें कह्या है। समस्त जिनभवनके चार तरफ चार चार द्वारनिकरि युक्त मणिमयी तीन कोट हैं। अर द्वारनि होय जानेकी गली गली एक एक मानस्तंभ है अर नव नव स्तूप हैं अर तीन तीन कोटका अंतरालके माहीं पहला दूजा कोटके बीच वन है दूसरा तीसरा कोटके बीच ध्वजा है। तीजा कोट अर चैत्यालयके बीच चैत्यभूमि है। तिन जिनभवननिविषै एकसौ आठ गर्भगृह हैं। तिन जिनभवननिके मध्य रत्ननिके स्तंभनिकरियुक्त सुवर्णमय दोय योजन चौडा आठ योजन लंबा चार योजन ऊंचा देवच्छंद कहिये मंडप गुमज छाति सहित हैं तिसविषै एकसौ आठ गर्भगृह हैं तिन गर्भगृहनिविषै आदि जिनेन्द्रके देह परिमाण उच्चतायुक्त एकसौ आठ जिनप्रतिमा रत्नमय हैं। कैसेक हैं जिनप्रतिमा भिन्न भिन्न सिंहासन छत्रत्रयादि प्रातिहार्यनिकरि सहित हैं। अति नील मस्तकविषै जिनके केश हैं। ते केशनिके आकार रत्ननिके पुद्गलपरिणमैं हैं केश नाहीं हैं। वहुरि वज्र जो हीरा तिनमयी दंतानिके आकार संयुक्त हैं। अर विद्रुम जो मूंगा तिस समान रक्त जिनके ओष्ठ हैं। अर नवीन कूंपल समान शोभायुक्त रक्त हस्तपादतल हैं श्रीराजवार्तिकमैं प्रतिमाका वर्णनमें लोहिताक्ष मणिकरि व्याप्त अंक स्फटिकमणिमय हैं नयन जिनके

अर अरिष्ट मणिमय हैं श्याम नेत्रनकी तारका जिनकी अर अंजन मूल मणिमय वाफणी अर भृकुटीकी लता जिनके नीलमणिमय केशनिकरि युक्त ऐसी जिनप्रतिमा हैं दश ताल प्रमाण लक्षणादिकरि भरी हैं। इहां तालका परिमाण बारह अंगुलका है। प्रथम जिनेंद्र ज्यों जानो कि देखैं ही है मानो बोले ही है। बहुरि एक एक गर्भगृहविषै बराबर पंक्ति करि खडे नागकुमारनिके वा यक्षनिके बत्तीस युगल चमर हस्तनिमैं लिये हैं। भावार्थ–एक एक गर्भगृहमैं एक एक जिनप्रतिमाके दोऊ तरफ समस्त आभरणकरि भूषित अर श्वेतनिर्मलरत्नमय चमर हस्तमैं धारण करते नाग कुमार वा यक्ष चौंसठ चमर ढारैं हैं। ऐसैं एकसौ आठ प्रतिमानिके जुदे २ प्रातिहार्य एक एक जिनालयमैं हैं बहुरि तिन जिनप्रतिमानिके दोऊ पसवाडेनविषै श्रीदेवी अर सरस्वती देवी अर सर्वाह्ण यक्ष अर सनत्कुमार यक्ष इनके रूप आकार तिष्ठै हैं बहुरि अष्टप्रकारके मंगल द्रव्य जिनप्रतिमाके निकट शोभै हैं। झारी ॥ १ ॥ कलश ॥ २ ॥ दर्पण ॥ ३ ॥ बीजणा ॥ ४ ॥ ध्वजा ॥ ५ ॥ चमर ॥ ६ ॥ छत्र ॥ ७ ॥ ठोना ॥ ८ ॥ ए आठ मंगलद्रव्य हैं ते एक एक मंगलद्रव्य एक सौ आठ प्रमाण एक एक प्रतिमानकै शोभै हैं। अब गर्भगृहके बाह्यकी रचनाकूं ऐसैं जानो–मणिजटित सुवर्णमय पुष्पनिकरि शोभित बना जो देवच्छंद तीका अग्रभाग के मध्य रूपामयी अर सुवर्णमयी बत्तीस हजार कलश हैं बहुरि महाद्वार जो बडा द्वार ताके दोऊ पार्श्वनिविषै चौईस हजार धूपके घडे हैं। बहुरि तिस महाद्वारके बाहिर दोऊं तरफ आठ हजार मणिमई माला है। तिन मणिमई मालानिके बीच चौईस हजार सुवर्णमय माला हैं। बहुरि तिस महाद्वारके आगैं सन्मुख मुखमंडप है तिस मुखमंडपविषै सोलह हजार कलश हैं अर सोलह हजार सुवर्णमय माला है तिस मुखमंडपविषै सोलह हजार धूपघट हैं तिस मुखमंडपका मध्यविषै ही महान मिष्ट झणझणाट शब्द करती मोती अर मणिनि-कर निपजी किंकणी जे छोटी घंटी तिनकरि सहित नानाप्रकारके घण्टानिके समूह अनेक रचना करियुक्त शोभैं हैं अब जिनमन्दिरके छोटे द्वारादिकका स्वरूप कहे हैं। जिनमन्दिरका दक्षिण उत्तरके पसवाडे-

निका मध्यमैं प्राप्त जे छोटे द्वार तिसविषै कह्या विधानतैं समस्त रचना आधी आधी जानना। मणिमाला चार हजार हैं धूपघट बारह हजार हैं सुवर्णमाला बारह हजार हैं तिन छोटे द्वारानिके आगैं मुखमंडप हैं तिसमैं सुवर्णके घट आठ हजार हैं अर सुवर्णमय माला आठ हजार हैं आठ हजार धूपघट हैं और मुखमंडपानिमै क्षुद्रघंटिका अनेक रचना है बहुरि तिस मंदिरका पृष्ठभागविषै मणिमाला तो आठ हजार हैं। अर सुवर्णमाला चौईस हजार हैं। माला हैं ते भीतिके चौगिरद लूंबनी जाननी अब मुखमंडपनिका विस्तारादिका स्वरूप पंद्रह गाथानिमैं कह्या है सो कहिये हैं,—इस मंदिरके आगैं मुखमंडप है सो जिनमंदिरके समान सौ योजन लंबा पचास योजन चौडा सोलह योजन ऊंचा है। अर तिस मुखमंडपके आगैं चौकोर प्रदक्षिणमंडप है सो प्रदक्षिणमंडप सौ योजन चौडा लंबा है। सोलह योजनतैं अधिक ऊंचा है तिस प्रदक्षिणमंडपके आगैं अस्सी योजन चौडा लंबा अर दोय योजन ऊंचा सुवर्णमय पीठ है। पीठ नाम चौंतराका जानना। तिस पीठका मध्यविषैं चौकोर चौंसठ योजन चौडा लंबा अर सोलह योजन ऊंचा स्थानमंडप है स्थानमंडप नाम सभामंडपका है। बहुरि इस स्थानमंडपके आगैं चालीस योजन ऊंचा स्तूपनिका माणिमय पीठ है सो पीठ चार द्वारनिकरि संयुक्त बारह अंबुज वेदीनकरि युक्त है। बहुरि तिस पीठके मध्य तीन कटनीकरि युक्त चौसठ योजन चौडा लंबा ऊंचा बहुत रत्नमय जिनबिंबनिकरि सहित स्तूप है। तीन कटनीलिये जो रत्नराशि ताका नाम स्तूप है। तिस ऊपरि जिनबिंब विराजैं हैं सो ऐसैं ही नव स्तूप हैं। तिनका ऐसा क्रम करि स्वरूप है तिस स्तूपके आगैं एक हजार योजन चौडा लंबा गिरदविषैं बारह वेदीनिकरि संयुक्त सुवर्णमय पीठ है तिस पीठ ऊपरि चार योजन लंबा अर एक योजन चौडा है स्कंध कहिये पेड जिनका अर बहुत मणिमय गिरदविषैं तीन कोटनिकरि संयुक्त अर बारह योजन लंबी है चार महा शाखा जिनके अर छोटी शाखा अनेक हैं जाके अर बारह योजन चौडा है शिखर कहिये ऊपरला भाग जिनका। अर नानाप्रकार पान फूल फल संयुक्त हैं। बहुरि एक लाख

चालीस हजार एकसौबीस वृक्षनिका परिवारसंयुक्त सिद्धार्थ अर चैत्य नामा दोय वृक्ष हैं । तिन वृक्षनिका मूलविषै जो पीठ है ताके ऊपरि तिष्ठते चार दिशानिविषै चार सिद्धनिकी प्रतिमा तो सिद्धार्थवृक्षका मूलविषै हैं अर चैत्यवृक्षका मूलविषै पीठ है ताके ऊपरि चार अर्हंतप्रतिमा विराजमान हैं। बहुरि इन वृक्षनिकी पीठके आगैं पीठ हैं ताविषै नानाप्रकार वर्णनकरि युक्त महाध्वजा तिष्ठै हैं । सोलह योजन ऊंचे एक कोस चौंडे ऐसे ध्वजानिके सुवर्णमय स्तंभ हैं। तिन स्तंभनिका अग्रभागविषै मनुष्यनिके नेत्र अर मनकूं रमणीक ऐसे नानाप्रकारके ध्वजा वस्त्ररूप रत्ननिकरि परिणये हैं अर तीन छत्र सोभै हैं इहां ध्वजानिके वस्त्र नाहीं है। वस्त्रकासा आकार कोमलता नाना रंग ललिततालिये रत्नरूप पुद्गल परिणये हैं तातैं वस्त्र भी रत्नमय जानने। तिस ध्वजापीठके आगैं जिनमंदिर है ताकी चारों दिशानविषै नानाप्रकार पुष्पनिकरि युक्त सौ योजन लंबे पचास योजन चौडे दशयोजन ऊंडे मणिसुवर्णमय वेदीनकरि संयुक्त चार हृद कहिये द्रह हैं ताके आगैं जो मार्गरूप बीथी है गली है ताके दोऊ पार्श्वनविषैं पचास योजन ऊंचे पचास योजन चौडे देवनिके क्रीडा करनेके रत्नमय दोय मंदिर हैं। बहुरि ताके तोरण हैं सो मणिमय स्तंभनिका अग्रभागविषै स्थित हैं। दोय स्तंभनिके बीच भींतिरहित मरगोलकासा आकार ताका नाम तोरण है सो तोरण मोतीनके जाल अर घंटासमूहकरि युक्त है। मोतीनके जाल अर घंटासमूह तोरणनिके लूंबें हैं बहुरि सो तोरण पचास योजन ऊंचा पचीस योजन चौडा है ते तोरण जिनबिंबनिके समूहकरि रमणीक हैं। जिनबिंबनिका आकार तोरणनिमैं तिष्ठै है तिस तोरणके आगैं स्फटिकमय जो प्रथम कोट ताके अभ्यंतर कोटके द्वारका दोऊ पार्श्वनिविषैं सौ योजन ऊंचे पचास योजन चौडे रत्ननिकरि रचे दोय मंदिर हैं ऐसैं कोटपर्यंत वर्णन किया पूर्वद्वारविषै मंडपादिकका जो परिमाण कह्या तातैं दक्षिणद्वार उत्तरद्वारविषै आधा २ परिमाण जानना। अन्य वर्णन तीन तरफ समान जानना। बहुरि ते चैत्यालय सामायिकादि क्रिया करनेका स्थान वंदना मंडप अर स्नान करनेके स्थान अभिषेक मंडप

अर नृत्यकरनेके स्थान नर्त्तन मंडप अर संगीत साधन करनेके स्थान संगीतमंडप अर अवलोकन करनेके अवलोकन मंडप तिनकरि संयुक्त बहुरि क्रीडा करनेके स्थान क्रीडन गृह शास्त्रादिक अभ्यास करनेके स्थान गुणनगृह तिनकरि अर विस्तीर्ण उत्कृष्ट पट्ट चित्रामादि दिखावनेके स्थान पट्टशालादि तिनिकरि संयुक्त है। अब द्वितीय कोट अर बाह्यकोटके बीच अंतराल ताका स्वरूप कहैं हैं। सिंह, गज, वृषभ, गरुड, मयूर, चंद्रमा, सूर्य, हंस, कमल, चक्र, इन दशनिका आकारकरि संयुक्त ध्वजा हैं ते जुदी जुदी एकसौ आठ आठ है। ऐसैं एकहजारअस्सी एक दिशामैं हैं। ऐसैं चार दिशानिकै चारहजार तीन सौ वीस मुख्यध्वजा हैं। बहुरि एकएक मुख्यध्वजाविषै एकसोआठ क्षुलक छोटी ध्वजा हैं। आगैं दूसरा अर तीसरा कोटके बीच जो अंतराल ताकैविषै अशोक अर सप्तच्छद अर चंपक अर आम्रमई चार बन हैं। बहुरि यहां सुवर्णमय फूलनिकरि शोभित मरकतमणिमय नानाप्रकार पत्रानिकरि पूर्ण ऐसे कल्पवृक्ष हैं तिनके वैडूर्यमणिमय फल हैं अर मूंगामय डालीकरि युक्त हैं। ऐसैं कल्पवृक्ष भोजनांगआदि भेद लिये दश प्रकार हैं बहुरि तिन च्यारों वननिविषैं चैत्यवृक्ष च्यारि हैं। ते वृक्ष तीन पीठि ऊपरि हैं। तीन कोटनिकरि युक्त हैं रत्नमय शाखापत्रपुष्पफलकरि युक्त चार बनानिके बीच हैं तिन चार चैत्यवृक्षानिके मूलमैं दिशानमैं पल्यंकासन सिंहासन छत्रप्रातिहार्यादियुक्त चार जिनेंद्रकी प्रतिमा हैं। बहुरि नंदादि सोलह बावडी तीन कटनीनि करि सयुंक्त शोभै हैं। बहुरि वननकी भूमिमैं द्वारानितैं आवनेका मार्ग रूप जो वीथी तिनका मध्यविषे तीनकोटसंयुक्त तीन पीठनि ऊपरि धर्मका विभवसंयुक्त मस्तकविषै च्यारिदिशानिमैं च्यारि जिनप्रतिमाकूं धारण करते मानस्तंभ हैं। श्रीराजवार्तिकमैं कह्या है—जिनालयनकी महिमा वर्णनकरनेकूं हजारजिह्वाकरि हू समर्थ नाहीं होय है अर सहस्राक्ष जो हजारनेत्रधारक हजारनेत्रानिकूं विस्तारकरि निरंतर देखतो हू तृप्तिताकूं नाहीं प्राप्त होय है ऐसैं अप्रमाणमहिमाके धारक अकृत्रिमजिनालयका वर्णन त्रिलोकसारनामग्रंथतैं अपने शुभध्यानकी सिद्धिके अर्थि वर्णन किया। ऐसैं

जिनपूजनका कथन किया। अब जिनपूजनका फलमैं तो प्रसिद्ध अनेक भये हैं। तथापि पूर्वाचार्यनिकरि प्रसिद्ध फल कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

अर्हच्चरणसपर्यामहानुभावं महात्मनामवदत्। भेकः प्रमोदमत्तः कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥ १२० ॥

अर्थ—राजगृहनाम नगरकेविषै जिनेंद्रका पूजनेका हर्षकरि मत्त कहिये अपना सामर्थ्यकूं नाहीं जानतो जो मींडको सो अरहंतके चरणनिकी पूजाका महाप्रभाव महानपुरुष जे भव्यजीव तिनकूं प्रगट करतो हुवो दिखावतो हुवो। याकी कथा ऐसी जाननी—मगधदेशमैं राजगृहनगर तिसविषै राजाश्रेणिक राज्य करै। तिस ही नगरकेविषै एक नागदत्तनामश्रेष्ठी ताके भवदत्तनामा स्त्री सो श्रेष्ठी आर्तपरिणामतैं मऱ्या। मरिकरि आपकी गृहकी बावडीमैं मींडको उपजतो हुवो। एक दिन भवदत्तानामा सेठानी बावडी ऊपरि गई तदि ताने देखि मींडकाके पूर्वजन्मको स्मरण हुवो तादि पूर्वलो स्नेहकी यादकरि शब्द करतो उछलि २ सेठानीके वस्त्रांऊपरि चढै। तदि सेठानी वारंवार वाकों दूरि फेकि दियो तो हू बारम्बार सेठानीका वस्त्रनि परि आवै तदि सेठानी मींडकानै दूरि करि अपने घर गई। एक दिन सुव्रतनाम अवधिज्ञानी मुनीकूं पूछी भो स्वामिन्! मैं गृहवापिकामैं जाऊं तदि एक मींडको शब्द करतो २ बारम्बार हमारे अंगपरि आवै इसका संबंध कहो। तदि मुनीश्वर कह्यो। थारो भर्ता नागदत्त आर्त परिणामतैं मरि मींडको हुवो ताकै जातिस्मरण हुवो सो पूर्वजन्मका स्नेहकरि थारे निकट आवै है। तदि सेठानी मींडकाकूं अपना भर्ताको जीव जानिकरि अपने गृहमैं लेजाय बहुत सन्मानतैं राख्यो। एक दिन राजा श्रेणिक भगवान वीरजिनेंद्रका समवसरण वैभार पर्वतऊपरि आयो जानि राजा वंदनाकेअर्थि नगरमैं आनन्दभेरी दिवाई। तादि नगरके भव्यजीव भगवानकी वंदनाके अर्थि नाना प्रकारके उज्जलवस्त्र आभरण पहरि पूजनसामग्री हस्तानिमैं लेय जयजय शब्द करते हर्षतैं नृत्यगानवादित्रादि शब्दसहित चाले सो समस्तनगरमैं आनंदहर्ष व्याप्त होयगयो। तदि मींडको लोकनिका पूजनजनित आनंदका शब्द

श्रवण करि आपके पूजन करनेका बडा उत्साह प्रगट भया तदि एक पुष्पकूं मुखमैं लेय आनन्दसहित उछलतो हुवो वीरजिनेंद्रका पूजनके अर्थि चाल्यो अतिभक्तितैं एसा विचार नाहीं भया जो विपुलाचल पर्वतऊपरि वीस हजार पैडीनिसहित समवशरण तो कहां अर मैं असमर्थ मींडको कहां कैसैं पहुंचूगा। अतिभक्तितैं ऐसा विचार नाहीं रह्या। अब जिन पूंजूं ऐसैं उत्साहसहित मार्गमैं गमन करतो राजाका हस्तीका पग नीचे मरि सौधर्मस्वर्गविषै महान ऋद्धिको धारक देव हुवो तदि अवधिज्ञानतैं पूजनके भावतैं अपना देवपनामैं उत्पाद जानि मींडकाको चिह्न धारणकरि तत्काल वीरजिनेंद्रका समवसरणमैं पूजनके अर्थि जाय समस्त जीवनिकूं पूजनको प्रभाव प्रगट दिखायो। जो तिर्यंच मींडक पूजनताईं पहुंच्यो हू नाहीं केवल पूजनके भाव करकैं ही स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव भयो। जिनेन्द्रका पूजनका अचिंत्य प्रभाव है यातैं गृहचारामैं बडा शरण समस्तपरिणामकी विशुद्धता करनेवाला एक नित्यपूजन करना ही है। जिनपूजन निर्धन हू करि सकै धनाढ्य हू करि सकै जेता आपका सामर्थ्य होय तिसप्रमाण पूजन सामग्री वनिसकै है बहुरि पूजन करना करावना करतेकूं भला जानना सो समस्त पूजन ही है। तथा स्तवनवंदना हू पूजन, एकद्रव्यतैं हू पूजन जैसैं अरहंतके गुणनिमै भक्तिकी उज्जलता होय तैसा फल है बहुरि जिनमन्दिरमैं छत्रचमरसहित सिंहासन कलश घंटा इत्यादिक सुवर्णमय रूपामय पीतलमय कासी ताम्रमय अनेक सुंदर उपकरणनिकरि जेता अपना सामर्थ्य होय तिसप्रमाण जिनमंदिरको भूषितकरि वैयावृत्य करै। बहुरि जीर्णमंदिरनिकी मरम्मत उद्धार करना। तथा धनाढ्य पुरुष हैं तिनकूं जिनबिंबनकी प्रतिष्ठा करवाना कलश चढावना ये समस्त अरहंतकी वैयावृत्ति हैं।

बहुरि जिनमंदिरनकी टहल करना कोमल पीछीसूं यत्नाचारतैं भुवारना अभिषेक पूजना विछावना गाननृत्यवादित्रादिकनिकरि अरहंतके गुण गावणा सो समस्त अर्हद्वैयावृत्ति है। मनसे वचनसे कायसे धनसे विद्यासे कलासे जैसे अरहंतके गुणनिमैं अनुराग बधै तैसे करना धन पावनेका देह पावनेका

इंद्रियपावनेका बलपावनेका ज्ञानपावनेका सफलपणा जिनमंदिरकी टहल वैयावृत्तिकरके ही है। जिनमंदिरकी वैयावृत्ति सम्यक्तकी प्राप्ति करै तथा सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति करै है। मिथ्याज्ञान मिथ्याश्रद्धानका अभाव करै। स्वाध्याय संजम तप व्रत शीलादिगुण जिनमंदिरका सेवनतैं ही होय। नरकातिर्यंचादिगतिनमें परिभ्रमणका अभाव होय। जिनमंदिर समान कोऊ उपकार करनेवाला जगतमें दूजा नाहीं। जिनमंदिरका निमित्ततैं शास्त्र श्रवण पठनकरि अनेक श्रोतानिका उपकार होय वक्ताका उपकार होय है। जिनमंदिरके निमित्ततैं केई जीव कायोत्सर्ग करैं हैं। केई जाप्य जपैं हैं। केई रात्रिमें जागरण करैं हैं। केई अनेकप्रकार पूजनकरि प्रभावना करैं हैं। केई स्तवन करैं हैं। केई तत्त्वार्थनिकी चर्चा करैं हैं। केई प्रोषधोपवास तथा बेला तेला पंच उपवासादिकरि बडी निर्जरा करैं हैं। केई स्वाध्याय करैं हैं। केई वीतरागभावना करै हैं। केई नानाप्रकार उपकरणानि करि प्रभावना करैं हैं। जिनमंदिरके निमित्ततैं पाप पुण्य देवकुदेव धर्मकुधर्म गुरुकुगुरुका जानना होय। भक्ष्यअक्ष्य कार्यअकार्य त्यागनेयोग्य ग्रहणकरनेयोग्यका ज्ञान हू जिनमंदिरमें प्रवृत्तिकरि ही होय है। त्याग व्रत शील संयम भावनाका स्वरूप जानना तथा आचरण करना समस्त जिनमंदिरके प्रभावतैं होय है। जिनमंदिर बराबर कोऊ उपकारी नाहीं है। जिनमंदिर अशरणनिकूं शरण है। ऐसे परोपकार करनेवाला जिनमंदिरकूं जानि याका वैयावृत्य करो। ऐसैं वैयावृत्यमें जिनपूजाका वैयावृत्य कह्या। अब वैयावृत्यके पंच अतिचार कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

हरितापिधानानिधाने ह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि। वैयावृत्त्यस्यैते व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ १२१ ॥

अर्थ—वैयावृत्य जो दान ताके ये पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। हरितपिधान, हरितनिधान, अनादर, स्मरण, मत्सरत्व जो व्रतीनिकूं देने योग्य आहारपानऔषध है ताकूं हरित जो कमलका पत्र वा पातल पान इत्यादि सचित्तकरि ढक्या हुवा देना सो हरितापिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि हरित जो वनस्पतिके पत्रादिक ऊपरि धर्या हुवा भोजन देना सो हरितनिधान नाम अतिचार है ॥ २ ॥

बहुरि दानकूं अनादरतैं अविनयतैं प्रियवचनादि रहित देना सो अनादरनाम अतिचार है ॥ ३ ॥ बहुरि पात्रकूं भोजनादिक देनेके अर्थि स्थापनकरि अन्यकार्यमें लागि भूलि जाना तथा देनेयोग्य द्रव्यकूं तथा विधिकूं भूलि जाना सो अस्मरण नाम अतिचार है ॥ ४ ॥ बहुरि अन्य दातारतैं ईर्षाकरि देना सो मत्सरत्व नाम दोष है ॥ ५ ॥ ऐसे दान जो वैयावृत्य ताके पंच अतीचार टालि महाविनयतैं शुद्ध दान करो ॥ १२१ ॥

इति श्रीस्वामिसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारविषै शिक्षाव्रतनिका वर्णन करि चतुर्थ अधिकार समाप्त भया ॥ ४ ॥

अब श्रीपरमगुरुनिका प्रसादकरि परमागमकी आज्ञाप्रमाण भावनानामा महाधिकार लिखिए है। समस्त धर्मका मूल भावना है। भावनातैं ही परिणामिनिकी उज्जलता होय है। भावनातैं मिथ्यादर्शनका अभाव होय है। भावनातैं व्रतनिमैं दृढ परिणाम होय है। भावनातैं वीतरागताकी वृद्धि होय है। भावनातैं अशुभध्यानका अभाव होय शुभध्यानकी वृद्धि होय है। भावनातैं आत्माका अनुभव होय है। इत्यादिक हजारां गुणनिकूं उपजावनेवाली भावना जानि भावनाकूं एक क्षण हू मति छांडो। अब प्रथम ही पंचव्रतनिकी पचीस भावना जानहू। अहिंसा अणुव्रत धारण करता पुरुष पांचभावना विस्मरण नाहीं होय है। मनके विषै अन्यायके विषयनिके भोगनेकी वांछाका अभावकरि दुष्टसंकल्पनिकूं छांडि अपनी उच्चताकूं नाहीं चाहना अन्यजीवनके विघ्न इष्टवियोग मानभंगादि तिरस्कार धनकी हानि रोगादिक नाहीं चाहना सो मनोगुप्ति है ॥ १ ॥ हास्यके वचन विवादके वचन अभिमानके वचन नाहीं कहना तथा कलहके अपयशके कारण वचन नाहीं कहना सो वचनगुप्ति है ॥ २ ॥ बहुरि त्रसजीवनिकी विराधना टालिकरि हरिततृण कर्दमादिककूं छांडि देखि शोधि गमन करना तथा चढना उतरना उलंघना

बडा यत्नतैं अपना सामर्थ्यप्रमाण ऐसा करना जैसैं अपना हस्त पादादि अंगउपांगनिमैं वेदना नाहीं उपजै अन्यजीवकै बाधा नाहीं होय तैसैं हलनचलन धीरततैं करना सो ईर्यासमिति है ॥ ३ ॥ जो वस्तु अन्न पान वस्त्र आसन शय्या काष्ठ पाषाण मृत्तिकाके तथा पीतल कांसी लोह सुवर्ण रूपा इत्यादिकके बासन पात्र तथा घृतादि रस इत्यादिक गृहस्थकै परिग्रह हैं तिनकूं यतनतैं उठावना मेलना जैसैं अन्य जीवनिका घात नाहीं होय अपने अंगमैं पडने गिरने करि पीडा नाहीं उपजै उजाड विगाड होनेतैं आपकै अन्यकै संक्लेश नाहीं उपजै तैसैं धरना मेलना हिंसाका कारण तथा हानिका कारण जो घसीटना सो नाहीं करै ताकैं आदाननिक्षेपणसमिति नाम भावना होय है ॥ ४ ॥ बहुरि गृहस्थ जो भोजनपान करै सो अभ्यंतर तो द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता अयोग्यताका विचार करै। योग्य देखि करै। अर बाह्य दिवसमैं उद्योतमैं नेत्रनतैं अवलोकन करि बारंबार शोधि धीरपनातैं ग्रासादिककूं मुखमैं देय भक्षण करै। गृद्धितातैं विना विचार्यां विना शोध्यां भोजन नाहीं करै सो आलोकितपान भोजन नाम भावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं अहिंसाअणुव्रतकी पांच भावना कहीं। सो निरंतर नाहीं भूलना। अब सत्यअणुव्रतकी पंचभावना कहिये है। क्रोधत्याग, लोभत्याग, भीरुत्वत्याग, हास्यत्याग, अनुवीचीभाषण ये पांचभावना सत्यअणुव्रतकी हैं। जो सत्यअणुव्रत धारै क्रोध करनेका त्याग करै ऐसा विचारै जो क्रोधी होय वचन बोलै है ताकै सत्य कहना नाहीं बनै है यातैं क्रोध त्याग्या ही सत्य रहै। अर जो कर्मके उदयतैं गृहस्थके कोऊ बाह्य विपरीत निमित्त मिलनेतैं क्रोध उपजि आवै तो ऐसा चितवन करै जो मेरे परिणाममैं क्रोधजनित तातई उपजि आई है तातैं मोकूं अब मौनग्रहण ही करना अब वचन नाहीं बोलना। जो वचनकूं रोकूंगा तो कषायविसंवाद नाहीं बधैगा। हमारा क्षमादिगुण हू नाहीं बिगडेगा। तातैं मेरे हृदयमैं क्रोधजनित अग्निका उपशम नाहीं होय तितने वचनकी प्रवृत्ति नाहीं करनी। ऐसा दृढ विचार करै ताकै सत्यकी क्रोधत्यागभावना होय है ॥ १ ॥ लोभके निमित्ततैं सत्य वचन नाहीं प्रवर्तैं

है। तातैं अन्यायका लोभ छांडना सो लोभत्यागभावना है ॥ २ ॥ बहुरि भयके वश होय ताके सत्यवचन नाहीं होय तातैं भयका त्याग भये सत्य होय है ॥ ३ ॥ बहुरि हास्यमैं सत्य नाहीं कह्या जाय है। यातैं सत्यअणुव्रती हास्यकूं हू दूरहीतैं छांडे है ॥ ४ ॥ बहुरि जिनसूत्रसूं विरुद्धवचन नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल वचन बोलना सो अनुवीचीभाषण नाम भावना है ॥ ५ ॥ भावार्थ—जो अपने सत्यअणुव्रत पालन किया चाहैगा सो क्रोधके कारणनिकूं रोकै है। जाके वास्ते अनेक असत्यमैं प्रवर्तना होय ऐसा लोभकूं हू छांडि देगा अर जातैं धर्मविरुद्ध लोकविरुद्ध वचनमैं प्रवृत्ति होजाय ऐसा धन विगडनेका शरीर विगडनेका भय नाहीं करेगा। अर जो अपना सत्यवादीपनाकी रक्षा किया चाहैगा सो अन्यका हास्य कदाचित् नाहीं करैगा। अर जिनसूत्रसूं विरुद्धवचन कदाचित नाहीं कहैगा। अब अचौर्यअणुव्रतकी भावना पांच कहिये है। शून्यागार, विमोचितावास, परोपरोधाकरण, भैक्ष्यशुद्धि, सधर्माविसंवाद ए पंच भावना अचौर्यव्रतकी हैं। यातैं अचौर्यअणुव्रतका धारक गृहस्थ हू पंचभावना निरंतर भावता रहै। व्यसनीमनुष्य तथा दुष्टमनुष्य तथा तीव्रकषायी कलहका करनेवाला पुरुषनिकरि शून्यमकान होय तहां बसनेका भाव राखै। जातैं तीव्रकषायी दुष्टनिके नजीक बसनेमैं परिणामकी शुद्धता नष्ट होजाय दुर्ध्यान प्रगट होजाय तातैं पापीनिकरि शून्य मकानमैं बसना सो ही शून्यागारभावना है ॥ १ ॥

बहुरि जिस मकानमैं अन्यदूजाका झगडा नाहीं होय तहां निराकुल बसना सो विमोचितावास है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यके मकानमैं आप जबरीतैं नाहीं धंस बैठना सो परोपरोधाकरणभावना है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यायअभक्ष्यकूं त्यागि भोगांतरायका क्षयोपशमके आधीन मिल्या जो रसनीरसभोजन तामैं समता धारि लालसारहित भोजनकरना सो भैक्ष्यशुद्धि भावना है ॥ ४ ॥ साधर्मीपुरुषमैं वादविसंवाद नाहीं करना सो सधर्माविसंवादभावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं अचौर्य अणुव्रतके धारकानिकूं पंच भावना भावने

योग्य हैं। अब ब्रह्मचर्यव्रतकी पंच भावना कहै हैं,—स्त्रीरागकथाश्रवणत्याग, स्त्रीनके मनोहरअंग देख-
नेका त्याग, पूर्वकालमैं भोग भोगे तिनका स्मरण करनेका त्याग, पुष्टरसका भोजन तथा इंद्रियांमैं दर्प
उपजावनेवाला भोजनका त्याग, अर अपने शरीरके संस्कारका त्याग, ये पंच भावना ब्रह्मचर्यव्रतकी
हैं। अन्यकी स्त्रीनिकी राग उपजावनेवाली कथाका त्यागकी भावना करै ॥ १ ॥ तथा अन्यकी स्त्री-
निके स्तन जघन मुख नेत्रादिक रूपकूं रागभावतैं देखनेका त्याग करै ॥ २ ॥ बहुरि आपके अणुव्रत
धारण हुआ तिस पहली अव्रती होय भोग भोगे थे तिन भोगनिकूं याद नाहीं करना सो तीजी भावना
है ॥३॥ बहुरि पुष्ट इष्ट कामोद्दीपन करनेवाला भोजनका त्याग सो चौथी भावना है ॥४॥ बहुरि अपने
शरीरकूं अंजन मंजन अतर फुलेलादि कामके विकार करनेवाले आभरण वस्त्रादिका त्याग करनेकी
भावना करना सो स्वशरीरसंस्कारत्याग नामा पंचमी भावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतके
धारक गृहस्थकूं पंच भावना भावने योग्य हैं। अब परिग्रहत्यागकी पंच भावना कहै हैं,—जो परिग्रहपरि
माण नाम अणुव्रत धारण करै सो गृहस्थ बहुत पापबंधके कारण अन्यायरूप अभक्ष्यनिका तो यावत्
जीव त्याग करै। अर अंतरायकर्मके क्षयोपशम प्रमाण प्राप्त भये जे पंचइंद्रियनिके विषय तिनमैं संतोष
धारण करि मनोज्ञविषयनिमैं अतिराग नाहीं करै अर अति आसक्त नाहीं होय। अर अमनोज्ञ असुहा-
वने मिलैं तिनमैं द्वेष नाहीं करै क्लेश नाहीं करै। अर अन्य जीवनके सुंदरविषयभोग देखि लालसा नाहीं
करना सो परिग्रहपरिमाणअणुव्रतकी पंच भावना हैं। बहुरि पंच पापनिका महा निंद्यपना है ताकी भाव-
नाकूं हू भावना योग्य है। ये हिंसादिक पंच पाप हैं तिनतैं इसलोकमैं महादुःखकारि अपना नाश है अर
परलोकमैं घोरदुःख अनेक भवनिमैं जानि पापनितैं भयभीत होय दूरहीतैं त्यागना। हिंसा करनेवाला
निरंतर भयवान रहै है। अर जाकूं मारै ताकै अनेक भवनिपर्यंत वैरका संस्कार चल्या जाय है। जाकूं
मारै ताका स्त्रीपुत्रपौत्रमित्रकुटुम्बी वैर लेवैं हैं। तिर्यंचनिऊपरि भी लाठी पत्थर शस्त्र चाबुक चलावै

ताका र तिर्यंच हू नाहीं छांडै हैं। हाथी घोडा सर्प ऊंट बहुत दिनपर्यंत वैर धारण करि बदला लेवैं हैं मारै हैं। जगतमैं निंद्य होय हैं। पापी कहावे हैं। सर्वमैं प्रतीत जाती रहै है। तथा जाकूं मारै वे आपकूं मार लेहैं। राजाका तीव्र दण्ड भोगै हैं। हस्तपाद नाक छेद्या जाय है। राजा सर्वस्व हरण करै है। महा अपयश गर्दभारोहणादिक तीव्र दंड भोगि नरकादि कुगतिनिमैं बहुतकाल नाना ताडन मारन छेदन भेदन शूलीरोहण वैतरणीमैं मज्जनादि असंख्यात दुःख भोगि घोर तिर्यंच मनुष्यमैं तीव्ररोग दारिद्र अपमानादिक भोगता असंख्यात अनंतभव दुःखका पात्र होय है। बहुरि जो अन्यजीवका घात तो नाहीं करै है अर अभिमान क्रोध करि अपने शरीरका बल करि अन्य मनुष्यातिर्यंचनिकूं तथा बालककूं स्त्रीकूं लात घमूका चपेटनितैं मारै हैं। तथा लाठी चाबुक वेतनतैं मारै हैं। त्रास देवै हैं ते हू इसलोकमैं राक्षसकी ज्यों भयंकर उद्वेगका करनेवाला महाअपयश पाय दुर्गतिका पात्र होय हैं। बहुरि जो निर्दयपरिणामी होय करके विकलत्रयादिकका कषायके वश होय घोर आरंभादिक करि घात करै है तथा विना प्रयोजन वनस्पतिका छेदन तथा पृथ्वी जल अग्निकायके जीवनिकी अज्ञानभावतैं तथा प्रमादतैं विराधना करै हैं ते इसलोकमैं ही ज्वर सन्निपात आमवात पक्षाघात संग्रहणी अतीसार वात पित्त कफ खांसी कोढ खाज पांव फोडा आदीठ बाला विष कंटकादि रोगनितैं घोरदुःख भोगि नानादुर्गतिमैं रोग अर दारिद्र इष्टवियोगादि घोर दुःखनिका पात्र होय हैं। यातैं हिंसातैं इसलोकमैं घोरदुःखरूप फल जानि हिंसाका त्याग ही सर्वप्रकार करि करना श्रेष्ठ है। बहुरि जो जीवनिकी दयाकरि युक्त होय समस्त जीवनिकूं अभयदान देहै। अपने परिणामनितैं जीवमात्रकी विराधना नाहीं चाहता यत्नाचाररूप प्रवर्तता प्रमाद छांडि अहिंसाधर्मकूं नाहीं भूलै है तिसकी महिमा इहां ही देव करै हैं पूज्य होय है समस्त पापनितैंरहित होय स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देवपना पाय मनुष्यलोकमैं विदेहादिक उत्तम क्षेत्रमैं महाप्रभावका धारक होय निर्वाण गमन करै है। अब असत्यवचनका स्वरूप केवल दोषरूप ही है सो प्रगट विचार करहु। असत्य

वादीकी प्रतीत नाहीं रहै है। माता पिता पुत्र मित्र स्त्रीनिके हू याकी प्रतीत नाहीं विश्वास नाहीं आवै है तदि अन्यके याका श्रद्धान कैसे होय जातैं जगतमैं जेता व्यवहार है तेता वचनके द्वारे है। जो वचन विगाड्या सो अपना समस्त व्यवहार विगाड्या। धर्म अर्थ काम मोक्ष चार पुरुषार्थ वचन करि प्रवर्तै हैं जाका वचन ही निंद्य भया ताका चारूं पुरुषार्थ निंद्य होय हैं। असत्यवादी समस्तके अप्रिय होय हैं। याकै मायाचार होयही असत्यके अर कपटकै अविनाभावीपना है। कुवचन बोलना चुगली करना अर विकथा आत्मप्रशंसा परकी निंदा ये असत्यका परिवार है। असत्यवादी इसही लोकमैं जिह्वाछेद सर्व-स्वहरण तथा जिह्वाके रोगकरि नष्ट होना इत्यादिक घोरदुःखनिकूं प्राप्त होय है। अपवादकूं पावै है। परलोकमैं नरकादिकानिमैं परिभ्रमण तिर्यंच गतिमैं वचनरहितपना तथा गूंगा बहिरा अंधा दरिद्री रोगी-पना पावै है। तथा मूर्खपना वचनकलारहितपना होय है। तथा जगतमैं दीनताका विलाप करतो फिरै है तो हू कोऊ श्रवण ही नाहीं करै तातैं असत्यवचनका त्यागही श्रेष्ठ है। अर सत्यके प्रभावतैं देवलोकमैं गमन स्वर्गका महर्द्धिकपना होय है। समस्त जगतके आदरने योग्य वचन होय। तथा समस्त उत्तम शास्त्रनिका पारगामी होय। कविपना होय वाग्मीपना होय अनेक जीवनिका उपकार होय। जाकी आज्ञा लाखांमनुष्य अंगीकार करैं ऐसा सत्यवचनका फल है। जो पूर्वजन्ममैं वचनकी उज्ज्वलता धारी है ताका वचन श्रवण करनेका लाखांमनुष्य अभिलाष करै हैं। जो हमसूं बोलै सो हम कृतार्थ हो जावें ये समस्त सत्यवचनका प्रभाव है। अब चोरीके दोषनिकी भावना कहिए है। चोर मनुष्य समस्तकै भय उपजावनेवाला होय है। माता हू चोरी करनेवाला पुत्रका बडा भय करै है।

तथा हितू बांधवादिक कोऊ चोरका संसर्ग नाहीं चाहै है। याका संसर्गतैं कलंक चढि जायगा कोऊ राजाकी आपदा आजायगी। तथा हमारा कुछ ले जायगा। ऐसा भय नाहीं छांडै है। चोर समस्तमैं नीचा होजाय है चोरकै काहूके मारनेकी दया नाहीं होय है असत्य कपट छल अनेक चोरानिके निश्चयतैं

होय ही है चोर पापीनिमें महापापी है। चोरका कोऊ सहाई नाहीं होय है। पिता माता स्त्री पुत्रादिक समस्त कुटुंब चोरकी लार नाहीं लागे हैं। धीज प्रतीत सब जाती रहै है। कोऊ स्थानदान नाहीं देवै है। चोर जानि समस्त मारने लगि जाय हैं। राजानिकरि तीव्र मारन ताडन हस्तनासिका छेदन मारण दंड होय है। बंदीखानाकूं बहुत दीर्घकाल सेवनिकरि अपवाद पाय मरणकरि घोर नरककी वेदना भोगता असंख्यात अनंतकाल तिर्यंचनिमें भूख प्यास ताडन मारण लादन घसीटनादि असंख्यात भवनिमें पावै है। मनुष्य होय तो महानीच दरिद्री रोगी वियोगी घोर क्षुधा तृषा मारणबंधन चोरीके कलंकादि सहित निरादरका दुःख भोगता पैंड पैंडमें याचना करता घोर दुःख भोगनेका संतान चल्या जाय है। यातैं चोरीका दूरहीतैं परिहार करो। अपने पुण्य पापके अनुकूल जे विषय मिले हैं तिनमें संतोष धारणकरि अन्यके धनमें स्वप्नहूमें वांछा मति करो। परका धन पुण्य विना आवनेका हू नाहीं। पूर्व जन्ममें कुपात्र दान किया कुतप किया तातैं परका धन हाथ लागि जाय तो हू कै दिन भोगैगा महासंक्लेशतैं अल्पआयु भोग दुर्गतिनमें जाय प्राप्त होयगा। यातैं चोरीकाहू दूरहीतैं त्याग करना श्रेष्ठ है। जिनके परधनमें इच्छा नाहीं है। अपना पुण्यपापके अनुकूल मिल्या तिसमें संतोष धारणकरि अन्यायका धनमें कदाचित् चित्त नाहीं चलावैं हैं तिनका इसलोकमें हू जश है प्रतीत है समस्तमें आदर होय है। जाका परिणाम परधनमें नाहीं अपने उपार्जन कियाहीमें मंदरागी है तिनके एकहू क्लेश नाहीं आवै अशुभकर्मका बंध नाहीं होय है समस्त जगत अपना धन दीजे है परलोकमें देवलोककी अपरिमाणविभूति असंख्यात कालपर्यंत भोगि मनुष्यनिमें राजाधिराज मंडलेश्वर चक्रवर्तीनिका विभव भोगि क्रमतैं निर्वाणकूं प्राप्त होय है। यातैं भगवानवीतरागका धर्म धारण करि अन्यायका धनका त्याग करि रहना ही श्रेष्ठ है॥ अब कुशीलके दोषनिकी भावना चिंतवनकरि विरक्त हो जाना योग्य है। कुशील-पुरुष है सो कामका मदकरि उन्मत्त हुआ मदोन्मत्तहस्तीकी ज्यों विचरै है। स्त्रीनिके रागकरि ठिग्या

हुवा दोऊं लोकका विचाररहित कार्य अकार्यकूं नाहीं जानै है। भक्ष्यअभक्ष्य योग्यअयोग्यका विचार रहित होय है। पापपुण्यकूं नाहीं देखै है। प्रत्यक्ष आपदा अपयश होता दीखै है तो हू कामकी अँधेरीतैं नाहीं देखै है। कामसारसी दूजी अँधेरी त्रैलोकमें नाहीं है। कामकरि आच्छादित मनुष्य पर्यायमैं हू पशुसमान है। पशुमें अर कामांधमैं भेद नाहीं है। कामकरि अंध हुआ वनादिकमें तिर्यंच कटि कटि मरिजाय है। मनुष्य जन्ममैं हू मरि जाय है अर मार ले है। कामांधकै धर्म अधर्मका विचार नाहीं रहै है। लोकलाज मूलतैं नष्ट हो जाय है। परस्त्री लंपटानिकूं अनेक ओछे आदमी मार लेवै हैं। राजादिक-निकरि लिंगच्छेदन सर्वस्वहरणादि दंडनिकूं प्राप्त होय है मरिकरि नरकादि दुर्गतिनमें परिभ्रमणकरि तिर्यंचमनुष्यनिमें घोर दुःख भोगता नीच चांडाल चमार धीवरनिमें महादरिद्री महाकुरूप कोढी अंग-हीन आंधो लूलो पागलो कूबडो इत्यादि नीच मनुष्यनिमें उपजिकरि नरक बहुरि तिर्यंच बहुरि कुमा-नुष नपुंसकादि भवनिमें दुःख भोगै है। तातैं कुशीलका त्याग ही श्रेष्ठ है। बहुरि शीलवंत पुरुष स्वर्ग-लोकमें कोट्यां अपछरानें सेव्यमान हुवा असंख्यात कालपर्यंत भोग भोगता मनुष्यनिमें प्रधान मनुष्य होय अनुक्रमतैं मोक्षका पात्र होय है। अब परिग्रहकी ममताका दोष चिंतवन करि परिग्रहतैं विरागी होना श्रेष्ठ है। परिग्रहकी ममता समस्त पंच पापनिमें प्रवृत्ति करावै है। परिग्रहकरि तृप्तिता नाहीं आवै है। जैसे इंधन करि अग्नि बधै है तैसे तृष्णारूप अग्निकरि निरंतर बधै है। अर परिग्रहके उपा-र्जनमैं रक्षणमैं अर नाशमैं महान दुखित होय है। परिग्रहकी ममताका धारक धर्म अधर्मका जीवनमरण का विचाररहित होय है। परिग्रहकी ममता हिंसा असत्य चोरी कुशील अभक्ष्य बहुआरंभ कलह वैर ईर्षा भय शोक संताप इत्यादिक हजारां दोषनिमैं प्रवृत्ति करावै है। संसारमैं जेता बंधन अर पराधीनता अर कषाय अर दुःख है तितना परिग्रहतैं है अर परिग्रहका त्यागना है सो बडा भारका उतारना है। परिग्रहका त्यागी निर्बंध है। परिग्रहत्यागका फल स्वर्गमुक्ति है यातैं परिग्रहका त्याग ही समस्तकल्या-

णका मूल है ऐसैं हिंसाअसत्यचोरीकुशीलपरिग्रहनिमैं दोष हैं। तिनकी भावना भावनी। बहुरि ये पांच-पाप दुःख ही हैं ऐसी भावना राखना हिंसादिक दुःखका कारण हैं तातैं हिंसादिक पंच पाप हैं ते दुःखही हैं। हिंसादिक दुःखका कारणनिमैं कार्यका उपचार किया है तातैं पंच पापनिकूं दुःखही कह्या है। जैसैं बध बंधन पीडन मोकूं अप्रिय हैं तैसैं ही समस्त अन्य प्राणीनिकूं हू अप्रिय हैं जैसैं झूठ कटुक कठोर वचन मोकूं कोऊ कहै ताके श्रवणकरनेतैं हमारे अतितीव्र दुःख उपजै है तैसैं अन्यजीवनिके हू कटुक-वचन असत्यवचन दुःख उपजावैं है जैसैं मेरा इष्टद्रव्यकूं कोऊ चोर लेजाय तो मेरे महाःदुःख होय है तैसैं अन्यजीवनिके हू धन हरनेका दुःख होय है जैसैं हमारी स्त्रीका कोऊ तिरस्कार करै तिसकरि हमारे तीव्र मानसीक पीडा होय है तैसैं अन्यजीवनके हू अपनी माता बहण पुत्री स्त्रीके व्यभिचारकूं श्रवणकरि देखनेकरि अतिदुःख होय है। जैसैं धनधान्य वस्त्रादिक नाहीं मिलनेतैं तथा प्राप्त हुवा ताकूं नष्ट होनेतैं वांछारक्षाशोकभयकरि अपने दुखितपना होय है तैसैं परिग्रहकी वांछातैं तथा परिग्रहके नष्ट होनेतैं समस्तजीवनिकै दुःख होय है। तातैं हिंसादिकपापनितैं विरक्त होना ही जीवका कल्याण है। यहां कोऊ कहै कोमल अंगकी धारक स्त्रीनिके अंगके स्पर्शनतैं रतिसुख उपजता देखिये है दुःखरूप कैसैं कह्या ताका उत्तर—इंद्रियनिका विषयनितैं उपज्या सुख नाहीं है भ्रांतितैं सुखरूप दीखै है पहली विषयनिकी चाहरूप महावेदना उपजै है वेदना उपजै तब ताकै दूरि करनेकौं चाहै जैसैं देहमै चाम मांस रुधिर है ते जब विकारतैं कलुषपणानैं प्राप्त होजांय तब खाजि उत्कटताकूं प्राप्त होइ तब नखनितै ठीकरीतैं पत्थरतै अपना शरीरकूं खुजावै है। गात्रकूं छेदने रगडनेतैं रुधिरकरि लिप्त हुआ हू अत्यंत खुजाय करि दुःख-हीकूं सुख मानै है तैसैं मैथुनका सेवनवारा हू मोहतैं दुःखहीकूं सुख मानै है तथा मनुष्य तिर्यंच असुर सुरेंद्रादिक समस्त ही जीव अपने देहकी साथि उपजी इंद्रियां तिनकरि उपज्या जो विषयनिकी चाहरूप आताप ताका दुःख सहनेकूं असमर्थ भया महा निंद्य विषयनिमैं अति लालसा करि झंपापात लेवै

है। अग्निकरि तप्तायमान लोहेका गोलाकी ज्यों इंद्रियनिका ताप करि तप्तायमान जो आत्मा ताके विषयनिमैं अति तृष्णातैं उपज्या अति दुःखरूप वेगके सहनेकूं असमर्थ भया विषयनिमैं पडे है। जैसैं कोऊ पुरुष च्यारों तरफ अग्निकी ज्वालातैं बलता अग्निके आतापकूं नाहीं सहि सकता विष्ठाका भर्‍या महा दुर्गंध अति ऊंडा खाडामैं जाय पडै है तिस विष्ठामैं मस्तकपर्यंत डूबि ताकूं ही तापरहित सुखमानि मरण करै है। तैसैं ही संसारी जीव स्पर्शन इंद्रियनिका विषयकी चाहरूप आतापके सहनेकूं असमर्थ हुवा स्त्रीनिका दुर्गंध मलीन देहमैं डूबि कामकी आतापरहित सुख मानता अति तृष्णातैं उपज्या तीव्र दुःखकूं भोगता मरण करि संसारमैं नष्ट होजाय है।

तथा इस जीवकै ये इंद्रियां तो आतापदुःख करनेवाली महा व्याधि हैं अर ये विषय हैं ते किंचित् काल दाहकी उपशमताका कारण विपरीत अपथ्य औषध हैं। जिनकरि विषयनिकी चाहरूप दाह बधता चल्या जाय है घटै नाहीं है भ्रमतैं इलाज मानै है जिनकै इंद्रियां जीवती तिष्ठै हैं तिनकै स्वाभाविक ही दुःख है, दुःख नाहीं होय तो विषयनिमैं उछालि उछालि कैसैं पडैं सो देखिये ही है कपटकी हथिनीका शरीरका स्पर्शके अर्थि वनका हस्ती स्पर्शन इंद्रियकी आताप करि खाडामैं पडि घोर बंधनकूं भोगै है। बहुरि जलका चंचल मछली रसना इंद्रियके वासि होय धीवर करि पसार्‍या कांटामैं फसिकारि प्राणरहित होय है। घ्राण इंद्रियका आतापका मार्‍या भ्रमर है सो संकोचके सन्मुख कमलका गंधकूं ग्रहण करता कमलमैं प्राणरहित होय है। नेत्रइंद्रियजनित संतापकूं नाहीं सहि सकता पतंग जीवरूपका लोभी दीपककी ज्वालामें भस्म होय है। कर्णइंद्रियजनित श्रवण करनेकी तृष्णाका आतापकूं नाहीं सहनेकूं समर्थ ऐसा हिरण सिकारीकरि गाया रागमैं अचेत होय मार्‍या जाय है। ऐसैं दुर्निवार इंद्रियनिकी वेदनाके वश पडे जीव ते निकट ही है मरण जिनमैं ऐसे विषयनिविषै यतन करै हैं। इंद्रियजनित आतापतुल्य त्रैलोक्यमैं आताप नाहीं है जैसैं इंद्रियनिका विषयनिकी चाहका आताप है तैसा आताप अग्निमैं नाहीं है

शस्त्रका नाहीं हैं विषका नाहीं है इंद्रियनिका आताप सहनेकूं असमर्थ भये विषयनिके अर्थि अग्निमैं बलैं हैं शस्त्रनिके सन्मुख होय मरैं हैं विषभक्षण करैं है धर्मकूं लोपैं हैं माता पिता गुरु उपाध्यायकूं विषयनिका रोकनेवाला जाणि मारि डारैं हैं। इस संसारमैं इंद्रियनितैं केवल दुःखही है जिनकैं इंद्रियरहित अतींद्रिय केवलज्ञान है तिनहीके निराकुलता लिये ज्ञानानन्द सुख है यातैं जे इंद्रियांके आधीन हैं ताकैं स्वाभाविक दुःखही है जो स्वाभाविक दुःख नाहीं होय तो विषयनिमैं प्रवृत्ति कैसैं करे जाकै शीतज्वर मिटि गया सो अग्नितैं तापना नाहीं चाहैगा जाकै दाहज्वर मिटिगया सो कांज्याका सींचना नाहीं चाहैगा जाकैं नेत्ररोग मिटिगया सो खपरच्या अंजनादिक नेत्रनिमैं डारचा नाहीं चाहैगा जाकै कर्णका शूल मिटि गया सो कर्णमैं बकराका मूत्रादिक नाहीं डारैगा जाकैं व्रणघाव मिटिगया सो मालिम पट्टी नाहीं करैगा तैसे हू जाके इंद्रियजनित वेदना नाहीं ताके विषयनिमैं प्रवृत्ति कदाचित् नाहीं होयगी क्षुधावेदना विना भोजन कौन करै तृषावेदना विना जल कौन पीवै गरमीकी बाधा विना शीतल पवन कौन चाहै शीतकी बाधा विना रुईकरिभरच्या वस्त्र तथा रोमका वस्त्र कौन ओढै। तातैं ए समस्त विषय वेदनाके इलाजके हैं इनि विषयनितैं किंचित् काल वेदना घटि जाय ताकू अज्ञानी सुख मानैं हैं सो सुख वास्तवमैं सुख नाहीं है सुख तो यो है जहां वेदना नाहीं उपजै है अनाकुलतालक्षण स्वाधीन अनन्त ज्ञान है सो ही सुख है अन्य नाहीं है ऐसैं निश्चय जानहु। ऐसैं हिंसादिकनिकूं दुःखरूप ही चिंतवन करनेकी भावना भावनो योग्य है। अब श्रावककूं मैत्र्यादिक च्यारि भावना भावने योग्य हैं तिनकूं कहै हैं—एकेंद्रियादिक समस्त प्राणीविषै मैत्रीभावना भावै जो कोऊ प्राणीनिकै दुःखकी उत्पत्ति मति होहु ऐसा अभिलाष रखना सो मैत्री भावना है। अर जे सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तप इत्यादिकनिकरि अधिक होय तिनमैं प्रमोद भावना करना। प्रमोद नाम हर्षका आनंदका है सो गुणानिकरि अधिककूं देखि परिणाममैं ऐसा हर्ष उपजै जैसे जन्म दरिद्री निधानकूं पाय हर्ष करै। गुणवंतनिकूं देखत प्रमाण हर्षका

रोमांच होना तथा मुखकी प्रसन्नता करि नेत्रनिका प्रफुल्लित होना हृदयमें आल्हादन स्तुतिभाषण नामकीर्तनादि करि अंतर्गत भक्तिका प्रगट करना सो प्रमोद भावना है। बहुरि असातावेदनीकर्मका उदयकरि रोग दारिद्राादिकरि पीडित जे क्लेशसहित प्राणी तथा इंद्रियनिकरि विकल आंधा बाहिरा लूला तथा अनाथ विदेशी तथा अति वृद्ध बाल तथा विधवा इत्यादिक दुःखित प्राणीनिके दुःख मेटनेका अभिप्राय सो कारुण्य भावना है। बहुरि जे धर्मरहित तीव्रकषायी हठग्राही उपदेश देनेके अयोग्य विपरीतज्ञानी धर्मद्रोही दुष्ट अभिप्रायी निर्दयी तिनविषै रागद्वेषका अभावरूप माध्यस्थ भावना करना। भावार्थ—समस्त प्राणीनिके दुःखका अभाव चाहना सो मैत्री भावना है। बहुरि गुणनिकरि अधिक होय तिन पुरुषनिकूं देखि करि श्रवण करि महान् हर्षका उपजना सो प्रमोद भावना है। दुःखित देखि उपकार बुद्धिका उपजना सो कारुण्य भावना है बहुरि हठग्राही निर्दयी अभिमानीनिमैं रागद्वेषरहित रहना सो माध्यस्थ भावना है। ऐसैं धर्मके धारक श्रावकनिकूं मैत्र्यादि च्यारि भावना भावना योग्य हैं। बहुरि गृहस्थनिकूं जगतका स्वभाव अर कायका स्वभाव हू चिंतवन करना योग्य है जगतका स्वभाव चिंतवन करनेतैं संसार परिभ्रमणका भय उपजै है अर देहका स्वरूप चिंतवन करनेतैं रागभावका अभाव होय है। यो जगत कहिये लोक है सो अनादि निधन है अर्द्धमृदंग ऊपरि एक मृदंग धरिये ऐसा ड्योढ मृदंगकासा आकार है चौदह राजू ऊंचा है दक्षिण उत्तर सर्वत्र सात राजू चौडा है अर पूर्व पश्चिम नीचै सात राजू है ऊपरि क्रमतैं घटता-घटता सात राजू ऊंचा जाय एक राजू चौडा रह्या है फेरि उपरि क्रमतैं बधता बधता साढा तीन राजू ऊंचा गया तहां पांच राजू चौडा है फिर क्रमतैं घट्या है सो साढा तीन राजू ऊंचा गया लोकका अंतमैं क राजू चौडा है ऐसे पूर्व पश्चिम क्रमतैं घटती बढती उंचाई जाननी। ऐसे आकारका धारक लोकका क राजू चौडा एकराजू लंबा एक राजू ऊंचा विभाग कल्पना करिये तो तीनसैंतियालीस खंड होय हैं स लोकरूप क्षेत्रमें अनंतानंतकाल परिभ्रमणकरते व्यतीत भयो सो ऐसा कोऊ पुद्गल नाहीं रह्या जो

शरीरादिकरूप नाहीं धारण किया अर तीनसैतियालीस राजू प्रमाण क्षेत्रमें ऐसा कोऊ एकप्रदेश हू बाकी नाहीं रह्या जहां अनंतानंतवार इस जीवने जन्म नाहीं धरया अर मरण नाहीं किया। अर उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी कालका वीस कोडाकोडी सागरमें ऐसा कोऊ एक कालका समय हू नाहीं रह्या जिसमें यो जीव जन्ममरण नाहीं किया। अर नरक तिर्यंच मनुष्य देव इन चार गतिनिमें जघन्य आयु कूं लेय उत्कृष्ट आयुपर्यंत समयोत्तर ऐसा कोऊ पर्याय बाकी नाहीं रह्या जाकूं अनंतबार नाहीं पाया। बहुरि ज्ञानावरणादिक समस्तकर्मनिकी मिथ्यादृष्टिके बंध होने योग्य जघन्यस्थिति तो अंतःकोटाकोटि सागर परिमाण है अर उत्कृष्ट स्थिति ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इन चार कर्मनिकी तीस कोटाकोटी सागरकी है अर मोहनीयकर्मकी उत्कृष्टस्थिति सत्तर कोटाकोटी सागर प्रमाण है अर नामकर्म अर गोत्रकर्मकी उत्कृष्टस्थिति वीस कोटाकोटी सागर प्रमाण है अर आयुकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति तेतीससागरकी है। सो जघन्य स्थितिकूं आदि लेय समयसमयकरि उत्कृष्टस्थितिवृद्धि पर्यंत जो कर्मनिकी स्थिति है तिन समस्त स्थितिनके एक स्थानकूं असंख्यातलोक प्रमाण कषायनिके स्थान कारण हैं ते कषायनिके एकएक स्थान अनंतबार संसारी जीवकै भये हैं तातैं ऐसा परिभ्रमणरूप जगतमें जीव है ते नानाभेदरूप चतुर्गतिमें परिभ्रमण करता निरंतर दुःख भोगै है। कोउ जीव निश्चल नाहीं है जलका बुदबुदातुल्य जीवन अथिर है अर भोगसंपदा मेघपटलवत् विनाशीक है राज्य धन संपदा इंद्रधनुषवत् क्षणभंगुर है इससंसारमें प्राणी अनंतानंत परिवर्तन करैं हैं ऐसैं संसारका सत्यार्थस्वरूप चिंतवन करनेतैं संसारपरिभ्रमणतैं भय उपजै है। बहुरि कायका चिंतवन करिये है यो मनुष्य शरीर है सो रोगरूपसर्पनिको बिल है अनित्य है दुःखका कारण है अपवित्र निःसार है कोटि यत्न करते करते हू विनसि जाय है यो शरीर धोवते धोवते मैलकूं निरंतर उगलै है सुगंध अत्तर फुलेल लगाते लगाते दुर्गंध बमै है पोषते पोषते बल नाहीं धारै है सुखतैं राखतेराखते हू अपना नाहीं होय है भूषित करतेकरते विडरूप

दिन दिन होय है सुधारतांसुधारतां दिनदिन भयानकता धारै है सुख देतांदेतां दुःखी हुआ जाय है मंत्रते मंत्रते निरंतर रहै है दीक्षारूप होतांहोतां हू साधुनिका मार्गकूं दूषित करै है शिक्षा देतेदेते गुणिनिमें नाहीं रमै है दुःख भोगते भोगते हू कषायनिका उपशमभावकूं प्राप्त नाहीं होय है रोकते रोकते हू पापहीमें प्रवर्तन करै है प्रेरणा करते करते हू धर्मकूं नाहीं धारण करै है मर्दन करते करते हू दिनादिन कठोरकर्कस होता जाय है रूक्ष करते करते आमकूं धारै है तैलादिक रमावते रमावते हू वासकूं प्राप्त होय है चंदनादिकतैं सींचतेसींचते हू पित्तकरि जलै है सोपण करते करते हू कफकूं गलै है पूंछतांपूंछतां कोढादिक रोगतैं मिलै है चामडाकरि बंध्या है तो हू क्षीण होता चल्याजाय है रक्षा करते करते हू कालका मुखमैं प्रवेश करै है। शरीरका ऐसा निंद्य स्वभाव चिंतवन करनेतैं शरीरमैं राग भाव नष्ट होय जाय है यातैं जगतका स्वभाव अर कायका स्वभाव संवेग जो संसारतैं भय अर वैराग्यके अर्थि चिंतवन करना श्रेष्ठ है। बहुरि षोडश कारण भावना हू श्रावकके भावने योग्य हैं षोडशकारण भावनाका फल तीर्थंकरपना है इसहीकरि तीर्थंकरप्रकृतिका बंध अव्रती सम्यग्दृष्टिहूकै होय अर देशव्रतीश्रावकहूकै होय अर प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत हूके होय है सर्वोत्कृष्टपुण्यप्रकृति तीर्थंकर प्रकृति है इसतैं अधिक पुण्यप्रकृति क्यमें नाहीं है। उक्तं च गोमट्टसारे कर्मकांडे—

पढमुवसमिये सम्मे सेसातिये अविरदादिचत्तारि। तित्थयरबंधपारम्भया णरा केवलिदुगंते ॥ ९३ ॥

अर्थ—तीर्थंकरप्रकृतिके बंधका आरम्भ कर्मभूमिका मनुष्य पुरुषलिंगधारीहीकै होय है अन्य तीन तिमैं आरम्भ नाहीं होय अर केवली तथा श्रुतकेवलीके चरणारविंदकै समीपही होय केवली श्रुतकेवली निकटविना तीर्थंकरप्रकृतिका बंधके योग्य भावानकी विशुद्धता नाहीं होय है अर तीर्थंकरप्रकृतिका ध प्रथमोपशमसम्यक्त्वमैं होय तथा शेषत्रिक जो द्वितीयोपशम तथा क्षयोपशम तथा क्षायिक इन रसम्यक्त्वमैं कोऊ एकमैं होय है इस तीर्थंकरप्रकृतिबंधके कारण षोडशकारण भावना हैं ये भावना

समस्तपापका क्षय करनेवाली भावनिके मलकूं विध्वंस करनेवाली श्रवणपठनकरते संसारके बंध छेदनेवाली निरंतर भावनेयोग्य हैं। अब यहां षोडशभावनाकी षोडश जयमाला पढि महान पुण्य उपार्जन करिये है तिनहीका अर्थकूं भावनिकी विशुद्धता अर अशुभभावनिका नाशके अर्थि लिखिए है।

अथ समुच्चयजयमालका अर्थ प्रथमही लिखिए है—हे संसारसमुद्रतैं तारनेवाला, हे कुमतिकूं निवारण करनेवाला, हे तीर्थंकरत्वलब्धिकूं धारण करनेवाला, हे शिव जो निर्वाणका कारण, हे षोडशकारण! मैं तिहारेताईं नमस्कारकरके तेरा स्तवन करूं हूं अर मेरी शक्तिकूं प्रगट करूं हूं। भावार्थ—षोडशकारण भावना जाकै होजाय सो नियमसूं तीर्थंकर होय जाय संसारसमुद्रकूं तिरै ही ऐसा नियम है। बहुरि षोडशकारण भावना जाकै होय ताकै कुगति नाहीं होय केई तो विदेहक्षेत्रनिविषै गृहचारामैं षोडशकारण भावना केवलीके अथवा श्रुतकेवलीके निकट भाय उसी भवमैं तपकल्याण ज्ञानकल्याण निर्वाणकल्याण देवनिकरि पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। अर केई पूर्वजन्ममैं केवली श्रुतकेवलीके निकट भावना भाय सौधर्मस्वर्गकूं आदि लेय सर्वार्थसिद्धि अहमिंद्रपर्यंत उपजिकरि फिर तीर्थंकर होय निर्वाण पावै हैं। केई पूर्वजन्ममैं मिथ्यात्वके परिणाममैं नरकका आयु बन्ध किया फिर केवली श्रुतकेवलीका शरण पाय सम्यक्त्व ग्रहणकरि षोडशकारण भावना भाय नरक जाय नरकतैं निकासि तीर्थंकर होय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। पूर्वजन्ममैं षोडशकारण भावनाकरि तीर्थंकरप्रकृति बांधै है ताकै पंच कल्याणकी महिमा होय है अर जो विदेहनिमैं गृहस्थपनामैं तीर्थंकरप्रकृति बांधै सो उसही भवमैं तप ज्ञान निर्वाण तीन कल्याणनिमैं इन्द्रादिककरि पूजन पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। केई विदेहक्षेत्रनिमैं मुनिके व्रत धर्यां पाछैं केवलीके निकट षोडशकारण भावना भाय उसीभवमैं तीर्थंकर होय ज्ञान निर्वाण कल्याण दोयकल्याणकी पूजाकूं प्राप्त होय हैं। तप कल्याण ताकै पहले ही भया तातैं नाहीं होय है। जाकै तीर्थंकरप्रकृतिका बंध होय जाय सो भवनत्रिक देवनिमैं अन्य मनुष्य तिर्यंचनिमैं भोगभूमिमैं स्त्री नपुंसक एकेन्द्रिय विकल

चतुष्कादि पर्यायनिमैं नाहीं उपजै है अर तीसरी पृथ्वीतैं नीचै नाहीं उपजै है याहीतैं षोडशकारण भावना कुगतिका निवारण करनेवाली है। बहुरि षोडशकारण भावना हुआ पाछैं तीजे भव निर्वाण होय ही तातैं शिवका कारण है अर तीर्थकरत्वऋद्धि षोडशकारणतैंही उपजै है तातैं हे षोडशकारणभावना मैं तनै नमस्कारकरि थारो स्तवन करूं हूं। हे भव्यजीवो इस दुर्लभ मनुष्यजन्ममैं पचीस दोषरहित दर्शन विशुद्धता नाम भावना भावहू। सम्यग्दर्शनके नष्ट करनेवाले दोषानिकूं त्यागना सो ही सम्यग्दर्शनकी उज्वलता है। तीनमूढता, अष्टमद, छह अनायतन शंकादि अष्ट दोष ये सत्यार्थ श्रद्धानकूं मलीनकरनेवाले पचीस दोष हैं तिनका दूरहीतैं त्याग करो। बहुरि चारप्रकारका विनय जैसैं भगवानका परमागममैं कह्या तैसैं दर्शन विनय, ज्ञान विनय, चारित्र विनय, उपचार विनय ये चारप्रकार विनय जिनशासनका मूल भगवान जिनेंद्र कह्या है। जहां चारप्रकार विनय नाहीं है तहां जिनेंद्रधर्मकी प्रवृत्ति ही नाहीं तातैं जिनशासनका मूल विनयरूप ही रहना योग्य है। बहुरि अतीचाररहित शीलकूं पालहू शीलकूं मलीन नाहीं करना सो उज्वलशील मोक्षके मार्गमैं बडा सहाई है जाके उज्वलशील है ताके इंद्रिय विषय कषाय परिग्रहादिक मोक्षमार्गमैं विघ्न नाहीं कर सकै हैं। इस दुर्लभ मनुष्यजन्मविषै क्षणक्षणमैं ज्ञानोपयोगरूप ही रहो सम्यग्ज्ञानविना एकक्षण हू व्यतीत मति करो अन्य जे संकल्प विकल्प संसारमैं डबोवनेवाले हैं दूरहीतैं परित्याग करो। बहुरि धर्मानुराग करि संसार देह भोगनितैं विरागता रूप संवेग भावना मनके मांहि चिंतवन करते रहो जातैं समस्तविषयनिमैं अनुरागका अभाव होय धर्ममैं अर धर्मका फलमैं अनुरागरूप प्रवर्तन दृढ होय। बहुरि अंतरंगमैं आत्माके घातक लोभादिक चार कषायनिका अभाव करि अपनी शक्तिप्रमाण सुपात्रनिके रत्नत्रयगुणमैं अनुराग करि आहारादिक चार प्रकारका दानमैं प्रवृत्ति करो। बहुरि दोयप्रकार अंतरंग बहिरंग परिग्रहमैं आशक्तता छांडि समस्तविषयनिकी इच्छाका अभाव करि अतिशयकरि दुर्धर तपकूं शक्तिप्रमाण अंगीकार करो। बहुरि चित्तके विषै रागादिकदोषनिका

निराकरणकरि परमवीतरागतारूप साधुसमाधि धारण करो। बहुरि संसारके दुःख आपदाका निराकरण करनेवाला वैयावृत्य दशप्रकार करहू। बहुरि अरहंतके गुणानिमैं अनुरागरूप भक्तिकूं धारण करता अरहंतके नामादिकका ध्यान करि अरहंतभक्तिकूं धारण करो। बहुरि पंचप्रकार आचारकूं आप आचरण करावै अर दीक्षा शिक्षा देनेमैं निपुण धर्मके स्थंभ ऐसे आचार्यपरमेष्ठीके गुणानिमैं अनुराग धारना सो आचार्यभक्ति है। बहुरि ज्ञानमैं प्रवृत्ति करावनेवाले निरंतर सम्यग्ज्ञानका पठन आप करैं अन्यशिष्यनिकूं पढावनेमैं उद्यमी चारि अनुयोगविद्याके पारगामी वा अंगपूर्वादि श्रुतके धारक उपाध्याय परमेष्ठीमैं जो बहुभक्ति धारण करना सो बहुश्रुतभक्ति नाम भावना है।

बहुरि जिनशासनका पुष्ट करनेवाला अर संशयादिक अंधकार दूर करनेकूं सूर्यसमान जो भगवानका अनेकांतरूप आगम ताके पठनमैं श्रवणमैं प्रवर्तनमैं चिंतवन भक्तिकरि प्रवर्तन करना सो प्रवचनभक्ति भावना भावहू। बहुरि अवश्य करनेयोग्य षट् आवश्यक हैं ते अशुभकर्मके आस्रवकूं रोकि महान निर्जरा करनेवाले हैं अशरणानिकूं शरण हैं ऐसे आवश्यकनिकूं एकाग्रचित्तकरि धारहु इनकी भावना निरंतर भावहू बहुरि जिनमार्गकी प्रभावनामैं नित्य प्रवर्तन करो जिनमार्गकी प्रभावना धन्यपुरुषनिकरि प्रवर्तै हैं। अनेकपुरुषनिकी वीतरागधर्ममैं प्रवृत्ति अर कुमार्गका अभाव प्रभावना करके ही होय है। बहुरि धर्ममैं धर्मात्मा पुरुषनिमैं तथा धर्मके आयतनमैं परमागमके अनेकांतरूप वाक्यनिमैं परम प्रीति करना सो वात्सल्य भावना है यो वात्सल्य अंग है सो समस्तअंगनिमैं प्रधान है दुर्द्धर मोह तथा मानका नाश करनेवाला है ऐसैं निर्वाणके सुखकी देनेवाली ये षोडशकारण भावनानिकूं जो भव्य स्थिरचित्तकरि भावै है चिंतन करै है जाके आत्मामैं रचिजाय है सो समस्त जीवनिका हितरूप तीर्थंकरपनो पाय पंचमगति जो निर्वाण ताहि प्राप्त होय है। ऐसैं षोडशकारणकी समुच्चयरूप भावना समाप्त करी। अब दर्शनविशुद्धि नाम प्रथम अंगकी भावना वर्णन करिये है। हे भव्यजीव हो जो यो मनुष्यजन्म पाय याकूं सुफल किया

चाहो हो तो सम्यग्दर्शनकी विशुद्धता करहू। यो सम्यग्दर्शन समस्त धर्मका मूल है सम्यक्त्व विना श्रावकधर्म हू नाहीं होय मुनिधर्म हू नाहीं होय सम्यग्दर्शनविना ज्ञान है सो कुज्ञान है चारित्र कुचारित्र है तप है सो कुतप है। सम्यग्दर्शन विना यो जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण किया है अब जो चतुर्गति संसारपरिभ्रमणसूं भयवान हो अर जन्मजरामरणतैं छूट्या चाहो हो अर अनंत अविनाशी सुखमय आतमा कूं इच्छो हो तो अन्य समस्त परद्रव्यानिमैं अभिलषा छांडि सम्यग्दर्शनहीकी उज्जलता करहू। केसीक है दर्शनविशुद्धता निर्वाणके सुखकी कारण है दुर्गतिका निराकरण करनेवाली है विनयसंपन्नतादिक पंद्रहकारणनिका मूलकारण है दर्शनविशुद्धता नाहीं होय तो अन्य पंद्रहभावना नाहीं होय हैं यातैं संसारका दुःखरूप अंधकारके नाश करनेकूं सूर्यसमान है भव्यनिकूं परम शरण है ऐसी दर्शनविशुद्धता नाम भावना भावहु। जैसैं स्वपरद्रव्यका भेदविज्ञान उज्जल होय तैसैं यत्न करहू। यो जीव अनादिकालको मिथ्यात्वनाम कर्मके वशि होय आपका स्वरूपकी अर परकी पहिचान ही नाहीं करी जैसैं पर्यायकर्मके उदयतैं पर्याय पावै तैसी पर्यायकूं ही अपना स्वरूप जानता अपना सत्यार्थरूपका ज्ञानमें अंध होय आपके स्वरूपतैं भ्रष्ट हुआ चतुर्गतिमैं भ्रमण करै है देवकूं जानै नाहीं धर्मकुधर्मकू जानै नाहीं सुगुरु कुगुरुकूं जानै नाहीं। बहुरि पुण्यका पापका, इसलोकका परलोकका, त्यागनेयोग्य ग्रहणकरनेयोग्य, भक्ष्यअभक्ष्यका, सत्संगका कुसंगका, शास्त्रका कुशास्त्रका विचाररहित कर्मका उदयके रसमें एकरूप भया अपना हित अहितकूं नाहीं पहिचानता परद्रव्यानिमैं लालसारूप होय सदाकाल क्लेशित होय रह्या है कोऊ अकस्मात् काललब्धिके प्रभावतैं उत्तमकुलादिकमैं जिनेंद्रधर्म पाया है यातैं वीतरागसर्वज्ञका अनेकांतरूप परमागमके प्रसादतैं प्रमाणनयनिक्षेपनितैं निर्णयकरि परीक्षाका प्रधानी होय वीतरागी सम्यग्ज्ञानी गुरुनिके प्रसादतैं ऐसा निश्चय भया जो एक जाननेवाला ज्ञायकरूप अविनाशी अखंड चेतना लक्षण देहादिक समस्तपरद्रव्यनितैं भिन्न मैं आतमा हूं देह जाति कुल रूप नाम इत्यादिक मोतैं अत्यंत

भिन्न हैं अर राग द्वेष काम क्रोध मद लोभादिक कर्मके उदयतैं उपजे मेरे ज्ञायकस्वभावमैं विकार हैं जैसैं स्फटिकमणि तो आप स्वच्छ श्वेतस्वभाव है तिसमैं डागके संसर्गतैं काला पीला हऱ्या लाल अनेक रंगरूपके दीखै हैं तैसैं मैं आत्मा स्वच्छ ज्ञायकभाव हूं निर्विकार टंकोत्कीर्ण हूं मोहकर्मजनित राग द्वेषादिक यामैं झलकैं हैं ते मेरे रूप नाहीं पर हैं ऐसैं तो अपने स्वरूपका निश्चय हुवा। बहुरि सर्वज्ञ वीतराग परम हितोपदेशक अर क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण राग शोक भय विस्मय राग द्वेष निद्रा स्वेद मद मोह चिंता खेद अरति इन अष्टादशदोषानिका अत्यंत अभाव जाकै भया अर अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुख इत्यादिक अनंत आत्मीक अविनाशीगुण जाकै प्रगट भए सो ही आप्त हमारे वंदन स्तवन पूजन करने योग्य है। अन्य कामी क्रोधी लोभी मोही स्त्रीनिमैं आशक्त शस्त्रादिक ग्रहण किए कर्मके आधीन इंद्रियज्ञानके धारक सर्वज्ञतारहित हैं सो मेरे वंदन स्तवन पूजने योग्य नाहीं। जो चोरनिमैं शिरोमणि अर जारनिमैं शिरोमणि है सो कैसैं आराधने योग्य होय। बहुरि सर्वज्ञवीतरागका उपदेश्या अर प्रत्यक्ष अनुमानादिकरि जामैं सर्वथा बाधा नाहीं आवै अर समस्त छहकायके जीवनिकी हिंसारहित धर्मका उपदेशक आत्माका उद्धारके अनेकांतरूप वस्तुकूं साक्षात् प्रगट करनेवाला ही आगम है सो पढने पढावने श्रवण करने श्रद्धान करने बंदने योग्य है। अर जे रागी द्वेषीनिकरि प्ररूपणकिये अर विषयानुराग अर कषायके बधावनेवारे जिनमैं हिंसाके करनेका उपदेश है ऐसे प्रत्यक्ष अनुमानकरि बाधित एकांतरूप शास्त्र श्रवणपढनेयोग्य नाहीं वंदनायोग्य नाहीं है। बहुरि विषयनिकी बांछाका अर कषायका अर आरम्भपरिग्रहका जाकै अत्यंत अभाव भया, केवल आत्माकी उज्जलता करनेमैं उद्यमी, ध्यान स्वाध्यायमैं अत्यंत लीन, स्वाधीन कर्मबंधजनित दुःख सुखमैं साम्यभावके धारक, जीवन मरण लाभ अलाभ स्तवननिंदनेमैं रागद्वेषरहित उपसर्गपरीषहनिके सहनेमैं अकम्प धैर्यके धारक परमनिरग्रंथ दिगम्बर गुरु ही बंदन स्तवन करनेयोग्य हैं अन्य आरम्भी कषायी विषयानुरागी कुगुरु कदाचित् स्तवन बंदन करने

योग्य नाहीं है। बहुरि जीवदया ही धर्म है हिंसा कदाचित् धर्म नाहीं जो कदाचित् सूर्यका उदय पश्चिमदिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल होजाय अर सर्पका मुखमैं अमृत होजाय अर मेरु चालि जाय अर पृथ्वी उलटपलट होजाय तो हू हिंसामैं तो धर्म कदाचित् नाहीं होय। ऐसा दृढश्रद्धान सम्यग्दृष्टिके होय है जाकै अपने आत्माके अनुभवनमैं अर सर्वज्ञ वीतरागरूप आप्तके स्वरूपमैं अर निरग्रंथ विषयकषाय रहित गुरुमैं अर अनेकांतस्वरूप आगममैं अर दयारूप धर्ममैं शंकाका अभाव सो निःशंकित अंग है सम्यग्दृष्टि यामैं कदाचित शंका नाहीं करै है। बहुरि सम्यग्दृष्टि है सो धर्मसेवनकरि विषयनिकी वांछा नाहीं करै है जातैं सम्यग्दृष्टिकूं इंद्र अहमिंद्रलोककेविषै हू महान वेदनारूप विनाशीक पापका बीज दीखै है अर धर्मका फल अनंत अविनाशी स्वाधीन सुखकरियुक्त मोक्ष दीखै है तातैं जैसैं बहुमूल्यरत्न छांडि काचखण्डकूं जोंहरी नाहीं ग्रहण करै है तैसैं जाकूं सांचा आत्मीक अविनाशी बाधारहित सुख दीख्या सो झूठा बाधासहित विषयनिका सुखमैं कैसैं वांछा करै तातैं सम्यग्दृष्टि वांछारहित ही होय है। अर जो अव्रती सम्यग्दृष्टिके वर्तमानकालमैं आजीविकादिकनिमैं तथा स्थानादिकपरिग्रहमैं वेदनाके अभावमैं जो वांछा होय है सो वर्तमानकालकी वेदना सहनेकी असामर्थ्यतैं वेदनाका इलाजमात्र चाहै है। जैसैं रोगी कडवी औषधितैं अतिविरक्त होय तो हू वेदनाका दुःख नाहीं सह्या जाय तातैं कडवी औषधि वमन विरेचनादिकका कारण हू ग्रहण करै है दुर्गंध तैलादिक हू लगावै है अंतरंगमैं औषधितैं अनुराग नाहीं है तैसैं सम्यग्दृष्टि निर्वांछक है तो हू वर्तमानके दुःख मेटनेकूं योग्य न्यायके विषयनिकी वांछा करै है। अर जिनकै प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानावरणकषायका अभाव भया ते अपना सो खंड होय तो हू विषयवांछा नाहीं करै है यातैं सम्यग्दृष्टिके निकांक्षितगुण होय ही। बहुरि सम्यग्दृष्टि अशुभकर्मके उदयतैं प्राप्त भई अशुभ सामग्री तिसमैं ग्लानि नाहीं करै परिणाम नाहीं बिगाडै है मैं पूर्व जैसा कर्म बांध्या तैसा भोजन पान स्त्री पुत्र दरिद्र संपदा आपदाकूं प्राप्त भया हूं तथा अन्य किसीकूं रोगी दरिद्री हीन

नीच मलीन देखि परिणाम नाहीं विगाडे है पापकी सामग्री जानि कलुषता नाहीं करै है तथा मलमूत्र कर्दमादिद्रव्यकूं देखि अर भयंकर स्मशान बनादि क्षेत्रकूं देखि भयरूप दुःखदायी कालकूं देखि दुष्टपना कडवापना इत्यादिक वस्तुका स्वभावकूं देखि अपना परिणाममैं क्लेशित नाहीं होना सो निर्विचिकित्सित अंग सम्यग्दृष्टिके होय ही है। बहुरि खोटे शास्त्रनितैं तथा व्यंतरादिकदेवनिकृत विक्रियातैं तथा मणि मन्त्र औषधादिकनिके प्रभावतैं अनेक वस्तुनिके विपरीत स्वभाव देखि सत्यार्थधर्मतैं चलायमान नाहीं होना सो सम्यग्दर्शनका अमूढदृष्टि गुण है सो सम्यग्दृष्टिके होय ही है। बहुरि सम्यग्दृष्टि अन्य जीवनिके अज्ञानतैं अशक्ततातैं लगेहुए दोष देखि आच्छादन करै है जो संसारीजीव ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय कर्मके वशि होय अपना स्वभाव भूल रहे हैं कर्मके आधीन असत्य परधनहरण कुशीलादि पापनिमैं प्रवृत्ति करै हैं जे पापनितैं दूरि वर्तै हैं ते धन्य हैं। बहुरि कोऊ धर्मात्मापुरुष (नामीपुरुष) पापके उदयतैं चूकि जाय ताकूं देखि ऐसा विचारै जो यो दोष प्रगट होसी तो अन्यधर्मात्मा अर जिनधर्मकी बडी निंदा होसी या जानि दोष आच्छादन करै अर अपनागुण होय ताकी प्रशंसाका इच्छुक नाहीं होय है सो यो उपगूहनगुण सम्यक्त्वको है इनगुणानितैं पवित्र उज्वल दर्शनविशुद्धता नाम भावना होय है। बहुरि जो धर्मसहित पुरुषका परिणाम कदाचित रोगकी वेदनाकरि धर्मतैं चलिजाय तथा दारिद्रकरि चलि जाय तथा उपसर्ग परीसहनिकरि चलिजाय तथा असहायताकरि तथा आहारपानका निरोधकरि परिणाम धर्मतैं शिथिल होजाय ताकूं उपदेशकरि धर्ममैं स्थम्भन करै। भो ज्ञानी भो धर्मके धारक तुम सचेत होहू कैसैं कायरता धारण करि धर्ममैं सिथिल भए हो जो रोगकी वेदनासे धर्मतैं चिगो हो ज्ञानी होय कैसैं भूलो हो यो असातावेदनीकर्म अपना अवसर पाय उदयमैं आयगया है अब जो कायर होय दीनताकरि रुदनविलापादि करते भोगोगे तो कर्म नाहीं छांडैगा कर्मके दया नाहीं होय है और धीरपनातैं भोगोगे तो कर्म नाहीं छांडैगा कोऊ देव दानव मन्त्र तन्त्र औषधादिक तथा स्त्री पुत्र मित्र बांधव

सेवक सुभटादिक उदयमैं आयाकर्म हरनेकूं समर्थ है नाहीं यो तुम अच्छीतरह समझो हो अब इस वेदनामैं कायर होय अपना धर्म अर यश अर परलोक इनकूं कैसैं विगाडौ हो अर इनकूं विगाडि स्वछंद-चेष्टा विलापादि करनेतैं वेदना नाहीं घटै है ज्यों ज्यों कायर होवोगे त्यों त्यों वेदना दुःख बढैगा। तातैं अब साहस धारणकरि परमधर्मका शरण ग्रहण करो। संसारतैं नरकके तथा तिर्यंचनिके क्षुधा तृषा रोग संताप ताडन मारण शीत उष्णादिक घोर दुःख असंख्यात कालपर्यंत अनेक बार अनंतभव धारणकरि भोगे ये तुम्हारे कहा दुःख है अल्पकालमैं निर्जरैगा अर रोग वेदना देहकूं मारैगा तुम्हारा चेतनस्वरूप आत्माकूं नाहीं मारैगा अर देहका मारना अवश्य होयगा जो देह धारण किया ताकै अवश्यंभावी मरण है सो अब सचेत होहू यो कर्मका जीतनाको अवसर है अब भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण ग्रहणकरि अपना अजर अमर अखंड ज्ञाता दृष्टा स्वरूपका ग्रहण करो ऐसा अवसर फेरि मिलना दुर्लभ है इत्यादिक धर्मका उपदेश देय धर्ममैं दृढ करना अर अनित्य असरणादि भावनाका ग्रहण शीघ्र करावना त्याग व्रतादिक छांडि दिए होंय तो फिर ग्रहण करावना तथा शरीरका मर्दनादिक करि दुःख दूरि करना अर कोऊ टहल करनेवाला नाहीं होय तो आप टहल करना अन्य साधर्मीनका मेल मिलादेना आहार पान औषधादि करि स्थितिकरण करना तथा मलमूत्रकफादिक होय तो धोवना पूंछना इत्यादिककरि स्थिर करना तथा दारिद्रकरि चलायमान होय तिनका भोजनपानादिककरि आजीवकादिक लगाय देनेकरि उपसर्ग परीसहादिक दूर करनेकरि सत्यार्थधर्ममैं स्थापन करना सो स्थितिकरण अंग सम्यग्दृष्टिके होय है। वहुरि वात्सल्यनामगुण सम्यग्दृष्टिके होय है संसारीजीवनिकी प्रीति तो अपने स्त्री पुत्रादिकनिमैं तथा इंद्रियनिके विषयभोगनिमैं धनके उपार्जनमैं बहुत रहै है जाकै स्त्री पुत्र धन परिग्रह विषयादिकनिकूं संसारपरिभ्रमणके कारण जानि अंतरंगमैं विरागता धारणकरि जाकी धर्मात्मामें रत्नत्रयके धारक मुनि अर्जिका श्रावक श्राविकामैं वा धर्मके आयतननिमैं अत्यंत प्रीति होय ताकै सम्यग्दर्शनका वात्सल्यअंग

होय है। बहुरि जो अपने मनकरि वचनकरि कायकरि धनकरि दानकरि व्रतकरि तपकरि भक्तिकरि रत्नत्रयका प्रभाव प्रगट करै सो मार्गप्रभावना अंग है याका विशेष प्रभावनाअंगकी भावनामैं वर्णन करियेगा। ऐसैं सम्यग्दर्शनके अष्ट अंग धारण करनेतैं इनगुणनिका प्रतिपक्षी शंकाकांक्षादिक दोषनिका अभावकरि दर्शनविशुद्धता होय है।

बहुरि लोकमूढता देवमूढता गुरुमूढताका परिणामनिकूं छांडि श्रद्धानकूं उज्जल करना। अब लोकमूढताका स्वरूप ऐसा है जो मृतकनिका हाड नखादिक गंगामैं पहुचानेमैं सुगति भई मानै हैं तथा गंगाजलकूं उत्तम मानना तथा गंगास्नानमैं अन्य नदीके स्नानमैं नदीकी लहर लेनेमैं धर्म मानना तथा मृतक भर्ताके साथ जीवती स्त्री तथा दासी अग्निमें दग्ध होजाय ताकूं सती मानि पूजना मस्याकूं पितरमानि पूजना पितरानिकूं पातडीमें स्थापन करि पहरना तथा सूर्य चंद्रमा मंगलादिक ग्रहनिकूं सुवर्णरूपाका बनाय गलेमैं पहरना तथा ग्रहनिका दोष दूरि करनेकूं दानदेना संक्रांति व्यतिपात सोमोतीअमावसी मानि दान करना सूर्यचंद्रमाका ग्रहणका निमित्ततैं स्नान करना डाभकूं शुद्ध मानना हस्तीके दंतनिकूं शुद्ध मानना कूवा पूजना सूर्यचंद्रमाकूं अर्घ देना देहली पूजना मूशलकूं पूजना छींककूं पूजना विनायक नामकरि गणेश पूजना तथा दीपककी जोतिकूं पूजना तथा देवताकी बोलारी बोलना जडूला चोटी रखना देवताकी भेटके करारतैं अपना संतानादिकका जीवित मानना संतानकूं देवताका दिया मानना तथा अपने लाभ वास्ते तथा कार्य सिद्धि वास्तै ऐसी वीनती करै जो मेरे एता लाभ होजाय तथा संतानका रोग मिटि जाय तथा संतान होजाय वा वैरीका नाश हो जाय तो मैं आपके छत्र चढाऊं मकान बनाऊं इतना धन भेट करूं ऐसा करार करै है देहताकूं सौंक (रिसवत) देय कार्यकी सिद्धिके वास्ते बांछै है। तथा रात जगा करना कुलदेवकूं पूजना शीतलाकूं पूजना लक्ष्मीकूं पूजना सोनारूपाकूं पूजना दवात पूजना पशुनिकूं पूजना अन्नकूं जलकूं पूजना शस्त्रकूं वृक्षकूं पूजना अग्निकूं देव मानि

पूजना सो लोकमूढता मिथ्यादर्शनका प्रभावतैं श्रद्धानके विपरीतपना है सो त्यागने योग्य है । बहुरि देवकुदेवका विचार रहित होय कामी क्रोधी शस्त्रधारीहूमैं ईश्वरपनाकी बुद्धि करणा जो यह भगवान परमेश्वर हैं समस्त रचना याकी है ये ही कर्ता हैं हर्ता हैं जो कुछ होय है सो ईश्वरको कियो होय है समस्त आछी बुरी लोकानिसूं ईश्वर करावै है ईश्वरका किया विना कछू ही नाहीं होय है सब ईश्वरकी इच्छा के आधीन है शुभकर्म अशुभकर्म ईश्वरकी प्रेरणा विना नाहीं होय है इत्यादिक परिणाम मिथ्यादर्शन के उदयकरि होय सो देवमूढता है । बहुरि पाखंडी हीण आचारके धारक तथा परिग्रही लोभी विषयनि का लोलुपीनिकूं करामाती मानना वाका वचन सिद्ध मानना तथा ये प्रसन्न हो जाय तो हमारा वांछित सिद्ध होजाय ये तपस्वी हैं पूज्य हैं महापुरुष हैं पुराण हैं इत्यादिक विपरीत श्रद्धान करै सो गुरुमूढता है तातैं जिनके परिणामनितैं इन तीनमूढताका लेशमात्र हू नाहीं होय ताके दर्शनकी विशुद्धता होय है । बहुरि छह अनायतनका त्यागकरि दर्शनविशुद्धता होय है कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर इनके सेवन करने वाले ये धर्मके आयतन कहिये स्थान नाहीं तातैं ये अनआयतन हैं । भावार्थ—जो रागी द्वेषी कामी क्रोधी लोभी शस्त्रादिक सहित मिथ्यात्वकारिसहित हैं तिनमैं सम्यक्धर्म नाहीं पाईये तातैं कुदेव हैं ते अनायतन हैं। बहुरि पंचइंद्रियनिके विषयनिके लोलुपी परिग्रहके धारी आरंभ करनेवाले ऐसे भेषधारी ते गुरु नाहीं धर्म-हीन हैं तातैं अनायतन हैं। बहुरि हिंसाके आरंभकी प्रेरणा करनेवाला रागद्वेषकामादिकदोषनिका बधावने-वाला सर्वथा एकांतका प्ररूपक शास्त्र हैं ते कुशास्त्र धर्मरहित हैं तातैं अनायतन हैं । बहुरि देवी दिहाडी क्षेत्रपालादिक देवकूं वंदनेवाले अनायतन हैं । बहुरि कुगुरुनिके सेवक हैं भक्तितैं धर्मतैं रहित हैं ते अना-यतन हैं । बहुरि मिथ्याशास्त्रके पढनेवाले अर इनकी सेवा भक्ति करनेवाले एकांती धर्मका स्थान नाहीं तातैं अनायतन हैं ऐसे कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर इनकी सेवा भक्ति करनेवाले इनछहूनिमैं सम्यक्धर्म नाहीं है ऐसा दृढश्रद्धानकरि दर्शनविशुद्धता होय है बहुरि जातिमद कुलमद ऐश्वर्यमद रूपमद शास्त्रका

मद तपकामद बलका मद विज्ञानमद इन अष्ट मदनिका जाकै अत्यंत अभाव होय है ताकै दर्शन विशुद्धता होय है सम्यग्दृष्टिके सांचा विचार ऐसा है हे आत्मन् या उच्च जाति है सो तुम्हारा स्वभाव नाहीं यह तो कर्मकी परिणमनि है परकृत है विनाशिक है कर्मनिके आधीन है। संसारमैं अनेकबार अनेकजाति पाई है माताकी पक्षकूं जाति कहिये है जीव अनेकबार चांडालीके तथा भीलनीके तथा म्लेक्षणीके चमारीके धोबडिके नायणिके डूमणीके नटनीके वेश्याके दासीके कलालीके धीवरी इत्यादि मनुष्यनिके गर्भमैं उपज्या है तथा सूकरी कूकरी गर्दभी स्यालणी कागली इत्यादिक तिर्यंचनिके गर्भमें अनंतबार उपजि उपजि मर्या है अनंतबार नीचजाति पावै तब एकबार उच्चजाति पावै फिर अनंतबार नीचजातिपावै तब एकबार उच्चजाति पावै ऐसे उच्चजाति भी अनंतबार पाई तो हू संसारपरिभ्रमण ही किया अर ऐसैं ही पिताकी पक्षका कूल हू ऊंचा नीचा अनंतबार प्राप्त भया संसारमैं जातिका कुलका मद कैसैं करियै है स्वर्गका महर्द्धिकदेव मरिकरि एकेन्द्री आय उपजै है तथा स्वानादिक निंद्य तिर्यंचनिमैं उपजै है तथा उत्तमकुलका धारक होय सो चांडालमैं जाय उपजै तातैं जातिकुलमैं अहंकार करना मिथ्यादर्शन है। हे आत्मन्! तुम्हारा जातिकुल तो सिद्धनिके समान है तुम आपाभूलि माताका रुधिर पिताका वीर्यतैं उपजे जातिकुलमैं मिथ्या आपा धरि फेर हू अनंतकाल निगोदवास मतिकरो वीतरागका उपदेश ग्रहण किया है तो इस देहकी जातिकूं हू संयम शील दया सत्यवचनादिकरि सफलकरो जो मैं उत्तम जातिकुल पाय नीच कर्मनिकेसे हिंसा असत्य परधन हरण कुशीलसेवन अभक्ष्यभक्षणादि अयोग्य आचरण कैसे करूं नाहीं करूं ऐसा अहंकार करना योग्य है सम्यग्दृष्टिके कर्मकृत पुद्गलपर्यायमैं कदाचित आत्मबुद्धि नाहीं होय है। बहुरि ऐश्वर्य पाय ताका मद कैसे करिये यो ऐश्वर्य तो आपा भुलाय बहु आरंभ राग द्वेषादिकमैं प्रवृत्ति कराय चतुर्गतिमैं परिभ्रमणका कारण है और निर्ग्रंथपना तीनलोकमें ध्यावने योग्य है पूज्य है अर यो ऐश्वर्य क्षणभंगुर है बडे २ इंद्र अहमिंद्रनिका पतनसहित है बलभद्र नारायणनिका

ऐश्वय क्षणमात्रमें नष्ट होयगया अन्यजीवानिका ऐश्वर्य केताक है ऐसें जानि ऐश्वर्य दोयदिन पाया है तो दुःखित जिवनिका उपकार करो विनयवान होय दान देहु परमातमस्वरूप अपना ऐश्वर्य जानि इस कर्मकृत ऐश्वर्यमें विरक्त होना योग्य है। बहुरि रूपका मद मति करो यो विनाशीक पुद्गलको रूप आत्माको स्वरूप नाहीं विनाशीक है क्षणक्षणमें नष्ट होय है इस रूपकूं रोग वियोग दरिद्र जरा महाकुरूप करैगा ऐसा हाडचामका रूपमें रागी होय मद करना बडा अनर्थ है इस आत्माका रूप तो केवलज्ञान है जिसमें लोक अलोक सर्व प्रतिबिम्बित होय है तातें चामडाका रूपमें आपा छांडि अपना अविनाशी ज्ञानस्वरूपमें आपा धारहू। बहुरि श्रुतका गर्वकूं छांडहू आत्मज्ञानरहितका श्रुत निष्फल है जातें एकादशअंगका ज्ञानसहित होय करके हूं अभव्य संसारहीमें परिभ्रमण करै है सम्यग्दर्शन विना अनेक व्याकरण छंद अलंकार काव्य कोषादिक पढना विपरीत धर्ममें अभिमान लोभमें प्रवर्तन कराय संसाररूप अंधकूपमें डुबोवनेके अर्थि जानहू। और इस इंद्रियजनित ज्ञानका कहा गर्व है एकक्षणमें वातपित्तकफादिकके घटनेबधनेतें ज्ञान चलायमान होयजाय है अर इंद्रियजनित ज्ञान तो इंद्रियनिका विनाशकी साथ ही विनशैगा अर मिथ्याज्ञान तो ज्यों बंधैगा त्यों खोटे काव्य खोटी टीकादिकनिकी रचनामें प्रवर्तन कराय अनेक जीवनिकूं दुराचारमें प्रवर्तन कराय डबोयदेगा तातें श्रुतका मद छांडहु ज्ञान पाय आत्मविशुद्धता करहू ज्ञान पाय अज्ञानी कैसे आचरणकरि संसारमें भ्रमण करना योग्य नाहीं। बहुरि सम्यक्त्व विना मिथ्यादृष्टिका तप निष्फल है तपको मद करो हो जो मैं बडा तपस्वी हूं सो मदके प्रभावतें बुद्धि नष्टकरिकैं यो तप दुर्गतिमें परिभ्रमण करावैगा तातें तपका गर्व करना महा अनर्थ जानि भव्यनिकूं तपका गर्व करना योग्य नाहीं है। बहुरि जिस बलकरि कर्मरूप वैरीकूं जीतिये तथा कामक्रोधलोभकूं जीतिये सो बल तो प्रसंशायोग्य है और देहका बल यौवनका बल ऐश्वर्यका बल पाय अन्य निर्बल अनाथ जीवनिकूं मारिलेना धन खोसिलेना जमी जीविका खोसिलेना कुशील सेवन करना दुराचारमें

प्रवर्तन करना सो बल तो नर्कके घोरदुःख असंख्यातकाल भोगाय तिर्यंचगतिमैं मारणताडनलादन करि तथा दुर्वचन तथा क्षुधा तृषादिकानिके दुःख अनेक पर्यायनिमैं भुगताय एकेन्द्रियनिमैं समस्तबलरहित असमर्थ करैगा। तातैं बलका मद छांडि क्षमा ग्रहण करि उत्तमतपमैं प्रवर्तन करना योग्य है।

बहुरि जे विज्ञान कहिये अनेक हस्तकला अनेक वचनकला अनेक मनके विकल्प जिनकरि यो आत्मा चतुर्गतिरूप संसारमैं परिभ्रमणकरि दुःख भोगे है ते समस्त कुज्ञान हैं। इस संसारमैं खोटीकला चतुरताका बडा गर्व है जो हमारा सामर्थ्य ऐसा है कहो तो सांचेकूं झूंठा करिदेवैं झूंठेकूं सांचा करिदेवैं कलंकरहितकूं कलंकसहित करिदेवैं शीलवंतनिकूं दूषित करिदेवैं अदण्डनिकूं दंडदेने योग्य करिदेवैं बहुत दिननिका संचय किया द्रव्यकूं कढा लेवैं तथा धर्म छुटाय अन्यथा श्रद्धान कराय देवैं तथा प्राणीनिके वशीकरण तथा अनेक जीवनिका मारण तथा अनेक जलमैं गमन करनेके, स्थलमैं गमन करनेके, आकाशमैं गमन करनेके, अनेक यंत्र बनायदेवैं इत्यादिक कलाचातुर्य हैं ते सब कुज्ञान हैं याका गर्व नर्कके घोरदुःखका कारण है। कलाचातुर्य सम्यक् तो सो है जातैं अपना आत्माकूं विषयकषायके उलझाडतैं सुलझावना तथा लोकनिकूं हिंसारहित सत्यमार्गमैं प्रवर्तावना है, ऐसैं सत्यार्थवस्तुका स्वरूप समझि जाति, कुल, धन, ऐश्वर्य, रूप, विज्ञानादिककूं, कर्मके आधीन जानि इनका मद छांडि दर्शनविशुद्धता करो। ऐसैं तीन मूढता अर आठ शंकादिकदोष अर षट्अनायतन अर अष्टमद ऐसैं पचीस दोषका परिहार करि सम्यग्दर्शनकी उज्जलता होय है ऐसैं जानि दर्शनविशुद्ध भावना ही निरंतर चिंतवनकरि अर याहीकूं ध्यान गोचरकरि स्तुतिसहित उज्जल अर्घ उतारण करै सो मुक्तिस्त्रीसूं संबंध करै है। ऐसैं दर्शनविशुद्धता नाम प्रथम भावना वर्णन करी ॥ १ ॥

अब आगैं विनयसंपन्नता नाम दूजी भावना कहिये हैं सो—विनय पंचप्रकार कह्या है दर्शनाविनय, ज्ञानविनय, चारित्राविनय, तपविनय, उपचारविनय। तहां जो अपने श्रद्धानके शंकादिकदोष नाहीं

लगावना तथा सम्यग्दर्शनकी विशुद्धताकरि ही अपना जन्म सफल मानना सम्यग्दर्शनके धारकनिमैं प्रीति धारना आत्मा अर परका भेदविज्ञानका अनुभव करना सो दर्शनाविनय है । बहुत सम्यग्ज्ञानके आराधनमैं उद्यम करना, सम्यग्ज्ञानकी कथनीमैं आदर करना तथा सम्यग्ज्ञानके कारण जे अनेकांत रूप जिनसूत्र तिनके श्रवण पठनमैं बहुत उत्साहरूप होना तथा वंदना स्तवनपूर्वक बहुत आदरतैं पढना सो ज्ञानविनय है तथा ज्ञानके आराधक ज्ञानीजनांका तथा जिनागमके पुस्तकनिका संयोगका बडालाभ मानना सत्कार स्तवन आदरादिक करना सो ज्ञानविनय है । बहुरि अपनी शक्तिप्रमाण चारित्र धारणमैं हर्ष करना दिनदिन चारित्रकी उज्जलताके अर्थि विषयकषायनिकूं घटावना तथा चारित्रके धारकनिके गुणनिमैं अनुराग स्तवन आदर करना सो चारित्राविनय है । बहुरि इच्छाकूं रोकि मिलेहुए विषयनिमैं संतोष धारणकरि ध्यानस्वाध्यायमैं उद्यमी होय कामके जीतनेकूं अर इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रवृत्ति रोकनेकूं अनशनादिकतपमैं उद्यम करना सो तपविनय है । बहुरि इन च्यारि आराधनाका उपदेशकरि मोक्ष मार्गमैं प्रवर्तन करावनेवाले हैं तथा जिनके स्मरण करनेतैं परिणामनिका मल दूरि होय विशुद्धता प्रगट होजाय ऐसे पंचपरमेष्ठीके नामकी स्थापनाका विनय वंदना स्तवन करना सो उपचारविनय है । अन्य हू उपचारविनयका बहुतभेद हैं अभिमानकूं छांडि अष्टमदका अत्यंत अभाव जाकै होय कठोरता छूटि कोमलता जाकै प्रगट होय ताकै नम्रपना प्रगट होय है ताकै सत्यार्थ ऐसा विचार है यो धन यौवन जीवन क्षणभंगुर है कर्मके आधीन है कोऊ जीव हमतैं क्लेशित मति होहु सकल संबंध वियोगसहित है इहां केते काल रहूंगा समय समय कालके सन्मुख अखंड गमन करूंहूं कोऊ वस्तुका संबंध थिर नाहीं है इहां विनय धर्म ही भगवान मनुष्य जन्मका सार कह्या है यो विनय संसाररूप वृक्षके दग्ध करनेकूं अग्नि है यो विनय है सो त्रैलोक्यवर्ती जीवनिके मनकी उज्जलता करनेवाला है अर विनय है सो समस्त जिन-शासनको मूल है विनयरहितके जिनेंद्रकी शिक्षा ग्रहण नाहीं होय है विनयरहित जीव समस्त दोषनिका

पात्र है विनय है सो मिथ्याश्रद्धानके छेदनेकूं सूल है विनयविना मनुष्यरूप चामडाको वृक्ष मानरूप अग्नि करि भस्म होय है अर मानकषायकरिके यहां ही घोर दुःख सहै है अर परलोकमैं निंद्यजाति कुलरूप बुद्धिहीन बलहीन उपजै है जे अभिमानी यहां किंचित् वचनमात्र हू नाहीं सहै हैं ते तिर्यंचगतिमैं नासिकामैं मूंजका जेवडाका बंधन लादन मारण लात ठोकरांका घात चामडाका मरमस्थानमैं घात पराधीन हुआ भोगे है तथा चांडालनिके मलीन घरमैं बंधनतैं बंध रहै हैं जिन ऊपरि मलादि निंद्य वस्तु लादिये हैं और इसलोकमैं हू अभिमानीके समस्तलोक बैरी होजाय हैं अभिमानिकूं समस्त निंदे हैं महाअपयश प्रगट होजाय है समस्त लोक अभिमानीका पतन चाहै हैं मानकषायतैं क्रोध प्रगट होय कपट विस्तारै अतिलोभ करै दुर्वचननिमैं प्रवर्तन करै लोकमैं जेती अनीति है तितनी मानकषायतैं होय है। परधन हरणादिक हू अपने अभिमान पुष्ट करनेकूं करै है यातैं इस जीवका बडा वैरी मानकषाय है यातैं विनय गुणमैं महान आदरकरि अपना दोऊं लोक उज्जल करो सो विनय देवको शास्त्रको गुरुनिको मन वचन कायतैं प्रत्यक्ष करो अर परोक्ष हू करो तहां देव जो भगवान अरहंत समवशरणविभूतिसहित गंधकुटीके मध्य सिंहासन ऊपरि अंतरीक्ष विराजमान चौसठ चमरनिकरि वीज्यमान छत्रत्रयादिक प्रातिहार्यनिकरि विभूषित कोटिसूर्यसमान उद्योतका धारक परमौदारिकदेहमैं तिष्ठता द्वादशसभाकरि सेवित दिव्यध्वनि करि अनेकजीवनिका उपकारकरनेवाले अरहंतको चिंतवनकरि ध्यान करना सो मनकरि परोक्षविनय है। याका विनयपूर्वक स्तवन करना सो वचनकरि परोक्षविनय है। अंजुलिजोडि मस्तक चढाय नमस्कार करना सो कायकरि परोक्षविनय है। बहुरि जो जिनेन्द्रकी प्रतिबिंबकी परम शांत मुद्राकूं प्रत्यक्ष नेत्रनितैं अवलोकनकरि महाआनन्दतैं मनमैं ध्यानकरि आपकूं कृतकृत्य मानना सो मनकरि प्रत्यक्षविनय है। जिनेन्द्रका प्रतिबिंबके सन्मुख होय स्तवन करना सो प्रत्यक्ष वचनविनय है। अंजुली मस्तक चढाय वंदना करना तथा भूमिमैं अंजुलिसहित मस्तक गोडानिका स्पर्शनकरि नमस्कार करना सो कायकरि

प्रत्यक्षविनय है। तथा सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा जिनेन्द्रका नामका स्मरण ध्यान वंदना स्तवन करना सो समस्त परोक्षविनय है। ऐसैं देवका विनय समस्त अशुभकर्मनिका नाश करनेवाला कह्या है। बहुरि जो निर्ग्रंथ वीतरागी मुनीश्वरनिकूं प्रत्यक्ष देखि खडा होना आनंदसहित सन्मुख जाना स्तवन करना वंदना करना गुरुनिकूं आगैंकरि पाछैं चालना कदाचित् बराबर चालना होय तो गुरुनिके बामतरफ चालना गुरुनिकूं अपने दाक्षिणभागमैं करकै चालना बैठना, गुरुनिकूं विद्यमान होते आप उपदेश नाहीं करना कोऊ प्रश्न करै तो गुरुनिके होते आप उत्तर नाहीं देना अर गुरुनिकी इच्छा होय तो गुरुनिकी इच्छाके अनुकूल उत्तर देना गुरुनिके होते उच्चआसन नाहीं बैठना अर गुरु व्याख्यान उपदेशादिक करै ताकूं अंजुलि जोडि बहोत आदरतैं ग्रहण करना गुरुनिका गुणनिमैं अनुराग करि आज्ञाके अनुकूल प्रवर्तन करना अर गुरु दूरक्षेत्रमैं होय तो वार्को जो आज्ञा होय तैसैं प्रवर्तन करना दूरहीतैं गुरुनिका ध्यान स्तवन नमस्कारादि विनय करना सो गुरुनिका विनय है।

बहुरि शास्त्रका विनय करना बडा आदरतैं पठन श्रवण करना द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं देखि व्याख्यानादि करना शास्त्रका कह्या व्रत संयमादिक आपतैं नाहीं बनि सकैं तो आज्ञाका लोप नाहीं करना सूत्रकी आज्ञा होय तिस प्रमाण ही कहना तथा जो सूत्रकी आज्ञा होय ताकूं एकाग्रचित्ततैं श्रवण करना श्रवण करते अन्य कथा नाहीं करना आदरपूर्वक मौनतैं श्रवण करना अर जो संशय होय तो संशय दूर करनेकूं विनयपूर्वक अल्प अक्षरनिकरि जैसे सभाके अर लोकनिकै अर वक्ताकै क्षोभ नाहीं उपजे तैसैं विनयपूर्वक प्रश्न करना उत्तरकूं आदरतैं अंगीकार करना सो शास्त्रका विनय है तथा शास्त्रकूं उच्चआसनपर धरि नीचा बैठना प्रशंसा स्तवन करना इत्यादिक शास्त्रका विनय करना ऐसैं देव गुरु शास्त्रका विनय है सो धर्मका मूल है। बहुरि जो रागद्वेषकरि आत्माका घात जैसे नाहीं होय तैसे प्रवर्तन करना सो आत्माका विनय है जातैं ऐसा विचारै है अब यो मेरो जीव चतुर्गतिमैं मति परिभ्रमण करो

अब मेरा आत्मा मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि संसार परिभ्रमणके दुःख मति प्राप्त होहू ऐसे चिंतवन करता मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि आत्माका ज्ञानादिकगुण घात नाहीं करना सो आत्माका विनय है याहीकूं निश्चय विनय कहिये है यह तो परमार्थ विनय कह्या अब यहां ऐसा विशेष जानना जाके मान कषाय घटि जाय ताहीके व्यवहार विनय है कोऊ जीवका मोतैं अपमान मति होहू जो अन्यका सन्मान करैगा सो आपहू सन्मानकूं प्राप्त होयगा जो अन्यका अपमान करैगा सो आपहू अपमानकूं प्राप्त होय है जो समस्तकूं मिष्टवचन बोलना सो विनय है किसी जीवकूं तिरस्कार नाहीं करना सो हू विनय ही है। अपने घर आया ताका यथायोग्य सत्कार करना किसीकूं सन्मुख जाय ल्यावना किसीकूं उठि खडा होना एक हस्तकूं माथै चढावना किसीकूं आइए ३ इत्यादिक तीनवार कहि अंगीकार करना कोऊकूं आदरकरि नजीक बैठावना किसीकूं आसनदान देना किसीकूं आवो बैठो किसीकूं शरीरकी कुशल पूछना तथा हम आपके हैं हमकूं आज्ञा करिये भोजनपान करिये यह आपहीका गृह है ये गृह आपके आवनेतैं उच्च भया है आपकी कृपा हमारेपर सनातनतैं है ऐसे हू व्यवहारविनय है तथा कोऊकूं हस्त उठाय माथै चढावना एता ही विनय है यह समस्त व्यवहारविनय है और हू दान सन्मान कुशल-पूछना रोगी दुखीका वैयावृत्त्य करना सो भी विनयवानहीके होय है दुःखित मनुष्य तिर्यंचनिकूं विश्वास देना दुःखित होय आपका दुःख कहनेकूं आया होय ताका दुःख श्रवण करना अपना सामर्थ्य प्रमाण उपकार करना नाहीं बननेका होय तो धीरता संतोषादिकका उपदेश देना ऐसे व्यवहार विनय है सो परमार्थविनयका कारण है यशकूं उपजावै है धर्मकी प्रभावना करै है मिथ्यादृष्टिका हू अपमान नाहीं करना मिष्टवचन बोलना यथायोग्य आदर सत्कार करना योही विनय है महापापी द्रोही दुराचारीकूं हू कुवचन नाहीं कहना एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियादिक तथा सर्पादिक दुष्ट जीव तिनकी विराधना नाहीं करना याकी रक्षा करि प्रवर्तना सो ही इनका विनय है अन्यधर्मीनिका मंदिरप्रतिमादिकतैं बेर करि

निंदा नाहीं करना ऐसा परमार्थ व्यवहार दोऊप्रकारकूं विनयको धारणकरि गृहस्थकूं प्रवर्तन करना योग्य है। देखो सकलसंगका परित्यागी वीतरागी मुनीश्वरहूकूं कोऊ मिथ्यादृष्टि वंदना करै है ताकूं आशीर्वाद देवें हैं चांडाल भील धीवरादिक अधमजाति हू वंदना करै ताकूं पापक्षयोस्तु इत्यादिक आशीर्वाद देहैं तातैं विनयअंग धारण करो हो तो बाल अज्ञान धर्मरहितका तथा नीच अधम जाति होय ताका हू विनय नाहीं करो तो हू तिरस्कार निंदा कदाचित करना उचित नाहीं है इस मनुष्यजन्मका मंडन विनय ही है विनय विना मनुष्यजन्मकी एक घडी भी हमारे मति जावो ऐसे भगवान गणधर देव कहैं हैं ऐसा विनयगुणकी महिमा जानि याका महान अर्घ उतारण करो। हे विनयसंपन्नताअंग हमारे हृदयमें तू ही निरंतर वास करि तेरे प्रसादतैं अब मेरा आत्मा कदाचित अष्टमदनिकरि अभिमानकूं मति प्राप्ति होहू ऐसे विनयसंपन्नता नाम अंगकी दूजी भावना वर्णन करी॥ २॥

अब तीसरी शीलव्रतेष्वनतीचार भावना कहै हैं—शीलव्रतेष्वनतीचारका ऐसा अर्थ वार्तिकमें कह्या है अहिंसादिक पंचव्रत अर इनव्रतनिका पालनके अर्थि क्रोधादिकषायका वर्जनादिरूप शीलाविषय जो मनवचनकायकी निर्दोष प्रवृत्ति सो शीलव्रतेष्वनतिचारभावना है शीलनाम आत्माका स्वभावका है आत्मस्वभावका नाश करनेवाला हिंसादिक पांच पाप हैं तिनमैं कामसेवन नाम एक ही पाप हिंसादिकसमस्तपापनिकूं पुष्ट करै है अर क्रोधादिकषायनिकी तीव्रता करै है तातैं यहां जयमालामें ब्रह्मचर्यकी ही प्रधानताकरि वर्णन करिये है यो शील दुर्गतिके दुःखका हरनेवाला है स्वर्गादिक शुभगतिका कारण है तपव्रतसंयमका जीवन है शीलविना तपकरना व्रतधरना संयम पालना मृतकका अंगसमान देखने मात्र है कार्यकारी नाहीं तैसे शीलरहितका तपव्रतसंयम धर्मकी निंदा करावनेवाला है ऐसा जानि शील नाम धर्मका अंगकूं पालना करहु अर चंचल मनरूप पक्षीकूं दमो अतिचाररहित शुद्धशीलकूं पुष्ट करो धर्मरूपवनके विध्वंस करनेवाला मनरूप मदोन्मत्त हस्तीकूं रोको चलायमान हुआ

मनरूपहस्ती महान अनर्थ करै है हस्ती मदवान होय तदि ठाणमैंतैं निकालि भागै है अर मनरूपहस्ती कामकरि उन्मत्त होय तब समभावरूपी ठाणतैं निकालिभागै है तथा कुलकी मर्यादा संतोषादि छांडि निकसै है मदोन्मत्तहस्ती तौ सांकल तुडाय जाय है अर मनरूपहस्ती सुबुद्धिरूप सांकल तोडि विचरै है हस्ती तो मार्गमैं चलावनेवाला महावतकूं नाखै है अर कामीका मन सम्यग्धर्मके मार्गमैं प्रवर्तावनेवाला ज्ञानकूं छांडै है हस्ती तो अंकुशकूं नाहीं मानै है अर मनरूपहस्ती गुरूनिके शिक्षाकारी वचनकूं नाहीं मानै है हस्ती तो महाफल अर छायाका देनेवाला वृक्षकूं उखाडि पटकै है अर कामकरि व्याप्त मन है सो स्वर्गमोक्षरूप फलका देनेवाला अर यशरूप सुगंधकूं विस्तारता सकलविषयांकी आतापकूं हरनेवाला ब्रह्मचर्यरूप वृक्षकूं उखाडि डालै है हस्ती तो मल कर्दमादिक दूर करनेवाला सरोवरमैं स्नानकरि मस्तक ऊपरि धूलि नाखता धूलिरजसूं क्रीडा करै है अर कामकरि व्याप्त मन सिद्धांतरूपसरोवरमैं अवगाहनकरि अनेक अज्ञानरूप मैलकूं धोय करके हू पापरूप धूलितैं क्रीडा करै है हस्ती तो कर्णानिकी चपलताकूं धारण करै है अर कामसंयुक्तमन पांचू इंद्रियनिका विषयनिमैं चंचलता धारण करै है हस्ती तो हस्तिनीमैं रति करै है कामसंयुक्त मन कुबुद्धिरूप हस्तिनीमैं रचै है हस्ती हू स्वछंद डोलै मन हू स्वछंद डोलै हस्ती तो मदकरिके मत्त है कामीका मन रूपादिक अष्टमदकरि मत्त है हस्तीके नजीक तो कोऊ पथिक नाहीं आवै दूर भागिजाय अर कामकरि उन्मत्तके नजीक कोऊ एक हू गुण नाहीं रहै है यातैं इस कामकरि उन्मत्त मनरूप हस्तीकूं वैराग्यरूप स्थंभकै बांधो यो खुल्यो हुवो महा अनर्थ करैगा यो काम अनंग है याकै अंग नाहीं है यो तो मनोसिज है मनहीमैं याका जन्म है ज्ञानकूं मथन करनेवाला है याहीतैं याकूं मनमथ कहिये है। संवरको अरि कहिये वैरी है यातैं संवरारि कहिये है कामतैं खोटा दर्प जो गर्व सो उपजै है यातैं याकूं कंदर्प कहिये है याकरि अनेक मनुष्य तिर्यंच परस्पर विरोधकरि मरि जाय हैं यातैं याकूं मार कहिये है याहीतैं मनुष्यानिमैं अन्यइंद्रियनिके भोग तो प्रगट हैं अर कामके अंगहू

ढके हुये हैं कामके अंगका नाम हू उत्तमपुरुष हैं ते नाहीं उच्चारण करै हैं यों समान अन्य पाप नाहीं है धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला काम है यो काम हरिहरब्रह्मादिकानिकूं भ्रष्टकरि आपके आधीन किये है याहीतैं समस्त जगतकूं जीतनेवाला एककाम है याका विजय करनेवाला मोहकूं सहज ही जीतै है याहीतैं कामके परिहारके अर्थि मनुष्यनी तथा देवांगना तथा तिर्यंचनी इनका संसर्ग संगति कामविकारके उपजावनेवाली दूर हीतैं परिहार करो स्त्रीनिमैं मनवचनकायकरि रागका त्याग करो आप कुशीलके मार्गमैं नाहीं चलना अन्यकूं कुशीलके मार्गका उपदेश मति करो अन्य कोऊ कुशीलके मार्गमैं प्रवर्तन करै तिनकी अनुमोदना भव्यजीव नाहीं करै है बालकास्त्रीकूं देखि पुत्रीवत् निर्विकार बुद्धि करो अर यौवनरूप करींद्रऊपरि चढी लावण्य जो सौंदयरूप जलमैं जाका सब अंग डूबि रह्या ऐसी रूपवतीस्त्रीमैं बहिणवत निर्विकार बुद्धि करहू अर वाकूं सनमान दान मति करो। वचनकरि आलाप मति करो शीलवान हैं तिनकी दृष्टि स्त्रीनिमैं प्राप्ति होते ही मुद्रित होजाय है जो स्त्रीनिमैं वचनालाप करैगा स्त्रीके अंगानिका अवलोकन करैगा ताकै शीलका भंग अवश्य होयगा तातैं जो गृहस्थ है ताकै तो एक अपनी स्त्रीविना अन्यस्त्रीनिकी संगति तथा अवलोकन वचनालापकरि परिहार अर अन्य स्त्रीनिकी कथाका स्वप्न हूमैं विचार नाहीं रहै है अर एकांतमैं मातावहनपुत्रीकी संगति हू नाहीं करै है अर मुनीश्वर तो समस्त स्त्रीमात्रका ही संबंध नाहीं करै है स्त्रीनिमैं उपदेश नाहीं करै है जातैं स्त्रीका नाम ही प्रगट दोषनिकूं कहै है। स्त्रीसमान इस जीवकूं नष्ट करनेवाला अन्य कोऊ अरि कहिये वैरी नाहीं तातैं उत्तम पुरुष याकूं नारी कहै हैं दोषनिकूं प्रत्यक्ष देखते देखते आच्छादन करै तातैं याका नाम स्त्री है याका देखनेकरि पुरुषको पतन होजाय तातैं याका नाम पत्नी है कुमरण करनेका कारण है तातैं याका नाम कुमारी है याकी संगतकरि पौरुषबुद्धिबलादिक नष्ट होजाय यातैं याका नाम अबला है। संसारके बंधका कारण है यातैं याका नाम वधू है कुटिलतामायाचारका स्वभाव धारै है यातैं याका नाम वामा है याका नेत्र-

निमैं कुटिलता बसै हैं यातैं याका नाम वामलोचना है शीलवंतकूं इंद्र नमस्कार करैं हैं शीलवानपुरुष रत्नत्रयरूप धन लेय कामादिक लुटेरानिका भयरहित निर्भय निर्वाणपुरीप्रति गमन करै हैं शीलकरि भूषित रूपरहित होय तथा मलीन होय रोगादिककरि व्याप्त होजाय तो हू अपना संसर्गकरि समस्त सभानिवासीनिकूं मोहित करै है सुखित करै है। अर शीलरहित व्यभिचारी रूपकरि कामदेव समान है तो हू लोकनिमैं थुथकार करिये है जातैं याका नाम ही कुशील है शील नाम स्वभावका है कामी मनुष्यका शील जो आत्माका स्वभाव सो खोटा होजाय है यातैं याकूं कुशील कहिये है। बहुरि कामी मनुष्य धर्मतैं आत्माका स्वभावतैं व्यवहारकी शुद्धतातैं चलिजाय है यातैं याकूं व्यभिचारी कहिये हैं या समान जगमैं अन्य कुकर्म नाहीं तातैं कामकूं कुकर्म कहिये है यातैं मनुष्य पशुकेसमान होजाय यातैं याकूं पशुकर्म कहिये है ब्रह्म जो आत्मा ताका ज्ञानदर्शनादिस्वभाव ताका घात यातैं होय है तातैं याकूं अब्रह्म कहिये है जातैं कुशीलाकी संगतितैं कुशीलो होय जाय है जो शीलकी रक्षा करी सो ही क्षांति तप व्रत संयम समस्त पाल्या। बहुरि जो अपना स्वभावतैं नाहीं चलायमान होना ताकूं मुनिश्वर शील कहै हैं शीलनामका गुण समस्तगुणनिमैं बडा है शीलकरिसहित पुरुषका तो थोरा हू व्रत तप प्रचुर फलकूं फलै है अर शीलविना बहुत हू तप व्रत है सो निष्फल है। इसप्रकार जानि अपने आत्मामैं शीलकी शुद्धताके अर्थि शीलहीकूं नित्य पूजूं हूं यो शीलवृत मनुष्यजन्महीमैं है अन्यगतिमैं नाहीं है तातैं जन्मसफल किया चाहो हो तो शीलकी ही उज्जलता करो ऐसैं शीलवृतेष्वनतीचार नाम तीसरी भावना वर्णन करी ॥ ३ ॥

अब अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नाम चौथी भावनाका वर्णन करै हैं। भो आत्मन् यो मनुष्यजन्म पाय निरंतर ज्ञानाभ्यास ही करो ज्ञानका अभ्यासविना एकक्षण हू व्यतीत मति करो ज्ञानके अभ्यासविना मनुष्य पशुसमान है यातैं योग्यकालमैं जिनआगमका पाठ करो अर समभाव होय तदि ध्यान करो अर शास्त्रनिके अर्थका चिंतवन करो अर बहुत ज्ञानी गुरुजन तिनमैं नम्रता बंदना विनयादिक करो अर

धर्म श्रवण करनेके इच्छुक तिनकूं धर्मका उपदेश करो याहीकूं अभीक्ष्णज्ञानोपयोग कहैं हैं इस अभीक्ष्णज्ञानोपयोगनामगुणका अष्टद्रव्यनितैं पूजन करके याका अर्घ उतार करो अर पुष्पनिकी अंजुलि अग्रभागविषै क्षेपण करो इहां ज्ञानोपयोग है सो चैतन्यकी परिणति है याहीतैं क्षणक्षणमें निरंतर चैतन्यकी भावना करना। मेरे अनादिकालतैं काम क्रोध अभिमान लोभादिक संग लागि रहे हैं इनका संस्कार अनादितैं मेरे चैतन्यरूपमें घुलि रहे हैं अब ऐसी भावना होहू जो भगवानके परमागमका सेवनका प्रभावतैं मेरा आत्मा रागद्वेषादिकतैं भिन्न अपना ज्ञायकस्वभावरूपहीमें ठहरि जाय अर रागादिकनिके वशीभूत नाहीं होय सो ही मेरी आत्माका हित है अथवा नवीनशिष्यनिके आगे श्रुतका अर्थका ऐसा प्रकाश करना जो संशयादिक रहित शिष्यनिका हृदयमें यथावत स्वपर पदार्थका स्वरूप प्रगट हो जाय पाप पुण्यका स्वरूप लोकअलोकका स्वरूप मुनिश्रावकका धर्मको स्वरूप सत्यार्थ निर्णय हो जाय तैसें ज्ञानाभ्यास करना तथा अपने चित्तमें संसारदेहभोगतैं विरक्तता चिंतवन करना। संसारदेह भोगनिका यथार्थ स्वरूपका चिंतवन करनेतैं रागद्वेषमोह ज्ञानकूं विपरीत नाहीं करि सकै हैं। समस्त द्रव्यनिमें एक मिल्या हुआ हू आत्माका भिन्न अनुभव होय सो ही ज्ञानोपयोग है ज्ञानाभ्यास करके विषयनिकी वांछा नष्ट होय है कषायनिका अभाव होय है माया मिथ्या निदान तीनशल्य ज्ञानके अभ्यास करि ही नष्ट होय हैं ज्ञानके अभ्यासहीतैं मन स्थिर होय है ज्ञानके अभ्यास करके ही अनेक प्रकारके विकल्प नष्ट होय हैं ज्ञानाभ्यास करके धर्मध्यानमें शुक्लध्यानमें अचल होय तिष्ठै हैं ज्ञानअभ्यासतैं ही व्रतसंयमतैं चलायमान नाहीं होय है ज्ञानाभ्यास करके ही जिनेंद्रका शासन (आज्ञा) प्रवर्तै है अशुभकर्मका नाश हू ज्ञानाभ्यास करके ही होय प्रभावना हू जिनधर्मकी ज्ञानके अभ्यास करके ही होय ज्ञानका अभ्यासतैं लोकनिका हृदयमैंतैं पूर्वसंचय किया ऐसा पापरूप ऋण नष्ट हो जाय है अज्ञानी घोरतप करि कोटिपूर्वमें जिस कर्मकूं खिपावै तिस कर्मकूं ज्ञानी अंतर्मुहूर्तमें खिपावै है जिनधर्मका स्थंभ ज्ञानका

अभ्यास ही है ज्ञानहीके प्रभावतैं समस्त विषयनिकी बांछारहित होय संतोष धारण करिये है ज्ञानहीतैं उत्तमक्षमादि गुण प्रगट होय हैं ज्ञानाभ्यासतैं ही भक्ष्यअभक्ष्य योग्यअयोग्य त्यागनेयोग्य ग्रहणकरने- योग्यका विचार होय है ज्ञान विना परमार्थ अर व्यवहार दोऊ नष्ट हो जाय हैं ज्ञानरहित राजपुत्रहूका निरादर होय है ज्ञानसमान कोऊ धन नाहीं है ज्ञानका दान समान कोऊ दान नाहीं है दुःखित जीवकूं सुखितकूं सदा ज्ञान ही शरण है ज्ञान ही स्वदेशमें अन्यदेशमें आदर करावनेबाला परम धन है ज्ञानधन है सो किसी करि चोरया जाय नाहीं किसीकूं दिये घटै नाहीं ज्ञान ही सम्यग्दर्शन उपजावै है ज्ञानहीतैं मोक्ष होय है सम्यग्ज्ञान आत्माका अविनाशी स्वाधीन धन है ज्ञानविना संसारसमुद्रमैं डूबतेकूं हस्ता- वलंबन देय कौन रक्षा करे। विद्यासमान आभूषण नाहीं विद्याविना आभूषणमात्रतैं ही सत्पुरुषनिके आदरने योग्य होय नाहीं है निर्धनकै परमानिधान प्राप्त करानेवाला एक सम्यग्ज्ञान ही है यातैं हे भव्य- जीवो! भगवान करुणानिधान वीतराग गुरु तुमकूं या शिक्षा करैं हैं अपनी आत्माकूं सम्यग्ज्ञानके अभ्यासहीमें लगावो अर मिथ्यादृष्टिनिकरि प्ररूप्या मिथ्याज्ञानका दूरहीतैं परिहार करो सम्यक्मिथ्या की परीक्षा करि ग्रहण करो अपना संतानकूं पढावो अन्यजननिकूं विद्याका अभ्यास करावो जे धनवान होय अपने धनकूं सफल करया चाहो हो तो पढने पढानेवालेकूं आजीविकादिक देयकरि थिरता करावो पुस्तक लिखाय देवो विद्या पढनेवालेकूं देवो पुस्तकानिकूं शुद्ध करो करावो पठनपाठनके अर्थि स्थान देवो निरंतर पठन श्रवणमैं ही मनुष्य जन्मका काल व्यतीत करो यो अवसर व्यतीत होतो चल्या जाय है जेते आयु काय इंद्रियां बुद्धि बनि रही हैं तेते मनुष्यजन्मकी एक घडी हू सम्यग्ज्ञान विना मति खोवो ज्ञानरूपधन परलोकमें हू लार जायगा इस अभीक्ष्णज्ञानोपयोगकी महिमा कोटि जिह्वानि करि हू वर्णन नाहीं करी जाय है याहीतैं ज्ञानोपयोगकी परमशरणके अर्थि गृहस्थ धनसहित होय सो भावना भाय अर अर्घ उतारण करै अर गृहके त्यागी होंय ते निरंतर भावना भावो ऐसैं अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नामा चौथी भावना वर्णन करी ॥ ४ ॥

अब पंचमी संवेग भावनाका वर्णन करै हैं—जो संसार देह भोगनितैं विरक्तपना सो संवेग तथा धर्ममें अर धर्मका फलमें अनुराग सो संवेग है अथवा संसार देह भोगनितैं विरक्त होय करि धर्ममें अनुराग करना सो संवेग है। इहां संसारमैं जिस पुत्रसूं राग करिये है सो पुत्र जन्म लेते ही तो स्त्रीका यौवन सौंदर्यादिक बिगाडै है अर जन्म हुये पाछैं बडी आकुलताकरि बडा कष्टकरि धनका खरचकरि पुत्रकूं बधाइये है अर रोगादिकनिका बडा जाब्रता अर क्षणक्षणमैं बडी सावधानीतैं महामोही महारागी ग्लानिरहित होय बडा कष्ट सहिकरि बडा करिये है बडा होय तदि आछा भोजन आछा वस्त्र आछा आभरण आछा स्थानकूं हठतैं ग्रहण करै है अर जो मूर्ख होय व्यसनी होय तीव्रकषायी होय तो रात्रि· दिन क्लेश होनेका परिमाण नाहीं कहनेमैं आवै है पुत्रके मोहतैं परिग्रहमैं बडी मूर्छा बधै है अर समर्थ होजाय अर अपनी आज्ञामैं मंद होय तो महा आर्तरूप हुआ मरणपर्यंत क्लेश नाहीं छांडै है अर जो पिताकूं अपना कार्य करनेवाला समझै जेतैं प्रीति करै है असमर्थ होजाय तासूं राग नाहीं करै धन· रहितका निरादर करै है यातैं पुत्रका स्वरूपकूं समझि राग त्यागि परमधर्मसूं राग करो पुत्रके अर्थि अन्यायतैं धनादिपरिग्रहके ग्रहणका परित्याग करो। बहुरि स्त्री हू मोह नाम ठिगकी महापाशी है ममता उपजावनेवाली है तृष्णाकूं बधावनेवाली है स्त्रीमैं तीव्रराग है सो धर्ममें प्रवृत्तिका नाश करै है लोभकूं अत्यंत बधावै है परिग्रहमैं मूर्छा बधावै है ध्यानस्वाध्यायमें विघ्न करै है विषयनिमैं अंध करनेवाली है क्रोधादिक च्यारो कषायनिकी तीव्रता करनेवाली है संयमका घात करनेवाली है कलहको मूल है दुर्ध्यानको स्थान है मरण बिगाडनेवाली है इत्यादिक दोषनिका मूलकारण जानि स्त्रीके संगमैं रागभाव छांडि वीतराग धर्मसूं अपना संबंध करो। बहुरि कलिकालके मित्र हू विषयनिमैं उलझावनहारे हैं समस्त व्यसननिमैं सहकारी हैं धनवान देखै है तिनतैं अनेकप्रकार मित्रता करै हैं निरधनतैं कोऊ संभाषण हू नाहीं करै हैं तातैं भो ज्ञानीजन हो जो संसारपतनको भय है तो अन्यसमस्ततैं मित्रता छांडि

परमधर्ममैं अनुराग करो अर संसार निरंतर जन्ममरण रूप है। जन्मदिनतैं ही मरणके सन्मुख निरंतर प्रयाण करै है अनंतानंतकाल जन्ममरण करते भया तातैं पंच परिवर्तनरूप संसारतैं विरागता भावो अर ये पंचइंद्रियनिके विषय हैं ते आत्माका स्वरूपकूं भुलावनेवाले हैं तृष्णाके बधावनेवाले हैं अतृप्तताके करनेवाले हैं विषयनिकीसी आताप त्रैलोक्यमैं अन्य नाहीं है विषय हैं ते नरकादिकुगतिके कारण हैं धर्मतैं पराङ्मुख करैं हैं कषायनिकूं बधावनेवाले हैं अपना कल्याण चाहैं तिनकूं दूरहीतैं त्यागनेयोग्य हैं ज्ञानकूं विपरीत करनेवाले हैं विषके समान मारनेवाले हैं विष अर अग्निसमान दाहके उपजावनेवाले हैं तातैं विषयनितैं राग छांडना ही परमकल्याण है अर शरीर है सो रोगनिका स्थान है महामलीन दुर्गंध सप्तधातुमय है मलमूत्रादिककरि भर्‍या है वातपित्तकफमय है पवनके आधारतैं हलन चलनादिक करै है सासता क्षुधातृषाकी वेदना उपजावै है समस्त अशुचिताका पुंज है दिन दिन जीर्ण होता चल्याजाय है कोटिनिउपाय करके हू रक्षा किया हुआ मरणकूं प्राप्त होय है ऐसा देहतैं विरागता ही श्रेष्ठ है ऐसे पुत्र मित्र कलत्र संसार भोग शरीरका दुःख करनेवाला स्वरूप जानि विरागभावकूं प्राप्त होना सो संवेग है। संवेग भावनाकूं निरंतर चिंतवन करना ही श्रेष्ठ है यातैं मेरे हृदयमैं निरंतर संवेगभावना तिष्ठो ऐसा चिंतवन करते संसारदेहभोगनितैं विरक्तता होय तदि परमधर्ममैं अनुराग होय है । धर्मशब्दका अर्थ ऐसा जानना जो वस्तुका स्वभाव है सो धर्म है तथा उत्तमक्षमादि दशलक्षणरूप धर्म है तथा रत्नत्रय-स्वरूप धर्म है तथा जीवनिका दयारूप धर्म है ऐसे पर्यायबुद्धि शिष्यनिके समझावनेके अर्थि धर्मशब्दकूं च्यारिप्रकारकरि वर्णन किया है तो हू वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव ही दशलक्षण है क्षमादि दश-प्रकार आत्माका ही स्वभाव है अर सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र हू आत्मातैं भिन्न नाहीं है अर दया है सो हू आत्माहीका स्वभाव है सो ऐसा जिनेन्द्रकरि कह्या आत्माका स्वभावरूप दशलक्षणधर्ममैं जो अनुराग सो संवेग है अर कपटरहित रत्नत्रयधर्ममैं अनुराग करना सो संवेग धर्म है तथा मुनीश्वरनिका अर

श्रावकका धर्ममें अनुराग सो संवेग है तथा जीवनिकी रक्षाकरनेरूप जीवनिका दयामें परिणाम
होना सो भगवान संवेग कह्या है अथवा वस्तु जो आतमा ताका स्वभाव केवलज्ञान केवलदर्शन है
तिस स्वभावमें लीन होना सो प्रशंसा करनेयोग्य संवेग है जातैं धर्ममें अनुराग परिणाम सो संवेग
है तथा धर्मका फलकूं अत्यन्तमिष्ट जानना सो संवेग है ये तीर्थंकरपना चक्रवर्ती होना नारायण प्रति-
नारायण बलभद्रादिक उपजना सो धर्महीका फल है तथा बाधारहित केवली होना तथा स्वर्गादिकनिमें
महानऋद्धिका धारक देव होना तथा इंद्र होना तथा अनुत्तरादिकविमानमें अहमिंद्र होना सो समस्त
पूर्वजन्ममें आराधन किया धर्मका ही फल है। बहुरि और हू जो भोगभूमिआदिकमें उपजना
राजसंपदा पावना अखंड ऐश्वर्य पावना अनेक देशनिमें आज्ञा प्रवर्तना प्रचुरधनसंपदा पावना रूपकी
अधिकता पावनी बलकी अधिकता चतुरता महान पंडितपना सर्वलोकमें मान्यता निर्मलयशकी विख्या-
तता बुद्धिकी उज्वलता आज्ञाकारी धर्मात्मा कुटुंबका संयोग होना सत्पुरुषनिकी संगति मिलना
रोगरहित होना दीर्घआयु इंद्रियनिकी उज्वलता न्यायमार्गमें प्रवर्तना वचनकी मिष्टता इत्यादिक
उत्तमसामग्रीका पावना है सो हू कोऊ धर्ममें प्रीति करी है तथा धर्मात्मानिका सेवन किया है धर्मकी
तथा धर्मात्मानिकी प्रशंसा की है ताका फल है। कल्पवृक्ष चिंतामणि समस्त धर्मात्माके द्वारे खडे
जानहू। धर्मके फलकी महिमा कोऊ कोटि जिह्वानिकरि कहनेकूं समर्थ नाहीं होइये है। ऐसे धर्मके
फलकूं त्रैलोक्यमें, उत्कृष्ट जाने है ताके संवेगभावना होय है। बहुरि धर्मसहित सधर्मीनिकूं देखि
आनंद उपजना तथा धर्मकी कथनीमें आनंदमय होना और भोगनितैं विरक्त होना सो संवेग नामा
पंचमअंग है याकूं आतमाका हित समझि याकी निरंतर भावना भावो अर भावनाके आनंदकरि सहित
होय याकी प्राप्तिके अर्थि याका महाअर्घ उतारण करो। ऐसें संवेगनामा पंचम भावना वर्णन करी ॥५॥

अब शक्तिप्रमाणत्याग भावना वर्णन करिये है। त्यागनामभावना प्रशंसायोग्य मनुष्यजन्मका

मंडन है। अपने हृदयमैं त्यागभाव रचनेके अर्थि अनेक उत्सवरूप वादित्रनिकूं बजाय याका महान अर्घ उतारण करो। बाह्य अभ्यंतर दोय प्रकारका परिग्रहतैं ममता छांडनेकरि त्यागधर्म होय है। अंतरंगपरिग्रह चौदहप्रकार है सो ऐसे जानना। जाण्याविना ग्रहण त्याग वृथा है। मिथ्यात्व, अर स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेदरूप परिणाम सो वेदपरिग्रह है। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, गुजुप्सा, राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ ऐसे चौदहप्रकार अंतरंग परिग्रह जनाया। तहां जो शरीरादिक परद्रव्यनिमैं आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्व नाम परिग्रह है। यद्यपि जो वस्तु है सो अपना द्रव्य अपना गुण अपना पर्याय है सो ही अपना स्वरूप है। जैसे सुवर्णनाम द्रव्य है सुवर्णके पीतादिक गुण हैं कुंडलादि पर्याय हैं सो समस्त सुवर्ण ही हैं यातैं सुवर्ण अन्यवस्तुका नाहीं अन्यवस्तु सुवर्णका नाहीं सुवर्ण है सो सुवर्ण हीका है अन्य वस्तुका कोऊ हुआ नाहीं हो है नाहीं होयगा नाहीं अपना स्वरूप है सो ही आपका है ऐसें आत्मा है सो आत्माहीका है आत्माका अन्य कोऊ ही द्रव्य नाहीं है। अब जो देहकूं आपा मानै है जो मैं गोरा, मैं सांवला, मैं राजा, मैं रंक, मैं स्वामी, मैं सेवक, मैं ब्राह्मण, मैं क्षत्रिय, मैं वैश्य, मैं शूद्र, मैं वृद्ध, मैं बाल, मैं बलवान, मैं निर्बल, मैं मनुष्य, मैं तिर्यंच इत्यादिक कर्मकृत विनाशीक परद्रव्यकृत पर्यायमैं आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्वनाम परिग्रह है। मिथ्यादर्शनतैं ही मेरा गृह मेरा पुत्र मेरा राज मैं ऊंच मैं नीच इत्यादिक मानि समस्त परपदार्थनिमैं आत्मबुद्धि करै है पुद्गलका नाशकूं अपना नाश मानै है याके बंधनेतैं अपना बंधना घटनेतैं घटना मानि पर्यायमैं आत्मबुद्धिकरि अनादिकालतैं आपा भूलि रह्या है यातैं समस्त परिग्रहमैं आत्मबुद्धिका मूल मिथ्यात्वनामपरिग्रह है जाकै मिथ्याज्ञान नाहीं सो परद्रव्यनिमैं 'हमारा' ऐसैं कहता हुवा हू परद्रव्यनिमैं कदाचित् आपा नाहीं मानै है। बहुरि वेदके उदयतैं स्त्रीपुरुषनिमैं जो कामसेवनके परिणाम होय हैं तिस काममैं तन्मय होय कामके भावकूं आत्मभाव मानना सो वेदपरिग्रह है। काम तो वीर्यादिकका प्रेर्या देहका विकार है इसकूं अपना स्वरूप जानै सो वेदपरि-

ग्रह है। बहुरि धन ऐश्वर्य पुत्र स्त्री आभरणादि परद्रव्यादिकमैं आसक्तता सो रागपरिग्रह है अन्यका विभव परिवार ऐश्वर्य पांडित्यादिक देखि वैरभाव करना सो द्वेषपरिग्रह है हास्यमें आसक्त होना सो हास्य परिग्रह है अपना मरण होनेतैं मित्रनिका परिग्रहादिकानिकरि वियोगहोनेतैं निरंतर भयवान रहना सो भय-परिग्रह है पंचइंद्रियनिकरि वांछित भोगउपभोगके भोगनिमैं लीन हो जाना सो रति परिग्रह है। अनिष्टवस्तुका संयोगमैं परिणामनिका संक्लेशरूप होना सो अरतिपरिग्रह है अपना इष्ट स्त्रीपुत्रमित्रधनजीविकादिकका वियोग होते तिनका संयोगकी वांछा करके संक्लेशरूप होना सो शोक परिग्रह है। बहुरि घृणावान पुद्गलनिके देखनेतैं श्रवणतैं चिंतवनतैं स्पर्शनतैं परिणाममैं ग्लानि उपजना सो जुगुप्सा नाम परिग्रह है। अथवा अन्यका उदय देखि परिणाममैं क्लेशित होना सुहावे नाहीं सो जुगुप्सा परिग्रह है। बहुरि परिणाममें रोषकरि तप्त होना सो क्रोध परिग्रह है बहुरि उच्च कुल जाति धन ऐश्वर्य रूप बल ज्ञान बुद्धि इनकरि आपकूं अधिक जानि मद करना तथा परकूं घाटि जानि निरादर करना कठोरपरिणाम रखना सो मानपरिग्रह है अनेक कपटछलादिककरि वक्रपरिणाम रखना सो माया परिग्रह है। परद्रव्यनिके ग्रहणमैं तृष्णा सो लोभ परिग्रह है। ऐसैं संसारपरिभ्रमणके कारण आत्माके ज्ञानादिक गुणनिके घातक चौदहप्रकार अंतरंगपरिग्रह हैं अर इनहीतैं मूर्छाके कारण धनधान्यक्षेत्रसुवर्णादिक स्त्रीपुत्रादि चेतन अचेतन बाह्य परिग्रह हैं ऐसे अंतरंग बहिरंग दोयप्रकारके परिग्रहके त्यागनेतैं त्याग धर्म होय है। यद्यपि बाह्यपरिग्रहरहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीतैं होय है परंतु अभ्यंतरपरिग्रहका त्याग बहुत दुर्लभ है। यातैं दोयप्रकारका परिग्रह एकदेशत्याग तो श्रावकके होय है अर सकलत्याग मुनीश्वरनिके होय है बहुरि कषायनिका त्यागतैं त्यागधर्म होय है बहुरि इंद्रियनिकूं विषयनितैं रोकनेकरि त्याग होय है। बहुरि रसनिका त्यागकरि त्यागधर्म होय है। जातैं रसना इंद्रियकी लोलुपता जीतनेतैं समस्त पापनिका त्याग सहज होय है। बहुरि जिनेंद्रका परमागमका अध्ययनका अन्यकूं

अध्ययन करावना शास्त्रनिकूं लिखाय देना शोधना शुधावना सो परम उपकार करनेवाला त्यागधर्म होय है। बहुरि मनके दुष्टविकल्पनिका अभाव करना दुष्टविकल्पनिके कारण छांडि च्यारि अनुयोगकी चरचामें चित्त लगावना सो त्यागधर्म है। बहुरि मोहका नाश करनेवाला धर्मका उपदेश श्रावकनिकूं देना सो महापुण्यका उपजावनेवाला त्यागधर्म है। वीतरागधर्मका उपदेशतैं अनेकप्राणीनिका परिणाम पापतैं भयभीत होय है धर्मके प्रभावकूं अनेक प्राणी प्राप्त होय हैं। बहुरि उत्तम मध्यम जघन्य ऐसैं तीन प्रकारके पात्रनिकूं भक्तिकरि युक्त होय आहारदान देना प्रासुक औषधि देना ज्ञानके उपकरण सिद्धांतके पढनेयोग्य पुस्तकका दान देना मुनिके योग्य तथा श्रावकके योग्य वस्तिका दान देना गुणनिके धारकनिकूं तपकी वृद्धि करनेवाला स्वाध्यायमैं लीन करनेवाला ध्यानकी वृद्धिका कारण आहारादिक चारि प्रकारका दान परमभक्तितैं विकसितचित्त हुआ अपना जन्मकूं कृतार्थ मानता गृहचाराकूं सफल मानता बडा आदरतैं पात्रदान करो। पात्रदान होना महाभाग्यतैं जिनका भला होना है तिनके होय है पात्रका लाभ होना ही दुर्लभ है अर भक्तिसहित पात्रदान होय जाय ताकी महिमा कहनेकूं कौन समर्थ है बहुरि क्षुधातृषाकरि जो पीडित होय तथा रोगी होय दरिद्री होय वृद्ध होय दीन होय तिनकूं अनुकंपाकरि दान देना सो समस्त त्यागधर्म है त्यागहीतैं मनुष्यजन्म सफल है त्यागहीतैं धनधान्यादिक पावना सफल है त्यागविना गृहस्थका गृह है सो श्मशान समान है अर गृहस्थका स्वामी पुरुष मृतक समान है अर स्त्रीपुत्रादिक गृद्धपक्षी समान हैं सो याका धनरूप मांस चूंटि चूंटि खाय हैं ऐसैं त्यागभावना वर्णन करी॥ ६॥

अब शक्तिप्रमाणतपभावना अंगीकार करना। क्योंकि यो शरीर दुःखको कारण है। अनेकदुःख यो शरीर उपजावे है अर यो शरीर अनित्य है अस्थिर अशुचि है कृतघ्नवत है कोट्यां उपकार करता हू जैसैं कृतघ्न अपना नाहीं होय है तैसैं देहके नाना उपकार सेवा करता हू अपना नाहीं होय है यातैं

यथेष्टविधिकरि याकूं पुष्ट करना योग्य नाहीं कृश करने योग्य है तो हू यो गुण रत्नत्रयके संचयको कारण है। शरीर विना रत्नत्रयधर्म नाहीं होय है सेवककी ज्यों योग्यभोजन देय यथाशक्ति जिनेन्द्रका मार्गतैं विरोधरहित कायक्लेशादि तप करना योग्य है। तप विना इंद्रियनिकी विषयनिमैं लोलुपता घटै नाहीं तपविना त्रैलोक्यका जीतनेवाला कामकूं नष्टकरनेकूं समर्थता होय नाहीं तपविना आत्माकूं अचेत करनेवाली निद्रा जीती जाय नाहीं अर तपविना शरीरका सुखिया स्वभाव मिटै नाहीं जो तपके प्रभावतैं शरीरकूं साधि राख्या होय तो क्षुधा तृषा शीत उष्णादिक परीषह आये कायरता उपजै नाहीं संयमधर्मतैं चलायमान होय नाहीं तप है सो कर्मकी निर्जराका कारण है। तातैं तप ही करना श्रेष्ठ है। अपना वीर्यकूं नाहीं छिपायकरिकैं जैसैं जिनेन्द्रके मार्गतैं विरोधरहित होय तैसैं तप करो तपनाम सुभटका सहाय विना ये अपना श्रद्धान ज्ञानआचरणरूप धनकूं काम क्रोध प्रमादादिक लूटेरे एकक्षणमैं लूटि लेवैंगे तदि रत्नत्रयसंपदाकरि रहित चतुर्गतिरूपसंसारमैं दीर्घकाल भ्रमण करोगे याहीतैं जैसैं वात पित्त कफ ये त्रिदोष विपरीत होय रोगादिक नाहीं उपजावैं तैसैं तप करना उचित है समस्तमैं प्रधानतप तो दिगम्बरपणा है कैसा है दिगम्बरपणा जो घरकी ममतारूपपासीकूं छेदि देहका समस्त सुखियापणा छांडि अपनाशरीरतैं शीत उष्ण तावडा वर्षा पवन डांस मच्छर मक्षिकादिकनिकी बाधाके जीतनेकूं सन्मुख होय कोपीनादिक समस्त वस्त्रादिकको त्यागकरि दशादिशारूपही जामैं वस्त्र हैं ऐसा दिगम्बरपणा धारण करना सो अतिशयरूप तप जानना जाका स्वरूपकूं देखते श्रवण करते बडे बडे शूरवीर कंपायमान होजाय हैं तातैं भो शक्तिकूं प्रगटकरनेवाले हो जो संसारके बंधनसे छूट्या चाहो हो तो जिनेश्वरसंबंधी दीक्षा धारण करो जातैं अंगका सुखियापणा नष्ट होय उपसर्गपरीषह सहनेमैं कायरताका अभाव होय सो तप है। जातैं स्वर्गलोककी रंभा अर तिलोत्तमा हू अपने हावभावविलासविभ्रमादिककरि मनकूं कामका विकारसहित नाहीं कर सकै ऐसा कामकूं नष्ट करै सो तप है। जो दोय प्रकारके परिग्रहमैं

इच्छाका अभाव हो जाय सो तप है जो इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रवर्तनेका अभाव हो जाय सो तप है तप तो वही है जो निर्जनवन अर पर्वतनिका भयंकर गुफा जहां भूतराक्षसादिकानिके अनेकविकार प्रवर्तैं अर सिंहव्याघ्रादिकानिके भयंकर प्रचार होय रहे अर कोट्यां वृक्षनिकरि अंधकार होय रह्या अर जहां सर्प अजगर रींछ चीता इत्यादिक भयंकर दुष्टतिर्यंचनिका संचार होय रह्या ऐसे महा विषमस्थाननिमैं भयरहित हुआ ध्यानस्वाध्यायमैं निराकुल हुवा तिष्ठै सो तप है। जो आहारका लाभ अलाभमैं समभावके धारक मीठा खाटा कडवा कषायला ठंडा ताता सरस नीरस भोजन जलादिकमै लालसारहित संतोषरूप अमृतका पान करते आनंदमैं तिष्ठै सो तप है। जो दुष्ट देव दुष्ट मनुष्य दुष्टतिर्यंचनिकरि किये घोर उपसर्गनिकूं आवते कायरता छांडि कंपायमान नाहीं होना सो तप है जातैं चिरकालका संचय किया कर्म निर्जरै सो तप है। बहुरि जो कुवचन कहनेवाले निंद्यदोष लगावनेवाले ताडन मारन अग्निमैं ज्वलनादिउपद्रव करनेवालेमैं द्वेषबुद्धिकरि कलुषपरिणाम नाहीं करना अर स्तुतिपूजनादि करनेवालेमैं राग भावका नाहीं उपजना सो तप है। बहुरि पंचमहाव्रतनिका अर पंचसमितिका पालन अर पंचइंद्रियनिका निरोध करना अर छह आवश्यक समयका समय करना अपने मस्तकके डाढीमूछके केशानकूं अपने हस्ततैं उपवासका दिनमैं उपाडना दोय महीना पूर्ण भए उत्कृष्ट लोंच है मध्यम तीनमहीने गये लोंच करे जघन्य चारमहीने गए लोंच करै है सो लोंचकरना हू तप है अन्य भेषीनिकी ज्यों रोजीना केश नाहीं उपाडै है शीतकाल ग्रीषमकाल वर्षाकालमैं नग्न रहना अर स्नानका नाहीं करना अर भूमिशयनकरि अलपकाल निद्रा लेना दंतनिकूं अंगुलिकरि हू नाहीं धोवना अर एकवार भोजन खडा भोजन रसनीरसस्वादकूं छांडि भोजन करै ऐसे अट्ठाईस मूलगुण अखंड पालना सो बडा तप है इन मूलगुणनिके प्रभावतैं घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं प्राप्त होय मुक्त हो जाय है। यातैं भो ज्ञानीजन हो धर्मको अंग यो तप है याकी निर्विघ्न प्राप्तिकेअर्थि याहीका स्तवनपूजनादिकरि याका महाअर्घ उतारण करो। यातैं दूरि

अर अत्यंतपरोक्ष हू मोक्ष तुम्हारे आतिनिकटताकूं प्राप्त होय है ऐसैं शक्तितस्त्यागनामा सप्तमी भावनाका वर्णन किया ॥ ७ ॥

साधुसमाधि नामा अष्टमीभावनाकूं कहै हैं। जैसैं भंडारमैं लागी हुई अग्निकूं गृहस्थ है सो अपना उपकारक वस्तुका नाश जानि अग्निकूं बुझाइये है क्योंकि अनेक वस्तुकी रक्षा होना वहुत उपकारक है तैसैं अनेक व्रतशीलादि अनेकगुणनिकरि सहित जो व्रती संयमी तिनके कोऊ कारणतैं विघ्न प्रगट होतैं विघ्नकूं दूरिकरि व्रत शीलकी रक्षा करना सो साधुसमाधि है। अथवा गृहस्थके अपने परिणामकूं विगाडनेवाला मरण आ जाय उपसर्ग आ जाय रोग आ जाय इष्टवियोग हो जाय अनिष्टसंयोग आ जाय तदि भयकूं नाहीं प्राप्त होना सो साधुसमाधि है। सम्यग्ज्ञानी ऐसा विचार करै है हे आत्मन्! तुम अखंड अविनाशी ज्ञानदर्शन स्वभाव हो तुम्हारा मरण नाहीं जो उपज्या है सो विनशैगा पर्यायका विनाश है चैतन्य द्रव्यका विनाश नाहीं है पांच इंद्रिय अर मनवल कायवल वचनवल आयुवल अर उस्वास ये दशप्राण हैं इनिका नाशकूं मरण कहिये है तुम्हारा ज्ञानदर्शन सुख सत्ता इत्यादिक भावप्राण हैं तिनका कदाचित् नाश नाहीं है तातैं देहका नाशकूं अपना नाश मानना सो मिथ्याज्ञान है। भो ज्ञानिन्! हजारां कर्मनिकरि भरया हाडमांसमय दुर्गंध विनाशीक देहका नाश होते तुम्हारे कहा भय है तुम तो अविनाशी ज्ञानमय हो यो मृत्यु है सो बडा उपकारी मित्र है जो गल्या सड्या देहमैंतैं काढि तुमकूं देवादिकनिका उत्तमदेह धारण करावै है मरण मित्र नाहीं होता तो इस देहमैं केतेकाल वसता अर रोगका अर दुःखनिका भर्या देहतैं कौन निकासता अर समाधिमरणादिककरि आत्माका उद्धार कैसैं होता अर व्रततपसंयमका उत्तमफल मृत्युनामामित्रका उपकारविना कैसैं पावता अर पापतैं कौन भयभीत होता अर मृत्युरूप कल्पवृक्षविना चारिआराधनाका शरण ग्रहण कराय संसाररूप कर्दमतैं कौन काढता तातैं संसारमैं जिनका चित्त आसक्त है अर देहकूं अपना रूप जानै हैं तिनके मरणका भय है सम्यग्दृष्टि देह

तैं अपना स्वरूपकूं भिन्न जानि भयकूं प्राप्त नाहीं होय है तिनके साधुसमाधि होय है अर जो मरणके अवसरमैं कदाचित् रोगदुःखादिक आवै हैं सो हू सम्यग्दृष्टिके देहसूं ममत्व छुडावनेके अर्थि हैं अर त्याग संयमादिकके सन्मुख करनेकेअर्थि हैं प्रमादकूं छुडाय सम्यग्दर्शनादिक चारिआराधनामैं दृढताकेअर्थि हैं अर ज्ञानी विचारै है जो जन्म धाऱ्या है सो अवश्य मरैगा जो कायर होहूंगा तो मरण नाहीं छांडैगा अर धीर होय रहूंगा तो मरण नाहीं छांडैगा तातैं दुर्गतिका कारण जो कायरतातैं मरण ताकूं धिक्कार होहु अब ऐसा साहसतैं मरूं जो देह मरि जाय अर मेरा ज्ञानदर्शनस्वरूपका मरण नाहीं होय ऐसैं मरण करना उचित है तातैं उत्साहसहित सम्यग्दृष्टिके मरणका भय नाहीं सो साधुसमाधि है।

बहुरि देवकृत मनुष्यकृत तिर्यंचकृत उपसर्गकूं होते जाके भय नाहीं होय पूर्वकर्मका उपजाया निर्जरा ही मानै है ताके साधुसमाधि है। बहुरि रोगका भयकूं नाहीं प्राप्त होय हैं जातैं ज्ञानी तो अपना देहकूं ही महारोग मानै है जातैं निरंतर क्षुधातृषादिक घोररोगकूं उपजावनेवाला शरीर है बहुरि यो मनुष्यशरीर है सो वातपित्तकफादिक त्रिदोषमय है असातावेदनीयकर्मके उदयतैं त्रिदोषकी घटतीबधती-तैं ज्वर कांस स्वास अतिसार उदरशूल शिरशूल नेत्रका विकार वातादिपीडा होते ज्ञानी ऐसा विचार करै है जो यो रोग मेरे उत्पन्न भया है सो याकूं असातावेदनीयकर्मको उदय तो अंतरंग कारण है अर द्रव्य क्षेत्रकालादि बहिरंग कारण है सो कर्मके उदयकूं उपशम हुआ रोगका नाश होयगा असाताका प्रबल उदयकूं होते बाह्य औषधादिक ही रोग मेटनेकूं समर्थ नाहीं है अर असाताकर्मके हरनेकूं कोऊ देव दानव मंत्र तंत्र औषधादिक समर्थ हैं नाहीं यातैं अब संक्लेशकूं छांडि समता ग्रहण करना अर बाह्य औषधादिक हैं ते असाताके मंद उदय होतैं सहकारी कारण हैं असाताका प्रबल उदय होतैं औषधादिक बाह्यकारण रोग मेटनेकूं समर्थ नाहीं है ऐसा विचार असाताकर्मके नाशका कारण परमसमता धारण करि संक्लेशरहित होय सहना कायर नाहीं होना सो ही साधुसमाधि है। बहुरि इष्टका वियोग होतैं अर

अनिष्टका संयोग होतैं ज्ञानकी दृढतातैं जो भयकूं प्राप्त नाहीं होना सो साधुसमाधि है। पुरुष जन्मजरामरण-करि भयवान है अर सम्यग्दर्शनादिगुणनिकरि सहित है सो पर्यायका अनंतकालमैं आराधनाका शरण-सहित अर भयकरिरहित देहादिक समस्तपरद्रव्यानिमैं ममतारहित हुआ व्रतसंयमसहित समाधिमरणकी बांछा करै है। इस संसारमैं परिभ्रमण करता अनंतानंत काल व्यतीत भया समस्त समागम अनेकवार पाया परंतु सम्यक्समाधिमरणकूं नाहीं प्राप्त भया हूं जो समाधिमरण एकबार हू होता तो जन्ममरणका पात्र नाहीं होता संसार परिभ्रमण करता मैं भवभवमैं अनेक नवीन नवीन देह धारण किये ऐसा कौन देह है जो मैं नाहीं धारण किया अब इस वर्तमानदेहमैं कहा ममत्व करूं अर मेरे भवभवमैं अनेक स्वजन कुटुंबजनका हू संबंध भया है अब ही स्वजन नाहीं मिलैं हैं यातैं कौन कौन स्वजनमैं राग करूं अर मेरे भवभवमैं अनेकबार राजऋद्धि हू उपजी अबमैं इस तुच्छ संपदामैं ममता कहा करूंगा भवभवमैं मेरे अनेक मातापिता हू पालना करनेवाले हो गये अब ही नाहीं भये हैं। बहुरि मेरे भवभवमैं नारीपणा हू भया अर मेरे भवभवमैं कामकी तीव्रलंपटतासहित नपुंसकपणा हू भया अर मेरे भवभवमैं अनेकबार पुरुषपणा हू भया तो हू वेदके अभिमानकरि नष्ट होता फिर्‍या अर भवभवमैं अनेक जातिके दुःखकूं प्राप्त भया ऐसा संसारमैं कोऊ दुःख नाहीं है जो मैं अनेकबार नाहीं पाया अर ऐसा कोऊ इंद्रियजनित सुख हू नाहीं है जो मैं अनेकबार नाहीं पाया अर अनेकबार नरकमैं नारकी होय होय असंख्यातकाल पर्यंत प्रमाणरहित नानाप्रकारके दुःख भोगे अर अनेक भव तीर्यंचनिके प्राप्त होय होय असंख्यात अनं-तबार जन्ममरण करता अनेकप्रकारके दुःख भोगता भोगता वारंवार परिभ्रमण किया अनेकबार धर्म-वासनारहित मिथ्यादृष्टी मनुष्य हू भया अर अनेकबार देवलोकनिमैं हू प्राप्त भया अर अनेक भवनिमैं जिनेंद्रकूं पूज्या अनेक भवनिमैं गुरुवंदना हू करी अनेकभवनिमैं मिथ्यादृष्टि हुआ कपटतैं आत्मनिंदा हू करी अनेक भवनिमैं दुर्द्धर तप हू धारण किया अनेक भवनिमैं भगवानका समवसरणहूमैं संचार

किया अर अनेक भवनिमैं श्रुतज्ञानके अंगनिका हू पठनपाठनादिक अभ्यास किया तथापि अनंतकाल भव-निवासी ही रह्या यद्यपि जिनेंद्रकूं पूजना गुरुनिकी वंदना तथा आत्मनिंदा करना तथा दुर्द्धरतपश्चरण करना समवसरणमैं जावना श्रुतनिके अंगनिका अभ्यास करना इत्यादिक ये कार्य प्रशंसायोग्य हैं पापका विनाशक हैं पुण्यका कारण हैं तोहू सम्यग्दर्शनविना अकृतार्थ हैं संसारपरिभ्रमणकूं नाहीं रोकि सकैं हैं सम्यग्दर्शनविना समस्त क्रिया पुण्यका बंध करनेवाली है सम्यग्दर्शनसहित होय तदि संसारको छेद करै सो ही आत्मानुशासनमैं कह्या है—

समबोधवृत्ततपसां पाषाणस्येव गौरवं पुंसः । पूज्यं महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वसंयुक्तं ॥ १ ॥

अर्थ—पुरुषके समभाव अर ज्ञान अर चारित्र अर तप इनको महानपणो पाषाणका महानपणाके तुल्य है अर ये ही जे समबोध चारित्र अर तप जो सम्यक्त्वसहित होंय तो महामणिकी ज्यों पूज्य हो जाय । भावार्थ—जगतमैं मणि है सो हू पाषाण है अर अन्य झाझडा पत्थर है सो हु पाषाण है परन्तु पाषाण तो मण दोय मणहू बांधि ले जाय बेचै तो हू एक पीसो उपजै तातैं एकदिन हू पेट नाहीं भरै अर मणि केईं रती हू ले जाय बेचै तो हजारां रुपया उपजै समस्तजन्मका दारिद्र नष्ट होजाय तैसैं समभाव अर शास्त्रनिका ज्ञान अर चारित्रधारण अर घोरतपश्चरण ये सम्यक्त्वविना बहुतकाल धारण करै तो राज्यसंपदा पावै तथा मंदकषायके प्रभावतैं देवलोकमैं जाय उपजै फिर चयकरि एकइंद्रियादिक पर्यायनिमैं परिभ्रमण करै अर जो सम्यक्त्वसहित होय तो संसारपरिभ्रमणका नाशकरि मुक्त होजाय तातैं सम्यक्त्वविना मिथ्यादृष्टि है सो जिनकूं पूजो वा गुरुवंदना करो समवसरणमैं जावो श्रुतका अभ्यास करो तप करो तोहू अनंतकाल संसारवास ही करैगा इस तीनभवमैं सुख दुःखकी समस्त सामग्री यो जीव अनन्तबार पाई कोऊ हू दुर्लभ नाहीं एक साधुसमाधि जो रत्नत्रयका लाभकूं निर्विघ्न परलोकताईं ले जाना है सो रत्नत्रयसहित हुवा देहकूं छांडे है तिनके साधुसमाधि होय ताका पावना ही दुर्लभ है साधु-

समाधि है सो चतुर्गतिनिमैं परिभ्रमणके दुःखका अभावकरि निश्चल स्वाधीन अनंतसुखकूं प्राप्त करै है जो पुरुष साधुसमाधि भावनाकूं निर्विघ्नप्राप्त होनेके अर्थि इस भावनाकूं भावता याका महान अर्घ उतारण करै है सो ही शीघ्र संसारसमुद्रकूं तिरि अष्टगुणानिका धारक सिद्ध होय है ऐसैं साधुसमाधिनामा अष्टमीभावना वर्णन करी ॥ ८ ॥

अब वैयावृत्तिनामा नवमी भावनाका वर्णन करिये है। कोठा अर उदरकी व्यथा जो आमवात संग्रहणी कठोदर सफोदर नेत्रशूल कर्णशूल शिरःशूल दंतशूल तथा ज्वर कास स्वास जरा इत्यादिक रोगानिकरि पीडित जे मुनि तथा श्रावक तिनकूं निर्दोष आहार औषध वस्तिकादिक करि सेवा करना तिनकी शुश्रूषा करना विनय करना आदर करना दुःख दूरि करनेमैं यत्नकरना सो समस्त वैयावृत्य है जे तपकरि तप्त होंय अर रोगकरि युक्त जिनका शरीर होय तिनके वेदना देखकर तिनके अर्थि प्रासुक औषधि तथा पथ्यादिककरि रोगका उपशम करना सो नवमो वैयावृत्य नाम गुण है वैयावृत्य मुनीश्वरनिके दशभेद करि दश प्रकार है। आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन दश प्रकारके मुनीश्वरनिके परस्पर वैयावृत्य होय है कायकी चेष्टाकरि वा अन्यद्रव्यकरि दुःख वेदनादिक दूर करनेमैं व्यापार करिये प्रवर्तन करिये सो वैयावृत्य है। इन दश प्रकारके मुनिनिका ऐसा स्वरूप जानना जिनतैं स्वर्गमोक्षके सुखके बीज जे व्रत तिननैं आदरसहित ग्रहण करिकै भव्यजीव अपने हितके अर्थि आचारण किए ते सम्यग्ज्ञानादिगुणनिके धारक आचार्य हैं। भावार्थ–जिनतैं मोक्षके स्वर्गके साधक व्रत आचारण करिये ते आचार्य हैं जिनका समीपकूं प्राप्त होय आगमकूं अध्ययन करिये ते व्रत शीलश्रुतके आधार ऐसे उपाध्याय हैं महान् अनशनादितपमैं तिष्ठै ते तपस्वी हैं जे श्रुतके शिक्षणमैं तत्पर निरंतर व्रतनिकी भावनामैं तत्पर ते शैक्ष्य हैं रोगादिककरि जाका शरीर क्लेशित होय सो ग्लान है वृद्धमुनिनिकी परिपाटीका होय सो गण है आपकूं दीक्षा देनेवाला

आचार्यका शिष्य होय सो कुल है च्यारिप्रकारके मुनिका समूह सो संघ है चिरकालका दीक्षित होय सो साधु है जो पण्डितपणाकरि वक्तापणाकरि ऊंचे कुलकरि लोकनिमैं मान्य होय धर्मका गुरु कुलका गौरवपणाका उत्पन्न करनेवाला होय सो मनोज्ञ है अथवा असंयतसम्यग्दृष्टि हू संसारका अभाव-रूपपणातैं मनोज्ञ है इन दश प्रकारकेनकै रोग आजाय परीषहनिकरि खेदित होय तथा श्रद्धानादि बिगडि मिथ्यात्वादिक प्राप्त होय जाय तो प्रासुक ओषधि भोजनपान योग्य स्थान आसन काष्ठ-फलक तृणादिकनिका संस्तरादिकनिकरि अर पुस्तक पीछिकादिक धर्मोपकरण करि जो प्रतिकार उपकार करिये तथा सम्यक्त्वमैं फेरि स्थापन करिये इत्यादि उपकार सो वैयावृत्य है। अर जो बाह्य भोजन पान औषधादिक नाहीं सम्भवते होंय तो अपने कायकरके कफ तथा नाशिकामल मूत्रादि दूरि करनेकरि तथा उनके अनुकूल आचरणकरनेकरि वैयावृत्य होय है इस वैयावृत्यमैं संयमका स्थापन ग्लानिको अभाव अर प्रवचनमैं वात्सल्यपणो अर सनाथपणो इत्यादि अनेकगुण प्रगट होय हैं वैयावृत्यही परम धर्म है वैयावृत्य नाहीं होय तो मोक्षमार्ग बिगडि जाय आचार्यादिक हैं ते शिष्य मुनि तथा रोगी इत्यादिकका वैयावृत्य करनेतैं बहुत विशुद्धता उच्चताकूं प्राप्त होय हैं ऐसेही श्रावकादिक मुनिका वैयावृत्य करै तथा श्रावक श्राविकाका करैं औषधदानकरि वैयावृत्य करैं अर भक्तिपूर्वक युक्तिकरि देहका आधार आहारदानकरि वैयावृत्य करैं अर कर्मके उदयतैं दोष लगि गया होय ताका ढांकना तथा श्रद्धानसूं चलायमान भया होय ताकूं सम्यग्दर्शन ग्रहण करावना तथा जिनेंद्रके मार्गसूं चालि गया होय ताकूं मार्गमैं स्थापन करना इत्यादिक उपकारकरि वैयावृत्य है। बहुरि जो आचार्यादि गुरु शिष्यकूं श्रुतका अंग पढावै तथा व्रत संयमादिककी शुद्धिकौ उपदेश करै सो शिष्यका वैयावृत्य है अर शिष्यहू गुरुनिकी आज्ञाप्रमाण प्रवर्तता गुरुनिका चरणनिका सेवन करै सो आचार्यका वैयावृत्य है बहुरि अपना चैतन्यस्वरूप आत्माकूं रागद्वेषादिक दोषनिकरि लिप्त नाहीं होने देना सो

अपने आत्माका वैयावृत्य है तथा अपने आत्माकूं भगवानके परमागममें लगाय देना तथा दशलक्षणरूप धर्ममें लीन होना सो आत्मवैयावृत्य है। तथा काम क्रोध लोभादिकके अर्थ अर इंद्रियनिके विषयनिके आधीन नाहीं होना सो अपना आत्माका वैयावृत्य है। बहुरि इहां औरहू विशेष जानना जो रोगी मुनिका तथा गुरुनिका प्रातःकाल अर अथणने शयन आसन कमंडलु पीछी पुस्तक नेत्रनिसूं देखि मयूरपीच्छिकातें शोधना तथा असक्तरोगीमुनिका आहार औषधादिकरि संयमके योग्य उपकार करना तथा शुद्ध ग्रंथनिके वाचनेकरि धर्मका उपदेशकरि परिणामकूं धर्ममें लीन करना तथा उठावना बैठावना मलमूत्र करावना कलोट लिवाना इत्यादिककरि वैयावृत्य करै तथा कोऊ साधु मार्गकरि खेदित होय तथा भील म्लेक्ष दुष्टराजा दुष्टतिर्यंचनिकरि उपद्रवरूप हुआ होय दुर्भिक्ष मारी व्याधि इत्यादिक उपद्रवकरि पीडा होनेतैं परिणाम कायर भया होय ताकूं स्थान देय कुशल पूछिकरि आदरकरि सिद्धांततैं शिक्षाकरि स्थितीकरण करना सो वैयावृत्य है। बहुरि जो समर्थ होय करकेहू अपना बलवीर्यकूं छिपाय वैयावृत्य नाहीं करै है सो धर्मरहित है। तीर्थंकरनिकी आज्ञाभंग करी श्रुतकरि उपदेश्या धर्मकी विराधना करी आचार बिगिड्या प्रभावना नष्ट करी धर्मात्माकी आपदाहूमें उपकार नाहीं किया तदि धर्मतैं परांमुख भया श्रुतकी आज्ञा लोपनेतैं परमागमतैं परांमुख भया अर जाके ऐसा परिणाम होय जो अहो मोह अग्निकरि दग्ध होता जगतमें एक दिगम्बर मुनि ज्ञानरूप जलकरि मोहरूप अग्निकूं बुझाय आत्मकल्याणकूं करै है धन्य हैं, जे कामकूं मारि रागद्वेषका परिहारकरि इंद्रियनिकूं जीत आत्माके हित मैं उद्यमी भए हैं ये लोकोत्तर गुणनिके धारक हैं मेरै ऐसे गुणवंतनिका चरणनिका ही शरण होहू ऐसे गुणनिमैं परिणाम वैयावृत्यतैं ही होय है अर जैसे जैसे गुणनिमैं परिणाम राचैं हैं तैसैं तैसैं श्रद्धान बधै है श्रद्धान बधै तदि धर्ममैं प्रीति बधै अर धर्ममैं प्रीति बधै तदि धर्मके नायक अरहंतादिक पंच परमेष्ठीके गुणनिमैं अनुरागरूप भक्ति बधैं है कैसीक भक्ति होय है जो मायाचाररहित मिथ्याज्ञानरहित भोगानि-

की वांछारहित अर मेरुकी ज्यों निष्कंप अचल ऐसी जिनभक्ति जाके होय ताके संसारके परिभ्रमणका भय नाहीं रहै है सो भक्ति धर्मात्माकी वैयावृत्यतैं होय है। बहुरि पंच महाव्रतनिकरि युक्त अर कषाय करि रहित रागद्वेषका जीतनेवाला श्रुतज्ञानरूप रत्ननिका निधान ऐसा पात्रका लाभ वैयावृत्य करनेवालेके होय है जो रत्नत्रयधारीका वैयावृत्य किया सो रत्नत्रयसूं अपना जोड बांधि आपकूं अर अन्यकूं मोक्षमार्गमैं स्थापे है। बहुरि वैयावृत्य अंतरंग बहिरंग दोऊ तपनिमैं प्रधान कर्मकी निर्जराका प्रधान कारण है जो आचार्यको वैयावृत्य कीयो सो समस्तसंघको सर्व धर्मको वैयावृत्य कीयो भगवानकी आज्ञा पाली अर आपके अर परके संयमकी रक्षा शुभध्यानकी वृद्धि अर इंद्रियनिका निग्रह किया रत्नत्रयकी रक्षा अर अतिशयरूप दान दीया निर्विचिकित्सा गुणकूं प्रगट दिखाया जिनेंद्रधर्मकी प्रभावना करी धन खरच देना सुलभ है रोगीकी टहल करना दुर्लभ है अन्यका औगुण ढाकना गुण प्रकट करना इत्यादिक गुणनिके प्रभावतैं तीर्थंकर नाम प्रकृतिका बंध करै है यो वैयावृत्य जगतमैं उत्तम ऐसी जिनेन्द्रकी शिक्षा है जो कोऊ श्रावक वा साधु वैयावृत्य करै है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकूं पावै है। बहुरि जो अपना सामर्थ्यप्रमाण छःकायकी जीवनिकी रक्षामैं सावधान है ताके समस्त प्राणीनिका वैयावृत्य होय है ऐसैं वैयावृत्य नाम नवमी भावना वर्णन करी ॥ ९ ॥

अब अरहंतभक्ति नाम दशमीभावना वर्णन करै हैं। जो मनवचनकाय करिकै जिन ऐसे दोय अक्षर सदाकाल स्मरण करै है सो अरहंतभक्ति है। भावार्थ—अरहंतके गुणनिमैं अनुराग सो अरहंतभक्ति है जो पूर्वजन्ममैं षोडशकारण भावना भाई है सो तीर्थंकर होय अरहंत होय है ताके तो षोडशकारण नाम भावनातैं उपजाया अद्भुतपुण्य ताके प्रभावतैं गर्भमैं आवनेके छह महीने पहली इंद्रकी आज्ञातैं कुवेर है सो बारहयोजन लम्बी नवयोजन चौडी रत्नमय नगरी रचै है तिसके मध्य राजाके रहनेका महलनिका वर्णन अर नगरीकी रचना अर बडे द्वार अर कोट खाई पडकोटो इत्यादिक रतन-

मई जो कुबेर रचै है ताकी महिमा तो कोऊ हजार जिह्वानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है तहां तीर्थंकरकी माताका गर्भका शोधना अर रुचकद्वीपादिकमैं निवास करनेवाली छप्पन कुमारिका देवी माताकी नाना प्रकारकी सेवा करनेमैं सावधान होय हैं अर गर्भके आवनेके छह महिना पहली प्रभात मध्याह्न अर अपराह्न एक एक कालमैं आकाशतैं साढा तीनकोटि रतननिकी वर्षा कुबेर करै है अर पाछैं गर्भमैं आवतैं ही इंद्रादिक च्यारि निकायके देवनिका आसन कंपायमान होनेतैं च्यारिप्रकारके देव आय नगरकी प्रदक्षिणा देय मातापिताकी पूजा सत्कारादिकरि अपने स्थान जाय हैं अर भगवान तीर्थंकर स्फटिकमणिका पिटारासमान मलादिरहित माताका गर्भमैं तिष्ठै है अर कमलवासिनी छहदेवी अर छप्पन रुचिकद्वीपमैं वसनेवाली अर और अनेकदेवी माताकी सेवा करै हैं अर नवमहीना पूर्ण होतैं उचित अवसरमैं जन्म होते ही च्यारो निकायके देवनिका आसन कम्पायमान होना अर वादित्रनिका अकस्मात बाजनेतैं जिनेन्द्रका जन्म जानि बडा हर्षतैं सौधर्म नामा इन्द्र लक्षयोजन प्रमाण ऐरावत हस्ती ऊपरि चढि अपना सौधर्म स्वर्गका इकतीसमा पटलमैं अठारमां श्रेणीबद्ध नाम विमानतैं असंख्यातदेव अपने परिकरनिकरि सहित साढा बाराकोडिजातिका वादित्रनिकी मिष्टध्वनि अर असंख्यात देवनिका जयजयकार शब्द अर अनेक ध्वजा अर उत्सवसामिग्री अर कोट्यां अप्सरानिका नृत्यादिक उत्सव अर कोट्यां गंधर्वदेवनिका गावनेकरि सहित असंख्यात योजन ऊंचा इहांतैं इंद्रका रहनेका पटल अर असंख्यातयोजन तिर्यक् दक्षिणदिशामैं है तहां ते जबूद्वीपपर्यंत असंख्यात योजन उत्सव करते आय नगरकी प्रदक्षिणा देय इंद्राणी प्रसूतिगृहमैं जाय माताकूं मायानिद्राके वशिकरि वियोगके दुःखके भयतैं अपनी देवत्वशक्तितैं तहां बालक और रचि तीर्थंकरकूं बडी भक्तितैं ल्याय इंद्रकूं सौंपे है तिसकालमैं देखतां देखतां इंद्र तृप्तताकूं नाहीं प्राप्त होता हजार नेत्र रचिकरि देखै है फिर तहां ईशानादिक स्वर्गनिके इंद्र अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिषीनिके इंद्रादिक असंख्या-

तदेव अपनी अपनी सेना वाहन परिवार सहित आवैं हैं तहां सौधर्म इंद्र ऐरावति हस्ती ऊपरि चढ्या भगवानकूं गोदमें लेय चालै तहां ईशानइंद्र छत्र धारण करै अर सनतकुमार महेंद्र चमर ढारते अन्य असंख्यातदेव अपने अपने नियोगमें सावधान बडा उत्सवतें मेरुगिरीका पांडुकवनमें पांडुकशिला- ऊपरि अकृत्रिम सिंहासन है तिसऊपरि जिनेंद्रकूं पधराय अर पांडुकवनतें क्षीर समुद्र पर्यंत दोऊतरफ देवांकी पंकति वंध जाय है सो क्षीरसमुद्र मेरुकी भूमितैं पांचकोड दशलाख साढागुणचासहजार योजन परै है तिस अवसरमें मेरुकी चूलिकातैं दोऊ तरफ मुकुट कुंडल हार कंकणादि अद्भुत रत्नानिके आभरण पहरैं देवनिकी पंकति मेरुकी चूलिकातैं क्षीरसमुद्रपर्यंत श्रेणी बंधे हैं अर हाथूंहाथ कलश सौंपैं हैं तहां दोऊ तरफ इंद्रके खडे रहनेके अन्य दोय छोटे सिंहासन ऊपरि सौधर्म ईशान इंद्र कलश लेय अभिषेक एकहजार आठ कलशनिकरि करै है तिन कलशनिका मुख एकयोजनका उदर चारियोजन चौडा आठयोजन ऊंचा तिन कलशनितैं निकसी धारा भगवानके वज्रमय शरीर ऊपरि पुष्पनिकी वर्षा समान बाधा नहीं करै है अर पाछे इंद्राणी कोमलवस्त्रतैं पूंछ अपना जन्मकूं कृतार्थ मानती स्वर्गतैं ल्याये रतनमय समस्त आभरण वस्त्र पहरावै है तहां अनेकदेव अनेक उत्सव विस्तारै हैं तिनकूं लिखनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं फिर मेरुगिरतैं पूर्ववत् उत्सव करते जिनेंद्रकूं ल्याय माताकूं समर्पण करि इंद्र वहां तांडव- नृत्यादिक जो उत्सव करै है तिन समस्त उत्सवानिकूं कोऊ असंख्यातकालपर्यंत कोटि जिह्वानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है। जिनेंद्र जन्मतैं ही तीर्थंकर प्रकृतिके उदयके प्रभावतैं दश अतिशय जन्मतैं लिये ही उपजैं हैं पसेवरहित शरीर होय, मल मूत्र कफादिकरहितपना, अर शरीरमें दुग्धवर्ण रुधिर, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, अद्भुत अप्रमाणरूप, महासुगंध शरीर, अप्रमाणबल, एक हजार आठ लक्षण, प्रियहितमधुरवचन ये समस्त पूर्वजन्ममें षोडशकारण भावना भाई ताका प्रभाव है बहुरि इंद्र अंगुष्ठमें स्थाप्या अमृत ताकूं पान करता माताका स्तनतैं उपज्या दुग्धपान नाहीं

करै हैं फिर अपनी अवस्थाके समान बने देवकुमारानिमें क्रीडा करते वृद्धिकूं प्राप्त होय है अर स्वर्गलोकतैं आये आभरण वस्त्र भोजनादिक मनोवांछित देव लीयें सासता रात्रिदिन हाजिर रहैं हैं पृथ्वीलोकका भोजन आभरण वस्त्रादिक नाहीं अंगीकार करैं हैं स्वर्गतैं आये ही भोगैं हैं । बहुरि कुमारकाल व्यतीत करि इंद्रादिकनिकरि कीये अद्भुत उत्साह करि भाक्तिपूर्वक पिताकरि समर्पण कीया राज्य भोगि अवसर पाय संसार देह भोगनितैं विरागता उपजै तदि अनित्यादिक बारह भावना भावते ही लोकांतिकदेव आय बंदना स्तवनरूप संबोधनादिक करैं हैं अर जिनेंद्रका विराग भाव होतेही चारिनिकायके इंद्रादिकदेव अपने आसन कंपायमान होनेतैं जिनेंद्रके तपका अवसर अवधिज्ञानतैं जानि बडे उत्सवतैं आय अभिषेककरि देवलोकके वस्त्राभरणते भाक्तितैं भूषितकरि रत्नमयी पालकी रचि जिनेंद्रकूं चढाय अप्रमाण उत्सव अर जयजयकार शब्दसाहित तपके योग्य वनमैं जाय उतारैं तहां वस्त्र आभरण समस्त त्यागैं देव अधर झेलि मस्तक चढावैं अर पंचमुष्टी लोंच सिद्धनिकूं नमस्कारकरि करैं तदि केशनिकूं महा उत्तम जाणि इंद्र रत्ननिके पात्रमें धारणकरि क्षीरसमुद्रमैं बडी भक्तितैं क्षेपै है जिनेंद्र केतक कालमें तपके प्रभावतैं शुक्लध्यानके प्रभावतैं क्षपकश्रेणीमें घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं उत्पन्न करैं है तादि अरहंतपना प्रगट होय है तदि केवलज्ञान रूप नेत्रकरि भूत भविष्यत वर्तमान त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यनिकी अनंतानंत परणातिसाहित अनुक्रमतैं एकसमयमैं युगपत समस्तकूं जानै है देखै है । तदि च्यारिनिकायके देव ज्ञानकल्याणककी पूजा स्तवन करि भगवानका उपदेशके अर्थि समवसरण अनेक रत्नमय रचैं हैं तिस समवसरणकी विभूतिका वर्णन कौन कर सकै ? पृथ्वीतैं पांच हजार धनुष ऊंचा जाके बीस हजार पैडी तीऊपरि इंद्रनीलमणिमय गोल भूमि बारह योजन प्रमाण तिसऊपरि अप्रमाणमहिमासाहित समवसरण रचना है । जहां समवसरण रचना होय है अर भगवानका विहार होय है तहां आंधेनिकूं दीखने लगि जाय बहरे श्रवण करने लगि

जांय लूले चालने लगि जांय हैं गूंगे बोलने लगि जांय हैं वीतरागकी अद्भुत महिमा है जाके धूलिशालादिक रत्नमय कोट मानस्तंभ अर बावड्या अर जलकी खातिका अर पुष्पवाडी फिर रत्नमय कोट दरवाजे नाट्यशाला उपवन वेदी भूमि फिर कोट फिर कल्पवृक्षनिका वन रत्नमयस्तूप फिर महलनिकी भूमि फिर स्फटिकका कोटमैं देवच्छद नाम एक योजनका मंडप सर्व तरफ द्वादश सभा तिनकरि सेवित रत्नमय तीन कटनी गंधकुटीमैं सिंहासन ऊपरि च्यारि अंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान अरहंत हैं जिनकी अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखमयी अंतरंग विभूतिकी महिमा कहनेकूं च्यारि-ज्ञानके धारक गणधर समर्थ नाहीं अन्य कौन कहि सकै अर समवसरणकी विभूति ही वचनके अगोचर है अर गंधकुटी तीसरा कटणी उपरि है तहां चउसठि चमर बत्तीस युगल देवनिके मुकट कुंडल हार कडा भुजबंधादिक समस्त आभरण पहिरे ढालि रहैं हैं तीन छत्र अद्भुत कांतिके धारक जिनकी कांतितैं सूर्य चंद्रमा मंदज्योति भासैं हैं अर जिनकी देहका प्रभामंडलको चक्र बँध रह्या जाकरि समवसरणमैं रात्रिदिनको भेद नाहीं रहै है सदा दिवस ही प्रवर्तै है अर महासुगंध त्रैलोक्यमैं ऐसा सुगंध और नाहीं ऐसी गंधकुटीके ऊपर देवनिकरि रच्या अशोकवृक्षकूं देखते ही समस्तलोकनिका शोक नष्ट होय जाय है अर कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वर्षा आकाशतैं होय है अर आकाशमैं साढाबारकोटि जातिके वादित्र-निकी ऐसी मधुर ध्वनि होय है जिनके श्रवणमात्रतैं क्षुधातृष्णादिक समस्तरोग वेदना नष्ट हो जाय है अर रत्नजडित सिंहासन सूर्यकी कांतिकूं जीते है। बहुरि जिनेंद्रकी दिव्यध्वनिकी अद्भुत महिमा त्रैलो-क्यवर्ती जीवनिकै परम उपकार करनेवाली मोहअंधकारका नाश करै है अर समस्त जीव अपनी अपनी भाषामैं शब्द अर्थ ग्रहण करै हैं अर समस्तजीवनिके संशय नाहीं रहै है स्वर्गमोक्षका मार्गकूं प्रगट करे है दिव्यध्वनिकी महिमा वचन द्वारै गणधर इंद्रादिक कहनेकूं समर्थ नाहीं है जिनके समवसरणमैं जाति-विरोधी जीवनिकै वैर विरोध नाहीं रहै है समवसरणमैं सिंह अर गज, व्याघ्र अर गौ मार्जारी अर हंस

इत्यादिक जातिविरोधी जीव वैरबुद्धि छांडि परस्पर मित्रताकूं प्राप्त होय हैं। वीतरागताकी अद्भुत महिमा है जिनके असंख्यात देव जयजयकार शब्द करै हैं जिनके निकटताकूं पायकरिकै देवनिकरि रचे कलश झारी दर्पण ध्वजा ठौंणो छत्र चमर बीजणा ये अचेतन द्रव्यहू लोकमैं मंगलताकूं प्राप्त होय हैं। अर केवलज्ञान उत्पन्न भये पीछै दश अतिशय प्रगट होय हैं चारों तरफ सौ सौ योजन सुभिक्षता, अर आकाशगमन भूमिका स्पर्श नाहीं करै, अर कोऊ प्राणीका बध नाहीं होय, अर भोजनका अभाव अर उपसर्गका अभाव, अर चतुर्मुख दीखै, अर समस्त विद्याका ईश्वरपना, छायारहितपणा अर नेत्र टिमकारै नाहीं, अर केश नख बधैं नाहीं ऐ दश अतिशय घातियाकर्मका नाशतैं स्वयं प्रगट होय हैं। अर तीर्थंकर प्रकृतिका प्रभावतैं चौदह अतिशय देवनिकरि किये होय हैं। अर्द्धमागधी भाषा, समस्त जनसमूहमैं मैत्रीभाव, समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिकसहित वृक्ष होय हैं पृथ्वी दर्पणसमान रत्नमयी तृण-कंटक-रज-रहित होय है, शीतल मंद सुगंध पवन चलै है, समस्त जनोंके आनंद प्रगट होय है, अनुकूल पवन सुगंध जलकी वृष्टिकरि भूमि रजरहित होय है, चरण धरैं तहां सात आगे सात पाछे एक बीच ऐसे पंदरा पंदराकरि दोयसै पच्चीस कमल देव रचैं हैं, आकाश निर्मल, दिशा निर्मल, च्यार निकायके देवनिकरि जयजय शब्द, एक हजार आरांकरिसहित किरणानिका धारक अपना उद्योतकरि सूर्यमंडलकूं तिरस्कार करता धर्मचक्र आगे चालै, अष्ट मंगलद्रव्य ये चौदह देवकृत अतिशय प्रगट होय हैं। क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण रोग शोक भय विस्मय राग द्वेष मोह अरति चिंता स्वेद खेद मद निद्रा इन अष्टादश दोषनिकरि रहित अरहंत तिनको वंदना स्तवन ध्यान करो। या अरहंतभक्ति संसारसमुद्रका तारनेवाली निरंतर चिंतवन करो। सुखका करनेवाला अरहंत ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो अनंत नाम हैं। अर भक्तिका भरया इंद्र भगवानका एक हजारआठ नामकरि स्तवन किया है अर जे अल्पसामर्थ्यके धारक हैं ते हू अपनी शक्ति-

प्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहंतभक्ति संसारसमुद्रको तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमें अरहंतभक्तिमें नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है। अरहंतभक्ति नरकादिगतिकूं हरनेवाली है या भक्तिकौं पूजन स्तवनकरि अर्घ उतार करैं हैं सो देवांका सुख फिर मनुष्यका सुख भोगि अविनाशी सुखका धारक अक्षय अविनाशीसुखकूं प्राप्त होय है ऐसे अरहंतभक्ति नाम दशमी भावना वर्णन करी ॥ १० ॥

अब आचार्य भक्ति नाम ग्यारमीभावना वर्णन करैं हैं। सोही गुरुभक्ति है धन्यभाग जिनका होय तिनके वीतराग गुरुनिके गुणनिमें अनुराग होय है धन्यपुरुषानिके मस्तकऊपरि गुरुनिकी आज्ञा प्रवर्तै है आचार्य हैं सो अनेकगुणनिकी खानि हैं श्रेष्ठतपका धारक हैं यातैं इनका गुण मनविषै धारणकरि पूजिए अर्घ उतराण करिए पुष्पांजलि अग्रभागमैं क्षेपिए जो मेरे ऐसे गुरुनिका चरणनिका शरण ही होहू कैसेक हैं आचार्य जिनके अनशनादिक बारहप्रकारका उज्ज्वल तपनिमैं निरंतर उद्यम है अर छह आवश्यकक्रियामैं सावधान हैं अर पंचाचारके धारक हैं अर दशलक्षणधर्मरूप है परणति जिनकी अर मनवचनकायकी गुप्तिकरि सहित हैं ऐसे छत्तीसगुणनिकरि युक्त आचार्य होय हैं अर सम्यग्दर्शनाचारकूं निर्दोष धारै हैं अर सम्यग्ज्ञानकी शुद्धताकरि युक्त हैं अर त्रयोदशप्रकार चारित्रकी शुद्धताके धारक अर तपश्चरणमैं उत्साहयुक्त अर अपने वीर्यकूं नाहीं छिपावतें बाईसपरिषहनिके जीतनेमैं समर्थ ऐसे निरंतर पंचआचारके धारक हैं अंतरंग बहिरंग ग्रंथकरि रहित निर्ग्रंथ मार्गके गमन करनेमैं तत्पर हैं अर उपवास वेला तेला पंचोपवास पक्षोपवास मासोपवास करनेमैं तत्पर हैं अर निर्जनवनमैं अर पर्वतनिके दराडे अर गुफानिके स्थानमैं निश्चल शुभध्यानमैं निरंतर मनकूं धारै हैं अर शिष्यनिकी योग्यताकूं आछीरीति सूं जानि दीक्षा देनेमैं अर शिक्षाकरनेमैं निपुण हैं अर युक्तितैं नव प्रकार नयके जाननेवाले हैं अर अपने कायसूं ममत्व छांडि रात्रिदिन तिष्ठै हैं संसारकूपमैं पतन हो जानेतैं भयवान हैं मनवचनकायकी शुद्धतायुक्त नासिकाका

अग्रमैं स्थापित करिये है नेत्रयुगल जिनूंने ऐसे आचार्यनिकूं समस्त अंगनिकूं नमाय पृथ्वीमैं मस्तकधारि वंदना करिये है तिन आचार्यनिका चरणनिकरि स्पर्शनभई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरि पूजिए सो संसारपरिभ्रमणका क्लेश पीडाकूं नष्ट करनेवाली आचार्यभक्ति है अब यहां ऐसा विशेष जानना जो आचार्य हैं सो समस्तधर्मके नायक हैं आचार्यनिके आधार समस्त धर्म है यातैं एते गुणनिके धारक ही आचार्य होय बडा राजानिका वा राजाके मन्त्रीनिका वा महान श्रेष्ठीनिका कुलमैं उपज्या होय अर जाके स्वरूपकूं देखतेही शांतपरिणाम हो जांय ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार जगतमैं प्रसिद्ध होय पूर्वै गृहचारामैं भी कदे हीणआचार निंद्यव्यवहार नाहीं किया होय अर वर्तमान भोगसंपदा छांडि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धि की प्रबलता अर तपकी प्रबलताका धारक होय अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सकै तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका वचन श्रवण करतैं ही धर्ममैं दृढता अर संशयका अभाव अर संसार देहभोगनितैं विरागता जाकै निश्चल होय सिद्धांतसूत्रके अर्थका पारगामी होय इंद्रियनिका दमनकरि इसलोक परलोकसंबन्धी भोगविलासरहित देहादिकमैं निर्ममत्व होय महाधीर होय उपसर्गपरीषहनिकरि कदाचित् जाका चित्त चलायमान नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट होजाय धर्मका लोप होजाय स्वमत परमतका ज्ञाता होय अनेकांतविद्यामैं क्रीडा करनेवाला होय अन्यके प्रश्नादिकतैं कायरतारहित तत्काल उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षकूं खंडनकरि सत्यार्थधर्मकूं स्थापन करनेका जाका सामर्थ्य होय धर्मकी प्रभावना करनेमैं उद्यमी होय गुरुनिके निकट प्रायश्चित्तादिकसूत्र पढि छत्तीस गुणनिका धारक होय है सो समस्त संघकी साखिसूं गुरुनिकरि दिया आचार्य पद प्राप्त होय एते गुणनिका धारक होय तिसहीकूं आचार्यपना होय है एते गुणनि विना आचार्य होय तो धर्म तीर्थका

लोप होजाय उन्मार्गकी प्रवृत्ति होजाय समस्तसंघ स्वेच्छाचारी होजाय सूत्रकी परिपाटी अर आचारकी परिपाटी टूटि जाय। बहुरि आचार्यपनाके अन्य अष्ट गुण हैं तिनका धारक होय। आचारवान, आधारवान, व्यवहारवान, प्रकर्ता, अपायोपायविदर्शी, अवपीडक, अपरिश्रावी, निर्यापक ए आठ गुण हैं। तिनमैं पंचप्रकारका आचार धारण करै ताकूं आचारवान कहिये है जीवादिकतत्त्व भगवान सर्वज्ञ वीतराग दिव्य निरावरणज्ञानकरि प्रत्यक्ष देखि कह्या तिनमैं श्रद्धानरूप परणति सो दर्शनाचार है स्वपरतत्त्वनिकूं निर्बाध आगम अर आत्मानुभव करि जाननारूप प्रवृत्ति सो ज्ञानाचार है हिंसादिक पंच पापनिका अभावरूप प्रवृत्ति सो चारित्राचार है अंतरंग बहिरंग तपमैं प्रवृत्ति सो तपाचार है परीषहादिक आए अपनी शक्तिकूं नहीं छिपाय धीरतारूपप्रवृत्ति सो वीर्याचार है तथा औरहू दश प्रकार स्थितकल्पादिक आचारमैं तथा समितिगुप्त्यादिकनिका कथन करिए तो बहुत कथन वधि जाय। पंचप्रकार-आचार आप निर्दोष आचरै अर अन्य शिष्यादिकनिकूं आचरण करावनेमैं उद्यमी होय सो आचार्य है आप हीणाचारी होय सो शिष्यनिकूं शुद्धआचरण नाहीं कराय सकै हीणाचारी होय सो आहार विहार उपकरण वस्तिका अशुद्ध ग्रहण कराय दे अर आपही आचारहीण होय सो शुद्ध उपदेश नाहीं करि सकै तातैं आचार्य आचारवान ही होय ॥ १ ॥ बहुरि जाके जिनेन्द्रका प्ररूप्या च्यार अनुयोगका आधार होय स्याद्वादविद्याका पारगामी होय शब्दविद्या न्यायविद्या सिद्धांतविद्याका पारगामी होय प्रमाणनय निक्षेपणिकरि स्वानुभवकरि भले प्रकार तत्त्वनिका निर्णय किया होय सो आधारवान है जाके श्रुतका आधार नाहीं सो अन्य शिष्यनिका संशय तथा एकांतरूप हठ तथा मिथ्याचरणकूं निराकरण नाहीं करि सकै। बहुरि अनंतानंतकालतैं परिभ्रमण करता जीवके अतिदुर्लभ मनुष्यजन्मका पावना तामैं हू उत्तम देश जाति कुल इंद्रियपूर्णता दीर्घायु सत्संगति श्रद्धान ज्ञान आचरण ए उत्तरोत्तर दुर्लभ संयोग पाय तो अल्पज्ञानी गुरुके निकट वसनेवाला शिष्य सो सत्यार्थ उपदेश नाहीं पावनेतैं यथार्थ आपका स्वरूप

नाहीं पाय संशयरूप होजाय तथा मोक्षमार्गकूं अतिदूर अतिकठिन जानि रत्नत्रयमार्गसूं चलि जाय तथा सत्यार्थ उपदेशविना विषयकषायनिमैं उरझ्या मनकूं निकासनेमैं समर्थ नाहीं होय तथा रोगकृत वेदनामैं तथा घोरउपसर्गपरीषहनितैं चल्या हुआ परिणामकूं श्रुतका अतिशयरूप उपदेशविना थांभनेकूं समर्थ नाहीं होय है। बहुरि मरण आजाय तदि संन्यासका अवसरमैं आहारपानका त्यागका यथाअवसर देशकाल सहाय सामर्थ्यका क्रमकूं समझेविना शिष्यका परिणाम चलि जाय वा आर्त्तध्यान होजाय तो सुगति विगडि जाय धर्मका अपवाद हो जाय अन्य मुनि धर्ममैं शिथिल हो जाय तो बडा अनर्थ है तथा यो मनुष्य आहारमय है आहारतैं जीवै है आहारहीकी निरंतर वांछा करै है अर जब रोगके वशतैं तथा त्याग करनेतैं आहार छूटि जाय तदि दुःखकरि ज्ञानचारित्रमैं शिथिल होय धर्मध्यानरहित हो जाय तो बहुश्रुत गुरु ऐसा उपदेश करै जाकरि क्षुधातृषाकी वेदनारहित होय उपदेशरूप अमृतकरि सींचा हुआ समस्त क्लेशरहित भया धर्मध्यानमैं लीन हो जाय है क्षुधातृषारोगादिककी वेदनासहित शिष्यकूं धर्मका उपदेशरूप अमृतका पान अर शिक्षारूप भोजनकरि ज्ञानसहित गुरुही वेदनारहित करै बहुश्रुतीका आधारविना धर्म रहै नाहीं तातैं आधारवान आचार्य होय ताहीका शरण ग्रहण करना योग्य है बहुरि जो शिष्य वेदनाकरि दुःखित होय ताके हस्त पाद मस्तकका दाबना स्पर्शनादि करना मिष्टवचन कहना इत्यादिककरि दुःख दूर करै तथा पूर्वैं जे अनेकसाधु घोरपरीषह सहकरि आत्मकल्याण किया तिनकी कथाके कहनेकरि तथा देहतैं भिन्न आत्माका अनुभव करावनेकरि वेदनारहित करै तथा भो मुने ! अब दुःखमैं धैर्य धारण करो संसारमैं कौन कौन दुःख नाहीं भोगे अर वीतरागताका शरण ग्रहण करोगे तो दुःखनिका नाशकरि कल्याणकूं प्राप्त होवोगे इत्यादिक बहुत प्रकार कहि मार्गसूं नाहीं चलने देवै तातैं आधारवान गुरुनिहीका शरण योग्य है ॥ २ ॥

बहुरि जो व्यवहार प्रायश्चितसूत्रनिका ज्ञाता होय जातैं प्रायश्चितसूत्र आचार्य होनेयोग्य होय तिसहीकूं

पढावै है औरनिके पढने योग्य नाहीं जो जिनआगमका ज्ञाता अर महाधैर्यवान प्रबलबुद्धिका धारक होय सो प्रायश्चित देवै है अर द्रव्य क्षेत्र काल भाव क्रिया भाव परिणाम उत्साह संहनन पर्याय जो दीक्षा का काल अर शास्त्रज्ञान पुरुषार्थादिक आछी रीति जाणि रागद्वेषरहित होय प्रायश्चित देवै है भावार्थ जामैं ऐसी प्रवीणता होय जो याकूं ऐसा प्रायश्चित दिये याका परिणाम उज्वल होयगा अर दोषका अभाव होयगा व्रतनिमैं दृढता होयगी ऐसा ज्ञाता होय जाके आहारकी योग्यता अयोग्यताका ज्ञान होय तथा या क्षेत्रमैं ऐसा प्रायश्चितका निर्वाह होयगा वा या क्षेत्रमैं निर्वाह नाहीं होयगा तथा इसक्षेत्रमैं वात पित्त कफ शीत उष्णताकी अधिकता है कि हीनता है कि समपना है अथवा इसक्षेत्रमैं मिथ्यादृष्टिनिकी अधिकता है कि मंदता है तथा धर्मात्मानिकी हीनता अधिकताकूं जांणि प्रायश्चितका निर्वाह देखै बहुरि शीत उष्ण वर्षा कालकूं तथा अवसर्पिणीउत्सर्पिणीका तृतीय चतुर्थ पंचम कालादिकके आधीन प्रायश्चितका निर्वाह देखै बहुरि परिणाम देखै तथा तपश्चरणमैं याके तीव्र उत्साह है कि मंद है ताकूं देखै। बहुरि संहननकी हीनता अधिकता तथा बलकी मंदता तीव्रता देखै तथा ये बहुतकालका दीक्षित है कि नवीन दीक्षित है तथा सहनशील है कि कायर है सो देखै तथा बाल युवा वृद्ध अवस्थाकूं देखै बहुरि आगमका ज्ञाता है कि मंदज्ञानी है सो देखै तथा पुरुषार्थी है कि निरुद्यमी है इत्यादिकका ज्ञाता होय प्रायश्चित देवै जैसे दोषरूप फिर आचार्य नाहीं करै पूर्वकृत दोष दूरि होय तैसे सूत्रके अनुकूल प्रायश्चित देवै जो गुरुनिके निकट प्रायश्चितसूत्र शब्दतैं अर्थतैं पढ्या नाहीं अर औरनिकूं प्रायश्चित देवै है सो संसाररूप कर्दममैं डूबै है अर अपयशकूं उपार्जन करै है तथा उन्मार्गका उपदेशकरि सम्यक् मार्गका नाशकरि मिथ्यादृष्टि होय है जो एते गुणका धारक होय ताकूं प्रायश्चितसूत्र पढाय गुरु अपना आचार्यपद दे है जो महाकुलमैं उपज्या व्यवहारपरमार्थका ज्ञाता होय कोऊ कालमैंहू अपने मूलगुणनिमैं अतीचार नाहीं लगाया होय च्यारि अनुयोगसमुद्रका पारगामी होय धैर्य-

वान होय कुलवान होय परीषह जीतनेमैं समर्थ होय देवनिकरि कीया उपसर्गतैंहू जो चलायमान नाहीं होय वक्तापनाकी शक्तिका धारक होय वादीप्रतिवादीनिके जीतनेमैं समर्थ होय विषयनितैं अत्यंत विरक्त होय बहुतकाल गुरुकुल सेया होय सर्वसंघके मान्य होय पहिलैं ही समस्त संघ जाकूं आचार्यपनाकी योग्यता जाणै सोही गुरुनिका दिया प्रायश्चितसूत्रका ज्ञाता होय आचार्यपना पावै सो प्रायश्चित देवै है एते गुणनिविना जैसैं मूढ वैद्य देश काल प्रकृत्यादिक नाहीं जानै तो रोगीकूं मारै है तैसैं व्यवहारसूत्ररहित मूढ गुणसंयुक्त होय है संघमैं कोऊ रोगी होय वा वृद्ध होय अशक्त होय कोऊ बाल होय कोऊ सन्यास धारण किया होय तिनकी वैयावृत्यमैं युक्त किये जे मुनि ते तो टहल करैं ही परंतु आप आचार्यहू संघके मुनीश्वरनिमैं जो अशक्त हो जाय ताका उठावना बैठावना शयन करावना तथा मलमूत्रकफादिक तथा राधिरुधिरादिक शरीरतैं दूरि करना धोवना उठाय प्राशुकभूमिमैं स्थापना धर्मोपदेश देना धर्म ग्रहण करावना इत्यादिक आदरपूर्वक भक्तितैं वैयावृत्य करैं तिनकूं देखि समस्तसंघके मुनि वैयावृत्यमैं सावधान होय विचारैं हैं अहो धन्य है ये गुरु भगवान परमेष्ठी करुणानिधान जिनके धर्मात्मामें ऐसा वात्सल्य है हम महानिंद्य हैं आलसी होय रहे हैं हमकूं होते हू सेवा करैं हैं यह हमारा प्रमादीपना धिकार योग्य है बंधका कारण है ऐसा विचार समस्त संघ वैयावृत्यमैं उद्यमी होय है जो आचार्य आप प्रमादी होय तो सकल संघ वात्सल्यरहित हो जाय यातैं आचार्यका कर्तृत्वगुण मुख्य है समस्तसंघका वैयावृत्य करनेका जाका सामर्थ होय सो आचार्य होय है कोऊ हीणाचारी ताकूं शुद्ध आचरण ग्रहण करावै कोऊ मंदज्ञानी होय तिनकूं समझाय चारित्रमैं लगावै केईनिकूं प्रायश्चित देय शुद्ध करै कोऊकूं धर्मोपदेश देय दृढता करै। धन्य है आचार्य जिनके शरणे प्राप्त हो गया तिनकूं मोक्षमार्गमैं लगाय उद्धार करै है यातैं आचार्यका प्रकर्ता नामा गुण प्रधान है ॥४॥ बहुरि अपायोपायविदर्शी नाम पांचमो गुण है कोऊ साधु क्षुधा तृषा रोगवेदनाकरि पीडित हुआ क्लेशित परिणामरूप हो जाय तथा तीव्र राग-

द्वेषरूप हो जाय तथा लज्जाकरि भयकरि यथावत आलोचना नाहीं करै तथा रत्नत्रयमैं उत्साहरहित हो जाय धर्मतैं सिथिल हो जाय तो ताकूं अपाय मानि रत्नत्रयका नाश अर उपाय रत्नत्रयकी रक्षानिका प्रगट गुण दोष ऐसा दिखावै जो रत्नत्रयका नाश होनेतैं कंपायमान हो जाय अर रत्नत्रयका नाशतैं अपना नाश अर नरकादि कुगतिमैं पतन.साक्षात दिखावै अर रत्नत्रयकी रक्षातैं संसारतैं उद्धार होय अनंत सुखकी प्राप्ति उपदेशकरि साक्षात दिखाय देय ऐसा उपदेशका सामर्थ्य जामैं होय सो अपयोपायविदर्शी नाम गुणका धारक आचार्य होय है इहां उपदेश दिखाये कथन बहुत हो जाय तातैं नाहीं लिख्या ॥ ५ ॥ अब अवपीडक नाम छठा गुण कहिये है कोऊ मुनि रत्नत्रय धारण करके हू लज्जाकरि भयकरि अभिमानगौरवादिकरि अपना आलोचना यथावत शुद्ध नाहीं करै तो आचार्य ताकूं स्नेहकी भरी कर्णनिकूं मिष्ट अर हृदयमैं प्रवेश करनेवाली शिक्षा करै जो हे मुने! बहुत दुर्लभ रत्नत्रयका लाभ ताकूं मायाचारकरि नष्ट मति करो माता पिता समान गुरुनिके निकट अपने दोष प्रगट करनेमैं कहा लज्जा है अर वात्सल्यके धारक गुरु हू अपने शिष्यके दोष प्रगटकरि शिष्यका अर धर्मका अपवाद नाहीं करावै हैं तातैं शल्य दूरिकरि आलोचना करो जैसैं रत्नत्रयकी शुद्धता अर तपश्चरणका निर्वाह होयगा तैसैं द्रव्य क्षेत्र काल भावके अनुसार प्रायश्चित तुमकूं दिया जायगा तातैं भय त्यागि आलोचना निर्दोष करहू ऐसे स्नेहरूप वचन करिकेहू जो माया शल्य नाहीं त्यागै तो तेजका धारक आचार्य शिष्यकी शल्यकूं जबरीतैं निकासै जिस काल आचार्य शिष्यकूं पूछैं हैं जो हे मुने ऐ दोष ऐसैं ही हैं सत्यार्थ कहो तदि उनके तेजतपके प्रभावतैं जैसैं सिंहकूं देखते ही स्याल खाया हुआ मांसकूं तत्काल उगलै है तथा जैसैं महान प्रचंडतेजस्वी राजा अपराधीकूं पूछै तदि तत्काल सत्य कहता ही वणै तैसैं शिष्यहू माया शल्यकूं निकासै है अर मायाचार नाहीं छांडै तो गुरु तिरस्कारके वचन हू कहैं है हे मुने हमारे संघतैं निकस जाहु हमकरि तुम्हारे कहा प्रयोजन है जो अपना शरीरादिकका मेल धोया चाहैगा सो निर्मल

जलके भरे सरोवरकूं प्राप्त होयगा जो अपना महान रोगकूं दूरि किया चाहैगा सो प्रवीण वैद्यकूं प्राप्त होयगा तैसैं जो रत्नत्रयरूप परमधर्मका अतीचार दूरिकरि उज्वलता किया चाहैगा सो गुरुनिका आश्रय करैगा तुम्हारे रत्नत्रयकी शुद्धता करनेमैं आदर नाहीं तातैं ये मुनिपणा व्रत धारण नग्न होय क्षुधादि परीषह सहनेकी विडंबनाकरि कहा साध्य है संवर निर्जरा तो कषायनिके जीतनेतैं है मायाकषायका ही त्याग नाहीं किया तदि व्रत संयम मौन धारण वृथा है नग्नता अर परिषह सहनता मायाचारीका वृथा है तिर्यंच हू परिग्रहरहित नग्न रहै ही है यातैं तुम दूरभव्य हो हमारे वंदने योग्य नाहीं हो अर तुम्हारे परिणाम ऐसे हैं जो हमारा दोष प्रगट होय तो हम निंद्य होय जावैं हमारा उच्चपणा घटि जाय सो मानना बंधका कारण है श्रमण तो स्तुति निंदामैं समानपरिणामी होय है ऐसे गुरु कठोरवचन कहि-करिके हू मायाचारादिका अभाव करावैं कैसा होय अवपीडक आचार्य जो बलवान होय उपसर्ग परिषह आये कायर नाहीं होय प्रतापवान होय जाका वचन कोऊ उलंघन करने समर्थ नाहीं होय अर प्रभाव-वान होय जाकूं देखतप्रमाण दोषका धारक साधू कांपने लगि जाय जाकूं बडे बडे विद्याके धारक नम्री-भूत होय बंदना करैं जाकी उज्ज्वलकीर्त्ति विख्यात होय जाकी कीर्ति सुनता ही जाके गुणनिमैं दृढ श्रद्धा हो जाय जाका वचन जगतमैं देख्या विना ही दूरदेशनिमैं प्रमाण करै सिंहकी ज्यों निर्भय होय ऐसा अवपीडक गुणका धारक गुरु होय सो जैसैं शिष्यका हित होय तैसैं उपकार करै है जैसैं बालकका हितने चिंतवन करती माता रुदन करताहू. बालककूं दाबकरि मुख फाडि जबरीतैं घृत दुग्धादि पान करावै है। ऐसे शिष्यका हितकूं चिंतवन करता आचार्य हू मायाशल्यसहित क्षपकका बलात्कारकरि दोष दूरि करै है अथवा कटुक औषधि ज्यों पश्चात् हित करै है जो जिह्वाकरिके मिष्ट बोले अर शिष्यकूं दोषतैं नाहीं छुडावै सो गुरु भला नाहीं अर जो आचरणकरि ताडनाहूकरि दोषनितैं भिन्न करै है सो गुरु पूजने योग्य है यातैं अवपीडकगुणका धारक ही आचार्य होय है ॥ ६ ॥ अब अपरश्रावीगुणकूं कहैं

है जो शिष्य गुरुनिकूं दोष आलोचना करै सो दोष अन्यकूं गुरु प्रकाश नाहीं करै जैसै तप्तायमानलोह· करि पीया जल सो बाह्य प्रगट नाहीं होय तैसैं शिष्यकरि श्रवणकिया दोष आचार्य हू किसकूं नाहीं जणावे है सो ही अपरश्रावी नाम गुण है शिष्य तो गुरुका विश्वासकरके कहै अर गुरु जो शिष्यका दोष प्रगट करै अन्यकूं जनावै तो वा गुरु नाहीं अधम है विश्वासघाती है कोउ शिष्य अपना दोषकी प्रकटता जानि दुखित होय आत्मघात करै है वा क्रोधी होय रत्नत्रयका त्याग करै है तथा गुरुकी दुष्टता जानि अन्य संघमैं जाय तथा जैसैं हमारी अवज्ञा करी तैसैं तुमारी हू अवज्ञा करैगा ऐसैं समस्तसंघमैं घोषणा प्रगट होय समस्तसंघ आचार्यनिका प्रतीतिरहित होजाय आचार्य सबके त्याज्य होजांय इत्या· दिक बहुत दोष आवैं बहुत कहे कथनी बधि जाय तातैं अपरश्रावी गुणका धारक ही आचार्य योग्य है ॥ ७ ॥ अब आचार्य निर्यापक होय जैसैं नावकूं खेवटिया समस्त उपद्रवनिकूं टालि नावकूं पार उतारि ले जाय तैसैं आचार्य हू शिष्यकूं अनेक विघ्नसूं बचाय संसारसमुद्रके पार करै सो निर्यापक है ॥ ८ ॥ ऐसे आचारवान ॥ १ ॥ आधारवान ॥ २ ॥ व्यवहारवान ॥ ३ ॥ प्रकर्ता ॥ ४ ॥ अपायोपायविदर्शी ॥ ५ ॥ अवपीडक ॥ ६ ॥ अपरश्रावी ॥ ७ निर्यापक ॥ ८ ॥ यह आचार्यनिके अष्टगुणकूं धारणकर· तेनिके गुणनिमैं अनुराग सो आचार्यभक्ति है ऐसैं आचार्यनिके गुणनिकूं स्मरण करके आचार्यनिका स्तवन वंदना करता जो पुरुष अर्घ उतारण करै है सो पापरूप संसारकी परिपाटीकूं नष्टकरि अक्षय· सुखकूं प्राप्त होय है ऐसैं वीतराग गुरु कहै हैं। ऐसे आचार्यभक्ति वर्णन करी ॥ ११ ॥

अब बहुश्रुतभक्ति नाम बारमी भावनाकूं कहै हैं ॥ जो अंगपूर्वादिकका ज्ञाता तथा च्यार अनुयो· गनिका पारगामी जो निरंतर आप परमागमकूं पढै अन्य शिष्यनिकूं पढावै ते बहुश्रुती हैं तथा जिनके श्रुतज्ञान ही दिव्यनेत्र है अर अपना अर परका हित करनेमैं प्रवर्तै ते अर अपने जिनसिद्धांत अर अन्य एकांतीनिके सिद्धांतनिका विस्तारतैं जाननेवाले स्याद्वादरूप परमविद्याके धारक तिनकी जो

भक्ति सो बहुश्रुतभक्ति है बहुश्रुतीकी महिमा कौन कहनेकूं समर्थ है जे निरंतर श्रुतज्ञानका दान करै हैं ऐसे उपाध्याय तिनकी भक्ति विनयकरि सहित करैं हैं ते शास्त्ररूप समुद्रका पारगामी होय हैं जे अंगपूर्व प्रकीर्णक जिनेंद्र वर्णन किये तिन समस्त जिनागमकूं निरंतर पढै पढावैं ते बहुश्रुती हैं इहां प्रथम आचारांग तामैं अठारहहजार पदनिमैं मुनिधर्मका वर्णन है ॥ १ ॥ सूत्रकृतांगका छत्तीसहजार पद हैं तिनमैं जिनेंद्रके श्रुतके आराधन करनेके विनयक्रियाका वर्णन है ॥ २ ॥ स्थानांगका ब्यालीसहजार पद तिनमैं षट्द्रव्यनिका एकादि अनेक स्थानका वर्णन है ॥ ३ ॥ समवायांग एकलाख चौसठिहजार पदनिमैं है तिनमैं जीवादिक पदार्थनिका द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रित समानता वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्ति अंगके दोयलक्ष अट्ठाईस हजार पदनिमैं जीवका अस्तिनास्ति इत्यादिक गणधरनिकरि कीये साठिहजार पदनिका वर्णन है ॥ ५ ॥ ज्ञातृधर्मकथांगके पांचलक्ष छप्पनहजार पदनिमैं गणधरनि करि कीये प्रश्ननिके अनुसार जीवादिकनिका स्वभावका वर्णन है ॥ ६ ॥ उपासकाध्ययन नाम अंगके ग्यारहलक्ष सत्तर हजार पदनिमैं श्रावकके व्रत शील आचार क्रियाका तथा याका मंत्रनिका उपदेशका वर्णन है ॥ ७ ॥ अंतकृतदशांगके तेईसलक्ष अट्ठाइसहजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर उपसर्गसहित निर्वाण प्राप्त भये तिनका कथन है ॥ ८ ॥ अनुत्तरोपपादकदशांगके बाणवै लक्ष चौवालीस हजार पदनिमै एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर महाभयंकर घोरउपसर्गसहित देवनितैं पूजापाय विजयादिक अनुत्तर विमाननिमैं उपजे तिनका वर्णन है ॥ ९ ॥ प्रश्नव्याकरण नाम अंगके त्र्यानवेलक्ष षोडससहस्र पदनिमैं नष्ट मुष्टि लाभ अलाभ सुख दुःख जीवित मरणादिकके प्रश्नका वर्णन है ॥ १० ॥ विपाकसूत्रांगके एककोटि चौरासीलक्ष पदनिमैं कर्मनिका उदय उदीर्णा सत्ताका वर्णन है ॥ ११ ॥ अर दृष्टिवाद नाम बारमअंगका पांच भेद है परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व, चूलिका तिनमैं परिकर्मकाहू पांच भेद है तिनमैं चंद्रप्रज्ञप्तिके छह लक्ष पांचहजार पदनिमैं चंद्रमाका आयु गति



अर कलाकी हानिवृद्धि अर देवीविभव परिवारादिकका वर्णन है ॥ १ ॥ अर सूर्यप्रज्ञप्तिके पांचलक्ष तीनहजार पदनिमैं सूर्यका आयु गति विभवादिकका वर्णन है ॥ २ ॥ जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिके तीनलक्ष पचीसहजार पदनिमैं जंबूद्वीपसंबंधी क्षेत्र कुलाचल द्रह नदी इत्यादिकनिका निरूपण है ॥३॥ द्वीपसागरप्रज्ञप्तिके बावनलक्ष छत्तीसहजार पदनिमैं असंख्यातद्वीप समुद्रनिका अर मध्यलोकके जिनभवननिका अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क देवनिके निवासनिका वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्तिके चौरासीलक्ष छप्पनहजार पदनिमैं जीव पुद्गलादि द्रव्यका निरूपण है ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार परिकर्म कह्या अब दृष्टिवाद अंगका दूजा भेद सूत्रके अट्ठासीलक्ष पदनिमैं जीव अस्तिरूप ही है नास्तिरूप ही है कर्ता ही है भोक्ता ही है इत्यादि एकांतवादिकरि कल्पित जीवका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ बहुरि प्रथमानुयोगके पांचहजार पदनिमें त्रेसठि महापुरुषनिके चरित्रका वर्णन है ॥ ३ ॥ अब दृष्टवादअंगका चतुर्थभेदमें चौदहपूर्व हैं तिनमें उत्पादपूर्वके एककोटि पदनिमें जीवादिक द्रव्यनिका उत्पादादि स्वभावका निरूपण है ॥ १ ॥ अग्रायणीपूर्वके छिनवैकोटि पदनिमैं द्वादशांगका सारभूत सप्ततत्त्व नवपदार्थ षट् द्रव्य सातसै सुनय दुर्नयादिकका स्वरूपका वर्णन है ॥२॥ वीर्यानुवादके सप्तलक्ष पदनिमैं आत्मवीर्य परवीर्य कामवीर्य कालवीर्य भाववीर्य तपोवीर्यादि समस्त द्रव्यगुण पर्यायकनिका वीर्यका निरूपण है ॥३॥ अस्तिनास्तिप्रवाद नाम पूर्वके साठिलक्ष पदनिमैं जीवादि द्रव्यनिका स्वद्रव्यादिचतुष्टयकी अपेक्षा आस्ति और परद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति इत्यादिक सप्तभंगादिक तथा नित्यअनित्य एक अनेकादिकनिका विरोधरहित वर्णन है ॥४॥ ज्ञानप्रवाद पूर्वके एक घाटि कोटि पदनिमें मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ये पांच ज्ञान अर कुमति कुश्रुति विभंग ये तीन अज्ञान इनका स्वरूप संख्या विषयफलनिके आश्रय प्रमाणपना अप्रमाणपनाका वर्णन है ॥ ५ ॥ सत्यप्रवादपूर्वके छह अधिक एककोटि पदनिमैं वचनगुप्ति अर वचनके संस्कारका कारण अर द्वादश भाषा अर वक्तानिके भेद अर बहुत प्रकार असत्य अर दशप्रकारके सत्यका वर्णन है ॥ ६ ॥

मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो अनंतज्ञानस्वरूप है अर आत्माकूं इंद्रियजनित मतिज्ञान-मात्र ही जानै सो न्यूनस्वरूप जाननेतैं मिथ्याज्ञान भया। अर वस्तुके स्वरूपकूं अधिक जानै सो हू मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्तीक है ताकूं ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्त भी जानना अर पुद्गलके गुणरूप स्पर्श गंध वर्ण रस मूर्तीक हू जानना सो अधिक जाननेतैं मिथ्याज्ञान है। अर सीपकूं सुपेद अर चिलकता देख वामैं रूपाका ज्ञान होना सो विपरीतज्ञान हू मिथ्याज्ञान है। अर यह सीप है कि रूपो है ऐसैं दोऊमैं संशयरूप एकका निश्चयरहित जानना सो संशयज्ञान है सो हू मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका जैसा स्वरूप है तैसैं जानना सो सम्यग्ज्ञान है अथवा जैसैं सोलाकूं पांचगुणा करिये तो अस्सी होय ताकूं अठहत्तर जानै सो न्यून ज्ञान भया अर अस्सीका वियासी जानिये सो अधिकका जानना भया अर अस्सी होय ताकूं सोलह जानना वा पांच जानना सो विपरीतज्ञान भया अर सोलहकूं पांचगुणा किये अस्सी भये कि अठहत्तर भये ऐसा संदेहरूप ज्ञान सो संशयज्ञान है। ऐसैं न्यून जानना तथा अधिक जानना तथा विपरीत तथा संशयरूपजानना ऐसैं चार-प्रकारका मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून नाहीं जानै अधिक नाहीं जानै विपरीत (अंवली) नाहीं जानै संशयरूप नाहीं जानै जैसा वस्तुका स्वरूप है तैसा संशयरहित जानै ताहि सम्यग्ज्ञान कहिये है। अब सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगकूं जानै है ऐसा सूत्र कहै हैं—

प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यं। बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समचीनः॥ ४३॥

अर्थ—सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगनै जानै है, कैसाक है प्रथमानुयोग—अर्थ जे धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप चार पुरुषार्थ तिनका है कथन जामैं बहुरि चरित कहिये एक पुरुषके आश्रय है कथा जामैं, बहुरि त्रिषष्ठिशलाका पुरुषनिकी कथनीका संबंधका प्ररूपक यातैं पुराण है। बहुरि बोधिसमाधिको निधान है सो सम्यग्दर्शनादिक नाहीं प्राप्त भए तिनकी प्राप्ति होना सो बोधि है अर प्राप्ति भए जे

सम्यग्दर्शनादिकनकी जो परिपूर्णता सो समाधि है। सो यो प्रथमानुयोग रत्नत्रयकी प्राप्तिको अर परिपूर्णताको निधान है उत्पत्तिको स्थान है अर पुण्य होनेका कारण है तातैं पुण्य है। ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—जामें धर्मका कथन अर धर्मका फलरूप कहे जे धन संपदा रूप अर्थ काम जो पंच इंद्रियानिका विषय अर संसारतैं छूटनेरूप मोक्ष ताका कथन है अर एक पुरुषका आचरणका है कथन जामैं ऐसा चारित्ररूप है। अर त्रिशष्ठिशलाका पुरुषनिका है वर्णन जामें तातैं पुराणरूप है। अर वक्ता श्रोतानिके पुण्यके उपजावनेका कारण है तातैं पुण्यरूप है। अर चार आराधनाकी प्राप्ति होनेका अर चार आराधनाकी पूर्णता करनेका निधान है ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब करणानुयोगका जाननेवाला हू सम्यग्ज्ञान है ऐसा सूत्र कहै हैं—

लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च। आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥ ४४ ॥

अर्थ—तैसैं ही मति कहिये सम्यग्ज्ञान जो है सो करणानुयोग जो है ताहि जानै है। कैसाक है करणानुयोग लोक अर अलोकके विभागको अर उत्सर्पिणीके छह काल अर अवसर्पिणीके षटकालके परिवर्तन कहिये पलटनेका अर चार गतिनिके परिभ्रमणका आदर्शमिव कहिये दर्पणवत् दिखावनेवाला है। भावार्थ—जामैं षटद्रव्यका समुदायरूप तो लोक अर केवल आकाश द्रव्य ही सो अलोक अपने गुणपर्यायनिसहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं। अर छहूकालके निमित्ततैं जैसे जैसे जीवपुद्गलनिकी परणति है ते प्रतिबिंबरूप होय जामैं झलकै हैं अर जामें चार गतिनिका स्वरूप प्रगट दिपै है सो दर्पण समान करणानुयोग है। तिनै यथावत् सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब चरणानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम्। चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥ ४५ ॥

अर्थ—गृहमें आसक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे गृहस्थी अर गृहतैं विरक्त होय गृहका त्यागी ऐसा

अनगार कहिये यति तिनकै चारित्र जो सम्यक् आचरण ताकी उत्पत्ति अर वृद्धि अर रक्षा इनकी अंग कहिये कारण ऐसा चरणानुयोग सिद्धांत ताहि सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—मुनिका अर गृहस्थका जो निर्दोष आचरण ताकी उत्पत्तिका अर दिन दिन वृद्धि होनेका अर धारण किया तिनकी रक्षाका कारण चरणानुयोगरूप ज्ञान ही है। अब द्रव्यानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

जीवाजीवसुतत्त्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च। द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥ ४६ ॥

अर्थ—यो द्रव्यानुयोग नाम दीपक है सो जीव अर अजीव ये दोय जे निर्बाध तत्त्व तिननै अर पुण्य पापनै अर बंध मोक्ष जे हैं तिननै भावश्रुतज्ञानरूप प्रकाश होय जैसें होय तैसें विस्तारता है। भावार्थ—द्रव्यानुयोगनामा दीपक ऐसा है जो बाधारहित जीव अजीवका स्वरूपकूं अर पुण्यपापकूं अर कर्मके बंधकूं अर कर्मतैं छूट जानेकूं आत्मामें उद्योत हो जाय तैसें विस्तार करि दिखावै है। ऐसें च्यार अनुयोगरूप श्रुतज्ञानका स्वरूप वर्णन किया। ज्ञानके वीस भेद अर अंग तथा पूर्वरूप वर्णन किये ग्रंथ बहुत हो जाय।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिका विषै
सम्यग्ज्ञानका स्वरूप वर्णन करनेवाला द्वितीय अधिकार समाप्त भया ॥ २ ॥



अब सम्यक्चारित्रनामा तृतीय अधिकारकूं वर्णन करते चारित्रस्वरूप धर्मके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः। रागद्वेषनिवृत्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥ ४७ ॥

अर्थ—दर्शनमोहरूप तिमिरको दूर होते संते सम्यग्दर्शनका लाभतैं प्राप्त भया है सम्यग्ज्ञान जाकै ऐसा साधु जो निकटभव्य है सो रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र है ताहि अंगीकार करै है। भावार्थ—इस संसारी जीवकै अनादिकालका दर्शनमोहनीयका उदयरूप तिमिरकरि ज्ञाननेत्र ढाकि रह्या है

तिस मोह तिमिरतैं अपना अर परका भेदविज्ञानरहित हुआ चारों गतिनिमें पर्यायहीकूं आपा जानता अनंतकालतैं भ्रमण करै है। कोऊ जीवकै करणलब्धादिक सामग्रीतैं दर्शनमोहका उपशमतैं तथा क्षयतैं तथा क्षयोपशमतैं सम्यग्दर्शन होय है तादि मिथ्यात्वका अभावतैं ज्ञान हू सम्यक्पनाकूं प्राप्त होय है तादि कोऊ सम्यग्ज्ञानी रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र अंगीकार करै। अब रागद्वेषका अभावतैं ही हिंसादिकका अभाव होनेका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

रागद्वेषनिवृत्तेर्हिंसादिनिवर्तना कृता भवति। अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥

अर्थ—रागद्वेषका अभावतैं हिंसादिक पंच पापनिकी निवृत्ति कहिए अभाव परिपूर्ण होय है। पंच पापनिका अभाव सो ही चारित्र है। अभिलाषरूप नाहीं है प्रयोजनकी प्राप्ति जाके ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? भावार्थ—जाके अर्थ जो प्रयोजन तथा धनादिक फलके प्राप्त होनेकी अभिलाषा नाहीं ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? नाहीं करै। राजानिकी महाकष्टरूप सेवा तो जाके भोगनिकी चाह तथा धनकी तथा अभिमानादिककी अभिलाषा होय सो करै। जाके कुछ अपेक्षा चाहना नाहीं सो राजाका सेवन नाहीं करै जाके रागद्वेषका अभाव भया सो पुरुष हिंसादिक पंच पापनिमें प्रवृत्ति नाहीं करै। अब चारित्रका लक्षण रागद्वेषका अभाव कह्या सो इसहीका विशेष कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च। पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रं ॥ ४९ ॥

अर्थ—हिंसा अनृत चौर्य मैथुनसेवन परिग्रह ये पाप आवनेके प्रनाला हैं इनतैं जो विरक्त होना सो सम्यग्ज्ञानीके चारित्र है। भावार्थ—निश्चय चारित्र तो बहिरंग समस्त प्रवृत्तितैं छूटे परमवीतरागताके प्रभावतैं परमसाम्यभावकूं प्राप्त होय अपना ज्ञायकभावरूप स्वभावमें चर्या सो स्वरूपाचरण नामा सम्यक्चारित्र है तौ हू पंच पापनितैं विरक्त होय अंतरंग बहिरंग प्रवृत्तिकी उज्वलतास्वरूप व्यवहार

चारित्र विना निश्चयस्वरूप चारित्रकूं प्राप्त नाहीं होय है। तातैं हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करना ही श्रेष्ठ है। पंच पापका त्याग करना ही चारित्र है। अब इस चारित्रकै दोय प्रकारका कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानां। अनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानां ॥ ५० ॥

अर्थ—सो चारित्र समस्त अंतरंग परिग्रहतैं विरक्त जे अनगार कहिए गृह मठादि नियत स्थानरहित वन खंडादिकमें परम दयालु हुआ निरालंब विचरै ऐसे ज्ञानी मुनीश्वरानिकै सकलचारित्र है अर जे स्त्रीपुत्रधनधान्यादिक परिग्रहसहित घरमें तिष्ठैं ते जिनवचनके श्रद्धानी न्यायमार्गकूं नाहीं उलंघन करिकैं पापतैं भयभीत ऐसे ज्ञानी गृहस्थीनिकै विकलचारित्र है। भावार्थ—गृहकुटुंबादिकके त्यागी अपने शरीरमें निर्ममत्व साधूनिकै सकलचारित्र होय है। गृहकुटुंबधनादिकसहित गृहस्थीनिकै विकलचारित्र होय है। अब गृहस्थीनिकै विकलचारित्र कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणाशिक्षाव्रतात्मकं चरणं। पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासंख्यमाख्यातं ॥ ५१ ॥

अर्थ—गृहस्थनिकै चारित्र है सो अणुव्रत गुणव्रत शिक्षाव्रतस्वरूप तीनप्रकारकरि तिष्ठै है। सो यो तीन प्रकार चरित्र है सो यथासंख्य पांच भेदरूप तीनभेदरूप च्यार भेदरूप परमागममें कह्या है। भावार्थ—जो गृहवास छोडनेकूं समर्थ नाहीं ऐसा सम्यग्दृष्टि गृहमें तिष्ठता ही पंच प्रकार अणुव्रत तीन प्रकार गुणव्रत च्यार प्रकार शिक्षाव्रत धारण करि चारित्रकूंपालै है। अब पंच प्रकार अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्छाभ्यः। स्थूलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥

अर्थ—प्राणनिका जो अतिपात कहिये वियोग करणा सो प्राणातिपात कहिये हिंसा अर वितथ असत्य ऐसा व्यवहार कहिये वचन कहना सो वितथव्याहार कहिये असत्य वचन अर स्तेय कहिये चोरी और काम कहिये मैथुन अर मूर्छा कहिये परिग्रह ये पांच पाप हैं। इनमें स्थूलपापनितैं विरक्त होना

सो अणुव्रत है। भावार्थ—मारनेका संकल्प करकैं जो त्रसकी हिंसाका त्याग सो स्थूलहिंसाका त्याग है। बहुरि जिस वचन कर अन्य प्राणीका घात होजाय तथा धर्म विगड जाय अन्यका अपवाद होजाय कलह संक्लेश भयादिक प्रगट होजाय ऐसा वचनका क्रोध अभिमान लोभके वश होय कहनेका त्याग कर सो स्थूल असत्यका त्याग है। अर बिना दिया अन्यके धनका लोभके वशतैं छलकरि ग्रहण करनेका त्याग सो स्थूल चोरीका त्याग है। बहुरि अपनी विवाही स्त्री विना समस्त अन्यस्त्रीनिमैं कामका अभिलाषका त्याग सो स्थूल कामत्याग है। बहुरि दशप्रकार परिग्रह परिमाण करि अधिक परिग्रहका त्याग सो स्थूल परिग्रहका त्याग है। ऐसैं पाप आवनेके प्रनाले ये पांच हिंसादिक तिनका त्याग सो ही पंच अणुव्रत है। अब अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहैं है—

संकल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान्। न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥ ५३ ॥

अर्थ—जो गृहस्थ मनवचनकायके कृतकारित अनुमोदनारूप संकलपतैं चर प्राणी द्वीन्द्रियादिक त्रसप्राणीनका घात नाहीं करै ताही निपुण जे गणधरदेव हैं ते स्थूलहिंसातैं विरक्त कहै हैं। इहां ऐसा जानना जो गृहस्थ सम्यग्दर्शन संयुक्त दयावान हिंसातैं भयभीत होय त्यागके सम्मुख हुआ तो गृहस्थ के एकेन्द्रिय जे पृथिवीकायादिक तिनकी हिंसाका त्याग तो बन सकै नाहीं गृहका त्यागी योगीश्वरनिकै ही त्रसस्थावर दोऊनका हिंसाका त्याग बने अर प्रत्याख्यानावरणादिक कषायका उदयतैं गृहतैं ममता छूटी नाहीं तिस गृहस्थके त्रसजीवनका संकलपीहिंसाके त्यागतैं भगवान अहिंसा अणुव्रत कह्या है। संकलपीहिंसाका त्याग ऐसे जानना—दयावान गृहस्थ अपने परिणामनिकर मारनेरूप संकलपतैं तो त्रस जीवका घात करै नाहीं करावै नाहीं घात करनेका मनवचनकायतैं प्रशंसा करै नाहीं ऐसा परिणाम रहे। अर जो कोऊ दुष्ट वैर ईर्षादिककरि आपकूं मार्‍या चाहै तथा आजीविका धनादिक हर्‍या चाहै तिसका भी घात करनेकूं नाहीं चाहै तथा कोऊ आपकूं बहुत धन देकर मरावै तो कीड़ीमात्रकूं मार-

नेका संकल्पकरि कदाचित् नाहीं मारै। तथा एक जीव मारनेतैं अपना रोग आपदा दूर होय तो जीव-
नके लोभतैं त्रसजीवकूं नाहीं मारन करै। हिंसातैं अत्यन्त भयभीत है तो हू गृहस्थके आरंभमैं त्रस
जीवनिका घात हुआ बिना रहै नाहीं याहीतैं गृहस्थके मारनेका संकल्पकरि त्रसकी हिंसाका त्याग है
अर आरंभी हिंसाका त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं है केवल आरंभमैं यत्नाचारसहित दयाधर्मकूं नाहीं
भूलता प्रवर्तै है क्योंकि गृहस्थके आरंभ बिना निर्वाह नाहीं। केते आरंभ नित्य होय है, चूल्हा बा-
लना चाकी पीसना ओंखलीमें कूटना बुहारी देना जलका आरंभ करना उपार्जन करना ये छह पापके
कर्म तो नित्य ही हैं बहुरि केतेक और हू नित्य भी कदाचित् अन्य कारणतैं हू आरंभ बहुत हैं अपने पुत्र
पुत्रीका विवाह करना मकान बनाना लीपना धोवना झाडना होय ही। रात्री गमनादि आरंभ करना
धातुका पाषाणका काष्ठका आरंभ करना शय्या बिछावना उठाना पात्र पसारना समेटना जातिकूं जि-
मावना दीपकादिक जोवना इत्यादिक पापहीके कार्य हैं। तथा गाडी रथ ऊपरि चढ़ि चालना हस्ती घोड़ा
ऊंट बलद इत्यादिक ऊपर चढ़ि चालना गाय भैंस इत्यादिक राखना तिनमैं त्रस जीवका घात होय ही
तथा जिनमंदिर करावना दानका देना पूजन करना इनमें हू आरंभ है तो कैसे त्रसहिंसाका त्याग होय?
ताका उत्तर करै हैं, जो आपका परिणाम तो जीव मारनेका है नाहीं अर जीव मारने वास्ते आरंभ करै
नाहीं इस कार्य करनेमैं जीव मर जाय तो भला है ऐसा राग हू नाहीं आप तो जीव विराधनातैं भयभीत
हुआ गृहचाराका कार्य करनेको आरंभ करै है। जीव मारनेके वास्ते नाहीं करै है। अपने परिणाममें ता
मेलता धरता उठता बैठता लेता देता जीवनिकी रक्षा करनेहीका संकल्प करै है, मारनेका संकल्प नाहीं
करै, तिसके पापबंध कैसैं होय? जीव अपने आयुकर्मके आधीन उपजैं अर मरै है अपने हाथ नाहीं आप
तो जेता आरंभ करै तितना दयारूप हुआ यत्नाचार्यतैं करै यत्नाचारीके भगवानका परमागममें हिंसा
होते हू बंध होना नाहीं कह्या है। समस्त लोक जीवनिकरि भर्या है जीवनिके मरने जीवनिके आधीन

अपना उपयोग बिना हिंसा अहिंसा नाहीं है। अपने परिणामके आधीन हिंसा अर अहिंसा है। जातैं सिद्धांतमें ऐसा कह्या है जो मुनिराज चार हस्त परमाण आगेको सोधता गमन करै है अर जो पगको उठाय धरबो होय तहां जीव उछलकरि आय पड़े अर जीव मर जाय तो मुनीश्वरनिके किंचित हू बंध नाहीं होय है क्योंकि साधुके परिणामनिमें तो इर्यासमिति पालना चित विषैं तिष्ठै था तातैं बंध नाहीं। आहार प्रासुक जानि देखि सोधि करिये है अर सूक्ष्म जीव आय पड़े तो कौन जानैं? भगवान् केवलज्ञानी ही जानें। आप प्रमादी होय यत्नतैं देखे सोधे बिना भोजन करै तो दोषतैं लिपै। याहीतैं श्रावक प्रमाद छांडि बड़ी सावधानीतैं प्रवर्तन करता दोषकूं कैसैं प्राप्त होय? चूल्हाकूं दिनमें सोधि बुहारि ईंधन झड़काय यत्नतैं अग्नि जलावै है ऐसे ही चाकी ओखली भी सोधि झाड़ि अन्नकूं सोधि पीसण षोटणका आरंभ करै है बीधा अन्नकूं नाहीं ग्रहण करै है। अर बुहारि हू दिवसमें देखि कोमल कूंची मूंज इत्यादिकतैं जीव विराधनाका भयसहित हुआ देवैं हैं कजोडा बुहारैं हैं तथा जलकूं दोहरा दृढ़ वस्त्रतैं छानि जतन पूर्वक वरतै है तथा द्रव्यका उपार्जन हू अपना कुलके योग्य सामर्थ्य सहायादिकके योग्य जैसैं यश अर धर्म नीति नाहीं बिगड़ै तैसैं यत्नतै असि मसि कृषी विद्या वाणिज्य शिल्प इन षट् कर्मनिकरि करै हैं क्योंकि श्रावकका व्रत तो चारों वर्णोंमें होय है आपके उज्वल हिंसा रहित कर्मसूं आजीवका होती ही तो निंद्य कर्म करि संक्लेश कर्मकारि लोभादिकके वश होय पापरूप आजीवका करै नाहीं अर आपकूं अन्य आजीवकाका उपाय नाहीं दीखै तो घटायकरि पापतैं भयभीत हुआ न्यायतैं करै। क्षत्रिकुलका शस्त्र धारक होय तो दीन अनाथकी रक्षा करता दीन दुःखित निर्बलको घात नाहीं करै शस्त्र रहितकूं नाहीं मारै गिर पड्या ऊपरि घात नाहीं करै पीठ देय भाग जाय दीनता भाषै तिन ऊपरि घात नाहीं करै है अर धनके लूटनेको घात नाहीं करै अभिमानतैं वैरतैं घात नाहीं करै अपने ऊपर घात करता आवै ताकूं तथा दीनानिकूं मारनेकूं आवै तिनकूं शस्त्रतैं रोकै जो शस्त्रतै जीविका

करता होय सो केवल स्वामिधर्मतैं तथा अनाथनिका स्वामीपना आपके होय सो शस्त्रधारण करै जाके शस्त्रसंबंधी सेवा नाहीं अर प्रजाका स्वामीपना नाहीं ताकै वृथा शस्त्र धारण नाहीं होय है। अर स्याही तैं आमद खरच लिखनेकी जीविका होय तो मायाचारादिक दोष रहित स्वामीके कार्यकूं यथावत् सही लिखता जीविका करै। और माली जाट इत्यादिक कुलमें अन्य जीविका नाहीं होय तो कृषि जो खेती करि आजीविका करता हू दयाधर्मको छांडै नाहीं जो खेत पहली बहता आया होय तिसकूं परिमाण करि अधिकका त्यागी हुआ खेती करै है अधिक तृष्णा नाहीं करै यामें हू बहुत घटाय आपाकूं निंदता खेती करै है। बहुत जल सींचै है तो हू आप अनछाण्या जल एक चल्लू मात्र हू नाहीं पीवै है कोऊ आय बहुत धन भी देवै अर कहै तुम यहां धान्यके बहुत वृक्ष छेदो हो हमतैं एक मोहर लेय हमारे एक वृक्षकी एक डाहली काट आवो तो लोभके वशि होय कदाचित् नाहीं छेदै है तथा खेतीमें बहुत जीव मरै हैं तो भी इसके जीव मारनेका अभिप्राय नाहीं केवल आजीविकाका अभिप्राय है कोऊ सौ मोहर देवै तो लोभके वशि होय अपना संकलपतैं एक कीडी हू मारै नाहीं ऐसा व्रतमैं दृढता है। अर उत्तम कुलवाला खेती करै नाहीं। बहुरि विद्याकरि आजीविका करै ऐसा ब्राह्मणादिक श्रावक हैं सो मिथ्यात्वभावका पुष्ट करनेवाला तथा हिंसाका प्रधानता लिये रागद्वेषका बधावनेवाला शास्त्रनिकूं त्याग करि उज्वलविद्या पढावै सो ही दया है। बहुरि श्रावक है सो बहुत हिंसाके खोटे वाणिज्य त्याग न्यायपूर्वक तीव्र लोभकूं त्याग आपकी निंदा करता संतोष सहित घटाय प्रमाणीक सांचसूं ब्योहार करै दयाधर्मकूं नाहीं भूलता समस्त जीवनिकूं आप समान जानता वाणिज्य करै है। बहुरि शिल्पकर्म करनेवाला शूद्र हू श्रावकका व्रत ग्रहण करै है सो बहुत निंदकर्मनिकूं तो टालै ही अर टालवेकूं समर्थ नाहीं तीमैं बहुत हिंसा टालि दयारूप प्रवर्तै है संकलपतैं याकूं मारना या जाणि घात नाहीं करै। अर मंदिर बनवाना पूजन करना दान देना इन कार्यनिमैं तो निरंतर बडा यत्नाचारतैं केवल दयाधर्मके निमित्त

ही प्रवर्तन करे है। हिंसाका भाव काहेतैं होय जातैं पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामा ग्रंथमें श्रीअमृतचन्द्रस्वामी ऐसैं कह्या है—

यत्खलु कषाययोगात्प्राणानां द्रव्यभावरूपाणां। व्यपरोपणस्य करणं सुनिश्चिता भवति सा हिंसा ॥ ४३ ॥

अर्थ—जे कषायके संयोगतैं द्रव्यप्राण जे इंद्रिय कायादिक अर भावप्राण जे ज्ञानदर्शनादिक तिनके वियोग् करवो सो निश्चितहिंसा होय है। भावार्थ—जो कषायके वशि होय परके द्रव्यप्राण भावप्राणनिको वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। कषायरहितकै प्राणीका मरणमात्रतैं हिंसा नाहीं होय है आप परजीवकै मारनेकी कषायसहित होय ताकैं हिंसा होय है।

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति। तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः ॥ ४४ ॥

अर्थ—जो रागद्वेषादिको आत्माके नाहीं प्रगट होवो सो अहिंसा है अर आत्माके परिणाममें रागद्वेषादिकनिकी उत्पत्ति होय सो ही हिंसा है। जिनेन्द्रभगवानके आगमका संक्षेप तो इस प्रकार है—बाह्यप्राणीनिका हिंसा होहू वा मत होहू जो परिणाम रागद्वेषादि कषायसहित होय सो ही अपना ज्ञानदर्शनादिरूप भावप्राणनिका घात है सो ही आत्महिंसा है जाकै आत्महिंसा है ताकै परकी हिंसा भी होय ही है ॥

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेशमन्तरेणापि। न हि भवति जातु हिंसा प्राणव्यपरोपणादेव ॥ ४५ ॥

अर्थ—योग्य आचरण करता सत्पुरुषकै रागद्वेषादि कषाय विना प्राणनिका घाततैं ही हिंसा कदाचित् नाहीं होय है। भावार्थ—यत्नतैं दयासहित प्रवर्तन करता पुरुषकै जीवघात होतै हू हिंसाकृत बंध नाहीं होय है।

व्युत्थानावस्थायां रागादीनां वशप्रवृत्तायां। म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा ॥ ४६ ॥

अर्थ—रागद्वेषादिकनिके आधीन प्रवृत्ते जे गमन आगमन उठना बैठना धरना मेलना ऐसे आरंभ

तिनमें जीवनिका मरण होहू वा मत होहू हिंसा तो निश्चयतैं आगैं दौडती है। यत्नाचाररहित होय आरंभ करै है ताकै जीव अपने आयुके आधीन मरण करौ वा मत करौ आप तो अपने परिणामतैं निर्दय भया ताकै हिंसाकृत बंध आगैं आगैं दौडै है ॥

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानं। पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राण्यन्तराणां तु ॥ ४७ ॥

अर्थ—जातैं आत्मा कषायसहित हुवो संतो प्रथम ही आप करिकै आपनै हनै है पाछैं अन्य प्राणीनिकी हिंसा उत्पन्न होय वा नाहीं होय। जिस काल कषायसहित आत्मा भया तिस ही कालमें अपना ज्ञानानंद वीतरागस्वरूपका घात तो अवश्य करि हो चुका।

हिंसायामविरमणं हिंसापरिणमनमपि भवति हिंसा। तस्मात्प्रमत्तयोगे प्राणव्यपरोपणं नित्यं ॥ ४८ ॥

अर्थ—जातैं हिंसाके विषै विरक्त होय त्याग नाहीं करना सो भी हिंसा है अर हिंसामें प्रवर्तन है सो हू हिंसा है तातैं प्रमत्तयोग होतैं प्राणानिका घात नित्य है। भावार्थ—अपना अर परका घात होनेकी सावधानीरहित प्रवर्तते जे मनवचनकायके योग सो प्रमत्तयोग है जहां प्रमत्तयोग है तहां सासती हिंसा है जो कोऊ हिंसा तो नाहीं करै परंतु हिंसातैं विरक्त होय हिंसाका त्याग नाहीं करै सो सूते विलाव समान सदाकाल हिंसक ही है अर हिंसामें प्रवर्तन करै है सो हू हिंसक ही है। भावनितैं तो दोऊ हिंसक हैं बाह्यनिमित्त हिंसाका मिलो वा मति मिलो ॥

सूक्ष्मापि न खलु हिंसा परवस्तुनिबन्धना भवति पुंसः।
हिंसायतननिवृत्तिः परिणामविशुद्धये तदपि कार्या ॥ ४९ ॥

अर्थ—अन्यवस्तु है कारण जाकूं ऐसी तो सूक्ष्म हू हिंसा नाहीं है जातैं पुरुषकै जो हिंसा होय है सो तो अपना परिणाममें हिंसा करनेका भाव होतैं हिंसा होय है। इहां कोऊ पूछै जो परद्रव्यके निमित्ततैं सूक्ष्महिंसा नाहीं होय है तो बाह्यवस्तुका त्याग व्रत संयम किसवास्ते करिये हैं ? ताका उत्तर करै हैं—

यद्यपि हिंसकपरिणाम होय तादि ही जीवके हिंसा होय परंतु हिंसा होनेके स्थाननिमें प्रवर्तैगा ताकै हिंसाके परिणाम कैसैं नाहीं होयगा? तातैं परिणामकी विशुद्धताके अर्थि जहां हिंसा होय ऐसे खान पान ग्रहण आसन वचन चिंतवनादिक त्याग करने योग्य है ।

निश्चयमबुद्धयमानो यो निश्चयतस्तमेव संश्रयते । नाशयति करणचरणं स बहिःकरणालसो बालः ॥५०॥

अर्थ—जो जीव निश्चयनयका विषय रागादि कषायरहित शुद्धात्मा रूपकूं तो जाण्या नाहीं अर मेरा भाव कषायरहित है मेरे समस्त प्रवृत्तिमें हिंसा नाहीं ऐसा वृथा निश्चय करता निरर्गल यथेच्छ प्रवर्तै है सो अज्ञानी बाह्य आचरणमें प्रवृत्ति छांडि प्रमादी हुआ करणचरणरूप चारित्रका नाश करै है । भावार्थ—जाका परिणाम रागद्वेषरहित भया ते अयोग्य भोजन पान धन परिग्रह आरम्भादिकमें कैसैं प्रवर्तन करैगा जो हिंसासूं विरक्त है सो हिंसा होनेके कारण दूरहीतैं छांडैगा । अब और हू पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहे हैं, कोऊ तो हिंसा नाहीं करके अर हिंसाके फलका भोगनेवाला होय है जैसैं आयुध बनावनेवाले लुहार सिकलीगर हिंसा नाहीं करिकैं हू तंदुलमच्छकी ज्यों हिंसाके फलकूं प्राप्त होय हैं । अर कोऊ दयावान होय यत्नाचारतैं जिनमंदिर बनावनेवाला बाह्यहिंसा होते हू हिंसाके फलकूं नाहीं प्राप्त होय है । कोऊ पुरुष हिंसा तो अल्प करी परंतु तीव्र रागद्वेषरूप भावनितैं करने करि उदयकालमें महाफलकूं प्राप्त होय है । बहुरि केई अनेक पुरुष मिलि करकें एक हिंसा करी परंतु उस हिंसा करनेमें कोऊ तो तीव्र रागवाला सो तीव्रफलकूं प्राप्त होय है मंदकषायवाला मंदफलकूं प्राप्त होय है मध्यमकषायवाला मध्यमफलकूं प्राप्त होय है । तथा कोऊ पुरुषके हिंसा तो पाछैं काल पाय बनेगी परंतु हिंसाके परिणाम करनेतैं हिंसाका फल पहले ही उदय होय रस दे है । अर कोऊके हिंसा करतां करतां फल है जैसैं कोऊ पुरुष अन्य कोऊकूं मारण करै तिस कालमें ही उसका प्रहारतैं आपहू मार्‍या जाय है । कोऊकै पूर्वै करी पाछैं फलै है । कोऊ हिंसाका आरंभ तो किया अर पाछैं बन सकी नाहीं सो हू फलै है जैसैं कोऊका घात

करनेका उपाय किया सो तो बणि सक्या नाहीं अर पाछैं वे जानि आपका घात किया ही। बहुरि हिंसा तो एक करै अर हिंसाका फल अनेक पुरुष भोगै जैसैं चोर तथा हत्याराकूं मारै वा सूली चढावै तो एक चांडाल अर देखनेवाले अनेक तमासगीर पापबंधकरि फल भोगवै हैं। अर संग्राममें हिंसा करनेवाला तो बहुत योद्धा होय हैं अर फल भोगनेवाला एक राजा होय है तातैं करै एक अर भोगै अनेक हैं अर करै अनेक भोगै एक है। बहुरि कोऊके तो हिंसा करी हुई हिंसाहीका फल देहै अर अन्यकै सो ही हिंसा अहिंसाका फल देहै जैसैं कोऊ पुरुष किसी जीवकी रक्षा करनेकूं यत्न करै छा यत्न करते हू उसका मरण होय गया तो वाकै रक्षाका अभिप्रायतैं अहिंसाहीका फल होयगा अर कोऊका परिणाम तो किसीके मारनेका था आपदाकूं प्राप्त करनेका था अर उसका पुण्यका उदयतैं आपदा हू नाहीं भई अर मरण हू नाहीं भया अनेक लाभ भया तो मारनेके अर्थीकों तो पापहीका बंध होय है। अर कोऊका परिणाम किसीकूं दुःख देनेका नाहीं था सुख देनेका वा रक्षा करनेका था अर उसकै दुःख होगया वा मरण होगया तो सुख देनेका परिणामकरि वाकै पुण्यबंध ही होयगा। इसप्रकार अनेक भंगनिकरि गहन यो जिनेन्द्रका मार्ग है यामें एकांती मिथ्यादृष्टिनिका पार होना अतिकष्टतैं हू नाहीं होय। अनेकांतके प्रभावतैं नयसमूहके जाननेवाला गुरु ही शरण है। यो जिनेंद्रभगवानको नयचक्र तीक्ष्णधाराकूं धारण करता एकांती दुष्टआग्रहसहित मिथ्यादृष्टिनिका मिथ्यायुक्तिनिकी हजारां खण्ड करनेवाला है। यातैं भो ज्ञानीजन हो! भगवान वीतरागकी आज्ञातैं प्रथम ही हिंसा होने योग्य जे जीवनिके स्थान इंद्रियकायादिक जीवनिके कुलकोड तिनकूं जानो। बहुरि हिंसा करनेवाला भाव ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका स्वरूप कहा है ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका फलकूं जानो। ऐसैं हिंस्य हिंसक हिंसा हिंसाकाफल इन चारकूं यत्नतैं जानि करिके पाछैं देशकाल सहाय अपना परिणाम अर निर्वाह होना जानि अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय गृहस्थपणामें हू अपने पदके योग्य हिंसाका त्याग ही करो तथा त्रसजी-

वनिकी संकल्पी हिंसाका तो त्याग करो अर समस्त आरम्भमें दयावान हुआ यत्नाचारतैं प्रवर्तन करो अर पंचस्थावरनिका आरम्भमें घटाय करि दयावान होय प्रवर्तो। ऐसैं अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कह्या अब अहिंसाणुव्रतका पंच अतीचार जनावनेकूं सूत्र कहै हैं—

छेदनबंधनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः । आहारवारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पंच ॥ ५४ ॥

अर्थ—ये स्थूलहिंसाका त्याग नामक व्रतके पंच अतीचार हैं ते गृहस्थके त्यागने योग्य हैं। छेदन कहिये अन्य मनुष्यतिर्यंचनिके कर्ण नासिका ओष्ठादिक अंगनिका छेदना सो छेदन नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर मनुष्यनिकूं बंधनादिककरि बांधना तथा बंदीगृहमें रोकना तथा तिर्यंचनिकूं दृढबंधनकरि बांधना पक्षीनिकूं पींजरेमें रोकना इत्यादिक बंधन नाम अतीचार है ॥ २ ॥ अर मनुष्यतिर्यंचनिकूं लात घमूका लाठी चाबुक आदिका घातकरि ताडना करना सो पीडन नाम अतीचार है ॥३॥ बहुरि मनुष्य-तिर्यंच गाडा गाडी इत्यादिक ऊपरि बहुत बोझका लादना सो अतिभारारोपण नाम अतीचार है॥ ४ ॥ अर मनुष्यतिर्यंचनिको खावने पीवनेको रोकना सो अन्नपानका निराकरण नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ये पांच अतीचार स्थूलहिंसाका त्यागीकूं त्यागने योग्य है। अब सत्य नाम अणुव्रतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे। यत्तद्वदन्ति सन्तःस्थूलमृषावादवैरमणं ॥ ५५ ॥

अर्थ—जो स्थूल असत्य नाहीं बोलै अर परकूं असत्य नाहीं बुलावै अर जिस वचनतैं आपकै अन्यकै आपदा आवै ऐसा सत्य हू नाहीं कहै ताहि सत्पुरुष स्थूलझूंठका त्याग कहै हैं। भावार्थ—सत्य अणुव्रतका धारक होय सो क्रोधमानमायालोभके वशीभूत होय ऐसा वचन नाहीं कहै जाकरि अन्यका घात होजाय अन्यका अपवाद होजाय अन्यकै कलंक चढि जाय सो वचन निंद्य है। जिस वचनतैं मिथ्याश्रद्धान होजाय तथा धर्मसूं छूटि जाय व्रत संयम त्यागतैं शिथिल होजाय श्रद्धान विगडि जाय

सो वचन नाहीं कहै तथा कलह विसंवाद पैदा हो जाय विषयानुराग बधि जाय महाआरंभमें प्रवृत्ति होजाय अन्यके आर्त्तध्यान प्रगट होजाय कामवेदना प्रगट होजाय परके लाभमें अंतराय होजाय परकी जीविका विगाडि जाय अपना परका अपयश होजाय ऐसा निंद्यवचन योग्य नाहीं तथा ऐसा सत्य वचन हू नाहीं कहै जाकरि आपको अन्यको विगाड होजाय आपदा आजाय अनर्थ पैदा होजाय दुःख पैदा होजाय मर्म छेद्या जाय राजका दंड होजाय धनकी हानि होजाय ऐसा सत्यवचन हू झूठ ही है। बहुरि गालीके वचन भंडवचन नीचकुलवालेनिके बोलनेके वचन तथा मर्मछेदके वचन परके अपमानके वचन परके तिरस्कारके वचन अहंकारके वचनकूं कदाचित नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल तथा आपका परका हितरूप अर बहुत प्रलाप रहित प्रमाणीक संतोषका उपजानेवाला धर्मका उद्योत करनेवाला वचन कहै जातैं न्यायरूप आजीविका सधै अनीतिरहित होय ऐसे वचनको कहता गृहस्थके स्थूल असत्यका त्यागरूप द्वीतिय अणुव्रत होय है। अब सत्याणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

परिवादरहोभ्याख्या पैशून्यं कूटलेखकरणं च। न्यासापहारितापि च व्यतिक्रमाः पंच सत्यस्य ॥ ५६ ॥

अर्थ—इहां परिवाद तो मिथ्याउपदेश है जो स्वर्गमोक्षका कारण जो चारित्र तिस चारित्रकूं अन्यथा उपदेश करना सो परिवाद नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कोऊ आपकूं छानी बात कही होय सो किसीकूं कह देना विख्यात करि देना तथा कोऊ स्त्रीपुरुषादिकनिका एकान्तमें गुह्य चेष्टा देख करिकैं तथा गुह्यवचन श्रवण करि किसीकूं प्रगट करना सो रहोभ्याख्यान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यका छिद्र जानि बिगाडि करानेके अर्थि कोऊकूं छिपकरि कह देना चुगली करना सो पैशून्यनाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यके विना कह्या तथा विना आचरण किया झूठा लिख देना जो इसने ऐसा कह्या है ऐसा आचरण किया है सो कूटलेखकरण नामा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि कोऊ आपको धन सौंपि गया तथा वस्त्र आभरणादिक मेलि गया फिर संख्या भूलि अल्प मांगने आया ताकूं कहै तुम्हारा है

सो ही लेजावो सो न्यासापहारिता अतीचार है ॥५॥ ऐसैं स्थूल असत्यका त्याग नाम अणुव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इहां ऐसा विशेष जानना जो अनादितैं अनंकाल तो यो जीव निगोदमें ही वास किया। फिर कदाचित् निगोदिमैंतैं निकसि करिकैं फिर पंच स्थावरनिमें असंख्यातकाल परिभ्रमणकरि बहुरि निगोदमैं अनंतकाल बारंबार अनंतानंत परिवर्तन एकेन्द्रियमें किए तहां तो वचन पाया नाहीं जिह्वा इंद्रिय ही नाहीं भई बहुरि द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिंद्रिय असैनी सैनी पंचेन्द्रियमें उपज्या तहां जिह्वा पाई तो अक्षरात्मक कहने सुननेरूप वचन नाहीं पाया। कदाचित् अनंतानंतकालमें मनुष्य जन्ममें वचन बोलनेंकी शक्ति पाई तो नीच कुलनिमें अयोग्य वचन हिंसाके वचन असत्य वचन परकै अर आपकै संताप करनेवाला वचन बोलि महापापबंध करि दुर्गतिका पात्र भया अपने वचन करि अपना घातक भया। कदाचित् कोऊ पूर्वपुण्यके उदयकरि मनुष्यजन्म पाया है तो यामैं वचन बोलनेमें बडा यत्न करो। भोजनपान करना कामसेवन करना नेत्रानितैं देखना कानानितैं श्रवण करना तो शूकर कूकर गधा कागलाकै भी होय है क्योंकि आंख नाक कान जीभ कामेन्द्रिय ये तो समस्त ढोरनिके भी होय हैं। इस मनुष्यजन्ममें तो एक वचन ही सार है करामाति है जो इस वचनकूं बिगाड्या सो अपना समस्त जन्म बिगाड्या। वचनतैं ही जानिये है यो पंडित है यो मूर्ख है यो धर्मात्मा है यो पापी है यो राजा है वा राजाका मंत्री है यो रंक है यो कुलीन है यो अकुलीन है यो हीणाचारी है यो उत्तमाचारी है यो संतोषी है यो तीव्रलोभी है यो धर्मवासनासहित है यो धर्मवासनारहित है यो मिथ्यादृष्टि है यो सम्यग्दृष्टि है यो संस्कृती है यो संस्कृत रहित है यो उत्तम संगतिको राजसभामैं रह्यो हुवो है यो ग्राम्यजन गंवारनिमैं रह्यो है यो लौकिकचतुर है यो लौकिकमूढ है यो हस्तकलासहित है यो कलाविज्ञानरहित है यो उद्यमी पुरुषार्थी है यो आलसी प्रमादी है यो शूर है यो कायर है यो दातार है यो कृपण है यो दयावान है यो निर्दय है यो दीन याचक है यो महंत है यो क्रोधी है यो क्षमावान है

यो मदोद्धत है यो मदरहित है यो विनयवान है यो कपटी है यो निष्कपट है यो सरल है यो वक्र है इत्यादिक आत्माके गुणदोषादिक समस्त वचनद्वारे ही प्रगट होय है, यातैं मनुष्य जन्म पावना सफल किया चाहो तो एक वचनहीकी उज्वलता करो। इस वचनहीतैं सत्यार्थ उपदेशकरि भगवान अरहंत त्रैलोक्यकरि बंदनीक होय जगतको मोक्षमार्गमें प्रवर्तन कराया है वचनहीतैं अनेक जीवनिका मिथ्यात्वरागादिक मल दूरकरि अजर अमर अविनाशी पद दिया है। पंचपरमेष्ठीमें भी वचनकृत उपकारके प्रभावतैं प्रथम अरिहंतनिकूं ही नमस्कार किया है। ज्ञानी वीतरागीके वचनकरि स्वर्ग नरकादिक तीन लोक प्रत्यक्षकी ज्यौं दीखैं है। वचनहीकी सत्यताके प्रभावकरि पंचमकालमें धर्म प्रवर्तै है। अर उज्वल वचन विनयका वचन प्रियवचनरूप पुद्गलनि करि समस्त लोग भरया है मोल नाहीं लागे तथा किसीकूं जीकारो देनेमें अपना अंगमें दुःख नाहीं उपजै है जीभ तालू कंठ नाहीं भिदै है यातैं समस्त प्राणीनिकै सुख उपजावै ऐसा प्रियवचन ही कहो अर असत्यवचनके प्रभावकरि ही मिथ्यादेवनिकी आराधना तथा यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक वेदादिक ग्रंथनिमें मांस भक्षणादिक कुकर्मानिमें प्रवृत्ति हू असत्य वचनतैं ही भई है तथा खोटे शास्त्रनिकी रचना नानाप्रकारके मिथ्यात्वरूप मत नरक तिर्यंचनिमें परिभ्रमण करावनेवाला समस्त दुष्ट आचार इस असत्य वचनके प्रभावकरि ही प्रवृत्तैं है अर अयोग्यवचनतैं ही घर घरमें कलह विसंवाद परस्पर वैर परस्पर ताड़न मारन प्राणापहार क्रोधभय संतापभय अपमानादिक देखिये है अर अप्रतीत अविश्वास खेदका कारण एक असत्य वचनहीकूं जानो। अर असत्यका प्रभावकरि परलोकमें नरकातिर्यंचगतिकूं प्राप्त होय अरु कुमानुषनिमें तथा नीच चांडाल चमार भील कषायी इत्यादिक कुलमें हू असत्य ही उपजावै तथा अनेक भवनिमें दरिद्री रोगी गूंगो बहरो हीण दीन असत्यका प्रभावतैं होय है तातैं समस्त दुःखका मूल एक असत्यवचन है सो शीघ्र ही त्याग करि एक सत्यवचन प्रियवचनहीमें प्रवृत्ति करो। तातैं तुम्हारा वचन समस्तके आदरने योग्य

अनेक देव मनुष्यनिक ऊपरि आज्ञा करने योग्य होय तथा समस्तश्रुतका परिगामी श्रुतकेवलीपना गणधरपना सत्यहीका प्रभावतैं प्राप्त होय है यातैं असत्यका त्याग ही जीवका कल्याण है। बहुरि पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहै हैं—

हेतौ प्रमत्तयोगे निर्दिष्टे सकलवितथवचनानां। हेयानुष्ठानादेरनुवदनं भवति नासत्यं ॥ १०० ॥
भोगोपभोगसाधनमात्रं सावद्यमक्षमा मोक्तुं। ये तेऽपि शेषमनृतं समस्तमपि नित्यमेव मुञ्चन्तु ॥ १०१॥

अर्थ—समस्त असत्यवचनको कारण प्रमत्तयोग भगवान कह्या है कषायके आधीन होय जो वचन कहै है सो असत्य है यातैं कषायविना देना मेलना धरना त्यागना ग्रहण करना इत्यादिकका कहना सो असत्य नाहीं है अर जे गृहस्थ अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचन त्यागनेकूं समर्थ नाहीं हैं ते गृहस्थ अन्य निरर्थक पापबंध करनेवाला समस्त असत्यवचनकूं तो त्याग अवश्य ही करो। भावार्थ—अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचनका त्याग नाहीं होय सकै तो ताका त्याग करनेमें बडा उद्यम राखणा अर बृथा बहु आरम्भ बहुपरिग्रहका कारण दुर्ध्यानका कारण अन्यकै आपकै संतापका कारण ऐसा सदोष निंद्यवचनका तो त्याग अवश्य करना ही श्रेष्ठ है। ऐसैं स्थूलअसत्यका त्याग नामा दूजा अणुव्रतकूं कह्या है। अब स्थूलचोरीका त्याग नामा तीजा अणुव्रतकूं कहै हैं—

निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं। न हरति यन्न च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणं ॥ ५७ ॥

अर्थ—जो किसी पुरुषका जमीमें गड्या हुआ धन होय वा कोऊ स्थानमें महल मन्दिर गृहादिकमें स्थापन किया हुआ धन होय अथवा आपकूं अमानत सौंपि गया होय वा अपने मकानमें तथा परके स्थानमें आपकूं नाहीं जनाया धर गया होय अथवा ग्राममें नगरमें वनमें बागमें पटकि गया होय अथवा आपको सौंपि भूलि गया होय वा हिसाब लेखामें चूकि गया होय वा आपके स्थानमें भूलिकरि पटकि गया होय अथवा लेनेदेनेमें गिनतीमें विस्मरण हुआ पैसा रुपया महोर आभरण वस्त्रादिक

बहुत वा अल्प द्रव्य बिना दिया नाहीं ग्रहण करै अर परका द्रव्य उठाय किसीकूं देवे भी नाहीं सो स्थूल चोरीका त्यागरूप अणुव्रत है। अर कार्तिकेयस्वामी ऐसैं कह्या है—

जो बहुमुल्लं वत्थुं अप्पमुलेण णेय गिण्हेदि। वीसारियं पि ण गिण्हेदि लाहे थूवेहि तूसेदि ॥ ६३५ ॥

अर्थ—जाके स्थूलचोरीका त्याग होय सो बहुत मोलकी वस्तु अल्पमोलमें नाहीं ग्रहण करै जैसैं कोऊ पुरुष आपकी वस्तुकी चौकासि करि बेचै तो सवारुपयामें बिक जाय अर आपकूं आय सौंपी जो इसकी कीमत होय सो आप देवो तो तहां सवारुपयाका वस्तुकूं प्रगट जानता लोभके वाशि हो एक रुपयामें हू नाहीं लेवै। अन्यकी भूली हुई वस्तु ग्रहण नाहीं करै तथा ऐसा परिणाम नाहीं करै जो कोऊ निर्धन तथा अज्ञानीकी वस्तु हमारे थोडे मोलमें आजाय तो भला है अर अल्प लाभहीमें बहुत संतोष राखै। भावार्थ—बनजके व्यवहारमें तथा सेवामें लाभ थोरा होय तो संतोष ही करै अधिकमें लालसा नाहीं करै तिसकै स्थूलचोरीका त्याग जानना। अब अचौर्य नामा अणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

चौरप्रयोगचौरार्थादानविलोपसदृशसन्मिश्राः। हीनाधिकविनिमानं पंचास्तेये व्यतीपाताः ॥ ५८ ॥

अर्थ—अचौर्य नाम अणुव्रतके ये पंच अतीचार हैं आप तो चोरी नाहीं करै परंतु अन्यकूं प्रेरणा करै तथा चोरी करनेका प्रयोग (उपाय) बतावै सो चोरप्रयोग नामा अतीचार है ॥ १ ॥ अर चोरका ल्याया धनको ग्रहण करणा सो चौरार्थादान नामा दूसरा अतीचार है ॥ २ ॥ अर उचित न्यायतैं छांडि अन्यरीतितैं ग्रहण करना अथवा राजाकी आज्ञासूं जाका निषेध होय तिस कार्यका करना विलोप नामा अतीचार है ॥ ३ ॥ अर बहुत मोलकी वस्तुमैं अल्पमोलकी वस्तु मिलाय चला देना सो सदृशसन्मिश्र नामा अतीचार है जैसैं घृतमैं तेल मिलाय देणा शुद्धसुवर्णमैं कृत्रिमसुवर्ण मिलाय देना सो सदृशसन्मिश्र है ॥ ४ ॥ बहुरि देनेके बांट ताखडी घाटि परिमाण राखना लेनेकूं बधती राखना सो हीनाधिकमानो-

न्मान नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं स्थूल चोरीका त्याग नामा अणुव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इस चोरी समान जगतमें अपराध नाहीं है समस्त उच्चता कुलकर्म धर्मविनाश करनेवारी समस्त प्रतीति बडापनाका विध्वंस करनेवाली है अर चोरीका धन हू वेश्यासेवनमें परस्त्रीमें व्यसननिमें अभक्षमें खरच होय है वा अन्य किसीमें रही जाय है संतोष नाहीं आवै है क्लेशित होय रहे है अर प्रगट होय तो राजा तीव्र दंड देहै समस्त लोक मारे है हस्तनासिकाका छेदन सर्वस्वहरणादिक दंड यहां ही प्राप्त होय है परलोकमें नरकादिक कुयोनिनमें परिभ्रमण होय है। अब स्थूल ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

न च परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्। सा परदारानिवृत्तिः स्वदारसंतोषनामापि ॥ ५९ ॥

अर्थ—जो पापका भयतैं परकी स्त्रीप्रति आप नाहीं प्राप्त होय अर परकी स्त्री प्रति अन्य पुरुषनिनैं गमन नाहीं करावे सो स्वदारसंतोषनामधारक परस्त्रीका त्याग नामा चौथा अणुव्रत है । भावार्थ—जो अपने जाति कुलकी साखतैं विवाही स्त्री तिसविषै संतोष धारण करके तिसतैं अन्य समस्त स्त्रीमात्रमें रागभावका त्यागी होय परस्त्री तथा वेश्या दासी तथा कुलटा तथा कन्या इत्यादिक स्त्रीनिमें विरागताको प्राप्त होय स्त्रीनिसूं रागभावकरि संगम वचनालाप अवलोकन स्पर्शनका त्याग करै ताकूं परस्त्रीका त्यागी कहिये तथा स्वदारसंतोषी हू कहिये है। अब स्वदारसंतोषव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषाः। इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पंच व्यतीचाराः ॥ ६० ॥

अर्थ—ये अस्मर जो स्थूल ब्रह्मचर्य ताके पंच अतीचार हैं ते त्यागने योग्य हैं । अपने पुत्र पुत्री विना अन्यके पुत्रपुत्रीनिका विवाहकूं आ संमतात् कहिये आप रागी होय करवो सो अन्य विवाहकरण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कामके अंग छांडि अन्य अंगनितैं क्रीडा करिवो सो अनंगक्रीडा नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि भंडिमारूप पुरुषकूं स्त्रीका रूप स्वांगादिक बनाय मनवचनकायकी प्रवृत्ति

सो विटत्व नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि कामकी अतितृष्णा कामकी तीव्रता सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि इत्वरिका जे व्यभिचारिणी स्त्री तिनके घर जावना व्यभिचारिणीकूं आपके घर बुलावना देन लेन रखना परस्पर वार्ता करना रूप शृंगार देखना सो इत्वरिकागमन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ये स्थूल ब्रह्मचर्यव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। जो देवनिकरि पूज्य यो ब्रह्मचर्यव्रत ताकी रक्षा किया चाहै सो अपनी विवाही स्त्री विना अन्य माता भगिनी पुत्री पुत्रवधूके नजीक हू एकांतस्थानमें नाहीं रहै अन्य स्त्रीका मुख नेत्रादिककूं अपना नेत्र जोड नाहीं देखै। शीलवंतपुरुषनिका नेत्र अन्यस्त्रीकूं देखत प्रमाण मुद्रित हो जाय हैं। अब परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

धनधान्यादिग्रन्थं परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता। परिमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणनामापि ॥ ६१ ॥

अर्थ–अपने परिणामनिमें जेतामें संतोष आजाय तितना धन धान्य द्विपद चतुष्पद गृहक्षेत्र वस्त्र आभरणादि परिग्रहका परिमाण करकैं अधिक परिग्रहमें निर्वांछकपनो सो परिमितपरिग्रह नाम व्रत है याहीकूं इच्छापरिमाण नाम कहिये है। बहुरि कोऊकै वर्तमानमें परिग्रह अल्प है अर वांछा अधिक करि बहुत धनमें परिमाण करि मर्याद करै है सो हू धर्मबुद्धि है व्रती है परंतु अन्यायतैं लेवाका त्याग दृढ राखै जैसैं कोऊकै परिग्रह तो सौ रुपयाका है परिमाण हजारका करै जो हजार सिवाय नाहीं ग्रहण करूं यो भी व्रत है परंतु हजार अन्यायतैं नाहीं ग्रहण करूंगा ऐसा दृढ नियम करै जातैं परिग्रहका परिमाण बिना निरंतर परिणाम अनेक वस्तुनिमें परिभ्रमण करै है। समस्त पापनिका मूलकारण परिग्रह है समस्त दुर्ध्यान याहीतैं होय है जातैं भगवान मूर्छाकूं परिग्रह कह्या है। बाह्यपरिग्रह अन्य वस्त्रमात्र तथा रहनेकूं कुटीमात्र नाहीं होतैं हू परवस्तुमें ममता (वांछा) करिसहित है सो परिग्रही ही है परमागममें अंतरंग परिग्रह चौदह प्रकार कह्या है—मिथ्यात्व १ वेद २ राग ३ द्वेष ४ क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८

हास्य ९ रति १० अरति ११ शोक १२ भय १३ जुगुप्सा १४। तहां मिथ्यात्व तो देहादिक परद्रव्यानिमें अनादिकालतैं ममतारूप परिणाम हैं यह देह है सो मैं हूं जाति मैं हूं कुल मैं हूं इत्यादिक परपुद्गलनिमें आत्मबुद्धि अनादितैं लाग रही है सो मिथ्यात्व है तथा रागद्वेषभाव क्रोधादिकभाव मोहकर्मकरि किए भावनिमें आत्मपनाको संकल्प सो मिथ्यात्वपरिग्रह है। तथा कामतैं उपज्या विकारमें लीन हो जाना तथा राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ हास्यादिक छह नोकषायानिमें आपा धारन सो अतरंग परिग्रह है जाकै अंतरंगपरिग्रहका अभाव है ताकै बाह्यपरिग्रहमें ममता नाहीं होय है समस्त अनीति परिग्रहकी ममतासूं करै है। परिग्रहकी वांछातैं हिंसा करै झूठ बोलै हो चोरी करै हो कुशीलसेवन करै हो परिग्रहके वास्ते मरजाय अन्यकूं मारै महा क्रोध करै परिग्रहका प्रभावतैं महाअभिमान करै परिग्रहवास्ते अनेक मायाचार करै परिग्रहकी ममतातैं महालोभ करै बहुत आरंभ बहुत कषायको मूल परिग्रह ही है समस्त पापनितैं छूट्या चाहै सो परिग्रहतैं विरक्त होय है सो ही कार्तिकेयस्वामी कह्या है—

को ण वसो इत्थिजणे कस्स ण मयणेण खंडियं माणं। को इंदिएहिं ण जिओ को ण कसाएहि संतत्तो २८१

सो ण वसो इत्थिजणे सो ण जिओ इंदिएहिं मोहेण। जो ण य गिण्हदि गंथं अब्भंतरवाहिरं सव्वं २८२

जो लोहं णिहणित्ता संतो सरणायणेण संतुट्ठो। णिहणदि तिण्णा दुट्ठा मण्णंतो विणस्सरं सव्वं॥ ३३१॥

जो परिमाणं कुव्वदि धणधाणसुवण्ण खित्तमाईणं। उवओगं जाणित्ता अणुव्वयं पंचमं तस्स ॥ ३४०॥

अर्थ—इस जगतमें स्त्रीनिके वश कौन नाहीं है अर कामविकारनें कौनका मान खंडन नाहीं किया अर इंद्रियनिकरि कौन नाहीं जीत्या गया अर कषायनिकरि तप्तायमान कौन नाहीं है? समस्त संसारी जीव है ते स्त्रीनिके वश होय रहे हैं अर कामविकार समस्त संसारीनिका अभिमान खंडन करै है अर समस्त संसारी इंद्रियनिके वश पराधीन होय रहे हैं अर चार प्रकार कषायनिकार समस्त प्राणी दग्ध होय रहे हैं जो पुरुष अभ्यंतर अर बाह्य समस्त परिग्रहकूं ग्रहण नाहीं करै है सो ही स्त्रीनिके वश नाहीं

सो ही इंद्रियनिके आधीन नाहीं तिसहीकूं मोह नाहीं जीतै सो ही कामकरि नाहीं खंडन होय है सो ही कषायकरि दग्ध नाहीं होय है। जो पुरुष लाभको नष्टकरि संतोषरूप रसायणकरि आनंदित हुआ समस्त धन संपदादिकनिनै विनाशीक मानि दुष्ट तृष्णाकूं आगामी वांछाकूं छांडिकरि धन धान्य सुवर्ण क्षेत्र स्थानादिकनिको अपना अभिप्राय जानि परिणाम करै है. जो इतना परिग्रहसूं मेरा निर्वाह करना अधिकमें मेरा प्रवृत्ति करनेका त्याग है ऐसे पापरूप जानि वांछा छांडै ताकै परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत होय है। बहुरि परमागममें परिग्रहका लक्षण मूर्छा कह्या है जीवकै जो परपदार्थनिमें ममताबुद्धि सो ही मूर्छा है जातैं परवस्तुमें ऐसा अपना मानकरि राग है जो आत्माका मरण जीवन हित अहित योग्य अयोग्यके विचारमें अचेत होय रह्या है मोहकी उदीरणातैं म्हारो म्हारो ऐसो परद्रव्यमें परिणाम सो ही मूर्छा है। मूर्छा हीकूं भगवान परिग्रह कह्या है याहीतैं बाह्यपरिग्रह अल्प होहु वा मति होहु समस्त परिग्रहरहित है तो हू मूर्छावान परिग्रही है सो ही कहै हैं—

बाहिरगंथविहीणा दलिद्दमणुआ सहावदो हुंति। अब्भंतरगंथं पुण ण सक्कदे को वि छंडेदुं॥ ३८७॥

अर्थ—बाह्य परिग्रह रहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीतै होय है सो देखिये ही है. हजारां लाखां मनुष्य ऐसे हैं जिनकूं जन्मलिये पीछे पीतल तांबा कांसाका पात्र मिल्या ही नाहीं जे जन्मतैं घृत भक्षण किया नाहीं मोदकादिक खाया नाहीं पाग अंगरखी जामा कदे पहरह्या ही नाहीं स्त्री विवाही ही नाहीं कदे उदर भर भोजन मिल्या नाहीं सुवर्णादिक देख्या नाहीं समस्त जन्ममें दोय चार दिनके खावने योग्य अन्नमात्रका हू संग्रह हुआ नाहीं अन्य सुवर्णरूपादिकनिका तो दर्शन ही नाहीं पैसा रुपया एक भी जिनकूं कदे प्राप्त हुआ नाहीं रहनेकूं कुटीमात्र हू अपनी भई नाहीं ऐसैं अनेक मनुष्य देखिये हैं परंतु अभ्यंतर ममता छोडनेकूं कोऊ सामर्थ नाहीं तातैं मूर्छा ही परिग्रह है। यहां कोऊ पूछे जो मूर्छा ही परिग्रह है तो बाह्य धनधान्यवस्त्रादिक बाह्यवस्तुका संगमकै परिग्रहपना नाहीं ठहरया ताकूं उत्तर करै

हैं—ये वाह्यपरिग्रह अंतरंगपरिग्रहके निमित्त हैं इन बाह्यपरिग्रहका देखना श्रवण करना चिंतवन करना शीघ्र ही परिग्रहमें लालसा उपजावै है ममता उपजावै है अचेत करे है तातैं बाहिरंगपरिग्रह मूर्छाका कारण त्यागने योग्य है अर अंतरंग बहिरंग दोऊ प्रकार परिग्रहके ग्रहणकूं भगवान हिंसा कही है अर दोय प्रकारका परिग्रहका त्याग सो अहिंसा है ऐसैं परमागमके जाननेवाले कहे हैं। जातैं मिथ्यात्वकषायादिक अंतरंगपरिग्रह तो हिंसाहीके दूजे पर्यायनाम हैं अर बाह्यपरिग्रहमें मूर्छा सो ही हिंसा है। बहुरि ये कृष्णादिक लेश्याके अशुभपरिणाम हू परिग्रहमें रागकरि ही होय हैं क्योंकि परिणामनिकी शुद्धता मंदकषायकरि होय है कषायनिकी मंदता होय सो परिग्रहके अभावतैं होय अर महान आरंभ भी परिग्रहका अधिकतातैं ही होय है ऐसैं जानि समस्त परिग्रह छांडनेका राग नाहीं घट्या तो परिग्रहमें उपयोग माफिक परिणाम करिकैं तो रहो। अर जो परिग्रह तो अल्प है अर अधिककी बांछा बनि रही है सो इस बांछातैं प्राप्त नाहीं होयगा लाभ तो अंतरायकर्मका क्षयोपशमत होयगा बांछातैं तो और पाप कर्मका बंध ही होयगा तातैं पापका कारण परिग्रहकी ममता छांडि जेता प्राप्त भया तितनामें संतोष धारण करि ही रहो। यहां ऐसा विशेष जानना, यद्यपि समस्त परिग्रह त्यागने योग्य है परंतु जो गृहस्थपनामें रहि धर्मसेवन कर्या चाहै सो अपने पुण्यके अनुकूल परिग्रह राखै ही जो परिग्रह गृहस्थके नाहीं होय तो काल दुकालमें रोगमें वियोगमें व्याहमें मरणमें परिणाम ठिकाने रहै नाहीं परिणाम बिगाडि जाय तातैं गृहस्थधर्मकी रक्षावास्तै परिग्रह संचय करै ही अर आजीविकाको उपाय न्यायमार्गत करै ही क्योंकि साधु तो परिग्रह अल्प हू राखै तो दोऊ लोक तैं भ्रष्ट होजाय अर गृहस्थ परिग्रह नाहीं राखै तो भ्रष्ट होजाय जातैं गृहस्थाचारमैं रहै तो ताके अल्प तथा बहुत परिग्रह बिना परिणाममैं समता नाहीं रहै अर अजीविका नाहीं होय तो निराधारका परिणाम धर्मसेवनमें ठहर सकै नाहीं परिणाममें तीव्र आर्ति मिटै नाहीं भोजनपान मिलने योग्य आजीविका बिना स्वाध्यायमें पूजनमें शुभभावनामें

परिणाम ठहरि सके नाहीं अकुलता करि संक्लेश बधतो जाय संतोष रहै नाहीं। जातैं रोग आवतैं वृद्धपना आवतैं वियोग होतैं अन्न वस्त्रका आधार विना अपना परिणाम कोऊ देशमैं कोऊ कालमैं थिरता पावै नाहीं देहकी रक्षा अजीविका बिना नाहीं, देह बिना अणुव्रत शील संयम काहेतैं होय ? यातैं अपना पुण्यकी अनुकूलता अर उद्यम सामर्थ्य सहाय साधनादिक देशकालके योग्य विचारि न्यायमार्गतैं आजीविका करि धर्म सेवन करो। अहिंसातैं सत्यप्रवृत्तितैं अदत्त परके धनका त्याग करि आपकूं जगतके लोकनिकै विश्वास आवनेयोग्य पात्र बनो। तथा विद्या कला चातुर्य करि आजीविका होने योग्य आपकूं करो। पाछैं लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण लाभ अलाभ अल्पलाभ होय ताहीमैं संतोष करो। अर कुंटुबका पोषण देहका पोषण पुण्यके उदयतैं लाभ भया तिस परिमाण करो। ऋणवान मत होहु ऋण हुआ पाछैं समस्त धीरज प्रतीतका अभाव हो जायगा दीनता प्रगट हो जायगी एक वार अपनी प्रतीति बिगडै पाछैं आजीविका होना काठिन है बहुरि अजीविकाकै अनुकूल खरच राखो पुण्वाननिकूं देख अधिक खरच करोगे तो जस अर धर्म अर नीति तीनों नष्ट हो जायंगे अर अन्य पुण्यवानोंका खरच देख बराबरी करोगे तो दरिद्री होय दोऊ लोकतैं भ्रष्ट हो जावोगे अर या जानो हो जो हमारी बडी आबरू है पूर्वैं हमारे बडा २ कार्य भया है अब कैसैं घटावैं जो घटावैं तो हमारा समस्त बडापना बिगडि जाय ऐसी बुद्धि मति करो पुण्य अस्त होजाय तब बडापना कैसैं रहेगा अब बडापना तो सांच संतोष धारणकरि शीलकरि विनयकरि दीनता रहितपनाकरि इंद्रियनिके विषयनिकी चाह घटावनेकरि है। जातैं दोऊ लोकमें उज्वलता होय पुण्यको उदय आजाय तदि जीवकूं स्वर्गलोकका महर्द्धिक देव बना दे चक्रवर्ती करदे अर पापका उदय आवै तदि नरकका नारकी तथा एकेन्द्रिय बनादे तथा भार बहनेवाला रोगी दरिद्री मनुष्य करदे तिर्यंच करदे इसही भवमें राजा होय रंक होजाय कौनसा बडापनाकूं देखो हो अर अपने धन तो अल्प अर अभिमानी होय बहुत धन खरच करोगे तो दरिद्री

अर ऋणवान दीन होय समस्ततैं नीचे होजावोगे निंद्यताकूं प्राप्त होय आर्तध्यानतैं दुर्गतिके पात्र होजावोगे तातैं आजीविका होय तातैं अल्प खरच करो यो ही प्रवीणपणो है पंडितपणो है जो आंवदनीतैं अल्प खरच करै सो ही कुलवानपणो है सो ही उत्तम धर्म है क्योंकि आंवदनीतैं खरच वधावोगे तो अपनी ही बुद्धितैं दरिद्री होय मूर्खता दिखावोगे अर ऋणवान हो जावोगे तदि उत्तम कुल योग्य आदर सत्कार आचरण समस्त नष्ट होजायगा अर मलीनता प्रगट होजायगी अर पूजन स्वाध्याय शुभ भावनामें बुद्धि निर्धन हुआ पीछैं ऋणवान हुआ पीछैं नाहीं तिष्ठैगी। तातैं आजीविकातैं अल्प खरच करना ही गृहस्थकी परम नीति है अर अभिमानी होय अधिक खरच करै ताकैं अन्यका विना दिया धन ऊपरि चित्त चलि जाय है अनेक असत्य कपटादिक पापमैं प्रवृत्ति होय संतोष धर्म नष्ट हो जाय है । कोऊ या कहै जो आजीविका तो पूर्वकर्मके आधीन है धर्मसेवन अपने आधीन है ताकूं कहिये है जो—यहां आजीविका पुण्यके आधीन ही है परंतु धर्मग्रहण होजाना हू पुण्यकर्मका सहाय विना नाहीं होय है। धर्मग्रहणकी योग्यतामैं हू एती सामग्री मिले होय है उत्तमकुलमें जन्म पावना, जातैं चांडाल चमार भील शूद्रादिकके कुलमें धर्मका लाभ कैसैं होय? बहुरि सुदेशमें उपजना, इंद्रियांकी पूर्णता पावना, रोगरहित देह पावना शुभ संगति पावना, आजीविकाकी स्थिरता पावना सम्यक्धर्मका उपदेश पावना, इत्यादिक पुण्यका उदयजनित बाह्यसामग्री पाये बिना धर्मग्रहण वा धर्मका सेवन नाहीं होय है। तातैं जाकैं पूर्वपुण्यका उदयतैं आजीविकाकी स्थिरता होय ताकै धर्मसेवनमैं योग्यता होय है। बहुरि जाके इंद्रियनिकी पूर्णता नीरोगता होजाय अर न्याय अन्यायका विवेक तथा धर्म अधर्म योग्य अयोग्यका विवेक होय तथा प्रियवचन विनय अन्यके धन अर अन्यकी स्त्रीसूं पराङ्मुखता अर आलस्य प्रमादरहितता धीरता कालदेशके योग्य वचन होय ताकै आजीविकाका लाभ अर धर्मका लाभ होजाय। गुणवानकै निर्लोभीकै आलस्यरहित उद्यमीकै विनयवानकै जीविका दुर्लभ नाहीं है । आप जीविका योग्य पात्र बन जाय तो जीविका कदाचित् दूर

नाहीं लाभांतराय कर्मका क्षयोपशम प्रमाण आजीविका थोडी वा बहुत नियमतें बन ही जाय तिसमैं संतोष करि अधिकमैं वांछाका त्याग करि परिग्रहपरिमाणव्रत धारण करो। अर पुण्यका उदयके आधीन आजीविका प्राप्त होजाय तो अनीतिमैं प्रवृत्ति करि आजीविकाकूं नष्ट मत करो आजीविका नष्ट हो जायगी तो धर्म अर जस नष्ट होजायगा अर अपने भावनिकरि जो नीति धर्म नाहीं छांडोगे न्यायमार्ग चालोगे फिर हू असाताका उदयतैं अग्नितैं जलतैं चोरनितैं राजाके उपद्रवतैं आजीविका बिगडि जाय तथा धन बिगाडि जायगा तो धर्म नाहीं बिगडैगा यश नाहीं बिगडैगा जगतमैं अप्रतीतका पात्र नाहीं होवोगा, अर प्रबल लाभांतरायका उदयतैं न्यायरूप उद्यम करते हू जो लाभ नाहीं होय तो समता ही ग्रहण करो। जो आयुकर्म बाकी है तो भोजनादिककी विध कर्म मिलाय देगो कर्म बलवान है। वनमैं पहाडमैं जलमैं नगरमैं अंतरायका क्षयोपशम प्रमाण सबकूं मिलै है। कोऊका पुण्य तो ऐसा है जो बहुत लोकनिकूं भोजनादिक देय आप भोजन करै है अर कोऊके अंतरायका ऐसा उदय है जो अपना उदर हू नाहीं भरै है। कोऊकूं आधा उदर भरनेलायक मिलै है। कोऊकूं एक दिन मिलै एक दिन नाहीं मिलै। कोऊकूं दिनके आंतरै तीन दिनके आंतरै नीरस भोजन मिलै तो हू धर्मात्मा समताकूं नाहीं छांडै। जो पूर्वं तिर्यंचनिके भवमैं कदे उदरभर भोजन मिल्या नाहीं तथा क्षुधा तृषाके मारे अनेक बार मरे हैं तातैं अब धैर्य धारण करि जैसैं हमारे धर्म नाहीं छूटै तैसैं यत्न करना जिनका परिणाममैं ऐसा गाढ प्रगट होय तो स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव होय है। बहुरि कोऊ या कहै जो आप तो गाढ पकडि समता राखै परंतु कुटुंब जाकी गैलि होय तो कहा करै? तो ऐसे कुटुंबकूं कहै भो कुटुंबके जन हो! जो आपां पूर्व-जन्ममैं दान दिया नाहीं व्रत पाल्या नाहीं अभक्ष भक्षण किये अन्यायतैं परका धन ग्रहण किया तिस पापके उदय करि ऐसे दरिद्री भये जो उदरकूं भोजन अर वस्त्र भी नाहीं सो अपना किया पापका फल है जो अब अन्य पुण्यवाननिके आभरण भोजनादिक देखि क्लेशित होवोगे तो केवल आगानैं हू तिर्य-

चगतिके घोर दुःखनिका कारण पापकर्म तथा कोटनि भवपर्यंत दरिद्रादिकके कारण पापबंध करोगे परकी संपदा आपकै नाहीं आवैगी। क्लेश दुर्ध्यान तृष्णादि कियेतैं दुःख नाहीं मिटैगा अर दुःख बधैगा अर जो अल्प मिल्यामैं संतोष करि निर्वांछक होओगे तो वर्तमानमैं तो दुःख ही नाहीं व्यापैगा अर समस्त पापकर्मकी निर्जरा ऐसी होयगी जो घोर तपश्चरणतैं हू नाहीं होय। अर अल्पभोजन वस्त्रादिक मिले अर परिणाममैं आकुलतारहित समतासूं रहै तो बडा तप है। अर कर्म मुझे थांके सामिल उपजायो सो अब मैं दैव पुरुषार्थ दोऊनिके अनुकूल द्रव्य उपार्जनमैं उद्यम करूं हूं परंतु लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण न्यायमार्गतैं प्राप्त होजायगा सो तुम्हारे निकट लाऊं हूं। अब यामैंसूं हमारे विभागका बांटा होय सो हमकूं द्यो अर तुम्हारा होय सो तुम विभाग करि भोजनादिक करो परंतु अब हम भगवानका उपदेश्या दुर्लभ धर्म ग्रहण किया है सो अब तुम्हारे वास्ते अनीति कपट घोर पापकरि धन नाहीं ग्रहण करैंगे न्यायनीतितैं जैसैं धर्म नाहीं बिगडै तैसैं उद्यमकरि उपार्जन करैंगे। तुम भी जैसैं हमारा धर्म बिगडि जाय तैसैं प्रवर्तन मत करो। अपना अपना पुण्यपापका फल भोगो। आकुलता छांडि जेता मिले तितनामैं संतोष धारि सुखतैं रहो ऐसा जाके निश्चय है ताके परिग्रहपरिमाण नाम स्थूल व्रत होय है। और जो कुटुंबका पोषणके अर्थि पाप क्रियामैं प्रवर्तै है असत्य चोरी कपट हिंसा इत्यादिक पापनिमैं प्रवर्तै है तिनके घोरपापका बंध होय पापतैं दुर्गतिका पात्र होय है तातैं अल्प जीतव्यमैं व्रत शील संयममैं ही दृढता करो। केतक लोक कहै हैं जो धन तो पापहीतैं आवै है पाप बिना धन आवै नाहीं त्यागी व्रती हुयां धन कैसैं आवै? ताकूं कहिये है—ऐसा तो तुम्हारी भ्रांति है जो पाप विना धन आवै नाहीं ऐसा कहना अयुक्त है। जो पापहीतैं धन आवै तो इस जगतमैं लाखां भील चांडाल चोर चुगुल मनुष्यनिकूं मारनेवाले ग्राम दग्ध करनेवाले मार्ग लूटनेवाले समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र समस्त जाति समस्त कुल पापीनि करि भऱ्या है समस्त पुरुष स्त्री बालकादि हिंसाके करनेकूं असत्य बोलनेकूं

चोरी करनेकूं तय्यार हैं परंतु जो पूर्वजन्ममें कुपात्र दान दिया है कुतपकरि खोटा पुण्य बांध्या है तिनके कुमार्गतैं धन आवै है पुण्यहीन तो मार्‌या जाय पूर्वपुण्य विना पापतैं ही तो नाहीं आवै है अर जो पुण्य बांध्या ते यहां चोरी चुगुली कर्‌यां विना ही संपदाकूं प्राप्त होय है। राजाके घर जन्म ले है तातैं कोटधनके धणीनिकै घर जन्म लै है। बहुत कहा कहिये समस्त पुण्यका फल है खोटे पुण्यकी लक्ष्मी भोगि नरक तिर्यंचमें जाय डूबै है। अब परिग्रहपरिमाण व्रतके पंच अतीचार वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

आतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि। परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पंच लक्ष्यन्ते ॥ ६२ ॥

अर्थ—परिमितपरिग्रह नाम व्रतके ये पंच अतीचार जानिये है जो घोडा ऊंट बैल इत्यादिक तिर्यंचानिकूं तथा दासी दास सेवकादिकानिकूं अतिलोभके वशतैं मर्यादारहित अतिदूरका मंजल करावै बहुत चलावै सो अतिवाहन नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि अपने गृहमैं प्रयोजनरहित हू बहुत वस्तुनिका संग्रह करै भोजनवस्त्रपात्र इत्यादिक थोरेका प्रयोजन होय अर बहुतका संग्रह करै तथा धान्यादिक अर वस्त्रादिक तथा औषधादिक तथा काष्ट पाषाण धातु इत्यादिकनिका संग्रहमैं बहुत परिणाम रहै सो अतिसंग्रह नाम दूजा अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यके बहुत संपदा बहुत परिग्रह तथा अनेक देशांतरनिकी वस्तु वा कदे नाहीं देखे ऐसे वस्तुका देखनेकरि श्रावक आश्चर्य करना सो विस्मय नाम तीजा अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि कोऊ बनिजमैं तथा सेवामैं तथा कलाहुन्नरतैं आपके अंतरायके क्षयोपशम परिमाण लाभ होय तो हू तृप्त नाहीं होना संतोष नाहीं आवना सो अतिलोभ नामा चौथा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि तिर्यंचनि ऊपरि लोभके वशतैं अधिक भार लादि चलावना सो अतिभारवाहन नामा पांचमा अतीचार है ॥ ५ ॥ जो गृहस्थ परिग्रह परिमाण करै सो इन पांच अतीचारका हू परित्याग करै। ऐसैं गृहस्थनिके धारण करनेयोग्य पंच अणुव्रत कह करिके अब अणुव्रतनिके फल कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकं । यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ६३ ॥

अर्थ—अतीचारनिकरि रहित ये पूर्वोक्त पंच अणुव्रतरूप निधि हैं सो देवलोकरूप फलकूं फले हैं जिस देवलोकमैं अवधिज्ञान अर अणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्व ये अष्ट महागुण हैं अर धातु उपधातुरहित दिव्यशरीर पाइये है। भावार्थ—अणुव्रतनिके धारण करनेवाला मरकरि स्वर्गलोकमैं महान् अणिमादिक ऋद्धिके धारक देव ही होय अन्य पर्याय नाहीं पावै ऐसा नियम है। स्वर्गमैं धातु उपधातुरहित रोग वृद्धत्वादिकरहित दिव्यशरीरकूं प्राप्त होय असंख्यात वर्षपर्यंत सुखसंपदामैं लीन हुआ तिष्ठै है। अब जे पंच अणुव्रतनिकूं धारण करि इस लोकमैं विख्यात महिमाकूं प्राप्त भये तिनके नाम प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं—

मातङ्गो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः। नीली जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमं ॥ ६४ ॥

अर्थ—अहिंसा नाम अणुव्रतकरि मातंग जो चांडाल अर सत्य अणुव्रतकरि धनदेव नाम वणिकपुत्र अर अचौर्यव्रत करि वारिषेण नाम राजपुत्र अर ब्रह्मचर्यव्रतकरि नीली नाम श्रेष्ठीकी पुत्री अर परिग्रह परिमाणकरि जयकुमार ये व्रतके माहात्म्य करि उत्तम पूजाके अतिशयकूं प्राप्त भये इस ही भवमैं देवनिकरि पूज्य भये। यद्यपि इन व्रतनिके प्रभावतैं अनेक भव्य इस लोकमैं महिमा पाय देवलोकमैं गये तथापि आगमप्रसिद्ध इनकी ही कथा है। अब पंच पापनिके प्रभावतैं जे इस लोकमैं घोर क्लेश पाय दुर्गति गये तिनका नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

धनश्रीसत्यघोषौ च तापसारक्षकावपि। उपाख्येयास्तथा श्मश्रुनवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥

अर्थ—हिंसा करि तो धनश्री असत्य करि सत्यघोष चोरीकरि तापसी कुशीलकरि कोतवाल परिग्रहकरि श्मश्रु नवनीत ये इस लोकमैं राजानितैं तीव्र दंड पाय दुर्गतिकूं प्राप्त भये इनका यथाक्रम दृष्टांत जानना। अब अष्टमूल गुणनिकूं कहै हैं—

मद्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकं । अष्टौ मूलगुणानाहुर्गृहिणां श्रमणोत्तमाः ॥ ६६ ॥

अर्थ—श्रमणोत्तम जे गणधर तथा श्रुतकेवली हैं ते गृहस्थके मद्यमांसमधुके त्याग सहित जे पंच अणुव्रत ताहि अष्टमूलगुण कहै हैं। भावार्थ—जीव मारनेके संकल्पकरि त्रस जीवनके मारनेका त्याग ॥ १ ॥ अन्यके अर आपके क्लेश उपजावनेवाला अर सांचा श्रद्धान ज्ञान आचरणका घातकरनेवाला वचनका त्याग ॥ २ ॥ बिना दिया धरया गड्या पड्या भूल्या परके धनके ग्रहण करनेका त्याग ॥ ३॥ अपना कुलके योग्य विवाही स्त्री बिना अन्य समस्त स्त्रीनिमें रागका त्याग।४। न्यायकरि उपजाया परिग्रहके मांहि परिमाणकरि अधिक परिग्रहका त्याग। ५। ये पांच तो अणुव्रत अर जिसतैं परिणाम मोहित होय अर अपना हित अहितकी सावधानीं बिगाडि जाय सो मद्य है ताका त्याग ॥ ६ ॥ अर द्वींद्रियादिक जीवनिके देहतैं उपज्या मांसका त्याग ॥७॥ अर मक्षिकानिकरि संचय किया मधु छत्तातैं उपज्या मधुका त्याग ॥८॥ इन अष्टका त्याग सो अष्टमूलगुण हैं। जातैं गृहस्थके पंच पाप अर तीन मकारका त्यागमें दृढता होजाय तदि समस्त गुणरूप महलकी नींव लग गई। अनादिकालतैं संसारमें परिभ्रमणका कारण मिथ्यात्व अन्याय अर अभक्ष था तिनका अभाव हुआ तब अनेक गुण ग्रहणका पात्र भया तातैं ये अष्ट त्याग हैं तैं ही मूलगुण हैं। बहुरि अन्य ग्रंथनिमें पंच उदंबरफल अर तीन मकारका त्यागतैं अष्टमूलगुण कहै हैं। इहां उदुंबर ॥ १ ॥ कठूमर ॥ २ ॥ पीलू ॥ ३ ॥ पीपलका गोल ॥ ४ ॥ बडका बडवाल्या ॥ ५ ॥ ये पांच उदंबर फल कहिये हैं इनमें बहुत त्रस जीवनिकूं प्रगट देखिये है तातैं इन फलनिका भक्षण मांसके समान है और हू केतेक फल जिनमें काल पाय त्रस मरि जाय तिनका भक्षणमें हू रागभावकी अधिकतातैं महा हिंसा होय है जाकैं ऐसा परिणाम होय जो याकूं मैं सुकाय खाऊंगा तिसकैं अभक्षमैं तीव्र अनुरागतैं बहुत बंध होय है। मदिरा है सो मनकूं मोहित करै है अचेत करै है अर मन मोहित होय जाय सो धर्मकूं विस्मरण होजाय अर धर्म भूलि जाय सो पुरुष निःशंक हिंसाकूं आचरण करै है ऐसा विशेष जानना

जो-मनकूं उन्मत्त करै स्वरूपकी सावधानी भुलाय विषयांमें आसक्तता उपजावै रसना इंद्रिय अर उपस्थ इंद्रियके विषयमें अतिराग उपजावै सो ही मद्य है यातैं भंग पीवना तथा अमल (अफीम) पोस्त आदिक नशाकी वस्तु तथा इनके संयोगतैं उपजे पाक माजूम इन समस्त मदकारी वस्तुके भक्षण करनेतैं धर्मबुद्धिका नाश होय है अर अभक्ष्य भक्षणमें रक्त होजाय बुद्धिकी उज्वलता परमार्थका विचार नष्ट होजाय है तातैं जिनेंद्रकी आज्ञाकूं धारण कर्‍या चाहै तो अवश्य अमलकारी वस्तुका भक्षणका त्याग करै है। बहुरि भांगमैं त्रस जीव बहुत उपजै हैं अर मदिरामें तो अपरिमाण त्रस जीवानिकी उत्पत्ति है महा दुर्गंध है। उत्तमकुलके पुरुष मदिराकी धारा दूरतैं हू भोजन करते देख लें तो भोजनका शीघ्र त्याग करैं अर स्पर्शनतैं वस्त्र सहित स्नान करैं। मदिराकरि उन्मत्त होय सो माताकूं पुत्रीकूं स्त्रीरूप आचरण करै है अर अपनी स्त्रीकूं मातापुत्रीरूप आचरण करै है। भय ग्लानि क्रोध काम लोभ हास्य रति अरति शोक ये समस्त दोष हिंसाहीतैं हैं ते समस्त मद्यपायीकै होय हैं तातैं धर्मका अर्थी मद्यपानका दूरहीतैं त्याग करै। बहुरि द्विइंद्रियादिक प्राणीनिके घातकरनेतैं मांस उपजै है अर जाकी आकृति महाघृणा उपजावै है मांसका स्पर्शन अर दुर्गंध अर नाम ही परिणाममैं महाग्लानि उपजावै है जे धर्मरहित नरकादिकके जानेवाले महा निर्दय परिणामी होय ते मांस भक्षण करै हैं अर जो स्वयमेव मरे हुए बलध भैंसा अजा मृगादिकनिका मांस है ताके आश्रय अनंत तो बादर निगोदिया जीव अर असंख्यात त्रसजीव तिनका घात होय है बहुरि कच्चा मांसमैं अर अग्निकरि पक्या मांसमैं अर जिस काल नीचें अग्नि लाग करि सीझ है तिस काल पकता हुआ मांसमैं हू अनंत जीव निरंतर उपजै हैं तैसी ही जातिका समय समय उपजै हैं तातैं कच्चा मांस पक्या हुआ मांस वा पकता हुआ मांस सूका हुआ मांसकूं जो खाय हैं तथा मांसकी डलीको स्पर्शन करै हैं ते मनुष्य निरंतर संचय किया ऐसा बहुत जीवानिका घात करै हैं। बहुरि चांडालनिकी उच्छिष्ट कषायीनिकी म्लेछनिकी कूकरानिका उच्छिष्ट तो

मांस होय ही है मांस भक्षीनिके दया नाहीं आचार नाहीं जाति कुल धर्म दया क्षमादिक समस्त गुणनिकरि भ्रष्ट हैं। दुर्गतिगामी महापापी महानिर्दयीनिनैं मांस भक्षणकूं शास्त्रनिमें धर्म कह्या है। मांसकरि देवता तथा पितरनिकूं तृप्त होना कहैं देवतानिकूं मांसभक्षी कहैं श्राद्धनिमें ब्राह्मणनिकूं मांसपिंड भक्षण कराय देवनिका पितरनिका तृप्त होना कहै हैं सो ये समस्त मिथ्यादर्शनका प्रभाव है। बहुरि मधु समान कोऊ अधम नाहीं मक्षिकानिका वमन भीलचंडालनिकी उच्छिष्ट अनंतजीवनिका स्थान है बहुत मक्षिकानिकूं मारि भील चांडाल ल्यावैं वा स्वयमेव मरै हैं तिनमें हू असंख्यात त्रसजीवनिकी उत्पत्ति है याकूं पवित्र मानना पंचामृतनिमें कहना याकूं शुद्ध कहना इस समान विपरीत और नाहीं। सहतका एक कणमात्र हू जो औषधादिकनिकैं अर्थि ग्रहण करै हैं रोगके दूर करनेकूं भक्षण करै हैं सो नरकनिके घोर दुःख भोगि असंख्यात वा अनंत जन्मनिमें अनेक रोगनिका पात्र होय है। मधु मद्य मांस नवनीत (मखन) ये चार महाविकृति भगवानके परमागममें कहे हैं जो जिनधर्म ग्रहण करै सो मद्य माखन मांस मधु इन चार विकृतिनका प्रथम ही परित्याग करै। इन चारनिकूं भगवान महाविकृति कही है इनका परिहार विना धर्मका उपदेशका पात्र ही नाहीं होय है। धर्म है सो अहिंसारूप है ऐसैं जिनेंद्रनकी आज्ञा वारंवार श्रवण करते हू जो स्थावरनिकी हिंसाकूं छाडनेकूं असमर्थ हैं ते त्रस जीवनिकी हिंसाकूं तो शीघ्र ही छोडो। हिंसाका त्याग नव प्रकार करि है मनकरि हिंसा करै नाहीं अन्यकरि हिंसा करावै नाहीं अन्य हिंसा करै ताकूं सराहै नाहीं। ऐसैं ही वचनकरि हिंसा करै नाहीं करावै नाहीं करतेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं ही कायकरि हिंसा करै नाहीं परकूं हिंसा करनेकूं प्रेरणा करै नाहीं करनेवालेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं मनवचनकायद्वारै कृतकारितअनुमोदनाकरि हिंसाकूं छाडै है तिसके औत्सर्गिक त्याग कहिये उत्कृष्ट त्याग है। अर नव भंग विना जो त्याग सो अपवादिकत्याग कहिये सो अनेक प्रकार है। या अहिंसाधर्म मोक्षको कारण अर समस्त संसारके परिभ्रमणका

दुःखरूप रोगके मेटनेकूं अमृत समान पाय करके अज्ञानी मिथ्यादृष्टिनिका अयोग्य आचरण देखि अपने परिणाममैं आकुल मत हो हू। संसारमैं कर्मके प्रेरे अनेक प्रकारके जीव हैं। केई हिंसक हैं कई अभक्ष्य भक्षण करनेवाले हैं कई क्रोधी लोभी मानी मायावी महाआरंभी महापरिग्रही हैं अन्यामार्गी हैं तिनकी अनीति देखि अपने परिणाम मत विगाडो कर्मके प्रेरे जीव आपा भूल रहे हैं आप तो साम्यभाव ही ग्रहण करो। कोऊ या कहै भगवानका धर्म सूक्ष्म है धर्मके अर्थि हिंसा होनेमैं दोष नाहीं ऐसैं धर्ममूढ होय करिकैं प्राणीनिकी हिंसा नाहीं करिये। बहुरि जो देवके निमित्त गुरुके कार्य करनेके निमित्त करी हुई हिंसा हू शुभ नाहीं है हिंसा तो पाप ही है। धर्म तो दयारूप है जो देवगुरुके कार्य करनेके निमित्त हिंसाका आरम्भ ही धर्म होय तो हिंसारहित धर्म है ऐसा जिनेंद्रका वाक्य असत्य होजाय यातैं हिंसाकूं धर्म कदाचित् श्रद्धान मत करो। कोऊ कहै धर्म तो देवतानितैं होय है, देवतानिके निमित्त समस्त देना योग्य है ऐसी विपरीत बुद्धिकरि प्राणीनिकी हिंसा करना योग्य नाहीं। बहुरि केतक कहै हैं देवी कहिए कात्यायनी चंडिका भवानी दुर्गा पारवती इत्यादिक नाम करिकैं प्रसिद्ध हैं ताकै बकरा तथा भैंसा मारि चढाइए या भवानी इनतैं ही प्रसन्न है सो मिथ्यादृष्टिनिके वाक्यतैं चलायमान नाहीं होना। एक तो यह विचार करो जो देवी जीवनिका मांसकूं भोगना चाहै है तो आप अनेक भुजानिमैं शस्त्रधारण करि भौंह वक्र करि खडी है आप ही जीवनिकूं मारि करि भक्षण क्यों नाहीं करै है ? अपने भक्तानितैं दीन अनाथ जीवनिकूं भयभीतनिकूं क्यों मरावै है ? आप ही सिंह व्याघ्रादिक ज्यों सिंहादिकांनै मारि क्यों नाहीं भक्षण करै है ? और आप देवता होय करि हू कागला कूकरा भील चांडालकी ज्यों मांस भक्षणमैं रत है क्षुधातुर है दुःखी है ताकै काहेका देवपना ? जो आपही दुःखी आसक्त सो भक्तानिकूं कैसैं सुखी करैगा ? महादुर्गंध तिर्यंचानिके दुर्गंधमय घृणा देनेवाला मांसका इच्छुक महा पापीनिकै देवपना नाहीं होय है। पापीनिनै झूठे शास्त्र बनाय आपके मांस भक्षण करनेकूं अर मूढलोकनिकूं

देवीनिका प्रसादके संकल्पतैं मांस भक्षणमैं प्रवृत्ति कराय जगतके जीवनिकूं अपनी इन्द्रियनिके पुष्ट करनेकूं नरकमैं डबोवै है। जिनेंद्रके परमागममैं तो भवनवासी व्यन्तर ज्योतषी कल्पवासी चार प्रकारके देवानिकै कवलाहार नाहीं है मानसीक आहार कह्या है। कोऊ कालमैं इच्छा उपजते प्रमाण अपने कंठहीमैं अमृत झरै है तिसकरि लेशमात्र क्षुधावेदना रहै नाहीं। तिनकै दिव्य वैक्रियिक देह सातधातु-उपधातुरहित महादिव्यरूप सुगंध शरीर है। देवनिके मांस भक्षण कहना महाविपरीतबुद्धि है। जो देवता मांसभक्षी है तो कागला कूकरा गीध स्यालतैं हू देवता नीच ठहरया तातैं देवताके अर्थि हिंसा करना योग्य नाहीं अर कोऊ मांसभक्षी गुरुके अर्थि मांसका दान मत करो। जो पापी मांसादिक अभक्ष्य भक्षण करै मदिरा पीवै वह पापी काहेका गुरु? वो तो मांसादिक भक्षण कराय नरक पोहचावनेका गुरु है। ताके स्पर्शने देखनेतैं घोर पापका बंध होय है। बहुरि कोऊ कहै अन्नादिकके भक्षणमैं तो बहुत जीवनिका घात है तातैं एक जीवकूं मारि भक्षण करना श्रेष्ठ है ऐसा विचार करि बडा प्राणीकूं मारि खावना योग्य नाहीं जातैं एकेंद्रिय प्रत्येक वनस्पती पृथ्वी जल अग्नि पवन समस्त त्रैलोकमैं भरे हुए अर समस्त विकलत्रय अर समस्त देव मनुष्य तिर्यंच इन समस्तनिकूं इकट्ठा करि गिणिए तो समस्त असंख्यात परिमाण हैं अर मनुष्य तिर्यंचनिके मांसका एक कणामैं एते बादर निगोदिया जीव हैं जो त्रैलोक्यके एकेंद्री बेंद्री तेइंद्री चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय समस्त मनुष्य तिर्यंच देव नारकीनितैं अनंतगुणा भगवान सर्वज्ञ देखि परमागममैं कह्या है तातैं अन्न जलादिक असंख्यात वरस भक्षण करै तिसमैं जो एकेंद्रीकी हिंसा होय तातैं अनंतगुणे जीवनिकी हिंसा सूईकी अणीमात्र मांसके भक्षण करनेमैं है। बहुरि एकेंद्रीकी हिंसा अर त्रसहिंसा बराबर नाहीं है दुःखमैं हू बडा अंतर है ज्ञानमैं बडा अंतर है एकेंद्रीका शरीर रस रुधिर हाड मांस चामादिक धातुकरि रहित है अर मांसभक्षणमैं तीव्र परिणाम तीव्र निर्दयपना है तैसा अन्नके भक्षणमैं नाहीं है। जैसैं अपनी स्त्रीकूं स्पर्शकरनेमैं अर अपनी पुत्रीके माताके स्पर्शकरनेमैं

परिणाम कैसैं समान होय बडा अन्तर है तातैं बहुत कहनेकरि कहा त्रसजीवका घात करना घोर पाप जानना। बहुरि ऐसी आशंका हू मत करो जो यह सिंह व्याघ्र सर्पादिक बहुत प्राणीनिका घातक हैं इनकूं मारे बहुत जीवनिकी रक्षा होयगी ऐसी मिथ्याबुद्धिकरि हिंसक जीवनिकी हिंसा हू मत करो। जातैं कौन कौन हिंसककूं मारोगे ? चिडी कागला सूवा मैना तीतर इत्यादिक समस्त पक्षी हिंसक हैं तथा कीडा कीडी लट मकडी माखी सर्प बीछू इत्यादिक तथा ऊंदरा कूकरा बिलाव स्याल सिंह अनेक तिर्यंच मनुष्यादिक समस्त जीव पापकर्मके संतापतैं हिंसक ही हैं। तुम कौन कौनकी हिंसा करोगे ? और तुम्हारे हिंसक जीवनिके मारनेका विचार भया तब तुम समस्त हिंसकनिके घात करनेवाले महाहिंसक भये। तुमारे समान पापी कौन रह्या तातैं हिंसक जीवनिकी हिंसाके परिणाम कदाचित् मत करो। हिंसक कौननै किया ? पूर्वैं उपजाये अपने कर्मके आधीन समस्त जीव उपजे हैं पापका संतान अनंतकालतैं चल्या आया है कौन दूर करि सकै। पापी जीव कौननै किया पुण्यवान कौननै किया ? समस्त कर्मकी विचित्रता है। कालके प्रभावतैं पापी जीवनिको पापके फल देनेकूं अनेक पापी जीव उपजै हैं कौन दूरि करनेकूं समर्थ है तातैं दयावान होय समस्त जीवनिकी करुणा ही करो। बहुरि ऐसा विचार हू मत करो जो यो बहुत जीवैगा तो पापका बंध करैगा जो इस पापरूप पर्यायतैं छूटि जाय तो याकै बहुत पापका बंध नाहीं होय ऐसी करुणा करकैं हू पापी जीवनिकूं मत मारो जातैं तुम तो समस्तकी दया ही करो। बहुरि ये जीव बहुत दुःख करि पीडित है जो मरण करि जाय तो शीघ्र ही दुःखसों छूटि जाय सो ऐसा मिथ्या विचार हू मत करो जातैं मरण करि जो जायगा तो वर्त्तमानकी पर्याय ही छूटैगी असाताकर्म नाहीं छूटैगा जो यहांतैं छूटि अन्य पर्याय तिर्यंच नरक मनुष्यादिक पावैगा तहां बहुतगुणा रोग दरिद्र प्राप्त होयगा बहुतकाल दुःख भोगैगा बहुत कहने करि कहा है जो कदाचित् सूर्यका उदय पश्चिम दिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल होजाय चंद्रमाकी किरण

उष्ण होजाय अर सूर्यका आताप शीतल होजाय और समस्त पृथ्वी जगतके ऊपरि होजाय अर पाषाणमय भारी गोला जलतैं तिर जाय अर अग्निमैं कमल उपजि जाय अर सूर्यकूं अस्त होतैं दिनका प्रारंभ होजाय सर्पका मुखमैं अमृत होजाय कलहतैं यश होजाय अजीर्णतैं रोग नष्ट होजाय कालकूट जहरके भक्षणतैं जीवना बधि जाय विवादतैं प्रीति बधि जाय तो हू हिंसातैं तो धर्म नाहीं उपजैगा जगतमैं एते नाहीं होने योग्य कार्य होजांय तो हो हू परंतु हिंसाके परिणामतैं तो कोऊ देश कोऊ कालमैं धर्म नाहीं हुआ नाहीं होय है अर नाहीं होयगा। अब यहां कोऊ आशंका करै जो गृहस्थ जिनमंदिर करावै है उपकरण करावै है जिनपूजा करै है इनमैं हू आरंभ ही है अर आरंभ है तहां हिंसा होय ही तातैं जिनमंदिरादिक बनावनेमैं धर्म कैसैं संभवै है? ताकूं उत्तर कहिये है जो गृहस्थ आरंभादिकका त्यागी है अर जाका परिणाम वीतरागतारूप होय धनका उपार्जनादिकसूं विरक्त होयगा ताकूं मंदिरादिक बनावना योग्य नाहीं अर जाका राग धन परिग्रहसूं आरंभसूं घट्या नाहीं अभिमान घट्या नाहीं अपनी जाति कुलादिकमैं ऊंचे होनेके अर्थि अभिमानतैं विख्याततताके अर्थि अपने भोगनिके अर्थि हवेली महल चित्रशालादिक बनावै है बाग बनावै है अनेक अपने विहार करनेके स्थान बनावै है संतानादिकके विवाहादिकमैं बहुत धन लगावै है जाति कुल नगर निवासीनिकूं जिमावै है तिनकूं कोऊ धर्मात्मा शिक्षा करै है जो तुम्हारा राग आरंभादिकतैं नाहीं घट्या तो ये केवल पापबंधके कारण अभिमानादिक पुष्टकरनेवाले पापके आरंभनिकूं त्याग करि जिनमंदिर बनावनेका आरंभ करो। जिसके प्रभावतैं तुम्हारा अशुभ राग घाटि जाय अर आगेकूं तुम्हारे परिणाम वीतरागके सम्मुख होजांय अर अहिंसाधर्मका प्रवर्तन बधि जाय अनेक जीव स्वाध्याय करि शास्त्रश्रवणकरि वीतरागका दर्शन भावना पापाचारका रोकना शील संयम ध्यानकी वृद्धि करना इत्यादिक उत्तम कार्य करि धर्मकी वृद्धि करै। जिनमंदिर है सो अहिंसाधर्मका आयतन है जिनमंदिरका निमित्तसूं अनेक जीव पापाचार छांडि जिनमंदिरमैं आवै तादि जिनधर्मके शास्त्रश्रवण करै तादि अपना अर परद्रव्य-

निका भेदविज्ञान उपजै तदि मिथ्यादेव मिथ्यागुरु मिथ्याधर्मकी उपासना छांडि सर्वज्ञ वीतरागके धर्ममैं प्रवर्तन करै तदि हिंसादिक पापनितैं सप्तव्यसनतैं अन्यायतैं अभक्षतैं विरक्त होय वीतरागके ध्यानमैं पूजनमैं कायोत्सर्गमैं सामायिकमैं संयममैं उपवास शील संयम दान व्रत प्रभावनामैं लीन होय मोक्षमार्गमैं प्रवर्तन करै तातैं ऐसा निश्चय जान हू जिनमंदिरका निमित्त विना मोक्षमार्ग नाहीं प्रवर्तै तातैं जापुरुषनै जिनमंदिर कराया सो बहुत जीवनिका उपकार किया। बहुरि आपका हू बडा उपकार है आप करावनेवालेका परिणाम सुलटे मार्गमैं लगि जाय है जो मैं जिनेन्द्र वीतरागका मंदिर कराया है अब जो मैं अन्यायमार्ग चलूंगा तो जगतमैं निंद्य हो जाऊंगा। मैं अभक्ष्य भक्षण कैसैं करूं झूठ कैसैं बोलूं व्यसनिमैं प्रवृत्ति कैसैं करूं कलह करना गाली देना लोकनिंद्यकर्म करना ये अयोग्य दुराचार तो लोकलाजतैं ही अति दूर जाता रहै है अर परिणाम ऐसा होजाय जो मंदिरमैं मैं मंदिर करानेवाला ही प्रवर्तन नाहीं करूंगा तो और कौन प्रवर्तैगा ऐसा विचार करि अभिषेकमैं जिनपूजनमैं शास्त्रश्रवणमैं जापमैं व्रतमैं जागरण भजनमैं प्रवर्तन लगि जाय तदि आपके धर्ममैं अतिप्रीति बधि जाय शास्त्रके वाचनेवालेनितैं शास्त्रश्रवण करनेवालनितैं धर्ममैं प्रीति करनेवाले साधर्मीनिसूं सिद्धांतकी चर्चा कथनी करनेवालेनिमैं अनुराग बधता चल्या जाय पढनेवालेनिसूं अतिहर्ष बधै। बहुरि आज मंदिरमैं पूजन कौन कौन किया दर्शनमैं कौन कौन आवै है यहां व्याख्यानमैं कौन २ बैठे है आज उपवासवाले केतेक हैं अबकै बेला तेला कौन कौन किया प्रोषधोपवासवाले केतेक हैं जागरणमैं केतक लोग लुगाई प्रवर्तै हैं भजन गान बहुत सुंदर भये ऐसैं धर्मकी प्रवृति देखि बहुत आनंद बधै समस्त साधर्मीनिमैं वात्सल्यता दिन दिन बधै अर हजारां लोग लुगाईनिमैं प्रभाव जैसैं जैसैं प्रगट होय तैसैं तैसैं धर्मानुराग बधता चल्या जाय। बहुरि गृहचारका नुकता व्योहार विवाह करना वस्त्र बनावना आभरण बनावना अपने रहनेका जायगामैं मकान बनावना चित्राम करावना सुवर्ण लगावना इत्यादि रागके

बधावनेवाले पाप कार्यनिमैं तो प्रीति घटि जाय है जो इनकरि कहा प्रयोजन है कौनकूं दिखवना है पापका कारण है निंद्य है ऐसा विराग आजाय है लज्जा आजाय जो पाप कार्यकूं कहा दिखाऊं ? जो एता धन मन्दिरमैं लगाऊं तो बहुत जीवनिकै बहुत कालपर्यंत धर्ममैं अनुराग बधै ऐसा विचार जो धन लगावै सो मंदिरके उपकरणनिमैं सिंहासन छत्र चामर भामंडल घंटा ठोणा कलश तथा थाल रकाबी झांरी धूपदहनादिक समवशरणादि अनेक उपकरण सुवर्ण रूपाके कांसीके पीतलके उपकरणनिमैं धन लगाय आपकै धर्मात्माजननिकै धर्ममैं अनुराग बधावै तथा गदेला चांदनी पडदा सायबान इत्यादिकनिकरि साधर्मी धर्मसेवन करनेवालेनिका बडा वैयाव्रत्य होय है तथा विवाहादिकमैं लगाया धनतैं ऐसी कीर्ति उच्चपना प्रकट नाहीं होय जैसा मन्दिर करानेवालेका बहुत कालपर्यंत कीर्ति (यश) प्रकट हो जाय अपने देशके समस्त लोक पूजन प्रभावना दर्शन धर्मश्रवण करि महान पुण्य उपार्जन करै हैं। यहां कोऊ कहै मंन्दिर करावना उपकरण कराय जिनमंदिरमैं मेलना अपना अर अन्यका उपकार तो करै हैं परंतु मंदिर करावनेमैं छहकायके जीवनिकी हिंसा तो धर्मके घात करनेवाली होय ही। ऐसैं कहनेवालेकूं उत्तर करिए है—यामैं हिंसा नाहीं होय है हिंसा तो अपना जीवघातकरनेकी परिणाम होयगा तादि होयगी। मंदिर करानेवालेके हिंसा करनेका परिणाम नाहीं है अहिंसाधर्ममैं प्रवृत्ति करनेका परिणाम है जैसैं मुनीश्वरनिकूं यत्नाचारतैं आहार देता गृहस्थके हिंसा नाहीं तथा जैसैं साधुनिकी बंदनाके आर्थि वा धर्मश्रवणके आर्थि गमन करता गृहस्थके हिंसा नाहीं होय है. तथा जैसैं नित्य विहार करता ईर्यापंथ सोधि गमन करता मुनीश्वरनिके हिंसा नाहीं है तथा मुनीश्वर नित्य उपदेश करै हैं गमन करै हैं शयन करै हैं उठै हैं बैठै हैं आहार करै हैं निहार करै हैं बंदना करै हैं कायोत्सर्ग करै हैं तीर्थ बंदना गुरुवंदनाकूं जाय हैं तिन कार्यनिमैं हिंसक परिणामविना जीवकी विराधना होते हू हिंसा नाहीं है जीवानि करि तो समस्त धरती आकाश समस्त वस्तु भर्‍या है परंतु कषायके वाशि होय दयाभाव रहित होय

प्रवर्तन करैगा तिसकै जीव मरो वा मत हिंसा ही है। जातैं अपना परिणाममैं दया नाहीं। हिंसा भाव अर अहिंसाभाव तो जीवके परिणाम है बाह्यमैं जीवका घात अघातके आधीन नाहीं सो पूर्वै बहुत वर्णन किया है। अब यहां मन्दिर बनावनेवालेका परिणाम विचारो जाकूं हवेली बनावनेमैं बाग बनावनेमैं कूआ बाबडी बनावनेमैं महाहिंसा दीखै है अर जिसकै लाभ घव्या हैं धनसूं ममता टूटी है पापतैं भयभीत भया है सो मंन्दिर करावै है। पाहिले गृहस्थके व्यापारनिमैं तो प्रवर्तनि करै था तादि दयाधर्मकूं याद हू नाहीं करै था अब सब काममैं धर्महीसूं परिणाम जोडै है जो यत्नसूं करो यो मन्दिरको काम है जल दोहरा नातणासूं छान २ लगावै है। कली चूना तगार दो दिन सिवाय नाहीं राखै दो दिनमैं उठावनेमैं यत्न करै है अर उठावना मेलना धरना इनमैं अपना परिणाम तो यही राखै है जो यत्नसूं करो विरधनाकूं टालो। इत्यादिक कार्यनिमैं हिंसाका परिणाम तो नाहीं करै है अपना परिणाम तो धर्मके आयतन बनावनेका है जो धर्मका स्थान बनि जायगा तो यामैं अखंड अहिंसाधर्म प्रवर्तैगा अर यो मंदिर है सो महान धर्मको आयतन है गृहसंबंधी बहुत हिंसा आरंभ घटाय परिणामनिमैं दयारूप प्रवर्तनमें यत्न किया है मंदिरमें पग धरतां प्रमाण ईर्यापथ सोधि चालो यो मंदिर है मत विराधना हो जाओ। मंदिरमैं प्रवेश किए पीछैं जैनीनिकै इतने त्याग तो विना करै ही है—भोजनका त्याग जलपान का त्याग विकथाका त्याग गालीका त्याग शयनका त्याग पवनलेनेका त्याग बनज करनेका त्याग इत्यादिक पापबंधके कारण समस्त दुराचारका त्याग होय है तातैं जिनमंदिर तो समस्त प्रकार अहिंसा धर्महीका प्रवर्तक जानना जामैं आरंभ विषय कषायनिका त्याग करनेकी ही महिमा है। ऐसैं मांसादिका त्यागरूप मूलगुण कहि अब तीन प्रकार गुणव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रत च भोगोपभोगपरिमाणं। अनुबृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ६७ ॥

अर्थ—आर्य जे भगवान गणधरदेव हैं ते दिग्व्रत अनर्थदण्डव्रत भोगोपभोगपरिमाण ये तीन

वृत हैं ते तिन अणुवृतनिकूं गुणकाररूप बधावनेतैं गुणवृत कहे हैं। दश दिशानिमें गमन करनेकी मर्यादा करना सो दिग्वृत है ॥ १ ॥ अर जिनके कुछ कार्य तो सधै नाहीं अर जिनतै सासतो पाप होय बिना प्रयोजन दंड भुगतना पडै सो अनर्थदंड है, अनर्थदंडनिका त्याग सो अनर्थदंडविरति नामका गुणवृत है ॥ २ ॥ अर एकबार भोगनेमैं आवै सो भोग अर बारम्बार भोगनेमैं आवै सो उपभोग कहिए है, भोग उपभोगनिका परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाणवृत है ॥ ३ ॥ अब दिग्वृत नाम गुणवृतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्यामि। इति संकल्पो दिग्वृतमामृत्यणुपापविनिवृत्त्यै ॥ ६८ ॥

अर्थ—दश दिशानिका समूहमैं परिमाण करिकैं अर परिमाण करी तातैं बाहर मैं नाहीं गमन करूंगा अणुमात्र हू पापतैं निवृत्तिके अर्थि इसप्रकार मरणपर्यंत संकल्प करना सो दिग्व्रत नाम गुणव्रत है। भावार्थ—गृहस्थ है सो अपना प्रयोजन जानै जो हमारे इस दिशामैं एता क्षेत्रतैं अधिक बनज व्योहारका प्रयोजन नाहीं तथा इस दिशामैं एता क्षेत्र सिवाय मोकूं व्योहार नाहीं करना लोभनाशकै अर्थि अहिंसाधर्मकी वृद्धिके अर्थि ऐसा विचार करि मरणपर्यंत दश दिशानिमैं मर्यादा करि बाहर जावनेका कोऊको बुलावनेका भेजनेका वस्तु मंगावनेका त्याग करि लोभकूं जीतना सो दिग्वृत नाम गुणवृत है। अब दश दिशानिकी मर्यादा कौन परिमाणतैं करिए यातैं सूत्र कहै हैं—

मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः। प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥ ६९ ॥

अर्थ—दश दिशानिकी मर्यादारूप संकोचविषै प्रसिद्ध विख्यात मर्यादा परमागमविषै समुद्र नदी पर्वत वन देश योजन कहे हैं। मरणपर्यंत मर्यादाबाह्यक्षेत्रमैं गमनागमनादि नाहीं करै समुद्रादिक लोकविख्यात चिह्नतैं मर्यादा करै। अब दश दिशाकी मर्यादा धारण करनेवालेकै कहा होय सो कहै हैं—

अवधेर्बहिरणुपापं प्रतिविरतेर्दिग्वृतानि धारयताम्। पञ्चमहावृतपरिणतिमणुवृतानि प्रपद्यन्ते ॥ ७० ॥

अर्थ—दिग्व्रतानिनै धारण करते गृहस्थनिकै मर्यादा बाहर अणुमात्र हू पापप्रवृत्तिकी विरक्ततातैं अणुव्रत हैं ते ही पंच महाव्रतनिकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। भावार्थ—जो गृहस्थ दश दिशानिकी मर्यादा करिकैं रहै है ताकै मर्यादामांहि तो अणुव्रत रह्या अर मर्यादाबाहर समस्त त्रसस्थावरनिकी हिंसादिक पंच पापनिके त्यागतैं अणुव्रत ही महाव्रतपनाकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। अब या कहै हैं जो सम्बर कियो तितना क्षेत्र बाहर अणुवृत हैं ते महावृतका परणतिकूं प्राप्त होना ही कैसैं कहो हो? मर्यादा बाहर साक्षात् महावृती कहो, ताकूं उत्तर करनेरूप सूत्र कहै हैं—

प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः। सत्त्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥ ७१ ॥

अर्थ—अणुव्रती गृहस्थके सकलसंयमका विरोधी जो प्रत्ययाख्यानावरणका उदयका मंदपनातैं मंदतर चारित्र मोहका परिणाम सत्त्वेन दुरवधारा कहिये अस्तिपनाकरि महा कष्टकरिकै हू धारण नाहीं किया जाय तातैं महाव्रतके अर्थि कल्पना करिये है। भावार्थ—जाकै चारित्रमोहकर्मकै मंदउदयका परिणाम संज्वलनकषायरूप होय ताकै तिसकालमैं महाव्रत होय है अर गृहस्थ देशव्रतीकै प्रत्याख्यानावरणका उदय विद्यमान है तातैं संज्वलन कषायका मंदउदयरूप परिणाम कष्टतैं हू होना दुर्लभ है तातैं समस्त पापनिका त्याग होते हू महाव्रत नाहीं होय है। महाव्रतकी कल्पना ही करिये है। महाव्रत तो प्रत्याख्यानावरण कषायका उदयका अभावतैं होय हैं। अब महाव्रत कैसैं होय सो कहै हैं—

पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचःकायैः। कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महतां ॥ ७२ ॥

अर्थ—हिंसादि पंच पापनिका मनवचनकायकरि कृतकारितअनुमोदनाकरि त्याग सो महंत पुरुषनिके महाव्रत होय हैं। अब दिग्व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ऊर्ध्वाधरतात्तिर्यग्व्यातिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनां। विस्मरणं दिग्विरतेरत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥ ७३ ॥

अर्थ—दिशानिकी मर्यादा करी तिनमैं अज्ञानतैं वा प्रमादतैं पर्वतादिक ऊपरि चढावना सो ऊर्ध्वा-

तिपात अतीचार है। कूप बावडी इत्यादिकनिमैं नीचैं उतरवो सो अधःअतिक्रम है। तिर्यक् गुफादिक-निमैं प्रवेश करना सो तिर्यग्व्यतिक्रम है। बहुरि क्षेत्र बधाय लेना सो क्षेत्रवृद्धि अतीचार है। त्याग किया तिसका विस्मरण हो जाना सो विस्मरण नाम अतीचार है। ये दिग्व्रतके पंच अतीचार हैं। अब अनर्थदंडत्यागव्रत कहनेकूं अष्ट सूत्र कहै हैं—

अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थकेभ्यः सपापयोगेभ्यः। विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्य : ॥ ७४ ॥

अर्थ—आप जो दिशानिकी मर्यादा करी ताके मांहि वृथा जे मनवचनकायके योगनिकी प्रवृत्ति तिनतैं विरक्त होना ताहि व्रतधरनिमैं अग्रणी जे भगवान ते अनर्थदंडव्रत कहै हैं। भावार्थ—मर्यादा करि लीनी तहां हू ऐसा कर्म करै जातैं अपना प्रयोजन हू नाहीं सधै अर वृथा पापका बंध होय दंड भुगतना पडै सो अनर्थदंड है सो अनर्थदंड त्यागने योग्य है जातैं जिसके करनेतैं अपना विषयभोग हू नाहीं सधै कुछ लाभ हू नाहीं होय यश हू नाहीं होय धर्म हू नाहीं होय अर पापका बंध निरंतर होय जाका फल कडवा दुर्गतनिमैं भोगना पडै सो अनर्थदंड त्यागने ही योग्य है। अब अनर्थदंड पांच प्रकार है तिनकूं कहै हैं—

पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पंच। प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥ ७५ ॥

अर्थ—पापका उपदेश हिंसादान अपध्यान दुःश्रुति प्रमादचर्या ए पंच अनर्थदंड हैं तिनने अदंडधर जे गणधर देव हैं ते कहै हैं। भावार्थ—अशुभ मन वचन कायके योग तिनकूं दंड कहिये है, जातैं समस्त जीवनिकूं अपने अपने अशुभ मनवचनकायके योग ही दुर्गतिनिमैं नानाप्रकार दंड दे हैं तातैं अशुभ मनवचनकायकूं दंड कहिये, ताकूं अदंडधर जे अशुभ योगनिकूं नाहीं धारैं ऐसे गणधरदेव हैं ते पांच प्रकार अनर्थदंड कह्या है। पापका उपदेश देना सो पापोपदेश ॥ १ ॥ हिंसाके उपकरणनिका दान सो हिंसादान ॥ २ ॥ खोटा ध्यान सो अपध्यान ॥ ३ ॥ खोटा श्रवण करना सो दुःश्रुति ॥ ४ ॥ प्रमा-

दरूप चर्या करणा सो प्रमादचर्या ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार अनर्थदंड हैं। पापोपदेश नाम अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

तिर्य्यक्क्लेशवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम्। प्रसवः कथाप्रसंगः स्मर्तव्यः पाप उपदेशः ॥ ७६ ॥

अर्थ—जे तिर्यंचनिके क्लेश उपजनेकी तथा बनज कहिये बेचनेकी खरीदनेकी अर हिंसाकी अर आरंभकी अर प्रलंभ कहिये कपट ठगपनाकी इत्यादिक पाप उपजनेकी कथामैं वारंवार प्रवृत्तिरूप उपदेश करनेतैं पापोपदेश नामा अनर्थदंड है। भावार्थ— तिर्यंचनिकूं मारनेका डाहनेका दृढ बांधनेका मर्मस्थानमैं पीडा करनेका बहुत बोझ लादनेका बाधी करनेका नाशिका फोडनेका तिर्यंचनिको पकडनेका पिंजरेनिमैं रोकनेका जो उपदेश सो तिर्यक्क्लेश नाम पापोपदेश है, तथा अनेक वस्तुनिमैं पाप उपजानेवाला बनजका उपदेश तथा जिनतैं छहकायके जीवनिकी हिंसा होय ऐसा उपदेश सो हिंसोपदेश है, अर बाग बनावना जायगा बनावना विवाह करना इत्यादि पापके आरंभका उपदेश सो आरंभोपदेश, अर कपट छल करनेका उपदेश सो प्रलंभनोपदेश है, अनेक प्रकार पापरूप उपदेशकी कथा करना पापमैं प्रेरणा करना, सो पापोपदेश नाम अनर्थदंड है। अब हिंसादान नामा दूजा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधशृङ्गिशृङ्खलादीनां। वधहेतूनां दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः ॥ ७७ ॥

अर्थ—हिंसाका कारण जे फरसी खडग कुदाल अग्नि आयुध विष बेडी सांकल इत्यादिकनिका दान ताहि ज्ञानी हैं ते हिंसादान नाम अनर्थदंड कहै हैं। जिनतैं हिंसा ही उपजै ऐसा वस्तुका अन्यकूं देना फावडा कुदाल खुरपा कुशि हथोडा तरवार छुरी कटारी तमंचा भाला बाण धनुष बंदूक तोप दारू गोला गोली चाबुक दांतला दतीला बेडी सांकल जहर अग्नि इत्यादिक वस्तुकूं दान करना मांगी देना बेचना भाडै देना सो समस्त हिंसादान नाम अनर्थदंड है। अब अपध्यान नामा अनर्थदंडकूं कहै हैं—

वधबन्धच्छेदादेर्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः। आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥ ७८ ॥

अर्थ—जो वैरतैं वा अपने विषय साधनेके रागतैं परकी स्त्री पुत्रादिकनिका बंधन मारण वा छेदनादिकका चिंतवन ताहि जिनशासनविषै प्रवीण हैं ते अपध्यान नामा अनर्थदंड कहै हैं। भावार्थ—जाकै रागद्वेषतैं ऐसा परिणाममैं चिंतवन रहै जो याका पुत्र मर जाय याकी स्त्री मरजाय याकै दंड होजाय याका हस्त नाक कर्ण छेद्या जाय याका धन लुट जाय याकी आजीविका नष्ट होजाय याकी इंद्रियां नष्ट होजायं याका लोकमैं अपवाद होजाय यो स्थानभ्रष्ट होजाय बुद्धिभ्रष्ट होजाय ऐसा चिंतवन वारंवार करै ऐसैं अन्यके दुःख आपदा चाहना अपने कुछ लाभादिक होय नाहीं आपका चिंतवनतैं कुछ होय नाहीं अपने वृथा महापापका बंध होय अन्यका बुरा भला आपका पापपुण्यके अनुकूल होय है वृथा दुर्ध्यान करै ताकै अपध्यान नामा अनर्थदंड कहिये है। अब दुःश्रुति नामा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आरम्भसंगसाहसमिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनैः। चेतः कलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥ ७९ ॥

अर्थ—आरम्भ कहिए असि मसि कृषि विद्या वाणिज्य शिल्प अर संग कहिए धन धान्यादिक परिग्रह अर साहस कहिए आश्चर्यकारी वीरकर्मादिक अर मिथ्यात्व कहिए ब्रह्माद्वैत ज्ञानाद्वैत क्षाणिक याज्ञकादिक विरुद्ध अर्थका प्रतिपादक शास्त्र अरु राग कहिये आसक्तता द्वेष कहिये वैर अष्ट मद अर कामवेदनाकृत विकार इनकरि चित्तकूं कलुषित करनेवाले ऐसे अवधि जे शास्त्र तिनको जो श्रवण सो दुःश्रुति नामा अनर्थदंड है। भावार्थ—जो मिथ्यात्व राग द्वेषका उपजानेवाला पदार्थनिका विपर्यय स्वरूप ग्रहण करावनेवाला शास्त्रका विकथाका शृंगार वीर हास्यका प्ररूपक तथा मारण उच्चाटन वशीकरण कामका उत्पादक शास्त्रनिका श्रवण करना तथा जांगलिक सर्पनिका भूतनिका रसकर्म इंद्रजाल रसायण मायाचारादिके प्ररूपक यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक दुष्टशास्त्र दुष्टकथा दुष्टराग दुष्टचेष्टा दुष्टक्रिया

दुष्टकर्मनिका श्रवण करना सो दुःश्रुति नामा अनर्थदण्ड है। अब प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्डकूं कहे हैं–

क्षितिसलिलदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदं। सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥ ८० ॥

अर्थ–पृथ्वी खोदनेका पाषाणादिक फोडनेका आरम्भ, जलपटकनेका सींचनेका छिडकनेका जल विलोवनेका अवगाह करनेका आरम्भ, विना प्रयोजन अग्नि बधावनेका बालनेका बुझावनेका दाबनेका आरम्भ, पवन घालनेका पवनके यंत्र रोकनेका अग्निमें धमनेका वृथा आरम्भ, तथा प्रयोजन विना बनस्पतिका छेदना तथा विना प्रयोजन गमन करना विना प्रयोजन गमन करावना ते समस्त प्रमादचर्या नामा अनर्थदंड कह्या है। यहां ऐसा विशेष जानना, गृहस्थके गृहाचारामें अनेक पापहीके आचरण हैं जो गृहाचाराके पापतैं निराला नाहीं हुआ जाय तो जिनसूं कुछ प्रयोजन तुम्हारा सिद्ध नाहीं होय ऐसैं विना प्रयोजन पापबंधका कारण जिनका फल दुर्गतिनिमें असंख्यातकाल अनंतकाल दुःख भोगो ऐसे निंद्यकर्म तो छोडो जो उत्तम कुलमें जिनेंद्रको उपदेश उत्तमधर्म अतिदुर्लभ पायो है तो विना प्रयोजनके पाप बंधतैं भयभीत होना योग्य है पशुकी ज्यों जन्म वृथा मत व्यतीत करो आपका घरका पापतैं नाहीं छूट्या जाय तो अन्यकूं ऐसा पापका उपदेश मत करो गृह जायगा बणावनेमें महा हिंसा होय है, यातैं गृह बनावनेका जायगा धवल करावनेका जायगाकी मरम्मत करावनेका बागबगीचा बनावनेका रोडीखुदावनेका गली खुदावनेका कुआ बावडी बनावनेका तालाव खुदावनेका जल निकासनेका तालावकी पाल बंधावनेका तालाबकी पाल फुडावनेका नदीकी पाल बंधावनेका बना हुआ मकान गृह डहावनेका बागबगीचा डहावनेका वृक्ष कटावनेका बनकटी करावनेका कोयला बनावनेका घास खुदावनेका दाहलगावनेका मिथ्या देवनिका मकान बनावनेका मिथ्या देवतानिका मंदिर तथा मूर्तिका विगाडनेका खेती करनेका सुंदर मकानकूं मलीन करनेका कदाचित् उपदेश मत करो। तथा तिर्यंचनिके

फोडनेका उपदेश मत करो
दुःख होनेका मारनेका दृढ बांधनेका दाबी करनेका डाह देनेका नाशिका फोडनेका उपदेश मत करो। मनुष्य तिर्यंचनिके भोजनपानके रोकनेका बंदीगृहमें धरनेका संतानानितैं वियोग करनेका पक्षीनिकूं पिंजरानिमैं धरनेका सर्प बीछू सिंह व्याघ्र मूसा न्योला कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवनिके मारनेका जूवां लीखां मारनेका उटकण खटमल मारनेका खाट तावडै देनेका छिडकाव करावनेका जीवनिके पकडने मारनेके यंत्र जाल बनावनेका उपदेश मत करो। खोटे पापरूप शास्त्र पढनेका जिन शास्त्रनिमें शृंगार मायाचारादिककी अधिकता मिथ्या श्रद्धान करानेवाले जिनग्रंथनिमैं मारणक्रिया विष बनावने की क्रिया मारण उच्चाटन वशीकरण मंत्र तंत्रादिक तथा इंद्रजालादिक अनेक कपटनिका उपदेश तथा रसनिका दग्ध करना रसायण करना इत्यादिक पापके शास्त्र वीररसके शास्त्र हिंसाप्रधान क्रियाके शास्त्र मत पढो अन्यकूं उपदेश मत करो तथा अभक्ष्य भक्षण करनेका रात्रिभोजन करनेका झूठ बोलनेका चुगली करनेका चोरी करनेका खोटी साख भरनेका व्यभिचार करावनेका व्यवहारादिक महाआरम्भ करनेका रोशनी प्रज्वालित करनेका दारूके (बारूदके) छुडावनेके तथा बागबागीचा देखवेकूं प्रेरणा करनेका उपदेश मत करो।

तथा इस देशतैं दूसरे देशमें व्यौपार बहुत है वहां जावो ऐसा उपदेश मत करो। तथा परिणामनिमें दुर्ध्यानके कारण ऐसा मेला ख्याल कौतुक व्यभिचारादिक कर्म मनुष्यतिर्यंचनिकी राडि कलहादिक देखनेका उपदेश मत करो। तथा युद्धादिक करनेका गाली देनेका परकी आजीविका बिगाडि देनेका उपदेश मत करो। तथा खोटे गीत गान नृत्य वादित्र कलह विसंवाद श्रवण करनेका उपदेश मत करो। तथा इस देशमें दासी दास सुलभ है इनकूं अमुक देशमें लेजाय बेचै तो बहुत लाभ होय ऐसा उपदेश क्लेशवणिज्या है तथा गाय भैंस अश्वादिक अमुक देशतैं ग्रहण करि अन्य देशमें बेचै तो बहुत धनका लाभ होय सो तिर्यक्‌वणिज्या है तथा चिडीमार शिकारानिकूं शाकुनीनिकूं ऐसैं

कहै जो अमुक देशमें मृग सूकर पक्षी इत्यादिक जीव बहुत हैं ऐसा कहना सो वधकोपदेश है. तथा खेती करनेवालेनिकूं पृथ्वीके आरंभका जल अग्नि पवन वनस्पति छेदनादिकका उपदेश देना सो आरंभोपदेश है ये समस्त पापोदेश त्यागने योग्य हैं। तथा हुक्का जरदा तमाखू भांग अमल छोंतरादिक पीवनेका सूंघनेका खावनेका उपदेश महापापका कारण है सो मत करो जातैं हुक्को जर्दो तो उत्तम कुलके योग्य ही नाहीं जिसतैं जाति कुल भ्रष्ट होजाय धुवांका अर जलका संयोगतैं बहुत जीव हुकाके जलमें उपजैं अर जल महादुर्गंध होजाय अर जहां पडै तहां छहकायके जीवनिकी विराधना ही करै अर चूना ईंट पकावनेका उपदेश मत करो। बहुरि बहुत पापके वानिजका उपदेश मत करो। गाय भैंस बलद ऊंट गाडा गाडीनिका राखनेका उपदेश मत करो। कोऊ दातार मनुष्य तिर्यंचानिकूं भोजन वस्त्र धनादिक देता होय ताके अंतराय मत करो। कुपात्र दानका उपदेश मत करो देतेमें विघ्न मत करो। व्रत भंग करनेका उपदेश मत करो। इत्यादि बहुत कहा कहिये अपने धर्म अर्थ कामना कुछ भी सिद्ध होय नाहीं केवल आपके पापहीका बंध होय ऐसा पापरूप उपदेश मत करो। बहुरि जिनतैं हिंसा बहुत होय ऐसे उपकरण किसीकूं मत द्यो मांगे मत द्यो भाडे मत द्यो प्रीतिकरि मत द्यो मोलकरि मत द्यो जिनके देनेमें किंचित लाभ ही होय तो हू महापापके कारण जानि देना योग्य नाहीं जिनकूं हस्तमें लेते ही दुष्ट परिणाम होजाय घातहीका विचार रहै ऐसे खडग छुरी भाला बाण धनुष बंदूक कटारी इत्यादिक आयुध देना योग्य नाहीं। बहुरि भूमि खोदनेके कारण जिनकरि गलीनिमें रोडीनिमें खेतिनमें बडे बडे जीव सर्प विछू गिंडोला लट कीडा मूसा इत्यादिक जीव कटि जांय छिद जांय कोटनि जीवनिकी हिंसा होजाय ऐसा फावडा कुदाल कुस खुरपा हल मुद्गर हथोडा किसीकूं मत द्यो। तथा अनेक त्रसस्थावरानिकूं चीरनेवाला मारनेवाला परसी कुलहाडा बसोला करोंत दातला दतीला किसीकूं मत द्यो। तथा तिर्यंच मनुष्यनिके मारनेके कारण लाठी घोटा चाबुक चामडा लोढा किसीको मत द्यो।

बहुरि अग्नि विष बेडी सांकल पिंजरा जाल जीव पकडनेका यंत्र किसीको मत द्यो। मार्जार कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवानिकूं अपनाकरि मत पालो। सूआ तीतर बुलबुल कूकडा मैना कबूतर बाज इत्यादिक पक्षीनिकूं पींजरामें रखना पालना मत करो। बहुरि केतेक बहुत पापके उपकरण घरमें हू मत राखो घरमें रहै देखते हू हिंसाके उपकरण परिणाम ही बिगाडे हैं। बहुरि एते निंद्य बनिज हू महापापके कारण जिनमें किंचित लाभ होय तो हू पापसूं भयभीत होय त्याग करो लोहा नील मैण लवण लकडा साजी सण सावण लाख चामडा ऊन केश कसूंभा गुड खांड अन्न चावल सिंहाडा शस्त्र दारू गोला सीसा लहसन कांदा आदो जमीकंद तथा घृत तैल आंम नीबू इत्यादिक वनस्पतिकाय भांग तमाखू जर्दा तिल खल काकडा पिंजरा फांसी गांजा चरस दासी दास घोडा ऊंट बलध भैंसा गाडा-गाडी ईंट इनके बेचनेमें खरीदनेमें संचयमें महा हिंसा होय है यातैं त्याग करो। समस्तका त्याग नाहीं बन सके तो यामैं महापाप जानि कोऊ अन्नादिकमैं अल्प संग्रह अल्प प्रमाण राखि अन्य समस्तका तो त्याग करो। बहुरि केतीक खोटी आजीविका महापापबंधकरि दुर्गति लेजाय ते परिहार करो। कोटि-वाली करनेकी कोटवालका पियादापनाकी बनकटी करानेकी गाडा गाडी ऊंट बलध भाडै देनेकी ऊंट बलध गाडा गाडी भाडै करानेवाला दलाल यो नाहीं देखै है जो याका कांधा गल गया है कि नासिका गल गई है कि पीठ गल गई है कि पग दूखै है कि याका अंगमैं कीडा पडि रह्या है कि वृद्ध है कि रोगी है ऐसा विचार भाडाकी दलालीवालाकै नाहीं है चतुर्मासमैं भी बहुत बोझ लदाय दे अर भाडाकी आजीविका अर भाडाकी दलाली दोऊ महापाप हैं अर लोभकै वश होय वृद्ध पुरुषका व्याह सगाई मत करावो। राजका हासिल मत चुरावो।

तथा अन्य अपराधीकी चुगली खानेकी झूठी साखि भरनेकी गवाही होजानेकी वैद्यपनाकी आजीविका मत करो जंत्र मंत्र भूत भूतणी डाकनिके इलाज करनेकी रसायणादिक धूर्त्ताईतैं दिखाय ठग

लेनेकी आजीविका मत करो। यह दुर्गतिको ले जानेवाली है तथा काठ बेचनेवाला मदिरा करनेवाला कलाल कषायी धोबी चमार ईंट चूना पकावनेवाला नीलगर जुवारी घसियारा घास खोदनेवाला इनकूं व्याजपर धन मत दो। मांसभक्षीनिकूं वेश्यानिकूं निंद्यपापकी आजीविका करनेवालेनिकूं व्याजपर रुपया मत दो अपना मकान भाडे मत दो। बहुरि अशुभ परिणामके धारक अन्य मार्गी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामैं आसक्त परस्त्रीलंपटी अधर्मीनितैं मित्रता प्रीति करनेका हू त्याग करो। परके दोष ग्रहण मत करो। अन्यकी लक्ष्मीमैं बांछा मत करो अन्यकी लक्ष्मीकूं देखि आश्चर्य मत करो अपना दीनपना मत चिन्तवन करो अन्यकी स्त्रीके देखनेमैं अभिलाषा मत करो। अन्य मनुष्य तिर्यंचनिकी कलह मत देखो। अन्यके पुत्रका स्त्रीका वियोगकी बांछा मत करो। परका अपमान अपयश अपवाद सुनि हर्षित मत होहू। अन्यके लाभ देख विषाद मत करो। अन्यके रससहित भोजन आभरणादिक देखि अपने परिणाममैं दुःखित मत होहू। आपकै दारिद्र वियोग रोग होते आर्तपरिणामकरि क्लेशित मत होहु धनवाननिसूं ईर्षा मति करो। बहुरि कोऊ सिंघ व्याघ्र सर्पादिकनिकी शिकार चिंतवन मत करो। कोऊका संग्राममैं जय पराजय मत चाहो। परकी स्त्रीका संसर्ग वचनालाप करनेमैं वेश्यादिकनिका हावभाव नृत्यका विलास देखनमैं अभिलाषा मत करो। गाली भंडवचन लिए गीत मत सुनो। खोटे राग सांग कोतूहल परिणाम मलिन करनेका कारणका श्रवण देखना दूरहीतैं छांडो। दारिद्र आवते हू नीच प्रवृत्तिकरि आजीविका मत करो किसीतैं याचना मत करो दीनता मत भाखो निर्धनपणाकूं होते हू प्रवृत्ति विकाररूप मत करो। नीच कुलवालेनिके करनेयोग्य वस्त्र रंगणा धोवना इत्यादिक निंद्यकर्म करनेका परिहार करो। बहुरि जिनालय आदिक धर्मके स्थाननिमैं स्त्रीनिका कथा राजकथा चोरकथा देशकथा महापापबंध करनेवाली कथा कदाचित् मत करो। बहुरि लेन देन व्याह सगाईका झगडा तथा न्याय पंचायती जिनमंदिरमैं बैठि जाति कुलका विसंवाद कदाचित् मत करो। मन्दिरमैं बैठि करोगे

तो धर्मस्थानकी मर्यादा तोडनेतैं नरक निगोदका कारण घोरकर्मका बंध होयगा तातैं धर्मायतनमैं पापका बधावनेवाला कर्म दूरहीतैं त्याग करो। बहुरि जिनमंदिरमैं भोजनपान तांबूल गंध पुष्प विषयादिक तथा शयन उच्चासन वनिज सगाई झगडा गालीके वचन हास्यके वचन अविनयके वचन आरम्भके वचनादिकमैं कदाचित् प्रवर्तन मत करो। बहुरि मिथ्याश्रुतका श्रवण मत करो जिनके श्रवणतैं विषयनिमैं राग बधै हास्य कौतुक उपजे काम जाग्रत होजाय भोजनके नाना स्वादनिमैं चित्त चालि जाय ऐसी कथनी श्रवण मत करो। तथा स्त्रीपुरुषनिके पापरूप चारित्रकी कथा तथा भूतप्रेतनिकी असत्य कथा तथा हिंसाकी प्रधानताके धारक वेद स्मृत्यादिककी कथा तथा कपोलकल्पित अनेक कहानी तथा फारसी किताबनिका लिख्या तिनकूं किस्सा कहै हैं ते महा दुर्ध्यानके करनेवाले श्रवण मत करो तथा भारत रामायणादिकनिकी कल्पित कथा कदाचित् श्रवण मत करो। बहुरि कषायनिके उत्पन्न करनेवाले क्रोधीनिके वचन अभिमानीनिके मदके भरे वचन मायाचारीनिके कुटिल वचन लोभीनिके लालसा उपजावनेवाले वचन मद्यमांसअभक्ष्यके स्वादकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मद्य अमल भांग तमाखू हुक्कनिकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मत श्रवण करो। बहुरि धर्मके अभाव करनेवाले परलोकादिकके अभाव कहनेवाले नास्तिकनिके वाक्य पापबंधके कारण मत श्रवण करो। बहुरि वृथा आरम्भ विसंवादकूं छोडो तथा माटी कजोडी कर्दम कांटा ठीकरा मल मूत्र कफ उच्छिष्ट जल अग्नि दीपक इत्यादिक भूमिकूं देखे विना मत पटको तथा शीघ्रतासूं पाषाण काष्ठ आसन शय्या पर्यंक धातुका पात्र चरवा चरी तबला परात चौकी पाटा वस्त्रादिकनिकूं जमीन ऊपरि घींसकरि रगडकरि प्रमादतैं मत सरकावो यामैं बहुत जीवनकी हिंसा होय है यत्नाचारका अभाव है तातैं देखि यत्नतैं उठावो मेलो। बहुरि विना प्रयोजन भूमिका कुचरना वृक्षकी डाहलीनिका मोडना हरित तृणादिककूं छेदना मर्दन करना वृक्षनिके पत्र पुष्पादिकनिकूं चीरना तोडना वृथा जल पटकना इत्यादिक पापतैं भयभीत होय मत करो। बहुत कहा

कहिये गृहाचारामैं जेता वस्तु पात्र अन्न जलादिक हैं तिनकूं देख करि धरो जैसैं धर्म नाहीं बिगडै उजाड बिगाड नाहीं होय तैसैं करो। प्रमाद छाडि भोजनपान औषधि पकवानादिक नेत्रनितैं देखि सोधि भक्षण करो। शीघ्रतासूं प्रमादी होय विना सोध्या भोजन मत करो। गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं देखे विना सोधे विना प्रवर्तन मत करो। जातैं दया पलै अर अपना शरीरकै बाधा नाहीं होय हानि नाहीं होय तथा प्रमादी होय हित अहितका विचार किये विना सुपात्र कुपात्रका विचार विना किसीकूं वार्ता मत कहो कहनेमैं गुणदोषका विचार करि कहो। अर कोई आपकूं पूछै तो शीघ्रतासे उत्तर मत द्यो याही कहो मैं समझ करि विचार करि आपकूं जबाब देस्यों पाछैं अवकाश पाय धर्मअर्थकामसूं अविरुद्ध विचार विनयसहित उत्तर करो शीघ्रतातैं उत्तर देनेमैं उस कालमैं क्रोधमानमायालोभके वशतैं वचन निकसनेका ठिकाना नाहीं कषायके उदयतैं योग्य अयोग्य कहनेका विचार नाहीं रहै है अन्यका वाक्य हू परिपूर्ण श्रवण करि लेवे तथा कहनेका समस्त अभिप्राय जाननेमैं आजाय तदि उत्तर करना योग्य है तातैं प्रमाद जो असावधानतातैं वचन मत कहो। एकांतरूप हठग्राही पक्षपाती मत होहु धर्म विगडि जायगा तातैं दोऊ लोकके हितके अर्थी हो तो प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्ड छोडो ऐसैं पंच प्रकार अनर्थदण्डनिकूं समझ करि त्याग करै तातैं अनर्थदण्ड त्याग नामा व्रत होय है।

बहुरि अनर्थदंडनिमैं महा अनर्थकारी द्यूतक्रीडा है जूवा समस्त व्यसननिमैं प्रधान है समस्त पापनिका संकेत स्थान है महान आपदाका कारण है समस्त अनीतिनिमैं महा अनीति है याका परिणाम ही महादुष्ट है जो अपना समस्त घर संपदा जूवामैं संकल्प करिकैं हू अन्यका धन लिया चाहै है जुवारीके एता बडा लोभ है जो कोऊ प्रकार परका धन मेरे आजाय ऐसैं रात्रि दिन चिंतवन करता रहै है मेरा धन जाय तो जावो अपयश होहु मरण होहु दरिद्रता होहु कोऊप्रकार परका धन मैं जीत ल्यूं तदि मेरा जीवतव्य सफल है लोभकषायकी तीव्रता सो ही महाहिंसा है । जुवारीका महा निर्दयी परिणाम

होय है परका घात ही चिंतवन करै है। जो जुवामें धन हारि जाय तो चोरी करै धनवास्तै मनुष्यनिकूं मारै ही जुवारीनिके परस्पर महाक्लेश होय ही मारामारी होय ही मायचारी होय ही जिनसूं महाप्रीति होय तिनसूं भी महाकपट अनेक छल करि धनग्रहण कर्‍या ही चाहै जुवा कपटका तो स्थान ही है हजारां छल रचै है अपनी स्त्रीनै जुवामें संकल्प करदे पुत्र पुत्रीनै करदे स्त्रीनै हारजाय पुत्रीनै हारजाय जुवारीनै देदे है जुवारी दरिद्री व्यसनीकूं पुत्री परणाय देहै जुवामें अपना मकान रहनेका बेच देहै दावपर लगाय देहै तथा पुत्रकूं बेच देहै लक्ष धनका धनी एक क्षणमें समस्त धन हार दरिद्री होजाय है तादि महाआर्तध्यान रौद्रध्यानतैं मरि दुर्गतिमें भ्रमण करै है अर धन जीत ल्यावै तो मद उपजै है कुमार्गमें ही जाका धन खर्च होय है महा रौद्रध्यानके प्रभावतैं मरि महा कुयोनि पाय भ्रमण करै है जुवारी मदपान भंगपानादिक करै है वेश्यामें आसक्त होय जाय है सुमार्गमें धन लगै नाहीं जुवारीतैं न्यायरूप अन्य आजीविका नाहीं करी जाय है जुवारीकी प्रतीति जाती रहै है याकूं कोऊ धन नाहीं धीजै है जुवारीके सत्य वचन कदाचित नाहीं होय है। जुवारीके शुभपरिणाम होय नाहीं अपना पूर्वोपार्जित कर्मका दिया न्यायका धनमें संतोष कदाचित् आवै नाहीं। एकांतमें एकाकीकूं मारि धन खोस लेजाय है अपना घना नातादार भाई होय ताकूं एकांतमें मारि आभरणादि ले ही जाय है। जुवारीकी प्रतीति मूरख होय सो हू नाहीं करै है परधनकी अति तीव्र तृष्णाकरि कुदेवनिकी बोलारी बोलै है मिथ्याधर्म सेवन करै है संतोष शील निराकुलताकूं जलांजली दे है अति लोभके परिणामतैं विपरीत बुद्धि होजाय है। परमार्थ जानै नाहीं है। धर्मको श्रद्धान स्वप्नमें हू नाहीं होय है। समस्त पापनिका मूल जुवाकूं जानि दूरहीतैं त्याग करो। जुवारीकी बुद्धि कोट उपायकरि हू विपरीतता नाहीं छाडै है परलोकमें दुर्गति ही जाय है। जुवारी तो तीव्रलोभकरि अपना आत्माकूं घात्या है।

बहुरि केतेक अज्ञानी जुवामें हार जीत धनकी तो नाहीं करै परंतु मनुष्य जन्मकूं वृथा व्यतीत

करनेका इच्छुक धन संकल्प कर तो जुवा नाहीं करै है अर क्रीडाके निमित्त चौपड शतरंज गंजफा इत्यादिक अनेक अविद्या करै हैं तिनके हारमैं अर जीतमैं रागद्वेषकी बडी तीव्रता है हरष विषाद बहुत होय है कपट बहुत करै हैं पिता पुत्र हू परस्पर विसंवाद कलह करै ही हैं परिणाममैं जीतहारमैं तीव्रताने प्राप्त होय है। या ऐसी अविद्या हैं जो इस क्रीडामैं रचै है ताका इस लोकसंबंधी सेवा बानिज लिखना इत्यादिक समस्त कार्य बिगाडि जाय तो हू छाड नाहीं सकै है जाकै द्यूतक्रीडा है ताकै अन्य उद्यमका अभाव होय है। दरिद्रता नजीक आवै है। हीन नीच मलिन जातिके बरोबर बैठ द्यूतक्रीडा करै है यो नाहीं देखै है यो म्लेच्छ है नाई कलाल धोबी समस्त द्यूतक्रीडामैं सामिल प्रत्यक्ष देखिये हैं जिनकी महा दुर्गंध आवै है वस्त्रनिमैंतैं जूंवां झड झड पडै हैं तिनके बरोबर बैठ रमिये है। अन्य अधर्मनिका स्थानमैं आप जाय बैठै हैं मार्गमैं खेलते देखकर खडा रहजाय बैठनेकूं स्थान नाहीं होय तो आप खडा खडा ही देखै है ऐसा व्यसन है खावना पीवना देन लेन सब छांडि खडा हुआ देखै है मनिहार नीलगर कमनीगर बिसायती समस्त मांसभक्षी नीच कर्मीनिके सामिल ख्याल खेलै देखै है बहुत कहा कहिये अपना सर्व कार्य बिगाडि जाय तथा माता पितादिकका मरण होजाय तो हू इस ख्यालमैंतैं उठ्या नाहीं जाय है ऐसा तीव्र परिणामतैं नरक तिर्यंच बंध होय ही। जामैं धन कुछ नाहीं आवै बडा विसंवाद होय तिस क्रीडामैं तीव्र राचनेतैं धनकी हारजीतवालेतैं हू तीव्र पापका बंध करै है जाकै धनकी हारजीत होय सो तो अल्पकाल राचै है याका परिणाम समस्त कालमैं राचै है इस व्यसनमैं लागै है ताकूं धर्मका नाम नाहीं सुहावै है ताकै बुद्धि विपरीत होय पापक्रियामैं अन्यायमैं असत्यमैं विकथाहीमैं राचै है। देखहु यह मनुष्यजन्म अर उत्तमकुल अर नीरोगशरीर उत्तमधर्म ए अनंतकालमैं नाहीं पाया सो संयोग मिलि गया याका एक एक घडी कोड धनमैं नाहीं मिलै ऐसा अवसर सिद्धांतनिका स्वाध्याय जीवादिक द्रव्यनिकी चर्चा अनित्यादिक द्वादश भावना षोडशकारण भावना पंच परमगुरुका नमस्कार

जाप स्मरणादिककरि सफल करनेका था तानै चौपड गंजफो शतरंज ये महा अविद्यामैं राचि समस्त धर्मतैं धर्मके मार्गतैं पराङ्मुख होय महापाप उपजाय मरजाना यो फल ग्रहण करि तिर्यंच नरकादिकमैं जाय उपजै है। बहुरि ऐसा जानना भगवानका परमागममैं तो सप्त व्यसनका त्याग जाकै होयगा सो ही जिनधर्म ग्रहण करनेका पात्र होयगा जाके ए व्यसन ग्रहण होजायं तिसकी बुद्धि ही विपरीत होजाय है पाप कार्यनिमैं प्रवीण होजाय है अनीतिमैं तत्पर होजाय है। इस लोकका कार्य तो न्यायमार्गतैं अपने कुलके योग्य षट्कर्मकरि आजीविका करना अर खानपानादिक शरीरका संस्कार तथा न्यायरूप लेना देना धरना जाना आना प्रयोजनरूप करना अर परलोकके अर्थि धर्मकार्यमैं प्रवर्तन करना यही गृहस्थके दोय करने योग्य कार्य हैं इन दोय कार्य विना जो प्रवृत्ति सो ही व्यसन है ते सप्त व्यसन हैं। द्यूतक्रीडा ॥ १ ॥ मांसभक्षण ॥ २ ॥ मद्यपान ॥ ३ ॥ वेश्यासेवन ॥ ४ ॥ शिकार करना ॥ ५ ॥ चोरी करना ॥ ६ ॥ परस्त्रीसेवन करना ॥ ७ ॥ ये महाघोरपापबंधके कारण सप्त व्यसन हैं। इन व्यसनानिमैं उलझना सहज है छूटकरि सुलझना बडा कठिन है। इन व्यसननितैं पापबंध ही ऐसा होय है जो बुद्धि ही विपर्ययमैं होजाय है निकस नाहीं सकै है। यहां द्यूत व्यसन वर्णन किया याहीमैं होड लगावना है। अब दस बीस बरससे अफीमके फाटकाको व्यौपार हू तीव्रतृष्णाकरि युक्त पुरुषके संतोषका बिगाडनेवाला प्रवर्त्या सो हू जुवाहीमैं गर्भित जानना। बहुरि मांस मद्य शिकार जैनीनिके कुलमैं है ही नाहीं ये लगे पीछैं महा व्यसन हैं परंतु आगे अभक्ष्यनिमैं कहैंगे तथा बींध्या अन्नादिकनिका समस्त भोजन अर चमडाका स्पर्श्या समस्त जल घृत तेल रसादिक रात्रि भोजन इत्यादिक समस्त अभक्ष्य मांसके दोष समान जानि त्यागै ही। बहुरि भांग तमाखू जर्दा (अफीम) हुक्का ये समस्त पराधीन करनेतैं अर ज्ञानके नष्ट करनेतैं परमार्थरूप बुद्धिकूं नष्ट करनेतैं मदिरा समान ही हैं यातैं त्याग ही करना। बहुरि अन्य जीवानिकी दया नाहीं करिके आजीविका बिगाड देना धन लुटाय देना तीव्रदंड

कराय देना सो समस्त शिकार ही है अन्यका मानभंग कराय देना स्थान छुडाय देना सो समस्त शिकारतैं अधिक अधिक है सो त्याग ही करना। बहुरि वेश्यासेवन किया जाका समस्त आचार भोजनपान भ्रष्ट है वेश्याकूं चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमान इत्यादिक समस्त सेवन करै हैं जो वेश्या मांसमद्यका खानपान नित्य ही करै है धनहीतैं जाके प्रीति है ऐसी वेश्याकी मुखकी लाल पीवै है जातिकुल आचार समस्त भ्रष्ट है तातैं त्याग ही श्रेष्ठ है वेश्याका संगम किया तिसके चोरी जूवा मद्यपानादिक समस्त व्यसन होय हैं। समस्त धनकी हानि होय है धर्मतैं पराङ्मुखता होजाय है बुद्धि विपरीत होजाय है मायाचारमैं झूठमैं छलमैं तत्परता होजाय है निंद्यकर्मकी ग्लानि जाती रहै है लज्जा नष्ट होजाय है वेश्याका देखनेमैं हाव भाव-विलास विभ्रमादिक देखने चिंतवन करनेतैं अतिरागी होय कुलमर्यादा समस्त भंग करै है वेश्यामैं आसक्त हुआ पुरुष कफविषै पडी माक्षिकाकी ज्यों आपकूं नाहीं छुडाय सकै है महा अनीत है। बहुरि चोरपनाका महा व्यसन है। चोर आप भी निरंतर भयरूप रहै है अर चोरका अन्य जीवनिकै बडा भय रहै है माताकै भी चोरपुत्रका भय रहै है। चोर इस लोकमैं आपकी समस्त प्रतिष्ठा बिगाडि महाकलंकित होय है। राजासूं तीव्रदंड पावै है हस्तनाशिकादिक छेद्या जाय है। चोरका परिणाम संतोषरूप कदाचित नाहीं होय है। चोरके योग्य अयोग्य करने योग्यका विचार ही नाहीं रहै है। याहीतैं धर्मध्यान स्वाध्याय धर्मकथातैं पराङ्मुख रहै है। अर जिनशास्त्रनिका श्रवण पठन करता हू अन्यके धन ऊपर चित्त चलावै है सो ठग है जगतके ठगनेकूं शास्त्ररूप शस्त्र ग्रहण किया है तिसकै धर्मकी श्रद्धा कदाचित् नाहीं जानना जाके जिनधर्मकी प्रधानता होय है ताकै चारित्रमोहका उदयतैं त्याग व्रत संयम नाहीं होय तो हू अन्यायके धनमें तो बांछा नाहीं चालै है चोरीतैं दोऊ लोक भ्रष्ट होना जानि विना दिया परका धनमैं बांछा मत करो। बहुरि परस्त्रीकी बांछा नाम व्यसन समस्त अनर्थनिमैं प्रधान है परस्त्रीलंपटकै इसलोक परलोकमैं जो घोरपाप आपदा अकीर्ति अपयश मरण रोग

अपवाद धनहानि राजदंड जगतका बैर दुर्गतिगमन मारन ताड़न बंदीगृहमें बंदनादिक होय हैं तिनकूं वचनद्वारे कौन कहनेकूं समर्थ है ? ऐसे सप्तव्यसन दूरतैं ही त्यागो इनके त्यागनेमैं कुछ हानि नाहीं है जानै सप्तव्यसन त्याग किया सो आपका समस्त दुःख अकीर्ति नरकादिक कुगति समस्त आपदाका निराकरण किया। अब अनर्थदंडव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

कंदर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च। असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥ ८१ ॥

अर्थ—चारित्र मोहनीयकर्मका उदयतैं रागभावकी अधिकतातैं हास्यतैं मिल्या हुआ भंडवचन बोलना सो कंदर्प नाम अतीचार है ॥१॥ बहुरि तीव्ररागका उदयतैं हास्यरूप भंडवचनकरि सहित जो कायकी खोटी चेष्टा शरीरकी निंद्यक्रिया करना सो कौत्कुच्य है ॥ २ ॥ अर बिनाप्रयोजन बहुत सार-रहित बकवाद सो मौखर्य कहिये है ॥ ३ ॥ अर प्रयोजन रहित अधिकताकरि मनवचनकायको प्रवर्तावना सो असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। रागद्वेषकरनेवाला काव्य श्लोक कवित्त छंद गीतनिका चिंतवन सो मन असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। बहुरि पापकथाकरि अन्यके मनवचनकायकूं बिगाडनेवाली खोटी कथा कहना सो वचन असमीक्ष्याधिकरण है। बहुरि प्रयोजन बिना गमन करना उठना बैठना दौड़ना पटकना फेंकना तथा पत्र फल पुष्पादिकनका छेदन भेदन विदारण क्षेपणादिक करना तथा अग्नि विष क्षारादिकका देना सो काय असमीक्ष्याधिकरण नामका अतीचार है ॥ ४ ॥ जेता भोग-उपभोगकरि प्रयोजन सधै तातैं अधिक बिना प्रयोजनका अतिसंग्रह करै सो अतिप्रसाधन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं अनर्थदंडव्रतके पांच अतीचार कहे ते त्यागने योग्य हैं अब भोगोपभोगपरिमाणव्रत अष्ट सूत्रनिकरि कहै हैं—

अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम्। अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥ ८२ ॥

अर्थ—प्रयोजनवान हू पंचइंद्रियनिके विषयनिका जो रागभाव करिकैं आसक्तताकौं घटावनेके

अर्थि जो परिमाण करना सो भोगोपभागपरिमाण नामा व्रत है। भावार्थ—संसारी जीवनिकै इंद्रियनिके विषयनिमैं अतिराग वर्तै है रागतैं व्रत संयम दया क्षमादिक समस्त गुणनितैं पराङ्मुख होय रह्या है यातैं अणुव्रतका धारक गृहस्थ है सो हिंसा असत्य चोरी परस्त्रीसेवन अपरिमाणपरिग्रहतैं उपजी जो अन्यायके विषयनिमैं प्रीति तिसका त्याग करकें तो व्रती भया अब न्यायके विषयनिकूं हू तीव्ररागके कारण जानि जाकै अति अरुचि भई होय सो रागकी आसक्तता घटावनेके अर्थि अपने प्रयोजनवान हू इंद्रियनिके विषयनिमैं परिमाण करै सो भोगोपभोगपरिमाण नामा गुणव्रत है। व्रतीनिकूं इंद्रियनिके विषयनिमैं निरर्गल प्रवृत्ति रोकि भोगोपभोगका परिमाण करना महान संवरका कारण है। अब भोग तो कहा होय है अर उपभोग कहा तिनका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भुक्त्वा परिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः। उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पाञ्चेन्द्रियो विषयः ॥ ८३ ॥

अर्थ—जो एकबार भोग करकैं फिर त्यागनेयोग्य होय सो भोग है बहुरि भोग करकैं फिर भोगने योग्य होय सो उपभोग है। भोग तो भोजनादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं अर उपभोग वस्त्रादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं। भावार्थ—जो एकबार ही भोगनेमैं आवे फिर भोगनेमैं नाहीं आवे ते भोग हैं। अर जो बारबार भोगनेके अर्थि आवे ते उपभोग हैं जैसैं भोजन नानारूप एकबार ही भोगनेमैं आवै है तथा कपूर चंदनादिकका विलेपन तथा पुष्प माला अतर फुलेल तथा मेला कौतुक इंद्रजालादिकस्तवनके गीतके शब्दादिक एकबार ही भोगनेमैं आवै हैं ते पंच इंद्रियनिके विषयभोग कहावै हैं। अर जैसे वस्त्र आभरण स्त्री सिंहासन पर्यंक महल बाग वादित्र चित्राम इत्यादिक वारंवार भोगनेमैं आवैं ते उपभोग हैं भोगोपभोग दोऊंनिका परिमाण करै ताकै व्रत होय है। अब जे परिमाण करनेयोग्य नाहीं यावज्जीव त्याग करने योग्य हैं तिनके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये। मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥ ८४ ॥

अर्थ—जिनेन्द्रभगवानके चरणनिको शरणकूं प्राप्त भये ऐसे सम्यग्दृष्टि हैं तिननैं त्रसनिकी हिंसाका परित्यागके अर्थि क्षौद्र जो मधु अर पिशित कहिये मांस वर्जन करनेयोग्य है अर प्रमाद जो हितअहितमैं असावधानी ताका वर्जनके अर्थि मद्यका त्याग करना योग्य है। भावार्थ—जे पुरुष जिनेंद्रका चरणनिकी आज्ञाका श्रद्धानी हैं ते त्रसजीवनिकी हिंसाका त्यागके अर्थि मधुका अर मांसका त्याग ही करैं अर प्रमाद जो अचेतपना ताका त्यागके अर्थि मदिराका त्याग करैं ही। जाकै मधुमांसमद्यका त्याग नाहीं सो जिनआज्ञातै पराङ्मुख है जैनी नाहीं है। बहुरि त्यागने योग्यनिकूं कहै हैं—

अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि। नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येवमवहेयम् ॥ ८५ ॥

यदनिष्टं तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात्। अभिसंधिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद् व्रतं भवति ॥ ८६ ॥

अर्थ—जिनके सेवनतैं फल जो अपना प्रयोजन सो तो अल्प सिद्ध होय अर जिनके भक्षणतैं घात अनंत जीवनिका होय ऐसे मूल कंद आदो शृंगबेर इत्यादिक कंद मूल अर नवनीत जो माखन निंबका फूल केवडा केतकीका फूल इत्यादिक जे अनंतकाय ते त्यागनें योग्य हैं। एक देहमैं अनंत जीव ते अनंतकाय हैं जो आपके अनिष्ट होय ताका व्रत करना त्याग करना अर जो सेवन योग्य नाहीं ते अनुपसेव्यनिका त्याग ही करना योग्य है। यद्यपि अनिष्ट अनुपसेव्यके सेवनेका प्रयोजन नाहीं है तो हू अपने अभिप्रायकरि योग्य विषयका हू त्याग सो व्रत है जातैं जाका फल तो एक जिह्वाका आस्वादनमात्र अर जाका एक बालमात्र कणहूमैं अनंतानंत वादरनिगोदजीवनिका घात होय ऐसे कंदमूलादिक अर निंबका पुष्प अर केतकी केवडाका पुष्प त्यागने योग्य है तथा अन्य हू पुष्प प्रत्यक्ष त्रसजीवनिकर भरे हैं ते जिनधर्मीनिके त्यागने योग्य हैं। बहुरि जो वस्तु शुद्ध हू है अर भक्षण करनेतैं अपना देहमैं वेदना उपजावै उदरशूलादिक उपजावनेवाला वाय पित्त कफादिक दोष तथा रुधिरविकार उदरविकारादिककूं उत्पन्न करनेवाला भोजनादिक तथा अन्य हू दुःखके कारण इंद्रियविषयनिका सेवन मत करो।

जातैं जो अति तीव्ररागी इंद्रियनिका लंपटी होयगा सो ही अनिष्टसेवन करैगा। जो अपना मरण होजाना तथा तीव्रवेदना भोगना ऐसैं तीव्र दुःखहूकूं नाहीं गिणता भक्षण करै है ताकै जिह्वाकी तीव्र विकलतातैं महापापका बंध होय है। अनेक मनुष्य भोजनके आस्वादनमैं अनुराग करकै अनिष्ट भोजनतैं रोग बधाय आर्तध्यानकरि दुर्गतिकूं जाय हैं तातैं अनिष्टका त्यागही श्रेष्ठ है। बहुरि केते ही वस्तु अपने कुलकूं तथा व्यवहारकूं धर्मकूं मलीन करनेवाले हैं ते सेवने योग्य नाहीं ते अनुपसेव्य हैं। संख हस्तीका दांत केश मृगमद गोलोचन इत्यादिकका स्पर्श्या हुआ भोजन जल सेवन योग्य नाहीं तथा ऊंटनीका दुग्ध तथा गधीका अर गायका मूत्र तथा मल मूत्र कफ लाल उच्छिष्ट भोजन ये सेवने योग्य नाहीं तथा म्लेच्छ भील अस्पर्श्यशूद्रनिका स्पर्शन किया हुआ भोजन तथा अशुद्धभूमिमैं पड्या चर्मका स्पर्श्या मार्जार श्वानादिक करि तथा मांसभक्षी मद्यपायीनिकरि बनाया हुआ स्पर्शन किया हुआ समस्त भोजन लोकनिंद्य भोजन अनुपसेव्य है। जिनधर्मीनिके भक्षण करने योग्य नाहीं। बुद्धिकूं विपरीत करै है। मार्गतैं भ्रष्ट करनेवाला धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला है। इहां ऐसा विशेष जानना, श्रीराजवार्तिकमैं हू पंच प्रकार भोग संख्या कही है तहां त्रसका घात जामैं होय ॥ १ ॥ प्रमाद उपजावनेवाला होय ॥ २ ॥ बहुबध कहिये जामैं अनंत जीवनिका घात होय ॥ ३ ॥ आनिष्ट होय ॥ ४ ॥ अनुपसेव्य होय ॥ ५ ॥ ये पांच प्रकार त्यागने योग्य हैं यावज्जीवन त्यागने योग्य हैं। अर जिसका यावज्जीव त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं तो वाका त्याग कालकी मर्यादाकरि करना। यहां केतेक वस्तुनिमैं तो प्रगट त्रसनिका घात है अर केतेक वस्तूनिमैं अनंत जीवनिके संघट्ट इकट्ठे होय घात होय हैं बीधा अन्न है तामैं ईली घुन प्रगट हजारां फिरै हैं बीधे अन्न खानेवालेकै अप्रमाण त्रसनिका घात होय है जो गृहस्थ धान्यका संग्रह राखै है ताकै नित्य बीधा अन्नके भक्षणतैं महापाप प्रवर्तै है याहीतैं पापतैं भयभीत जैनी होय सो अबीधा अन्न खरीदै और दोय महीनाका खरच प्रमाण राखै दोय महीना भक्षण करि चुकै तदि और अबीधा अन्न देखि ग्रहण करै थोडा

संग्रहमैं अच्छीतरह सोधनेमैं आजाय थोडाका जावता यत्नाचारतैं बनि सकै बीधता देखि तदि बदलाय मगावै अन्य पांच जायगा अबींधा देखि लावै बहुत धान्य होय तो देय सकै नाहीं फटाकि सकै नाहीं बदल्या जाय नाहीं बहुत बींधा होजाय अर खावना पडै तदि नित्य छांणि छांणि ईली लट घुगानिकूं पात्र भर भर मार्गमैं पटकै तहां मनुष्यनिके तथा पशुनिके पगतलैं खुंदजाय मरजाय पशु चर जाय बहुरि धान्यमैं जीव पडने लगैं हैं तदि दिन प्रति दूना चौगुना सौगुना हजारगुना छोटा बडा त्रधता चल्या जाय है अर समस्त घरके मकाननिमैं अर रसोईमैं परींडा ऊपर दीवारपर चाकीपर फैलते खानपानकी वस्तुनिमैं जमींमैं छतनिमैं लाखां कोड्यां जीव विचरने लग जायं हैं तातैं लोभके वशतैं प्रमादके वशतैं अभिमानके वशतैं बहुत संग्रह मत करो बहुरि मूंग मोठ उडद तथा अन्य हू फलादिक जिनकै ऊपरि सुफेद फूली प्रगट होजाय तामैं त्रसजीव जानि भक्षण मत करो। बहुरि वर्षाकालके चार महीनेमैं केतीक वस्तुका संग्रह मत राखो नगर शहरमैं वसनेका सुख तो ये ही है कि जिस अवसरमें चाहै तिस अवसरमैं दश पांच दो चार दिनके खरचमैं आवै तितनी दश पांच जायगांमें आछी निर्दोष दीखै सो खरीदो। वर्षाऋतुमैं गुडमैं शकरमैं खांडमैं बहुत चींटी लट सुलसुली पडै हैं तथा सूंठ अजवायणि इलायची डोडा सुपारी बहुत बींधै हैं दाख पिस्ता चारोली छिंवारा खोपरा इत्यादिकनमैं परिमाण रहित लट कीडा इल्यां बहुत हजारां लाखां उत्पन्न होय हैं। पुरवाई पवनका संयोगतैं ही गुडादिकमैं परिमाणरहित जीव उपजे हैं तथा मर्यादारहित वस्तु लाडू पेडा घेवर बरफी इत्यादिकमैं बहुत जीव प्रगट लट उपजे हैं। बहुरि हलदी धणां जीरा मिरच अमचूर कोथोडी इनमैं वर्षाऋतुमें बहुत त्रसजीव उपजे हैं तातैं अल्प संग्रह करो नित्य देख सोधि प्रवर्तो यो यत्नाचार ही धर्म है। चून शीत ऋतुमैं सांत दिनका ग्रीष्मऋतुमैं पांच दिनका वर्षाऋतुमैं तीन दिनका सिवाय भक्षण मत करो चूनका संग्रह मति करो चूनमैं बहुत लट पैदा होजाय हैं दाल चावल इत्यादिक जब रांधो तदि दोय तीन बार सोधि

रांधो। बहुरि प्रश्नोत्तरश्रावकाचारमें ऐसा लिख्या है श्लोकार्द्ध—"सर्वाशनं च न ग्राह्यं दिनद्वययुतं नरैः" अर्थ—समस्त भोजन दोय दिनकर युक्त नाहीं भक्षण करना। यातैं एक रात्रि गयां सिवाय दूजी रात्रि व्यतीत होजाय सो भक्षण योग्य नाहीं। यामैं जलका संसर्ग युक्त पक्वान्नादिक हू आगये। बहुरि पुवा मालपुवा सीरो इत्यादिक तथा बडा कचोरी रात्रिवास्याको रस चालि जाय है। जातैं यामैं जलका संसर्ग बहुत रहै है। बहुरि रोटी खिचडी तरकारी लोंजी रात्रिवासी तो भक्षण ही नाहीं करना अर स्वादसों चलि जाय तो उस दिनमैं भी भक्षण नाहीं करना। बहुरि रात्रिका बनाया समस्त भोजनका भक्षण नाहीं करना बहुरि दही पहला दिनका जमाया दूजा दिन पर्यंत खावो अधिक नाहीं। बहुरि दोय दाल का अन्नकूं दही छाछके सामिल भक्षण मत करो जो मिलायकरि खावोगे तो यामैं विदलका दोष लागेगा जीभ नीचे कंठमैं उतरते ही संमूर्छन जीव उपजै हैं याकूं विदल कहिए है। बहुरि दुग्ध दूह्यां पाछैं छानि दोय घडी पहली तप्त करो पाछैं सम्मूर्च्छन त्रसानिकी उत्पत्ति होय है। घृत हू छाछमैंसूं निकस्यां पाछैं शीघ्र ही तपाय छानि भक्षण करना योग्य है ताया छान्यां विना मत भक्षण करो। बहुरि घृत तेल जल इत्यादिक रस चामका पात्रमैं घाल्या हुआ भक्षण योग्य नाहीं यामैं असंख्यात त्रस जीव उपजै हैं। सींघडा (कुप्पा) बनै हैं ते मांसकूं गाडि पाछैं कूटि माटीके सांचे ऊपरि बनावै हैं इनका स्पर्श्या घृत तेल जल मांसके समान है। इनकी प्रवृत्ति मुसलमानांका राज्य हुआ तदि मुसलमानां चलाई है। जो चामका विना स्पर्श्या घृतादि नाहीं मिलै तो रूक्ष भोजन करो अर फागुन पीछैं तिलनिमैं तथा सिंघाडेनिमैं बहुत त्रसजीव उपजै हैं यातैं फागुन पीछैं तेल अथवा सिंघाडा कदाचित् मत भक्षण करो। बहुरि जलकूं गाढी दोहरा कपडासूं छाणिकरि पीवो अन्यकूं छाणिकरि प्यावो छाणिकरि ही पशूनिकूं हू प्यावो अणछाण्यां जलतैं स्नान भोजन वस्त्रधोवन इत्यादि कोई भी क्रिया मत करो जलमैं यत्नाचार क्रियातैं दयावानपनाकी हद बनी रहै है। पात्रका मुखतैं तिगुना लांबा दोहरा वस्त्र नवीन होय तातैं छाणा अज-

वाण्या (बिलछन) अन्य पात्रमें करि जलके स्थानमें पहुंचावो जलमें यत्नाचारकी याही मर्यादा है छाण्या पाछैं दोय घडीकी मर्यादा है फिरि काम पडै तो फिरि छाण करि वर्तों । तप्तजल दोय पहर वर्चों बहुत उकलतो तप्त कियो हुवो आठ पहर वर्तों पाछैं निकाम है । बहुरि केतेक वस्तूनिकूं त्रसनिको घात जानि सर्वथा भक्षण मति करो जैसैं—बोर लटांको प्रत्यक्ष स्थान है भिंडीनिमैं बहुत लट उपजै हैं बैंगण तरबूज कोहला पेठा जामुन आडू बडझाला गोल अंजीर कठूमर ऊमरफल पीलू आलू जामफल टींडू अज्ञातफल सूक्ष्मफल वीधाफल चलितरस तथा साराफल तथा पत्र शाक कंदमूल आदो शृंगवेर सलगम प्याज लहसन गाजर किशोऱ्या इत्यादिक तथा कचनार महुवा क्षीरवृक्षका फल खिरनीकूं आदि लेय नीमका फल इत्यादिक अनेक फल हैं केवडा केतकी इत्यादिक फूल हैं तिनका तो प्रगट दोष आगमतैं वा प्रत्यक्षतैं है ही परंतु परमागमतैं वनस्पतीका ऐसा स्वरूप जानना—वनस्पती दोय प्रकार है एक प्रत्येक दूजी साधारण प्रत्येक तो एक देहमैं एक जीव है अर देह एक जामैं जीव अनंतानंत सो साधारणवनस्पती है यातैं साधारण भक्षण करै तामैं अनंतानंत जीवनिका घात जानि त्याग करना योग्य है । अब साधारण प्रत्येककी पहिचानके ऐसे लक्षण जानने—जिस वनस्पतीमैं लीक प्रगट नाहीं भई होय रेखसी नाहीं दीखी होय कली प्रगट नाहीं भई होय अर जामैं पैली प्रगट नाहीं भई होय अर जाका तोडता ही समभंग हो जाय वा कांटे फूटे नाहीं तथा जाके माही तांतू तूतडो प्रगट नाहीं भयो होय सो साधारण वनस्पती है यामैं एक अणुमात्रमैं अनंतानंत जीव हैं अर जिस वनस्पतीमैं धार तथा कला तथा रेखा तथा पैली प्रगट दीखै सो साधारण नाहीं प्रत्येकवनस्पती है तथा जाकूं तोडिये तो टेढा बांका टूटै सूधा शस्त्रसे बनाऱ्या जैसा साफ बरोबर नाहीं टूटै तथा जाके माहीं तार तूतडा प्रगट होगया होय सो प्रत्येक वनस्पती है परंतु कोऊ वनस्पती पहली साधारण होय वाही एक अंतर्मुहूर्तमैं प्रत्येक होजाय है कोऊ साधारण ही बनी रहै पान फूल बीज डाहली कूंपल इत्यादिक समस्तमैं साधारण

प्रत्येककी याही पिछाण जानना। पत्रमैं समभंगादिक होय तो पत्र साधारण है अन्य समस्त वृक्ष साधारण नाहीं। बीज कूंपल समभंग सहित होय रेखादिक प्रगट नाहीं होय तेते बीज कूंपल साधारण हैं अन्य साधारण नाहीं ऐसैं इस वनस्पातिमैं कोऊ साधारण मिल जाय कोऊ प्रत्येक होजाय इत्यादिक दोषरूप तथा वनस्पातिमैं अनेक त्रस जीवनिका संसर्ग उत्पत्ति जानि जे जिनेंद्रधर्म धारणकरि पापनितैं भयभीत हैं ते समस्त ही हरितकायका त्याग करो जिह्वा इंद्रियकूं वश करो अर जिनका समस्त हरितकायके त्याग करनेका सामर्थ्य नाहीं है ते कंदमूलादिक अनंतकायका तो यावज्जीव त्याग करो। अर जे पंच उदंबरादिक प्रगट त्रस जीवनिकरि भऱ्या है ऐसा फल पुष्प शाक प्रत्रादिकानिकूं छांडि करिकैं त्रसघातकरिरहित दीखै ऐसी तरकारी फलादिक दश वीशकूं अपने परिणामानिके योग्य जानि नियम करो। इन सिवाय अट्ठाईस लाख कोड कुल वनस्पतीकाय हैं तिनका तो त्याग करि भार उतारो। हरितकाय प्रमाणीकका नियम करै ताकै कोव्यां अभक्ष टलै है तिसमैं पत्रजात भक्षण योग्य नाहीं। त्रसकी उत्पत्ति टालि अन्य बहुत घटाय नियम करो विना घटायां निरर्गल रह्यां असंयमीपना होय आस्रव होय है तातैं हरितकायका भक्षणमैं नियम व्रत करना योग्य है। बहुरि जिस भोजन ऊपरि ऊलण आजाय ऊपर फूलसा नीला हरा लाल आजाय सो भोजन मत करो यामैं अनंतजीवनिका घात है यातैं जिस ऊपर फूली आजाय सो दूरतैं ही त्यागो। बहुरि मोहके कारण प्रमादके उपजावनेवाले ज्ञानकूं बिगाडनेवाले जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रियकूं विकल करनेवाली ऐसी भांग तमाखू छोंतरा अमल हुका जरदा इत्यादिक अभक्ष्यनिका खावना पीवना जिनधर्मीनिकै त्यागने योग्य है। ये अमल पराधीन करै हैं इनमैं अफीमका भक्षण करनेवालेकूं एक घडी अफीम नाहीं होय तो जमीमैं बेहोश होय पडि जाय है वेदनाका आर्त्तपरिणामतैं पशुका ज्यों पग जमीमैं पछ्या पछ्या रगडै है निर्लज्ज हुआ याचना करै है नेत्रानितैं नीर पडै है और अफीम मिलि जाय तदि अमलमैं आया भूला हुआ ऊंगवो करै है जिह्वा इंद्रियकी

लोलुपता बधि जाय है स्वाध्याय धर्मश्रवण व्रत संयम उपवासादिकानिकूं दूरहीतैं त्यागै है बुद्धि धर्मतैं परांमुख होजाय है उत्तम आचार नष्ट होजाय है। बहुरि हुक्काकी महामलीनता दुर्गंध तमाखू और धुंवां का योगतैं पानीमैं जीवानिकी उत्पत्ति होय है जहां हुक्काका जल पडै तहां छहकायके जीवानिका घात होय है। अर याकी दुर्गंधतैं उत्तम आचारके धारक नजीक बैठ नाहीं सकै हैं अर बारम्बार घरघरमैं अग्नि हेरतो फिरै है घरमैं राखको ठीकरो धऱ्योही रहै है नीचकुलवाले नीचजनानिके पीवने योग्य है। हुक्का पीवनेवालेकूं गाडीवान घोडाका चाकर मीणा गूजर मुसलमान इत्यादिकनिकी संगति रुचै है उत्तम कुलवालेनिके योग्य नाहीं है अर हुक्का नाहीं मिलै तो नाई धोबी गूजर मीणा तेली तमोली मुसलमाननिकी चिलम याचना करि पीवै है अर नाहीं पीवै तो बडा रोग पैदा होजाय उदरमैं आफरो चाढि जाय नीहार बंद होजाय महान दुःख गलै बांध्या है तातैं व्रत संयम उपवास स्वाध्यायादिक समस्त उत्तम कार्यनिकूं जलांजलि देहै। बहुरि जरदा महा अशुचि द्रव्य है याकूं मुखमैं राखि मलमूत्र मोचन करै है रास्तामैं मार्गमैं मलमूत्रादिक ऊपरि पगरखी पहरे जरदा खाय है मांसभक्षी मद्यपायीनिका तथा नीच जातिका घरका पानी मिल्या कत्था चूना खाय है नीच जाति अपना हस्तादिक बिना धोये अंग खुजावते जरदा मसल देहै उच्छिष्टकी ग्लानि नाहीं करै है समस्त शय्या आसन खूणा बारी जाली समस्त जायगां उच्छिष्टसूं लिप्त करिदेय है पशु हू रस्तै चालता सोता मुख नाहीं चलावै है याकै पशुतैं हू अधिक विकलता है। मुखमैं महादुर्गंध रहै है जरदाका पीका जहां पडै तहां माछी माछर डांस मकडी कीडा कीडी बडा बडा त्रस ही मरि जाय तहां पंचस्थावरानिका घात होय ही। व्रत संयम उपवास स्वाध्याय जाप्य शुभ भावनाका नाश होय है जरदा खानेवालेनिकी बुद्धि आत्माके हितमैं प्रवर्तन नाहीं करै है संयमके योग्य नाहीं होय है तामैं दया क्षमा शील संतोष इंद्रियविजय परिणाम कदाचित नाहीं प्रवर्तै हैं अनेक पापाचार कपट छलमैं बुद्धि प्रवीण होजाय है। अनेक व्यसनानिमैं प्रवृत्ति होजाय है जरदा

खानेवालेके मांगनेकी लाज नाहीं रहै है। समस्त नीच जातिसूं भी मांगि करि खाय है। मद्य मांस खानेवाले जिसकाल मद्य पीवै हुक्का पीवै है उसका हस्ततैं दीया जरदा बीडी मांगि मांगि खाय है, जरदा खानेवाले बहुत मनुष्यनिकूं नीकेकरि देखिए है एककै हू परमार्थमैं बुद्धि परलोक शुद्ध करनेकी बुद्धि नाहीं होय है इस जरदेके प्रभावकरि हीनआचारकी वृद्धि होय तादि परमार्थतैं बुद्धि भ्रष्ट होय लौकिकजनमैं व्यभिचारमैं लोभमैं प्रबल होय है सांचा धर्म याकै नाहीं होय है ऐसा आपका परिणाममैं आप अनुभव करो। अर परका जरदा खानेका स्वरूप प्रत्यक्ष देखि जरदा खानेका त्याग करो। अर जरदा एक दिन हू नाहीं खाय तो परिणाममैं उपाधि उदरमैं व्याधि अनेक रोगव्याधि उपजावै है तातैं जरदा खाना महारोगकूं महाव्याधिकूं सूगलापनाकूं अंगीकार करना है। बहुरि भांग पीवना हू अपना बडापना शोभितपना नष्ट कर देहै भंगेराका दरजा घटि जाय है भंगेराके जिह्वा इंद्रियकी लंपटता बधि जाय है। विकलीपना होइ जाय है प्रमादी हुवा ऐश करना बहुत निद्रा लेना बहुत घृत खांडका भोजन करना चाहै है। पांचोंइंद्रियां विषयांकी लंपटताने प्राप्त होजाय हैं ज्ञान शिथिल होजाय है बेमी होजाय है भांग पीवनेवालेके मीठा भोजनमैं ऐसी लंपटता होजाय है जो मीठा मिलै कृतकृत्य होजाय है आत्मज्ञान धर्मका ज्ञान कदाचित् नाहीं होय है बाह्य आचरण भ्रष्ट होय ही है अर भांगमैं हजारां त्रसजीव चालता दौडता उपजै है वर्षाऋतुमैं भांगमैं अपरिमाण त्रसजीव उपजै हैं भंगेरा भांग सोधे नाहीं घोटिकरि पीजाय है। ऐसैं हू अफीम खाना जरदा खाना हुक्का पीवना भांग पीवना अर और हू छोंतरा पीवना तमाखू सूंघना ये देहके तो महारोग ही हैं अमल करनेवालेकी आकृति बिगाडि जाय है धर्म बिगाडि जाय आचार बिगाडि जाय ऐसा नियम है। ये नसा सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका हू महाघातक है ये अमल अनर्थदंडनिमैं हू हैं अर व्यसननिमैं हू हैं यातैं मनुष्यजन्म अर जिनधर्म उत्तम कुलादिक पायाकूं सफल किया चाहो हो तो अमल नसा करनेका त्याग ही करो।

बहुरि रात्रिके अवसरमैं भोजन करना त्यागने योग्य ही है रात्रिभोजन करै ताकैं यत्नाचार तो रहै ही नाहीं अर जीवनकी हिंसा होय ही। रात्रिविषै कीडी मांछर मांखी मकडी कसारी अनेक जीव आय पडै हैं अर दीपक जोय भोजन करै तो दीपकके संयोगतैं दूरदूरके जीव दीपकने शीघ्र आय भोजनमैं पडै हैं। अर रात्रिभोजन जिनधर्मी होय करै तो आगांने मार्ग भ्रष्ट होजाय अर रात्रिमैं चूल्हा चाकी परीडाका आरंभ करना मेलना धोवना मांजना ये घोरकर्म प्रगट होजांय तदि महान हिंसा अर महान दुःख प्रगट होजाय तदि घोर आरंभीके जिनधर्मका लेश हू नाहीं रहै है। बहुरि कोऊ कहै जो आरंभ तो नाहीं करै सीधा भोजन लाडू पेडा पूडी पूवा बरफी दुग्धादिक भक्षण करनेमैं रात्रि आरंभ नाहीं भया ताकूं ऐसा समझना जो दिवसकूं छांड रात्रि भोजन करै ताकै तीव्ररागरूप महान हिंसा होय है जैसैं अन्नके ग्रासका अनुराग अर मांसके ग्रासका अनुराग समान नाहीं होय है तैसैं रात्रि भोजनका अनुराग है सो दिनके भोजनका अनुरागके समान नाहीं है। दिवसमैं ही भोजन बहुत है रात्रिदिवस दोऊनिमैं भोजन करै ताके ढोर समान संवररहित प्रवृत्ति रही तथा रात्रिभोजन करनेवालेके व्रत तप नाहीं होय है। ऐसा विशेष जानना जो अनादिकालतै विदेहनिमैं एकबार वा दोयबार ही भोजन है रात्रिमैं कदाचित हू भोजन नाहीं जो रात्रि भोजन करै तो चूल्हा चाकी भुवारी जलादिकका समस्त आरंभ रात्रिमैं होजाय तादि भोजन करनेमैं तरकारी बनावनेमैं तथा पुरुषानिके भोजन करनेमैं स्त्रीनिके कुंटुंब सेवकादिकनिके भोजन करनेमैं धोयबेमैं बुहारिबेमैं मांजनेमैं दोय पहर रात्रि व्यतीत हो जाय है अनेक जीवनिका संहार होजाय समस्त यत्नाचारका अभाव होय जाय अर कीडा कीडी ईली कसारी मकडी इत्यादिक बडे बडे जीवनिका भोजनमैं पतन तथा ईंधनमैं चूल्हामैं तरकारीमैं जलमैं पात्रनिमै पतन होय है अर दीपकादिक तथा चूल्हाका निमित्तकरि माखी माछर डांस पतंगादिक अनेक जीवनिका नितप्रति होम होजाय अर दिनमैं भी आरंभ अर रात्रिमैं हू घोर आरंभ करि समस्त

कुटुंबजननिके महा दुःख पैदा होजाय। रात्रिमैं घोर धंधातैं समता नाहीं आसके तामै धर्मसेवन तथा शास्त्रका पठन श्रवण तत्त्वार्थकी चर्चा सामायिक जाप्य शुभध्यानका तो अवसर ही रात्रिभोजन करनेवालेके नाहीं रहे है। यातैं जिनेन्द्रधर्मके धारक रात्रिभोजन कदाचित् हू नाहीं करे हैं ऐसी सनातनरीति अब ताईं चली आवे है अर जिनधर्मी रात्रिभोजन नाहीं करे हैं ऐसैं कोट्यां मनुष्यनिमैं प्रसिद्धता अर उज्वलता अर प्रभावना अर उच्चता अर भोजनकी शुद्धताकूं बिगाड कोऊ विषयनिकरि प्रमादी अंध भया रात्रिमें दुग्ध कलाकंद पेडा खाय है तथा औषधि जलादिक पीवे है सो अपने उत्तम आचार धर्मनै अर कुल मर्यादानै अर जैनीपनानै जलांजलि देय सन्मार्गतैं भ्रष्ट हुआ उन्मार्गी है, उनका मार्ग तो बाह्य अभ्यंतर भ्रष्ट है अर आगानै अधर्मकी परिपाटी चलावे है। बहुरि रात्रिका किया भोजन दिनमैं हू भक्षण करना योग्य नाहीं है। बहुरि मिथ्याधर्मके धारकनिकै मांसभक्षीनिकै संग बैठि भोजन मत करो। नीचजातिकेसूं मित्रता मति करो देवताके चढ्या भोजन मत भक्षण करो। दांतका चूडा रोमका वस्त्र कामली पहिर भोजन बनावे तो भक्षण योग्य नाहीं मांसभक्षीनिके घरमें भोजन नाहीं करना नीचजातिके घरमैं भोजन नाहीं करना। बहुरि अत्तारनिका अर्क तथा माजूम तथा सरबत अन्य हू समस्त वस्तु भक्षण करना योग्य नाहीं। अत्तारके बिलायतका बण्यां म्लेछनिके जलकर बनाया उच्छिष्ट अर्कनिकी भरी हुई बोतलां आवै हैं अर समस्त वस्तु अज्ञात हैं अर अर्कादिकनिमैं अनेक जलचर थलचर नभचर पंचेन्द्रियादिक जीवनिके मांसके कई अर्क हैं अर बहुत जातिकी मदिरा बनाय अर्क संज्ञा करे हैं बहुत जीवनिके अंडानिका रसकी बोतलां भरी हैं। अर मधु जो सहत सो समस्त सरबत मुरब्बा माजूम जवारसादिकनिमैं है अर अनेक जीवनिका अनेक अंग इन्द्रियां जिह्वा कलेजा इत्यादिक शुष्क हुआ मांसनिकूं अत्तार बेचैं है यहांके समस्त उत्तमकुलनिकी बुद्धि भ्रष्ट करनेकूं मुसलमान लोक अपनी उच्छिट भक्षण करावनेकूं समस्त हिंदुस्थानके लोकनिकूं भ्रष्ट करनेकूं

अत्तारनिकी दुकानां करवाई हैं करोड कषायीनिकी दुकान समान एक अत्तारकी दुकान है। यहां इसदेशमैं राजालोक हिंदुधर्मकी रक्षावास्ते अठारासै चाईसका संवत तांई तो अत्तारका बसनां दुकान करना नाहीं होने दीया फिर कालके निमित्ततैं पापकी प्रवृत्ति फैली ही अब उत्तम कुलवाले हू इनका अर्कादिक खावने लगे हैं सो मुसलमाननिका झूंठन अर मांस मदिरादिक भक्षण करने लगे तदि ब्राह्मणपना महाजनपना वैश्यपना कहां रह्या सब कुल भ्रष्ट भये अर अभक्ष्यभक्षण करनेहीतैं सत्यार्थधर्मतैं रहित लोकनिकी बुद्धि होगई है अर अत्तारानिकी औषाधिहीतैं रोग मिटै है ऐसा नियम नाहीं। अत्तारानिका अर्क पीवा करि धर्मभ्रष्ट होय बहुत लोक मरते देखिये हैं जिनके दुर्गतिका बंध होगया है तिनके ही इनकी भ्रष्ट औषधिसे आराम होय है। जैसैं राजा अरविंदके दाहज्वरका अनेक इलाज किया तो हू दाहज्वर शांत नाहीं भया अर पाछै अपना महलकी छाति ऊपर लडते विसमरानिका शरीरतैं रुधिरका बूंद अपने शरीर ऊपरि पडा तातैं शीतलता भई तदि पापी पुत्रानिसूं कही मोकूं रुधिरकी बावडी भराय द्यो जो मैं वामैं क्रीडा करि आतापरहित हो हूं तब पुत्र पापतैं भयभीत होय लाखका रंगकी बावडी भराई तदि राजा बावडीकूं देखि बडा आनंद मानि बावडीमैं गर्क होय अर कपटके लोहीकी बावडी जानि पुत्र ऊपर क्रोधित होय पुत्रकूं मारनेकूं छुरी लेय दौड्या सो मार्गमैं पडि अपना हाथकी छुरीतैं आप मरि नरक जाय पहुंच्या। ऐसैं ही जिनकी दुर्गति होनी है तिनकै अत्तारानिकी औषधिसूं आराम होय है तदि उनके पापरूप अत्तारी वस्तुनिमैं प्रवृत्ति होय है यातैं प्राणानिका नाश होते हू छह महीनेके बालकहूकूं अत्तारकी औषधि देना योग्य नाहीं। धर्म विगड्यां पाछैं यो जिनधर्म अनंतकालमैं हू नाहीं मिलेगा तातैं जैनधर्मके धारकनिकूं हजारां खंड होजाय तो हू अभक्ष्यभक्षण नाहीं करना बहुरि बजारकी दुकाननिका चून कदाचित् मति भक्षण करो बेचनेवालेनिकै समस्त चमारी खटीकनी और मुसलमनिनी धोबिन इत्यादिक तो पीसै हैं मुसलमान धोबी बलाईनिके राजाका तबेला तोपखानानितैं

चून मिले सो बजारवाले मोल लेय लेवे हैं अर महीनाका छह महीनाका पीस्याको प्रमाण नाहीं हजारां सुलसुल्यां पडि जाय हैं। घणा जणा बीधो नाज लेय मोदी लोग पिसावे हैं अर मुसलमान म्लेच्छ समस्त उसहीमें हस्त घालि तुला लेजाय हैं मुसलमानांके नुकता विवाहमें काम नाहीं आवे सो आधा ओसणि आधो फेर जाय हैं बहुरि सरायका दुकानदारांका पीतलका कांसीका लोहेका पात्र भोजन करनेकूं लेना योग्य नाहीं समस्त मांसभक्षी दुराचारीनिकूं भी वेही पात्र देहैं तातैं अपना आचारकी उज्वलता चाहे हैं सो तीन चार पात्र अपने निकट राखि विदेशमें गमन करे हैं अर जहां जाय तहां दमडी बधती देय चून तराय भक्षण करे चूनकी नाहीं विधि मिलै तो खिचडी तथा घूघरी रांधि खाय। बहुरि बजारकी मिठाई लाडू बरफी घेवरादिक मत भक्षण करो। इनका चूनका घृतका जलका कुछ परिमाण नाहीं है। लोभी निंद्यकर्मीनिके आचार नाहीं होय है बहुरि मैदाका खमीरा वाडिकरि सडावे हैं खट्टा पडते ही तामैं अनंतानंत जीव पडे हैं पाछैं कढाईमें पके हैं भुने हैं सो जलेबी करे हैं माबूनी करे हैं सो भक्षण करने योग्य नाहीं तथा दहीमें खांड बूरा मिलाय बहुतकालपर्यंत मति राखो दोय महूरतताईं खाना योग्य है अपना मित्र भाई पुत्रादिकके सामिल एक पात्रमें भोजन करना योग्य नाहीं। मनुष्य कूकरा बिलाई इत्यादिकनिका उच्छिष्ट भोजन त्यागना योग्य है तथा गाय भैंस गधा इत्यादिक तिर्यंचनिका उच्छिष्ट जलादिकमें स्नान मति करो पान तो कदाचित् हू मत करो तथा अन्नका खांडका लापसीका बनाया मनुष्य तिर्यंचनिका आकार ताकूं मत भक्षण करो तथा देवी दिहाडी व्यंतरादिकनिकी पूजाके वास्ते संकल्प किया भोजन त्यागने योग्य है तथा मांसभक्षीनिका भोजनमें भाजन मत भक्षण करो। भाजन मांसभक्षीको मांग्या मत द्यो। नाईका भाजनका जलसों छौर मत करावो रजस्वलाका स्पर्शन किया पात्र भोजन योग्य नाहीं। बहुरि अनुपसेव्य जानि विकाररूप वस्त्र आभरण मत पहरो जो उत्तम कुलके योग्य नाहीं ऐसा नीचकुलनिके पहरनेके वेश्या तथा विटपुरुषनिके पहरनेके

तथा म्लेच्छ मुसलमाननिके पहरनेके तथा स्वामी योगी फकीर भांडानिके पहरनेके वस्त्र आभरण परिणाम बिगाडै हैं अपने तथा परके विकार उपजावनेवाला तथा अपना पदस्थके योग्य लोकतैं अविरुद्ध ऐसा आभरण वस्त्र भेष धारना योग्य है बहुत करनेकरि कहा संक्षेपतैं जानना जो समस्त संसार परिभ्रमणके कारण पंचइंद्रियनिका विषयानिमैं लालसा है तिन इंद्रियनिमैं हू जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रिय दोय इंद्रियनिकी लालसा इसलोक परलोक दोऊनिकूं विगाडदेनेवाली है इन दोय इंद्रियनिके विषयकी लोलुपता जिनके अधिक है ते मनुष्यजन्ममैं हू पशुके समान हैं । पशुयोनिमैं हू इन दोऊ इंद्रियांका विषयकी चाहकरि परस्पर लडि लडि मरजाय है अर मनुष्यजन्ममैं हू कलह करना मारना मरना निर्लज्ज होना उच्छिष्ट खावना दीनता भाषणा पुण्यदान लेना अभक्ष्य भक्षण करना इत्यादिक समस्त नीचकर्मनिमैं प्रवृत्ति रसनाइंद्रियके विषयानिकी लालसातैं ही होय है । अरु देखहु भोगभूमिके अर देवलोकके नानाप्रकारके भोगनितैं हू तृप्तता नाहीं भई अब ये किंचित् जिह्वाका स्पर्शमात्रका स्वाद अति अल्पकालमैं है भोजन गिल्यां पाछैं नाहीं अर पहली नाहीं ऐसा तृष्णाका बधावनेवाला आहारमैं लुब्धताका त्याग करि समस्त इंद्रियांको विजय करि रस नीरसकी कर्म जैसी विधि मिलाई तीसमैं संतोष धरि अभक्ष्यनिका त्याग करि देहका धारणमात्रके अर्थि भोजन करै है सो समस्त पापरहित होय देवलोकका पात्र होय है । अब यहां ऐसा जानना जो भोगोपभोगपरिमाण करै सो अपना परिणामनिकी दृढता देखै जो मेरे ऐता राग घट्या है ऐता हाल नाहीं घट्या है अर सामर्थ्य देखै जो ऐसा योग्य बनैगा तो मेरा देहका तथा परिणामका इसकूं निर्वाह करनेका सामर्थ्य है कि नाहीं है ऐसा विचार करि व्रत धारण करना अर देशकी रीति निर्वाह योग्य देखनी अर कालकूं अवसरकूं देखना अवस्था देखना अपना कोऊ सहायी है कि त्यागव्रतके बिगाडनेवाला है ऐसा हू विचार करना शरीरका रोगरहितपना (नीरोगपना) देखना भोजनादिक मिलनेका नाहीं मिलनेका संयोग देखना तथा भोजनादिक मेरे आधीन है कि पराधीन है ऐसे त्यागकू

तातैं हमारे तथा स्त्री पुत्र स्वामी इत्यादिकनिके परिणाममैं संक्लेश होयगा कि संक्लेश नाहीं होयगा अपना स्वाधीनपना पराधीनपना जानि जैसैं परिणामनिकी उज्वलता सहित व्रतका निर्वाह होय तैसैं नियमरूप त्याग करो तथा यम कहिये यावज्जीव त्याग करो । केतेक तो यावज्जीव ही त्यागने योग्य हैं—जामैं प्रगट त्रसनिका घात होय तथा अनंत जीवनिका घात होय अपने कुलमैं सेवने योग्य नाहीं होय तथा मद करनेवाला होय तथा मांस मद्य माखन मदिरा अचार महा विकृति अर रात्रिविषै भोजन द्यूतक्रीडादिक सप्तव्यसन विना दिया परधनका ग्रहण अर त्रसहिंसा अर स्थूल असत्य अन्यायका परिग्रह बिनाछान्या जल अनर्थदंड ये तो यावज्जीव ही त्यागने योग्य हैं। इनमैं नियम कहा करिये ये तो महा अनीति है इनके त्याग करनेमैं शरीर ऊपरि कुछ क्लेश भार दुःख नाहीं आवै है अपयश नाहीं होय है इनका त्यागमैं धन चाहिये नाहीं बल चाहिये नाहीं स्वामीका तथा स्त्रीका पुत्र कुटुंबादिकनिका सहाय चाहिये नाहीं किसीकूं पूछनेका वाकिफ करनेका हू काम नाहीं अपने परिणामके ही आधीन है कोऊ प्रकार इनका त्यागमैं शीत उष्ण क्षुधा तृषादिककी बाधा पीड़ा भोगना पडै नाहीं स्वाधीन है परिणामनिमैं देहमैं सुख करनेवाला है यातैं दुर्लभ सामग्री पाय भोगोपभोगका परिमाण करना श्रेष्ठ है। बहुरि कदाचित् प्रबलकर्मके उदयतैं यो मनुष्य कुदेशमैं पराधीनतामैं जाय पडै तथा प्रबल रोगतैं पराधीन होजाय तथा प्रबल जराके आवनेतैं उठने बैठने चालनेकी सामर्थ्य घटि जाय तथा कोऊ स्त्री पुत्रादिक सहायी नाहीं होय तथा नेत्रनिकरि अंध होजाय बधिर होजाय तथा लंबा रोग आजाय तथा बंदीखानामैं दुष्ट म्लेच्छादिक अपना भोजन जलादिक विगाडि दे तथा जवरीतैं समस्तके सामिल बैठाय खान पान करावै ऐसा उपद्रव आजाय तो तहां अंतरगमैं तो व्रतसंयमकूं छांडै नाहीं बाहिर श्रीपंचनमोकार मंत्रको ध्यान करि ही शुद्ध है क्योंकि बाह्यदेहादिक पवित्र हो हू वा अपवित्र हो हू मलमूत्र रुधिरादिक करि लिप्त हो हू समस्त कुत्सित ग्लानियोग्य अवस्थाकूं प्राप्त हुआ जो पुरुष परमात्माकूं स्मरण करै है सो बाह्य हू पवित्र

है अर अभ्यंतर हू पवित्र है जातैं देह तो सप्तधातुमय मलमूत्रादिकी भरी हुई अर रोगनिका स्थान है एक क्षणमैं समस्त शरीरमैं कोढ झरने लगि जाय है हजारां फोडा फुनसी गूमडी लोहू राध स्रवणे लगि जाय मलमूत्र अबुद्धिपूर्वक स्रवणे लगि जाय है ऐसा अवसरमैं बाह्य व्यवहार शुद्धता कैसैं होय अर निर्धन एकाकीका सहायक कौन होय ? तहां धर्मात्मा पुरुष अशुभकर्मका उदयमैं ग्लानि त्याग करके धीरता धारण करि आर्त्तपरिणाम करि संक्लेश नाहीं करै है अशुभकर्मके उदयकूं निर्जरा मानता अंतरंग वीतरागताकरि संसार देह भोगनिका स्वरूप चिंतवन करता बारह भावना भावता कर्मके उदयतैं अपना आत्मस्वरूपकूं भिन्न ज्ञाता दृष्टा शुद्ध चिंतवन करता वीतरागताकरि ही राग द्वेष हर्ष विषाद ग्लानि भय लोभ ममतारूप आत्माके मलकूं धोय आपकूं शुद्ध मानै है ताकै समस्त शुद्धता होय है । अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके दोय प्रकारता कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

नियमो यमश्च विहितो द्वेधा भोगोपभोगसंहारात् । नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८७ ॥

अर्थ—भगवान है सो भोग अर उपभोगका घटावनेतैं नियम अर यम ऐसैं दोय प्रकार भोगोपभोग परिमाण व्रत कह्या है । तिनमैं कालका परिमाणकरि त्याग करना सो नियम कह्या है अर इस देहमैं जीवन है तितने तक तो त्याग करि रहना सो यम कह्या है । भावार्थ—जो एकवार भोगनेमैं आवैं ऐसे आहारादिक तो भोग हैं अर जे वारंवार भोगनमैं आवैं ऐसे वस्त्र आभरणादिक हैं ते उपभोग हैं । तिन भोग उपभोगनिका परिमाण यम नियम करि दोय प्रकार है तिनमैं जिस भोग उपभोगका एक मुहूर्त्त तथा दोय मुहूर्त्त तथा पहर तथा दोय पहर एक दिवस दोय दिवस पांच दिन पंद्रह दिन एक मास दोय मास चार मास छह मास एक वर्ष दोय वर्ष इत्यादिक कालकी मर्यादा करि त्याग करै सो नियम नामका परिमाण है । जातैं जो आपके उपयोगी होय शुद्ध होय ताका त्यागमैं तो कालकी मर्यादाकरि ही नियमका त्याग करना । अर जो आपके प्रयोजनरूप हू नाहीं होय तथा परिणामनिकूं

बिगाडनेवाला होय अथवा सदोष होय ताकूं यावज्जीव त्याग करि यमनामा परिमाण करना योग्य है इस भोगोपभोग परिमाणतैं अनेक पापके आश्रव रुक जाय हैं। इंद्रियां वशीभूत हो जाय हैं राग अतिमंद होजाय है व्यवहार शुद्ध होजाय है। मन वश होजाय व्यवहार परमार्थ दोऊ उज्वल होजाय तातैं भोगोपभोग परिमाण व्रत ही आत्माका हित है विरुद्ध भोग तो त्यागिये ही और अविरुद्ध भोग होय तिनमैं हू अपनी शक्ति परिमाण देश काल देखि दिवस रात्रिके कालकी मर्यादा करो तामैं हू फिर दोय घडीकी चार घडीकी मर्यादा करि रहना यातैं कर्मनिकी बडी निर्जरा है। अब और हू भोगोपभोगनिमैं परिमाण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भोजनवाहनशयनस्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु। ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८८ ॥

अर्थ—भोगोपभोग परिमाणनाम व्रतमैं नित्य हू नियम करै आजका दिनमैं एक बार भोजन करूंगा वा दोय बार भोजन करूंगा वा तीन चार बार इत्यादिक भोजन करनेका परिमाण करै अथवा आजका दिन मैं एती जातिका अन्न तथा एते रस एते व्यंजन भक्षण करूंगा अधिक प्रकार भक्षण नाहीं करूंगा ऐसैं भोजनका नियम करै। बहुरि वाहन जे हस्ती घोडा ऊंट बलध पालकी रथ बहली नाव जहाज इत्यादिक वाहन ऊपरि चढनेका नियम करै। बहुरि पलंग खाट इत्यादिकविषै शयनका नियम करै जो आज मैं पलंगादिकमैं शयन करूंगा वा भूमिमैं ही शयन करूंगा। बहुरि आज एक बार स्नान करूंगा वा दोय बार स्नान करूंगा वा स्नान नाहीं करूंगा इत्यादिक नियम करै। बहुरि पवित्र जो अंगराग कहिये चंदन केसर कपूरादिकके विलेपन करना वा नाहीं करना इनमैं नियम करै बहुरि पुष्प तथा पुष्पनिकी माला आभरणादिक धारण करनेमैं नियम करै। बहुरि तांबूल इलाची सुपारी लवंगादिक भक्षण करूंगा वा नाहीं करूंगा ऐसा नियम करै। बहुरि वस्त्रनिका नियम करै जो आज एते वस्त्र पहरूंगा अधिक नाहीं पहरूंगा ऐसैं वस्त्रनिमैं नियम करै। बहुरि आज एते ही आभरण पहरूंगा अधिक नाहीं

ऐसैं आभरण प्रहरनेमैं नियम करै । बहुरि काम सेवनेका नियम करै । बहुरि नृत्य देखनेका नियम करै बहुरि गीत गावनेका वा अन्य वेश्या कलावंतादिकतैं गवावनेका नियम करै । बहुरि और हू हरितकायके भक्षणमैं नियम करै । बहुरि षटरसके भक्षणमैं जल पीवनेमैं नियम करै । बहुरि सिंहासन कुरसी चौकी इत्यादिक आसनमैं बैठनेका नियम करै । इत्यादिक अपने योग्य हू भोगउपभोगनिमैं नित्य नियम करै है ताकै भोजनपानादिक करनेतैं हू निरंतर संवर होय है । अब नियमके अर्थि कालकी मर्यादा कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथर्तुरयनं वा । इति कालपरिच्छित्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥ ८९ ॥

अर्थ—अद्य कहिये एक घडी मुहूर्त प्रहर अर दिवा कहिये दिवस तथा रात्रि पक्ष तथा एक मास तथा दोय मासका ऋतु अर अयन कहिये छह मास इत्यादिक कालका परिमाण करि त्याग करना सो नियम है । ऐसैं भोगोपभोगका परिमाण वर्णन किया । अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

विषयविषतोऽनुपेक्षाऽनुस्मृतिरतिलौल्यमतितृषानुभवौ । भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ ९० ॥

अर्थ—ये भोगोपभोग व्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं । विषय हैं ते संताप बधावै हैं अर विषयांका निमित्ततैं मरण होय है यातैं ये पंचइंद्रियनिके विषय विष हैं इनमैं परिणामका राग नाहीं घटना सो अनुपेक्षा नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि जे विषय पूर्वकालमैं भोगे थे तिनकूं बारंबार याद करया करै सो अनुस्मृति नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि विषय भोगे तिस कालमैं अतिगृद्धितातैं अति आसक्त हुआ भोगै सो अतिलौल्य नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि विषयनिकूं आगामी कालमैं भोगनेकी अति तृष्णा लगी रहै सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि विषयनिकूं नाहीं भोगै तिस कालमैं भी

जानै भोगूं ही हूं ऐसा परिणाम सो अनुभव नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पांच अतीचार छांडि वूतकूं शुद्ध करना ॥

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिकाविषै तृतीय अधिकार समाप्त भया ॥ ३ ॥

अब च्यार शिक्षाव्रतनिके स्वरूपका निरूपण करनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोषधोपवासो वा । वैय्यावृत्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ ९१ ॥

अर्थ—देशावकाशिक ॥ १ ॥ सामायिक ॥ २ ॥ प्रोषधोपवास ॥ ३ ॥ वैयावृत्य ॥ ४ ॥ ऐसैं चार शिक्षाव्रत कहे हैं । भावार्थ—ए चार वूत हैं ते गृहस्थपनामैं मुनिपनाकी शिक्षा करै हैं । अब देशावकाशिक वूतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य । प्रत्यहमणुव्रतानां प्रतिसंहारो विशालस्य ॥ ९२ ॥

अर्थ—अणुव्रतनिके धारक पुरुषनिकै दिन दिन प्रति विस्तीर्ण देशकूं कालकी मर्यादा करि घटावना सो देशावकाशिक नाम शिक्षाव्रत है । भावार्थ—जो पूर्वकालमैं दश दिशानिमैं जावना मंगावना भेजना बुलावना इत्यादिकनिकी मर्यादा यावज्जीव दिग्व्रतमैं करी थी सो तो बहुत थी तामैंतैं अब रोजीना क्षेत्रकूं घटाय कालकी मर्यादा करि व्रत करै सो देशावकाशिक व्रत है जैसैं पूर्वदिशामैं दोयसै कोसका परिमाण यावज्जीव किया सो तो दिग्वूत है फिर यामैंतैं रोजीना मर्यादा रूपकरि राखै जो आज चार कोसहीका म्हारै परिमाण है वा इस नगरका ही परिमाण है वा आज अपने घर बाहिर नाहीं जाऊंगा सो देशावकाशिक वूत है । अब देशावकाशिक वूतमैं क्षेत्रकी मर्यादा प्रगट करै हैं—

गृहहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनानां च । देशावकाशिकस्य स्मरंति सीम्नां तपोवृद्धाः ॥ ९३ ॥

अर्थ—तपोवृद्ध जे गणधर देव हैं ते देशावकाशिक वृत करनेकूं सीमा मर्यादा कहै हैं। गृहकूं कटककूं ग्रामकूं क्षेत्रकूं नदीकूं वनकूं योजनकूं देशावकाशिक वृतमैं मर्यादा करै हैं। इनकूं उलंघनका हमारे इतने काल त्याग है। अब देशावकाशिकमैं कालकी मर्यादा कहै हैं—

संवत्सरमृतुमयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च। देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥ ९४ ॥

अर्थ—प्रवीण पुरुष हैं ते एक वर्ष छह महीना दोय मास चार मास एक पक्ष एक नक्षत्र इस प्रकार देशावकाशिक व्रतके कालकी मर्यादा कहै हैं। अब देशावकाशिकका प्रभाव दिखावै हैं—

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपंचपापसंत्यागात्। देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यंते ॥ ९५ ॥

अर्थ—रोजीना जेता क्षेत्रका परिमाण किया ताके बारैं स्थूल अर सूक्ष्म जे पंच पाप तिनका त्यागतैं देशावकाशिक वृत करकैं महावृतानिकूं सिद्ध करिये हैं। भावार्थ—मर्यादा करी तैं बारैं समस्त पंचपापनिका त्यागतैं महावृत तुल्य भया। अब देशावकाशिक वृतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ। देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च ॥ ९६ ॥

अर्थ—आपके जेता क्षेत्रकी मर्यादा थी तिस बार प्रयोजनके अर्थि अपना सेवककूं वा मित्र पुत्रादिककूं कहै तुम जावो तथा या काम करदो ऐसैं कहना सो प्रेषण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं तिष्ठतेनितैं बचनालाप करना तथा अन्य शब्दकी समस्या करि समझाय देना सो शब्द नाम अतीचार है।२। बहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं कोऊकूं बुलावना वा वस्त्रादिक वांछित वस्तुकूं शब्द कहि मंगावना सो आनयन नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बाह्य क्षेत्रमैं तिष्ठतेनिकूं समस्या वास्ते अपनारूप दिखावना सो रूपाभिव्यक्ति नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि मर्यादाके क्षेत्रके बाह्य क्षेत्रमैं वस्त्रादिक तथा कंकरी पाषाण काष्ठखंड आदिक फेंकि आपाकूं जितावना सो पुद्गलक्षेप नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं देशावकाशिकव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं ऐसैं देशावकाशिक व्रत कह करि अब सामायिकका स्वरूप कहै है—

असमयमुक्तिमुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन । सर्वत्र च सामयिकाः सामायिकं नाम शंसान्ति ॥ ९७ ॥

अर्थ—सामायिक कहिये परम साम्यभावकूं प्राप्त भये ऐसे गणधर देव हैं ते सामायिक नाम करि ताकी प्रगट प्रशंसा करे हैं जो सर्वत्र कहिये मर्यादा करी तिस क्षेत्रमैं अर मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं हू समस्त मनवचनकाय कृतकारितअनुमोदनाकरि कालकी मर्यादारूप जो समस्त पंचपापनिका त्याग सो सामायिक है। भावार्थ—समस्त पंचपापनिका कालकी मर्यादाकरि समस्तपनाकरि त्याग सो सामायिक है। अब सामायिकमैं पंचपापनिका त्याग करि कैसैं तिष्ठै सो कहै हैं—

मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यङ्कबन्धनं चापि । स्थानमुपवेशनं वा समयं जानान्ति समयज्ञाः ॥ ९८ ॥

अर्थ—समयज्ञ जे परमागमके जाननेवाले हैं ते मूर्द्धरुह जे केश तिनका बंधन अर मुष्टिबंधन अर वस्त्रबंधन अर पर्यंकासनबंधन हू जैसैं होय तैसैं स्थान कहियें खडा तथा उपवेशनं कहियें बैठा समय कहिये रागद्वेषादि रहित शुद्धात्मा जो है ताहि जानता रहै। भावार्थ—सामायिक करनेवाला कालकी मर्यादा परिणाम समस्त प्रकार पापनिका त्याग करि खडा होय करि तथा पर्यंकासन कर बैठे। अर पर्यंकासनमैं अपना वाम हस्ततल ऊपरि दक्षिण हस्ततलकूं स्थापन करे। अर अपना मस्तकका केश वा वस्त्र हलता होय तो परिणामके विक्षेप करे यातैं मस्तकके चोटी इत्यादिकके केश होय तिनकूं बांधिले अर वस्त्र हू बिखरि रह्या होय ताकूं हू गांठ देय बांधि करि सामायिक खडा हुआ करे वा बैठा हुआ करे। अब सामायिकके योग्य स्थानकूं कहै हैं—

एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तषु च । चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥ ९९ ॥

अर्थ—जिस स्थानमैं चित्तकूं विक्षेप करनेकें कारण नाहीं होय अर बहुत असंयमीनका आवना जावना नाहीं होय अर अनेक लोकनकरि वाद विवादादिकका कोलाहल नाहीं होय स्त्रीनिका नपुंसकनिका आगमन प्रचार नाहीं होय अर जहां गीत नृत्य वादित्रादिकनिका प्रचार नजीक नाहीं होय

अर तिर्यंचनिका अर पक्षीनिका संचार नाहीं होय और जहां बहुत शीतकी तथा उष्णताकी प्रचंड पवनकी वर्षाकी बाधा नाहीं होय तथा डांस माछर माक्षिका कीडा कीडी जवा मधुमाक्षिका टांच्या सर्प बीछू कनसला इत्यादिक जीवनकृत बाधा नाहीं होय ऐसा विक्षेपरहित स्थान एकांत होय वा वन होय जीर्ण बागके मकान होय वा गृह होय वा चैत्यालय होय वा धर्मात्माजनानिका प्रोषधोपवास करनेका स्थान होय ऐसा एकान्त विक्षेपरहित वन होहु वा जीर्ण बाग तथा सूना गृहादिक चैत्यालयादिकमैं प्रसन्नचित्त हुआ सामायिकमैं परिचय करो। अब सामायिककी और हू सामग्री कहिये है—

व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्त्यामन्तरात्मविनिवृत्त्या। सामायिकं बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा ॥ १०० ॥

सामायिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं। व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥ १०१ ॥

अर्थ—कायकी चेष्टारूप व्यापार तामैं विरक्तपनातैं बाह्य आरंभादिकतैं छूटि अर अंतरात्मा जो मन ताकूं विकल्परहित करिकैं अर उपवासके दिनविषै अथवा एकभुक्तिके दिनविषै सामायिकरूप तिष्ठै तथा आलस्यरहित पुरुष दिवस २ प्रति नित्य रोजीना यथावत् सामायिक जो है ताहि एकाग्र चित्तकरि युक्त हुवा परिचय करने योग्य है वृद्धि करने योग्य है। कैसाक है सामायिक अहिंसादिक पंचव्रतनिकी परिपूर्णताका कारण है। भावार्थ—सामायिक करनेमैं उद्यमी श्रावक है सो समस्त आरंभादिक कायकी क्रियाकूं त्याग करि अर मनका विकल्प छांडि सामायिक करै तिनमैं कोऊ तो पर्वका निमित्त पाय उपवास जिस दिन करै तिसही दिनमैं सामायिक करै कोऊ एक ठाणाके दिन सामायिक करै कोऊ नित्यप्रति सामायिक करै कोऊ एक दिवसकी आदि अंतमैं दोय बार नित्यप्रति सामायिक करै अथवा पूर्वाह्न मध्याह्न अपराह्न तीनकालविषै दोय दोय घडीका नियम करि साम्यभावकी आराधना करै सो एक स्थानमैं निश्चल पर्यंकासन तथा कायोत्सर्ग नाम निश्चल आसन धरि अंगउपंगानिका चलायमानपना छांडि काष्ठपाषाणकरि गढ्या प्रतिबिंबतुल्य अचल होय दशादिशानिकूं नाहीं अवलोकन करता

अपने अंगउपंगानिकूं नाहीं देखता किसीतैं वार्ता नाहीं करता समस्त पंच इंद्रियनके विषयानितैं मनकूं रोकि समस्त चेतन अचेतन द्रव्यनिमैं राग द्वेष हर्ष विषाद वैर स्नेहादिकानिकूं छांडि सामायिकमैं तिष्ठे है सामायिकमैं तिष्ठता समस्त जीवनिमैं मैत्री धारण करता परम क्षमा धारण करै है मैं सर्व जीवनिमैं क्षमा धारण करू हूं कोऊ जीव मेरा बैरी नाहीं है मेरा उपार्जन किया मेरा कर्म ही बैरी है मैं अजानभावतैं क्रोधी अभिमानी लोभी होय करिकै विपरीत परिणामी हुआ जाकी प्रवृत्तिसूं मेरा अभिमानादिक पुष्ट नाहीं भया तिसकूं ही बैरी मान्या कोऊ मेरा स्तवन बडाई नाहीं करी मेरे कर्तव्यकी प्रशंसा नाहीं करी ताकूं बैरी समझ्या मेरा आदर सत्कार उठना स्थान देना इत्यादिकमैं मंद प्रवर्त्या ताकूं बैरी जान्या तथा कोऊ मेरा दोष छो ताकूं जनाया ताकूं बैरी जान्या तथा कोऊ मेरे आधिन नाहीं प्रवर्तन किया तथा मोकूं कुछ भोजन वस्त्र धनादिक नाहीं दिया ताकूं बैरी मान्या सो ये समस्त मेरी कषायतैं उपजी दुर्बुद्धितैं अन्य जीवनिमैं वैर बुद्धि ताहि छांडि क्षमा अंगीकार करू हूं अर अन्य समस्त जीव हैं ते हू मेरा अज्ञानभाव विषयकषायांके आधीन जानि मेरे ऊपरि क्षमा करो मोकूं माफ करो ऐसैं बैर विरोधकी बुद्धिकूं छांडि मैं समस्तमैं समभाव धारि सामायिक अंगीकार करू हूं जेते दोय घटिका परिमाणमैं मनकरि बचनकरि कायकरि समस्त पंच इंद्रियनिका विषयानिकूं समस्त आरंभ परिग्रहकूं त्यागकरि भगवान पंचपरमेष्ठीका स्मरण करता तिष्ठू हूं ऐसैं सामायिकका अवसरमैं प्रतिज्ञाकरि पंच नमस्कारके अक्षरानिका ध्यान करता तथा पंच परमेष्ठीके गुणनिकूं स्मरण करता तथा जिनेन्द्रका प्रतिबिंबकूं चिंतवन करता सामायिकमैं तिष्ठे तथा अपणा आत्माका ज्ञाता दृष्टा स्वभावकूं रागद्वेषतैं भिन्न अनुभव करता तिष्ठे तथा चार मंगल पद चार उत्तम पद चार शरण पदनिकूं चिंतवन करता तिष्ठे तथा द्वादशभावना षोडशकारणभावना चिंतवन करै अर चतुर्विंशाति तीर्थंकरनिका स्तवनमैं तथा एक तीर्थंकरकी स्तुति तथा पंच परम गुरुनिका स्तवनमैं इनके अर्थमैं एकाग्रचित्त धारण करि सामायिक करै तथा प्रतिक्रमण करनेकूं समस्त दिवसमें किये दोषानिकूं दिनका अंतमैं

चिंतवन करै अर समस्त रात्रिमैं जे दोष किये तिनकूं प्रभात समय चिंतवन करै जो यो मनुष्य जन्म अर तामैं भगवान सर्वज्ञ वीतरागका उपदेश्या धर्म अनंतकालमैं बहुत दुर्लभ प्राप्त भया है इस जन्मकी एक घडी हू धर्म विना व्यतीत मत होहू ऐसा विचार करै जो आजका दिनमें तथा रात्रिमैं जिनदर्शन पूजन स्तवनमैं केता काल व्यातीत किया अर स्वाध्याय सत्संगति तत्त्वार्थनिकी चर्चा तथा पंच परमेष्ठीनिका जाप ध्यानमैं तथा पात्रदानमैं केता काल व्यतीत किया अर बहुत आरंभमैं अर इंद्रियनिके विषयनिमैं अर व्यवहारादिक विकथामैं अर प्रमादमैं निंद्रामै काम सेवनमैं भोजनपानादिकमैं आरंभादिकनिमै केता काल व्यतीत किया तथा मेरा मनवचनकायकी प्रवृत्ति तथा रागादिक संसारके कार्यनिमैं अधिक भई कि परमार्थमैं अधिक भई ऐसे समस्त दिवसका किया कर्तव्यकूं दिनका अंतमैं चिंतवन करै अर रात्रिका कियाकूं प्रभात समय चिंतवन करै जातैं जो पांच रुपयाकी पूंजी लेय बनिज करै है सो हू नित्य रोजाना अपना ठगावना कुमावना टोटा नफाकी संभाल करै है तो पूर्व पुण्यके प्रभावतैं इस जन्म लाया जो उत्तम मनुष्य जन्म वीतराग धर्म सतसंगति इंद्रियपरिपूर्णतादिक धन तिसमैं व्यवहार करता ज्ञानी अपनी आत्माके हानि वृद्धि नाहीं संभालि करै कहा? जो टोटा नफाकी संभाल नाहीं करै तो परलोकतैं ल्याया धर्मधनादिकनकूं नष्ट करि घोर तिर्यंच गातिमैं वा नारकीनिमै निगोदनिमें जाय नष्ट होजाय तातैं धर्मरूप धनका बधावनेका आर्थि एक दिनमैं दोय बार तो संभाल करै ही अर जो कषायनिके वशतैं जो अपने मनवचनकायकी दुष्ट प्रवृत्ति भई ताकूं वारंवार निंद्या करै हाय मैं दुष्ट चिंतवन किया तथा कायतैं दुष्ट क्रिया करी हाय मैं वचनकी प्रवृत्ति बहुत निंदा करी यामैं महा अशुभकर्मका बंध किया धर्मकूं दूषित किया अपयश प्रगट किया अब इस निंद्यकर्मकूं चिंतवन करते मेरे परिणाम पश्चात्तापकरि दग्ध होय हैं अहो! मोहकर्म बडा बलवान है जो मैं मेरे दुष्ट परिणामनिकी दुष्टताकूं अर पापके करनेवाले अर दुर्गतिके ले जानेवाले हमारे निंद्य परिणामनिकूं नीके

मेरा घात करनेवाले जानू हूं अर प्रयोजनरहित जानू हूं अर अपनी जीवितव्यकूं बहुत अल्प जानू हूं अर परलोकमें मेरे किये कर्मका फलकूं मैं ही अकेला ही भोगूंगा ऐसा अच्छी तरह वारंवार परिणामनिमैं निश्चय करूं हूं चिंतऊ हूं चिंतवन करते करते हू मेरा परिणाम जो अन्य जीवनितैं बैर अर विषयनिमैं राग नाहीं घटै है सो यो प्रबल मोहकर्मकी महिमा है याहीतैं मोहकर्मका नाश करि विजयकूं प्राप्त भये ऐसे पंच परमेष्ठीनिकूं स्मरण करूं हूं जो मोहकर्मके जीतनेवाले जिनेन्द्रका प्रभावकरि मेरे मोह कर्मतैं उपजे रागभाव द्वेषभाव कामादि विकारभाव तथा क्रोधभाव अभिमानभाव मायाचारके भाव लोभभाव मेरा नाशकूं प्राप्त होहू जैसी वीतरागता जिनेन्द्रभगवान पाई तैसी मेरे भी हो हू इस आभिप्रायतैं मैं कायतैं ममत्व छांडि पंचपरमेष्ठीका ध्यान सहित कायोत्सर्ग करूं हूं तथा अज्ञानभावतैं जो पूर्वकालमैं पृथ्वीकायका खोदना कुचरना कूटना इत्यादिक करि घात किया होय तथा अवगाहनेकरि बिलोवनकरि छिडकनेकरि स्नानादिककरि जलकायका जीवांकी विराधना करी तथा दाबनां बुझावना कसेरना कूटना इत्यादिककरि अग्निकायके जीवनिकी बिराधना करी तथा बीजणां इत्यादिक करि पवनकायका जीवांकी विराधना करी तथा जड कंद मूल छाल कूपल पत्र फूल फल डाहला डाहली सींख तृण घास बेल गुल्म वृक्षादिकानिका तोडना छेदना बनारना उपाडना चबाना रांधना वांटना इत्यादिककरि वनस्पतिकायकी विराधना करी तिनतैं उत्पन्न भया पापकर्म तिनका नाश परमेष्ठीके जाप्यके प्रभावतैं मेरे हो हू अर परमेष्ठीके ध्यानका प्रभावतैं अब मेरा परिणाम छह कायानिके जीवनिकी घाततैं पराङ्मुख हो हू संयमभावकी प्राप्त हो हू। बहुरि जो मेरे गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं पसारनेमैं संकोचनेमैं भोजनमैं पानीमैं आरंभमै उठावनेमै मेलनैमैं तथा चाकी चूल्हा औखली बुहारी जलका परींडा अर सेवा कृषी विद्या वाणिज्य लिखना शिल्पकर्म जीविकामैं तथा गाडी घोडा इत्यादिक बाहननिमैं प्रवर्तन करि जो मेरी यत्नाचाररहित प्रवृत्ति ताकरि जो द्विइंद्रिय त्रिइंद्रिय चतु-

रिन्द्रिय पंचेंद्रिय जीवनिकी विराधना भई होय सो मिथ्या होहु। मैं बुरी करी ये आरंभादिक भला नाहीं संसारमें डबोनेवाले हैं नरक देनेवाले हैं इन आरंभविषय कषायनिकरि ही यो जीव एकेन्द्रिया-दिक तिर्यंचनिमैं अनंतानंतकाल क्षुधा तृषा मारन ताडन लादन बंधन बालन छेदन फाडन चीरन चा-बन इत्यादिक घोर दुःख भोगता ते हिंसातैं उपजाया कर्मको नाशके अर्थि अर आगाने हिंसारूप परिणामका अभावके अर्थि मैं पंच नमस्कार पदका शरण ग्रहण करूं हूं। बहुरि अज्ञान भावते व प्रमा-दतैं जो मैं असत्य वचन कह्या तथा गाली दीनी तथा भंडवचन कह्या तथा मर्मछेद करनेवाले कर्कश वचन व कठोर कह्या तथा किसीकूं चोरीका कलंक लगाया किसीकूं कुशीलका कलंक लगाया तथा धर्मात्मा ज्ञानी तपस्वी शीलवंतानिकूं दोष लगाया तथा धर्मात्मानिकी निंदा करी तथा सांचे देवधर्म-गुरुकी निंदा करी तथा मिथ्याधर्मकी पोषणा करी हिंसाकी प्रवृत्तिका उपदेश किया तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करी तथा स्त्रीनिकी कथा राजकथा भोजनकथा देशकथा इत्यादिक घोर पापनिमैं मेरा वचन प्रवर्त्यां ताका अब पश्चात्ताप करूं हूं। मैं घोर कर्मका बंध किया जाका फल नरकानिके दुःख तथा ति-र्यंचगतिनिके घोर दुःख अनंतकाल भोगने हैं अर अनंतकाल गूंगा बहिरा आंधा नीच जाति नीच-कुलमैं महा दारिद्रसहित उपजवना है यातैं अब दुष्ट वचनके बोलनेकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर अब आगाने मेरे दुष्ट वचनमैं प्रवृत्ति कदाचित मत होहू इस वास्ते मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि अज्ञानभावतैं वा प्रमादतैं पूर्वकालमैं जो मैं परका विना दिया धन गिन्या पड्या भूल्या ग्रहण करनेमैं परिणाम किया कपटछलतैं ठग्या तथा जबर होय परका धन राखि मेल्या नाहीं दिया तो बहुत संक्लेश आपके अर अन्यकै उपजाय दिया तातैं घोर पाप उपजाया ताका फल नरक तिर्यंचादि गतिनिमैं परिभ्रमण अनंतकालपर्यंत दरिद्रादिक घोर दुःख होना है यातैं चोरीकरि उपजाया जो पाप कर्म ताका नाशके अर्थि अर आगानै मेरा पराया धन विना दिया ग्रहण करनेमैं परिणाम कदाचित् मत होऊ

अशरण है यामैं अनंतानंत जन्म मरण करते अनंतकाल व्यतीत भयो अर समस्त पर्यायनिमैं क्षुधा तृषा रोग वियोग मारन ताडन भोगतैं कहूं शरण नाहीं जो कोऊ कालमैं कोऊ क्षेत्रमैं कोऊ रक्षा करनेवाला नाहीं तातैं संसार अशरण है। बहुरि अशुभकर्मके बंधनकरि दुःखका देनेवाला अशुभदेहरूप पिंजरामैं फस्या हुआ अशुभ कषायनिरूप अशुभभावनिमैं लीन हुआ निरंतर अशुभका ही बंध करता अशुभहीकूं भोगै है तातैं यो संसार अशुभ है। बहुरि इस संसारमैं जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण करते करते कदाचित सुक्षेत्रमैं वास उत्तमकुल इंद्रियपरिपूर्णता सुंदररूप प्रबलबुद्धि जगतमैं पूज्यता मानता तथा राज्यसंपदा धनसंपदा सुन्दर मित्रनिका संगम आज्ञाकारी महाप्रवीण सुपुत्र मनोहर बल्लभाका संगम तथा पण्डितपना सूरपना बलवानपना आज्ञा ऐश्वर्यादिक मनोवांछित भोग नीरोग शरीरादिक कर्मके उदयकरि पा जाय तो क्षणमात्रमैं विजुलीवत् इंद्र धनुषवत् इंद्रजालिका नगरवत् नियमतैं विलाय जाय हैं। फिर अनंतानंतकालमैं हू नाहीं प्राप्त होय हैं तातैं संसार अनित्य है अर समस्त कालमैं कर्मबंधनसहित देहपिंजरमैं फस्या अनंतानंत जन्ममरणादिकनिकरि सहित है अनंतकालहूमैं दुःखका अभाव नाहीं तातैं संसार दुःख ही है। बहुरि संसारपरिभ्रमणरूप मेरा आतमा नाहीं तातैं संसार अनातमा है ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ चिंतवन करै है अहो परिभ्रमणरूप संसार है सो अशरण है अनित्य है दुःखरूप है अर मेरा स्वरूप नाहीं ऐसा संसारमैं मिथ्याज्ञानका प्रभावकरि मैं अनंतकालतैं वास करूं हूं। अब मोक्ष जो संसारतैं छूटना है सो मेरा आतमाकूं शरण है फिर अनंतानंत कालमैं हू संसारमैं आवनेकरि रहित है बहुरि शुभ है अनंत कल्याणरूप है बहुरि नित्य है अविनाशी है बहुरि अनंतानंतस्वरूप है जामैं अनंतज्ञानादि अर अनाकुलतारूप है अर मेरा आतमाका स्वरूप है पररूप नाहीं ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ संसारका अर मोक्षका स्वरूप चिंतवन करै है। साम्यभाव सहित सामायिक दोय घडी मात्र हो जाय तो महान कर्मकी निर्जरा है सामायिककी महिमा कहनेकूं इंद्र हू समर्थ नाहीं है सामायिकके

प्रभावतैं अभव्य हू ग्रैवेयिक पर्यंत उपजै हैं। सामायिक समान धर्म कोऊ हुयो न होसी यातैं सामायिक अंगीकार करना ही आत्माका हित है। अर जाकैं सामायिकादिकका पाठका ज्ञान नाहीं आवै नाहीं ते पंचनमस्कारमात्र ही एकाग्रतातैं मनवचकायकूं निश्चलकरि समस्त आरंभ कषायविषयनिका त्याग करि पंचनमस्कार मंत्रका ध्यान करता दोय घटिका पूर्ण करो। अब सामायिकके पंच अतीचार कहै हैं—

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥

अर्थ—ए पांच सामायिकका भावनिकरि अतीचार हैं सामायिक करते वचनकी संसारसंबंधी प्रवृत्ति करना सो वचनदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि शरीरकी संयमरहित चलायमानपनाकी चेष्टा सो कायदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि मनमैं आर्तरौद्रादिक चिंतवन करै सो मनोदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि सामायिककूं उत्साहरहित निरादरतैं करै सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि सामायिक करता देववंदनादिक पाठ भूलि जाय वा कायोत्सर्गादिक भूलि जाय सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचारसहित सामायिकका वर्णन किया। अब प्रोषधोपवासकूं वर्णन करै हैं—

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभिः ॥ १०६ ॥

अर्थ—पर्वणि जो चतुर्दशी अर अष्टमीका दिवसरात्रिविषै चार प्रकारका आहारका जो सम्यक् इच्छा करि त्याग करना सो प्रोषधोपवास जानने योग्य है। एकमासविषैं दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ए अनादितैं पर्व ही हैं इन पर्वनिमैं गृहस्थ व्रतसंयमसहित ही रहै जातैं धर्मात्मा संयमी हैं ते तो सदाकाल व्रती ही रहै हैं यातैं धर्ममैं अनुरागका धारक गृहस्थ एक महीनामैं चार दिन तो समस्त पापके आरंभ अर इंद्रियनिके विषयनिकूं नष्ट करि व्रतशीलसंयमसहित उपवास धारण करि चार प्रकारका आहारका त्याग करि संयम सहित तिष्ठै ताकै प्रोषधोपवास जानना। अब प्रोषधोपवासका विशेष कहैं हैं। सप्तमीके

इसवास्ते मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि परकी स्त्रीके रूप आभरण वस्त्र भाव विलासकूं राग भावतैं देखनेकी इच्छा करि तथा राग भावतैं देखी तथा संगमादिक किया तातैं उपार्जन किया घोर पाप जाका फल अनंतकालपर्यंत नरकगतिनिमैं परिभ्रमण करि अनेक भवनिमैं हजारां रोगका पावना तथा दरिद्रादि दुःख भोगना तथा बहुत कालपर्यंत कामरूप अग्निकरि दग्ध भया असंख्यात भवनिमैं कामवेदनाकरि पीडित हुआ लडि लडि मर जाना है तातैं परस्त्रीकी बांछाकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर आगामी कालमैं मेरा अन्यकी स्त्रीमें अनुराग कदाचित् मत होऊ इसवास्ते मैं पंचपरमगुरुनिका पंचनमस्कारमंत्रका ध्यान करूं हूं। बहुरि मैं अज्ञानी परिग्रहमैं बडी ममता करि शरीरादिक पुद्गलकूं मेरा मानि यामैं ही आपा जान्या तथा रागादिकभाव मोहकर्मके उदयतैं भया तिनिकूं अपना भाव मानि परद्रव्यनिमैं बडी आसक्तता करी धनधान्य कुटुम्बादिककी वृद्धिकूं अपनी वृद्धि मानी इनकी हानिकूं अपनी हानि मानी अर अब हू जायगा हाट आजीविका स्त्री पुत्र धन धान्य आभरण वस्त्रादिक हजारां वस्तुरूप परिग्रहमैं हमारा हमारा ऐसी बुद्धिमैं विपरीतता लग रही है जो आपका ज्ञान परका ज्ञान पापपुण्यका ज्ञान परलोकका ज्ञान नष्ट होय रह्या है कण्ठगत प्राण हो जाय तो हू ममता नाहीं घटै है अर जगतमैं प्रत्यक्ष देखै है जो किसीकी लार परिग्रह गया नाहीं मेरी लार जायगा नाहीं तो हू दिन प्रति बधाया चाहै है यामैं मरण करूं तहां पर्यंत किंचित् मत घट जावो इसप्रकार ही निरंतर चिंतवन रहै है इस परिग्रहरूप दावाग्निकूं संतोषरूप जलकरि नाहीं बुझाया चाहै है समस्त पापनिका मूल एक परिग्रहमैं मूर्छा है मैं अज्ञानी याहीका आरम्भमैं याहीमैं ममता धारण करनेकरि अनंतकालमैं दुर्लभ ऐसा मनुष्य जन्म जिनधर्म पाया ताहि बिगाडि अनंतभवनिमैं नरक तिर्यंच गतिनिकै दुःखकूं अंगीकार किया ताका मेरे बडा पश्चात्ताप है अब ऐसे घोर पापकर्मके नाश करनेका उपाय भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण विना कोऊ दूजा है नाहीं अर आगामी कालहूमैं परिग्रहमैं विरक्तताका करानेवाला

भगवान पंचपरमेष्ठी विना कोऊ है नाहीं यातैं मूर्छाका नाशके अर्थि परम संतोष उपजनेके अर्थि परिग्रहका त्यागके अर्थि पंचनमस्कारका ध्यानपूर्वक कायोत्सर्ग करूं हूं ॥ अब सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ कैसा है सो कहै हैं—

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि । चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावं ॥ १०२ ॥

अर्थ—गृहस्थ जे हैं तिनके सामायिकके अवसरविषै आरम्भकरि सहित समस्त ही परिग्रह नाहीं है यातैं सामायिक करता गृहस्थ जो है सो वस्त्रसहित मुनिकी ज्यों यतिका भावकूं प्राप्त होय है। भावार्थ—सामायिकके अवसरमैं समस्त आरम्भ अर समस्त परिग्रह नाहीं है परन्तु गृहस्थ है यातैं वस्त्र पहरै है तातैं वस्त्रविना अन्य प्रकार तो मुनितुल्य ही है मुनिकै नग्नपना होय है याकै वस्त्रधारण है एता ही अंतर है तातैं मुनि नाहीं कह्या जाय है। बहुरि जो उपसर्ग परीषह आजाय तो मुनीश्वरनिकी ज्यों धीरता धारण करि सकै कायर नाहीं होय ऐसैं सूत्र कहै हैं—

शीतोष्णदंशमशकपरिषहमुपसर्गमपि च मौनधराः । सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ १०३ ॥

अर्थ—सामायिककूं धारण करता गृहस्थ मौनकूं धारण करै है अर मनवचनकायकूं नाहीं चलायमान करता शीत उष्ण देशमशकादि परीषह अर चेतन अचेतनकृत उपसर्गनिकूं सहै है। भावार्थ—सामायिक करनेके अवसरमैं जो शीतका उष्णताका वर्षाका पवनका डांस मांछर दुष्टनिके दुर्वचन रोगपीडादिका परीषह आजाय तथा दुष्ट वैरीकरि किया तथा सिंह व्याघ्र सर्पादिक तथा अग्निजलादिकजनित उपसर्ग आजाय तो बडा धैर्य धारणकरि मनवचनकायकूं साम्यभावतैं नाहीं चलायमान करता मौनसहित समस्तकूं सहै है। अब सामायिक करता संसारका स्वरूपकूं अर मोक्षके स्वरूपकू ऐसैं चिंतवन करै है—

अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम्। मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ १०४ ॥

अर्थ—सामायिक धारता गृहस्थ संसारकूं ऐसे चिंतवन करै यो चतुर्गतिमैं परिभ्रमणरूप संसार

अशरण है यामैं अनंतानंत जन्म मरण करते अनंतकाल व्यतीत भयो अर समस्त पर्यायनिमैं क्षुधा तृषा रोग वियोग मारन ताडन भोगतैं कहूं शरण नाहीं जो कोऊ कालमैं कोऊ क्षेत्रमैं कोऊ रक्षा करनेवाला नाहीं तातैं संसार अशरण है। बहुरि अशुभकर्मके बंधनकरि दुःखका देनेवाला अशुभदेहरूप पिंजरामैं फस्या हुआ अशुभ कषायनिरूप अशुभभावनिमैं लीन हुआ निरंतर अशुभका ही बंध करता अशुभहीकूं भोगै है तातैं यो संसार अशुभ है। बहुरि इस संसारमैं जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण करते करते कदाचित सुक्षेत्रमैं वास उत्तमकुल इंद्रियपरिपूर्णता सुंदररूप प्रबलबुद्धि जगतमैं पूज्यता मानता तथा राज्यसंपदा धनसंपदा सुन्दर मित्रनिका संगम आज्ञाकारी महाप्रवीण सुपुत्र मनोहर वल्लभाका संगम तथा पण्डितपना सूरपना बलवानपना आज्ञा ऐश्वर्यादिक मनोवांछित भोग नीरोग शरीरादिक कर्मके उदयकरि पा जाय तो क्षणमात्रमैं विजुलीवत् इंद्र धनुषवत् इंद्र जालीका नगरवत् नियमतैं विलाय जाय हैं। फिर अनंतानंतकालमैं हू नाहीं प्राप्त होय हैं तातैं संसार अनित्य है अर समस्त कालमैं कर्मबंधनसहित देहपिंजरमैं फस्या अनंतानंत जन्ममरणादिकनिकरि सहित है अनंतकालहूमैं दुःखका अभाव नाहीं तातैं संसार दुःख ही है। बहुरि संसारपरिभ्रमणरूप मेरा आतमा नाहीं तातैं संसार अनात्मा है ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ चिंतवन करै है अहो परिभ्रमणरूप संसार है सो अशरण है अनित्य है दुःखरूप है अर मेरा स्वरूप नाहीं ऐसा संसारमैं मिथ्याज्ञानका प्रभावकरि मैं अनंतकालतैं वास करूं हूं। अब मोक्ष जो संसारतैं छूटना है सो मेरा आतमाकूं शरण है फिर अनंतानंत कालमैं हू संसारमैं आवनेकरि रहित है बहुरि शुभ है अनंत कल्याणरूप है बहुरि नित्य है अविनाशी है बहुरि अनंतानंतस्वरूप है जामैं अनंतज्ञानादि अर अनाकुलतारूप है अर मेरा आतमाका स्वरूप है पररूप नाहीं ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ संसारका अर मोक्षका स्वरूप चिंतवन करै है। साम्यभाव सहित सामायिक दोय घडी मात्र हो जाय तो महान कर्मकी निर्जरा है सामायिककी महिमा कहनेकूं इंद्र हू समर्थ नाहीं है सामायिकके

प्रभावतैं अभव्य हू ग्रैवेयिकपर्यंत उपजै हैं। सामायिक समान धर्म कोऊ हुयो न होसी यातैं सामायिक अंगीकार करना ही आत्माका हित है। अर जाकैं सामायिकादिकका पाठका ज्ञान नाहीं आवै नाहीं ते पंचनमस्कारमात्र ही एकाग्रतातैं मनवचकायकूं निश्चलकरि समस्त आरंभ कषायविषयनिका त्याग करि पंचनमस्कार मंत्रका ध्यान करता दोय घटिका पूर्ण करो। अब सामायिकके पंच अतीचार कहै हैं—

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥

अर्थ—ए पांच सामायिकका भावनिकरि अतीचार हैं सामायिक करते वचनकी संसारसंबंधी प्रवृत्ति करना सो वचनदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि शरीरकी संयमरहित चलायमानपनाकी चेष्टा सो कायदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि मनमैं आर्तरौद्रादिक चिंतवन करै सो मनोदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि सामायिककूं उत्साहरहित निरादरतैं करै सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि सामायिक करता देववंदनादिक पाठ भूलि जाय वा कायोत्सर्गादिक भूलि जाय सो असमरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचारसहित सामायिकका वर्णन किया। अब प्रोषधोपवासकूं वर्णन करै हैं—

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभिः ॥ १०६ ॥

अर्थ—पर्वणि जो चतुर्दशी अर अष्टमीका दिवसरात्रिविषै चार प्रकारका आहारका जो सम्यक् इच्छा करि त्याग करना सो प्रोषधोपवास जानने योग्य है। एकमासविषैं दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ए अनादितैं पर्व ही हैं इन पर्वनिमैं गृहस्थ व्रतसंयमसहित ही रहै जातैं धर्मात्मा संयमी हैं ते तो सदाकाल व्रती ही रहै हैं यातैं धर्ममैं अनुरागका धारक गृहस्थ एक महीनामैं चार दिन तो समस्त पापके आरंभ अर इंद्रियनिके विषयनिकूं नष्ट करि व्रतशीलसंयमसहित उपवास धारण करि चार प्रकारका आहारका त्याग करि संयम सहित तिष्ठै ताकै प्रोषधोपवास जानना। अब प्रोषधोपवासका विशेष कहैं हैं। सप्तमीके

दिन वा त्रयोदशीके दिन मध्याह्नकाल पहली एक वार भोजनपानादिक करि समस्त आरंभ वाणिज सेवा लेन देनका त्याग करि देहादिकमैं ममत्व त्यागि एकांत वस्तिका तथा जिनमंदिरमैं एकांतस्थान वा वनके चैत्यालय वा शून्य गृह मठादिक वा प्रोषधोपवास करनेका स्थानमैं जाय समस्त विषय कषायनिका त्याग करि मनवचनकायकी प्रवृत्तिकूं रोकि धर्मध्यान करिकैं वा स्वाध्याय करिकैं सप्तमी वा त्रयोदशीका अर्द्ध दिनकूं व्यतीत करै। पाछैं संध्याकाल संबंधी देववंदनादिक करि रात्रिनै धर्मकथा वा जिनेन्द्रका स्तवनादिक करि रात्रि व्यतीत करै वा धर्मध्यान करता शोधित संथरामैं अल्पकाल प्रमाद टालि रात्रि व्यतीत करै अष्टमी चतुर्दशीका प्रातःकालमैं सामायिकादिक वंदना करि तथा प्राशुक द्रव्यनितैं पूजन करि शास्त्रका अभ्यासकरि भावनाका चिंतवनकरि धर्मध्यानसहित अष्टमी चतुर्दशीका दिन अर समस्त रात्रिकू व्यतीतकरि नवमी वा पूर्णिमाका प्रभातसंबंधी कर्म क्रिया करि पूजनादि वंदना करि उत्तम मध्यम जघन्य पात्रमैं कोऊ पात्रका लाभ होय ताकूं भोजन कराय आप पारनौ करै। ऐसैं षोडश प्रहर धर्मसहित व्यतीत करै ताकैं उत्कृष्ट प्रोषधोपवास होय है। तथा कार्तिकेयस्वामी कह्या है जो अष्टमी चतुर्दशीके दिन स्नान विलेपन आभूषण स्त्रीसंसर्ग पुष्प अतर फुलेल धूपदीपादिकानितैं त्याग जो ज्ञानी वीतरागतारूप आभरण करि भूषित हुआ दोऊ पर्वनिमैं सदा काल उपवास करै वा एक वार भोजन करै वा नीरस भोजन करै ताकै प्रोषधोपवास होय है तथा अमितगतिश्रावकाचारमैं परवीका दिनमैं उपवास अनुपवास एकभुक्त ऐसैं तीन प्रकार कह्या है। तिनमैं चार प्रकार आहारका त्यागकूं उपवास कह्या अर एक वार जल ग्रहण करै ताकूं अनुपवास कह्या अर एक वार अन्न जल ग्रहण करना ताकूं एकभुक्त ऐसी संज्ञा है परंतु तात्पर्य ऐसा जानना जो अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय करिकैं धर्ममैं लीन भया उपवास करै तथा आगैं प्रोषधप्रतिमा चतुर्थी कहसी तिसविषै तो षोडशप्रहरका नियम जानना अर दूजी व्रतप्रतिमामैं यथाशक्ति व्रत तप संयम धारण करि पर्वांमैं धर्मध्यानसहित रहना ॥ अब उपवासमैं और हू वर्णन करै हैं—

पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणां । स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥ १०७ ॥

अर्थ—उपवासके दिन हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करि रहै अर अलंक्रिया कहिये आभरणादिक मंडनका त्याग करै अर गृहकार्यका आरंभ जीविकाका आरंभ छांडै अर सुगंधि केशर कपूरादिक तथा अतर फुलेलादिक गंधके ग्रहणका त्याग करै अर पुष्पनिका ग्रहण करनेका त्याग करै बहुरि स्नान करनेका नेत्रमें अंजन आंजनेका अर नास लेनेका त्याग करै तथा और हू नृत्य वादित्रके बजावनेका देखनेका श्रवणका त्याग करै। तथा और हू पंच इंद्रियनिके भोगका त्याग करै जातैं उपवास करि है सो इंद्रियनिका मद मारनेकूं अर इंद्रियनिका विषयनिमैं गमन है ताके रोकनेकूं अर कामके मारनेकूं प्रमाद आलस्यादिकनिके रोकनेकूं नष्ट करनेकूं आरंभादिकतैं विरक्त होनेकूं परीषह सहनेमैं सामर्थ्य होनेकूं धर्मके मार्गतैं नाहीं चिगनेकूं जिह्वाइंद्रिय उपस्थइंद्रियके दंड देनेकूं उपवास करिये है अर अपनी प्रशंसा वा लाभ वा परलोकमैं राज्यसंपदादिक प्राप्त होनेकूं उपवास नाहीं करिये है। केवल विषयानुराग घटावनेकूं शक्ति बधावनेकूं उपवास करिये है। जातैं इंद्रियां खानपानादिकके नाना स्वादमैं निरंतर प्रवर्तैं हैं उपवास करनेतैं रसादिकके भोजनमै लालसा नष्ट होजाय निद्राका विजय होजाय काम मार्‍या जाय तातैं उपवासका बडा प्रभाव जानि उपवास करिये है। अब उपवासका दिन कैसे व्यतीत करै सो कहै हैं—

धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान् । ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ १०८ ॥

अर्थ—उपवास करता गृहस्थ है सो निरालसी हुआ संता ज्ञानका अभ्यासमैं अर धर्मध्यानमैं तत्पर होहू अर अतितृष्णारूप हुआ धर्मरूप अमृतका पान कर्णइंद्रियकरि करि हू। अर अन्य भव्य जीवनिकूं धर्मरूप अमृतका पान करावो। भावार्थ—उपवासके दिन धर्मकथा श्रवण करो तथा अन्य धर्मात्मानिकूं धर्मश्रवण करावो ज्ञानका अभ्यासकरि वा धर्मध्यानमैं लीनता करि ही उपवासका अव-

सर व्यतीत करो आलस्य निद्राकरि व्यतीत मत करो। तथा आरंभादिकमैं विकथामैं काल व्यतीत मत करो। उपवासका अर्थ कहै हैं—

चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः। स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥ १०९ ॥

अर्थ—असन पान खाद्य स्वाद्य ये चार प्रकारके आहार इनका त्याग सो उपवास है अर धारणाका दिन विषैं अर पारणाका दिनविषैं एकवार भोजन करना सो प्रोषध कहिये है ऐसैं षोडश प्रहर भोजनादिक आरंभ छांडि पाछैं भोजनादिक आरंभ आचरण करै सो प्रोषधोपवास है ॥ अब उपवासके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे। यत्प्रोषधोपवासे व्यतिलङ्घनपञ्चकं तादिदं ॥११०॥

अर्थ—जो प्रोषधोपवासके पंच अतीचार हैं ते ऐसैं जानने, नेत्रनितैं देख्यां विना अर कोमल उपकरणतैं शुद्ध किये विना जो पूजाके तथा स्वाध्यायके उपकरण ग्रहण करना ॥ १ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना उपकरणनिका मेलना अथवा शरीरके हस्त पदादिक पसारना ॥ २ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना आस्तरण जो शयन करनेका उपकरण बिछावना बैठना ॥ ३ ॥ ऐसैं ए तीन अतीचार हैं। बहुरि उपवासमैं अनादर करना उत्साहित रहित करना सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि उपवासके दिन क्रिया पाठ करनेकूं भूल जाना सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं उपवासके पंच अतीचार कहे ते टालने योग्य हैं। अब वैयावृत्य नामा शिक्षाव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं इस व्रतकूं अतिथिसंविभाग नाम हू कहिये है—

दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये। अनपेक्षितोपचारोपाक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १११ ॥

अर्थ—यहां परमागममैं दानहीकूं वैयावृत्य कहिये है जाकै तपही धन है अर्थात् जो इच्छानिरोधादिक तपहीकूं अपना अविनाशी धन जानै है जातैं तप विना समस्त कर्मकलंकमलरहित आत्माका शुद्ध

स्वभावरूप अविनाशी धन नाहीं पाइये तातैं रागादिक कषायमलका दग्ध करनेवाला ऐसा तपरूप धन ग्रहण किया अर जो संसारमैं नष्ट करनेवाला जड अचेतन विनाशीक सुवर्णादिकका त्याग किया ऐसा जो तपकी निधि जो परम वीतरागी दिगंबर यतिनकूं आप दातारके अर पात्रके धर्मप्रवृत्तिके अर्थि जो दान देना सो वीतरागी यतीनकी वैयावृत्य है, कैसे हैं दिगंबर यतैं सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र इत्यादिक गुणनिका निधान हैं बहुरि कैसे हैं यातैं नाहीं है अंतरंग बहिरंग परिग्रह जिनके ऐसै मठ मकान उपासरा आश्रमादिकरहित एकाकी अथवा गुरुजनाकी चरणाकी लार कदे वनमें कदे पर्वतानिकी निर्जन गुफानिमैं कदे घोर वनमैं नदीनके तटनिमैं नियम रहित है नित्य विहार जिनका असंयमीनिका गृहस्थानिका संगमरहित आत्माकी विशुद्धता जो परम वीतरागताकूं साधता अर लौकिकजनकृत पूजा स्तवन प्रशंसादिककूं नाहीं चाहता परलोकमैं देवलोकादिकनिके भोगनिकूं तथा इंद्रपनाका अहिमिंद्रपनाका ऐश्वर्यकूं रागरूप अंगारेनिकरि तप्त महान् आताप उपजावनेवाली तृष्णाके बधावनेवाले जानि परम अतींद्रिय आकुलतारहित आत्मीक सुखकूं सुख जानता देहादिकमैं ममतारहित आत्मकार्य साधै है ऐसे साधुजनका वैयावृत्यका लाभ अनंतकालमैं दुर्लभ है। कैसे हैं साधु यद्यपि इस देहतैं अत्यंत निर्ममत्व है तो हू देहकूं रत्नत्रयका सहकारी कारण जानि रस नीरस करडा नरम आहार देय रत्नत्रयका साधनकरि धर्मके अर्थि इस कृतघ्नदेहकी रक्षा करै हैं जो अकालमैं देह नष्ट होय जायगा तो मरकरि देवादिक पर्यायमैं असंयमी जाय उपजूंगा तहां असंख्यातकालपर्यंत असंयमी हुआ कर्मका बंध करूंगा तातैं जो आहारादिकका त्याग करि इस मनुष्यपनाका देहकूं मारूंगा तो कर्ममय कार्माण देह नाहीं मरैगा इस देहकूं मारूंगा तो नवीन और देह धारण करूंगा तातैं इन समस्त शरीरके उत्पन्न करनेका बीज जो कर्ममय कार्माणदेह है याके मारनेमैं यत्न करूं यातैं कषायनिकूं जीतता विषयानिका निग्रह करता छियालीस दोषटालि बत्तीस अंतरायरहित चौदहमलका परिहार

करिकैं आपके निमित्त नाहीं किया ऐसा शुद्ध आहारकी योग्यता मिल जाय तो अर्द्ध उदर तो भोजनतैं भरै चतुर्थभाग जलतैं भरै चतुर्थभाग ध्यान अध्ययन कायोत्सर्गादिकमैं सुखतैं प्रवृत्तिके अर्थि खाली राखै है। न्यौत्या बुलाया जाय नाहीं याचना करै नाहीं हस्तादिककी समस्या करै नाहीं ऐसैं साधुनकूं जो आहारादिकका दान सो वैयावृत्य है। कैसाक है दान अनपेक्षितोपचारोपक्रिय जो प्रत्युपकार कहिये हमारा हू कुछ उपकार करैगा वा उपक्रिय कहिये हमकूं प्रसन्न होय विद्या मंत्र औषधादिक देगा तथा मुनीश्वरनिके अर्थि देनेतैं मेरी नगरमैं दातापनाकरि मान्यता होजायगी वा राज्यमान्य हो जाऊंगा वा मेरे घरमैं अटूट धन हो जायगा तातैं आगैं पंचाश्चर्य भये हैं मेरे हू लाभ होयगा ऐसा विकल्प अर वांछा नाहीं करता केवल रत्नत्रयका धारकनिकी भक्तिकरि आपकूं कृतार्थ मानि अपना मनवचनकायकूं तथा गृहचारा पायाकूं कृतार्थ मानता दान करै है आनंदसहित आपकूं कृतकृत्य मानै है सो वैयावृत्य है। वैयावृत्यका अन्य हू स्वरूप कहै हैं—

व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात्। वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनां ॥ ११२ ॥

अर्थ—संयमीनके जो व्यापत्तिव्यपनोद कहिए नाना प्रकारकी जे आपदा ताहि दूर करना अर संयमीनका चरणमर्द्दनादिक करना और हू जो संयमीनका गुणमैं अनुराग करि यावन्मात्र उपकार करना सो वैयावृत्य है। भावार्थ—साधुनिके ऊपरि कोऊ देव मनुष्य तिर्यंच वा अचेतनकरि किया उपसर्ग आया होय तो अपनी शक्तिप्रमाण उपसर्ग दूर करै तथा चोर भील दुष्टादिक मार्गमैं खेदित किया होय अर परिणाम क्लेशित होय गया होय तिनकूं धैर्य धारण करावना तथा मार्गकरि खेदित भया होय ताका पादमर्दनादिक करना रोगी होय ताका संयम मलीन नाहीं होय तैसैं यत्नाचारतैं आसन शय्या वस्तिकाका सोधना यत्नाचारपूर्वक उठावना बैठावना शयन करावना मलमूत्रादिक कराय देना जो अबुद्धिपूर्वक मलमूत्रादिक अयोग्य स्थानमैं वा वस्तिकामैं भया होय तो यत्नतैं अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपना

तथा कफ नाशिका मलादिककूं पूंछना उठाय अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपणा आहार औषधादिक संयमीके योग्य होय तिनकूं अवसरमैं देय वेदना दूर करना तथा कालके योग्य बाधारहित वस्तुका देना वेदना करि चलायमान चित्त होगया होय तो उपदेश देय चित्तकूं थांभना धर्मकथा करना अनुकूल प्रवर्तना गुणनिका स्तवन करना ऐसैं संयमीनिका गुणनिमैं अनुराग करि जेता उपकार करना सो समस्त वैयावृत्य है। अब वैयावृत्यमैं प्रधान आहारदान है ताकूं कहिये हैं—

नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन। अपसूनारम्भाणामार्याणामिष्यते दानं ॥ ११३ ॥

अर्थ—सप्त गुणनिकरि सहित जो दातार है सो सून अर आरम्भ करि रहित जे आर्य कहिये सम्यग्दर्शनके धारक मुनि तिनकूं नवपुण्य परिणामनिकरि जो प्रतिपत्ति कहिये गौरव आदर करि अंगीकार करना ताहि दान कहिये है। भावार्थ—दान करना सो तीन प्रकारके पात्रनिकूं करना तिनमैं जो चाकी चूल्हा ओखली बुहारी परींडा ये तो पंच सून अर द्रव्यका उपार्जनकूं आदि लेय समस्त आरंभ अर पंच सून करि रहित तो उत्तम पात्र दिगम्बर साधु है। अर व्रतनिका धारक श्रावक मध्यमपात्र है अर व्रतकरि रहित अर सम्यक्त्वकरि सहित जघन्य पात्र है तिनमैं उत्तमपात्रादिकनिकूं दानका देनेवाले दातारके सप्त गुण हैं। दान देय इस लोकसंबंधी विख्याततता लोकमान्यता राजमान्यता धनधान्यादिककी वृद्धि यशकीर्तनादिक इस लोकसंबंधी फल न चाहिये ॥ १ ॥ बहुरि दातार क्रोधकषायकूं नाहीं प्राप्त होय जो बहुत लेनेवाले हैं कौन कौनकूं देवैं ऐसा क्रोध नाहीं करै मुनि श्रावकादिकनिकूं दान देना ॥ २ ॥ बहुरि कपटकरि सहित दान नाहीं करै कहना और, करना और, लोकनिकूं भक्ति दिखावैमाहि संक्लेशित न होना ऐसा कपटकरि रहित दान करै ॥ ३ ॥ अन्य दातारतैं ईर्ष्यारहित होय दान करै जो इसने कहा दिया है मैं ऐसा दान करूं जो मेरा दानतैं इसका यश घटि जाय ऐसैं ईर्ष्याभावकरि दान नाहीं करै ॥ ४ ॥ अर दान देय विषाद करै नाहीं जो कहा करूं मैं समस्तमैं उच्चता राखूं हूं अर नाहीं दूं तो मेरी उच्चता

घटि जाय ऐसैं विषादी हुआ नाहीं देवै ॥ ५ ॥ बहुरि पात्रका संगम मिल जाय या निर्विघ्न दान होजाय तिसका अपूर्व निधि पायेकासा आनंद मानना सो मुदितभाव जानना । दान देनेका मद अहंकार नाहीं करना सो निरहंकारता नाम गुण है ॥ ७ ॥ ऐसैं पात्र दान करता दातार सप्तगुण सहित होय है। बहुरि पात्रकूं दान देवै सो मुनिश्रावकका जैसा पद होय तिस परिमाण नवधा भक्तिकरि देवै, नव प्रकार भक्तिके नाम—संग्रह ॥ १ ॥ उच्चस्थान ॥ २ ॥ पादोदक ॥ ३ ॥ अर्चन ॥ ४ ॥ प्रणाम ॥ ५ ॥ मनःशुद्धि ॥ ६ ॥ वचनशुद्धि ॥ ७ ॥ कायशुद्धि ॥ ८ ॥ एषणाशुद्धि ॥ ९ ॥ तिनमैं मुनीश्वरनिकूं तथा क्षुल्लककूं तो तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ याका अर्थ खडा रहो खडा रहो खडा रहो ऐसैं तीन बार कहना जामैं अति पूज्यपनातैं अति अनुराग जाका चित्तमैं होयगा सो ही तीन बार आदरपूर्वक कहैगा अन्य हू श्रावकादिक योग्यपात्र घर आवैं तो आइये पधारिये विराजिये इत्यादिक आदरके वचनका कहना सो संग्रह वा प्रतिग्रह है ॥ १ ॥ बहुरि उच्चस्थान देंना ॥२॥ अर प्राशुक प्रमाणकि जलसूं चरण धोवना ॥ ३ ॥ जैसा अवसर जैसा पात्र ताकै योग्य पूजन स्तवन पूज्यपनाके वचन कहना ॥ ४ ॥ अर मुनि वा श्रावकाकी योग्यता प्रमाण नमस्कार आदि करना ॥५॥ मनकी शुद्धता करनी ॥६॥ वचनकी शुद्धता करनी अयोग्य वचन नाहीं बोलना ॥७॥ कायशुद्धि यत्नाचार सहित चलना उठना इत्यादिक ॥ ८ ॥ अर भोजनशुद्धि पात्रके योग्य होय सो देना यो ऐषणा शुद्धि है ॥ ९ ॥ ऐसे जिन सूत्रके अनुसार पात्रके योग्य देशकाल के योग्य आहार देना जातैं पात्रके गुणनिमैं हर्ष अनुराग विना देना निष्फल है, अर जाकूं धर्म प्रिय होयगा ताकै धर्मात्मामैं अनुराग होयहीगा ऐसा नियम है । अर मुनीश्वरनिके जिनधर्मीकी नवधाभक्तिहीतैं परीक्षा होय है जाकै नवधाभक्ति नाहीं ताका हृदयमैं धर्म हू नाहीं धर्मरहित के मुनीश्वर भोजन हू नाहीं करै है। अन्य हू धर्मात्मा पात्र गृहस्थादिक हैं ते हू आदर विना लोभी होय धर्मका निरादर कराय दान वृत्तितैं भोजनादिक कदाचित नाहीं ग्रहण करै हैं जैनीनिका ही दीनतारहित परम

संतोष धारण करना है। अर दातार है सो ऐसा आहार औषधि शास्त्र वस्तिका वस्त्रादिक द्रव्यका दान करै जातैं रागद्वेष बधै नाहीं मद बधै नाहीं जातैं मोह काम आलस्य चिंता असंयम भय दुःख अभिमानका करनेवाला द्रव्यकूं देना योग्य नाहीं। जिस द्रव्यके देनेतैं स्वाध्याय ध्यान तप संतोषकी वृद्धि होय सो द्रव्य देने योग्य है। जातैं पात्रका दुख मिटि जाय रोग नष्ट होजाय परिणामका संक्लेश नष्ट होजाय ऐसा द्रव्य देना योग्य है। इहां अन्य विशेष जानना, दानविषै पांच प्रकार जानना दाता ॥ १ ॥ देय ॥ २ ॥ पात्र ॥ ३ ॥ विधि ॥ ४ ॥ फल ५ दाता तो कैसाक होय सप्त गुणका धारक होय धर्ममैं तत्पर पात्रनिके गुणनिके सेवनमैं लीन भया पात्रकूं अंगीकार करै प्रमादरहित ज्ञानसहित शांतपरिणामी हुआ पात्रकी भक्तिमैं प्रवर्तै सो भक्तिक गुण दातारका है ॥ १ ॥ देनेमैं अति आसक्त हुआ पात्रका लाभकूं परम निधान लाभ मानै सो दातारका तुष्ट गुण है ॥ २ ॥ साधुनिकूं दान होजाना इसलोक परलोकमैं परम कल्याण है ऐसा परिणाममैं गाढ सो दातारका श्रद्धा नाम गुण है ॥ ३ ॥ जो द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं सम्यक् विचार योग्य वस्तुका दान करै सो दातारका विज्ञान गुण है ॥ ४ ॥ दानकूं देय दानका प्रभावतैं संसारसंबंधी धन राज्य ऐश्वर्य विद्या मंत्र यश कीर्तनादि फलकूं नाहीं चाहै सो दातारका अलोलुप गुण है ॥ ५ ॥ जाकै अल्प हू वित्त होय तो हू दान देनेमैं बडा उद्यम होय जाका दानकूं देखि धनाढ्य पुरुषनिके हू आश्चर्य उपजै सो दातारका सात्विकगुण है ६ कलुषताका महान कारण हू आजाय तो हू किसीके अर्थि रोष नाहीं करै सो दाताका क्षमा गुण है ७ और हू मुनि तथा श्रावक तथा अव्रत सम्यग्दृष्टी ये तीन प्रकारके पात्र तिनके अर्थि देनेवाले उत्तम दातारके अनेक गुण हैं। विनयवान होय विनयरहितका दान निष्फल है जातैं कुछ देनेकूं नाहीं होय तो विनय करना ही महादान है। सत्कार करना प्रिय वचन बोलना स्थान देना गुण स्तवन करना यो ही बडो दान है धर्ममैं प्रीति होय दानका अनुक्रमका ज्ञाता होय दानका कालकूं जाननेवाला होय, जिनसूत्रका जाननेवाला होय भोगनिकी वां-

छारहित होय समस्त जीवनिका दयालु होय रागद्वेषकी मंदता जाकै होय सार असारका जाननेवाला होय समदर्शी होय इंद्रियानिकूं जीतनेवाला होय आया परीषहतैं कायरतारहित होय अदेखसका भावरहित होय स्वमत परमतका ज्ञाता होय प्रियवचनसहित होय व्रतीनिका पवित्र गुणकरि जाका चित्त व्याप्त होय लोकव्यवहार अर परमार्थ दोऊनिका जाननेवाला होय सम्यक्त्वादि गुणसहित होय अहंकारादि मदरहित होय वैयावृत्यमैं उद्यमी होय ऐसा उत्तम दातार प्रशंसायोग्य है । बहुरि जाका हृदयमैं निरंतर ऐसो विचार रहै कि जो द्रव्य व्रतीनिकी सेवामै लागै तथा साधर्मी जननिका उपकारमैं श्रावक जननिके आपदा दुःख निवारनमैं धर्मके बधावनेमैं धर्ममार्गके चलावनेमैं लागैगा सो धन मेरा है। अन्य संसारके कार्यनिमै विषय भोगानिमैं कुंटुंबके विषय कषाय साधनेमैं जो धन खर्च होय सो केवल बंधके करनेवाला संसारसमुद्रमैं डबोनेवाला है ये कुंटुंबके धन खाय ते तो दायादार हैं धन बटावनेवाले हैं जबरीतैं धन लूटनेवाले हैं राग द्वेष क्रोधादि कषाय उपजाय व्रत संयमका घात करनेवाले हैं अर मोकूं पापमैं प्रेरणा करनेवाले हैं अर मेरे हू इनका संयोगतैं ऐसा अज्ञानरूप अंधकार छाया है जातैं धर्म अधर्म न्याय अन्याय यश अपयश कछू नाहीं दीखै है। स्त्री पुत्रादिकके विषय साधनेकूं अन्य निर्बल तथा भोले अज्ञानी जीवनिका धनके ठगनेमैं लूट लेनेमैं परिणाम उद्यमी होय जाय हैं। इस कुटुंबकूं धन वस्त्र आभरण भोजनादिककरि तृप्ति करनेके अर्थि झूठमैं चोरीमैं निरंतर परिणाम लग्या रहै हैं यातैं अब भगवान वीतरागका धर्मकूं पाय कुटुंबके अर्थि धनका उपार्जनके अर्थि अन्यायमैं अनीतिमैं तो नाहीं प्रवर्तन करना जो न्यायमार्गतैं धनका उपार्जन होइगा तिसमेंतैं मेरा कुंटुंबका अर धर्मके अर्थि दानका विभाग करि जीवनका दिन व्यतीत करूंगा । धन यौवन जीतव्य क्षणभंगुर है अवश्य जायगा मरण अचानक आवगा धन संपदा कुंटुंबादि कोऊ लार नाहीं जायगा। मेरा दान शील तप भावनाकरि उपजाया पुण्य एक परलोकमैं मेरा सहायी होय लार जायगा जो इहां

समस्त सामग्री मिली है सो पूर्वजन्ममैं जैसा दान दिया तैसी फली है। अब दानके देनेमैं धर्मात्मानिकी सेवामें दुःखित बुभुक्षितनिके उपकारमैं प्रवर्तूंगा तो परलोकमैं समस्त सुखकूं प्राप्त हूंगा मोक्षमार्गकी सम्यग्ज्ञानादिक सामग्रीकूं प्राप्त हूंगा भोजन तो दानपूर्वक भक्षण करै ताका भोजन करना सफल है अपना उदर भरना तो पशुके हू है। जाकै गृहमैं पात्रदान है ताका गृहाचार सफल है दान विना पशुनिके हू रहने योग्य विल होय ही है। पक्षीनकै घूंमला होय ही हैं। समुद्रमैं जल हू बहुत अर रत्न हू बहुत परंतु जल तो महाक्षार अर रत्न मगर मच्छादिकन करि व्याप्त दोऊ उपकार विना निष्फल हैं। तैसैं धनवान कृपणका धन परके उपकार रहित है सो निष्फल है। जो गृहस्थ धन पाय साधर्मीनिका उपकारमें दीन अनाथानिके सत्कारमैं नाहीं खरच किया सो यो धन थाको नाहीं यो धन तो किसी अन्य पुण्यवानको है यो तो रखवालो भयो चोकसी करै है। धनका स्वामी तो अन्य ही पुण्यवान् है। जो दान भोगमैं लगावेगा जाकै घरमैं पात्र आजाय अर देनेका सामग्री होय फिर नाहीं दिया जाय ताकै हस्तमैं चिंतामणिरत्न नष्ट भया जान हू। जो धनकूं पाय दानमैं नाहीं प्रवर्तै हैं सो मूढ अपने आत्माकूं ठगे है। धनकूं दानमैं लगावे है सो धनका स्वामी है जाका परिणाम दानका देनेमैं पात्रके हेरनेमैं निरंतर प्रवर्तै है तिनके दानका संयोग नाहीं होय तो हू निरंतर दान ही है। जो द्रव्यकूं होते वा बहुत होते हू पात्रकूं पाय अतिभक्तितैं देवै है सो दातार है। भक्ति रहितके दातापना नाहीं होय है।

बहुरि अवसर टालि अकालमैं दान देहै तिनकै अकालमें बोया बीजकी ज्यों निष्फल होय है अर जो अपात्रमैं दान देहै ताको दान खारडी भूमिमैं बोया बीजकी ज्यों निरर्थक है। अथवा दुष्टकूं दिया दान सर्पकूं पाया दुग्ध मिश्रीकी ज्यों दातारने संसारके घोर दुःख मरण आताप देनेकूं विष समान परिणमै है बहुरि अपना भाग्यप्रमाण जेता धन मिलै तितनामैं दानका विभागमैं परिणाम करै ऐसा नाहीं विचारै जो मेरे पास अधिक धन होय तो अधिक दान करूं ऐसैं दान वास्ते अभिमानी होय धनकी

बांछा मत करो। जेता आपके लाभांतरायका क्षयोपशमसूं लाभ भया तेतामैं संतोष करि अधिककी बांछा नाहीं करना सो ही बडा दान है। आपकूं जो न्यायपूर्वक द्रव्य प्राप्त भया तिसमैं जाका निरंतर ऐसा परिणाम रहै जो मेरा धनमैंतैं कोऊके अर्थि आजाय तो कुमावना मेरा सफल है अपने गृहके खरचमैं लेनेमैं देनेमैं कोई मोतैं कुछ कुमाय ले तो ही हमारे बड़ा लाभ है ऐसा परिणाम दातारका रहै है अर जो दान देय सो हर्षितचित्त होय देवै, जो देवै भी अर क्रोधकरि देवै अपमानकरि देवै तिरस्कारके वचन कहि देवै रोषकरि देवै दूषण लगाय देवै तिस दातारके इसलोकमैं तो कलह अर अपयश होय है परलोकमैं अशुभकर्मका फलतैं दारिद्र अपमानादिक अनेक भवनिमैं प्राप्त होय है। अब देनेयोग्य नाहीं ऐसे खोटे दान कुदान ही हैं तिनिकूं देना योग्य नाहीं भूमिदान देना योग्य नाहीं जामैं हल फावडा खुरपादिकनिकरि भूमि विदारन करिये अर महान् हिंसा प्रवर्तै महा आरंभ पंचेन्द्रियादिक सर्प मूषा सूर हिरणादि बडे बडे जीवनिकूं धान्यादिक फलके बाधक मारियै हैं भूमिकी ममताकरि भाई भाई परस्पर मारि मरजाय तीव्ररागको कारण ऐसा भूमिदानतैं महाघोरपापका बंध जानि बहुरि महाहिंसाका कारण तातैं अनेक हिंसा होय ऐसा लोहका दान महा कुदान जानि छांडना। बहुरि सुवर्णदान त्यागना जाकरि पात्रका नाश होजाय मारया जाय सदाकाल भय उपजावे संयमका नाश करै तथा इस धनतैं राग द्वेष काम क्रोध लोभ भय मद आरंभादिककी प्रचुर उत्पत्ति होय आत्मस्वरूपका विस्मरण होजाय तातैं वीतराग धर्मका इच्छुक सुवर्णदानकूं पाप समझि त्यागना। बहुरि कोट्यां त्रसजीवनिका उत्पत्तिका कारण ऐसा तिलदान त्यागने योग्य है। बहुरि चाकी चूल्हा छाजला बुहारी मूसल फावडा दतीला अन्न तेल दीपक गुडादि रस इत्यादिक महापाप सामग्रीका भरया महा आरंभ मोहका उपजावनेवाला गृहका दानकूं धर्म मानि मिथ्याधर्मी दे हैं सो कुदान है बहुरि जिस गौकूं बांधनेमैं हरित तृणादिक चरनेमैं तथा जीया (जवा) बुग (वग) उपजनेमैं मलमैं मूत्रमैं असंख्यात जीव उपजैं सींगनतै मारनेतैं खुर पूंछादि-

कनितैं जीवघात करनेवाला गौका दान सो कुदान है बहुरि संसारके बधावनेवाला महाबंधन करनेवाला जो कन्याका दान सो कुदान है इहां कहो जो कन्यादान तो गृहस्थकूं दियें विना कैसैं रह्या जाय सो ठीक है गृयस्थ है सो अपनी कन्याका विवाह योग्यकुलमैं उपज्या जो जिनधर्मी व्यवहारचातुर्यादिक वरके गुण देखि कन्या देवे है परंतु कन्यदानकुं धर्म तो श्रद्धान नाहीं करै जिनधर्मी तो कन्यादानकूं पाप ही श्रद्धान करै है जैसैं गृहचारका आरंभादिक अनेक पापका कारण है तैसैं कन्यादान हू पापका कारण है परंतु विषयनिका दंड है सो अंगीकार किया ही सरै। अन्यमतवाले तो कन्यादान देनेका बहुत बडा फल कहै हैं लक्षयज्ञ कियाका फल कहै हैं कोटि ब्राह्मणकूं भोजन करावनेतैं कोटि गऊनिका दान देनेतैं हू अधिक फल कहै हैं अन्यकी कन्याका विवाह कराय देनेका हू बडा धर्म कहै हैं सो जिनधर्ममैं तो याकूं संसारपरिभ्रमणका कारण कुदान कहै हैं। बहुरि और हू संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाले मिथ्यादृष्टि लोभी विषयनिका लंपटनिकरि कह्या कुदान त्यागने योग्य है। सुवर्णकी गाय बनाय देवें हैं तिलकी गाय घृतकी गाय रूपाकी गाय बनाय देवे हैं अर लेनेवाला घृतकी गायकूं लापसीकी गायकूं तिलकी गायकूं खाय है सुवर्णरूपाकीकूं कटावे है गलावे है अर गायकी पूंछमैं तेतीसकोटि देवता अर अडसठ तीरथ कहै हैं तथा दासी दासका दान देहै रथदान देहै तथा संक्रांति मानि ग्रहण मानि व्यतीपातादि मानि दान देवे हैं ते समस्त मिथ्यात्वका प्रभाव है। बहुरि मृतककूं तृप्ति करनेके अर्थि ब्राह्मणादिकानिकूं भोजन करावै है देखहू ब्राह्मणनिके जीमनेतैं मृतककूं कैसैं पहुंचेगा दान तो पुत्र देवै अर पिता पापतैं छूटै, बहुत कालका मऱ्या हुआका हाड गंगामैं क्षेपणेतैं मृतकका मोक्ष होय। गयामैं जाय श्राद्ध करनेतैं इकवीस पीढीका उद्धार कहै हैं गयामैं पिंड देनेतैं दश पीढी पहली दश पाछली एक आप ऐसैं इकवीस पीढी संसारमैं कुगतिमैं पडी हुई निकस बैकुण्ठ वास करै हैं अगाऊ बेटा पोतानिका संतान चाहै जेता पाप करो गया श्राद्ध इकवीस पीढीमैं कोऊ एक हू पिंडदान दिया तो सबकी मुक्ति होय जायगी तातैं

कोऊ पापको भय मत करो। बहुरि जे श्राद्धमें ब्राह्मणनिकूं मांसपिंड जिमावे हैं मांस करि देवतानिकूं तृप्ति करे हैं देवता दुर्गा भवानी जीवनिका राक्षसनिका तिर्यंचनिका रुधिर पावनेतें बहुत तृप्ति होती माने हैं देवीनिके बकरा भैंसा काटि बलिदान करे हैं। पापी खोटा शास्त्र बनाय अपने मांसभक्षणके अर्थि महाघोर कर्मकरि नरकके मार्गकूं आप जाय है अन्यकूं नरक पहुंचावे हैं सो जिह्वाइन्द्रीका लोलुपी लोभी कौन घोरकर्म नाहीं करे ? वे पापी मनुष्यपनामें भी स्याली स्याल कागला कूकरा व्याघ्रकासा आचरण करे हैं जिनका ऐसे घोरपापके शास्त्र तिनके धर्ममें अर म्लेच्छ धर्ममें कुछ फरक नाहीं। ये अक्षर म्लेच्छानिके हैं वेदके अक्षरनितैं लोकनिके अज्ञान उपजाय शिकारमें धर्म जनाया। जलचर थलचर नभचर जीवनिके मारनेमें धर्म बताया जगत्कूं भ्रष्ट किया है अर करे हैं। अर जाका देवता तो मुंडमाला अर मांसभक्षक रुधिर पीवनेमें अति लीन है तिनके सेवकानिके पापकी कहा कथा। तिन कुपात्रनिकूं दान देना सो महा दुःखका करनेवाला कुदान है। ऐसैं कुदानके बहुत भेद हैं कुदानके देनेतैं अर कुदानके लेनेतैं नरकतिर्यंचनिमें बहुत जन्ममरणकरि निगोदमें एकेन्द्रिय विकलत्रयमें अनंतकाल पर्यंत असंख्यात परावर्तन करे है या जानि कुदान मत करो कुपात्रदान मत करो॥ अब यहां पहली सूत्रके अनुकूल दानका फल कहै हैं—

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानां। अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ ११४ ॥

अर्थ—गृहरहित ऐसे अतिथि जे मुनि तिनकी जो प्रतिपूजा कहिये दान सन्मानादिक उपासना है सो गृहस्थके षटकर्मकरि उपार्जन किया जो पापकर्मरूप मल ताहि शुद्ध करे है। जैसें शरीर ऊपरि लग्या रुधिररूप मल तिने जल धोवे है। भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही आरंभादिककरि निरंतर पापका उपार्जन होय है तिस पापकूं धोवनेकूं एक मुनीश्वरादिकनिकूं दिया दान ही समर्थ है जैसें रुधिर लग्या होय सो रुधिरतैं नाहीं धुवै है जलकरि धुवे है तैसें गृहचारके आरम्भतैं उपज्या पाप मल है सो गृहके

त्यागी साधूनिके अर्थि दान देनेकरि धुवै है । अब दानका और हू प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा । भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ ११५ ॥

अर्थ–तपके निधान जे साम्यभावके धारक द्वाविंशति परीषहानिके सहनेवाले अपने देहमें निर्ममत्व पंचइंद्रियनिके विषयनिमें अत्यंत विरक्त अभिमान कषायादिरहित आत्मविशुद्धताके इच्छुक ऐसे उत्तम पात्र जो मुनि तिनके अर्थि नमस्कार प्रणाति करनेतैं उच्चगोत्र जो स्वर्गलोकमें जन्म तथा स्वर्गतैं आय तीर्थंकरपनामें जन्म वा चक्रीपनामें जन्मरूप उच्चगोत्रकूं तथा सिद्धनिकी सर्वोत्कृष्ट उन्नताकूं प्राप्त होय है अर उत्तमपात्रके दान देनेतैं भोगभूमिके भोग वा देवलोकके भोग भोगि राज्यादिकनिके भोग पाय अहमिंद्र लोकके भोग पाय तीर्थंकर चक्रीपना पाय निर्वाणके अनंत सुखका भोगकूं पावै हैं। बहुरि साधुनिका उपासना जो सेवन ताकरि त्रैलोक्यमें पूज्य केवली होय हैं बहुरि साधुनिकी भक्ति करनेतैं सुंदररूप ताहि प्राप्त होय हैं। बहुरि साधुनिका स्तवन करनेतैं त्रैलोक्यव्यापिनी कार्ति इंद्रादिकनिकरि स्तवन कीर्तनकूं प्राप्त होय हैं। और हू दानके प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

क्षितिगतामिव वटबीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले। फलति च्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ॥ ११६ ॥

अर्थ–अवसरविषै सत्पात्रविषैं गया अल्प हू दान सुंदर पृथ्वीमें प्राप्त भया वडका बीजकी ज्यों प्राणीनिके छाया जो माहात्म्य ऐश्वर्य अर विभव जे भोगोपभोगकी संपदारूप वांछित बहुत फलकूं फलै है जातैं पात्रदानका अचिंत्य फल है पात्रदानके प्रभावतैं सम्यक्त्व ग्रहण होजाय है । बहुरि सम्यक्त्वरहित मिथ्यादृष्टि हू पात्रदानके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिविषैं जाय उपजै है कैसाक है भोगभूमि जहां तीन पल्यका आयु तीन कोशका ऊंचा शरीर अमृतरूप समचतुरस्र संस्थान महाबल पराक्रमयुक्त मनुष्य होय है स्त्री पुरुषनिका युगल उपजै है तीन दिन गये कदाचित् किंचित् आहारकी इच्छा उपजै सो बदरीफल प्रमाण आहार करनेकरि क्षुधाकी वेदनारहित होय है। दश जातिके कल्पवृक्षनितैं उपजे वांछित

भोगनिकूं भोगै है। जहां शीत उष्णताकी वेदना नाहीं है जहां वर्षाका ताडनाका उपजना नाहीं दिन रात्रिका भेद नाहीं सदा उद्योतरूप अंधकाररहित काल वर्ते है शीतल मंद सुगंध पवन निरंतर विचरै है जिसभूमिमें रज पाषाण तृण कंटक कर्दमादि नाहीं होय है स्फटिकमणि समान भूमिका है यावत् जीव रोग नाहीं शोक नाहीं जरा नाहीं क्लेश नाहीं जहां सेवक नाहीं स्वामी नाहीं स्वचक्रका भय नाहीं षट्कर्मकरि जीवनोपाय करना नाहीं। दश प्रकारके कल्पवृक्ष हैं। तूर्यांग ॥ १ ॥ पात्रांग ॥ २ ॥ भूषणांग ॥ ३ ॥ पानांग ॥ ४ ॥ आहारांग ॥ ५ ॥ पुष्पांग ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग ॥ ७ ॥ गृहांग ॥ ८ ॥ वस्त्रांग ॥ ९ ॥ दीपांग ॥ १० ॥ तूर्यांगजातिका कल्पवृक्ष तो बासुरी मृदंग इत्यादिक करणइंद्रियनिकूं तृप्त करनेवाला वादित्र देहैं ॥ १ ॥ पात्रांगजातिका वृक्ष रत्नसुवर्णमय अनेक प्रकारके आनंदकारी कलश दर्पण झारी आसन पर्यंकादि समस्त जातिके पात्र देहैं ॥ २ ॥ भूषणांगजातिके अनेक आभुषण अनेक प्रकारके क्षण क्षणमें पहरने योग्य हार मुकुट कुंडल मुद्रिकादि अंगकूं भूषित करनेवाले वा महलकूं द्वारकूं तथा शय्या आसन भूमिकूं भूषित करनेवाले अनेक आभूषण देहैं ॥ ३ ॥ पानांगजातिके वृक्ष नाना प्रकार पीवने योग्य शीतल सुगंध पान लिये खरे हैं ॥ ४ ॥ आहारांगजातिके कल्पवृक्ष अनेक स्वादरूप अनेक प्रकारके आहार धारै हैं परंतु क्षुधाकी पीडा ही नाहीं तादि रोग विना इलाज औषध कौन अंगीकार करै भोगभूमिमें उपजनेवालेके क्षुधा नाहीं तीन दिन गये वदरीफल मात्र भोजन करै है ॥ ५ ॥ पुष्पांगजातिके वृक्ष नानाजातिके महा कोमल सुगंध पुष्पमाला आभरणादिक अनेक पुष्प धारै हैं ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग जातिके कल्पवृक्षनिकी ज्योतिकरि सूर्य चंद्रमा नजर ही नाहीं आवे हैं सूर्यके उद्योततैं बहुत गुणा उद्योत धारण करै हैं तातैं रात्रि दिनका भेद नाहीं है ॥ ७ ॥ गृहांग जातिके कल्पवृक्ष अनेक महल चौरासी खणनिपर्यंत विस्तीर्ण रत्ननिकरि चित्र विचित्र देहैं ॥ ८ ॥ वस्त्रांग जातिके कल्पवृक्ष नानाप्रकारके वांछित पहरने योग्य वस्त्र तथा शय्या आसन बिछायत आदि समस्त वस्त्र देहैं ॥९॥

बहुरि दीपांगजातिके अंधकार विना ही दीपमालिकाकी शोभाकूं विस्तरै हैं ॥ १० ॥ बहुरि भोगभूमिमैं स्त्रीपुरुषनिका युगल मरण समयमैं पुरुषकूं छींक अर स्त्रीकूं जम्भाई आवै है तिस समयमैं संतान युगल उत्पन्न होय है संतानकूं तो माता पिता नाहीं दीखै अर मातापिताकूं संतान नाहीं दीखै तातैं इनके वियोगका दुःख नाहीं है अर मरण किये पाछैं इनका देह शरद कालका मेघपटलवत् विलाय जाय है। बहुरि युगलिया उत्पन्न हुआ पाछैं सप्त दिन तो अपना अंगुष्ठ चाटै है। अर पाछैं सप्त दिनमैं सूधा औंधा पलटना होय पाछैं सप्त दिनमैं अस्थिर गमन करै हैं पाछैं सप्त दिनमैं परिपूर्ण यौवनवान होय हैं। बहुरि सप्त दिनमैं समस्त दर्शन ग्रहण चातुर्य कला ग्रहण करै हैं। ऐसे गुणचास दिनमैं परिपूर्ण होय अनेक पृथक् विक्रिया अपृथक् विक्रियासहित नानाप्रकारके महल मन्दिर वनविहार करते क्षणक्षणमैं अनेक कोटि नवीन नवीन विषय तिनकी सामग्री भोगतैं अनेक क्रीडा रागरंगादिक अनेक सुखरूप क्रीडा चेष्टाकरि तीन पल्य पूर्ण करि मरण समयमैं छींक जंभाई मात्रतैं प्राण त्याग सम्यग्दृष्टि होय सो तो सौधर्म ईशान स्वर्गमैं जाय है अर मिथ्यादृष्टि मरणकरि भवनवासी व्यंतर जोतषी देवनिमैं उपजै है कषायके मंदभावतैं देवलोकविना अन्य गति नाहीं पावै है बहुरि सम्यग्दृष्टि होय तथा श्रावकके व्रतका धारक होय जो पात्र दान करै सो षोडशम स्वर्गपर्यंत महर्द्धिक देव ही उपजै है। आगममैं पात्र तीन प्रकार हैं अर्थात् उत्तमपात्र, मध्यमपात्र और जघन्यपात्र। तिनमैं उत्तमपात्र तो महाव्रतनिके धारक अठाईस मूलगुण तथा उत्तरगुणनिके धारक देहमैं निर्ममत्व वीतरागी साधु हैं। मध्यम पात्र ग्यारा भेदरूप श्रावक सम्यग्दृष्टि वृतनिकरि सहित है तथा स्त्रीपर्यायमैं वृतनिकी हदकूं धारण करती तिनके एक वस्त्रतैं अन्य समस्त परिग्रहरहित परके घर एक वार याचनारहित मौनतैं भिक्षा भोजन करि आर्यिकानिका संगमैं धर्मध्यानसहित महातपश्चरण करती तिष्ठै ऐसी आर्यिका मध्यमपात्र हैं तथा अणुवृत अर सम्यग्दर्शनसहित श्राविका मध्यमपात्र है अर वृतरहित जिनेन्द्रवचनके श्रद्धानी सम्यग्दर्शन

सहित पुरुष तथा सम्यग्दर्शनसहित व्रत रहित स्त्री जघन्यपात्र है। इन तीन प्रकारका पात्रानिमैं चार दान देना तथा सत्कार करना स्थानदान करना आदर करना तथा यथायोग्य स्तवन पूजा प्रशंसादिकके वचन बोलना उठि खडा होना उच्च मानना सो समस्त दान है अब चार प्रकार दान कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आहारौषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन। वैयावृत्त्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः ॥ ११७॥

अर्थ—चतुरस्र जे प्रवीण ज्ञानी हैं ते आहार दान औषधि दान उपकरणदान अर आवासदान इन चार प्रकारके दान करके वैयावृत्यकूं चार स्वरूप करि कहैं हैं। आहारदान औषधिदान उपकरणदान आवासदान। या प्रकार गृहस्थकै चार प्रकार दान कह्या जातैं अभयदानकी प्रधानता तो छहकायके जीवानिकी कृतकारितअनुमोदनाकरि विराधनाका त्यागी दिगंबर मुनीश्वरनिकै है अर श्रावकनिकै हू त्रसजीवनिका संकल्पीहिंसाका त्यागतैं अभयदान है ही परंतु अभयदानकी मुख्यता तो आरंभका त्यागतैं विषयनितैं अत्यंत पराङ्मुखतातैं होय है तातैं जेते गृहचारतै संपदातैं तथा न्यायरूप विषयनितैं परिणाम नाहीं निराला होय तितने आहारादिक चार प्रकारका दान करि पापका नाश करहू। संपदा आयु काय अत्यंत अस्थिर है गृहचारा तो दानकरि ही पूज्य है। आहारादिक दान विना गृहस्थपना पाप आरंभके भारकरि पाषाणकी नाव समान केवल संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाला है। बहुरि ज्ञानी गृहस्थ चिंतवन करै है जो यो धन मैं उपार्जन किया तथा पितादिकनिका धर्‍या हमारे विना खेद प्राप्त होगया तथा राज्य ऐश्वर्य देश नगर आभरण वस्त्र स्त्री सेवकनका समूह समस्त जो विना खेद प्राप्त होगया सो समस्त पूर्व जन्ममैं दान दिया दुःखितनिका पालनपोषण किया ताका फल है। तथा परके धनमैं स्वप्नमैं हू चित्त नाहीं चलाया परम संतोष धारण करि विषयनिसूं विरक्त होय निर्वांछकता धारण करी ताका फल है। तथा दीन दुःखित रोगी असमर्थ बाल वृद्धनिका दया धारण करि उपकार किया ताका फल यह संपदा है सो दोय दिन याका संयोग है परलोक लार जायगी नाहीं जमीनमैं गडी रहैगी

तथा अन्य देशांतरमैं धरी रहैगी तथा अन्यमैं रह जायगी वा स्त्री पुत्र कुटुम्ब दायेदार मालिक बनेंगे तथा राजा लूट लेगा तथा अचानक मरि दुर्गति चल्या जाऊंगा यो धन सेकडा दुर्ध्यानतैं महापापके आरंभतैं देश देशनिमैं परिभ्रमणकरि बडा कष्टतैं उपार्जन किया था प्राणनिसूं हू अधिक याकी रक्षा करी अब इस धनका फल छोडकरि मरि जाना ऐसा विचारना तो योग्य नाहीं जगतमैं देखो जो लाख धन होय भोगनेमैं तो आवै नाहीं जातैं भोगनेमैं तो आधा सेर अन्न आवै है अर तृष्णा ऐसी बधै है जो अब धन बधाऊं। अहो अन्यकै तो पचास लाख धन होगया मेरे पांच लाख ही है। अब कैसैं बधाऊं कौन आरंभ करूं कौन उपाय करूं कौन राजानिकूं रिझाऊं तथा कौन बनिज करूं तथा कोनसूं मित्रता करूं जाकी बुद्धितैं मेरे धन उपार्जन होजाय तथा कौनसा सेवककूं अंगीकार करूं जो मेरा अल्प धन खाय अर मोकूं बहुत धन उपार्जन करदे ऐसैं हजारां दुर्ध्यान करतो संसारी जीव समस्त संपदा राज्य ऐश्वर्य छांडि महा मूर्छातैं अतिरौद्र परिणामतैं मरि घोर नरकका घोर दुःख भोगै है। संसारमैं अनंत दुःखरूप परिभ्रमण करता क्षुधा तृषा रोग दारिद्रकूं भोगता अनंतकाल असंख्यातकाल व्यतीत करै है। अब इस घोर कालमैं कोऊ किंचित मोहनिद्राके उपशमतैं जिनेंद्रभगवानके वचनतैं कोऊ अति विरले पुरुष सचेत होय अपना हितकूं चिंतवन करता चार प्रकारके दानमैं प्रवर्तन करै है। दानमैं आहारदान प्रधान है इस जीवका जीवन आहारतैं कोटि सुवर्णका दान आहारदानसमान नाहीं है। आहारहीतैं देह रहै है। देहतैं रत्नत्रय धर्म पलै है। रत्नत्रयधर्मतैं निर्वाण होय है निर्वाणमैं अनंत सुख है। त्यागी निर्वांछक साधुनिका उपकार तो एक आहारदानतैं ही है। आहार विना कोऊ तिलतुषमात्र वस्तु हू नाहीं अंगीकार करै आहार बिना देह रहै नाहीं आहार विना अनेक रोग उपजै हैं। आहार विना ज्ञानाभ्यास नाहीं होय। आहार विना व्रत संयम तप एक हू नाहीं पलै। आहार विना सामायिक प्रतिक्रमण कायोत्सर्गध्यान एक हू नाहीं होय आहार विना परमागमको उपदेश नाहीं होय। आहार बिना उपदेश ग्रहण करनेकूं

समर्थ नाहीं होय। आहार बिना कांति विनासि जाय मति विनासि जाय कीर्ति क्षांति नीति गति रति उक्ति शक्ति द्युति प्रीति प्रतीति नाशकूं प्राप्त होय है। आहार विना समभाव इंद्रियदमन जीवदया मुनि श्रावकका धर्म विनयमैं प्रवृत्ति न्यायमैं प्रवृत्ति तपमैं प्रवृत्ति यशमैं प्रवृत्ति समस्त विनाशनै प्राप्त होय जाय आहार विना वचनकी प्रवीणता नष्ट होजाय है आहार विना शरीरका वर्ण विगडि जाय शरीरमैं मुखमैं दुर्गंधता होजाय। शरीर जीर्ण होजाय। समस्त चेष्टा नष्ट होजाय। आहार नाहीं मिलै तो अपने प्यारे पुत्रकूं पुत्रीकूं स्त्रीकूं वेच देइ। आहार बिना नेत्रानितैं देखनेकूं समर्थ नाहीं होय कर्णनितैं श्रवण करनेकूं नासिकातैं गंध ग्रहण करनेकूं स्पर्शनइंद्रियतैं स्पर्शन करनेकूं समर्थ नाहीं होय। आहार विना समस्त चेष्टारहित मृतकसमान होय। आहार विना मरण होजाय आहार बिना चिंता शोक भय क्लेश समस्त संताप प्रगट होय हैं। दीनता होजाय संसारी लोक अपमान करैं ऐसैं घोर दुःख दुर्ध्यानकूं दूर करनेवाला जो आहारदान दिया सो समस्त व्रत संयममैं प्रवृत्ति कराई। समस्त रोगादिक दूर किया यातैं आहारदान समान कोऊ उपकार नाहीं है। बहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रासुक औषधिका दान श्रेष्ठ है। रोगकरि व्रत संयम विगडि जाय। स्वाध्याय ध्यानादिक समस्त धर्मकार्यका लोप होजाय है। रोगीकै सामायिकादिक आवश्यक नाहीं बनि सकै है। रोगकरि आर्त्तध्यान निरंतर होय है मरण विगडि जाय है रोगीके संक्लेश दिन दिनप्रति बधै है। अपघात कऱ्या चाहै है रोगी पराधीन होजाय है। मन इंद्रियां चलायमान होजाय हैं। उठना बैठना सोवना चालना बहुत कठिन होजाय है। स्वासकी लार वेदना बधै है। क्षणमात्र जक (चैन) नाहीं लेने देहै। बहुत कहा कहिये रोगीकूं खावना पीवना बोलना चालना देना सोवना उठना बैठना समस्त कार्य जहर पीवने समान बाधाकारी होय हैं यातैं प्रासुकऔषधिदानकरि रोग मेटने समान कोऊ उपकार नाहीं। रोग मिटै आहारादिक किया जाय समस्त तप व्रत संयम ध्यान स्वाध्याय कायोत्सर्गादि रोगरहित होय तदि करि सकै है। बहुरि ज्ञानदान समान

जगतमैं उपकार नाहीं। ज्ञान बिना मनुष्य जन्ममैं हू पशु समान है ज्ञानाभ्यास विना आपका परका ज्ञान नाहीं होय। ज्ञान बिना इसलोक परलोकका जानना कैसैं होय ज्ञान विना धर्मका स्वरूप पापका स्वरूप करनेयोग्य नाहीं करनेयोग्यका विचार नाहीं होय है। ज्ञान बिना देव कुदेवका गुरु कुगुरुका धर्म कुधर्मका जानना नाहीं होय है। ज्ञान बिना मोक्षमार्ग ही नाहीं। ज्ञान बिना मोक्ष नाहीं। ज्ञानरहित मनुष्यमैं अर पशुमैं भेद नाहीं इंद्रियनिका विषय पोषना कामसेवन करना तो तिर्यंचनिकै भी होय है जातैं मनुष्यजन्म तो ज्ञानहीतैं पूज्य है। तातैं ज्ञानदान दिया सो पुरुष समस्त दान दिया। परमोपकार तो ज्ञानदानही है। बहुरि वस्तिकादान जो स्थानका दान जामैं शीत उष्ण वर्षा पवनादिक बाधारहित ध्यान स्वाध्यायकी सिद्धताको कारण ऐसा स्थानका दान श्रेष्ठ है। यहां ऐसा जानना—उत्तम पात्र जे परमदिगम्बर महामुनि तिनका समागम तो कोऊ महाभाग पुरुषकै कदाचित् होय है। जैसें जगत पाषाणनिकरि बहुत भऱ्या है। परंतु चिंतामणिरत्नका समागम होना अति दुर्लभ है। तैसैं वीतराग साधुका समागम दुर्लभ है। फिर आहारदान होना अतिही दुर्लभ है। अर आहारहू आपके निमित्त नाहीं किया अर सोलह उद्गम दोष षोडश उत्पादन दश एषणा दोष ऐसैं वियालीस दोष अर प्रमाण १ संयोजन १ धूम १ अंगार १ ऐसैं छियालीस दोष बत्तीस अंतराय चौदह मलनिकूं टालि एकबार भोजन करै सो अर्द्ध उदर तो भोजनसूं भरे अर चतुर्थभाग जलकरि पूर्णकरै अर उदरका चतुर्थभाग खाली राखै सो हू एक उपवासके पारने कदै होय उपवासके पारन कदाचित् तीन उपवास भये कदाचित् उपवास पक्षोपवास मासोपवासादिकके पारन अजाचीक वृत्ति करि नवधा भक्तिकरि दिया हुआ भोजन कोऊ पुण्यवानके घर होय है अर अजाचीक वृत्तिकूं धारते मौनसहित मुनीश्वरनिकूं औषधिदानहूका देना दुर्लभ है। कोऊ गृहस्थ आपके निमित्त प्रासुक औषधि करी होय अर अचानक मुनीश्वरनिका समागम हो जाय अर शरीरकी चेष्टासूं रोगकूं विना कह्या जानि योग्य औषधि होय तो देवै तातैं साधुनिकूं औष-

धिदान हू दुर्लभ है। शास्त्रदान हू योग्य पुस्तक इच्छा होय तो पढै तिननै ग्रहण करै पाछैं वनमें तथा वनके चैत्यालयमें मेलि चल्या जाय है। बहुरि मुनीश्वरनिके अर्थि वस्तिका दान हू दुर्लभ है जातैं दिगंबरमुनि एकस्थानमें रहैं नाहीं कदे पर्वतनिकी गुफामें कदे भयंकर बनमें कदे नदीनिके पुलनिमें ध्यान अध्ययन करते तिष्ठै हैं। कदाचित् कोऊ वस्तिकामें एक दिन ग्रामके बाह्य अर पांच दिन नगरके बाह्य अर वर्षाऋतुमें चार महीना एक स्थानमें रहैं। अर कदाचित् कोऊ साधुके समाधिमरणका अवसर आ जाय तो मास दोय मास एक स्थान रहै। अन्यप्रकार जैनका दिगम्बर एक स्थानमें रहै नाहीं। अर एक रात्रि दोय रात्रि हू कोऊ कदाचित् निर्दोष प्रासुक वस्तिकामें रहै सो वस्तिका कैसी होय आपके निमित्त करी नाहीं होय। आपके निमित्त भुवारी नाहीं होय मुनि आयां पाछैं धोलै नाहीं उजालदान खोलै नाहीं वारणा मुद्या होय तो वारणा खोलै नाहीं भाडा देइ लेवै नाहीं। बदलके अपना वस्तिका देय परकी लेवै नाहीं याचना करि लीनी नाहीं होय राजाका भय दिखाय लीनी नाहीं होय। इत्यादिक छियालीस दोष रहित वस्तिका होय तथा जीर्ण बनमें तथा उजड ग्रामका मकान होय जहां असंयमीनका आर (आना) जार (जाना) नाहीं होय। स्त्री नपुंसक तिर्यंचनिका आगमन नाहीं होय जीवविराधनारहित होय अंधकारादि नाहीं होय तहां साधुजन एकरात्रि दोयरात्रि कदाचित् वसैं। अनेक देशनिमैं विहार करै तिनकूं वस्तिकादान होना बहुत दुर्लभ है यातैं उत्तम पात्रकूं दान होना अति दुर्लभ है अर इस पंचमकालमैं वीतरागी भावलिंगी साधु ही कोई विरला देशांतरमैं तिष्ठै है तिनका पावना होय नाहीं पात्रका लाभ होना चतुर्थकालमैं ही बडे भाग्यतैं होय था। परन्तु इस क्षेत्रमें पात्र तो बहुत थे अब इस दुःषमकालमैं यथावत् धर्मके धारक पात्र कहीं देखनेमैं ही नाहीं आवैं। धर्मरहित अज्ञानी लोभी बहुत विचरै हैं सो अपात्र हैं। इसकालमैं धर्मपायकरिकैं गृहस्थ जिनधर्मके धारक श्रद्धानी कोई कहीं कहीं पाइए है। जे वीतराग धर्मकूं श्रवण करि कुधर्मकी आराधनाका दूरहीतैं त्याग करि नित्य ही अहिंसाधर्मके घरने-

वाले जिनवचनामृतपान करनेवाले शीलवान संतोषी तपस्वी ही पात्र हैं अन्य भेषधारी बहुत विचरै हैं। जिनके मुनि श्रावकके धर्मका सत्य सम्यग्दर्शनादिकको ज्ञान ही नाहीं ते कैसे पात्रपना पावें। मिथ्यादर्शनके भावकरि आत्मज्ञानरहित लोभी भये जगतमैं धनादिकनिका मिष्ट आहारदानका इच्छुक भये बहुत विचरै हैं ते अपात्र है। तातैं पात्रदान होना अति दुर्लभ है।

यहां ऐसा विशेष जानना जो इस कलिकालमैं भावलिंगी मुनीश्वर तथा अर्जिका तथा क्षुल्लकका समागम तो है ही नाहीं। अर जो कदाचित् चिंतामणिरत्नकी ज्यों किसी महाभाग्य पुरुषकूं उनका दानका समागम मिले तो आध सेर अन्नका भोजनमात्र उनके अर्थि देनेमैं आवै अर जो क्षुल्लक अर अर्जिकाके कदाचित् वस्त्र जीर्ण होजाय तो अर्जिका तो एक स्वेत वस्त्र ही ग्रहणकरि पुराणा वस्त्र वहां छांडि जाय अर क्षुल्लक एक कोपीन एक स्वेत ओछा वस्त्र जातैं समस्त अंग नाहीं ढकै ऐसा थोडे मोलका ग्रहण करि पुराणा वस्त्र वहां ही छांडि जाय है अन्य तिल तुषमात्र हू ग्रहण करै नाहीं। ऐसे पात्रनिके दानमैं तो कुछ द्रव्यको खरच नाहीं। विना न्योता विना बुलाया कदाचित् अचानक आजाय तो गृहस्थ अपने निमित्त किया रूक्ष साचिक्कण भोजन तिसमैं दानका विभाग करिये हैं धनाढ्य पुरुष धनकूं कौन कार्यमैं लगाय सफल करै। जो भोगनिमैं लगाईये तो भोग तो तृष्णाके बधावनेवाले इंद्रियकूं विकल करनेवाले महापापमैं प्रवर्तन कराय नरकादिक कुगतिकूं प्राप्त करै हैं। जीवका हित अहितका जाननेकूं लुप्त करै है। अर मोह वश होय पुत्रादिकनिकूं समर्पण करिये है सो पुत्रादिक तो ममत्व बधावनेवाले विना दिये हू सर्वस्व लेवैंगे। पापाचारकरि दुर्ध्यानतैं संपदामैं ममता धारणकरि धर्मका सकरि संपदा बधाई ताका अर्द्धविभाग तो धर्मके अर्थि दयाके पात्रनिमैं दानकरि अपना हित। संपदा छांडि परलोक जावोगे। तहां पुत्र पौत्रादिकको देखनेकूं कैसे आवोगे कुटुंबका अनन्य तो रा यह चामडामय मुख नासिका नेत्रादिकतैं है। सो इनकी भस्म होजासी तथा मृत्तिकामैं जासी

कुटुंब तुमकूं अन्य पर्यायमैं देखने आवै नाहीं। तुम कुटुंबकूं देखने आवो नाहीं क्योंकि जिन नेत्र कर्णादिकनितैं कुटुंबकूं जानो हो तिन नेत्रादिकनिकी तो राख उडजायगी तदि कुटुम्बकूं कैसैं जानोगे अर पुत्रादिक कुटुम्बका सम्बन्ध तुम्हारे शरीरका चामतैं है। तुम्हारे आत्माकूं जानै नाहीं अर तुम्हारे अर तुम्हारा चामडाकी राख उड जायगी तदि कुटुम्बके तुमसूं कहां सम्बन्ध करैंगे तातैं भी ज्ञानीजन हो जीवन अल्प है पुत्रादिकनिका सम्बन्ध हू अल्पकाल है कोऊ संसारमैं शरण नाहीं है एक धर्म ही शरण है अर यो धन है सो हू तुम्हारा नाहीं है कोऊ पुण्यका प्रभावकरि दोय दिन इसका स्वामीपना अंगीकार करि छांडि मर जावोगे। यो धन लार जायगा नाहीं पुत्रका ममत्वतैं महा दुराचार करि धन संचय करो हो सो धनका ममत्व अर पुत्रादिकनिके ममत्वतैं संसारमैं आपा भूलि नरक जाय पहुंचोगे अर अनेक पर्यायनिमैं दीन दरिद्री भये विचरोगे। अर प्रत्यक्ष देखो हो हजारां मनुष्य अन्न अन्न करते मर जाय हैं दरिद्री रंक भये घरघरके बारने फिरैं हैं दीनता करै हैं जिनकी ओर कोऊ देखै हू नाहीं कोऊ उनकी श्रवण करै नाहीं सो समस्त प्रभाव पूर्व जन्मांतरमैं धनसूं तीव्र ममता बांधि कृपण होय धन संचय किया ताका फल है अर तुम्हारे विभव संपदा रत्न सुवर्ण रूपादिक हैं तथा नाना रसनिकरि सहित भोजन अर शीलवंती रूपवंती रागरस करि भरी स्त्रीनिका समागम अर आज्ञकारी प्रवीण सुपुत्र अर हितमैं सावधान कार्यसाधक चतुर सेवक अर महान विस्तीर्ण महल मंदिरनिमैं इत्यादिक जे सामग्री पाई हैं ते कोई पूर्वजन्ममैं दान दिया ताका फल है। दानके प्रभावतैं भोगभूमिमैं जन्म अर स्वर्गके विमाननिके स्वामीपना होय है तहां असंख्यात कालपर्यंत सुख भोगिये है सो यहांका तुच्छकाल क्लेशसहित महा मलीन देहादिक कहा वस्तु है ऐसी संपदा हू तुम्हारे थिर नाहीं रहैगी अर तुम्हारे ऐसा विचार है जो या लक्ष्मी हमारी है हमारा कुलमैं चली आवै है हम बुद्धिरहित नाहीं हैं जो हमारी विनसि जाय जे बुद्धिहीन चूक करि चालै हैं तिनकी संपदा विनसै है ऐसा तुम्हारा भ्रम है सो मिथ्यादर्शनके उदय करि बडा भ्रम

है अर अनंतानुबंधी कषायतैं अभिमान है सो थोरे दिननिमैं नरकके नारकी बनाय देगा तातैं हे आत्मन्! जो जिनेन्द्रके बचननिका श्रद्धान है अर धर्मसूं प्रीति है अर दुःखीलोकानिकूं देख दया आवै है तो चित्तमैं सम्यक् चिंतवन करो जो मैं मूढात्मा धनसूं ममता करि पूर्वला धन था ताकी तो बडा यत्नतैं रक्षा करी अर नवीन भी बहुत धन उपार्जन किया धनका उपार्जनके निमित्त क्षुधा तृषा शीत उष्णादिक भोगे अर अनेक आरंभ बनिज राजसेवा विदेशगमन समुद्रप्रवेश इत्यादिक किए अधर्मी म्लेच्छादिकानिके परिणामकूं राजीकरनेकूं निंद्य जो तो प्रकार धन उपार्जन किया तो अब मरण अचानक आवैगा धन रक्षा नाहीं करैगा। तातैं अब मोकूं न्यायतैं अनीतितैं तथा पापके बनिजतैं अर पापीनिकी पापरूप सेवातैं तो धन उपार्जन करनेका शीघ्र ही त्याग करना चाहिये अर न्यायतैं उपार्जन किया धन तिसमैं मर्यादा-करि रहना अर जिनका धन अन्यायतैं जवर होय खोस लिया है तथा परिणामानिकी दुष्टतातैं भुलाय चुकाय राख्या तिस धनकूं उलटा देय क्षमा करावना बहुरि जो द्रव्य है तिसमैं पुत्रादिकनिका विभागका धन तो पुत्रादिकके अर्थि न्यारा करना अर दानके अर्थि निराला धन राख करके परका उपकारके अर्थि धर्मकी प्रवृत्तिके अर्थि दान करना अर जो नवीन धन उपार्जन होय तिसमैं हू चतुर्थभाग तथा छट्ठा भाग तथा अष्टम भाग तथा जघन्य दशम भाग तो पुण्यदानधर्मके कार्यमैं धनवानकूं वा निर्धनकूं समस्तकूं ही दानादिकका विभाग करना योग्य है। जाके उदर पूर्ण भी नाहीं होय आधा चौथाई भोज-नादिक मिलै ताकूं हू दानधर्मका विभाग उत्कृष्ट चतुर्थ भाग जघन्य दशम भाग मध्यम छट्ठो भाग अष्टम भाग न्यारो कर दुःखित बुभुक्षित जिनपूजनादिकका विभाग करना श्रेष्ठ है दान विना गृह है सो श्मशान है पुरुष है सो मृतक है अर कुटुम्ब हैं ते गृद्धपक्षी हैं ते इस पुरुषका धर्मरूप मांस चूंथि चूंथि खाय हैं अर गृहस्थ धनवान है जैनीनकी अनेक प्रकार पालना करै हैं जे धर्ममैं शिथिल होय ते हू धना-ढ्यपुरुषनिका आदर देने करि मिष्ट वचन बोलनेकरि धर्ममै दृढ होजाय हैं। केतेक काम चाकरी करावने-

लायक होंय तो उनतैं काम हू लेना अर उनका भरण पोषण करना केतेक कुमाय पैदा करि लेने योग्य होय तिनकूं पूंजीका सहारा देय धन हू बन्या रखावै है अर ताकूं पांच रुपयांकी पैदासि कराय देय केतेकनिकूं बनिज व्योहारमैं अपने सामिलकरि निर्वाह करदे केतेनकी धीज प्रतीत करायकै पदाकै योग्य करदे केतकानिकूं कहकरि रोजगार लगाय दे केतकनिकूं दलाली वगैरह लगाय रोजगार कराय दे क्योंकि पुण्यवानका आश्रय विना पकव्या मनुष्यका खडा होना दुर्लभ है आप धर्मात्मा होय सो अपना धन बिगडवाका भय नाहीं करै है जो मेरा धन साधर्मीनिके कार्यमैं आवै सो धन मेरा है अर जो धन साधर्मीनिके कार्यमें नाहीं आया सो मेरा नाहीं बहुरि केतेक पुरुष पहली धनाढ्य थे प्रतिष्ठावान थे तिनके कर्मके उदयकरि धन नष्ट होयगया आजीविका नष्ट होयगई अर खानपानका ठिकाना रह्या नाहीं घरमें स्त्रीबालकादिकनिकी बडी त्रास ऐसे पुरुषनितैं मिहनत मजूरी होय नाहीं ओछा काम किया जाय नाहीं बडा आदमी जान कोउ अंगीकार करै नाहीं धन आभरण वस्त्र पात्र समस्त बेंच खाये अब कोनसौं कहैं कौन उपाय करैं ऐसे प्रतिष्ठावान पुरुषकूं आजीविका लगाय देना चिगतेनिकू दुःख समुद्रमैंतैं हस्तावलंबन देय काढना धर्ममें न्यायमें लगाय थोरा बहुत सहारा देय खडा कर देना जेती योग्यता होय तिस माफिक धीज करनी अन्य दूजाके कने राखि देना रोटीका निर्बाह होजाय तैसैं करना धर्मतैं जोड देना यो बडा उपकार है। केते स्त्री पुत्रादिरहित होय तिनकूं धर्मके कार्यमैं लगाय खानपानका दुःख मेटि देना केते वृद्ध होगये उद्यम करनेकूं समर्थ नाहीं होय केतेक जिनधर्मी धर्ममैं सावधान हैं तो हू इंद्रियां थक गईं रागसहित देह होगया सहाय विना समता रहै नाहीं तिनकी स्थितिकरण धनवानहीसूं बनै। केतेक पुत्रादिकरहित है तिनकूं धर्मका आश्रय ग्रहण करावना केती श्राविका विधवा होगईं तिनके भोजनवस्त्रका ठिकाना नाहीं तिनमैं करुणाबुद्धितैं भोजन वस्त्रादिकका साधन कराय धर्ममैं लगाय देना धनाढ्य पुरुषनिका सहाय पाय केते पुरुष स्त्री कुधर्मका त्याग करि दृढ श्रद्धान करै हैं केतेक अणुव्रतादिक

ग्रहण करे हैं केई श्रद्धानादि सहित सचित्तका त्यागी केई परवीमैं उपवास केई दिवसमैं ब्रह्मचारी केई अपनी स्त्रीका त्यागी केई आरंभका त्यागी केई परिग्रहत्यागी केई पापकी अनुमोदनाका त्यागी केई उच्छिष्ट आहारका त्यागी ऐसैं ग्यारैं स्थान श्रावकके धारण करनेतैं दानके पात्र होय है ते हू धनाढ्य-पुरुषनिका सहायतैं धर्ममैं प्रवर्तते देख अनेक पुरुष धर्मकी प्रवृत्तिमैं लागि जाय है। बहुरि धनाढ्य पुरुष है सो विद्या पढनेके स्थान बनाय दे पढावनेवालेनिकूं जीविका देय व्याकरणविद्या काव्यविद्या गणितविद्या तर्कविद्या इत्यादिक अनेक विद्या पढावनेकी पाठशाला स्थापन करदे तो जैनीनिमैं सैकडां विद्याका पढवामैं लगिजाय बरसां वरस दस बीस पढकरि तैयार हुवा करैं तो धर्मको संतान चल्यो जाय। केई बुद्धिकरि अधिक होय तिनकूं आजीविकादिका सहायी होय निराकुल करदे तो धर्मकी प्रवृत्ति चली जाय तथा अनेक ग्रन्थानिकूं लिखावना पढनेवालेनिकूं पुस्तक देना ग्रन्थके सोधनेमैं सोधनेवाले-निकूं निराकुल कर देना ज्ञानके अभ्यास करनेवालेनिसूं प्रीति करना अपने आत्माकूं ज्ञानके अभ्यासमैं लगावना अपने संतानकूं तथा कुटुंबनिकूं ज्ञानके अभ्यासमैं लगावना जैसे बने तैसे लोकानिकी शास्त्रके अभ्यासमैं रुचि करावनी। ये शास्त्र धर्मके बीज हैं जो शास्त्रनिका ज्ञान हो जाय तो सैंकडां दुराचार नष्ट हो जांय सम्यग्ज्ञान ही व्यवहार परमार्थ दोऊंनिकूं उज्ज्वल करदे है तातैं शास्त्र पढावने समान दान नाहीं है। तथा रोग मेटनेवाली प्रासुक केतेक औषधि बनाय करि रोगीनिकूं देना जे निर्धन मनुष्य हैं तिनकूं औषधि तय्यार मिलजाय तो बडा उपकार है तथा कोऊ निर्धन नाहीं होय तिनका भी औषधि-करि बडा उपकार है निर्धन दुःखित जनानिकूं औषधिदान देने समान उपकार नाहीं है केतेक निर्धन-निकूं औषधि मिलै नाहीं करनेवाला नाहीं बिना सहाय औषधि बन सकै नाहीं औषधि तय्यार मिले ताका बहुत कोटि धनका लाभ है रोग मेटने बराबर कोऊ दान नाहीं बड़ा अभय दान है।

बहुरि धर्मात्मा जननिके अर्थि रहनेके अर्थि धर्म साधन करनेके धर्मशाला वस्तिकादिक अपनी

शक्ति सारू मोल ले देना अपना घरका स्थान होय तहां राखि देना जातैं रहनेके स्थान बिना धर्मसेवनादिकमैं परिणाम थिर नाहीं रहै है। बहुरि जिनधर्मी परदेशी दुःखित आजाय तो महीना दो महीना को भोजनादिकके सहायमैं प्रवर्तना। कोऊ परदेशीके पासि मार्गमैं खरची अपने स्थान पहुंचनेकी नाहीं होय तथा मार्गमैं लुटिगया होय चोर ले गया होय जैनी जानि आपकनै आया होय ताकूं अपने गृह पहुचै तैसैं दानादिककरि पहुंचावना अर परदेशी रोगी होय आया होय ताकूं स्थान बतावना औषधादिककरि रोगरहित करना बारम्बार धर्मोपदेश देय समता देना बारम्बार पूछना वैयावृत्य करना। बहुरि निर्धनमनुष्यनितैं नाहीं बन सकै ऐसा औषधिका दान निरंतर करना। परिणाम चल गया होय रोगकरि वियोगके दुःखकरि दारिद्रकरि धैर्य छूट गया होय तिनकूं धर्मोपदेश करि धीरज धारण करावना। बहुरि अपने आत्माकूं निरंतर ज्ञानदान देना आप ज्ञानवान होय तो नित्य अनेक जीवनिकूं धर्मोपदेश देना तथा कोऊ शास्त्रके अर्थके जाननेवाले पुरुषकी प्राप्ति होय तो ताकूं कल्पवृक्षका लाभ तुल्य बडा हर्ष सहित आजीविकादिककी थिरता कर देना बहुत विनय आदरतैं राखि धर्मका ग्रहण आप करना धर्मकी वृद्धिके निमित्त ज्ञानीनिका सन्मानादिककरि धर्मके उपदेशकी तत्त्वनिके स्वरूपकी चर्चाकी गुणस्थान मार्गणा स्थानादिककी चर्चाकी प्रवृत्ति कराय धर्मकी प्रभावना सम्यग्ज्ञानकी प्रभावनाकी प्रवृत्ति करावना। जहां धर्मकी प्रवृत्ति मंद होगई होय तिन ग्रामनिमैं शास्त्र लिखाय भाषा वचनिका योग्य शास्त्र भेजना ज्ञानदान समस्त मंदकषायी भद्र परिणामीनिकूं करना चाहिये। बहुरि संपदा पाय दान सन्मानतैं प्रियवचनतैं अपने मित्रनिकूं कुटुम्बकूं आनंदित करना संपदाका समागम अर जीवन क्षणभंगुर है इस धनतैं अर देहतैं तथा वचनतैं अन्य जीवनिका उपकार करना ही श्रेष्ठ है। प्रियवचन बोलनेका बडा दान है वैरीनितैं अपना वैर छांडना प्रियवचनतैं अपराध क्षमा करावना बडा दान है अपना धन धरती देय करकैं हू संतोषित करना वैर धोवना अभिमान त्यागना कुटुम्बी निर्धन होय तिनकूं शक्तिप्रमाण दानसं-

मान करना अपनी बहन बेटी निर्धन होय तो बारम्बार भोजन पान वस्त्र आभरणादिककरि बारम्बार सन्मानदान करना दयावान होय ते अन्यकूं दुःखित जान सन्मानतैं दुःख मेटे हैं सो जिनका आपमैं उदर पहुंचै अर अपना अंग समान भूवा बहण बेटी जमाई इनका संताप कैसैं सहै. कोऊकरि अपना उजाड विगाड होगया होय तो कटुक वचन नाहीं कहना उनको या कहना जो भाई थैं परिणाममैं कुछ संताप मत करो गृहचारामैं हानि वृद्धि लाभ अलाभ तो कर्मके अनुकूल है अर समस्त सामग्री विनासीक है तुम तो हमारे अनेक कार्य सुधारो हो तथा हमारे भले करनेकूं करो हो कर्मके अनुसार कोऊ विगडै भी है ऐसैं प्रियवचनकरि संतोषित ही करै। बहुरि निरंतर ऐसा परिणाम ही रखै जो मेरा धनतैं किसी जीवका उपकार होय तो अच्छा है अन्य पुरुष अपने हितमैं प्रवर्त्तन करो वा अपने अहितमैं प्रवर्तन करो आप तो उपकार करनेमैं ही प्रवर्त्तन करै। बहुरि कोऊ बंदीखानामैं पड्या होय कोऊ झगडामैं फंस्या होय तो अपने घरके पांच रुपया देयकर छुडावना कोऊ चूकि अपना धन चोर्‍या होय तो प्रियवचनादिकतैं समताभावतैं सुलझाय लेना निर्धन होय तासूं लेनेको इरादो वा झगडो नाहीं करना कोऊ चोर खाया ताका फजीता अपवाद नाहीं करना आपके आश्रित होय तिनका पालन पोषण करना विधवा होय अनाथ होय रोग वियोगादिक दुःखकरि संतापित होय तिनका दुःख संताप दूर करनेमैं सावधानी करना बालक होय बालविधवा होय तिनका बहुत प्रकार सम्हालितैं प्रतिपालन करना अपनेतैं जे वैर राखैं उपकार करेका हू अपकार मानैं तिनका हू गुण ग्रहण करना अर दान सन्मान करना। अवसर पाय अपने मित्र बांधवादिकनिका सन्मान नाहीं किया तो धन ऐश्वर्य पाय केवल अपयशकी कालिमा ही ग्रहण करी। बहुरि अपने पुत्र कुटुम्बादिककी पालना तो सूरडी कूकरी हू करै है अवसर पाय अपने बिगाड करनेवाले धन आजीविका हरनेवाले वैरीनिका हू दान सन्मान उपकार करि वैरका अभाव करना दुर्लभ है। मनुष्यजन्म धन संपदा यौवन ऐश्वर्य क्षणभंगुर है अनेकका धन जीवन नष्ट होगया जिनका

नाम अर स्थान हू नाहीं रह्या सोई कार्तिकेयस्वामी कह्या है—अतिशय करके आभरण वस्त्र स्नान सुगंध विलेपन नाना प्रकारके भोजन पानादिक करि अत्यंत पालन पोषण किया हुवा हू देह एक क्षणमात्रमैं जलका भर्‌या काचा घडाकी ज्यों विनशै है। जो लक्ष्मी चक्रवर्तीनिकूं आदि लेय महापुण्यवाननिमैं नाहीं रमी सो लक्ष्मी अन्य पुण्यरहित जननिमैं कैसैं प्रीति बांधि रहैगी या लक्ष्मी कुलवाननिमैं नाहीं रमै है कोऊ जानै मेरा कुल ऊंचा है मेरे लक्ष्मी रहती आई है ऐसा नाहीं जानना कुलवानमैं भी रहै वा नाहीं रहै नीच कुलवालेमैं जाय रहै है धीरमैं रमै वा नाहीं रमै पंडित प्रवीणके रहै वा नाहीं रहै मूर्खनिके हू होय है सूरवीरनिके वा कायरनिके मांहि रमै वा न रमै पूज्यपुरुषनिमैं तथा सुंदररूपवालेनिमैं वा सज्जननिमैं वा महापराक्रमीनिमैं वा धर्मात्मामैं या लक्ष्मी राचै है ऐसा नियम जान सो नाहीं है।

भावार्थ—संसारी अज्ञानी भ्रमतैं ऐसा जानैं है जो मैं तो कुलवान हूं मोकूं छांडि लक्ष्मी कैसैं जायगी तथा मैं धीर हूं धीरजवानके लक्ष्मी स्थिर रहै है चलायमानकै विनसै है तथा मैं महापंडित प्रवीण हूं मैं बडा प्रवीणतातैं बधाई है मूर्ख अज्ञानी चूक करि चालै ताकी लक्ष्मी नष्ट होय है तथा मैं सूरवीर हूं अन्यकी लक्ष्मीकी रक्षा करूं हू मेरी कैसैं विनसै कायरके विनसै है तथा मैं पूज्य हूं समस्तकी लक्ष्मी पूज्यमैं रही चाहिये कोऊ नीचकी विनसै है तथा मैं धर्मात्मा हूं नित्य ही दानपूजाशीलादिकमैं प्रवर्तूं हूं मेरी कैसैं नष्ट होय कोऊ पापीके संपदा विनसै है तथा मैं सुंदर रूपवान हूं हमारी सूरत ऊपरही लक्ष्मीको वास दीखै है कोऊ कुरूपके विनसै तथा मैं सुजन हू सबका प्रिय हूं मेरे लक्ष्मी कैसे विनसै दुष्ट होय सबका अप्रिय होय ताके विनसै तथा मैं महा पराक्रमी हूं उद्यमी हूं मैं प्रतिदिन नवीन उपार्जन करूं हूं मेरी लक्ष्मी कैसैं विनसै आलसी होय उद्यमरहित होय ताके विनसै है ऐसा समझना मिथ्या भ्रम है या लक्ष्मी तो पूर्वले किये पुण्यकी दासी है पुण्यपरमाणु नष्ट होते ही विनसै है जैसैं पचास हाथकी महलमैं दीपक बुझते ही अंधकार होजाय कौन रोकै तथा जैसैं जीव निकसते ही समस्त इंद्रियां चेष्टारहित हो

जांय तथा जैसैं तेल पूर्ण होते ही दीपक नष्ट होजाय तैसैं पुण्य अस्त होते ही समस्त लक्ष्मी कांति बुद्धि प्रीति प्रतीति एक क्षणमैं नष्ट होजाय है प्रथम तो या लक्ष्मी न्यायके भोगनिमैं लगावो अर परिणामनिमैं दयाभाव विचारि दुःखित बुभुक्षितनिकूं दान करो या लक्ष्मीका जलमैं तरंग क्षणमात्रमैं बिलाय जाय तैसैं कोई दोय दिन लक्ष्मीका संयोग है पाछैं नियमसूं वियोग होयगा जो पुरुष या लक्ष्मीकूं निरंतर संचय ही करै है न तो भोगै है अर न पात्रानिकूं दान देवै है सो अपने आत्माकूं ठगै है अचानक मरि अंतर्मुहूर्तमैं नारकी जाय उपजैंगे मनुष्यजन्मकूं निष्फल किया। जे पुरुष लक्ष्मीका संचय करके अति दूर गाडैं हैं विनसनेके भयतैं पृथ्वीमैं बहुत ऊंडी गाडैं हैं सो पुरुष तिस लक्ष्मीकूं पाषाण समान करै है जैसैं जमीमैं अनेक पाषाण हैं तैसैं धन भी धरया रहैगा आपके दान भोगके अर्थि नाहीं तदि दरिद्री तुल्य रह्या। बहुरि जो पुरुष लक्ष्मीकूं निरंतर संचय करै है अर दान नाहीं करै अर भोगै हू नाहीं तिस पुरुषके अपनी हू लक्ष्मी परकी समान है जैसैं पडोसीकी लक्ष्मी तथा नगरनिवासीनिकी लक्ष्मी देखनेमैं आवै है अपने भोगनेमैं आवै नाहीं। देनेमैं आवै नाहीं बहुरि जो पुरुष लक्ष्मीमैं अति आसक्त भया प्रीतिरूप भया अपना आत्माकूं हू खावनेमैं पीवनेमैं औषधादिकनिमैं वस्त्र पहरनेमैं अपने रहनेका जायगामैं और हू भोगोपभोगनिमैं नित्य ही क्लेश भोगै है पण धनके खरच होनेका बडा दुःख दीखै है तातैं कष्टतैं आप दिन व्यतीत करै है सो मूढ राजानिका वा अपने दाइयादार पुत्रस्त्रीभ्रातादिकनिका कार्य साधै है आप तो धनकी ममताकरि दुर्गतिमैं जाय ऊपजैगा अर राजा ले जायगा अथवा पुत्र कुटुंबादिक लेवैंगे आप तो पापी ही धन उपार्जन करकेहू केवल इसलोकमैं क्लेशका पात्र ही रह्या। जो मूढ बहुत प्रकार अपनी बुद्धि करकैं लक्ष्मीकूं बधावै है अर बधाता २ तृप्त नाहीं होय है अर लक्ष्मी बधावनेकूं अनेक आरंभ करै है पाप होनेतैं नाहीं डरै है रात्रिमैं अर दिनमैं धनके उपजानेके विकल्प करते २ बहुत रात्रि व्यतीत भए निद्रा ले है अर दिनमैं प्रातःकालहीतैं द्रव्यके उपार्जनके विकल्प करै है अवसरमैं भोजन हू नाहीं करै है

अनेक लेन देन बनिज व्यवहार बकवाद करते २ कठिन क्षुधाकी प्रेरणातैं भोजन करै है अर रात्रिविषै कागद पत्र लेखा हिसाब जबाव सवालकी बडी चिंतामैं मग्न भए तीन प्रहर रात्रि व्यतीत भए सोवै है सो मूढ केवल लक्ष्मीरूप तरुणीका दासपणा करिकै संकट भोगि दुर्गति गमन करै है । अर जो इस वर्द्धमान लक्ष्मीकूं निरंतर धर्मकार्यके अर्थि देहै सो पंडित प्रवीण पुरुषनिकरि स्तुति करने योग्य है अर तिसहीका लक्ष्मी पावना सफल है ऐसैं जान करि जे धर्मसंयुक्त दारिद्रकरि पीडित ऐसे मनुष्यनिनै स्त्रीनिनै निरंतर अपेक्षारहित ख्याति लाभ पूजाकूं नाहीं चाहता तथा उनतैं कुछ अपना उपकार नाहीं चाहता आदर प्रीति हर्ष सहित दान देवै है तिनका जीवना सफल है जातैं धन यौवन जीवन तो प्रत्यक्ष जलमैं बुदबुदाकी ज्यों अथिर देखिए हैं अर दानका फल स्वर्गकी लक्ष्मीका भोगभूमिकी लक्ष्मीका असंख्यातकालपर्यंत भोग संपदा देनेवाला है ऐसा जानि निरंतर दानहीमैं प्रवर्त्तन करो ।

इहां ऐसा विशेष और हू जानना जो पूर्वजन्ममें सुपात्रदान दिया है सम्यक्तप किया है ते पुरुष तो इस दुःषमकालमैं भरत क्षेत्रमें नाहीं उपजे हैं जातैं इस दुःषमकालमें यहां सम्यग्दृष्टिका उपजना है ही नाहीं जे सम्यग्दृष्टि देवगति नरकगतितैं आवैं ते विदेहक्षेत्रनिमैं ही पुण्यवान मनुष्य होय हैं अर मनुष्य तिर्यंच गतिका सम्यग्दृष्टि मरके स्वर्गलोकमें उपजै हैं जातैं इस क्षेत्रमें सम्यग्दृष्टि आय नहीं उपजै है यहां कोऊ पुण्याधिकारीके काललब्ध्यादि सामग्रीतैं सम्यक्त्व नवीन उपजै है अर पूर्व जन्ममें जिनधर्म पालिकरि पुण्य उपजाया सो हू यहां नाहीं उपजै है याहीतैं जिनधर्ममें राजा उपजते रह गये अर और हू बहुत धनाढ्य पुरुष हू जैनीनिके कुलमें नाहीं उपजै हैं और जो जैनीनिके कुलमें धनाढ्य उपजै तो ते जिनधर्मरहित होय हैं कोऊ पुण्याधिकारीनै अठैं सतसंगति मिल जाय वा जिनसिद्धांत श्रवण मिलै तदि नवीन बीजतैं जिनधर्ममें सावधान हो जाय है । बहुरि इस कालमैं जैनी भी धनाढ्य होय अर धर्मकूं समझ त्याग आखडीमैं सावधान होय तो हू दानमैं धन नाहीं खरच्या जाय है लाखां धन छांडि मर

जाय है परंतु आधा चौथाई धन हू दान धर्ममें नाहीं लगाया जाय है। इस कलिकालके धनाढ्य पुरुषनिकी कैसी रीति वा परिणाम होय है सो कहिये है—परिणाम करि क्रोध बधै है अपने पुरुषार्थका बडा अभिमान बधै है वात्सल्यता मूलतैं जाती रहे है अन्यका किया कार्यकूं सराहै नाहीं समस्तकी अकल बुद्धि घाटि दीखै दया रहै नाहीं अन्य पुरुषका वचनादि करि अपमान तिरस्कार करता शंकै नाहीं अन्य पुरुष धर्मनीति लिए वचन कहै तिनकूं कुयुक्तितैं खण्डन किया चाहै धर्मात्मा पुरुष विनयसहित संभाषण करै तो मनमें बडी शंका उपजै जो मोतैं कदाचित् कुछ याचना करैगा निर्वांछक साधर्मीनिका भी भय हीं रहै जो मोकूं कदाचित् धन खरचनेका उपदेश देगा अभिमान दिन दिन प्रति बधै स्वभाव ऊपरि तेजी बधै जो अपना कार्य होय ताकूं बहुत शीघ्रतासू चाहै सेवकादिकका कष्ट दुःखकू नाहीं देखै अपना प्रयोजन साध्या चाहै परका प्रयोजन तथा दुःख क्लेशकूं तुच्छ जानै संपदा बधै ताकी लार खरच बधै खरचकी लारि दुःख बधै दिन दिन खरच घटावेकाही परिणाम रहै अपने भोगोपभोगकी वस्तु लेनेमें ऐसा परिणाम रहै जो अर्ध दामनिमें आजाय कुछ घाटि ले जाय मोकूं बडा आदमी समझि बहुत मोलकी वस्तु थोडे दामनिमें दे जाय कोऊ निर्धन तथा लूटका माल अति अल्प मोलमैं आजाय ताका बडा हर्ष मानै संचय करते २ तृप्ति नाहीं होय कोऊ आपकूं ठगाई जाय तासूं प्रीति करै धनवान दिखै ताकूं आप ठगावै धनवान पापी भी होय तासूं प्रीति करै धनवान अधर्मी भी होय ताकी बुद्धिकूं बडी मानै धनवानानै अपनी उदारता दिखावै निर्धनके निकट अपना अनेक दुःख रोवै दुःखी देखै तिसको अपना बहुत दुःख सुनावै अन्यकी वा निर्धनकी आबरू ओछी जानै धनरहितकूं अपना वस्तु धीजतां बडी अप्रतीत करै धनरहितकूं चोर दगाबाज समझै आप पैला सर्वस्व खा जाय तो हू आपकूं सांचा जानै अपनी बडाई करै अपने कर्तव्यकी प्रशंसा करै अन्यके उत्तम कार्यनिमें हू खोट प्रगट करै आपकूं निस्पृह निर्वांछक समझै जगतके अन्य जीवानिके तृष्णा समझै आपकूं अजर अमर समझै अनित्यपना

समझै अन्य जीवनिकूं अति लोभी समझै आपकूं न्यायमार्गी समझै आपकूं प्रभु समझै धनरहितानिकूं रंक समझै आरंभ परिग्रह बधावता धापे नाहीं तृष्णा अति बधै मरण पर्यंत संतोष नाहीं धारै अपयशका कार्य करै अर आपकूं यशस्वी समझै कपटी छलीकूं धन ठिगा देवे बहुत धूर्त कपटी छलीकूं अपना कार्य साधनेवाला पुरुषार्थी प्रवीण समझै सत्यवादी मर्यादा सहित प्रवृत्तिका धारी निरपेक्ष होय तिनकूं बुद्धिहीन समझै जहां अपना अभिमान बधै कषाय पुष्ट होय आपका नाम होता जानै तहां जायगामैं मंदिरमैं बागबगीचानिमें विवाहमैं यात्रामें भाडानिमें बहुत धन खरच करै मंदिरादिकानिमें भी अपनी उच्चता होनेकूं पंचानिमें अभिमान जहां बधै तहां धन खरचि करै जीर्णमंदिरादिकनमें नहीं देवे निर्धन भूखेनिके पालनमैं पीस्यो (पैसा) एक नाहीं देवै दुर्बल दीन अनाथ वृद्ध रोगी विधवा इनका पालानिमैं धन कदाचित नाहीं खरच करै निर्धन दुःखितकूं नष्ट हुवा समझै आपहू अच्छा भोजन न करै जो कुटुंबादिका विभाग करना पडैगा। ऐसा अभिमान धारे है जे घणे ही धर्मात्मा तपस्वी पण्डित हमारे घर आवै हैं अर अनेक आवैंगे समस्त देशी विदेशी गुणवान जैनीनिकूं बडा ठिकाना हमारा घर ही है अर हमही दातार हैं और कहां ठिकाना है अर केतेक अपने घरके कार्य सुधारनेवाले वा धर्म कार्यमें नियुक्त हैं तिनकी भी धनका मदकरि बडा अवज्ञा करै है इनकी हम पालना करैं हैं हमारेतैं छूटे इनकूं कहां ठिकाना है ऐसे पंचमकालके धनवानानिके ऊपरि मोहकी बडी अंधेरी पड रही है पूर्व जन्ममें जिनधर्मरहित कुतपस्या करी है कुपात्रकूं दान दिया है इसबीजतैं धन संपदा पाई है सो धन संपदा छांडि धनकी मूर्छातैं मरि कषायनिकी मंदता तीव्रताके प्रभाव माफिक सर्पादिक तिर्यंचानिमें वृक्षादिकानिमें मधुमाक्षिकादिकानिमें उपजि नरकादिकनिमें बहुतकाल परिभ्रमण करैंगे या धनकी मूर्छा इसलोकमैं हू वैरको तथा अपयशको कारण है कृपणका सकल जन अपवाद करैं हैं कृपणका परिणाम निरंतर क्लेशित रहैं हैं दुर्ध्यानी रहैं अर दानके मार्गमें लगाया धन अपना धन जानहू पात्रदानमे गया धन मरणके समयमें परिणामनिकी उज्जलता

कराय अंतर्महूर्तमैं स्वर्गकी संपदाकूं प्राप्त करै है। यहां उत्तम पात्र तो निर्ग्रंथ वीतरागी समस्त मूलगुण उत्तरगुणके धारक दशलक्षणधर्मके धारक बाईस परिषहके सहनेवाले साधु हैं दर्शनादिक उद्दिष्ट आहार का त्यागी पर्यंत ग्यारह स्थान श्रावकके हैं ते मध्यम पात्र हैं बहुरि जिनके व्रत तो नाहीं अर जिनेन्द्रके प्ररूपे तत्त्वके श्रद्धानी जन्ममरणादि रूप संसार परिभ्रमणतैं भयवान चारप्रकारके संघके हित होनेमें बांछासहित संसारदेहभोगानिमें विरक्तबुद्धि जिनशासनका उद्योतक अपनी निंदा गर्हा करता स्वपरतत्त्व का विचारमें चतुर जिनकथित तत्त्वमें धर्ममैं दृढताका धारक धर्म अधर्मके फलमैं अनुरागसहित सकल जीवनिकी दया करि व्याप्तचित्त मंदकषायी परमेष्ठीका भक्त इत्यादिक समस्त सम्यक्त्वके गुणानिका धारक सो जघन्यपात्र है। ऐसे तीन प्रकारके पात्रानिमें यथायोग्य आहार औषधि शास्त्र वस्तिकादिक स्थान वस्त्र जीविका जीवनेकी स्थिरताके कारण भक्ति विनयसहित दिये हुये भावानिके अनुकूल उत्तम मध्यम जघन्य भोगभूमिमैं दातारकूं उत्पन्न करै हैं अर सम्यग्दृष्टिकूं सौधर्मादिक स्वर्ग महर्द्धिक देवनिमें उत्पन्न करै हैं। अब कुपात्रके ऐसैं लक्षण जानना जिनके मिथ्याधर्मकी दृढ बासना हृदयमैं तिष्ठै है अर घोर तपके धारक अर समस्त जीवनिकी दया करनेमैं उद्यमी असत्य वचन कठोर वचनसूं परांमुख समस्तसूं प्रिय वचन कहै धनमैं स्त्रीमैं कुटुम्बमैं निस्पृह रहै मिथ्याधर्मका निरंतर सेवन करनेवाला जप तप शील संयम नियममैं जिनके दृढतासहित प्रीति हो मंदकषायी परिग्रहरहित कषायविषयनिका त्यागी एकांत बाग वनादिकमैं वसनेवाले आरंभरहित परीषह सहनेवाले संक्लेशरहित संतोषसहित रसनीरसके भक्षणमैं समभावके धारक क्षमाके धारक आत्मज्ञानरहित बाह्यक्रियाकांडतैं मोक्ष माननेवाले ऐसे कुपात्र हैं तथा केई जिनधर्मके पक्ष ग्रहणकरनेवाले हू एकांती हठग्राही अपनी बुद्धिहीतैं आपकूं धर्मात्मा मान रहै हैं सो केई तो जिनेंद्रका पूजन आराधन गान भजनहीसूं आपकूं कृतकृत्य मानि बाह्य पूजन स्तवनादिकमैं ही तत्पर हैं अन्य ज्ञानाभ्यास व्रतादिकमैं शिथिल रहै हैं। केतेक जलादिकतैं धोवना सोधना अन्नादिककूं

धोवना स्नान कर जीमना अपना हस्ततैं बनाया भोजन करना वस्त्रादिकनिका धोवना धायाहुवा स्थानमैं जीमना इत्यादिक क्रिया करके ही आपके धर्म मानै हैं। केई देखि सोधि चालना सोवना बैठना जलकूं बडा यत्नाचारतैं छानना याहीतैं आपकूं कृतकृत्य मानै हैं अन्यकूं क्रियारहितकूं निंद्य जानै हैं। केई उपवासादिक व्रत रसपरित्यागादि करि आपकूं ऊंचा मानैं हैं। केई दुःखित बुभुक्षितका दानहीकूं धर्म जानैं हैं। केई भद्रपरिणामी समस्त धर्महीकूं समान जानता विचाररहितपनाहीमैं लीन है। केई परमेश्वरका नाम मात्रहीकूं धर्म जानि विकथा निंदादिरहित तिष्ठे हैं। केतेक अन्यजीवनिका उपकार करि समस्तका विनय करनेकूं धर्म मानैं हैं केतेक अपनी इंद्रियनिकूं दण्ड देते रूखा सूखा एक बार भोजन कर मौनावलंबी भये अपनी आयुकूं जेठै तेठै तिष्ठते व्यतीत करैं हैं केतेक नानाभेषके धारक मंदकषायी परिग्रहरहित विषयरहित तिष्ठे हैं। केतेक कोऊ एकबार हस्तमैं भोजन धर दे सो भक्षण कर याचनारहित विचरै हैं इत्यादिक अनेक एकांती परमागमका शरणरहित आत्मज्ञानरहित मिथ्यादृष्टी कुपात्र हैं इनको दान देना अनेकप्रकार फलै है जैसा पात्र जैसा दातार जैसा भाव जैसा द्रव्य जैसी विधिसूं दिया तैसा फलै है। केई तो असंख्यात द्वीपनिमैं दानके प्रभावतैं पंचेंद्रिय तिर्यंचनिके युगलनिमैं उपजे हैं जहां च्यार २ अंगुल प्रमाण महामिष्ट सुगंध तृण भक्षण है महान अमृत समान जल पीवैं हैं परस्पर वैरविरोधरहित तिष्ठे हैं जहां शीतकी बाधा नाहीं उष्णताकी तावडा पवन वर्षादिककी बाधारहित एक पल्यपर्यंत आयु भोगैं हैं जहां विकलत्रयनिकी बाधारहित अनेकप्रकार स्थलचर नभचर तिर्यंच होय यथेच्छ विहार करते सुखतैं भोग भोगते जुगल ही लार उपजैं लार ही मरकरि व्यंतर भवनवासी ज्योतिषी देवनिमैं उपजे हैं तथा केई कुपात्रदानके प्रभावतैं उत्तरकुरु देवकुरु भोगभूमिमैं तिर्यंच उपजैं तीनपल्यपर्यंत सुख भोगि देवनिमैं उपजे हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतैं हरिक्षेत्र रम्यकक्षेत्रनिमैं दोय पल्यकी आयुके धारक केई हिमवतक्षेत्रमैं हिरण्यवतक्षेत्रनिमैं एक पल्यकी आयुकूं धारण करि तिर्यंच युगलनिमैं उपजि मरि देवलोक

जाय हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतैं अन्तरद्वीप छिनवै हैं तिनमैं मनुष्य युगल उपजै हैं। इहां अंतर द्वीपनिमैं मनुष्य उपजै हैं तिनका स्वरूप ऐसा है—समुद्रकी पूर्वादिदिशामैं चार द्वीप हैं तिनमे पूर्वदिशाके द्वीपमै मनुष्य एक पगवाले उपजै हैं दक्षिणादिशामै पूंछवाले मनुष्य हैं पश्चिमदिशामै सींगवाले मनुष्य उत्तरदिशामै वचनरहित गूंगे मनुष्य उपजै हैं समुद्रकी चार विदिशाके चार द्वीपनिमै अनुक्रमतै सांकलकेसे कर्णवाले तथा शष्कुलीकर्ण मनुष्य उपजै हैं एक कर्णकूं ओढले एककूं बिछायले ऐसैं लंबकर्ण उपजै हैं बहुरि लम्बे कानवाले लम्बकर्णमनुष्य अर सुसाकेसे कर्णवाले मनुष्य ए समुद्रकी विदिशामैं उपजै हैं। बहुरि सिंहकासा मुख ॥ १ ॥ घोडाकासा मुख ॥ २ ॥ कूकराकासा मुख ॥ ३ ॥ सूकरकासा मुख ॥ ४॥ भैसाकासा मुख ॥ ५ ॥ व्याघ्रकासा मुख ॥ ६ ॥ घूघूकासा मुख ॥ ७ ॥ बानरकासा मुख ॥ ८ ॥ मच्छकासा मुख ॥ ९ ॥ कालमुख ॥ १० ॥ मीढाकासा मुख ॥ ११ ॥ गौकासा मुख ॥ १२ ॥ मेघकासा मुख ॥ १३ ॥ बिजलीकासा मुख ॥ १४॥ दर्पणकासा मुख ॥ १५॥ हस्तीकासा मुख ॥ १६ ॥ ये सोलह दिशा विदिशानिके अंतरालेमैं तथा पर्वतानिके अंतकी सूधिमैं द्वीप हैं तिनमैं मनुष्य ऐसे मुखवाले उपजै हैं। ऐसे २ लवणसमुद्रके एक तटमैं चौवीसै अंतरद्वीप हैं दोऊ तटके अडतालीस अर अडतालीस ही कालोदधि समुद्रके ऐसैं छिनवै अंतरद्वीपानिमैं कुभोगभूमि है तिनमैं कुपात्रदानतैं मनुष्य युगल उपजै हैं तिनमैं एक टांगवाले हैं ते गुफानिमै बसै हैं अर अत्यंत मीठीमृत्तिका भक्षण करै हैं इनतैं अन्य जे इसप्रकारके मनुष्य हैं ते वृक्षनिके नीचे बसै हैं अर कल्पवृक्षानिके दिये नानाप्रकारके फल भक्षण करै हैं अब कुभोगभूमिके मनुष्यनिमै उपजनेके कारण परिणामनिकूं तीन गाथानिमै त्रिलोकसारजीमे कह्या सो कहै हैं—

जिणलिंगे मायावी जोइसमंतोवजीविधणकंखा। अइगउरवसण्णजुदा करेंति जे परविवाहं पि ॥ १२२ ॥

दंसणविराहिया जे दोसं णालोचयंति दूसणगा। पंचग्गितवा मिच्छा मोणं परिहरिय भुंजंति ॥ १२३ ॥

दुब्भावअसुइसूदगपुप्फवई जाइसंकरादीहिं। कयदाणावि कुवत्ते जीवा कुणरेसु जायंते ॥ १२४ ॥

अर्थ—जो जिनेंद्रका निर्ग्रंथ लिंग धारण करकें अनेक परीषह सहते हू मायाचारके परिणाम धारें हैं तथा केतेक जिनलिंग धारण करि हू ज्योतिषविद्या मंत्रविद्या वैद्यविद्या लोकनिमैं भोजनादिकरि जीवैं हैं लोकनिकूं ज्योतिष वैद्यक मंत्र शास्त्रादि करि आपमैं भक्त करै हैं तथा जिनेंद्रका लिंग अर तपश्चरण करि धनकी बांछा करै हैं तथा जिनलिंग धारण करि ऋद्धिका गर्वकरि युक्त हैं हम जगतमैं पूज्य हैं तथा अपना यश जगतमैं विख्यात हैं ताका गर्वकरि युक्त हैं तथा अपने साताका उदयजनित सुखकरि गर्वकूं धारै हैं तथा जिनलिंग धारण करि आहारकी बांछा धारै हैं तथा अशुभका उदयको भय धारैं हैं तथा मैथुनकी बांछा करै हैं परिग्रह शिष्यादिककी बांछा करै हैं तथा जिनलिंग धारि परके विवाहमैं प्रवृत्ति करैं हैं ते कुतपके प्रभावतैं कुमानुषनिमैं उपजैं हैं। बहुरि जे जिनलिंग धारणकरि सम्यग्दर्शनकी विराधना करैं हैं जे जिनलिंगधारणकरके हू अपने दोषनिकी आलोचना गुरुनिसूं नाहीं करै हैं तथा जिनलिंग धारणकरके हू अन्यके दोष कहै हैं बहुरि जे मिथ्यादृष्टि पंचाग्नितपकरि कायक्लेश करैं हैं तथा जे मौन छांडि भोजन करैं हैं तथा जे दुष्ट भावनिकरि दान देहैं तथा जे असूचिपणाकरि दान देवै है तथा सूत-कादि सहित होय दान देवैं हैं तथा रजस्वला स्त्रीका संसर्ग करि दान देवै हैं तथा जातिसंकरादिकनि-करि दान देवैं हैं तथा कुपात्रनिमैं दान करैं हैं ते कुमानुषनिमैं उपजैं हैं ते कुमानुष हू समस्त क्लेशरहित एक पल्यपर्यंत स्त्री पुरुषका युगल साथि ही उपजै अर मरैं हैं। दानके तपके प्रभावतैं सदा काल सुखमैं मग्न काल पूर्ण करि मंद कषायके प्रभावतैं भवनत्रिकनिमैं जाय उपजैं हैं। बहुरि केई कुपात्रनिकूं दान देय बहुत भोगनि सहित म्लेच्छ उपजैं हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतैं नीचकुलनिमैं बहुत धनके धनी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामैं आसक्त निरोग शरीर होय हैं। केई कुपात्रदानके प्रभावतैं राजानिके दासी दास हस्ती घोडा श्वान बानर इत्यादिकनिमैं सुंदर भोजन वस्त्र आभरणादिक प्रचुर भोग उपभोग सामग्री भोगि मरणकरि दुर्गति चले जांय हैं जातैं कुपात्र हू अनेकजातिके अर दातारके भाव हू अनेक जातिके हैं अर

दानकी सामग्री हू अनेक जातिकी हैं तातैं दानका फल हू अनेकजातिका है। बहुरि दयादान ऐसा जानना जो बुभुक्षित होय दरिद्री होय अंधा होय लूला होय पांगला होय रोगी होय अशक्त होय वृद्ध होय बालक होय विधवा होय बावरा होय अनाथ होय विदेशी होय अपने यूथतैं संघतैं बिछुडि आया होय तथा बंदीगृहमैं रुक्या होय बंध्या होय तथा दुष्टनिका आतापतैं भागि आया हो लुट आया होय जाका कुटुंब मार्‍या गया होय भयवान होय ऐसा पुरुष हो हू वा स्त्री हो हू तथा बालक होहू वा कन्या तथा तिर्यंच होहू इनकी क्षुधा तृषा शीत उष्ण रोग तथा वियोगादिकनिकरि दुःखित जानि करुणाभावतैं भोजन-वस्त्रादिक दान देना सो करुणादानमैं हू उनका जाति कुल आचरणादिक जानि यथायोग्य दान करना। जो अभक्षादि भक्षण करनेवाले हैं उनकूं तो भोजन अन्न औषधि मात्र ही देना अर निंद्य आचरणवाले नाहीं इनका दुःख दूर करनेयोग्य रुपया पैसा हू देना स्थान हू देना ये दुःखित उपदेश योग्य हू हैं इनकूं भोजन वस्त्र औषधि स्थान उपदेश हू देना तथा जे स्थान देनेयोग्य नाहीं इनको दुःखी देखि रोटी अन्न-मात्र देय चलावना वैयावृत्य करनेयोग्य तिनका वैयावृत्य करना ज्ञानदान हू देना जातैं करुणादन पात्रकुपात्र अपात्रका विचाररहित केवल दया मात्र ही करि देना है तो हू देश काल परिणाम जाति कुलादि विचार यत्नसहित दान करो। मांसभक्षी मद्यपायीकूं रुपया पैसा नाहीं देना बहुत दुःखीमैं करुणा उपजै तो अन्नमात्र देना याका फल यशकीर्तनादिकी वांछा नाहीं करना। बहुरि दानके देनेयोग्य नाहीं ते अपात्र हैं। अब अपात्रनिके लक्षण कहैं हैं–जे दयारहित होय हिंसाके आरंभमैं आरक्त होय महालोभी परिग्रह बधाया ही चाहैं धनका धनी होय करकैं हू याचना करवो करै यज्ञादिकके करनेवाले वेदोक्त हिंसाधर्ममैं रक्त रहैं चंडी भवानीके सेवक होंय बकरा भैंसानिका घात करावनेवाले तथा कुदानके लेने-वाले मद्यपीवनेमैं भंग पान करनेमैं वेश्यासेवनेमैं लीन जिनधर्मके द्रोही शिकारादि करनेमैं धर्म कहने-वाले परधन परकी स्त्रीके रागी अपनी प्रशंसा करनेवाले व्रती नाम कहाय व्रतभंग करि पंच पापनिमैं

आसक्तता युक्त बहुतआरंभी बहुपरिग्रही तीव्रकषायी असत्यमैं लीन खोटे शास्त्रके उपदेश देनेवाले तथा जिनशास्त्रमैं खोटे मिलाय मिथ्या प्ररूपणा करनेवाले व्यसनी पाखंडी अभक्षभक्षक अर व्रतशील संयम तपतैं पराङ्मुख विषयनिके लोलुपी जिव्हाइंद्रियके वशीभूत भए मिष्ट भोजनके लंपटी ये सब अपात्र हैं जातैं इनमैं पात्रपना तो रत्नत्रय धर्मके अभावतैं नाहीं अर कुधर्म जे मिथ्याधर्म सेवनेवाले भी परके उपकारी दयावानपना क्षमा संतोष सत्यशील त्यागादिक पूजा जाप्य नाम स्मरणादिक मिथ्याधर्म भी जिनमैं पाइये नाहीं तातैं कुपात्र हू नाहीं अर गरीब दीन दरिद्री दुःखित हू नाहीं तातैं दयादानके पात्र हू नाहीं। केवल लोभी मदोन्मत्त विषयांका लंपटी है धर्मके इच्छुक हू नाहीं तथा केई जैनी नाम करके हू जिनधर्मका भेष हू केवल जिह्वा इंद्रियका विषयरूप नाना प्रकारके भोजन जीमनेकूं धार्‍या है तथा धन पैदा करनेकूं भेष धार्‍या है तथा अभिमानी होय अपनी पूजा उच्चता धनका लाभके इच्छुक होय तप व्रत पठन वाचनादि अंगीकार करै हैं ते अपात्र हैं दानके योग्य नाहीं इनको दान देना कैसाक है पाषाणमैं बीज बोवने समान है तथा कटुक तूंबीमैं दुग्ध धारण तुल्य है तथा गहनवनमैं चौरके हस्तमैं अपना धन सोंपने तुल्य है तथा अपने जीवनेके अर्थि विषभक्षण समान है तथा रोग दूरि करनेकूं अपथ्यभोजन समान है तथा सर्पकूं दुग्धपान करावने समान दुःखकी उत्पत्तिका बीज है तातैं अंधकूपमैं अपना धनकूं पटाकि देना परन्तु अपात्रकूं दान मत करो अपात्रका दान है सो अपने घरमैं विषके वृक्षकूं पुष्ट करना है अपात्रका संगम दावाग्निवत् दूरहीतैं त्याग करो। जैसैं विषवृक्षकी वासना ही मूर्छित कर दे है तैसैं अपात्रकी वासना हू आत्मज्ञानतैं भ्रष्ट करै है ऐसा दानका वर्णनमैं पात्र कुपात्र अपात्रका वर्णन किया अब च्यार प्रकार सुपात्रदान देय जे प्रसिद्ध हुआ तिनके आगमपाठतैं नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

श्रीषेणवृषभसेने कोण्डेशः सूकरश्च दृष्टान्ताः। वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥ ११८ ॥

अर्थ—चार प्रकारके वैयावृत्यका चार दृष्टांत जानने योग्य हैं आहारदानका फलतैं श्रीषेण राजा

प्रसिद्ध हुआ और औषधिदानका फलतैं वृषभसेना नाम श्रेष्ठीकी पुत्री प्रसिद्ध भई अर शास्त्रदानके फलतैं कोंडेश नामा ग्वाल शास्त्रदान देय अन्यभवमैं केवली भयो अर वस्तिकाके दानतैं सूअर मरि स्वर्गलोकमें महर्द्धिक देव हुवो दानका अचिंत्य प्रभाव है इस लोकमैं हू दानी समस्तमैं उच्च होय जाय है। अब यहां ऐसा और हू जानना जो दान देय दानका फल विषयभोग मेरे होयगा ऐसैं विषयनिकी वांछा कदाचित मत करो। जे दानका फलतैं इंद्रियानिके भोग चाहै हैं ते चिंतामाणि देय काचखंडकूं ग्रहण करै हैं तथा अमृत छांडि विष पीवै हैं तथा सूत्रके अर्थि माणिमयहारकूं तोडै हैं तथा इंधनके अर्थि कल्पवृक्षकूं छेदै हैं तथा लोहके अर्थि नावकूं तोडै हैं तथा अपने कंठके अतिभारी पाषाण बांधि अगाध जलमैं प्रवेश करै हैं कैसेक हैं इंद्रियानिके विषय अग्निकी ज्यों दाह उपजावै हैं कालकूट जहरकी ज्यूं अचेत करै हैं मारै हैं पंचपापनिमैं प्रवर्तावनेवाले हैं तृष्णा उपजावनेवाले हैं नरकमैं प्राप्त करनेवाले हैं महा वैरके कारण हैं ज्वररोगकी ज्यों संताप मूर्छा प्रलाप दुःख भय शोक भ्रम उपजावनेवाले हैं विषयनिका चिंतवन ही जीवकूं अचेत करै है सेवनाकिये तो अनेक भवनिमैं मारै ही यातैं निर्वांछक होय दानधर्ममैं प्रवर्तन करो। आपकूं लाभांतरायका क्षयोपशमतैं जो प्राप्त भया तीमे संतोष करि आगामी वांछा मत करो पावभर धान हू मिलै तामैं भी दानका विभाग करो दान निमित्त धनकी वांछा मत करो वांछाका अभाव सो ही परम दान है सो ही परमतप है ऐसैं वैयावृत्यकूं ही अतिथिसंविभाग व्रत कहिये है। ऐसैं दानका वर्णन तो किया। अब वैयावृत्यहीमैं जिनेंद्रका पूजन है यातैं जिनेंद्रका पूजनका उपदेश करनेकूं सूत्र कहै हैं—

देवाधिदेवचरणे परिचरणं सर्वदुःखनिर्हरणं। कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यं ॥ ११९ ॥

अर्थ—देव जे इंद्रादिक तिनका अधिदेव कहिये स्वामी जो अरहंतदेव ताका चरणनिके समीप जो परिचरण कहिये पूजन सो आदरतैं नित्य ही करै। कैसाक है पूजन समस्त दुःखनिका नाश करने वाला है वांछितकूं परिपूर्ण करनेवाला है अर कामकूं दग्ध करनेवाला है भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही जि·

नेंद्रका पूजन समान सर्वोत्तम कार्य अन्य नाहीं है तातैं प्रथम ही नित्य जिनेंद्रका पूजन करना इहां ऐसा संबंध जानना जो किंचितमात्र अशुभकर्मका क्षयोपशमतैं मनुष्य तिर्यंचनिका ज्यों सप्तधातुमय देह जिनकै नाहीं तथा आहारादिके आधीन क्षुधा तृषादिक वेदनाका मेटना नाहीं स्वयमेव कण्ठमैंतैं अमृत झरै है तिसकरि क्षुधा तृषा वेदना करि जिनके बाधा नाहीं अर जरा आवै नाहीं रोग आवै नाहीं इत्यादिक कर्मकृत किंचित बाधाके अभावतैं च्यारगतिमैं देवनिको उत्तम कहै हैं अर जिनके ज्ञानावरण वीर्यांतरायादिक कर्मका अधिक क्षयोपशम होनेतैं अन्य देवनिमैं नाहीं पाइये ऐसैं ज्ञान वीर्यादिक शक्तिकी अधिकतातैं देवनिके स्वामी इंद्र भये ये इंद्र समस्त असंख्यात देवनकरि वंद्य हैं अर जो समस्त ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय आत्माकी शक्तिके घातक समस्त कर्मका नाश करि जिनेंद्र भए ते समस्त इंद्रादिककरि वंदनीक भए ते देवाधिदेव हैं देवाधिदेवका चरणनिका पूजन है सो समस्त दुःखका नाश करनेवाला है अर इंद्रियनिके विषयनिकी कामनाका नाश कर मोक्ष होनेरूप सुखकी कामनाकूं पूर्ण करनेवाला है तातैं अन्य आराधना छांडि जिनेंद्रका आराधन करो। बहुत काल संसारी रागी द्वेषी मोही जीवनिकी आराधना सेवन करि घोर कर्मका बंधकरि संसारमैं परिभ्रमण किया वीतराग सर्वज्ञकूं आराधन करता तो कर्मके बंधका नाश करि स्वाधीन मोक्षरूप आत्माकूं प्राप्त होता तातैं संसारके समस्त दुःखका नाश करनेवाला जिनेंद्रका पूजन ही करो। इहां कोऊ आशंका करै भगवान अरहंत तो आयु पूर्णकरि लोकके अग्रभागमें मोक्षस्थानमैं हैं धातुपाषाणके स्थापना रूप प्रतिबिंबनिमैं आवै नाहीं तथा अपना पूजन स्तवन चाहै नाहीं अपना अनंतज्ञान अनंत सुखमैं लीन तिष्ठै हैं अपना पूजन स्तवन तो अभिमान कषाय करि संतापित अपनी बडाईका इच्छक अपना स्तवन करि संतुष्ट होय ऐसा संसारी रागद्वेषसहित होय सो चाहै भगवान परमेष्ठी वीतराग अनंतचतुष्टयरूपमैं लीन तिनके पूजाकी चाह नाहीं धातुपाषाणका प्रतिबिंबमैं आवै नाहीं किसीका उपकार करै नाहीं किसीका अपकार हू करै नाहीं पूजन

स्तवनादि करै तासूं प्रीत करै नाहीं निंदा करै तामैं द्वेष करै नाहीं फिर किस प्रयोजनके अर्थि पूजन स्तवन करिये है ताकूं उत्तर कहै हैं जो भगवान वीतराग तो पूजन स्तवन चाहै नाहीं परन्तु गृहस्थका परिणाम शुद्ध आत्मस्वरूपकी भावनामैं तो ठहरै नाहीं साम्यभावरूप रहै नाहीं निरालंबचित्त ठहरै नाहीं तदि परमात्मभावनाका अवलंबन करि वीतराग स्वरूपका ध्यानके अर्थि शुद्ध आत्माका अवलंबनके निमित्त विषय कषाय आरम्भका अवलम्बन छांडि साक्षात् परमागमस्वरूपका धातु पाषाणमैं प्रतिबिंबनिमैं संकल्पकरि परमात्माका ध्यान स्तवन पूजन करै है तिस अवसरमैं विषयकषायादिक संकल्पके अभावतैं दुर्ध्यानके छूटनेतैं अपने परिणामकी विशुद्धताका प्रभावतैं अशुभकर्मनिका रस सूकि जाय अशुभकर्मनिकी स्थिति घटि जाय अनुभाग घटि जाय सो ही पापकर्मका अभाव है अर परिणामनिकी विशुद्धताके प्रभावकरि शुभ प्रकृतिनिमैं रस बांधि जाय है तिन शुभ आयु विना समस्त कर्मनिकी प्रकृतिकी स्थिति घटि जाय है याहीतैं वीतरागका स्तवन पूजन ध्यानके प्रभावतैं पापकर्मका नाश होय है सातिशय पुण्यकर्मका उपार्जन होय है और हू निश्चय करो पुण्यपापका बन्धका कारण तो अपना भाव ही है बाह्य जैसा अवलंबन मिलै तैसा अपना भाव होय है यद्यपि भगवान अरहंत धातुपाषाणके प्रतिबिंबमैं आवै नाहीं अर भगवान वीतराग किसीका उपकार अपकार करै नाहीं तथा वीतरागका ध्यान पूजन नाम अपने शुभ परिणाम करनेकूं रागद्वेषके नाश करनेकूं बाह्य कारण हैं तातैं परम उपकार जीवका होय है जैसैं काष्ठपाषाण चित्रामके स्त्रीनिके रूप रागकूं कारण है तथा अचेतन सुवर्ण मणि माणिक्य रूपी महल वन बाग ग्राम पाषाण कर्दम स्मशानादिका देखना श्रवण करना राग द्वेष उपजावै है तथा शुभ अशुभ वचन राग रुदन सुगंध दुर्गंध ये समस्त अचेतन पुद्गल द्रव्य हैं इनका श्रवण अवलोकन चिंतवन अनुभव करि रागद्वेष होय है तैसैं जिनेंद्रकी परमशांतमुद्रा ज्ञानीनिके वीतरागता होनेकूं सहकारी कारण है प्रेरक नाहीं अर भव्य जीवनिके वीतरागतातैं अन्य कुछ चाहना नाहीं है अर जिनेंद्रके चरणनिके पूजनेमैं जो जल

चंदनादि अष्ट द्रव्य चढाइये है सो कुछ भगवान भक्षण करै वा पूजन विना अपूज्य रहैंगे वा वासना लेवै हैं ऐसा अभिप्रायतैं चढावना नाहीं है भगवानके दर्शनका अति आनन्दतैं जलचंदनादिकरूप अर्घ उतारण करना है। जैसैं राजानिकी भेट करना नजर करना उतारना निछरावलि करनी अक्षतपुष्पादिक क्षेपना मोतीनिके थाल बार (फेर) के उतारन करै हैं तथा सुवर्णकी महोर रुपयांका थाल उतार करि लुटावै हैं रत्ननिके थाल भर निछरावलि करि क्षेपै हैं पुष्प अक्षतादिक उतारन करै हैं ते राजानिकी भक्ति अर आनंद प्रकट करना है राजानिकूं दान नाहीं राजानिके अर्थि नाहीं है निछरावलि राजानिके निकट करी हुई अर्थी जन याचक जन ग्रहण करै हैं तैसैं भगवान अरहंतानिके अग्रभागविषे अष्टद्रव्यनिका अर्घ चढावना जानना। अब पूजनके योग्य नव देवता हैं। उक्तं च गोमट्टसारे गाथा—

अरहंतसिद्धसाहूतिदयं जिणधम्मवयणपडिमाहू। जिणणिलया इदिराए णवदेवा दिंतु मे वोहिं ॥ १ ॥

अर्थ—अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनवचन, जिनप्रतिमा, जिनमंदिर इसप्रकार ये नव देव हैं ते मोकूं रतनत्रयकी पूर्णता देवो सो जहां अरहंतानिका प्रतिबिंब है तहां नव रूप गर्भित जानना जातैं आचार्य उपाध्याय साधु तो अरहंतकी पूर्व अवस्था है अर सिद्ध है सो पूर्वै अरहंत होय करके ही सिद्ध भया है अरहंतानिकी वाणी सो जिनवचन है अर वाणीकरि प्रकाश किया अर्थ सो जिनधर्म है अर अरहंतका स्वरूप जहां तिष्ठै सो जिनालय है ऐसे नवदेवतारूप भगवान अरहंतके प्रतिबिंबका पूजन नित्य ही करना योग्य है अरिहंतके प्रतिबिंब अधोलोकमैं भवनवासीनिके चमर वैरोचनादिक इंद्र अर असंख्यात भवनवासी देवनिकरि पूजिये है अर मध्यलोकमैं चक्रवर्ती नारायण बलभद्रादिक अनेक धर्मात्मानि कर पूजिये है अर व्यंतरलोकमैं व्यंतरेंद्रादिक देवनि करि पूजिये है अर ज्योतिर्लोकमैं चंद्रसूर्यादिक असंख्यात ज्योतिषी देवानि करि पूजिये है स्वर्गलोकमैं सौधर्म इंद्रादिक असंख्यात कल्पवासी देवनिकरि पूजिये है ऐसैं त्रैलोक्यके भव्यानि करि वंद्य पूज्य अरहंतका तदाकार प्रतिबिंब है सो सदाकाल

भव्यजीवनिकूं पूजना योग्य है। अब पूजा दोय प्रकार है एक द्रव्यपूजा एक भावपूजा तहां जो अरहंत प्रतिबिंबका वचनद्वारै स्तवन करना नमस्कार करना तीनप्रदक्षिणा देना अंजुलि मस्तक चढावना जल चंदनादि अष्ट द्रव्य चढावना सो द्रव्यपूजा है अर अरहंतके गुणनिमैं एकाग्रचित होय अन्य समस्त विकल्पजाल छांडि गुणनिमैं अनुरागी होना तथा अरहंतप्रतिबिंबका ध्यान करना सो भावपूजा है अथवा अरहंतप्रतिबिंबका पूजनके अर्थि शुद्धभूमिमैं प्रमाणिकजलतैं स्नान करि उज्वल वस्त्र पहिर महाविनयसंयुक्त अंजुलि जोडि भक्तिसहित उज्ज्वल निर्दोष जलकरि अरहंतके प्रतिबिंबका अभिषेक करना सो पूजन है यद्यपि भगवानके अभिषेकका प्रयोजन नाहीं तथापि पूजकके ऐसा भक्तिरूप उत्साहका भाव है जो अरहंतकूं साक्षात् स्पर्श ही करूं हूं अभिषेक ही करूं हूं ऐसी भक्तिकी महिमा है। बहुरि उत्तम जलकूं झारीमैं धारण करि अरहंतप्रतिबिंबका अग्रभागविषै ऐसा ध्यान करै जो हे जन्म जरा मरणकूं जीतने वाले जिनेंद्र मैं जन्मजरामरणके नाशके अर्थि जलकी तीनधार आपका चरणारबिन्दांकी अग्रभूमिविषै क्षेपण करूं हूं हे जिनेंद्र हे जन्मजरामरणरहित आपका चरणांका शरण ही जन्मजरामरणरहित होनेकूं कारण है बहुरि हे संसारपरिभ्रमणका आतापरहित मैं अपने संसारपरिभ्रमणरूप आताप नष्ट करनेकूं चंदन कर्पूरादिक द्रव्यकूं आपका चरणनिका अग्रभागविषै चढाऊं हूं। हे अविनाशी पदके धारक जिनेंद्र मैं हूं अक्षयपदकी प्राप्तिके अर्थि अक्षतनिकूं आपका अग्रस्थानमैं क्षेपण करूं हूं। हे कामबाणके विध्वंसक जिनेंद्र मैं हूं कामका विध्वंशके अर्थि पुष्पनिकूं आपका अग्रस्थानमै क्षेपण करूं। हे क्षुधारोगरहित जिनेंद्र मैं हूं क्षुधारोगका नाशके अर्थि नैवेद्यकूं आपका अग्रस्थानविषै स्थापन करूं हूं। हे मोहअंधकाररहित जिनेंद्र मै हू मोहअंधकार दूरि करनेकूं आपका अग्रस्थानविषै दीपक स्थापन करूं हूं। हे अष्टकर्मके दाहक जिनेंद्र मैं हू अष्टकर्मके नाशकेअर्थि आपका अग्रभागस्थानविषै धूप स्थापन करूं हूं। हे मोक्षस्वरूप जिनेंद्र मैं हू मोक्षरूपफलके अर्थि आपका अग्रस्थानविषै फलनिकूं स्थापन करूं हूं ऐसैं अपने देश कालकी योग्यता प्रमाण

एकद्रव्यतैं हू पूजन है दोयद्रव्यतैं तथा तीन च्यार पांच छह सात अष्टद्रव्यनितैं हू पूजन करि भावानिकूं परमेष्ठीके ध्यानमैं युक्त करै है स्तवन पढै है महा पुण्य उपार्जन करै है पापकी निर्जरा करै है । इहां ऐसा विशेष और जानना जो जिनेंद्रके पूजक समस्त च्यारप्रकारके देव तो कल्पवृक्षनितैं उपजे गंध पुष्प फलादि सामग्री करि पूजन करै हैं अर सौधर्म इंद्रादिक सम्यग्दृष्टि देव हैं ते तो जिनेंद्रकी भक्ति पूजन स्तवन करके ही अपनी देवपर्यायकूं सफल मानैं अर मनुष्यानिमैं चक्रवर्ती नारायण बलभद्रादिक राजेंद्र हैं ते मोतीनिके अक्षत रत्ननिके पुष्प फल दीपकादिक तथा अमृतपिंडादिकानिकरि जिनेंद्रका पूजन स्तवन नृत्य गानादिककरि महापुन्य उपार्जन करै हैं। अर अन्य मनुष्यानिमें हू जिनके पुण्यके उदयतैं सम्यक् उपदेशके ग्रहणतैं जिनेंद्रके आराधनमैं भक्ति उत्पन्न होय ते समस्त जातिकुलके धारक यथायोग्य पूजन करैं हैं। समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अपना अपना सामर्थ्य अपना अपना ज्ञान कुल बुद्धि संपदा संगति देशकालके योग्य अनेक स्त्री पुरुष नपुंसक धनाढ्य निरधन सरोग नीरोग जिनेंद्रका आराधन करैं है। केई ग्रामनिवासी हैं केई नगरनिवासी हैं केई वननिवासी हैं केई अतिछोटे ग्राममैं बसनेवाले हैं तिनमैं केई तो अतिउज्जल अष्टप्रकारसामग्री बनाय पूजनके पाठ पढिकरि पूजन करैं हैं केई कोरा सूका जव, गेहूं, चना, मक्का, बाजरा, उडद, मूग, मोठ इत्यादिक धान्यकी मूठी ल्याय जिनेंद्रकै चढावै हैं केई रोटी चढावैं हैं केई राबडी चढावैं हैं केई अपनी बाडीतैं पुष्प ल्याय चढावैं है केई नानाप्रकारके हरित फल चढावैं हैं, केई जल चढावै हैं । केई दाल भात अनेक व्यंजन चढावै हैं, केई नाना मेवा चढावैं हैं, केई मोतीनिके अक्षत माणिकानिके दीपक सुवर्ण रूपानिके तथा पंचप्रकार रत्ननिकरि जडे पुष्प फलादि चढावैं हैं केई दुग्ध केई दही केई घृत चढावैं है केई नानाप्रकारके घेवर, लाडू, पेडा, बरफी, पूडी, पूवा इत्यादिक चढावैं हैं केई बंदना मात्रही करै हैं केई स्तवन केई गीत नृत्य वादित्र ही करैं हैं, केई अस्पर्श्यशूद्रादिक मंदिरके बाह्य ही रहि मंदिरके शिखरकी तथा शिखरनिमैं जिनेंद्रके प्रतिबिंबका ही दर्शन बंदना

करैं हैं ऐसैं जैसा ज्ञान जैसी संगति तैसी सामर्थ्य जैसा धन संपदा जैसी शक्ति तिस प्रमाण देशकालके योग्य जिनेंद्रका आराधक अनेक मनुष्य हैं ते वीतरागका दर्शन स्तवन पूजन बंदना करि भावानेके अनुकूल उत्तम मध्यम जघन्य पुण्यका उपार्जन करै हैं यो जिनेंद्रका धर्म जाति कुलके आधीन नाहीं धनसंपदाके आधीन नाहीं बाह्यक्रियाके आधीन नाहीं है। अपने परिणामनिकी विशुद्धताके अनुकूल फलै है कोऊ धनाढ्य पुरुष अभिमानी होय यशका इच्छुक होय मोतीनिके अक्षय माणिकानके दीपक रत्न सुवर्णके पुष्पानिकरि पूजन करै हैं अनेक वादित्र नृत्यगान करि बडी प्रभावना करै है तो हू अल्प पुण्य उपार्जन करै वा अल्पहू नाहीं करै केवल कर्मका वंध ही करै है कषायनिके अनुकूल बंध होय है। केई अपने भावनिकी विशुद्धतातैं अति भक्तिरूप हुवा कोऊ एक जल फलादिक करि वा अन्नमात्र करि वा स्तवनमात्रकरि महापुण्य उपार्जन करै है तथा अनेक भवनिके संचय किये पापकर्मकी निर्जरा करै हैं धनकरि पुण्य मोल नाहीं आवै है। जे निर्वांछक हैं मंदकषायी ख्याति लाभ पूजादिककूं नाहीं वांछा करता केवल परमेष्ठीका गुणांमैं अनुरागी हैं तिनके जिनपूजन अतिशयरूप फलकूं फलै है। अब इहां जिन पूजन सचित्त द्रव्यनितैं हू अर अचित्तद्रव्यनितैं हू आगममैं कह्या है जे सचित्तके दोषतैं भयभीत हैं यत्नाचारी तो प्रासुक जल गंध अक्षतकूं चंदन कुंकुमादिकतैं लिप्त करि सुगंध रंगीनमैं पुष्पानिका संकल्पकरि पुष्पानितैं पूजैं हैं तथा आगममैं कहे सुवर्णके पुष्प वा रूपाके पुष्प तथा रत्नजटित सुवर्णके पुष्प तथा लवंगादिक अनेक मनोहर पुष्पानि करि पूजन करै हैं अरु प्रासुक हो बहुआरंभादिकरहित प्रमाणीक नैवेद्य करि पूजन करै है बहुरि रत्नानिके दीपक वा सुवर्णरूपामय दीपकनिकरि पूजन करै है तथा सचिक्कणद्रव्यनिके केसरके रंगादिकतैं दीपका संकल्पकरि पूजन करै हैं तथा चंदनअगरादिककूं चढावै हैं तथा वादाम जायफल पूंगीफलादिक अबींध शुद्ध प्रासुक फलानितैं पूजन करै हैं ऐसैं तो अचित्त द्रव्यनिकरि पूजन करै हैं।

बहुरि जे सचित्त द्रव्यनितैं पूजन करै हैं ते जल गंध अक्षतादि उज्जल द्रव्यनिकरि पूजन करै हैं अर चमेली चंपक कमल सोनजाई इत्यादिक सचित्त पुष्पनितैं पूजन करै हैं घृतका दीपक तथा कपुरादिक दीपकनिकरि आरती उतारै हैं अर सचित्त आम्र केला दाडमादिक फल करि पूजन करै हैं धूपायनिमैं धूपदहन करै हैं ऐसैं सचित्त द्रव्यनिकरि हू पूजन करिये हैं दोऊप्रकार आगमकी आज्ञा प्रमाण सनातनमार्ग है अपने भावनिके आधीन पुण्यबंधके कारण हैं। यहां ऐसा विशेष जानना जो इस दुःखमकालमैं विकलत्रय जीवनिकी उत्पत्ति बहुत है अर पुष्पनिमैं बेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री त्रसजीव प्रगट नेत्रनिके गोचर दौडते देखिये है पुष्पनिकूं पात्रमैं झडकाय देखिये तो हजारां जीव फिरते दौडते नजर आवै हैं अर पुष्पनिमैं त्रसजीव तो बहुत ही हैं अर बादर निगोदजीव अनंत हैं अर चैत्रमासमैं तथा वर्षाऋतुमैं त्रसजीव बहुत उपजैं हैं तातैं ज्ञानी धर्मबुद्धि हैं ते तो समस्त कार्य यत्नाचारतैं करो। जैसे जीवनिकी विराधना नाहीं होय तैसैं करो। बहुरि फूलनिके धोवनेमें दौडते त्रसजीवनिकी बडी हिंसा है यातैं हिंसा तो बहुत है अर परिणामनिकी विशुद्धता अल्प है यातैं पक्षपात छांडि जिनेंद्रका प्ररूप्या अहिंसाधर्म ग्रहण करि जेता कार्य करो तेता यत्नाचाररूप जीवविराधना टालि करो इस कलिकालमैं भगवानका प्ररूप्या नयविभाग तो समझै नाहीं अर शास्त्रनिमैं प्ररूपण किया तिस कथनीकूं नयविभागतैं जानै नाहीं अर अपनी कल्पनाहीतैं पक्ष ग्रहण करि यथेष्ट प्रवर्तै है। बहुरि केतेक पक्षपाती भादवामै दिवसमै तो पूजन नाहीं करै रात्रिमैं पूजन करै हैं बहुत दीपक जोवै है नैवेद्य चढावै है बहुत पुष्पनिका पुंज चढावै है तिनमै लाखां मच्छर डांस माक्षिकाका छत्ता पडै है दीपकके पात्रनिमैं अपरिमाण मच्छर डांस माक्षिका अर हरे पीत श्याम लालरंगके कोट्यां त्रसजीव अनेकरंगके छोटी अवगाहनाके धारक सामग्री करनेमै चढावनेके थालनिमै वस्त्रनिमै दीपकनिके निमित्त दूर दूरते आय पडि पडि मरैं हैं प्रत्यक्ष देखै है अपने मुखमै नासिकामै नेत्रनिमै कर्णनिमै धसै है उडावै हैं मारै हैं तो हू अपनीपक्ष छांडे नाहीं दिवस

छांडि रात्रिमैं ही पूजन करै हैं। रात्रिमैं तो आरम्भ छांडि यत्नाचारसहित रहनेकी आज्ञा है धर्मका स्वरूप तो बाह्य जीवदया अर अंतरंगमैं रागद्वेषमोहका विजयरूप है। जहां जीवहिंसा तहां धर्म नाहीं अर जहां अभिमानके वश होय एकांतपक्षका ग्रहण करि अपना पक्ष पुष्ट करनेकूं हिंसाका भय नाहीं करै हैं तहां धर्म नाहीं बहुरि केतेक एकांती मंडल मांडि आठदिन दशदिन राखैं हैं। तिन सामग्रीनिमैं प्रत्यक्ष नेत्रनिके गोचर लट कीडा विचरै हैं। फलादिक गलि चालितरस होय हैं। तथा नैवेद्यादिकनिकी गंधतैं कीडा कीडीनिके नाला खुल जाय हैं। प्रभावनाके अर्थि अनेक मनुष्य आवैं तिन करि खूंदि मरि जाय हैं ऐसैं प्रत्यक्ष देखतै हू अपनी पक्षका अभिमानकी अंधेरी करि नाहीं देखै हैं। रात्रीकी बासी सामग्री रखना महान् हिंसाका कारण है। बहुरि अनेक पुराणनिमैं अर अनेक श्रावकाचारनिमैं अरहंतकी प्रतिमाका अष्ट द्रव्यनिकरि पूजन करनेका ही उपदेश है। अर कहूं अरहंत प्रतिबिंबका स्तवनबंदनाका कहूं अभिषेकका वर्णन है। अर प्रतिबिंब तदाकार होते किसी ग्रंथमैं हू स्थापनाका वर्णन नाहीं अर अब इस कलिकालमैं प्रतिमा विराजमान होते हू स्थापनाही कूं प्रधान कहै हैं। इस जयपुरमैं संवत् १८५० अठारहसैपचासका सालमैं अपना मनकी कल्पनातैं कोई नव स्थापनाकी प्रवृत्ति रची है तिनमैं अरहंत १ सिद्ध २ आचार्य ३ उपाध्याय ४ साधु ५ जिनवाणी ६ दशलाक्षण धर्म ७ षोडश कारण ८ रत्नत्रय ९ ऐसैं नवप्रकार स्थापना करै हैं अर ऐसैं कहै हैं जो सप्तव्यसनका त्याग अन्यायका त्याग अभक्षका त्याग जाकै होय सो स्थापनासंयुक्त पूजन करै अन्याय अभक्षका त्याग जाकै नाहीं होय सो स्थापना मत करो। स्थापनासहित पूजन तो सप्तव्यसनका अन्याय अभक्षका त्याग करनेवाला ही करै जाकै त्याग नाहीं सो स्थापना कर्‍यां विना पूजन करलो स्थापना नाहीं करना। अर स्त्रीनिकूं रंगीन कपडा पहरि स्थापनाविना पूजन करना कहै हैं। ऐसैं कहनेवालेनिकै साक्षात् जिनेंद्रका प्रतिबिंब मानना नाहीं रह्या अर तदाकार चांवलाकी स्थापनाहीका विनय करना रह्या प्रतिबिंबका विनय करना मुख्य नाहीं रह्या

३०

प्रतिमाका पूजन वंदना स्तवन तो चाहे सो ही करो अर पीततंदुलांमें स्थापना करना तो उत्तम होय व्यसन अभक्षादिक पापरहित होइ तिसहीके योग्य है। ऐसें पीतअक्षतानिमें स्थापना सो तो मुख्य विनय रह्या अर प्रतिमामें पूजनादिक गौण रह्या अर पक्षपाती कहै हैं जिस तीर्थंकरकी प्रतिमा होय तिनके आगें तिनहीकी पूजा स्तुति करनी अन्य तीर्थंकरकी स्तुति पूजा नाहीं करनी अर अन्य तीर्थंकरकी पूजा करनी होय तो स्थापना तंदुलादिकतैं करके अन्यका पूजन स्तवन करना ऐसा पक्ष करै हैं। तिनकूं इस प्रकार तो विचार किया चाहिये जे समंतभद्रस्वामी शिवकोटिराजाके प्रत्यक्ष देखते स्वयंभू स्तवन कियो तद चंद्रप्रभ स्वामीकी प्रतिमा प्रगट भई तब चंद्रप्रभके सन्मुख अन्य षोडश तीर्थंकरनिकी स्तवन कैसैं किया ? बहुरि एक प्रतिमाके निकट एकहीका स्तवन पढना योग्य होय तो स्वयंभूस्तोत्रका पढना ही नाहीं संभवै तथा आदिजिनेन्द्रकी प्रतिमाविना भक्तामरस्तोत्र पढना नाहीं बनैगा। पार्श्वजिनकी प्रतिमा विना कल्याणमन्दिर पढना नाहीं बनैगा पंचपरमेष्ठीकी प्रतिमा विना वा स्थापना विना पंच नमस्कार कैसैं पढ्या जायगा कायोत्सर्ग जाप्यादिक नाहीं बनैगा वा पंचपरमेष्ठीकी प्रतिमाविना नाम लेना जाप्य करना सामायिक करना नाहीं संभवैगा तथा अन्यदेशमें नाहीं जान्या मन्दिरमें पहली प्रतिमाका निश्चय विना स्तुति पढना नाहीं संभवैगा तथा रात्रिका अवसर होय छोटी अवगाहनाकी प्रतिमा होय तहां पहली चिह्नका निश्चय करै पाछैं स्तवनमें प्रवर्त्या जायगा तथा जिस मंदिरमें अनेक प्रतिमा होंय तादि जाको स्तवन करै तिसके सन्मुख दृष्टिसमस्या हस्त जोर वीनती करना संभवै अन्य प्रतिमाके सन्मुख नाहीं संभवै बहुरि जिसमन्दिरमें अनेक प्रतिबिंब होय तहां जो एकका स्तवन वंदना किया तादि दूजेका निरादर भया। दूजेका स्तवन किया तादि तीजे चौथे पंचमादिकका भावानिमें निरादर भया तादि भक्ति नष्ट भई अर जो कहोगे बहुत प्रतिमा होय तहां चौवीसका स्तवन करैंगे तो तहां जो बीस ही तथा बाईस तेईस ही होंय तो पहली एकके चिह्नका आछीतरह निर्णयकरि तितनाहीका स्तवन किया जायगा

अन्य तीर्थंकरनिका स्तवन निकास्या जायगा अर जहां छोटे स्वरूप होंय दूरि विराजमान होंय तथा दृष्टि मंद होय तहां पांच आदम्याने पूछि स्तवन वंदना करना बनैगा ऐसैं एकांती मनोक्त कल्पना करनेवालेके अनेक दोष आवैं हैं।

बहुरि जो स्थापनाके पक्षपाती स्थापनाविना प्रतिमाका पूजन नाहीं करैं तो स्तवन वंदना करनेकी योग्यता हू प्रतिमाके नाहीं रही। बहुरि जो पीततंदुलनिकी अतदाकार स्थापना ही पूज्य है तो तिन पक्षिपातीनके धातुपाषाणका तदाकार प्रतिबिंब स्थापन करना निरर्थक है तथा अकृत्रिम चैत्यालयके प्रतिबिंब अनादिनिधन स्थापन हैं तिनमैं हू पूज्यपना नाहीं रह्या। बहुरि एकप्रतिमाके आगैं एकका पूजन होय अन्य तेईसका पूजन करै सो पीतअक्षतनिकी स्थापन करकै करै तदि तेईसप्रतिमाका संकल्प पीतअक्षतनिमैं भया तदि जयमाल स्तवन पूजनमैं अपनी दृष्टि पीत अक्षतनिमैं ही रखनी। एक प्रतिमामैं चौईसका भाव अयोग्य ठहरै तेईस प्रतिमास्थापनके पुष्प रहैं। जो पूजन ही स्थापना विना नाहीं तदि घरमै वनमैं विदेशमैं अरहंतनिका स्तवन वंदना हू नाहीं संभवै एकांती आगमज्ञानरहित पक्षपाती हैं तिनका कहनेका ठिकाना नाहीं पापका भय नाहीं। बहुरि पूजन चौईसका करै शांतिमैं सोलमातीर्थंकरका स्तवन करै। तातैं अनेकांतका शरण पाय आगमकी आज्ञा विना पक्षका एकांत ठीक नाहीं है। ऐसा विशेष जानना—एक तीर्थंकरकै हू निरुक्ति द्वारै चौईस नाम संभवै हैं। तथा एकहजार आठ नाम करि एक तीर्थंकरका सौधर्म इंद्र स्तवन किया है तथा एक तीर्थंकरके गुणनिके द्वारै असंख्यात अनंत नाम संभवै हैं। बहुरि अब ए चौईस नाम तथा असंख्यात नाम अनंतकालतैं अनंत तीर्थंकरानिके होगए हैं अर मातापिताके हू ए ही नाम अर शरीरकी अवगाहना अर वरणादिक ए हू अनंत कालमैं अनंत होगये। तातैं हू एक तीर्थंकरमैं एकका भी संकल्प अर चौईसका भी संकल्प संभवै है। अर इस कालमैं अन्यमतीनकी अनेक स्थापना होगई तातैं इसकालमैं तदाकार स्थापनाहीकी मुख्यता है जो अतदाकार स्थापनाकी प्रधानता होजाय तो चाहै

जीमें वा अन्यमतीनकी प्रतिमामैं हू अरहंतकी स्थापनाका संकल्प करने लागि जाय तो मार्ग भ्रष्ट होजाय। अर प्रतिमाके चिह्न है सो इंद्र जन्माभिषेक करि मेरूसूं ल्यायो तादि ध्वजामैं जो चिह्न स्थापन किया था सो ही प्रतिमाके चरणचौकीमें नामादिक व्यवहारके अर्थि हैं अर एक अरहंत परमातमा स्वरूपकरि एकरूप है अर नामादिककरि अनेकस्वरूप है। सत्यार्थ ज्ञानस्वभाव तथा रत्नत्रयरूपकरि वीतरागभावकरि पंच परमेष्ठीरूप एक ही प्रतिमा जाननी तातैं परमागमकी आज्ञा विना वृथा विकल्प करना शंका उपजावनी ठीक नाहीं जिनसूत्रकी आज्ञा हू सो प्रमाण है। बहुरि व्यवहारमैं पूजनके पंच अंगनिकी प्रवृत्ति देखिये है आह्वानन ॥ १ ॥ स्थापना ॥ २ ॥ संनिधिकरण ॥ ३ ॥ पूजन ॥ ४ ॥ विसर्जन ॥ ५ ॥ सो भावनिके जोडवास्तैं आह्वाननादिकनिमैं पुष्प क्षेपण करिये है। पुष्पनिकूं प्रतिमा नाहीं जाने है। ए तो आह्वाननादिकानिका संकल्पतैं पुष्पांजालि क्षेपणा है। पूजनमैं पाठ रच्या होय तो स्थापना करले नाहीं होय तो नाहीं करै। अनेकांतनिके सर्वथा पक्ष नाहीं भगवान् परमातमा तो सिद्धलोकमैं हैं एक प्रदेश भी स्थानतैं चले नाहीं परंतु तदाकार प्रतिबिंबसूं ध्यान जोडनेके अर्थि साक्षात् अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुरूपका प्रतिमामैं निश्चय करि प्रतिबिंबमैं ध्यान पूजन स्तवन करना। बहुरि केतेक पक्षपाती कहै है जो भगवान्का प्रतिबिंब विना सभाके श्रावक लोकानिमैं हजूरी पद तथा स्तोत्र मत पढो। भगवान् परमेष्ठीका ध्यान स्तवन तो सदाकाल परमेष्ठीकूं ध्यान गोचर करि पढना स्तवन करना योग्य है जो प्रतिमाका सन्मुख तो विना स्तुतिका हजूरी पद पढनेकूं निषेध है तिनके पंच नमस्कार पढना स्तवन पढना सामायिक बंदनाका पढना प्रतिमाका सन्मुख विना नाहीं संभवैगा। शास्त्रका व्याख्यानमैं नमस्कारके श्लोक पढनेका निषेध होजायगा तातैं अज्ञानीनका कहनेतैं स्तवनतैं अध्यातममैं कदाचित् पराङ्मुख होना योग्य नाहीं।

यहां प्रकरण पाय अकृत्रिम चैत्यालयनिका स्वरूप ध्यानकी शुद्धताके अर्थि श्रीत्रिलोकसारके

अनुसार किंचित लिखिये है। अधोलोकमैं सात करोड बहत्तर लाख भवनवासीके भवन हैं तिनमें केतेक भवन असंख्यात योजनके विस्ताररूप हैं। केतेक संख्यात योजनके विस्ताररूप हैं तिन एक एक भवनमैं असंख्यात भवनवासी देवनिकरि वंदनीक एक एक जिनमंदिर ऐसैं सात कोड बहत्तरि लाख ही जिनमंदिर हैं। अर मध्यलोकमैं पंचमेरुनिमैं अस्सी जिनमंदिर हैं गजदंतानि ऊपरि बीस हैं अर कुलाचलनिमैं तीस। विजयार्द्धनि परि एक सो सत्तर। देवकुरु उत्तरकुरुमैं दश। वक्षारागिरनिमैं अस्सी। मानुषोत्तर उपरि चार। इष्वाकार उपरि चार। कुंडलागिरि उपरि चार। रुचिकागिरि ऊपरि चार। नंदीश्वरद्वीपमैं बावन ऐसे मध्यलोकमैं चारसे अठावन हैं। ऊर्ध्वलोकमैं स्वर्गनिमैं अहमिंद्रलोकमैं चौरासी लाख सत्तानवे हजार तेईस हैं। अर व्यंतरनिके असंख्यात जिनमंदिर हैं अर जोतिर्लोकमैं असंख्यात जिनमंदिर हैं। ऐसैं संख्यारूप जिनमंदिर तो आठ कोडि छप्पन लाख सत्तानवे हजार चारसे इक्यासी हैं। अर व्यंतरज्योतिषिनके असंख्यात जिनमंदिर हैं। अब जिनालयनिका स्वरूप कहिये है, जिनालय तीन प्रकार हैं उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तिनमैं उत्कृष्ट जिनमंदिरकी लंबाई सौ योजनकी है चौडाई पचास योजन हैं ऊंचाई पचहत्तर योजनकी है। अर मध्यम जिनमंदिर पचास योजन लंबे पचास योजन चौडे साढा सैंतीस योजन ऊंचे हैं अर जघन्य जिनमंदिर पचास योजन लंबा साढा बारा योजन चौडा पौणा उगणीस योजन ऊंचा है अर समस्तकी नीव जमीनमें आधा २ योजनकी है बहुरि इन जिनमंदिरनिके तीन तीन द्वार हैं तिनमें सन्मुख द्वार तो एक एक है और पसवाडे दोऊनिके दोय दोय द्वार हैं तिनमें सन्मुख द्वारका परिमाण ऐसा जानना उत्कृष्ट जिनमंदिरके द्वारकी ऊंचाई सोलह योजनकी है चौडाई आठ योजनकी है। मध्यम मंदिरनिका द्वारकी ऊंचाई आठ योजनकी अर चौडाई चार योजनकी है जघन्य जिनमंदिरनिका द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी अर चौडाई दोय योजनकी है। बहुरि पसवाडानिके दोय २ छोटे द्वारनिका परिमाण ऐसा जानना, उत्कृष्ट जिनमंदिरका छोटा द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी है

अर मध्यम जिनमंदिरनिका छोटा द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी है अर चौडाई दोय योजनकी है अर जघन्य जिनमंदिरनिके छोटे द्वार दोय योजन ऊंचे और एक योजन चौडे हैं इहां भद्रशालवन नंदनवन नंदीश्वरद्वीपमें अर स्वर्गके विमानमें उत्कृष्ट परिमाण सहित जिनालय हैं। अर सौमनसवनमें रुचक पर्वतमें कुंडलागिरी ऊपरि वक्षार गिरानि उपरि इष्वाकार उपरि मानुषोत्तर उपरि कुलाचलानि उपरि मध्यम प्रमाण लिये जिनमंदिर हैं। अर पांडुक वनके जिनालयनिका जघन्य प्रमाण है। बहुरि विजयार्द्ध पर्वतनके उपरि अर जंबूशाल्मलि वृक्षनिविषै जिनमंदिरनिकी लंबाई एक कोशकी है अवशेष जे भवनवासिनके भवननिमें तथा व्यंतरानिके जोतिषीदेवनिके जिनालय हैं ते यथायोग्य लंबाई जिनेंद्र भगवान देखी है तैसे तैसे प्रमाण लिये हैं। अब जिनमंदिरनिका वाह्यपरिकर सात गाथानिमें कह्या है। समस्त जिनभवनके चार तरफ चार चार द्वारनिकरि युक्त मणिमयी तीन कोट हैं। अर द्वारनि होय जानेकी गली गली एक एक मानस्तंभ है अर नव नव स्तूप हैं अर तीन तीन कोटका अंतरालके माहीं पहला दूजा कोटके बीच वन है दूसरा तीसरा कोटके बीच ध्वजा है। तीजा कोट अर चैत्यालयके बीच चैत्यभूमि है। तिन जिनभवनानिविषै एकसौ आठ गर्भगृह हैं। तिन जिनभवनानिके मध्य रत्ननिके स्तंभनिकरियुक्त सुवर्णमय दोय योजन चौडा आठ योजन लंबा चार योजन ऊंचा देवच्छद कहिये मंडप गुमज छाति सहित हैं तिसविषै एकसौ आठ गर्भगृह हैं तिन गर्भगृहनिविषै आदि जिनेन्द्रके देह परिमाण उच्चतायुक्त एकसौ आठ जिनप्रतिमा रत्नमय हैं। कैसेक हैं जिनप्रतिमा भिन्न भिन्न सिंहासन छत्रत्रयादि प्रातिहार्यनिकरि सहित हैं। अति नील मस्तकविषै जिनके केश हैं। ते केशानिके आकार रत्ननिके पुद्गलपरिणाम हैं केश नाहीं हैं। बहुरि वज्र जो हीरा तिनमयी दंतानिके आकार संयुक्त हैं। अर विद्रुम जो मूंगा तिस समान रक्त जिनके ओष्ठ हैं। अर नवीन कूंपल समान शोभायुक्त रक्त हस्तपादतल हैं श्रीराजवार्तिकमें प्रतिमाका वर्णनमें लोहिताक्ष माणिकरि व्याप्त अंक स्फाटिकमणिमय हैं नयन जिनके

अर अरिष्ट मणिमय हैं श्याम नेत्रनकी तारका जिनकी अर अंजन मूल मणिमय वाफणी अर भृकुटीकी लता जिनके नीलमणिमय केशनिकरि युक्त ऐसी जिनप्रतिमा हैं दश ताल प्रमाण लक्षणादिकरि भरी हैं। इहां तालका परिमाण बारह अंगुलका है। प्रथम जिनेंद्र ज्यों जानो कि देखैं ही है मानो बोलै ही है। बहुरि एक एक गर्भगृहविषै बराबर पंक्ति करि खडे नागकुमारनिके वा यक्षनिके बत्तीस युगल चमर हस्तनिमैं लिये हैं। भावार्थ–एक एक गर्भगृहमैं एक एक जिनप्रतिमाके दोऊं तरफ समस्त आभरणकरि भूषित अर श्वेतनिर्मलरत्नमय चमर हस्तमैं धारण करते नाग कुमार वा यक्ष चौंसठ चमर ढारै हैं। ऐसैं एकसौ आठ प्रतिमानिके जुदे २ प्रातिहार्य एक एक जिनालयमैं हैं बहुरि तिन जिनप्रतिमानिके दोऊं पसवाडेनविषै श्रीदेवी अर सरस्वती देवी अर सर्वाह्न यक्ष अर सनत्कुमार यक्ष इनके रूप आकार तिष्ठै हैं बहुरि अष्टप्रकारके मंगल द्रव्य जिनप्रतिमाके निकट शोभै हैं। झारी ॥ १ ॥ कलश ॥ २ ॥ दर्पण ॥ ३ ॥ बीजणा ॥ ४ ॥ ध्वजा ॥ ५ ॥ चमर ॥ ६ ॥ छत्र ॥ ७ ॥ ठोना ॥ ८ ॥ ए आठ मंगलद्रव्य हैं ते एक एक मंगलद्रव्य एक सौ आठ प्रमाण एक एक प्रतिमानकै शोभै हैं। अब गर्भगृहके बाह्य की रचनाकूं ऐसैं जानो–मणिजटित सुवर्णमय पुष्पनिकरि शोभित बना जो देवच्छंद तींका अग्रभाग के मध्य रूपामयी अर सुवर्णमयी बत्तीस हजार कलश हैं बहुरि महाद्वार जो बडा द्वार ताके दोऊ पार्श्वनिविषै चोईस हजार धूपके घडे हैं। बहुरि तिस महाद्वारके बाहिर दोऊं तरफ आठ हजार मणिमई माला है। तिन मणिमई मालानिके बीच चौईस हजार सुवर्णमय माला हैं। बहुरि तिस महाद्वारके आगैं सन्मुख मुखमंडप है तिस मुखमंडपविषै सोलह हजार कलश हैं अर सोलह हजार सुवर्णमय माला है तिस मुखमंडपविषै सोलह हजार धूपघट हैं तिस मुखमंडपका मध्यविषै ही महान मिष्ट झणझणाट शब्द करती मोती अर मणिनिकर निपजी किंकणी जे छोटी घंटी तिनकरि सहित नानाप्रकारके घण्टानिके समूह अनेक रचना करियुक्त शोभैं हैं अब जिनमन्दिरके छोटे द्वारादिकका स्वरूप कहै हैं। जिनमन्दिरका दक्षिण उत्तरके पसवाडे-

निका मध्यमैं प्राप्त जे छोटे द्वार तिसविषै कह्या विधानतैं समस्त रचना आधी आधी जानना। मणिमाला चार हजार हैं धूपघट बारह हजार हैं सुवर्णमाला बारह हजार हैं तिन छोटे द्वारानिके आगैं मुखमंडप हैं तिसमैं सुवर्णके घट आठ हजार हैं अर सुवर्णमय माला आठ हजार हैं आठ हजार धूपघट हैं और मुखमंडपानिमैं क्षुद्रघंटिका अनेक रचना है बहुरि तिस मंदिरका पृष्ठभागविषै मणिमाला तो आठ हजार हैं। अर सुवर्णमाला चौईस हजार हैं। माला हैं ते भीतिके चौगिरद लूंबनी जाननी अब मुखमंडपनिका विस्तारादिका स्वरूप पंद्रह गाथानिमैं कह्या है सो कहिये हैं,—इस मंदिरके आगैं मुखमंडप है सो जिनमंदिरके समान सौ योजन लंबा पचास योजन चौडा सोलह योजन ऊंचा है। अर तिस मुखमंडपके आगैं चौकोर प्रदक्षिणमंडप है सो प्रदक्षिणमंडप सौ योजन चौडा लंबा है। सोलह योजनतैं अधिक ऊंचा है तिस प्रदक्षिणमंडपके आगें अस्सी योजन चौडा लंबा अर दोय योजन ऊंचा सुवर्णमय पीठ है। पीठ नाम चौंतराका जानना। तिस पीठका मध्यविषैं चौकोर चौंसठ योजन चौडा लंबा अर सोलह योजन ऊंचा स्थानमंडप है स्थानमंडप नाम सभामंडपका है। बहुरि इस स्थानमंडपके आगैं चालीस योजन ऊंचा स्तूपनिका मणिमय पीठ है सो पीठ चार द्वारनिकरि संयुक्त बारह अंबुज वेदीनकरि युक्त है। बहुरि तिस पीठके मध्य तीन कटनीकरि युक्त चौसठ योजन चौडा लंबा ऊंचा बहुत रत्नमय जिनबिंबनिकरि सहित स्तूप है। तीन कटनीलिये जो रत्नराशि ताका नाम स्तूप है। तिस ऊपरि जिनबिंब विराजैं हैं सो ऐसैं ही नव स्तूप हैं। तिनका ऐसा क्रम करि स्वरूप है तिस स्तूपके आगैं एक हजार योजन चौडा लंबा गिरदविषैं बारह वेदीनिकरि संयुक्त सुवर्णमय पीठ है तिस पीठ ऊपरि चार योजन लंबा अर एक योजन चौडा है स्कंध कहिये पेड जिनका अर बहुत मणिमय गिरदविषैं तीन कोटनिकरि संयुक्त अर बारह योजन लंबी है चार महा शाखा जिनके अर छोटी शाखा अनेक हैं जाके अर बारह योजन चौडा है शिखर कहिये ऊपरला भाग जिनका। अर नानाप्रकार पान फूल फल संयुक्त हैं। बहुरि एक लाख

चालीस हजार एकसौवीस वृक्षनिका परिवारसंयुक्त सिद्धार्थ अर चैत्य नामा दोय वृक्ष हैं। तिन वृक्षनिका मूलविषै जो पीठ है ताके ऊपरि तिष्ठते च्यार दिशानिविषै च्यार सिद्धनिकी प्रतिमा तो सिद्धार्थवृक्षका मूलविषै हैं अर चैत्यवृक्षका मूलविषै पीठ है ताके ऊपरि चार अर्हंतप्रतिमा विराजमान हैं। बहुरि इन वृक्षनिकी पीठके आगैं पीठ हैं ताविषै नानाप्रकार वर्णनकरि युक्त महाध्वजा तिष्ठै हैं। सोलह योजन ऊंचे एक कोस चौंडे ऐसे ध्वजानिके सुवर्णमय स्तंभ हैं। तिन स्तंभनिका अग्रभागविषै मनुष्यनिके नेत्र अर मनकूं रमणीक ऐसे नानाप्रकारके ध्वजा वस्त्ररूप रत्ननिकरि परिणये हैं अर तीन छत्र सोभै हैं इहां ध्वजानिके वस्त्र नाहीं है। वस्त्रकासा आकार कोमलता नाना रंग ललितताालिये रत्नरूप पुद्गल परिणये हैं तातैं वस्त्र भी रत्नमय जानने। तिस ध्वजापीठके आगैं जिनमंदिर है ताकी चारों दिशानविषै नानाप्रकार पुष्पनिकरि युक्त सौ योजन लंबे पचास योजन चौडे दशयोजन ऊंडे मणिसुवर्णमय वेदीनकरि संयुक्त चार ह्रद कहिये द्रह हैं ताके आगैं जो मार्गरूप वीथी है गली है ताके दोऊ पार्श्वनविषैं पचास योजन ऊंचे पचास योजन चौडे देवनिके क्रीडा करनेके रत्नमय दोय मंदिर हैं। बहुरि ताके तोरण हैं सो मणिमय स्तंभनिका अग्रभागविषै स्थित हैं। दोय स्तंभनिके बीच भींतिरहित मरगोलकासा आकार ताका नाम तोरण है सो तोरण मोतीनके जाल अर घंटासमूहकरि युक्त है। मोतीनके जाल अर घंटासमूह तोरणनिके लूंबें हैं बहुरि सो तोरण पचास योजन ऊंचा पचीस योजन चौडा है ते तोरण जिनबिंबनिके समूहकरि रमणीक हैं। जिनबिंबनिका आकार तोरणनिमैं तिष्ठै है तिस तोरणके आगैं स्फटिकमय जो प्रथम कोट ताके अभ्यंतर कोटके द्वारका दोऊ पार्श्वनिविषैं सौ योजन ऊंचे पचास योजन चौंडे रत्ननिकरि रचे दोय मंदिर हैं ऐसैं कोटपर्यंत वर्णन किया पूर्वद्वारविषै मंडपादिकका जो परिमाण कह्या तातैं दक्षिणद्वार उत्तरद्वारविषै आधा २ परिमाण जानना। अन्य वर्णन तीन तरफ समान जानना। बहुरि ते चैत्यालय सामायिकादि क्रिया करनेका स्थान वंदना मंडप अर स्नान करनेके स्थान अभिषेक मंडप

अर नृत्यकरनेके स्थान नर्त्तन मंडप अर संगीत साधन करनेके स्थान संगीतमंडप अर अवलोकन करनेके अवलोकन मंडप तिनकरि संयुक्त बहुरि क्रीडा करनेके स्थान क्रीडन गृह शास्त्रादिक अभ्यास करनेके स्थान गुणनगृह तिनकरि अर विस्तीर्ण उत्कृष्ट पट्ट चित्रामादि दिखावनेके स्थान पट्टशालादि तिनिकरि संयुक्त है। अब द्वितीय कोट अर बाह्यकोटके बीच अंतराल ताका स्वरूप कहैं हैं। सिंह, गज, वृषभ, गरुड, मयूर, चंद्रमा, सूर्य, हंस, कमल, चक्र, इन दशनिका आकारकरि संयुक्त ध्वजा हैं ते जुदी जुदी एकसौ आठ आठ है। ऐसें एकहजारअस्सी एक दिशामैं हैं। ऐसें चार दिशानिके चारहजार तीन सौ वीस मुख्यध्वजा हैं। बहुरि एकएक मुख्यध्वजाविषै एकसोआठ क्षुलक छोटी ध्वजा हैं। आगैं दूसरा अर तीसरा कोटके बीच जो अंतराल ताकैविषै अशोक अर सप्तच्छद अर चंपक अर आम्रमई चार वन हैं। बहुरि यहां सुवर्णमय फूलनिकरि शोभित मरकतमणिमय नानाप्रकार पत्रानिकरि पूर्ण ऐसे कल्पवृक्ष हैं तिनके वैडूर्यमणिमय फल हैं अर मूंगामय डालीकरि युक्त हैं। ऐसें कल्पवृक्ष भोजनांगआदि भेद लिये दश प्रकार हैं बहुरि तिन च्यारों वननिविषैं चैत्यवृक्ष च्यारि हैं। ते वृक्ष तीन पीठि ऊपरि हैं। तीन कोटनिकरि युक्त हैं रत्नमय शाखापत्रपुष्पफलकरि युक्त चार बनानिके बीच हैं तिन चार चैत्यवृक्षानिके मूलमैं दिशानमैं पल्यंकासन सिंहासन छत्रप्रातिहार्यादियुक्त चार जिनेंद्रकी प्रतिमा हैं। बहुरि नंदादि सोलह बावडी तीन कटनीनि करि सयुंक्त शोभै हैं। बहुरि वननकी भूमिमैं द्वारानितैं आवनेका मार्ग रूप जो वीथी तिनका मध्यविषै तीनकोटसंयुक्त तीन पीठनि ऊपरि धर्मका विभवसंयुक्त मस्तकविषै च्यारिदिशानिमैं च्यारि जिनप्रतिमाकूं धारण करते मानस्तंभ हैं। श्रीराजवार्तिकमैं कह्या है—जिनालयनकी महिमा वर्णनकरनेकूं हजारजिह्वाकरि हू समर्थ नाहीं होय है अर सहस्राक्ष जो हजारनेत्रधारक हजारनेत्रानिकूं विस्तारकरि निरंतर देखतो हू तृप्तिताकूं नाहीं प्राप्त होय है ऐसैं अप्रमाणमहिमाके धारक अकृत्रिमजिनालयका वर्णन त्रिलोकसारनामग्रंथतैं अपने शुभध्यानकी सिद्धिके अर्थि वर्णन किया। ऐसैं

जिनपूजनका कथन किया। अब जिनपूजनका फलमैं तो प्रसिद्ध अनेक भये हैं। तथापि पूर्वाचार्यनिकरि प्रसिद्ध फल कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

अर्हच्चरणसपर्यामहानुभावं महात्मनामवदत्। भेकः प्रमोदमत्तः कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥ १२० ॥

अर्थ—राजगृहनाम नगरकेविषै जिनेंद्रका पूजनेका हर्षकरि मत्त कहिये अपना सामर्थ्यकूं नाहीं जानतो जो मींडको सो अरहंतके चरणनिकी पूजाका महाप्रभाव महानपुरुष जे भव्यजीव तिनकूं प्रगट करतो हुवो दिखावतो हुवो। याकी कथा ऐसी जाननी—मगधदेशमैं राजगृहनगर तिसविषै राजाश्रेणिक राज्य करै। तिस ही नगरकेविषै एक नागदत्तनामश्रेष्ठी ताके भवदत्तनामा स्त्री सो श्रेष्ठी आर्तपरिणामतैं मऱ्या। मरिकरि आपकी गृहकी बावड़ीमैं मींडको उपजतो हुवो। एक दिन भवदत्तानामा सेठानी बावडी ऊपरि गई तदि ताने देखि मींडकाके पूर्वजन्मको स्मरण हुवो तादि पूर्वलो स्नेहकी यादकरि शब्द करतो उछलि २ सेठानीके वस्त्रांऊपरि चढै। तदि सेठानी वारंवार वाकों दूरि फेकि दियो तो हू बारम्बार सेठानीका वस्त्रनि परि आवै तदि सेठानी मींडकानै दूरि करि अपने घर गई। एक दिन सुव्रतनाम अवधिज्ञानी मुनीकूं पूछी भो स्वामिन्! मैं गृहवापिकामैं जाऊं तदि एक मींडको शब्द करतो २ बारम्बार हमारे अंगपरि आवै इसका संबंध कहो। तदि मुनीश्वर कह्यो। थारो भर्ता नागदत्त आर्त परिणामतैं मरि मींडको हुवो ताकै जातिस्मरण हुवो सो पूर्वजन्मका स्नेहकरि थारे निकट आवै है। तदि सेठानी मींडकाकूं अपना भर्ताको जीव जानिकरि अपने गृहमैं लेजाय बहुत सन्मानतैं राख्यो। एक दिन राजा श्रेणिक भगवान वीरजिनेंद्रका समवसरण वैभार पर्वतऊपरि आयो जानि राजा वंदनाकेअर्थि नगरमैं आनन्दभेरी दिवाई। तादि नगरके भव्यजीव भगवानकी वंदनाके अर्थि नाना प्रकारके उज्जलवस्त्र आभरण पहरि पूजनसामग्री हस्तानिमैं लेय जयजय शब्द करते हर्षतैं नृत्यगानवादित्रादि शब्दसहित चाले सो समस्तनगरमैं आनंदहर्ष व्याप्त होयगयो। तदि मींडको लोकनिका पूजनजनित आनंदका शब्द

श्रवण करि आपके पूजन करनेका बडा उत्साह प्रगट भया तदि एक पुष्पकूं मुखमैं लेय आनन्दसहित उछलतो हुवो वीरजिनेंद्रका पूजनके अर्थि चाल्यो अतिभक्तितैं एसा विचार नाहीं भया जो विपुलाचल पर्वतऊपरि वीस हजार पैडीनिसहित समवशरण तो कहां अर मैं असमर्थ मींडको कहां कैसैं पहुंचूंगा। अतिभक्तितैं ऐसा विचार नाहीं रह्या। अब जिन पूजूं ऐसैं उत्साहसहित मार्गमैं गमन करतो राजाका हस्तीका पग नीचे मरि सौधर्मस्वर्गविषै महान ऋद्धिको धारक देव हुवो तदि अवधिज्ञानतैं पूजनके भावतैं अपना देवपनामैं उत्पाद जानि मींडकाको चिह्न धारणकरि तत्काल वीरजिनेंद्रका समवसरणमैं पूजनके अर्थि जाय समस्त जीवनिकूं पूजनको प्रभाव प्रगट दिखायो। जो तिर्यंच मींडक पूजनताईं पहुंच्यो हू नाहीं केवल पूजनके भाव करकैं ही स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव भयो। जिनेन्द्रका पूजनका अचिंत्य प्रभाव है यातैं गृहचारामैं बडा शरण समस्तपरिणामकी विशुद्धता करनेवाला एक नित्यपूजन करना ही है। जिनपूजन निर्धन हू करि सकै धनाढ्य हू करि सकै जेता आपका सामर्थ्य होय तिसप्रमाण पूजन सामग्री वनिसकै है बहुरि पूजन करना करावना करतेकूं भला जानना सो समस्त पूजन ही है। तथा स्तवनवंदना हू पूजन, एकद्रव्यतैं हू पूजन जैसैं अरहंतके गुणनिमै भक्तिकी उज्जलता होय तैसा फल है बहुरि जिनमन्दिरमैं छत्रचमरसहित सिंहासन कलश घंटा इत्यादिक सुवर्णमय रूपामय पीतलमय कांसी ताम्रमय अनेक सुंदर उपकरणनिकरि जेता अपना सामर्थ्य होय तिसप्रमाण जिनमंदिरको भूषितकरि वैयावृत्य करै। बहुरि जीर्णमंदिरनिकी मरम्मत उद्धार करना। तथा धनाढ्य पुरुष हैं तिनकूं जिनबिंबनकी प्रतिष्ठा करवाना कलश चढावना ये समस्त अरहंतकी वैयावृत्ति हैं।

बहुरि जिनमंदिरनकी टहल करना कोमल पीछीसूं यत्नाचारतैं भुवारना अभिषेक पूजना बिछावना गाननृत्यवादित्रादिकनिकरि अरहंतके गुण गावणा सो समस्त अर्हद्वैयावृत्ति है। मनसे वचनसे कायसे धनसे विद्यासे व लासे जैसे अरहंतके गुणनिमैं अनुराग बधै तैसे करना धन पावनेका देह पावनेका

इंद्रियपावनेका बलपावनेका ज्ञानपावनेका सफलपणा जिनमंदिरकी टहल वैयावृत्तिकरके ही है। जिनमंदिरकी वैयावृत्ति सम्यक्तकी प्राप्ति करै तथा सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति करै है । मिथ्याज्ञान मिथ्याश्रद्धानका अभाव करै। स्वाध्याय संजम तप व्रत शीलादिगुण जिनमंदिरका सेवनतैं ही होय। नरकातिर्यंचादिगतिनमें परिभ्रमणका अभाव होय। जिनमंदिर समान कोऊ उपकार करनेवाला जगतमें दूजा नाहीं । जिनमंदिरका निमित्ततैं शास्त्र श्रवण पठनकरि अनेक श्रोतानिका उपकार होय वक्ताका उपकार होय है । जिनमंदिरके निमित्ततैं केई जीव कायोत्सर्ग करैं हैं। केई जाप्य जपैं हैं। केई रात्रिमें जागरण करैं हैं। केई अनेकप्रकार पूजनकरि प्रभावना करैं हैं। केई स्तवन करैं हैं। केई तत्त्वार्थनिकी चर्चा करैं हैं। केई प्रोषधोपवास तथा बेला तेला पंच उपवासादिकरि बडी निर्जरा करैं हैं। केई स्वाध्याय करैं हैं। केई वीतरागभावना करै हैं। केई नानाप्रकार उपकरणानि करि प्रभावना करैं हैं। जिनमंदिरके निमित्ततैं पाप पुण्य देवकुदेव धर्मकुधर्म गुरुकुगुरुका जानना होय। भक्ष्यअक्ष्य कार्यअकार्य त्यागनेयोग्य ग्रहणकरनेयोग्यका ज्ञान हू जिनमंदिरमें प्रवृत्तिकरि ही होय है। त्याग व्रत शील संयम भावनाका स्वरूप जानना तथा आचरण करना समस्त जिनमंदिरके प्रभावतैं होय है। जिनमंदिर बराबर कोऊ उपकारी नाहीं है। जिनमंदिर अशरणनिकूं शरण है। ऐसे परोपकार करनेवाला जिनमंदिरकूं जानि याका वैयावृत्य करो। ऐसैं वैयावृत्यमें जिनपूजाका वैयावृत्य कह्या। अब वैयावृत्यके पंच अतिचार कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

हरितापिधानानिधाने ह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि। वैयावृत्त्यस्यैते व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ १२१ ॥

अर्थ—वैयावृत्य जो दान ताके ये पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। हरितपिधान, हरितनिधान, अनादर, स्मरण, मत्सरत्व जो व्रतीनिकूं देने योग्य आहारपानऔषध है ताकूं हरित जो कमलका पत्र वा पातल पान इत्यादि सचित्तकरि ढक्या हुवा देना सो हरितापिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि हरित जो वनस्पतिके पत्रादिक ऊपरि धरया हुवा भोजन देना सो हरितनिधान नाम अतिचार है ॥ २ ॥

बहुरि दानकूं अनादरतैं अविनयतैं प्रियवचनादि रहित देना सो अनादरनाम अतिचार है ॥ ३ ॥ बहुरि पात्रकूं भोजनादिक देनेके अर्थि स्थापनकरि अन्यकार्यमैं लागि भूलि जाना तथा देनेयोग्य द्रव्यकूं तथा विधिकूं भूलि जाना सो अस्मरण नाम अतिचार है ॥ ४ ॥ बहुरि अन्य दातारतैं ईर्षाकरि देना सो मत्सरत्व नाम दोष है ॥ ५ ॥ ऐसे दान जो वैयावृत्य ताके पंच अतीचार टालि महाविनयतैं शुद्ध दान करो ॥ १२१ ॥

इति श्रीस्वामिसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारविषै शिक्षाव्रतनिका वर्णन करि
चतुर्थ अधिकार समाप्त भया ॥ ४ ॥

अब श्रीपरमगुरुनिका प्रसादकरि परमागमकी आज्ञाप्रमाण भावनानामा महाधिकार लिखिए है। समस्त धर्मका मूल भावना है। भावनातैं ही परिणामिनिकी उज्जलता होय है। भावनातैं मिथ्यादर्शनका अभाव होय है। भावनातैं व्रतनिमैं दृढ परिणाम होय है। भावनातैं वीतरागताकी वृद्धि होय है। भावनातैं अशुभध्यानका अभाव होय शुभध्यानकी वृद्धि होय है। भावनातैं आत्माका अनुभव होय है। इत्यादिक हजारां गुणनिकूं उपजावनेवाली भावना जानि भावनाकूं एक क्षण हू मति छांडो। अब प्रथम ही पंचव्रतनिकी पच्चीस भावना जानहू। अहिंसा अणुव्रत धारण करता पुरुष पांचभावना विस्मरण नाहीं होय है। मनके विषै अन्यायके विषयनिके भोगनेकी वांछाका अभावकरि दुष्टसंकल्पनिकूं छांडि अपनी उच्चताकूं नाहीं चाहना अन्यजीवनके विघ्न इष्टवियोग मानभंगादि तिरस्कार धनकी हानि रोगादिक नाहीं चाहना सो मनोगुप्ति है ॥ १ ॥ हास्यके वचन विवादके वचन अभिमानके वचन नाहीं कहना तथा कलहके अपयशके कारण वचन नाहीं कहना सो वचनगुप्ति है ॥ २ ॥ बहुरि त्रसजीवनिकी विराधना टालिकरि हरिततृण कर्दमादिककूं छांडि देखि शोधि गमन करना तथा चढना उतरना उलंघना

बडा यत्नतैं अपना सामर्थ्यप्रमाण ऐसा करना जैसैं अपना हस्त पादादि अंगउपांगनिमैं वेदना नाहीं उपजै अन्यजीवकै बाधा नाहीं होय तैसैं हलनचलन धीरतातैं करना सो ईर्यासमिति है ॥ ३ ॥ जो वस्तु अन्न पान वस्त्र आसन शय्या काष्ठ पाषाण मृत्तिकाके तथा पीतल कांसी लोह सुवर्ण रूपा इत्यादिकके बासन पात्र तथा घृतादि रस इत्यादिक गृहस्थकै परिग्रह हैं तिनकूं यतनतैं उठावना मेलना जैसैं अन्य जीवनिका घात नाहीं होय अपने अंगमैं पडने गिरने करि पीडा नाहीं उपजै उजाड विगाड होनेतैं आपकैं अन्यकैं संक्लेश नाहीं उपजै तैसैं धरना मेलना हिंसाका कारण तथा हानिका कारण जो घसीटना सो नाहीं करै ताकैं आदाननिक्षेपणसमिति नाम भावना होय है ॥ ४ ॥ बहुरि गृहस्थ जो भोजनपान करै सो अभ्यंतर तो द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता अयोग्यताका विचार करै। योग्य देखि करै। अर बाह्य दिवसमैं उद्योतमैं नेत्रनतैं अवलोकन करि बारंबार शोधि धीरपनातैं ग्रासादिककूं मुखमैं देय भक्षण करै। गृद्धितातैं विना विचार्यां विना शोध्यां भोजन नाहीं करै सो आलोकितपान भोजन नाम भावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं अहिंसाअणुव्रतकी पांच भावना कहीं। सो निरंतर नाहीं भूलना। अब सत्यअणुव्रतकी पंचभावना कहिये है। क्रोधत्याग, लोभत्याग, भीरुत्वत्याग, हास्यत्याग, अनुवीचीभाषण ये पांचभावना सत्यअणुव्रतकी हैं। जो सत्यअणुव्रत धारै क्रोध करनेका त्याग करै ऐसा विचारै जो क्रोधी होय बचन बोलै है ताकै सत्य कहना नाहीं वनै है यातैं क्रोध त्याग्या ही सत्य रहै। अर जो कर्मके उदयतैं गृहस्थके कोऊ बाह्य विपरीत निमित्त मिलनेतैं क्रोध उपजि आवै तो ऐसा चितवन करै जो मेरे परिणाममैं क्रोधजनित तातई उपजि आई है तातैं मोकूं अब मौनग्रहण ही करना अब वचन नाहीं बोलना। जो वचनकूं रोकूंगा तो कषायविसंवाद नाहीं बधैगा। हमारा क्षमादिगुण हू नाहीं बिगडैगा। तातैं मेरे हृदयमैं क्रोधजनित अग्निका उपशम नाहीं होय तितने वचनकी प्रवृत्ति नाहीं करनी। ऐसा दृढ विचार करै ताकै सत्यकी क्रोधत्यागभावना होय है ॥ १ ॥ लोभके निमित्ततैं सत्य वचन नाहीं प्रवर्तै

है। तातैं अन्यायका लोभ छांडना सो लोभत्यागभावना है ॥ २ ॥ बहुरि भयके वश होय ताके सत्यवचन नाहीं होय तातैं भयका त्याग भये सत्य होय है ॥ ३ ॥ बहुरि हास्यमैं सत्य नाहीं कह्या जाय है। यातैं सत्यअणुव्रती हास्यकूं हू दूरहीतैं छांडै है ॥ ४ ॥ बहुरि जिनसूत्रसूं विरुद्धवचन नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल वचन बोलना सो अनुवीचीभाषण नाम भावना है ॥ ५ ॥ भावार्थ—जो अपने सत्यअणुव्रत पालन किया चाहैगा सो क्रोधके कारणनिकूं रोकै है। जाकै वास्ते अनेक असत्यमैं प्रवर्तना होय ऐसा लोभकूं हू छांडि देगा अर जातैं धर्मविरुद्ध लोकविरुद्ध वचनमैं प्रवृत्ति होजाय ऐसा धन विगडनेका शरीर विगडनेका भय नाहीं करैगा। अर जो अपना सत्यवादीपनाकी रक्षा किया चाहैगा सो अन्यका हास्य कदाचित् नाहीं करैगा। अर जिनसूत्रसूं विरुद्धवचन कदाचित् नाहीं कहैगा। अब अचौर्यअणुव्रतकी भावना पांच कहिये है। शून्यागार, विमोचितावास, परोपरोधाकरण, भैक्ष्यशुद्धि, सधर्माविसंवाद ए पंच भावना अचौर्यव्रतकी हैं। यातैं अचौर्यअणुव्रतका धारक गृहस्थ हू पंचभावना निरंतर भावता रहै। व्यसनीमनुष्य तथा दुष्टमनुष्य तथा तीव्रकषायी कलहका करनेवाला पुरुषनिकरि शून्यमकान होय तहां बसनेका भाव राखै। जातैं तीव्रकषायी दुष्टनिके नजीक बसनेमैं परिणामकी शुद्धता नष्ट होजाय दुर्ध्यान प्रगट होजाय तातैं पापीनिकरि शून्य मकानमै बसना सो ही शून्यागारभावना है ॥ १ ॥

बहुरि जिस मकानमैं अन्यदूजाका झगडा नाहीं होय तहां निराकुल बसना सो विमोचितावास है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यके मकानमैं आप जबरीतैं नाहीं धंस बैठना सो परोपरोधाकरणभावना है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यायअभक्ष्यकूं त्यागि भोगांतरायका क्षयोपशमके आधीन मिल्या जो रसनीरसभोजन तामैं समता धारि लालसारहित भोजनकरना सो भैक्ष्यशुद्धि भावना है ॥ ४ ॥ साधर्मीपुरुषमैं वादविसंवाद नाहीं करना सो सधर्माविसंवादभावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं अचौर्य अणुव्रतके धारकानिकूं पंच भावना भावने

योग्य हैं। अब ब्रह्मचर्यव्रतकी पंच भावना कहै हैं,—स्त्रीरागकथाश्रवणत्याग, स्त्रीनके मनोहरअंग देख-
नेका त्याग, पूर्वकालमैं भोग भोगे तिनका स्मरण करनेका त्याग, पुष्टरसका भोजन तथा इंद्रियांमैं दर्प
उपजावनेवाला भोजनका त्याग, अर अपने शरीरके संस्कारका त्याग, ये पंच भावना ब्रह्मचर्यव्रतकी
हैं। अन्यकी स्त्रीनिकी राग उपजावनेवाली कथाका त्यागकी भावना करै ॥ १ ॥ तथा अन्यकी स्त्री-
निके स्तन जघन मुख नेत्रादिक रूपकूं रागभावतैं देखनेका त्याग करै ॥ २ ॥ बहुरि आपके अणुव्रत
धारण हुआ तिस पहली अव्रती होय भोग भोगे थे तिन भोगनिकूं याद नाहीं करना सो तीजी भावना
है ॥३॥ बहुरि पुष्ट इष्ट कामोद्दीपन करनेवाला भोजनका त्याग सो चौथी भावना है ॥४॥ बहुरि अपने
शरीरकूं अंजन मंजन अतर फुलेलादि कामके विकार करनेवाले आभरण वस्त्रादिका त्याग करनेकी
भावना करना सो स्वशरीरसंस्कारत्याग नामा पंचमी भावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतके
धारक गृहस्थकूं पंच भावना भावने योग्य हैं। अब परिग्रहत्यागकी पंच भावना कहै हैं,—जो परिग्रहपरि
माण नाम अणुव्रत धारण करै सो गृहस्थ बहुत पापबंधके कारण अन्यायरूप अभक्ष्यनिका तो यावत्
जीव त्याग करै। अर अंतरायकर्मके क्षयोपशम प्रमाण प्राप्त भये जे पंचइंद्रियनिके विषय तिनमैं संतोष
धारण करि मनोज्ञविषयनिमैं अतिराग नाहीं करै अर अति आसक्त नाहीं होय। अर अमनोज्ञ असुहा-
वने मिलैं तिनमैं द्वेष नाहीं करै क्लेश नाहीं करै। अर अन्य जीवनके सुंदरविषयभोग देखि लालसा नाहीं
करना सो परिग्रहपरिमाणअणुव्रतकी पंच भावना हैं। बहुरि पंच पापनिका महा निंद्यपना है ताकी भाव-
नाकूं हू भावना योग्य है। ये हिंसादिक पंच पाप हैं तिनतैं इसलोकमैं महादुःखकारि अपना नाश है अर
परलोकमैं घोरदुःख अनेक भवनिमैं जानि पापनितैं भयभीत होय दूरहीतैं त्यागना। हिंसा करनेवाला
निरंतर भयवान रहै है। अर जाकूं मारै ताकै अनेक भवनिपर्यंत वैरका संस्कार चल्या जाय है। जाकूं
मारै ताका स्त्रीपुत्रपौत्रमित्रकुटुम्बी वैर लेवैं हैं। तिर्यंचनिऊपरि भी लाठी पत्थर शस्त्र चाबुक चलावै

ताका र तिर्यंच हू नाहीं छांडै हैं। हाथी घोडा सर्प ऊंट बहुत दिनपर्यंत वैर धारण करि बदला लेवैं हैं मारै हैं। जगतमैं निंद्य होय हैं। पापी कहावै हैं। सर्वमैं प्रतीत जाती रहै है। तथा जाकूं मारै वे आपकूं मार लेहैं। राजाका तीव्र दण्ड भोगै हैं । हस्तपाद नाक छेद्या जाय है। राजा सर्वस्व हरण करै है। महा अपयश गर्दभारोहणादिक तीव्र दंड भोगि नरकादि कुगतिनिमैं बहुतकाल नाना ताडन मारन छेदन भेदन शूलीरोहण वैतरणीमै मज्जनादि असंख्यात दुःख भोगि घोर तिर्यंच मनुष्यमैं तीव्ररोग दारिद्र अपमानादिक भोगता असंख्यात अनंतभव दुःखका पात्र होय है। बहुरि जो अन्यजीवका घात तो नाहीं करै है अर अभिमान क्रोध करि अपने शरीरका बल करि अन्य मनुष्यतिर्यंचनिकूं तथा बालककूं स्त्रीकूं लात घमूका चपेटनितैं मारै हैं। तथा लाठी चाबुक वेतनतैं मारै हैं। त्रास देवै हैं ते हू इसलोकमैं राक्षसकी ज्यों भयंकर, उद्वेगका करनेवाला महाअपयश पाय दुर्गतिका पात्र होय हैं। बहुरि जो निर्दयपरिणामी होय करकै विकलत्रयादिकका कषायके वश होय घोर आरंभादिक करि घात करै हैं तथा विना प्रयोजन वनस्पतिका छेदन तथा पृथ्वी जल अग्निकायके जीवनिकी अज्ञानभावतैं तथा प्रमादतैं विराधना करै हैं ते इसलोकमैं ही ज्वर सन्निपात आमवात पक्षाघात संग्रहणी अतीसार वात पित्त कफ खांसी कोढ खाज पांव फोडा आदीठ बाला विष कंटकादि रोगनितैं घोरदुःख भोगि नानादुर्गतिमैं रोग अर दारिद्र इष्टवियोगादि घोर दुःखनिका पात्र होय हैं। यातैं हिंसातैं इसलोकमैं घोरदुःखरूप फल जानि हिंसाका त्याग ही सर्वप्रकार करि करना श्रेष्ठ है। बहुरि जो जीवनिकी दयाकरि युक्त होय समस्त जीवनिकूं अभयदान देहै। अपने परिणामनितैं जीवमात्रकी विराधना नाहीं चाहता यत्नाचाररूप प्रवर्तता प्रमाद छांडि अहिंसाधर्मकूं नाहीं भूलै है तिसकी महिमा इहां ही देव करै हैं पूज्य होय है समस्त पापनितैंरहित होय स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देवपना पाय मनुष्यलोकमैं विदेहादिक उत्तम क्षेत्रमैं महाप्रभावका धारक होय निर्वाण गमन करै है। अब असत्यवचनका स्वरूप केवल दोषरूप ही है सो प्रगट विचार करहु। असत्य

वादीकी प्रतीत नाहीं रहै है। माता पिता पुत्र मित्र स्त्रीनिकै हू याकी प्रतीत नाहीं विश्वास नाहीं आवै है तदि अन्यकै याका श्रद्धान कैसे होय जातैं जगतमैं जेता व्यवहार है तेता वचनके द्वारे है। जो वचन विगाड्या सो अपना समस्त व्यवहार विगाड्या। धर्म अर्थ काम मोक्ष चार पुरुषार्थ वचन करि प्रवर्तैं हैं जाका वचन ही निंद्य भया ताका चारूं पुरुषार्थ निंद्य होय हैं। असत्यवादी समस्तकै अप्रिय होय है। याकै मायाचार होयही असत्यके अर कपटकै अविनाभावीपना है। कुवचन बोलना चुगली करना अर विकथा आत्मप्रशंसा परकी निंदा ये असत्यका परिवार है। असत्यवादी इसही लोकमैं जिह्वाछेद सर्वस्वहरण तथा जिह्वाके रोगकरि नष्ट होना इत्यादिक घोरदुःखनिकूं प्राप्त होय है। अपवादकूं पावै है। परलोकमैं नरकादिकानिमैं परिभ्रमण तिर्यंच गतिमैं वचनरहितपना तथा गूंगा बहिरा अंधा दरिद्री रोगीपना पावै है। तथा मूर्खपना वचनकलारहितपना होय है। तथा जगतमैं दीनताका विलाप करतो फिरै है तो हू कोऊ श्रवण ही नाहीं करै तातैं असत्यवचनका त्यागही श्रेष्ठ है। अर सत्यके प्रभावतैं देवलोकमैं गमन स्वर्गका महर्द्धिकपना होय है। समस्त जगतके आदरने योग्य वचन होय। तथा समस्त उत्तम शास्त्रनिका पारगामी होय। कविपना होय वाग्मीपना होय अनेक जीवनिका उपकार होय। जाकी आज्ञा लाखांमनुष्य अंगीकार करैं ऐसा सत्यवचनका फल है। जो पूर्वजन्ममैं वचनकी उज्ज्वलता धारी है ताका वचन श्रवण करनेका लाखांमनुष्य अभिलाष करै हैं। जो हमसूं बोलै सो हम कृतार्थ हो जावें ये समस्त सत्यवचनका प्रभाव है। अब चोरीके दोषनिकी भावना कहिए है। चोर मनुष्य समस्तकै भय उपजावनेवाला होय है। माता हू चोरी करनेवाला पुत्रका बडा भय करै है।

तथा हितू बांधवादिक कोऊ चोरका संसर्ग नाहीं चाहै है। याका संसर्गतैं कलंक चढि जायगा कोऊ राजाकी आपदा आजायगी। तथा हमारा कुछ ले जायगा। ऐसा भय नाहीं छांडै है। चोर समस्तमैं नीचा होजाय है चोरकै काहूके मारनेकी दया नाहीं होय है असत्य कपट छल अनेक चोरानिके निश्चयतैं

होय ही है चोर पापीनिमें महापापी है। चोरका कोऊ सहाई नाहीं होय है। पिता माता स्त्री पुत्रादिक समस्त कुटुंब चोरकी लार नाहीं लागे हैं। धीज प्रतीत सब जाती रहै है। कोऊ स्थानदान नाहीं देवै है। चोर जानि समस्त मारने लगि जाय हैं। राजानिकरि तीव्र मारन ताडन हस्तनासिका छेदन मारण दंड होय है। बंदीखानाकूं बहुत दीर्घकाल सेवनिकरि अपवाद पाय मरणकरि घोर नरककी वेदना भोगता असंख्यात अनंतकाल तिर्यंचनिमें भूख प्यास ताडन मारण लादन घसीटनादि असंख्यात भवनिमें पावै है। मनुष्य होय तो महानीच दरिद्री रोगी वियोगी घोर क्षुधा तृषा मारणबंधन चोरीके कलंकादि सहित निरादरका दुःख भोगता पैंड पैंडमें याचना करता घोर दुःख भोगनेका संतान चल्या जाय है। यातैं चोरीका दूरहीतैं परिहार करो। अपने पुण्य पापके अनुकूल जे विषय मिले हैं तिनमें संतोष धारणकरि अन्यके धनमें स्वप्नहूमें वांछा मति करो। परका धन पुण्य विना आवनेका हू नाहीं। पूर्व जन्ममें कुपात्र दान किया कुतप किया तातैं परका धन हाथ लागि जाय तो हू कै दिन भोगैगा महासंक्लेशतैं अल्पआयु भोग दुर्गतिनमें जाय प्राप्त होयगा। यातैं चोरीकाहू दूरहीतैं त्याग करना श्रेष्ठ है। जिनके परधनमें इच्छा नाहीं है। अपना पुण्यपापके अनुकूल मिल्या तिसमें संतोष धारणकरि अन्यायका धनमें कदाचित् चित्त नाहीं चलावैं हैं तिनका इसलोकमें हू जश है प्रतीत है समस्तमें आदर होय है। जाका परिणाम परधनमें नाहीं अपने उपार्जन कियाहीमें मंदरागी है तिनके एकहू क्लेश नाहीं आवै अशुभकर्मका बंध नाहीं होय है समस्त जगत अपना धन दीजे है परलोकमें देवलोककी अपरिमाणविभूति असंख्यात कालपर्यंत भोगि मनुष्यनिमें राजाधिराज मंडलेश्वर चक्रवर्तीनिका विभव भोगि क्रमतैं निर्वाणकूं प्राप्त होय है। यातैं भगवानवीतरागका धर्म धारण करि अन्यायका धनका त्याग करि रहना ही श्रेष्ठ है॥ अब कुशीलके दोषनिकी भावना चिंतवनकरि विरक्त हो जाना योग्य है। कुशील-पुरुष है सो कामका मदकरि उन्मत्त हुआ मदोन्मत्तहस्तीकी ज्यों विचरै है। स्त्रीनिके रागकरि ठिग्या

हुवा दोऊ लोकका विचाररहित कार्य अकार्यकूं नाहीं जानै है। भक्ष्यअभक्ष्य योग्यअयोग्यका विचार रहित होय है। पापपुण्यकूं नाहीं देखै है। प्रत्यक्ष आपदा अपयश होता दीखै है तो हू कामकी अँधेरीतैं नाहीं देखै है। कामसारसी दूजी अँधेरी त्रैलोकमें नाहीं है। कामकरि आच्छादित मनुष्य पर्यायमैं हू पशुसमान है। पशुमें अर कामांधमैं भेद नाहीं है। कामकरि अंध हुआ वनादिकमें तिर्यंच कटि कटि मरिजाय है। मनुष्य जन्ममैं हू मरि जाय है अर मार ले है। कामांधकै धर्म अधर्मका विचार नाहीं रहै है। लोकलाज मूलतैं नष्ट हो जाय है। परस्त्री लंपटानिकूं अनेक ओछे आदमी मार लेवैं हैं। राजादिक-निकरि लिंगच्छेदन सर्वस्वहरणादि दंडनिकूं प्राप्त होय है मरिकरि नरकादि दुर्गतिनमें परिभ्रमणकरि तिर्यंचमनुष्यनिमें घोर दुःख भोगता नीच चांडाल चमार धीवरनिमें महादरिद्री महाकुरूप कोढी अंग-हीन आंधो लूलो पागलो कूबडो इत्यादि नीच मनुष्यनिमें उपजिकरि नरक बहुरि तिर्यंच बहुरि कुमा-नुष नपुंसकादि भवनिमें दुःख भोगै है। तातैं कुशीलका त्याग ही श्रेष्ठ है। बहुरि शीलवंत पुरुष स्वर्ग-लोकमें कोट्यां अपछराने सेव्यमान हुवा असंख्यात कालपर्यंत भोग भोगता मनुष्यनिमें प्रधान मनुष्य होय अनुक्रमतैं मोक्षका पात्र होय है। अब परिग्रहकी ममताका दोष चिंतवन करि परिग्रहतैं विरागी होना श्रेष्ठ है। परिग्रहकी ममता समस्त पंच पापनिमें प्रवृत्ति करावै है। परिग्रहकरि तृप्तिता नाहीं आवै है। जैसे ईंधन करि आग्नि बधै है तैसे तृष्णारूप अग्निकरि निरंतर बधै है। अर परिग्रहके उपा-र्जनमैं रक्षणमैं अर नाशमैं महान दुखित होय है। परिग्रहकी ममताका धारक धर्म अधर्मका जीवनमरण का विचाररहित होय है। परिग्रहकी ममता हिंसा असत्य चोरी कुशील अभक्ष्य बहुआरंभ कलह वैर ईर्षा भय शोक संताप इत्यादिक हजारां दोषनिमैं प्रवृत्ति करावै है। संसारमैं जेता बंधन अर पराधीनता अर कषाय अर दुःख है तितना परिग्रहतैं है अर परिग्रहका त्यागना है सो बडा भारका उतारना है। परिग्रहका त्यागी निर्बंध है। परिग्रहत्यागका फल स्वर्गमुक्ति है यातैं परिग्रहका त्याग ही समस्तकल्या-

णका मूल है ऐसैं हिंसाअसत्यचोरीकुशीलपरिग्रहनिमैं दोष हैं। तिनकी भावना भावनी। बहुरि ये पांच पाप दुःख ही हैं ऐसी भावना राखना हिंसादिक दुःखका कारण हैं तातैं हिंसादिक पंच पाप हैं ते दुःखही हैं। हिंसादिक दुःखका कारणनिमैं कार्यका उपचार किया है तातैं पंच पापानिकूं दुःखही कह्या है। जैसैं बध बंधन पीडन मोकूं अप्रिय हैं तैसैं ही समस्त अन्य प्राणीनिकूं हू अप्रिय हैं जैसैं झूठ कटुक कठोर वचन मोकूं कोऊ कहै ताके श्रवणकरनेतैं हमारे अतितीव्र दुःख उपजै है तैसैं अन्यजीवनिके हू कटुकवचन असत्यवचन दुःख उपजावैं है जैसैं मेरा इष्टद्रव्यकूं कोऊ चोर लैजाय तो मेरे महाःदुःख होय है तैसैं अन्यजीवनिके हू धन हरनेका दुःख होय है जैसैं हमारी स्त्रीका कोऊ तिरस्कार करै तिसकरि हमारे तीव्र मानसीक पीडा होय है तैसैं अन्यजीवनके हू अपनी माता बहण पुत्री स्त्रीके व्यभिचारकूं श्रवणकारे देखनेकरि अतिदुःख होय है। जैसैं धनधान्य वस्त्रादिक नाहीं मिलनेतैं तथा प्राप्त हुवा ताकूं नष्ट होनेतैं वांछारक्षाशोकभयकरि अपने दुखितपना होय है तैसैं परिग्रहकी वांछातैं तथा परिग्रहके नष्ट होनेतैं समस्तजीवनिकै दुःख होय है। तातैं हिंसादिकपापनितैं विरक्त होना ही जीवका कल्याण है। यहां कोऊ कहै कोमल अंगकी धारक स्त्रीनिके अंगके स्पर्शनतैं रतिसुख उपजता देखिये है दुःखरूप कैसैं कह्या ताका उत्तर—इंद्रियनिका विषयनितै उपज्या सुख नाहीं है भ्रांतितैं सुखरूप दीखै है पहली विषयनिकी चाहरूप महावेदना उपजै है वेदना उपजै तब ताके दूरि करनेकों चाहै जैसैं देहमै चाम मांस रुधिर है ते जब विकारतैं कलुषपणानै प्राप्त होजांय तब खाजि उत्कटताकूं प्राप्त होइ तब नखानितै ठीकरीतैं पत्थरतै अपना शरीरकूं खुजावै है। गात्रकूं छेदने रगडनेतै रुधिरकरि लिप्त हुआ हू अत्यंत खुजाय करि दुःखहीकूं सुख मानै है तैसैं मैथुनका सेवनवारा हू मोहतैं दुःखहीकूं सुख मानै है तथा मनुष्य तिर्यंच असुर सुरेंद्रादिक समस्त ही जीव अपने देहकी साथि उपजी इंद्रियां तिनकरि उपज्या जो विषयानिकी चाहरूप आताप ताका दुःख सहनेकूं असमर्थ भया महा निंद्य विषयनिमैं अति लालसा करि झंपापात लेवै

है। अग्निकरि तप्तायमान लोहेका गोलाकी ज्यों इंद्रियनिका ताप करि तप्तायमान जो आत्मा ताके विषयनिमैं अति तृष्णातैं उपज्या अति दुःखरूप वेगके सहनेकूं असमर्थ भया विषयनिमैं पडे है। जैसैं कोऊ पुरुष च्यारों तरफ अग्निकी ज्वालातैं बलता अग्निके आतापकूं नाहीं सहि सकता विष्ठाका भरच्या महा दुर्गंध अति ऊंडा खाडामैं जाय पडे है तिस विष्ठामैं मस्तकपर्यंत डूबि ताकूं ही तापरहित सुखमानि मरण करै है। तैसैं ही संसारी जीव स्पर्शन इंद्रियनिका विषयकी चाहरूप आतापके सहनेकूं असमर्थ हुवा स्त्रीनिका दुर्गंध मलीन देहमैं डूबि कामकी आतापरहित सुख मानता अति तृष्णातैं उपज्या तीव्र दुःखकूं भोगता मरण करि संसारमैं नष्ट होजाय है।

तथा इस जीवकै ये इंद्रियां तो आतापदुःख करनेवाली महा व्याधि हैं अर ये विषय हैं ते किंचित् काल दाहकी उपशमताका कारण विपरीत अपथ्य औषध हैं। जिनकरि विषयनिकी चाहरूप दाह बधता चल्या जाय है घटै नाहीं है भ्रमतैं इलाज मानै है जिनकै इंद्रियां जीवती तिष्ठै हैं तिनकै स्वाभाविक ही दुःख है, दुःख नाहीं होय तो विषयनिमैं उछालि उछालि कैसैं पडैं सो देखिये ही है कपटकी हथिनीका शरीरका स्पर्शके अर्थि वनका हस्ती स्पर्शन इंद्रियकी आताप करि खाडामैं पडि घोर बंधनकूं भोगे है। बहुरि जलका चंचल मछली रसना इंद्रियके वसि होय धीवर करि पसारच्या कांटामैं फसिकरि प्राणरहित होय है। घ्राण इंद्रियका आतापका मारच्या भ्रमर है सो संकोचके सन्मुख कमलका गंधकूं ग्रहण करता कमलमैं प्राणरहित होय है। नेत्रइंद्रियजनित संतापकूं नाहीं सहि सकता पतंग जीवरूपका लोभी दीपककी ज्वालामें भस्म होय है। कर्णइंद्रियजनित श्रवण करनेकी तृष्णाका आतापकूं नाहीं सहनेकूं समर्थ ऐसा हिरण सिकारीकरि गाया रागमैं अचेत होय मारच्या जाय है। ऐसैं दुर्निवार इंद्रियनिकी वेदनाके वश पडे जीव ते निकट ही है मरण जिनमैं ऐसे विषयनिविषै यतन करै हैं। इंद्रियजनित आतापतुल्य त्रैलोक्यमैं आताप नाहीं है जैसैं इंद्रियनिका विषयनिकी चाहका आताप है तैसा आताप अग्निमैं नाहीं है

शस्त्रका नाहीं हैं विषका नाहीं है इंद्रियनिका आताप सहनेकूं असमर्थ भये विषयनिके अर्थि अग्निमें वलैं हैं शस्त्रनिके सन्मुख होय मरैं हैं विषभक्षण करैं है धर्मकूं लोपैं हैं माता पिता गुरु उपाध्यायकूं विषयनिका रोकनेवाला जाणि मारि डारैं हैं। इस संसारमें इंद्रियनितैं केवल दुःखही है जिनकैं इंद्रियरहित अतींद्रिय केवलज्ञान है तिनहीके निराकुलता लिये ज्ञानानन्द सुख है यातैं जे इंद्रियांके आधीन हैं ताकैं स्वाभाविक दुःखही है जो स्वाभाविक दुःख नाहीं होय तो विषयनिमें प्रवृत्ति कैसें करे जाकै शीतज्वर मिटि गया सो अग्नितैं तापना नाहीं चाहैगा जाकै दाहज्वर मिटिगया सो कांज्याका सींचना नाहीं चाहैगा जाकैं नेत्ररोग मिटिगया सो खपरया अंजनादिक नेत्रानिमें डारया नाहीं चाहैगा जाकै कर्णका शूल मिटि गया सो कर्णमें बकराका मूत्रादिक नाहीं डारैगा जाकैं व्रणघाव मिटिगया सो मालिम पट्टी नाहीं करैगा तैसे हू जाके इंद्रियजनित वेदना नाहीं ताके विषयनिमें प्रवृत्ति कदाचित् नाहीं होयगी क्षुधावेदना विना भोजन कौन करै तृषावेदना विना जल कौन पीवै गरमीकी बाधा विना शीतल पवन कौन चाहै शीतकी बाधा विना रुईकरिभरया वस्त्र तथा रोमका वस्त्र कौन ओढै। तातैं ए समस्त विषय वेदनाके इलाजके हैं इनि विषयनितैं किंचित् काल वेदना घटि जाय ताकू अज्ञानी सुख मानैं हैं सो सुख वास्तवमें सुख नाहीं है सुख तो यो है जहां वेदना नाहीं उपजै है अनाकुलतालक्षण स्वाधीन अनन्त ज्ञान है सो ही सुख है अन्य नाहीं है ऐसैं निश्चय जानहु। ऐसैं हिंसादिकनिकूं दुःखरूप ही चिंतवन करनेकी भावना भायबो योग्य है। अब श्रावककूं मैत्र्यादिक च्यारि भावना भावने योग्य हैं तिनकूं कहै हैं—एकेंद्रियादिक समस्त प्राणीविषै मैत्रीभावना भावै जो कोऊ प्राणीनिकै दुःखकी उत्पत्ति मति होहु ऐसा अभिलाष रखना सो मैत्री भावना है। अर जे सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तप इत्यादिकनिकरि अधिक होय तिनमें प्रमोद भावना करना। प्रमोद नाम हर्षका आनंदका है सो गुणानिकरि अधिककूं देखि परिणाममें ऐसा हर्ष उपजै जैसे जन्म दरिद्री निधानकूं पाय हर्ष करै। गुणवंतनिकूं देखत प्रमाण हर्षका

रोमांच होना तथा मुखकी प्रसन्नता करि नेत्रनिका प्रफुल्लित होना हृदयमें आल्हादन स्तुतिभाषण नामकीर्तनादि करि अंतर्गत भक्तिका प्रगट करना सो प्रमोद भावना है। बहुरि असातावेदनीकर्मका उदयकरि रोग दारिद्रादिकरि पीडित जे क्लेशसहित प्राणी तथा इंद्रियनिकरि विकल आंधा बाहिरा लूला तथा अनाथ विदेशी तथा अति वृद्ध बाल तथा विधवा इत्यादिक दुःखित प्राणीनिके दुःख मेटनेका अभिप्राय सो कारुण्य भावना है। बहुरि जे धर्मरहित तीव्रकषायी हठग्राही उपदेश देनेके अयोग्य विपरीतज्ञानी धर्मद्रोही दुष्ट अभिप्रायी निर्दयी तिनविषै रागद्वेषका अभावरूप माध्यस्थ भावना करना। भावार्थ—समस्त प्राणीनिके दुःखका अभाव चाहना सो मैत्री भावना है। बहुरि गुणनिकरि अधिक होय तिन पुरुषनिकूं देखि करि श्रवण करि महान् हर्षका उपजना सो प्रमोद भावना है। दुःखित देखि उपकार बुद्धिका उपजना सो कारुण्य भावना है बहुरि हठग्राही निर्दयी अभिमानीनिमैं रागद्वेषरहित रहना सो माध्यस्थ भावना है। ऐसैं धर्मके धारक श्रावकनिकूं मैत्र्यादि च्यारि भावना भावना योग्य हैं। बहुरि गृहस्थनिकूं जगतका स्वभाव अर कायका स्वभाव हू चिंतवन करना योग्य है जगतका स्वभाव चिंतवन करनेतैं संसार परिभ्रमणका भय उपजै है अर देहका स्वरूप चिंतवन करनेतैं रागभावका अभाव होय है। यो जगत कहिये लोक है सो अनादि निधन है अर्द्धमृदंग ऊपरि एक मृदंग धरिये ऐसा व्योड मृदंगकासा आकार है चौदह राजू ऊंचा है दक्षिण उत्तर सर्वत्र सात राजू चौडा है अर पूर्व पश्चिम नीचै सात राजू है ऊपरि क्रमतैं घटताघटता सात राजू ऊंचा जाय एक राजू चौडा रह्या है फेरि उपरि क्रमतैं बधता बधता साढा तीन राजू ऊंचा गया तहां पांच राजू चौडा है फिर क्रमतैं घट्या है सो साढा तीन राजू ऊंचा गया लोकका अंतमैं क राजू चौडा है ऐसे पूर्व पश्चिम क्रमतैं घटती बढती उंचाई जाननी। ऐसे आकारका धारक लोकका क राजू चौडा एकराजू लंबा एक राजू ऊंचा विभाग कल्पना करिये तो तीनसैतियालीस खंड होय हैं स लोकरूप क्षेत्रमें अनंतानंतकाल परिभ्रमणकरते व्यतीत भयो सो ऐसा कोऊ पुद्गल नाहीं रह्या जो

शरीरादिकरूप नाहीं धारण किया अर तीनसैतियालीस राजू प्रमाण क्षेत्रमें ऐसा कोऊ एकप्रदेश हू बाकी नाहीं रह्या जहां अनंतानंतवार इस जीवने जन्म नाहीं धरया अर मरण नाहीं किया। अर उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी कालका वीस कोडाकोडी सागरमें ऐसा कोऊ एक कालका समय हू नाहीं रह्या जिसमें यो जीव जन्ममरण नाहीं किया। अर नरक तिर्यंच मनुष्य देव इन चार गतिनिमें जघन्य आयुकूं लेय उत्कृष्ट आयुपर्यंत समयोत्तर ऐसा कोऊ पर्याय बाकी नाहीं रह्या जाकूं अनंतबार नाहीं पाया। बहुरि ज्ञानावरणादिक समस्तकर्मनिकी मिथ्यादृष्टिके बंध होने योग्य जघन्यस्थिति तो अंतःकोटाकोटि सागर परिमाण है अर उत्कृष्ट स्थिति ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इन चार कर्मनिकी तीस कोटाकोटी सागरकी है अर मोहनीयकर्मकी उत्कृष्टस्थिति सत्तर कोटाकोटी सागर प्रमाण है अर नामकर्म अर गोत्रकर्मकी उत्कृष्टस्थिति वीस कोटाकोटी सागर प्रमाण है अर आयुकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति तेतीससागरकी है। सो जघन्य स्थितिकूं आदि लेय समयसमयकरि उत्कृष्टस्थितिवृद्धि पर्यंत जो कर्मनिकी स्थिति है तिन समस्त स्थितिनके एक स्थानकूं असंख्यातलोक प्रमाण कषायनिके स्थान कारण हैं ते कषायनिके एकएक स्थान अनंतबार संसारी जीवकै भये हैं तातैं ऐसा परिभ्रमणरूप जगतमें जीव है ते नानाभेदरूप चतुर्गतिमें परिभ्रमण करता निरंतर दुःख भोगै है। कोउ जीव निश्चल नाहीं है जलका बुदबुदातुल्य जीवन अथिर है अर भोगसंपदा मेघपटलवत् विनाशीक है राज्य धन संपदा इंद्रधनुषवत् क्षणभंगुर है इससंसारमें प्राणी अनंतानंत परिवर्तन करैं हैं ऐसैं संसारका सत्यार्थस्वरूप चिंतवन करनेतैं संसारपरिभ्रमणतैं भय उपजै है। बहुरि कायका चिंतवन करिये है यो मनुष्य शरीर है सो रोगरूपसर्पनिको बिल है अनित्य है दुःखका कारण है अपवित्र निःसार है कोटि यत्न करते करते हू विनसि जाय है यो शरीर धोवते धोवते मैलकूं निरंतर उगलै है सुगंध अत्तर फुलेल लगाते लगाते दुर्गंध वमै है पोषते पोषते बल नाहीं धारै है सुखतैं राखतेराखते हु अपना नाहीं होय है भूषित करतेकरते विडरूप

दिन दिन होय है सुधारतांसुधारतां दिनदिन भयानकता धारै है सुख देतांदेतां दुःखी हुआ जाय है मंत्रते मंत्रते निरंतर रहै है दीक्षारूप होतांहोतां हू साधुनिका मार्गकूं दूषित करै है शिक्षा देतेदेते गुणिनिमैं नाहीं रमै है दुःख भोगते भोगते हू कषायनिका उपशमभावकूं प्राप्त नाहीं होय है रोकते रोकते हू पापहीमैं प्रवर्तन करै है प्रेरणा करते करते हू धर्मकूं नाहीं धारण करै है मर्दन करते करते हू दिनादिन कठोरकर्कस होता जाय है रूक्ष करते करते आमकूं धारै है तैलादिक रमावते रमावते हू वासकूं प्राप्त होय है चंदना दिकतैं सींचतेसींचते हू पित्तकरि जलै है सोपण करते करते हू कफकूं गलै है पूंछतांपूंछतां कोढादिक रोगतैं मिलै है चामडाकरि बंध्या है तो हू क्षीण होता चल्याजाय है रक्षा करते करते हु कालका मुखमैं प्रवेश करै है। शरीरका ऐसा निंद्य स्वभाव चिंतवन करनेतैं शरीरमैं राग भाव नष्ट होय जाय है यातैं जगतका स्वभाव अर कायका स्वभाव संवेग जो संसारतैं भय अर वैराग्यके अर्थि चिंतवन करना श्रेष्ठ है। बहुरि षोडश कारण भावना हू श्रावकके भावने योग्य हैं षोडशकारण भावनाका फल तीर्थंकर पना है इसहीकरि तीर्थंकरप्रकृतिका बंध अव्रती सम्यग्दृष्टिहूकै होय अर देशव्रतीश्रावकहूकै होय अर प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत हूकै होय है सर्वोत्कृष्टपुण्यप्रकृति तीर्थंकर प्रकृति है इसतैं अधिक पुण्यप्रकृति क्यमें नाहीं है। उक्तं च गोमट्टसारे कर्मकांडे—

पढमुवसमिये सम्मे सेसातिये अविरदादिचत्तारि। तित्थयरबंधपारम्भया णरा केवलिदुगंते ॥ ९३ ॥

अर्थ—तीर्थंकरप्रकृतिके बंधका आरम्भ कर्मभूमिका मनुष्य पुरुषलिंगधारीहीकै होय है अन्य तीन तिमैं आरम्भ नाहीं होय अर केवली तथा श्रुतकेवलीके चरणारविंदकै समीपही होय केवली श्रुतकेवली निकटविना तीर्थंकरप्रकृतिका बंधके योग्य भावानकी विशुद्धता नाहीं होय है अर तीर्थंकरप्रकृतिका ध प्रथमोपशमसम्यक्त्वमैं होय तथा शेषत्रिक जो द्वितीयोपशम तथा क्षयोपशम तथा क्षायिक इन रसम्यक्त्वमैं कोऊ एकमैं होय है इस तीर्थंकरप्रकृतिबंधके कारण षोडशकारण भावना हैं ये भावना

समस्तपापका क्षय करनेवाली भावनिके मलकूं विध्वंस करनेवाली श्रवणपठनकरते संसारके बंध छेदनेवाली निरंतर भावनेयोग्य हैं। अब यहां षोडशभावनाकी षोडश जयमाला पढि महान पुण्य उपार्जन करिये है तिनहीका अर्थकूं भावनिकी विशुद्धता अर अशुभभावनिका नाशके अर्थि लिखिए है।

अथ समुच्चयजयमालका अर्थ प्रथमही लिखिए है—हे संसारसमुद्रतैं तारनेवाला, हे कुमतिकूं निवारण करनेवाला, हे तीर्थंकरत्वलब्धिकूं धारण करनेवाला, हे शिव जो निर्वाणका कारण, हे षोडशकारण ! मैं तिहारेताईं नमस्कारकरके तेरा स्तवन करूं हूं अर मेरी शक्तिकूं प्रगट करूं हूं। भावार्थ—षोडशकारण भावना जाकै होजाय सो नियमसूं तीर्थंकर होय जाय संसारसमुद्रकूं तिरै ही ऐसा नियम है। बहुरि षोडशकारण भावना जाकै होय ताकै कुगति नाहीं होय केई तो विदेहक्षेत्रनिविषै गृहचारामैं षोडशकारण भावना केवलीके अथवा श्रुतकेवलीके निकट भाय उसी भवमैं तपकल्याण ज्ञानकल्याण निर्वाणकल्याण देवनिकरि पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। अर केई पूर्वजन्ममैं केवली श्रुतकेवलीके निकट भावना भाय सौधर्मस्वर्गकूं आदि लेय सर्वार्थसिद्धि अहमिंद्रपर्यंत उपजिकरि फिर तीर्थंकर होय निर्वाण पावै हैं। केई पूर्वजन्ममैं मिथ्यात्वके परिणाममैं नरकका आयु बन्ध किया फिर केवली श्रुतकेवलीका शरण पाय सम्यक्त्व ग्रहणकरि षोडशकारण भावना भाय नरक जाय नरकतैं निकसि तीर्थंकर होय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। पूर्वजन्ममैं षोडशकारण भावनाकरि तीर्थंकरप्रकृति बांधै है ताकै पंच कल्याणकी महिमा होय है अर जो विदेहनिमैं गृहस्थपनामैं तीर्थंकरप्रकृति बांधै सो उसही भवमैं तप ज्ञान निर्वाण तीन कल्याणनिमैं इन्द्रादिककरि पूजन पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। केई विदेहक्षेत्रनिमैं मुनिके व्रत धार्यां पाछैं केवलीके निकट षोडशकारण भावना भाय उसीभवमैं तीर्थंकर होय ज्ञान निर्वाण कल्याण दोयकल्याणकी पूजाकूं प्राप्त होय हैं। तप कल्याण ताकै पहले ही भया तातैं नाहीं होय है। जाकै तीर्थंकरप्रकृतिका बंध होय जाय सो भवनत्रिक देवनिमैं अन्य मनुष्य तिर्यंचनिमैं भोगभूमिमैं स्त्री नपुंसक एकेन्द्रिय विकल

चतुष्कादि पर्यायनिमैं नाहीं उपजै है अर तीसरी पृथ्वीतैं नीचे नाहीं उपजै है याहीतैं षोडशकारण भावना कुगतिका निदारण करनेवाली है। बहुरि षोडशकारण भावना हुआ पाछैं तीजे भव निर्वाण होय ही तातैं शिवका कारण है अर तीर्थकरत्वऋद्धि षोडशकारणतैंही उपजै है तातैं हे षोडशकारणभावना मैं तनै नमस्कारकरि थारो स्तवन करूं हूं। हे भव्यजीवो इस दुर्लभ मनुष्यजन्ममैं पचीस दोषरहित दर्शन विशुद्धता नाम भावना भावहू। सम्यग्दर्शनके नष्ट करनेवाले दोषानिकूं त्यागना सो ही सम्यग्दर्शनकी उज्वलता है। तीनमूढता, अष्टमद, छह अनायतन शंकादि अष्ट दोष ये सत्यार्थ श्रद्धानकूं मलीनकरनेवाले पचीस दोष हैं तिनका दूरहीतैं त्याग करो। बहुरि चारप्रकारका विनय जैसैं भगवानका परमागममैं कह्या तैसैं दर्शन विनय, ज्ञान विनय, चारित्र विनय, उपचार विनय ये चारप्रकार विनय जिनशासनका मूल भगवान जिनेंद्र कह्या है। जहां चारप्रकार विनय नाहीं है तहां जिनेंद्रधर्मकी प्रवृत्ति ही नाहीं तातैं जिनशासनका मूल विनयरूप ही रहना योग्य है। बहुरि अतीचाररहित शीलकूं पालहू शीलकूं मलीन नाहीं करना सो उज्वलशील मोक्षके मार्गमैं बडा सहाई है जाके उज्वलशील है ताके इंद्रिय विषय कषाय परिग्रहादिक मोक्षमार्गमैं विघ्न नाहीं कर सकै हैं। इस दुर्लभ मनुष्यजन्मविषै क्षणक्षणमैं ज्ञानोपयोगरूप ही रहो सम्यग्ज्ञानविना एकक्षण हू व्यतीत मति करो अन्य जे संकल्प विकल्प संसारमैं डबोवनेवाले हैं दूरहीतैं परित्याग करो। बहुरि धर्मानुराग करि संसार देह भोगनितैं विरागता रूप संवेग भावना मनके मांहि चिंतवन करते रहो जातैं समस्तविषयनिमैं अनुरागका अभाव होय धर्ममैं अर धर्मका फलमैं अनुरागरूप प्रवर्तन दृढ होय। बहुरि अंतरंगमैं आत्माके घातक लोभादिक चार कषायनिका अभाव करि अपनी शक्तिप्रमाण सुपात्रनिके रत्नत्रयगुणमैं अनुराग करि आहारादिक चार प्रकारका दानमैं प्रवृत्ति करो। बहुरि दोयप्रकार अंतरंग बहिरंग परिग्रहमैं आशक्तता छांडि समस्तविषयनिकी इच्छाका अभाव करि अतिशयकरि दुर्धर तपकूं शक्तिप्रमाण अंगीकार करो। बहुरि चित्तके विषै रागादिकदोषनिका

निराकरणकरि परमवीतरागतारूप साधुसमाधि धारण करो। बहुरि संसारके दुःख आपदाका निराकरण करनेवाला वैयावृत्य दशप्रकार करहू। बहुरि अरहंतके गुणनिमैं अनुरागरूप भक्तिकूं धारण करता अरहंतके नामादिकका ध्यान करि अरहंतभक्तिकूं धारण करो। बहुरि पंचप्रकार आचारकूं आप आचरण करावै अर दीक्षा शिक्षा देनेमैं निपुण धर्मके स्थंभ ऐसे आचार्यपरमेष्ठीके गुणनिमैं अनुराग धारना सो आचार्यभक्ति है। बहुरि ज्ञानमैं प्रवृत्ति करावनेवाले निरंतर सम्यग्ज्ञानका पठन आप करैं अन्यशिष्यनिकूं पढावनेमैं उद्यमी चारि अनुयोगविद्याके पारगामी वा अंगपूर्वादि श्रुतके धारक उपाध्याय परमेष्ठीमैं जो बहुभक्ति धारण करना सो बहुश्रुतभक्ति नाम भावना है।

बहुरि जिनशासनका पुष्ट करनेवाला अर संशयादिक अंधकार दूर करनेकूं सूर्यसमान जो भगवानका अनेकांतरूप आगम ताके पठनमैं श्रवणमैं प्रवर्तनमैं चिंतवन भक्तिकरि प्रवर्तन करना सो प्रवचनभक्ति भावना भावहू। बहुरि अवश्य करनेयोग्य षट् आवश्यक हैं ते अशुभकर्मके आस्रवकूं रोकि महान निर्जरा करनेवाले हैं अशरणनिकूं शरण हैं ऐसे आवश्यकनिकूं एकाग्रचित्तकरि धारहु इनकी भावना निरंतर भावहू बहुरि जिनमार्गकी प्रभावनामैं नित्य प्रवर्तन करो जिनमार्गकी प्रभावना धन्यपुरुषनिकरि प्रवर्तै हैं। अनेकपुरुषनिकी वीतरागधर्ममैं प्रवृत्ति अर कुमार्गका अभाव प्रभावना करके ही होय है। बहुरि धर्ममैं धर्मात्मा पुरुषनिमैं तथा धर्मके आयतनमैं परमागमके अनेकांतरूप वाक्यनिमैं परम प्रीति करना सो वात्सल्य भावना है यो वात्सल्य अंग है सो समस्तअंगनिमैं प्रधान है दुर्द्धर मोह तथा मानका नाश करनेवाला है ऐसैं निर्वाणके सुखकी देनेवाली ये षोडशकारण भावनानिकूं जो भव्य स्थिरचित्तकरि भावै है चिंतन करै है जाके आत्मामैं रचिजाय है सो समस्त जीवनिका हितरूप तीर्थंकरपनो पाय पंचमगति जो निर्वाण ताहि प्राप्त होय है। ऐसैं षोडशकारणकी समुच्चयरूप भावना समाप्त करी। अब दर्शनविशुद्धि नाम प्रथम अंगकी भावना वर्णन करिये है। हे भव्यजीव हो जो यो मनुष्यजन्म पाय याकूं सुफल किया

चाहो हो तो सम्यग्दर्शनकी विशुद्धता करहू। यो सम्यग्दर्शन समस्त धर्मका मूल है सम्यक्त्व विना श्रावकधर्म हू नाहीं होय मुनिधर्म हू नाहीं होय सम्यग्दर्शनविना ज्ञान है सो कुज्ञान है चारित्र कुचारित्र है तप है सो कुतप है। सम्यग्दर्शन विना यो जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण किया है अब जो चतुर्गति संसारपरिभ्रमणसूं भयवान हो अर जन्मजरामरणतैं छूट्या चाहो हो अर अनंत अविनाशी सुखमय आत्मा कूं इच्छो हो तो अन्य समस्त परद्रव्यनिमैं अभिलषा छांडि सम्यग्दर्शनहीकी उज्जलता करहू। केसीक है दर्शनविशुद्धता निर्वाणके सुखकी कारण है दुर्गतिका निराकरण करनेवाली है विनयसंपन्नतादिक पंद्रहकारणनिका मूलकारण है दर्शनविशुद्धता नाहीं होय तो अन्य पंद्रहभावना नाहीं होय हैं यातैं संसारका दुःखरूप अंधकारके नाश करनेकूं सूर्यसमान है भव्यनिकूं परम शरण है ऐसी दर्शनविशुद्धता नाम भावना भावहु। जैसैं स्वपरद्रव्यका भेदविज्ञान उज्वल होय तैसैं यत्न करहू। यो जीव अनादिकालको मिथ्यात्वनाम कर्मके वशि होय आपका स्वरूपकी अर परकी पहिचान ही नाहीं करी जैसै पर्यायकर्मके उदयतैं पर्याय पावै तैसी पर्यायकूं ही अपना स्वरूप जानता अपना सत्यार्थरूपका ज्ञानमें अंध होय आपके स्वरूपतैं भ्रष्ट हुआ चतुर्गतिमैं भ्रमण करै है देवकूं जानै नाहीं धर्मकुधर्मकू जानै नाहीं सुगुरु कुगुरुकूं जानै नाहीं। बहुरि पुण्यका पापका, इसलोकका परलोकका, त्यागनेयोग्य ग्रहणकरनेयोग्य, भक्ष्यअभक्ष्यका, सत्संगका कुसंगका, शास्त्रका कुशास्त्रका विचाररहित कर्मका उदयके रसमें एकरूप भया अपना हित अहितकूं नाहीं पहिचानता परद्रव्यनिमैं लालसारूप होय सदाकाल क्लेशित होय रह्या है कोऊ अकस्मात् काललब्धिके प्रभावतैं उत्तमकुलादिकमैं जिनेंद्रधर्म पाया है यातैं वीतरागसर्वज्ञका अनेकांतरूप परमागमके प्रसादतैं प्रमाणनयनिक्षेपनितैं निर्णयकरि परीक्षाका प्रधानी होय वीतरागी सम्यग्ज्ञानी गुरुनिके प्रसादतैं ऐसा निश्चय भया जो एक जाननेवाला ज्ञायकरूप अविनाशी अखंड चेतना लक्षण देहादिक समस्तपरद्रव्यनितैं भिन्न मैं आत्मा हूं देह जाति कुल रूप नाम इत्यादिक मोतैं अत्यंत

भिन्न हैं अर राग द्वेष काम क्रोध मद लोभादिक कर्मके उदयतैं उपजे मेरे ज्ञायकस्वभावमैं विकार हैं जैसैं स्फटिकमणि तो आप स्वच्छ श्वेतस्वभाव है तिसमैं डागके संसर्गतैं काला पीला हन्या लाल अनेक रंग-रूपके दीखे हैं तैसैं मैं आत्मा स्वच्छ ज्ञायकभाव हूं निर्विकार टंकोत्कीर्ण हूं मोहकर्मजनित राग द्वेषादिक यामैं झलकैं हैं ते मेरे रूप नाहीं पर हैं ऐसैं तो अपने स्वरूपका निश्चय हुवा। बहुरि सर्वज्ञ वीतराग परम हितोपदेशक अर क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण राग शोक भय विस्मय राग द्वेष निद्रा स्वेद मद मोह चिंता खेद अरति इन अष्टादशदोषानिका अत्यंत अभाव जाकै भया अर अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुख इत्यादिक अनंत आत्मीक अविनाशीगुण जाकै प्रगट भए सो ही आप्त हमारे वंदन स्तवन पूजन करने योग्य है। अन्य कामी क्रोधी लोभी मोही स्त्रीनिमैं आशक्त शस्त्रादिक ग्रहण किए कर्मके आधीन इंद्रियज्ञानके धारक सर्वज्ञतारहित हैं सो मेरे वंदन स्तवन पूजने योग्य नाहीं। जो चोरनिमैं शिरोमणि अर जारनिमैं शिरोमणि है सो कैसैं आराधने योग्य होय। बहुरि सर्वज्ञवीतरागका उपदेश्या अर प्रत्यक्ष अनुमानादिकरि जामैं सर्वथा बाधा नाहीं आवै अर समस्त छहकायके जीवनिकी हिंसारहित धर्मका उपदेशक आत्माका उद्धारके अनेकांतरूप वस्तुकूं साक्षात् प्रगट करनेवाला ही आगम है सो पढने पढावने श्रवण करने श्रद्धान करने वंदने योग्य है। अर जे रागी द्वेषीनिकरि प्ररूपणकिये अर विषयानुराग अर कषायके बधावनेवारे जिनमें हिंसाके करनेका उपदेश है ऐसे प्रत्यक्ष अनुमानकरि बाधित एकांतरूप शास्त्र श्रवणपढनेयोग्य नाहीं वंदनायोग्य नाहीं है। बहुरि विषयनिकी बांछाका अर कषायका अर आरम्भपरिग्रहका जाकै अत्यंत अभाव भया, केवल आत्माकी उज्जलता करनेमें उद्यमी, ध्यान स्वाध्यायमैं अत्यंत लीन, स्वाधीन कर्मबंधजनित दुःख सुखमैं साम्यभावके धारक, जीवन मरण लाभ अलाभ स्तवननिंदनेमैं रागद्वेषरहित उपसर्गपरीषहनिके सहनेमें अकम्प धैर्यके धारक परमनिरग्रंथ दिगम्बर गुरु ही वंदन स्तवन करनेयोग्य हैं अन्य आरम्भी कषायी विषयानुरागी कुगुरु कदाचित् स्तवन वंदन करने

योग्य नाहीं है। बहुरि जीवदया ही धर्म है हिंसा कदाचित् धर्म नाहीं जो कदाचित् सूर्यका उदय पश्चिमदिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल होजाय अर सर्पका मुखमैं अमृत होजाय अर मेरु चालि जाय अर पृथ्वी उलटपलट होजाय तो हू हिंसामैं तो धर्म कदाचित् नाहीं होय। ऐसा दृढश्रद्धान सम्यग्दृष्टिके होय है जाकै अपने आत्माके अनुभवनमैं अर सर्वज्ञ वीतरागरूप आप्तके स्वरूपमैं अर निरग्रंथ विषयकषाय रहित गुरुमैं अर अनेकांतस्वरूप आगममैं अर दयारूप धर्ममैं शंकाका अभाव सो निःशंकित अंग है सम्यग्दृष्टि यामैं कदाचित शंका नाहीं करै है। बहुरि सम्यग्दृष्टि है सो धर्मसेवनकरि विषयनिकी वांछा नाहीं करै है जातैं सम्यग्दृष्टिकूं इंद्र अहमिंद्रलोककेविषै हू महान वेदनारूप विनाशीक पापका बीज दीखै है अर धर्मका फल अनंत अविनाशी स्वाधीन सुखकारियुक्त मोक्ष दीखै है तातैं जैसैं बहुमूल्यरत्न छांडि काचखण्डकूं जौहरी नाहीं ग्रहण करै है तैसैं जाकूं सांचा आत्मीक अविनाशी बाधारहित सुख दीख्या सो झूठा बाधासहित विषयनिका सुखमैं कैसैं वांछा करै तातैं सम्यग्दृष्टि वांछारहित ही होय है। अर जो अव्रती सम्यग्दृष्टिके वर्तमानकालमैं आजीविकादिकनिमैं तथा स्थानादिकपरिग्रहमैं वेदनाके अभावमैं जो वांछा होय है सो वर्तमानकालकी वेदना सहनेकी असामर्थ्यतैं वेदनाका इलाजमात्र चाहै है। जैसैं रोगी कडवी औषधितैं अतिविरक्त होय तो हू वेदनाका दुःख नाहीं सह्या जाय तातैं कडवी औषधि वमन विरेचनादिकका कारण हू ग्रहण करै है दुर्गंध तैलादिक हू लगावै है अंतरंगमैं औषधितैं अनुराग नाहीं है तैसैं सम्यग्दृष्टि निर्वांछक है तो हु वर्तमानके दुःखमेटनेकूं योग्य न्यायके विषयनिकी वांछा करै है। अर जिनकै प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानावरणकषायका अभाव भया ते अपना सौ खंड होय तो हू विषयवांछा नाहीं करै है यातैं सम्यग्दृष्टिके निकांक्षितगुण होय ही। बहुरि सम्यग्दृष्टि अशुभकर्मके उदयतैं प्राप्त भई अशुभ सामग्री तिसमैं ग्लानि नाहीं करै परिणाम नाहीं विगाडै है मैं पूर्व जैसा कर्म बांध्या तैसा भोजन पान स्त्री पुत्र दरिद्र संपदा आपदाकूं प्राप्त भया हूं तथा अन्य किसीकूं रोगी दरिद्री हीन

नीच मलीन देखि परिणाम नाहीं विगाडे है पापकी सामग्री जानि कलुषता नाहीं करै है तथा मलमूत्र कर्दमादिद्रव्यकूं देखि अर भयंकर स्मशान बनादि क्षेत्रकूं देखि भयरूप दुःखदायी कालकूं देखि दुष्टपना कडवापना इत्यादिक वस्तुका स्वभावकूं देखि अपना परिणाममैं क्लेशित नाहीं होना सो निर्विचिकित्सित अंग सम्यग्दृष्टिके होय ही है। बहुरि खोटे शास्त्रनितैं तथा व्यंतरादिकदेवनिकृत विक्रियातैं तथा मणि मन्त्र औषधादिकनिके प्रभावतैं अनेक वस्तुनिके विपरीत स्वभाव देखि सत्यार्थधर्मतैं चलायमान नाहीं होना सो सम्यग्दर्शनका अमूढदृष्टि गुण है सो सम्यग्दृष्टिके होय ही है। बहुरि सम्यग्दृष्टि अन्य जीवनिके अज्ञानतैं अशक्ततातैं लगेहुए दोष देखि आच्छादन करै है जो संसारीजीव ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय कर्मके वशि होय अपना स्वभाव भूल रहे हैं कर्मके आधीन असत्य परधनहरण कुशीलादि पापनिमैं प्रवृत्ति करै हैं जे पापनितैं दूरि वर्तैं हैं ते धन्य हैं। बहुरि कोऊ धर्मात्मापुरुष (नामीपुरुष) पापके उदयतैं चूकि जाय ताकूं देखि ऐसा विचारै जो यो दोष प्रगट होसी तो अन्यधर्मात्मा अर जिनधर्मकी बडी निंदा होसी या जानि दोष आच्छादन करै अर अपनागुण होय ताकी प्रशंसाका इच्छुक नाहीं होय है सो यो उपगूहनगुण सम्यक्त्वको है इनगुणनितैं पवित्र उज्वल दर्शनविशुद्धता नाम भावना होय है। बहुरि जो धर्मसहित पुरुषका परिणाम कदाचित रोगकी वेदनाकरि धर्मतैं चलिजाय तथा दारिद्रकरि चलि जाय तथा उपसर्ग परीसहनिकरि चलिजाय तथा असहायताकरि तथा आहारपानका निरोधकरि परिणाम धर्मतैं शिथिल होजाय ताकूं उपदेशकरि धर्ममैं स्थम्भन करै। भो ज्ञानी भो धर्मके धारक तुम सचेत होहू कैसैं कायरता धारण करि धर्ममैं सिथिल भए हो जो रोगकी वेदनासे धर्मतैं चिगो हो ज्ञानी होय कैसैं भूलो हो यो असातावेदनीकर्म अपना अवसर पाय उदयमैं आयगया है अब जो कायर होय दीनताकरि रुदनविलापादि करते भोगोगे तो कर्म नाहीं छांडैगा कर्मके दया नाहीं होय है और धीरपनातैं भोगोगे तो कर्म नाहीं छांडैगा कोऊ देव दानव मन्त्र तन्त्र औषधादिक तथा स्त्री पुत्र मित्र बांधव

सेवक सुभटादिक उदयमैं आयाकर्म हरनेकूं समर्थ है नाहीं यो तुम अच्छीतरह समझो हो अब इस वेद-नामैं कायर होय अपना धर्म अर यश अर परलोक इनकूं कैसैं विगाडो हो अर इनकूं विगाडि स्वछंद-चेष्टा विलापादि करनेतैं वेदना नाहीं घटै है ज्यों ज्यों कायर होवोगे त्यों त्यों वेदना दुःख बढैगा । तातैं अब साहस धारणकरि परमधर्मका शरण ग्रहण करो । संसारतैं नरकके तथा तिर्यंचनिके क्षुधा तृषा रोग संताप ताडन मारण शीत उष्णादिक घोर दुःख असंख्यात कालपर्यंत अनेक बार अनंतभव धारणकरि भोगे ये तुम्हारै कहा दुःख है अल्पकालमैं निर्जरैगा अर रोग वेदना देहकूं मारैगा तुम्हारा चेतनस्वरूप आत्माकूं नाहीं मारैगा अर देहका मारना अवश्य होयगा जो देह धारण किया ताकै अवश्यंभावी मरण है सो अब सचेत होहू यो कर्मका जीतवाको अवसर है अब भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण ग्रहणकरि अपना अजर अमर अखंड ज्ञाता दृष्टा स्वरूपका ग्रहण करो ऐसा अवसर फेरि मिलना दुर्लभ है इत्या-दिक धर्मका उपदेश देय धर्ममैं दृढ करना अर अनित्य असरणादि भावनाका ग्रहण शीघ्र करावना त्याग व्रतादिक छांडि दिए होंय तो फिर ग्रहण करावना तथा शरीरका मर्दनादिक करि दुःख दूरि करना अर कोऊ टहल करनेवाला नाहीं होय तो आप टहल करना अन्य साधर्मीनका मेल मिलादेना आहार पान औषधादि करि स्थितिकरण करना तथा मलमूत्रकफादिक होय तो धोवना पूंछना इत्यादिककरि स्थिर करना तथा दारिद्रकरि चलायमान होय तिनका भोजनपानादिककरि आजीवकादिक लगाय देनेकरि उपसर्ग परीसहादिक दूर करनेकरि सत्यार्थधर्ममैं स्थापन करना सो स्थितिकरण अंग सम्यग्दृष्टिके होय है । वहुरि वात्सल्यनामगुण सम्यग्दृष्टिके होय है संसारीजीवनिकी प्रीति तो अपने स्त्री पुत्रादिकनिमैं तथा इंद्रियनिके विषयभोगनिमैं धनके उपार्जनमैं बहुत रहै है जाकै स्त्री पुत्र धन परिग्रह विषयादिकनिकूं संसारपरिभ्रमणके कारण जानि अंतरंगमैं विरागता धारणकरि जाकी धर्मात्मामैं रत्नत्रयके धारक मुनि अर्जिका श्रावक श्राविकामैं वा धर्मके आयतननिमैं अत्यंत प्रीति होय ताकै सम्यग्दर्शनका वात्सल्यअंग

होय है। बहुरि जो अपने मनकरि वचनकरि कायकरि धनकरि दानकरि व्रतकरि तपकरि भक्तिकरि रत्नत्रयका प्रभाव प्रगट करै सो मार्गप्रभावना अंग है याका विशेष प्रभावनाअंगकी भावनामैं वर्णन करियेगा। ऐसैं सम्यग्दर्शनके अष्ट अंग धारण करनेतैं इनगुणनिका प्रतिपक्षी शंकाकांक्षादिक दोषनिका अभावकरि दर्शनविशुद्धता होय है।

बहुरि लोकमूढता देवमूढता गुरुमूढताका परिणामनिकूं छांडि श्रद्धानकूं उज्जल करना। अब लोकमूढताका स्वरूप ऐसा है जो मृतकनिका हाड नखादिक गंगामैं पहुचानेमैं सुगति भई मानै हैं तथा गंगाजलकूं उत्तम मानना तथा गंगास्नानमैं अन्य नदीके स्नानमैं नदीकी लहर लेनेमैं धर्म मानना तथा मृतक भर्ताके साथ जीवती स्त्री तथा दासी अग्निमें दग्ध होजाय ताकूं सती मानि पूजना मरयाकूं पितरमानि पूजना पितरानिकूं पातडीमें स्थापन करि पहरना तथा सूर्य चंद्रमा मंगलादिक ग्रहनिकूं सुवर्णरूपाका बनाय गलेमैं पहरना तथा ग्रहनिका दोष दूरि करनेकूं दानदेना संक्रांति व्यतिपात सोमोतीअमावसी मानि दान करना सूर्यचंद्रमाका ग्रहणका निमित्ततैं स्नान करना डाभकूं शुद्ध मानना हस्तीके दंतनिकूं शुद्ध मानना कूवा पूजना सूर्यचंद्रमाकूं अर्घ देना देहली पूजना मूशलकूं पूजना छींककूं पूजना विनायक नामकरि गणेश पूजना तथा दीपककी जोतिकूं पूजना तथा देवताकी बोलारी बोलना जडूला चोटी रखना देवताकी भेटके करारतैं अपना संतानादिकका जीवित मानना संतानकूं देवताका दिया मानना तथा अपने लाभ वास्ते तथा कार्य सिद्धि वास्तै ऐसी वीनती करै जो मेरे एता लाभ होजाय तथा संतानका रोग मिटि जाय तथा संतान होजाय वा वैरीका नाश हो जाय तो मैं आपके छत्र चढाऊं मकान बनाऊं इतना धन भेट करूं ऐसा करार करै है देहताकूं सौंक (रिसवत) देय कार्यकी सिद्धिके वास्ते वांछै है। तथा रात जगा करना कुलदेवकूं पूजना शीतलाकूं पूजना लक्ष्मीकूं पूजना सोनारूपाकूं पूजना दवात पूजना पशुनिकूं पूजना अन्नकूं जलकूं पूजना शस्त्रकूं वृक्षकूं पूजना अग्निकूं देव मानि

पूजना सो लोकमूढता मिथ्यादर्शनका प्रभावतैं श्रद्धानके विपरीतपना है सो त्यागने योग्य है । बहुरि देवकुदेवका विचार रहित होय कामी क्रोधी शस्त्रधारीहूमैं ईश्वरपनाकी बुद्धि करणा जो यह भगवान परमेश्वर हैं समस्त रचना याकी है ये ही कर्ता हैं हर्ता हैं जो कुछ होय है सो ईश्वरको कियो होय है समस्त आछी बुरी लोकानिसूं ईश्वर करावै है ईश्वरका किया विना कछू ही नाहीं होय है सब ईश्वरकी इच्छा के आधीन है शुभकर्म अशुभकर्म ईश्वरकी प्रेरणा विना नाहीं होय है इत्यादिक परिणाम मिथ्यादर्शन के उदयकरि होय सो देवमूढता है । बहुरि पाखंडी हीण आचारके धारक तथा परिग्रही लोभी विषयनि का लोलुपीनिकूं करामाती मानना वाका वचन सिद्ध मानना तथा ये प्रसन्न हो जाय तो हमारा वांछित सिद्ध होजाय ये तपस्वी हैं पूज्य हैं महापुरुष हैं पुराण हैं इत्यादिक विपरीत श्रद्धान करै सो गुरुमूढता है तातैं जिनके परिणामनितैं इन तीनमूढताका लेशमात्र हू नाहीं होय ताके दर्शनकी विशुद्धता होय है । बहुरि छह अनायतनका त्यागकरि दर्शनविशुद्धता होय है कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर इनके सेवन करने वाले ये धर्मके आयतन कहिये स्थान नाहीं तातैं ये अनआयतन हैं । भावार्थ—जो रागी द्वेषी कामी क्रोधी लोभी शस्त्रादिक सहित मिथ्यात्वकरिसहित हैं तिनमैं सम्यक्धर्म नाहीं पाईये तातैं कुदेव हैं ते अनायतन हैं। बहुरि पंचइंद्रियनिके विषयनिके लोलुपी परिग्रहके धारी आरंभ करनेवाले ऐसे भेषधारी ते गुरु नाहीं धर्म- हीन हैं तातैं अनायतन हैं। बहुरि हिंसाके आरंभकी प्रेरणा करनेवाला रागद्वेषकामादिकदोषानिका बधावने- वाला सर्वथा एकांतका प्ररूपक शास्त्र हैं ते कुशास्त्र धर्मरहित हैं तातैं अनायतन हैं । बहुरि देवी दिहाडी क्षेत्रपालादिक देवकूं वंदनेवाले अनायतन हैं । बहुरि कुगुरुनिके सेवक हैं भक्तितैं धर्मतैं रहित हैं ते अना- यतन हैं । बहुरि मिथ्याशास्त्रके पढनेवाले अर इनकी सेवा भक्ति करनेवाले एकांती धर्मका स्थान नाहीं तातैं अनायतन हैं ऐसे कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर इनकी सेवा भक्ति करनेवाले इनछहूनिमैं सम्यक्धर्म नाहीं है ऐसा दृढश्रद्धानकरि दर्शनविशुद्धता होय है बहुरि जातिमद कुलमद ऐश्वर्यमद रूपमद शास्त्रका

मद तपकामद बलका मद विज्ञानमद इन अष्ट मदानिका जाकै अत्यंत अभाव होय है ताकै दर्शन विशुद्धता होय है सम्यग्दृष्टिके सांचा विचार ऐसा है हे आत्मन् या उच्च जाति है सो तुम्हारा स्वभाव नाहीं यह तो कर्मकी परिणमनि है परकृत है विनाशिक है कर्मनिके आधीन है। संसारमें अनेकबार अनेक-जाति पाई है माताकी पक्षकूं जाति कहिये है जीव अनेकबार चांडालीके तथा भीलनीके तथा म्लेक्षणीके चमारीके धोबडिके नायणिके डूमणीके नटनीके वेश्याके दासीके कलालीके धीवरी इत्यादि मनुष्यनिके गर्भमें उपज्या है तथा सूकरी कूकरी गर्दभी स्यालणी कागली इत्यादिक तिर्यंचनिके गर्भमें अनंतबार उपजि उपजि मरचा है अनंतबार नीचजाति पावै तब एकबार उच्चजाति पावै फिर अनंतबार नीचजातिपावै तब एकबार उच्चजाति पावै ऐसे उच्चजाति भी अनंतबार पाई तो हू संसारपरिभ्रमण ही किया अर ऐसैं ही पिताकी पक्षका कूल हू ऊंचा नीचा अनंतबार प्राप्त भया संसारमें जातिका कुलका मद कैसें करिये है स्वर्गका महर्द्धिकदेव मरिकरि एकेन्द्री आय उपजै है तथा स्वानादिक निंद्य तिर्यंचनिमें उपजै है तथा उत्तमकुलका धारक होय सो चांडालमें जाय उपजै तातैं जातिकुलमें अहंकार करना मिथ्यादर्शन है। हे आत्मन् ! तुम्हारा जातिकुल तो सिद्धानिके समान है तुम आपाभूलि माताका रुधिर पिताका वीर्यतैं उपजे जातिकुलमें मिथ्या आपा धरि फेर हू अनंतकाल निगोदवास मतिकरो वीतरागका उपदेश ग्रहण किया है तो इस देहकी जातिकूं हू संयम शील दया सत्यवचनादिकरि सफलकरो जो मैं उत्तम जातिकुल पाय नीच कर्मनिकेसे हिंसा असत्य परधन हरण कुशीलसेवन अभक्ष्यभक्षणादि अयोग्य आचरण कैसे करूं नाहीं करूं ऐसा अहंकार करना योग्य है सम्यग्दृष्टिके कर्मकृत पुद्गलपर्यायमें कदाचित आत्मबुद्धि नाहीं होय है। बहुरि ऐश्वर्य पाय ताका मद कैसे करिये यो ऐश्वर्य तो आपा भुलाय बहु आरंभ राग द्वेषादिकमें प्रवृत्ति कराय चतुर्गतिमें परिभ्रमणका कारण है और निर्ग्रंथपना तीनलोकमें ध्यावने योग्य है पूज्य है अर यो ऐश्वर्य क्षणभंगुर है बडे २ इंद्र अहमिंद्रानिका पतनसहित है बलभद्र नारायणनिका

ऐश्वय क्षणमात्रमें नष्ट होयगया अन्यजीवानिका ऐश्वर्य केताक है ऐसें जानि ऐश्वर्य दोयदिन पाया है तो दुःखित जिवनिका उपकार करो विनयवान होय दान देहु परमातमस्वरूप अपना ऐश्वर्य जानि इस कर्मकृत ऐश्वर्यमें विरक्त होना योग्य है। बहुरि रूपका मद मति करो यो विनाशीक पुद्गलको रूप आत्माको स्वरूप नाहीं विनाशीक है क्षणक्षणमें नष्ट होय है इस रूपकूं रोग वियोग दरिद्र जरा महाकुरूप करैगा ऐसा हाडचामका रूपमैं रागी होय मद करना बडा अनर्थ है इस आतमाका रूप तो केवलज्ञान है जिसमैं लोक अलोक सर्व प्रतिबिंम्बित होय है तातैं चामडाका रूपमैं आपा छांडि अपना अविनाशी ज्ञानस्वरूपमैं आपा धारहू। बहुरि श्रुतका गर्वकूं छांडहू आत्मज्ञानरहितका श्रुत निष्फल है जातैं एकादशअंगका ज्ञानसहित होय करके हूं अभव्य संसारहीमैं परिभ्रमण करै है सम्यग्दर्शन विना अनेक व्याकरण छंद अलंकार काव्य कोषादिक पढना विपरीत धर्ममैं अभिमान लोभमैं प्रवर्तन कराय संसाररूप अंधकूपमें डुबोवनेके अर्थि जानहू। और इस इंद्रियजनित ज्ञानका कहा गर्व है एकक्षणमें वातपित्तकफादिकके घटनेबधनेतैं ज्ञान चलायमान होयजाय है अर इंद्रियजनित ज्ञान तो इंद्रियनिका विनाशकी साथ ही विनशैगा अर मिथ्याज्ञान तो ज्यों वंधैगा त्यों खोटे काव्य खोटी टीकादिकनिकी रचनामैं प्रवर्तन कराय अनेक जीवनिकूं दुराचारमैं प्रवर्तन कराय डबोयदेगा तातैं श्रुतका मद छांडहु ज्ञान पाय आत्मविशुद्धता करहू ज्ञान पाय अज्ञानी कैसे आचरणकरि संसारमें भ्रमण करना योग्य नाहीं। बहुरि सम्यक्त्व विना मिथ्यादृष्टिका तप निष्फल है तपको मद करो हो जो मैं बडा तपस्वी हूं सो मदके प्रभावतैं बुद्धि नष्टकरिकैं यो तप दुर्गतिमें परिभ्रमण करावैगा तातैं तपका गर्व करना महा अनर्थ जानि भव्यनिकूं तपका गर्व करना योग्य नाहीं है। बहुरि जिस बलकरि कर्मरूप वैरीकूं जीतिये तथा कामक्रोधलोभकूं जीतिये सो वल तो प्रसंशायोग्य है और देहका वल यौवनका वल ऐश्वर्यका वल पाय अन्य निर्बल अनाथ जीवनिकूं मारिलेना धन खोसिलेना जमी जीविका खोसिलेना कुशील सेवन करना दुराचारमैं

प्रवर्तन करना सो बल तो नर्कके घोरदुःख असंख्यातकाल भोगाय तिर्यंचगतिमैं मारणताडनलादन करि तथा दुर्वचन तथा क्षुधा तृषादिकानिके दुःख अनेक पर्यायनिमैं भुगताय एकेन्द्रियनिमैं समस्तबलरहित असमर्थ करैगा। तातैं बलका मद छांडि क्षमा ग्रहण करि उत्तमतपमैं प्रवर्तन करना योग्य है।

बहुरि जे विज्ञान कहिये अनेक हस्तकला अनेक वचनकला अनेक मनके विकल्प जिनकरि यो आत्मा चतुर्गतिरूप संसारमैं परिभ्रमणकरि दुःख भोगै है ते समस्त कुज्ञान हैं। इस संसारमैं खोटीकला चतुरताका बडा गर्व है जो हमारा सामर्थ्य ऐसा है कहो तो सांचेकूं झूंठा करिदेवैं झूंठेकूं सांचा करिदेवैं कलंकरहितकूं कलंकसहित करिदेवैं शीलवंतनिकूं दूषित करिदेवैं अदण्डनिकूं दंडदेने योग्य करिदेवैं बहुत दिननिका संचय किया द्रव्यकूं कढा लेवैं तथा धर्म छुटाय अन्यथा श्रद्धान कराय देवैं तथा प्राणीनिके वशीकरण तथा अनेक जीवनिका मारण तथा अनेक जलमैं गमन करनेके, स्थलमैं गमन करनेके, आकाशमैं गमन करनेके, अनेक यंत्र बनायदेवैं इत्यादिक कलाचातुर्य हैं ते सब कुज्ञान हैं याका गर्व नर्कके घोरदुःखका कारण है। कलाचातुर्य सम्यक् तो सो है जातैं अपना आत्माकूं विषयकषायके उलझाडतैं सुलझावना तथा लोकनिकूं हिंसारहित सत्यमार्गमैं प्रवर्तावना है, ऐसैं सत्यार्थवस्तुका स्वरूप समझि जाति, कुल, धन, ऐश्वर्य, रूप, विज्ञानादिककूं, कर्मके आधीन जानि इनका मद छांडि दर्शनविशुद्धता करो। ऐसैं तीन मूढता अर आठ शंकादिकदोष अर षट्अनायतन अर अष्टमद ऐसैं पचीस दोषका परिहार करि सम्यग्दर्शनकी उज्जलता होय है ऐसैं जानि दर्शनविशुद्ध भावना ही निरंतर चिंतवनकरि अर याहीकूं ध्यान गोचरकरि स्तुतिसहित उज्जल अर्घ उतारण करै सो मुक्तिस्त्रीसूं संबंध करै है। ऐसैं दर्शनविशुद्धता नाम प्रथम भावना वर्णन करी ॥ १ ॥

अब आगैं विनयसंपन्नता नाम दूजी भावना कहिये हैं सो—विनय पंचप्रकार कह्या है दर्शनविनय, ज्ञानविनय, चारित्रविनय, तपविनय, उपचारविनय। तहां जो अपने श्रद्धानके शंकादिकदोष नाहीं

लगावना तथा सम्यग्दर्शनकी विशुद्धताकारि ही अपना जन्म सफल मानना सम्यग्दर्शनके धारकनिमैं प्रीति धारना आत्मा अर परका भेदविज्ञानका अनुभव करना सो दर्शनविनय है । बहुत सम्यग्ज्ञानके आराधनमैं उद्यम करना, सम्यग्ज्ञानकी कथनीमैं आदर करना तथा सम्यग्ज्ञानके कारण जे अनेकांत रूप जिनसूत्र तिनके श्रवण पठनमैं बहुत उत्साहरूप होना तथा वंदना स्तवनपूर्वक बहुत आदरतैं पढना सो ज्ञानविनय है तथा ज्ञानके आराधक ज्ञानीजनांका तथा जिनागमके पुस्तकनिका संयोगका बडालाभ मानना सत्कार स्तवन आदरादिक करना सो ज्ञानविनय है । बहुरि अपनी शक्तिप्रमाण चारित्र धारणमैं हर्ष करना दिनदिन चारित्रकी उज्जलताके अर्थि विषयकषायनिकूं घटावना तथा चारित्रके धारकनिके गुणनिमैं अनुराग स्तवन आदर करना सो चारित्रविनय है । बहुरि इच्छाकूं रोकि मिलेहुए विषयनिमैं संतोष धारणकरि ध्यानस्वाध्यायमैं उद्यमी होय कामके जीतनेकूं अर इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रवृत्ति रोकनेकूं अनशनादिकतपमैं उद्यम करना सो तपविनय है । बहुरि इन च्यारि आराधनाका उपदेशकरि मोक्ष मार्गमैं प्रवर्तन करावनेवाले हैं तथा जिनके स्मरण करनेतैं परिणामनिका मल दूरि होय विशुद्धता प्रगट होजाय ऐसे पंचपरमेष्ठीके नामकी स्थापनाका विनय वंदना स्तवन करना सो उपचारविनय है । अन्य हू उपचारविनयका बहुतभेद हैं अभिमानकूं छांडि अष्टमदका अत्यंत अभाव जाके होय कठोरता छूटि कोमलता जाके प्रगट होय ताके नम्रपना प्रगट होय है ताकै सत्यार्थ ऐसा विचार है यो धन यौवन जीवन क्षणभंगुर है कर्मके आधीन है कोऊ जीव हमतैं क्लेशित मति होहु सकल संबंध वियोगसहित है इहां केते काल रहूंगा समय समय कालके सन्मुख अखंड गमन करूंहूं कोऊ वस्तुका संबंध थिर नाहीं है इहां विनय धर्म ही भगवान मनुष्य जन्मका सार कह्या है यो विनय संसाररूप वृक्षके दग्ध करनेकूं अग्नि है यो विनय है सो त्रैलोक्यवर्ती जीवनिके मनकी उज्जलता करनेवाला है अर विनय है सो समस्त जिनशासनको मूल है विनयरहितके जिनेंद्रकी शिक्षा ग्रहण नाहीं होय है विनयरहित जीव समस्त दोषनिका

२७३

पात्र है विनय है सो मिथ्याश्रद्धानके छेदनेकूं सूल है विनयविना मनुष्यरूप चामडाको वृक्ष मानरूप अग्नि करि भस्म होय है अर मानकषायकरिके यहां ही घोर दुःख सहै है अर परलोकमैं निंद्यजाति कुलरूप बुद्धिहीन बलहीन उपजै है जे अभिमानी यहां किंचित् वचनमात्र हू नाहीं सहै हैं ते तिर्यंचगतिमैं नासिकामैं मूंजका जेवडाका बंधन लादन मारण लात ठोकरांका घात चामडाका मरमस्थानमैं घात पराधीन हुआ भोगै है तथा चांडालनिके मलीन घरमैं बंधनतैं बंध रहै हैं जिन ऊपरि मलादि निंद्य वस्तु लादिये हैं और इसलोकमैं हू अभिमानीके समस्तलोक बैरी होजाय हैं अभिमानिकूं समस्त निंदै हैं महाअपयश प्रगट होजाय है समस्त लोक अभिमानीका पतन चाहै हैं मानकषायतैं क्रोध प्रगट होय कपट विस्तारै अतिलोभ करै दुर्वचननिमैं प्रवर्तन करै लोकमैं जेती अनीति है तितनी मानकषायतैं होय है। परधन हरणादिक हू अपने अभिमान पुष्ट करनेकूं करै है यातैं इस जीवका बडा वैरी मानकषाय है यातैं विनय गुणमैं महान आदरकरि अपना दोऊं लोक उज्जल करो सो विनय देवको शास्त्रको गुरुनिको मन वचन कायतैं प्रत्यक्ष करो अर परोक्ष हू करो तहां देव जो भगवान अरहंत समवशरणविभूतिसहित गंधकुटीके मध्य सिंहासन ऊपरि अंतरीक्ष विराजमान चौसठ चमरनिकरि वीज्यमान छत्रत्रयादिक प्रातिहार्यनिकरि विभूषित कोटिसूर्यसमान उद्योतका धारक परमौदारिकदेहमैं तिष्ठता द्वादशसभाकरि सेवित दिव्यध्वनि करि अनेकजीवनिका उपकारकरनेवाले अरहंतको चिंतवनकरि ध्यान करना सो मनकरि परोक्षविनय है। याका विनयपूर्वक स्तवन करना सो वचनकरि परोक्षविनय है। अंजुलिजोडि मस्तक चढाय नमस्कार करना सो कायकरि परोक्षविनय है। बहुरि जो जिनेन्द्रकी प्रतिबिंबकी परम शांत मुद्राकूं प्रत्यक्ष नेत्रनितैं अवलोकनकरि महाआनन्दतैं मनमैं ध्यानकरि आपकूं कृतकृत्य मानना सो मनकरि प्रत्यक्षविनय है। जिनेन्द्रका प्रतिबिंबके सन्मुख होय स्तवन करना सो प्रत्यक्ष वचनविनय है। अंजुली मस्तक चढाय वंदना करना तथा भूमिमैं अंजुलिसहित मस्तक गोडानिका स्पर्शनकरि नमस्कार करना सो कायकरि

प्रत्यक्षविनय है। तथा सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा जिनेन्द्रका नामका स्मरण ध्यान वंदना स्तवन करना सो समस्त परोक्षविनय है। ऐसैं देवका विनय समस्त अशुभकर्मनिका नाश करनेवाला कह्या है। बहुरि जो निर्ग्रंथ वीतरागी मुनीश्वरनिकूं प्रत्यक्ष देखि खडा होना आनंदसहित सन्मुख जाना स्तवन करना वंदना करना गुरुनिकूं आगैंकरि पाछैं चालना कदाचित् बराबर चालना होय तो गुरुनिके वामतरफ चालना गुरुनिकूं अपने दक्षिणभागमैं करकै चालना बैठना, गुरुनिकूं विद्यमान होते आप उपदेश नाहीं करना कोऊ प्रश्न करै तो गुरुनिके होते आप उत्तर नाहीं देना अर गुरुनिकी इच्छा होय तो गुरुनिकी इच्छाके अनुकूल उत्तर देना गुरुनिके होते उच्चआसन नाहीं बैठना अर गुरु व्याख्यान उपदेशादिक करै ताकूं अंजुलि जोडि बहोत आदरतैं ग्रहण करना गुरुनिका गुणनिमैं अनुराग करि आज्ञाके अनुकूल प्रवर्तन करना अर गुरु दूरक्षेत्रमैं होय तो वाकी जो आज्ञा होय तैसैं प्रवर्तन करना दूरहीतैं गुरुनिका ध्यान स्तवन नमस्कारादि विनय करना सो गुरुनिका विनय है।

बहुरि शास्त्रका विनय करना बडा आदरतैं पठन श्रवण करना द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं देखि व्याख्यानादि करना शास्त्रका कह्या व्रत संयमादिक आपतैं नाहीं बनि सकैं तो आज्ञाका लोप नाहीं करना सूत्रकी आज्ञा होय तिस प्रमाण ही कहना तथा जो सूत्रकी आज्ञा होय ताकूं एकाग्रचित्ततैं श्रवण करना श्रवण करते अन्य कथा नाहीं करना आदरपूर्वक मौनतैं श्रवण करना अर जो संशय होय तो संशय दूर करनेकूं विनयपूर्वक अल्प अक्षरनिकरि जैसे सभाके अर लोकनिकै अर वक्ताकै क्षोभ नाहीं उपजै तैसैं विनयपूर्वक प्रश्न करना उत्तरकूं आदरतैं अंगीकार करना सो शास्त्रका विनय है तथा शास्त्रकूं उच्च-आसनपर धरि नीचा बैठना प्रशंसा स्तवन करना इत्यादिक शास्त्रका विनय करना ऐसैं देव गुरु शास्त्रका विनय है सो धर्मका मूल है। बहुरि जो रागद्वेषकरि आत्माका घात जैसे नाहीं होय तैसे प्रवर्तन करना सो आत्माका विनय है जातैं ऐसा विचारै है अब यो मेरो जीव चतुर्गतिमैं मति परिभ्रमण करो

अब मेरा आत्मा मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि संसार परिभ्रमणके दुःख मति प्राप्त होहू ऐसे चिंतवन करता मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि आत्माका ज्ञानादिकगुण घात नाहीं करना सो आत्माका विनय है याहीकूं निश्चय विनय कहिये है यह तो परमार्थ विनय कह्या अब यहां ऐसा विशेष जानना जाके मान कषाय घटि जाय ताहीके व्यवहार विनय है कोऊ जीवका मोतैं अपमान मति होहू जो अन्यका सन्मान करैगा सो आपहू सन्मानकूं प्राप्त होयगा जो अन्यका अपमान करैगा सो आपहू अपमानकूं प्राप्त होय है जो समस्तकूं मिष्टवचन बोलना सो विनय है किसी जीवकूं तिरस्कार नाहीं करना सो हू विनय ही है। अपने घर आया ताका यथायोग्य सत्कार करना किसीकूं सन्मुख जाय ल्यावना किसीकूं उठि खडा होना एक हस्तकूं माथै चढावना किसीकूं आइए ३ इत्यादिक तीनवार कहि अंगीकार करना कोऊकूं आदरकरि नजीक बैठावना किसीकूं आसनदान देना किसीकूं आवो बैठो किसीकूं शरीरकी कुशल पूछना तथा हम आपके हैं हमकूं आज्ञा करिये भोजनपान करिये यह आपहीका गृह है ये गृह आपके आवनेतैं उच्च भया है आपकी कृपा हमारेपर सनातनतैं है ऐसे हू व्यवहाराविनय है तथा कोऊकूं हस्त उठाय माथै चढावना एता ही विनय है यह समस्त व्यवहाराविनय है और हू दान सन्मान कुशलपूछना रोगी दुखीका वैयावृत्त्य करना सो भी विनयवानहीके होय है दुःखित मनुष्य तिर्यंचनिकूं विश्वास देना दुःखित होय आपका दुःख कहनेकूं आया होय ताका दुःख श्रवण करना अपना सामर्थ्य प्रमाण उपकार करना नाहीं बननेका होय तो धीरता संतोषादिकका उपदेश देना ऐसे व्यवहार विनय है सो परमार्थविनयका कारण है यशकूं उपजावै है धर्मकी प्रभावना करै है मिथ्यादृष्टिका हू अपमान नाहीं करना मिष्टवचन बोलना यथायोग्य आदर सत्कार करना योही विनय है महापापी द्रोही दुराचारीकूं हू कुवचन नाहीं कहना एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियादिक तथा सर्पादिक दुष्ट जीव तिनकी विराधना नाहीं करना याकी रक्षा करि प्रवर्तना सो ही इनका विनय है अन्यधर्मीनिका मंदिरप्रतिमादिकतैं बैर करि

निंदा नाहीं करना ऐसा परमार्थ व्यवहार दोऊप्रकारकूं विनयको धारणकरि गृहस्थकूं प्रवर्तन करना योग्य है। देखो सकलसंगका परित्यागी वीतरागी मुनीश्वरहूकूं कोऊ मिथ्यादृष्टि वंदना करै है ताकूं आशीर्वाद देवैं हैं चांडाल भील धीवरादिक अधमजाति हू वंदना करै ताकूं पापक्षयोस्तु इत्यादिक आशीर्वाद देहैं तातैं विनयअंग धारण करो हो तो बाल अज्ञान धर्मरहितका तथा नीच अधम जाति होय ताका हू विनय नाहीं करो तो हू तिरस्कार निंदा कदाचित करना उचित नाहीं है इस मनुष्यजन्मका मंडन विनय ही है विनय विना मनुष्यजन्मकी एक घडी भी हमारे मति जावो ऐसे भगवान गणधर देव कहैं हैं ऐसा विनयगुणकी महिमा जानि याका महान अर्घ उतारण करो। हे विनयसंपन्नताअंग हमारे हृदयमें तू ही निरंतर वास करि तेरे प्रसादतैं अब मेरा आत्मा कदाचित अष्टमदनिकरि अभिमानकूं मति प्राप्त होहू ऐसे विनयसंपन्नता नाम अंगकी दूजी भावना वर्णन करी॥ २॥

अब तीसरी शीलव्रतेष्वनतीचार भावना कहै हैं—शीलव्रतेष्वनतीचारका ऐसा अर्थ वार्तिकमें कह्या है अहिंसादिक पंचव्रत अर इनव्रतनिका पालनके अर्थि क्रोधादिकषायका वर्जनादिरूप शीलविषय जो मनवचनकायकी निर्दोष प्रवृत्ति सो शीलव्रतेष्वनतिचारभावना है शीलनाम आत्माका स्वभावका है आत्मस्वभावका नाश करनेवाला हिंसादिक पांच पाप हैं तिनमें कामसेवन नाम एक ही पाप हिंसादिकसमस्तपापनिकूं पुष्ट करै है अर क्रोधादिकषायनिकी तीव्रता करै है तातैं यहां जयमालामें ब्रह्मचर्यकी ही प्रधानताकरि वर्णन करिये है यो शील दुर्गतिके दुःखका हरनेवाला है स्वर्गादिक शुभगतिका कारण है तपव्रतसंयमका जीवन है शीलविना तपकरना व्रतधरना संयम पालना मृतकका अंगसमान देखने मात्र है कार्यकारी नाहीं तैसे शीलरहितका तपव्रतसंयम धर्मकी निंदा करावनेवाला है ऐसा जानि शील नाम धर्मका अंगकूं पालना करहू अर चंचल मनरूप पक्षीकूं दमो अतिचाररहित शुद्धशीलकूं पुष्ट करो धर्मरूपवनके विध्वंस करनेवाला मनरूप मदोन्मत्त हस्तीकूं रोको चलायमान हुआ

मनरूपहस्ती महान अनर्थ करै है हस्ती मदवान होय तदि ठाणमैंतैं निकालि भागै है अर मनरूपहस्ती कामकरि उन्मत्त होय तब समभावरूपी ठाणतैं निकलिभागै है तथा कुलकी मर्यादा संतोषादि छांडि निकसै है मदोन्मत्तहस्ती तौ सांकल तुडाय जाय है अर मनरूपहस्ती सुबुद्धिरूप सांकल तोडि विचरै है हस्ती तो मार्गमैं चलावनेवाला महावतकूं नाखै है अर कामीका मन सम्यग्धर्मके मार्गमैं प्रवर्तावनेवाला ज्ञानकूं छांडै है हस्ती तो अंकुशकूं नाहीं मानै है अर मनरूपहस्ती गुरूनिके शिक्षाकारी वचनकूं नाहीं मानै है हस्ती तो महाफल अर छायाका देनेवाला वृक्षकूं उखाडि पटकै है अर कामकरि व्याप्त मन है सो स्वर्गमोक्षरूप फलका देनेवाला अर यशरूप सुगंधकूं विस्तारता सकलविषयांकी आतापकूं हरनेवाला ब्रह्मचर्यरूप वृक्षकूं उखाडि डालै है हस्ती तो मल कर्दमादिक दूर करनेवाला सरोवरमैं स्नानकरि मस्तक ऊपरि धूलि नाखता धूलिरजसूं क्रीडा करै है अर कामकरि व्याप्त मन सिद्धांतरूपसरोवरमैं अवगाहनकरि अनेक अज्ञानरूप मैलकूं धोय करके हू पापरूप धूलितैं क्रीडा करै है हस्ती तो कर्णनिकी चपलताकूं धारण करै है अर कामसंयुक्तमन पांचू इंद्रियनिका विषयनिमैं चंचलता धारण करै है हस्ती तो हस्तिनीमैं रति करै है कामसंयुक्त मन कुबुद्धिरूप हस्तिनीमैं रमै है हस्ती हू स्वछंद डोलै मन हू स्वछंद डोलै हस्ती तो मदकरिके मत्त है कामीका मन रूपादिक अष्टमदकरि मत्त है हस्तीके नजीक तो कोऊ पथिक नाहीं आवै दूर भागिजाय अर कामकरि उन्मत्तके नजीक कोऊ एक हू गुण नाहीं रहै है यातैं इस कामकरि उन्मत्त मनरूप हस्तीकूं वैराग्यरूप स्थंभकै बांधो यो खुल्यो हुवो महा अनर्थ करैगा यो काम अनंग है याकै अंग नाहीं है यो तो मनोसिज है मनहीमैं याका जन्म है ज्ञानकूं मथन करनेवाला है याहीतैं याकूं मनमथ कहिये है। संवरको अरि कहिये वैरी है यातैं संवरारि कहिये है कामतैं खोटा दर्प जो गर्व सो उपजै है यातैं याकूं कंदर्प कहिये है याकरि अनेक मनुष्य तिर्यंच परस्पर विरोधकरि मरि जाय हैं यातैं याकूं मार कहिये है याहीतैं मनुष्यनिमैं अन्यइंद्रियनिके भोग तो प्रगट हैं अर कामके अंगहू

ढके हुये हैं कामके अंगका नाम हू उत्तमपुरुष हैं ते नाहीं उच्चारण करै हैं यों समान अन्य पाप नाहीं है धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला काम है यो काम हरिहरब्रह्मादिकानिकूं भ्रष्टकरि आपके आधीन किये है याहीतैं समस्त जगतकूं जीतनेवाला एककाम है याका विजय करनेवाला मोहकूं सहज ही जीतै है याहीतैं कामके परिहारके अर्थि मनुष्यनी तथा देवांगना तथा तिर्यंचनी इनका संसर्ग संगति कामविकारके उपजावनेवाली दूर हीतैं परिहार करो स्त्रीनिमैं मनवचनकायकरि रागका त्याग करो आप कुशीलके मार्गमैं नाही चलना अन्यकूं कुशीलके मार्गका उपदेश मति करो अन्य कोऊ कुशीलके मार्गमैं प्रवर्तन करै तिनकी अनुमोदना भव्यजीव नाहीं करै है बालकास्त्रीकूं देखि पुत्रीवत् निर्विकार बुद्धि करो अर यौवनरूप करींद्रऊपरि चढी लावण्य जो सौंदयरूप जलमैं जाका सब अंग डूबि रह्या ऐसी रूपवतीस्त्रीमैं बहिणवत निर्विकार बुद्धि करहू अर वाकूं सनमान दान मति करो। वचनकरि आलाप मति करो शीलवान हैं तिनकी दृष्टि स्त्रीनिमैं प्राप्ति होते ही मुद्रित होजाय है जो स्त्रीनिमैं वचनालाप करैगा स्त्रीके अंगनिका अवलोकन करैगा ताकै शीलका भंग अवश्य होयगा तातैं जो गृहस्थ है ताकै तो एक अपनी स्त्रीविना अन्यस्त्रीनिकी संगति तथा अवलोकन वचनालापकरि परिहार अर अन्य स्त्रीनिकी कथाका स्वप्नहूमैं विचार नाहीं रहै है अर एकांतमैं मातावहनपुत्रीकी संगति हू नाहीं करै है अर मुनीश्वर तो समस्त स्त्रीमात्रका ही संबंध नाहीं करै है स्त्रीनिमैं उपदेश नाहीं करै है जातैं स्त्रीका नाम ही प्रगट दोषनिकूं कहै है। स्त्रीसमान इस जीवकूं नष्ट करनेवाला अन्य कोऊ अरि कहिये वैरी नाहीं तातैं उत्तम पुरुष याकूं नारी कहै हैं दोषनिकूं प्रत्यक्ष देखते देखते आच्छादन करै तातैं याका नाम स्त्री है याका देखनेकारि पुरुषको पतन होजाय तातैं याका नाम पत्नी है कुमरण करनेका कारण है तातैं याका नाम कुमारी है याकी संगतकरि पौरुषबुद्धिबलादिक नष्ट होजाय यातैं याका नाम अबला है। संसारके बंधका कारण है यातैं याका नाम वधू है कुटिलतामायाचारका स्वभाव धारै है यातैं याका नाम वामा है याका नेत्र-

निमैं कुटिलता बसै है यातैं याका नाम वामलोचना है शीलवंतकूं इंद्र नमस्कार करै हैं शीलवानपुरुष रत्नत्रयरूप धन लेय कामादिक लुटेरानिका भयरहित निर्भय निर्वाणपुरीप्राति गमन करै हैं शीलकरि भूषित रूपरहित होय तथा मलीन होय रोगादिककरि व्याप्त होजाय तो हू अपना संसर्गकरि समस्त सभानिवासीनिकूं मोहित करै है सुखित करै है। अर शीलरहित व्यभिचारी रूपकरि कामदेव समान है तो हू लोकनिमैं थुथकार करिये है जातैं याका नाम ही कुशील है शील नाम स्वभावका है कामी मनुष्यका शील जो आत्माका स्वभाव सो खोटा होजाय है यातैं याकूं कुशील कहिये है। बहुरि कामी मनुष्य धर्मतैं आत्माका स्वभावतैं व्यवहारकी शुद्धतातैं चलिजाय है यातैं याकूं व्यभिचारी कहिये हैं या समान जगमैं अन्य कुकर्म नाहीं तातैं कामकूं कुकर्म कहिये है यातैं मनुष्य पशुकेसमान होजाय यातैं याकूं पशुकर्म कहिये है ब्रह्म जो आत्मा ताका ज्ञानदर्शनादिस्वभाव ताका घात यातैं होय है तातैं याकूं अब्रह्म कहिये है जातैं कुशीलाकी संगतितैं कुशीलो होय जाय है जो शीलकी रक्षा करी सो ही क्षांति तप व्रत संयम समस्त पाल्या। बहुरि जो अपना स्वभावतैं नाहीं चलायमान होना ताकूं मुनिश्वर शील कहै हैं शीलनामका गुण समस्तगुणनिमैं बडा है शीलकरिसहित पुरुषका तो थोरा हू व्रत तप प्रचुर फलकूं फलै है अर शीलविना बहुत हू तप व्रत है सो निष्फल है। इसप्रकार जानि अपने आत्मामैं शीलकी शुद्धताके अर्थि शीलहीकूं नित्य पूजू हूं यो शीलवृत मनुष्यजन्महीमैं है अन्यगतिमैं नाहीं है तातैं जन्मसफल किया चाहो हो तो शीलकी ही उज्जलता करो ऐसैं शीलवृतेष्वनतीचार नाम तीसरी भावना वर्णन करी ॥ ३ ॥

अब अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नाम चौथी भावनाका वर्णन करै हैं। भो आत्मन् यो मनुष्यजन्म पाय निरंतर ज्ञानाभ्यास ही करो ज्ञानका अभ्यासविना एकक्षण हू व्यतीत मति करो ज्ञानके अभ्यासविना मनुष्य पशुसमान है यातैं योग्यकालमैं जिनआगमका पाठ करो अर समभाव होय तदि ध्यान करो अर शास्त्रनिके अर्थका चिंतवन करो अर बहुत ज्ञानी गुरुजन तिनमैं नम्रता बंदना विनयादिक करो अर

धर्म श्रवण करनेके इच्छुक तिनकूं धर्मका उपदेश करो याहीकूं अभीक्ष्णज्ञानोपयोग कहैं हैं इस अभी-
क्ष्णज्ञानोपयोगनामगुणका अष्टद्रव्यानितैं पूजन करके याका अर्घ उतार करो अर पुष्पनिकी अंजुलि
अग्रभागविषै क्षेपण करो इहां ज्ञानोपयोग है सो चैतन्यकी परिणति है याहीतैं क्षणक्षणमें निरंतर चैत-
न्यकी भावना करना। मेरे अनादिकालतैं काम क्रोध अभिमान लोभादिक संग लागि रहे हैं इनका
संस्कार अनादितैं मेरे चैतन्यरूपमें घुलि रहे हैं अब ऐसी भावना होहू जो भगवानके परमागमका सेवन
का प्रभावतैं मेरा आत्मा रागद्वेषादिकतैं भिन्न अपना ज्ञायकस्वभावरूपहीमें ठहरि जाय अर रागादि-
कनिके वशीभूत नाहीं होय सो ही मेरी आत्माका हित है अथवा नवीनशिष्यनिके आगे श्रुतका अर्थ
का ऐसा प्रकाश करना जो संशयादिक रहित शिष्यनिका हृदयमें यथावत स्वपर पदार्थका स्वरूप प्रगट
हो जाय पाप पुण्यका स्वरूप लोकअलोकका स्वरूप मुनिश्रावकका धर्मको स्वरूप सत्यार्थ निर्णय
हो जाय तैसें ज्ञानाभ्यास करना तथा अपने चित्तमें संसारदेहभोगतैं विरक्तता चिंतवन करना। संसार-
देह भोगनिका यथार्थ स्वरूपका चिंतवन करनेतैं रागद्वेषमोह ज्ञानकूं विपरीत नाहीं करि सके हैं। समस्त
द्रव्यनिमें एक मिल्या हुआ हू आत्माका भिन्न अनुभव होय सो ही ज्ञानोपयोग है ज्ञानाभ्यास करके
विषयनिकी वांछा नष्ट होय है कषायनिका अभाव होय है माया मिथ्या निदान तीनशल्य ज्ञानके अभ्यास
करि ही नष्ट होय हैं ज्ञानके अभ्यासहीतैं मन स्थिर होय है ज्ञानके अभ्यास करके ही अनेक प्रकारके
विकल्प नष्ट होय हैं ज्ञानाभ्यास करके धर्मध्यानमें शुक्लध्यानमें अचल होय तिष्ठै हैं ज्ञानअभ्यासतैं ही व्रत-
संयमतैं चलायमान नाहीं होय है ज्ञानाभ्यास करके ही जिनेंद्रका शासन (आज्ञा) प्रवर्तै है अशुभकर्म
का नाश हू ज्ञानाभ्यास करके ही होय प्रभावना हू जिनधर्मकी ज्ञानके अभ्यास करके ही होय ज्ञानका
अभ्यासतैं लोकनिका हृदयमैंतैं पूर्वसंचय किया ऐसा पापरूप ऋण नष्ट हो जाय है अज्ञानी घोरतप
करि कोटिपूर्वमें जिस कर्मकूं खिपावै तिस कर्मकूं ज्ञानी अंतर्मुहूर्तमें खिपावै है जिनधर्मका स्थंभ ज्ञानका

अभ्यास ही है ज्ञानहीके प्रभावतैं समस्त विषयनिकी बांछारहित होय संतोष धारण करिये है ज्ञानहीतैं उत्तमक्षमादि गुण प्रगट होय हैं ज्ञानाभ्यासतैं ही भक्ष्यअभक्ष्य योग्यअयोग्य त्यागनेयोग्य ग्रहणकरने-योग्यका विचार होय है ज्ञान विना परमार्थ अर व्यवहार दोऊ नष्ट हो जाय हैं ज्ञानरहित राजपुत्रहूका निरादर होय है ज्ञानसमान कोऊ धन नाहीं है ज्ञानका दान समान कोऊ दान नाहीं है दुःखित जीवकूं सुखितकूं सदा ज्ञान ही शरण है ज्ञान ही स्वदेशमें अन्यदेशमें आदर करावनेवाला परम धन है ज्ञानधन है सो किसी करि चोरया जाय नाहीं किसीकूं दिये घटै नाहीं ज्ञान ही सम्यग्दर्शन उपजावै है ज्ञानहीतैं मोक्ष होय है सम्यग्ज्ञान आत्माका अविनाशी स्वाधीन धन है ज्ञानविना संसारसमुद्रमें डूबतेकूं हस्ता-वलंबन देय कौन रक्षा करे। विद्यासमान आभूषण नाहीं विद्याविना आभूषणमात्रतैं ही सत्पुरुषनिके आदरने योग्य होय नाहीं है निर्धनकै परमनिधान प्राप्त करानेवाला एक सम्यग्ज्ञान ही है यातैं हे भव्य-जीवो ! भगवान करुणानिधान वीतराग गुरु तुमकूं या शिक्षा करैं हैं अपनी आत्माकूं सम्यग्ज्ञानके अभ्यासहीमें लगावो अर मिथ्यादृष्टिनिकरि प्ररूप्या मिथ्याज्ञानका दूरहीतैं परिहार करो सम्यक्मिथ्या की परीक्षा करि ग्रहण करो अपना संतानकूं पढावो अन्यजननिकूं विद्याका अभ्यास करावो जे धनवान होय अपने धनकूं सफल करया चाहो हो तो पढने पढानेवालेकूं आजीविकादिक देयकरि थिरता करावो पुस्तक लिखाय देवो विद्या पढनेवालेकूं देवो पुस्तकनिकूं शुद्ध करो करावो पठनपाठनके अर्थि स्थान देवो निरंतर पठन श्रवणमें ही मनुष्य जन्मका काल व्यतीत करो यो अवसर व्यतीत होतो चल्या जाय है जेते आयु काय इंद्रियां बुद्धि बनि रही हैं तेते मनुष्यजन्मकी एक घडी हू सम्यग्ज्ञान विना मति खोवो ज्ञानरूपधन परलोकमें हू लार जायगा इस अभीक्ष्णज्ञानोपयोगकी महिमा कोटि जिह्वानि करि हू वर्णन नाहीं करी जाय है याहीतैं ज्ञानोपयोगकी परमशरणके अर्थि गृहस्थ धनसहित होय सो भावना भाय अर अर्घ उतारण करै अर गृहके त्यागी होय ते निरंतर भावना भावो ऐसैं अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नामा चौथी भावना वर्णन करी ॥ ४ ॥

अब पंचमी संवेग भावनाका वर्णन करे हैं—जो संसार देह भोगनितैं विरक्तपना सो संवेग तथा
धर्ममें अर धर्मका फलमें अनुराग सो संवेग है अथवा संसार देह भोगनितैं विरक्त होय करि धर्ममें अनु·
राग करना सो संवेग है। इहां संसारमें जिस पुत्रसूं राग करिये है सो पुत्र जन्म लेते ही तो स्त्रीका यौवन
सौंदर्यादिक बिगाडे है अर जन्म हुये पाछैं बडी आकुलताकरि बडा कष्टकरि धनका खरचकरि पुत्रकूं
बधाइये है अर रोगादिकनिका बडा जाब्ता अर क्षणक्षणमें बडी सावधानीतैं महामोही महारागी
ग्लानिरहित होय बडा कष्ट सहिकरि बडा करिये है बडा होय तदि आछा भोजन आछा वस्त्र आछा
आभरण आछा स्थानकूं हठतैं ग्रहण करे है अर जो मूर्ख होय व्यसनी होय तीव्रकषायी होय तो रात्रि·
दिन क्लेश होनेका परिमाण नाहीं कहनेमें आवै है पुत्रके मोहतैं परिग्रहमें बडी मूर्छा बधै है अर समर्थ
होजाय अर अपनी आज्ञामें मंद होय तो महा आर्तरूप हुआ मरणपर्यंत क्लेश नाहीं छांडे है अर जो
पिताकूं अपना कार्य करनेवाला समझे जेतैं प्रीति करै है असमर्थ होजाय तासूं राग नाहीं करै धन·
रहितका निरादर करै है यातैं पुत्रका स्वरूपकूं समझि राग त्यागि परमधर्मसूं राग करो पुत्रके अर्थि
अन्यायतैं धनादिपरिग्रहके ग्रहणका परित्याग करो। बहुरि स्त्री हू मोह नाम ठिगकी महापाशी है ममता
उपजावनेवाली है तृष्णाकूं बधावनेवाली है स्त्रीमें तीव्रराग है सो धर्ममें प्रवृत्तिका नाश करै है लोभकूं
अत्यंत बधावै है परिग्रहमें मूर्छा बधावै है ध्यानस्वाध्यायमें विघ्न करै है विषयनिमें अंध करनेवाली है
क्रोधादिक च्यारों कषायनिकी तीव्रता करनेवाली है संयमका घात करनेवाली है कलहको मूल है
दुर्ध्यानको स्थान है मरण विगाडनेवाली है इत्यादिक दोषनिका मूलकारण जानि स्त्रीके संगमें रागभाव
छांडि वीतराग धर्मसूं अपना संबंध करो। बहुरि कलिकालके मित्र हू विषयनिमें उलझावनहारे
हैं समस्त व्यसननिमें सहकारी हैं धनवान देखै है तिनतैं अनेकप्रकार मित्रता करै हैं निरधनतैं कोऊ
संभाषण हू नाहीं करै हैं तातैं भो ज्ञानीजन हो जो संसारपतनको भय है तो अन्यसमस्ततैं मित्रता छांडि

परमधर्ममैं अनुराग करो अर संसार निरंतर जन्ममरण रूप है। जन्मदिनतैं ही मरणके सन्मुख निरंतर प्रयाण करै है अनंतानंतकाल जन्ममरण करते भया तातैं पंच परिवर्तनरूप संसारतैं विरागता भावो अर ये पंचइंद्रियनिके विषय हैं ते आत्माका स्वरूपकूं भुलावनेवाले हैं तृष्णाके बधावनेवाले हैं अतृप्तताके करनेवाले हैं विषयनिकीसी आताप त्रैलोक्यमैं अन्य नाहीं है विषय हैं ते नरकादिकुगतिके कारण हैं धर्मतैं पराङ्मुख करैं हैं कषायनिकूं बधावनेवाले हैं अपना कल्याण चाहैं तिनकूं दूरहीतैं त्यागनेयोग्य हैं ज्ञानकूं विपरीत करनेवाले हैं विषके समान मारनेवाले हैं विष अर अग्निसमान दाहके उपजावनेवाले हैं तातैं विषयनितैं राग छांडना ही परमकल्याण है अर शरीर है सो रोगनिका स्थान है महामलीन दुर्गंध सप्तधातुमय है मलमूत्रादिककरि भरया है वातपित्तकफमय है पवनके आधारतैं हलन चलनादिक करै है सासता क्षुधातृषाकी वेदना उपजावै है समस्त अशुचिताका पुंज है दिन दिन जीर्ण होता चल्याजाय है कोटिनिउपाय करके हू रक्षा किया हुआ मरणकूं प्राप्त होय है ऐसा देहतैं विरागता ही श्रेष्ठ है ऐसे पुत्र मित्र कलत्र संसार भोग शरीरका दुःख करनेवाला स्वरूप जानि विरागभावकूं प्राप्त होना सो संवेग है। संवेग भावनाकूं निरंतर चिंतवन करना ही श्रेष्ठ है यातैं मेरे हृदयमैं निरंतर संवेगभावना तिष्ठो ऐसा चिंतवन करते संसारदेहभोगनितैं विरक्तता होय तदि परमधर्ममैं अनुराग होय है। धर्मशब्दका अर्थ ऐसा जानना जो वस्तुका स्वभाव है सो धर्म है तथा उत्तमक्षमादि दशलक्षणरूप धर्म है तथा रत्नत्रय-स्वरूप धर्म है तथा जीवनिका दयारूप धर्म है ऐसे पर्यायबुद्धि शिष्यनिके समझावनेके अर्थि धर्मशब्दकूं च्यारिप्रकारकरि वर्णन किया है तो हू वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव ही दशलक्षण है क्षमादि दश-प्रकार आत्माका ही स्वभाव है अर सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र हू आत्मातैं भिन्न नाहीं है अर दया है सो हू आत्माहीका स्वभाव है सो ऐसा जिनेन्द्रकरि कह्या आत्माका स्वभावरूप दशलक्षणधर्ममैं जो अनुराग सो संवेग है अर कपटरहित रत्नत्रयधर्ममैं अनुराग करना सो संवेग धर्म है तथा मुनीश्वरनिका अर

श्रावकका धर्ममें अनुराग सो संवेग है तथा जीवनिकी रक्षाकरनेरूप जीवनिका दयामें परिणाम होना सो भगवान संवेग कह्या है अथवा वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव केवलज्ञान केवलदर्शन है तिस स्वभावमें लीन होना सो प्रशंसा करनेयोग्य संवेग है जातैं धर्ममें अनुराग परिणाम सो संवेग है तथा धर्मका फलकूं अत्यन्तमिष्ट जानना सो संवेग है ये तीर्थंकरपना चक्रवर्ती होना नारायण प्रति-नारायण बलभद्रादिक उपजना सो धर्महीका फल है तथा बाधारहित केवली होना तथा स्वर्गादिकानिमें महानऋद्धिका धारक देव होना तथा इंद्र होना तथा अनुत्तरादिकविमानमें अहमिंद्र होना सो समस्त पूर्वजन्ममें आराधन किया धर्मका ही फल है। बहुरि और हू जो भोगभूमिआदिकमें उपजना राजसंपदा पावना अखंड ऐश्वर्य पावना अनेक देशनिमें आज्ञा प्रवर्तना प्रचुरधनसंपदा पावना रूपकी अधिकता पावनी बलकी अधिकता चतुरता महान पंडितपना सर्वलोकमें मान्यता निर्मलयशकी विख्या-तता बुद्धिकी उज्वलता आज्ञाकारी धर्मात्मा कुटुंबका संयोग होना सत्पुरुषनिकी संगति मिलना रोगरहित होना दीर्घआयु इंद्रियनिकी उज्वलता न्यायमार्गमें प्रवर्तना वचनकी मिष्टता इत्यादिक उत्तमसामग्रीका पावना है सो हू कोऊ धर्ममें प्रीति करी है तथा धर्मात्मानिका सेवन किया है धर्मकी तथा धर्मात्मानिकी प्रशंसा की है ताका फल है । कल्पवृक्ष चिंतामणि समस्त धर्मात्माके द्वारे खडे जानहू। धर्मके फलकी महिमा कोऊ कोटि जिह्वानिकरि कहनेकूं समर्थ नाहीं होइये है । ऐसे धर्मके फलकूं त्रैलोक्यमें, उत्कृष्ट जाने है ताके संवेगभावना होय है । बहुरि धर्मसहित सधर्मीनिकूं देखि आनंद उपजना तथा धर्मकी कथनीमें आनंदमय होना और भोगनितैं विरक्त होना सो संवेग नामा पंचमअंग है याकूं आत्माका हित समझि याकी निरंतर भावना भावो अर भावनाके आनंदकरि सहित होय याकी प्राप्तिके अर्थि याका महाअर्घ उतारण करो। ऐसैं संवेगनामा पंचम भावना वर्णन करी ॥५॥

अब शक्तिप्रमाणत्याग भावना वर्णन करिये है । त्यागनामभावना प्रशंसायोग्य मनुष्यजन्मका

मंडन है। अपने हृदयमैं त्यागभाव रचनेके अर्थि अनेक उत्सवरूप वादित्रनिकूं बजाय याका महान अर्घ उतारण करो। बाह्य अभ्यंतर दोय प्रकारका परिग्रहतैं ममता छांडनेकरि त्यागधर्म होय है। अंतरंगपरिग्रह चौदहप्रकार है सो ऐसे जानना। जाण्याविना ग्रहण त्याग वृथा है। मिथ्यात्व, अर स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेदरूप परिणाम सो वेदपरिग्रह है। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, गुजुप्सा, राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ ऐसे चौदहप्रकार अंतरंग परिग्रह जनाया। तहां जो शरीरादिक परद्रव्यनिमैं आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्व नाम परिग्रह है। यद्यपि जो वस्तु है सो अपना द्रव्य अपना गुण अपना पर्याय है सो ही अपना स्वरूप है। जैसे सुवर्णनाम द्रव्य है सुवर्णके पीतादिक गुण हैं कुंडलादि पर्याय हैं सो समस्त सुवर्ण ही हैं यातैं सुवर्ण अन्यवस्तुका नाहीं अन्यवस्तु सुवर्णका नाहीं सुवर्ण है सो सुवर्ण हीका है अन्य वस्तुका कोऊ हुआ नाहीं हो है नाहीं होयगा नाहीं अपना स्वरूप है सो ही आपका है ऐसैं आत्मा है सो आत्माहीका है आत्माका अन्य कोऊ ही द्रव्य नाहीं है। अब जो देहकूं आपा मानै है जो मैं गोरा, मैं सांवला, मैं राजा, मैं रंक, मैं स्वामी, मैं सेवक, मैं ब्राह्मण, मैं क्षत्रिय, मैं वैश्य, मैं शूद्र, मैं वृद्ध, मैं बाल, मैं बलवान, मैं निर्बल, मैं मनुष्य, मैं तिर्यंच इत्यादिक कर्मकृत विनाशीक परद्रव्यकृत पर्यायमैं आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्वनाम परिग्रह है। मिथ्यादर्शनतैं ही मेरा गृह मेरा पुत्र मेरा राज मैं ऊंच मैं नीच इत्यादिक मानि समस्त परपदार्थनिमैं आत्मिबुद्धि करै है पुद्गलका नाशकूं अपना नाश मानै है याके बंधनेतैं अपना बंधना घटनेतैं घटना मानि पर्यायमैं आत्मबुद्धिकरि अनादिकालतैं आपा भूलि रह्या है यातैं समस्त परिग्रहमैं आत्मबुद्धिका मूल मिथ्यात्वनामपरिग्रह है जाकै मिथ्याज्ञान नाहीं सो परद्रव्यनिमैं 'हमारा' ऐसैं कहता हुवा हू परद्रव्यनिमैं कदाचित् आपा नाहीं मानै है। बहुरि वेदके उदयतैं स्त्रीपुरुषनिमैं जो कामसेवनके परिणाम होय हैं तिस काममैं तन्मय होय कामके भावकूं आत्मभाव मानना सो वेदपरिग्रह है। काम तो वीर्यादिकका प्रेर्या देहका विकार है इसकूं अपना स्वरूप जानै सो वेदपरि-

ग्रह है। बहुरि धन ऐश्वर्य पुत्र स्त्री आभरणादि परद्रव्यादिकमैं आसक्तता सो रागपरिग्रह है अन्यका विभव परिवार ऐश्वर्य पांडित्यादिक देखि वैरभाव करना सो द्वेषपरिग्रह है हास्यमें आसक्त होना सो हास्य परिग्रह है अपना मरण होनेतैं मित्रनिका परिग्रहादिकनिकरि वियोगहोनेतैं निरंतर भयवान रहना सो भय परिग्रह है पंचइंद्रियनिकरि वांछित भोगउपभोगके भोगनिमें लीन हो जाना सो रति परिग्रह है। अनिष्टवस्तुका संयोगमैं परिणामनिका संक्लेशरूप होना सो अरतिपरिग्रह है अपना इष्ट स्त्रीपुत्रमित्रधनजीविकादिकका वियोग होते तिनका संयोगकी वांछा करके संक्लेशरूप होना सो शोक परिग्रह है। बहुरि घृणावान पुद्गलनिके देखनेतैं श्रवणतैं चिंतवनतैं स्पर्शनतैं परिणाममैं ग्लानि उपजना सो जुगुप्सा नाम परिग्रह है। अथवा अन्यका उदय देखि परिणाममैं क्लेशित होना सुहावे नाहीं सो जुगुप्सा परिग्रह है। बहुरि परिणाममें रोषकरि तप्त होना सो क्रोध परिग्रह है बहुरि उच्च कुल जाति धन ऐश्वर्य रूप बल ज्ञान बुद्धि इनकरि आपकूं अधिक जानि मद करना तथा परकूं घाटि जानि निरादर करना कठोरपरिणाम रखना सो मानपरिग्रह है अनेक कपटछलादिककरि वक्रपरिणाम रखना सो माया परिग्रह है। परद्रव्यनिके ग्रहणमें तृष्णा सो लोभ परिग्रह है। ऐसैं संसारपरिभ्रमणके कारण आत्माके ज्ञानादिक गुणनिके घातक चौदहप्रकार अंतरंगपरिग्रह हैं अर इनहीतैं मूर्छाके कारण धनधान्यक्षेत्रसुवर्णादिक स्त्रीपुत्रादि चेतन अचेतन बाह्य परिग्रह हैं ऐसे अंतरंग बहिरंग दोयप्रकारके परिग्रहके त्यागनेतैं त्याग धर्म होय है। यद्यपि बाह्यपरिग्रहरहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीतैं होय है परंतु अभ्यंतरपरिग्रहका त्याग बहुत दुर्लभ है। यातैं दोयप्रकारका परिग्रह एकदेशत्याग तो श्रावकके होय है अर सकलत्याग मुनीश्वरनिके होय है बहुरि कषायनिका त्यागतैं त्यागधर्म होय है बहुरि इंद्रियनिकूं विषयनितैं रोकनेकरि त्याग होय है। बहुरि रसनिका त्यागकरि त्यागधर्म होय है। जातैं रसना इंद्रियकी लोलुपता जीतनेतैं समस्त पापनिका त्याग सहज होय है। बहुरि जिनेंद्रका परमागमका अध्ययनका अन्यकूं

अध्ययन करावना शास्त्रनिकूं लिखाय देना शोधना शुधावना सो परम उपकार करनेवाला त्यागधर्म होय है। बहुरि मनके दुष्टविकल्पनिका अभाव करना दुष्टविकल्पनिके कारण छांडि च्यारि अनुयोगकी चरचामें चित्त लगावना सो त्यागधर्म है। बहुरि मोहका नाश करनेवाला धर्मका उपदेश श्रावकनिकूं देना सो महापुण्यका उपजावनेवाला त्यागधर्म है। वीतरागधर्मका उपदेशतैं अनेकप्राणीनिका परिणाम पापतैं भयभीत होय है धर्मके प्रभावकूं अनेक प्राणी प्राप्त होय हैं। बहुरि उत्तम मध्यम जघन्य ऐसैं तीन प्रकारके पात्रनिकूं भक्तिकरि युक्त होय आहारदान देना प्रासुक औषधि देना ज्ञानके उपकरण सिद्धांतके पढनेयोग्य पुस्तकका दान देना मुनिके योग्य तथा श्रावकके योग्य वस्तिका दान देना गुणनिके धारकनिकूं तपकी वृद्धि करनेवाला स्वाध्यायमैं लीन करनेवाला ध्यानकी वृद्धिका कारण आहारादिक च्यारि प्रकारका दान परमभक्तितैं विकसितचित्त हुआ अपना जन्मकूं कृतार्थ मानता गृहचाराकूं सफल मानता बड़ा आदरतैं पात्रदान करो। पात्रदान होना महाभाग्यतैं जिनका भला होना है तिनकै होय है पात्रका लाभ होना ही दुर्लभ है अर भक्तिसहित पात्रदान होय जाय ताकी महिमा कहनेकूं कौन समर्थ है बहुरि क्षुधातृषाकरि जो पीडित होय तथा रोगी होय दरिद्री होय वृद्ध होय दीन होय तिनकूं अनुकंपाकरि दान देना सो समस्त त्यागधर्म है त्यागहीतैं मनुष्यजन्म सफल है त्यागहीतैं धनधान्यादिक पावना सफल है त्यागविना गृहस्थका गृह है सो श्मशान समान है अर गृहस्थका स्वामी पुरुष मृतक समान है अर स्त्रीपुत्रादिक गृद्धपक्षी समान हैं सो याका धनरूप मांस चूंटि चूंटि खाय हैं ऐसैं त्यागभावना वर्णन करी॥ ६॥

अब शक्तिप्रमाणतपभावना अंगीकार करना। क्योंकि यो शरीर दुःखको कारण है। अनेकदुःख यो शरीर उपजावै है अर यो शरीर अनित्य है अस्थिर अशुचि है कृतघ्नवत है कोट्यां उपकार करता हू जैसैं कृतघ्न अपना नाहीं होय है तैसैं देहके नाना उपकार सेवा करता हू अपना नाहीं होय है यातैं

यथेष्टविधिकरि याकूं पुष्ट करना योग्य नाहीं कृश करने योग्य है तो हू यो गुण रत्नत्रयके संचयको कारण है। शरीर विना रत्नत्रयधर्म नाहीं होय है सेवककी ज्यों योग्यभोजन देय यथाशक्ति जिनेन्द्रका मार्गतैं विरोधरहित कायक्लेशादि तप करना योग्य है। तप विना इंद्रियनिकी विषयनिमैं लोलुपता घटै नाहीं तपविना त्रैलोक्यका जीतनेवाला कामकूं नष्टकरनेकूं समर्थता होय नाहीं तपविना आत्माकूं अचेत करनेवाली निद्रा जीती जाय नाहीं अर तपविना शरीरका सुखिया स्वभाव मिटै नाहीं जो तपके प्रभावतैं शरीरकूं साधि राख्या होय तो क्षुधा तृषा शीत उष्णादिक परीषह आये कायरता उपजै नाहीं संयमधर्मतैं चलायमान होय नाहीं तप है सो कर्मकी निर्जराका कारण है। तातैं तप ही करना श्रेष्ठ है। अपना वीर्यकूं नाहीं छिपायकरिकैं जैसैं जिनेन्द्रके मार्गतैं विरोधरहित होय तैसैं तप करो तपनाम सुभटका सहाय विना ये अपना श्रद्धान ज्ञानआचरणरूप धनकूं काम क्रोध प्रमादादिक लूटेरे एकक्षणमैं लूटि लेवैंगे तदि रत्नत्रयसंपदाकरि रहित चतुर्गतिरूपसंसारमैं दीर्घकाल भ्रमण करोगे याहीतैं जैसैं वात पित्त कफ ये त्रिदोष विपरीत होय रोगादिक नाहीं उपजावैं तैसैं तप करना उचित है समस्तमैं प्रधानतप तो दिगम्बरपणा है कैसा है दिगम्बरपणा जो घरकी ममतारूपपासीकूं छेदि देहका समस्त सुखियापणा छांडि अपनाशरीरतैं शीत उष्ण तावडा वर्षा पवन डांस मच्छर माक्षिकादिकनिकी बाधाके जीतनेकूं सन्मुख होय कोपीनादिक समस्त वस्त्रादिकको त्यागकरि दशादिशारूपही जामैं वस्त्र हैं ऐसा दिगम्बरपणा धारण करना सो अतिशयरूप तप जानना जाका स्वरूपकूं देखते श्रवण करते बडे बडे शूरवीर कंपायमान हो जाय हैं तातैं भो शक्तिकूं प्रगटकरनेवाले हो जो संसारके बंधनसे छूट्या चाहो हो तो जिनेश्वरसंबंधी दीक्षा धारण करो जातैं अंगका सुखियापणा नष्ट होय उपसर्गपरीषह सहनेमैं कायरताका अभाव होय, सो तप है। जातैं स्वर्गलोककी रंभा अर तिलोत्तमा हू अपने हावभावविलासविभ्रमादिककरि मनकूं कामका विकारसहित नाहीं कर सकै ऐसा कामकूं नष्ट करै सो तप है। जो दोय प्रकारके परिग्रहमैं

इच्छाका अभाव हो जाय सो तप है जो इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रवर्तनेका अभाव हो जाय सो तप है तप तो वही है जो निर्जनवन अर पर्वतनिका भयंकर गुफा जहां भूतराक्षसादिकानिके अनेकविकार प्रवर्तै अर सिंहव्याघ्रादिकानिके भयंकर प्रचार होय रहे अर कोट्यां वृक्षनिकरि अंधकार होय रह्या अर जहां सर्प अजगर रींछ चीता इत्यादिक भयंकर दुष्टतिर्यंचनिका संचार होय रह्या ऐसे महा विषमस्थाननिमैं भयरहित हुआ ध्यानस्वाध्यायमैं निराकुल हुवा तिष्ठै सो तप है। जो आहारका लाभ अलाभमें समभावके धारक मीठा खाटा कडवा कषायला ठंडा ताता सरस नीरस भोजन जलादिकमै लालसारहित संतोषरूप अमृतका पान करते आनंदमैं तिष्ठै सो तप है। जो दुष्ट देव दुष्ट मनुष्य दुष्टतिर्यंचनिकरि किये घोर उपसर्गनिकूं आवते कायरता छांडि कंपायमान नाहीं होना सो तप है जातैं चिरकालका संचय किया कर्म निर्जरै सो तप है। बहुरि जो कुवचन कहनेवाले निंद्यदोष लगावनेवाले ताडन मारन अग्निमैं ज्वलनादिउपद्रव करनेवालेमैं द्वेषबुद्धिकरि कलुषपरिणाम नाहीं करना अर स्तुतिपूजनादि करनेवालेमैं राग भावका नाहीं उपजना सो तप है। बहुरि पंचमहाव्रतनिका अर पंचसमितिका पालन अर पंचइंद्रियनिका निरोध करना अर छह आवश्यक समयका समय करना अपने मस्तकके डाढीमूछके केशानकूं अपने हस्ततैं उपवासका दिनमैं उपाडना दोय महीना पूर्ण भए उत्कृष्ट लोंच है मध्यम तीनमहीने गये लोंच करे जघन्य चारमहीने गए लोच करै है सो लोंचकरना हू तप है अन्य भेषीनिकी ज्यों रोजीना केश नाहीं उपाडै है शीतकाल ग्रीषमकाल वर्षाकालमैं नग्न रहना अर स्नानका नाहीं करना अर भूमिशयनकरि अलपकाल निद्रा लेना दंतनिकूं अंगुलिकरि हू नाहीं धोवना अर एकवार भोजन खडा भोजन रसनीरसस्वादकूं छांडि भोजन करै ऐसे अट्ठाईस मूलगुण अखंड पालना सो बडा तप है इन मूलगुणनिके प्रभावतैं घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं प्राप्त होय मुक्त हो जाय है। यातैं भो ज्ञानीजन हो धर्मको अंग यो तप है याकी निर्विघ्न प्राप्तिकेअर्थि याहीका स्तवनपूजनादिकरि याका महाअर्घ उतारण करो। यातैं दूरि

अर अत्यंतपरोक्ष हू मोक्ष तुम्हारे अतिनिकटताकूं प्राप्त होय है ऐसैं शक्तितस्त्यागनामा सप्तमी भावनाका वर्णन किया ॥ ७ ॥

साधुसमाधि नामा अष्टमीभावनाकूं कहै हैं। जैसैं भंडारमैं लागी हुई अग्निकूं गृहस्थ है सो अपना उपकारक वस्तुका नाश जानि अग्निकूं बुझाइये है क्योंकि अनेक वस्तुकी रक्षा होना बहुत उपकारक है तैसैं अनेक व्रतशीलादि अनेकगुणनिकरि सहित जो व्रती संयमी तिनके कोऊ कारणतैं विघ्न प्रगट होतैं विघ्नकूं दूरिकरि व्रत शीलकी रक्षा करना सो साधुसमाधि है। अथवा गृहस्थके अपने परिणामकूं बिगाडनेवाला मरण आ जाय उपसर्ग आ जाय रोग आ जाय इष्टवियोग हो जाय अनिष्टसंयोग आ जाय तदि भयकूं नाहीं प्राप्त होना सो साधुसमाधि है। सम्यग्ज्ञानी ऐसा विचार करै है हे आत्मन्! तुम अखंड अविनाशी ज्ञानदर्शन स्वभाव हो तुम्हारा मरण नाहीं जो उपज्या है सो विनशैगा पर्यायका विनाश है चैतन्य द्रव्यका विनाश नाहीं है पांच इंद्रिय अर मनबल कायबल वचनबल आयुबल अर उस्वास ये दशप्राण हैं इनिका नाशकूं मरण कहिये है तुम्हारा ज्ञानदर्शन सुख सत्ता इत्यादिक भावप्राण हैं तिनका कदाचित् नाश नाहीं है तातैं देहका नाशकूं अपना नाश मानना सो मिथ्याज्ञान है। भो ज्ञानिन्! हजारां कर्मनिकरि भरया हाडमांसमय दुर्गंध विनाशीक देहका नाश होतैं तुम्हारै कहा भय है तुम तो अविनाशी ज्ञानमय हो यो मृत्यु है सो बडा उपकारी मित्र है जो गल्या सड्या देहमैतैं काढि तुमकूं देवादिकनिका उत्तमदेह धारण करावै है मरण मित्र नाहीं होता तो इस देहमैं केतेकाल बसता अर रोगका अर दुःखनिका भर्या देहतैं कौन निकासता अर समाधिमरणादिककरि आत्माका उद्धार कैसैं होता अर व्रततपसंयमका उत्तमफल मृत्युनामामित्रका उपकारविना कैसैं पावता अर पापतैं कौन भयभीत होता अर मृत्युरूप कल्पवृक्षविना चारिआराधनाका शरण ग्रहण कराय संसाररूप कर्दमतैं कौन काढता तातैं संसारमैं जिनका चित्त आसक्त है अर देहकूं अपना रूप जानै हैं तिनके मरणका भय है सम्यग्दृष्टि देह

तैं अपना स्वरूपकूं भिन्न जानि भयकूं प्राप्त नाहीं होय है तिनके साधुसमाधि होय है अर जो मरणके अवसरमैं कदाचित् रोगदुःखादिक आवै हैं सो हू सम्यग्दृष्टिके देहसूं ममत्व छुडावनेके अर्थि हैं अर त्याग संयमादिकके सन्मुख करनेकेअर्थि हैं प्रमादकूं छुडाय सम्यग्दर्शनादिक चारिआराधनामैं दृढताकेअर्थि हैं अर ज्ञानी विचारै है जो जन्म धार्‍या है सो अवश्य मरैगा जो कायर होहूंगा तो मरण नाहीं छांडैगा अर धीर होय रहूंगा तो मरण नाहीं छांडैगा तातैं दुर्गतिका कारण जो कायरतातैं मरण ताकूं धिक्कार होहु अब ऐसा साहसतैं मरूं जो देह मरि जाय अर मेरा ज्ञानदर्शनस्वरूपका मरण नाहीं होय ऐसैं मरण करना उचित है तातैं उत्साहसहित सम्यग्दृष्टिके मरणका भय नाहीं सो साधुसमाधि है।

बहुरि देवकृत मनुष्यकृत तिर्यंचकृत उपसर्गकूं होते जाके भय नाहीं होय पूर्वकर्मका उपजाया निर्जरा ही मानै है ताके साधुसमाधि है। बहुरि रोगका भयकूं नाहीं प्राप्त होय हैं जातैं ज्ञानी तो अपना देहकूं ही महारोग मानै है जातैं निरंतर क्षुधातृषादिक घोररोगकूं उपजावनेवाला शरीर है बहुरि यो मनुष्यशरीर है सो वातपित्तकफादिक त्रिदोषमय है असातावेदनीयकर्मके उदयतैं त्रिदोषकी घटतीबधतीतैं ज्वर कांस स्वास अतिसार उदरशूल शिरशूल नेत्रका विकार वातादिपीडा होते ज्ञानी ऐसा विचार करै है जो यो रोग मेरे उत्पन्न भया है सो याकूं असातावेदनीयकर्मको उदय तो अंतरंग कारण है अर द्रव्य क्षेत्रकालादि बहिरंग कारण है सो कर्मके उदयकूं उपशम हुआ रोगका नाश होयगा असाताका प्रबल उदयकूं होते बाह्य औषधादिक ही रोग मेटनेकूं समर्थ नाहीं है अर असाताकर्मके हरनेकूं कोऊ देव दानव मंत्र तंत्र औषधादिक समर्थ हैं नाहीं यातैं अब संक्लेशकूं छांडि समता ग्रहण करना अर बाह्य औषधादिक हैं ते असाताके मंद उदय होतैं सहकारी कारण हैं असाताका प्रबल उदय होतैं औषधादिक बाह्यकारण रोग मेटनेकूं समर्थ नाहीं है ऐसा विचार असाताकर्मके नाशका कारण परमसमता धारण करि संक्लेशरहित होय सहना कायर नाहीं होना सो ही साधुसमाधि है। बहुरि इष्टका वियोग होतैं अर

अनिष्टका संयोग होतैं ज्ञानकी दृढतातैं जो भयकूं प्राप्त नाहीं होना सो साधुसमाधि है। पुरुष जन्मजरामरणकरि भयवान है अर सम्यग्दर्शनादिगुणनिकरि सहित है सो पर्यायका अंतकालमें आराधनाका शरणसहित अर भयकरिरहित देहादिक समस्तपरद्रव्यानिमें ममतारहित हुआ व्रतसंयमसहित समाधिमरणकी वांछा करै है। इस संसारमैं परिभ्रमण करता अनंतानंत काल व्यतीत भया समस्त समागम अनेकवार पाया परंतु सम्यक्समाधिमरणकूं नाहीं प्राप्त भया हूं जो समाधिमरण एकवार हू होता तो जन्ममरणका पात्र नाहीं होता संसार परिभ्रमण करता मैं भवभवमें अनेक नवीन नवीन देह धारण किये ऐसा कौन देह है जो मैं नाहीं धारण किया अब इस वर्तमानदेहमैं कहा ममत्व करूं अर मेरे भवभवमैं अनेक स्वजन कुटुंबजनका हू संबंध भया है अब ही स्वजन नाहीं मिलैं हैं यातैं कौन कौन स्वजनमैं राग करूं अर मेरे भवभवमैं अनेकबार राजऋद्धि हू उपजी अबमैं इस तुच्छ संपदामैं ममता कहा करूंगा भवभवमैं मेरे अनेक मातापिता हू पालना करनेवाले हो गये अब ही नाहीं भये हैं। बहुरि मेरे भवभवमैं नारीपणा हू भया अर मेरे भवभवमैं कामकी तीव्रलंपटतासहित नपुंसकपणा हू भया अर मेरे भवभवमैं अनेकवार पुरुषपणा हू भया तो हू वेदके अभिमानकरि नष्ट होता फिरया अर भवभवमैं अनेक जातिके दुःखकूं प्राप्त भया ऐसा संसारमैं कोऊ दुःख नाहीं है जो मैं अनेकबार नाहीं पाया अर ऐसा कोऊ इंद्रियजनित सुख हू नाहीं है जो मैं अनेकबार नाहीं पाया अर अनेकबार नरकमैं नारकी होय होय असंख्यात काल पर्यंत प्रमाणरहित नानाप्रकारके दुःख भोगे अर अनेक भव तीर्यंचनिके प्राप्त होय होय असंख्यात अनंतबार जन्ममरण करता अनेकप्रकारके दुःख भोगता भोगता वारंवार परिभ्रमण किया अनेकवार धर्मवासनारहित मिथ्यादृष्टी मनुष्य हू भया अर अनेकबार देवलोकनिमैं हू प्राप्त भया अर अनेक भवानिमैं जिनेंद्रकूं पूज्या अनेक भवानिमैं गुरुवंदना हू करी अनेकभवनिमैं मिथ्यादृष्टि हुआ कपटतैं आत्मनिंदा हू करी अनेक भवानिमैं दुर्द्धर तप हू धारण किया अनेक भवानिमैं भगवानका समवसरणहूमैं संचार

किया अर अनेक भवनिमैं श्रुतज्ञानके अंगनिका हू पठनपाठनादिक अभ्यास किया तथापि अनंतकाल भव-निवासी ही रह्या यद्यपि जिनेंद्रकूं पूजना गुरुनिकी वंदना तथा आत्मनिंदा करना तथा दुर्द्धरतपश्चरण करना समवसरणमैं जावना श्रुतनिके अंगनिका अभ्यास करना इत्यादिक ये कार्य प्रशंसायोग्य हैं पापका विनाशक हैं पुण्यका कारण हैं तोहू सम्यग्दर्शनाविना अकृतार्थ हैं संसारपरिभ्रमणकूं नाहीं रोकि सकैं हैं सम्यग्दर्शनाविना समस्त क्रिया पुण्यका बंध करनेवाली है सम्यग्दर्शनसहित होय तदि संसारको छेद करै सो ही आत्मानुशासनमैं कह्या है—

समबोधवृत्ततपसां पाषाणस्यैव गौरवं पुंसः। पूज्यं महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वसंयुक्तं ॥ १ ॥

अर्थ—पुरुषके समभाव अर ज्ञान अर चारित्र अर तप इनको महानपणो पाषाणका महानपणाके तुल्य है अर ये ही जे समबोध चारित्र अर तप जो सम्यक्त्वसहित होंय तो महामणिकी ज्यों पूज्य हो जाय। भावार्थ—जगतमैं मणि है सो हू पाषाण है अर अन्य झाझडा पत्थर है सो हू पाषाण है परन्तु पाषाण तो मण दोय मणहू बांधि ले जाय बेचै तो हू एक पीसो उपजै तातैं एकदिन हू पेट नाहीं भरै अर मणि केई रती हू ले जाय बेचै तो हजारां रुपया उपजै समस्तजन्मका दारिद्र नष्ट होजाय तैसैं समभाव अर शास्त्रनिका ज्ञान अर चारित्रधारण अर घोरतपश्चरण ये सम्यक्त्वविना बहुतकाल धारण करै तो राज्यसंपदा पावै तथा मंदकषायके प्रभावतैं देवलोकमैं जाय उपजै फिर चयकरि एकइंद्रियादिक पर्यायनिमैं परिभ्रमण करै अर जो सम्यक्त्वसहित होय तो संसारपरिभ्रमणका नाशकरि मुक्त होजाय तातैं सम्यक्त्वविना मिथ्यादृष्टि है सो जिनकूं पूजो वा गुरुवंदना करो समवसरणमैं जावो श्रुतका अभ्यास करो तप करो तोहू अनंतकाल संसारवास ही करैगा इस तीनभवमैं सुख दुःखकी समस्त सामग्री यो जीव अनन्तबार पाई कोऊ हू दुर्लभ नाहीं एक साधुसमाधि जो रत्नत्रयका लाभकूं निर्विघ्न परलोकताईं ले जाना है सो रत्नत्रयसहित हुवा देहकूं छांडे है तिनके साधुसमाधि होय ताका पावना ही दुर्लभ है साधु-

समाधि है सो चतुर्गतिनिमैं परिभ्रमणके दुःखका अभावकरि निश्चल स्वाधीन अनंतसुखकूं प्राप्त करै है जो पुरुष साधुसमाधि भावनाकूं निर्विघ्नप्राप्त होनेके अर्थि इस भावनाकूं भावता याका महान अर्घ उतारण करै है सो ही शीघ्र संसारसमुद्रकूं तिरि अष्टगुणानिका धारक सिद्ध होय है ऐसैं साधुसमाधिनामा अष्टमीभावना वर्णन करी ॥ ८ ॥

अब वैयावृत्तिनामा नवमी भावनाका वर्णन करिये है। कोठा अर उदरकी व्यथा जो आमवात संग्रहणी कठोदर सफोदर नेत्रशूल कर्णशूल शिरःशूल दंतशूल तथा ज्वर कास स्वास जरा इत्यादिक रोगानिकरि पीडित जे मुनि तथा श्रावक तिनकूं निर्दोष आहार औषध वस्तिकादिक करि सेवा करना तिनकी शुश्रूषा करना विनय करना आदर करना दुःख दूरि करनेमैं यत्नकरना सो समस्त वैयावृत्य है जे तपकरि तप्त होंय अर रोगकरि युक्त जिनका शरीर होय तिनके वेदना देखकर तिनके अर्थि प्रासुक औषधि तथा पथ्यादिककरि रोगका उपशम करना सो नवमो वैयावृत्य नाम गुण है वैयावृत्य मुनीश्वरनिके दशभेद करि दश प्रकार है। आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन दश प्रकारके मुनीश्वरनिके परस्पर वैयावृत्य होय है कायकी चेष्टाकरि वा अन्यद्रव्यकरि दुःख वेदनादिक दूर करनेमैं व्यापार करिये प्रवर्तन करिये सो वैयावृत्य है । इन दश प्रकारके मुनिनिका ऐसा स्वरूप जानना जिनतैं स्वर्गमोक्षके सुखके बीज जे व्रत तिननैं आदरसहित ग्रहण करिकै भव्यजीव अपने हितके अर्थि आचारण किए ते सम्यग्ज्ञानादिगुणनिके धारक आचार्य हैं। भावार्थ—जिनतैं मोक्षके स्वर्गके साधक वृत आचारण करिये ते आचार्य हैं जिनका समीपकूं प्राप्त होय आगमकूं अध्ययन करिये ते वृत शीलश्रुतके आधार ऐसे उपाध्याय हैं महान् अनशनादितपमैं तिष्ठैं ते तपस्वी हैं जे श्रुतके शिक्षणमैं तत्पर निरंतर वृतानिकी भावनामैं तत्पर ते शैक्ष्य हैं रोगादिककरि जाका शरीर क्लेशित होय सो ग्लान है वृद्धमुनिनिकी परिपाटीका होय सो गण है आपकूं दीक्षा देनेवाला

आचार्यका शिष्य होय सो कुल है च्यारिप्रकारके मुनिका समूह सो संघ है चिरकालका दीक्षित होय सो साधु है जो पण्डितपणाकरि वक्तापणाकरि ऊंचे कुलकरि लोकनिमैं मान्य होय धर्मका गुरु कुलका गौरवपणाका उत्पन्न करनेवाला होय सो मनोज्ञ है अथवा असंयतसम्यग्दृष्टि हू संसारका अभावरूपपणातैं मनोज्ञ है इन दश प्रकारकेनकै रोग आजाय परीषहनिकरि खेदित होय तथा श्रद्धानादि बिगडि मिथ्यात्वादिक प्राप्त होय जाय तो प्रासुक औषधि भोजनपान योग्य स्थान आसन काष्ठफलक तृणादिकनिका संस्तरादिकनिकरि अर पुस्तक पीछिकादिक धर्मोपकरणकरि जो प्रतिकार उपकार करिये तथा सम्यक्त्वमैं फेरि स्थापन करिये इत्यादि उपकार सो वैयावृत्य है । अर जो बाह्य भोजन पान औषधादिक नाहीं सम्भवते होय तो अपने कायकरके कफ तथा नासिकामल मूत्रादि दूरि करनेकरि तथा उनके अनुकूल आचरणकरनेकरि वैयावृत्य होय है इस वैयावृत्यमैं संयमका स्थापन ग्लानिको अभाव अर प्रवचनमैं वात्सल्यपणो अर सनाथपणो इत्यादि अनेकगुण प्रगट होय हैं वैयावृत्यही परम धर्म है वैयावृत्य नाहीं होय तो मोक्षमार्ग बिगडि जाय आचार्यादिक हैं ते शिष्य मुनि तथा रोगी इत्यादिकका वैयावृत्य करनेतैं बहुत विशुद्धता उच्चताकूं प्राप्त होय हैं ऐसेही श्रावकादिक मुनिका वैयावृत्य करै तथा श्रावक श्राविकाका करैं औषधदानकरि वैयावृत्य करैं अर भक्तिपूर्वक युक्तिकरि देहका आधार आहारदानकरि वैयावृत्य करैं अर कर्मके उदयतैं दोष लगि गया होय ताका ढांकना तथा श्रद्धानसूं चलायमान भया होय ताकूं सम्यग्दर्शन ग्रहण करावना तथा जिनेंद्रके मार्गसूं चलि गया होय ताकूं मार्गमैं स्थापन करना इत्यादिक उपकारकरि वैयावृत्य है । बहुरि जो आचार्यादि गुरु शिष्यकूं श्रुतका अंग पढावै तथा व्रत संयमादिककी शुद्धिको उपदेश करै सो शिष्यका वैयावृत्य है अर शिष्यहू गुरुनिकी आज्ञाप्रमाण प्रवर्तता गुरुनिका चरणनिका सेवन करै सो आचार्यका वैयावृत्य है बहुरि अपना चैतन्यस्वरूप आत्माकूं रागद्वेषादिक दोषनिकरि लिप्त नाहीं होने देना सो

अपने आत्माका वैयावृत्य है तथा अपने आत्माकूं भगवानके परमागममें लगाय देना तथा दशलक्षणरूप धर्ममें लीन होना सो आत्मवैयावृत्य है। तथा काम क्रोध लोभादिकके अर्थ अर इंद्रियनिके विषयनिके आधीन नाहीं होना सो अपना आत्माका वैयावृत्य है। बहुरि इहां औरहू विशेष जानना जो रोगी मुनिका तथा गुरुनिका प्रातःकाल अर अथणने शयन आसन कमंडलु पीछी पुस्तक नेत्रनिसूं देखि मयूरपीच्छिकातैं शोधना तथा असक्तरोगीमुनिका आहार औषधादिकरि संयमके योग्य उपकार करना तथा शुद्ध ग्रंथनिके वाचनेकरि धर्मका उपदेशकरि परिणामकूं धर्ममें लीन करना तथा उठावना बैठावना मलमूत्र करावना कलोट लिवाना इत्यादिककरि वैयावृत्य करै तथा कोऊ साधु मार्गकरि खेदित होय तथा भील म्लेक्ष दुष्टराजा दुष्टतिर्यंचनिकरि उपद्रवरूप हुआ होय दुर्भिक्ष मारी व्याधि इत्यादिक उपद्रवकरि पीडा होनेतैं परिणाम कायर भया होय ताकूं स्थान देय कुशल पूछिकरि आदरकरि सिद्धांततैं शिक्षाकरि स्थितीकरण करना सो वैयावृत्य है। बहुरि जो समर्थ होय करकेहू अपना बलवीर्यकूं छिपाय वैयावृत्य नाहीं करै है सो धर्मरहित है। तीर्थंकरनिकी आज्ञाभंग करी श्रुतकरि उपदेश्या धर्मकी विराधना करी आचार बिगिड्या प्रभावना नष्ट करी धर्मात्माकी आपदाहूमें उपकार नाहीं किया तदि धर्मतैं परांमुख भया श्रुतकी आज्ञा लोपनेतैं परमागमतैं परांमुख भया अर जाके ऐसा परिणाम होय जो अहो मोह अग्निकरि दग्ध होता जगतमें एक दिगम्बर मुनि ज्ञानरूप जलकरि मोहरूप अग्निकूं बुझाय आत्मकल्याणकूं करै है धन्य हैं, जे कामकूं मारि रागद्वेषका परिहारकरि इंद्रियनिकूं जीत आत्माके हित में उद्यमी भए हैं ये लोकोत्तर गुणनिके धारक हैं मेरे ऐसे गुणवंतनिका चरणनिका ही शरण होहु ऐसे गुणनिमें परिणाम वैयावृत्यतैं ही होय हैं अर जैसे जैसे गुणनिमें परिणाम राचै हैं तैसे तैसे श्रद्धान बधै है श्रद्धान बधै तदि धर्ममें प्रीति बधै अर धर्ममें प्रीति बधै तदि धर्मके नायक अरहंतादिक पंच परमेष्ठीके गुणनिमें अनुरागरूप भक्ति बधै है कैसीक भक्ति होय है जो मायाचाररहित मिथ्याज्ञानरहित भोगानि-

की वांछारहित अर मेरुकी ज्यों निष्कंप अचल ऐसी जिनभक्ति जाके होय ताके संसारके परिभ्रमणका भय नाहीं रहै है सो भक्ति धर्मात्माकी वैयावृत्यतैं होय है। बहुरि पंच महाव्रतनिकरि युक्त अर कषाय करि रहित रागद्वेषका जीतनेवाला श्रुतज्ञानरूप रत्ननिका निधान ऐसा पात्रका लाभ वैयावृत्य करनेवालेके होय है जो रत्नत्रयधारीका वैयावृत्य किया सो रत्नत्रयसूं अपना जोड बांधि आपकूं अर अन्यकूं मोक्षमार्गमैं स्थापे है। बहुरि वैयावृत्य अंतरंग बाहिरंग दोऊ तपनिमैं प्रधान कर्मकी निर्जराका प्रधान कारण है जो आचार्यको वैयावृत्य कीयो सो समस्तसंघको सर्व धर्मको वैयावृत्य कीयो भगवानकी आज्ञा पाली अर आपके अर परके संयमकी रक्षा शुभध्यानकी वृद्धि अर इंद्रियनिका निग्रह किया रत्नत्रयकी रक्षा अर अतिशयरूप दान दीया निर्विचिकित्सा गुणकूं प्रगट दिखाया जिनेंद्रधर्मकी प्रभावना करी धन खरच देना सुलभ है रोगीकी टहल करना दुर्लभ है अन्यका औगुण ढाकना गुण प्रकट करना इत्यादिक गुणनिके प्रभावतैं तीर्थंकर नाम प्रकृतिका बंध करै है यो वैयावृत्य जगतमैं उत्तम ऐसी जिनेन्द्रकी शिक्षा है जो कोऊ श्रावक वा साधु वैयावृत्य करै है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकूं पावै है। बहुरि जो अपना सामर्थ्यप्रमाण छःकायकी जीवनिकी रक्षामैं सावधान है ताके समस्त प्राणीनिका वैयावृत्य होय है ऐसैं वैयावृत्य नाम नवमी भावना वर्णन करी ॥ ९ ॥

अब अरहंतभक्ति नाम दशमीभावना वर्णन करै हैं। जो मनवचनकाय करिकै जिन ऐसे दोय अक्षर सदाकाल स्मरण करै है सो अरहंतभक्ति है। भावार्थ—अरहंतके गुणनिमैं अनुराग सो अरहंतभक्ति है जो पूर्वजन्ममैं षोडशकारण भावना भाई है सो तीर्थंकर होय अरहंत होय है ताके तो षोडशकारण नाम भावनातैं उपजाया अद्भुतपुण्य ताके प्रभावतैं गर्भमैं आवनेके छह महीने पहली इंद्रकी आज्ञातैं कुवेर है सो बारहयोजन लम्बी नवयोजन चौडी रत्नमय नगरी रचै है तिसके मध्य राजाके रहनेका महलनिका वर्णन अर नगरीकी रचना अर बडे द्वार अर कोट खाई पडकोटा इत्यादिक रतन-

मई जो कुबेर रचै है ताकी महिमा तो कोऊ हजार जिह्वानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है तहां तीर्थंकरकी माताका गर्भका शोधना अर रुचकद्वीपादिकमैं निवास करनेवाली छप्पन कुमारिका देवी माताकी नाना प्रकारकी सेवा करनेमैं सावधान होय हैं अर गर्भके आवनेके छह महिना पहली प्रभात मध्याह्न अर अपराह्न एक एक कालमैं आकाशतैं साढा तीनकोटि रतननिकी वर्षा कुवेर करै है अर पाछैं गर्भमैं आवतैं ही इंद्रादिक च्यारि निकायके देवनिका आसन कंपायमान होनेतैं च्यारिप्रकारके देव आय नगरकी प्रदक्षिणा देय मातापिताकी पुजा सत्कारादिकरि अपने स्थान जाय हैं अर भगवान तीर्थंकर स्फटिकमणिका पिटारासमान मलादिरहित माताका गर्भमैं तिष्ठै है अर कमलवासिनी छहदेवी अर छप्पन रुचिकद्वीपमैं वसनेवाली अर और अनेकदेवी माताकी सेवा करै हैं अर नवमहीना पूर्ण होतैं उचित अवसरमैं जन्म होते ही च्यारो निकायके देवनिका आसन कम्पायमान होना अर वादित्रनिका अकस्मात बाजनेतैं जिनेन्द्रका जन्म जानि बडा हर्षतैं सौधर्म नामा इन्द्र लक्षयोजन प्रमाण ऐरावत हस्ती ऊपरि चढि अपना सौधर्म स्वर्गका इकतीसमा पटलमैं अठारमां श्रेणीवद्ध नाम विमानतैं असंख्यातदेव अपने परिकरनिकरि सहित साढा बाराकोडिजातिका वादित्रनिकी मिष्टध्वनि अर असंख्यात देवनिका जयजयकार शब्द अर अनेक ध्वजा अर उत्सवसामिग्री अर कोट्यां अप्सरानिका नृत्यादिक उत्सव अर कोट्यां गंधर्वदेवनिका गावनेकरि सहित असंख्यात योजन ऊंचा इहांतैं इंद्रका रहनेका पटल अर असंख्यातयोजन तिर्यक् दक्षिणदिशामैं है तहां ते जबूद्वीपपर्यंत असंख्यात योजन उत्सव करते आय नगरकी प्रदक्षिणा देय इंद्राणी प्रसूतिगृहमैं जाय माताकूं मायानिद्राके वशिकरि वियोगके दुःखके भयतैं अपनी देवत्वशक्तितैं तहां बालक और रचि तीर्थंकरकूं बडी भक्तितैं ल्याय इंद्रकूं सौंपे है तिसकालमैं देखतां देखतां इंद्र तृप्तताकूं नाहीं प्राप्त होता हजार नेत्र रचिकरि देखै है फिर तहां ईशानादिक स्वर्गनिके इंद्र अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिषीनिके इंद्रादिक असंख्या-

तदेव अपनी अपनी सेना वाहन परिवार सहित आवैं हैं तहां सौधर्म इंद्र ऐरावति हस्ती ऊपरि चढ्या भगवानकूं गोदमें लेय चालै तहां ईशानइंद्र छत्र धारण करै अर सनतकुमार महेंद्र चमर ढारते अन्य असंख्यातदेव अपने अपने नियोगमें सावधान वडा उत्सवतैं मेरुगिरीका पांडुकवनमें पांडुकशिला-ऊपरि अकृत्रिम सिंहासन है तिसऊपरि जिनेंद्रकूं पधराय अर पांडुकवनतैं क्षीर समुद्र पर्यंत दोऊतरफ देवांकी पंकति वंध जाय है सो क्षीरसमुद्र मेरुकी भूतितैं पांचकोड दशलाख साढागुणचासहजार योजन परै है तिस अवसरमैं मेरुकी चूलिकातैं दोऊतरफ मुकट कुंडल हार कंकणादि अद्भुत रत्नानिके आभरण पहरैं देवनिकी पंकति मेरुकी चूलिकातैं क्षीरसमुद्रपर्यंत श्रेणी वंधे हैं अर हाथूंहाथ कलश सौंपैं हैं तहां दोऊ तरफ इंद्रके खडे रहनेके अन्य दोय छोटे सिंहासन ऊपरि सौधर्म ईशान इंद्र कलश लेय अभिषेक एकहजार आठ कलशनिकरि करै है तिन कलशनिका मुख एकयोजनका उदर चारियोजन चौडा आठयोजन ऊंचा तिन कलशनितैं निकसी धारा भगवानके वज्रमय शरीर ऊपरि पुष्पनिकी वर्षा समान वाधा नहीं करै है अर पाछै इंद्राणी कोमलवस्त्रतैं पुंछ अपना जन्मकूं कृतार्थ मानती स्वर्गतैं ल्याये रतनमय समस्त आभरण वस्त्र पहरावैं है तहां अनेकदेव अनेक उत्सव विस्तारे हैं तिनकूं लिखनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं फिर मेरुगिरतैं पूर्ववत् उत्सव करते जिनेंद्रकूं ल्याय माताकूं समर्पण करि इंद्र वहां तांडव-नृत्यादिक जो उत्सव करै है तिन समस्त उत्सवनिकूं कोऊ असंख्यातकालपर्यंत कोटि जिह्वानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है। जिनेंद्र जन्मतैं ही तीर्थंकर प्रकृतिके उदयके प्रभावतैं दश आतिशय जन्मतैं लिये ही उपजैं हैं पसेवरहित शरीर होय, मल मूत्र कफादिकरहितपना, अर शरीरमें दुग्धवर्ण रुधिर, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, अद्भुत अप्रमाणरूप, महासुगंध शरीर, अप्रमाणवल, एक हजार आठ लक्षण, प्रियहितमधुरवचन ये समस्त पूर्वजन्ममें षोडशकारण भावना भाई ताका प्रभाव है बहुरि इंद्र अंगुष्ठमें स्थाप्या अमृत ताकूं पान करता माताका स्तनतैं उपज्या दुग्धपान नाहीं

करै हैं फिर अपनी अवस्थाके समान बने देवकुमारानिमैं क्रीडा करते वृद्धिकूं प्राप्त होय है अर स्वर्गलोकतैं आये आभरण वस्त्र भोजनादिक मनोवांछित देव लोयैं सासता रात्रिदिन हाजिर रहैं हैं पृथ्वी-लोकका भोजन आभरण वस्त्रादिक नाहीं अंगीकार करैं हैं स्वर्गतैं आये ही भोगैं हैं । बहुरि कुमारकाल व्यतीत करि इंद्रादिकनिकरि कीये अद्भुत उत्साह करि भक्तिपूर्वक पिताकरि समर्पण कीया राज्य भोगि अवसर पाय संसार देह भोगनितैं विरागता उपजै तदि अनित्यादिक बारह भावना भावते ही लोकांतिकदेव आय वंदना स्तवनरूप संबोधनादिक करैं हैं अर जिनेंद्रका विराग भाव होतेही च्यारिनिकायके इंद्रादिकदेव अपने आसन कंपायमान होनेतैं जिनेंद्रके तपका अवसर अवधिज्ञानतैं जानि बडे उत्सवतैं आय अभिषेककरि देवलोकके वस्त्राभरणतै भक्तितैं भूषितकरि रत्नमयी पालकी रचि जिनेंद्रकूं चढाय अप्रमाण उत्सव अर जयजयकार शब्दसहित तपके योग्य वनमैं जाय उतारैं तहां वस्त्र आभरण समस्त त्यागैं देव अधर झेलि मस्तक चढावैं अर पंचमुष्टी लोंच सिद्धनिकूं नमस्कारकरि करैं तदि केशनिकूं महा उत्तम जाणि इंद्र रत्ननिके पात्रमैं धारणकरि क्षीरसमुद्रमैं बडी भक्तितैं क्षेपै है जिनेंद्र केतक कालमैं तपके प्रभावतैं शुक्लध्यानके प्रभावतैं क्षपकश्रेणीमैं घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं उत्पन्न करैं है तादि अरहंतपना प्रगट होय है तदि केवलज्ञान रूप नेत्रकरि भूत भविष्यत वर्तमान त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यनिकी अनंतानंत परणतिसहित अनुक्रमतैं एकसमयमैं युगपत समस्तकूं जानै है देखै है । तदि च्यारिनिकायके देव ज्ञानकल्याणककी पूजा स्तवन करि भगवानका उपदेशके अर्थि समवसरण अनेक रत्नमय रचैं हैं तिस समवसरणकी विभूतिका वर्णन कौन कर सकै ? पृथ्वीतैं पांच हजार धनुष ऊंचा जाके बीस हजार पैडी तीऊपरि इंद्रनीलमणिमय गोल भूमि बारह योजन प्रमाण तिसऊपरि अप्रमाणमहिमासहित समवसरण रचना है । जहां समवसरण रचना होय है अर भगवानका विहार होय है तहां आंधेनिकूं दीखने लगि जाय बहरे श्रवण करने लगि

जांय लूले चालने लगि जांय हैं गूंगे बोलने लगि जांय हैं वीतरागकी अद्भुत महिमा है जाके धूलिशालादिक रत्नमय कोट मानस्तंभ अर बावड्या अर जलकी खातिका अर पुष्पवाडी फिर रत्नमय कोट दरवाजे नाट्यशाला उपवन वेदी भूमि फिर कोट फिर कल्पवृक्षनिका वन रत्नमयस्तूप फिर महलनिकी भूमि फिर स्फटिकका कोटमैं देवच्छद नाम एक योजनका मंडप सर्व तरफ द्वादश सभा तिनकरि सेवित रत्नमय तीन कटनी गंधकुटीमैं सिंहासन ऊपरि च्यारि अंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान अरहंत हैं जिनकी अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखमयी अंतरंग विभूतिकी महिमा कहनेकूं च्यारि-ज्ञानके धारक गणधर समर्थ नाहीं अन्य कौन कहि सकै अर समवसरणकी विभूति ही वचनके अगोचर है अर गंधकुटी तीसरा कटणी उपरि है तहां चउसठि चमर बत्तीस युगल देवनिके मुकट कुंडल हार कडा भुजबंधादिक समस्त आभरण पहिरे ढालि रहैं हैं तीन छत्र अद्भुत कांतिके धारक जिनकी कांतितैं सूर्य चंद्रमा मंदज्योति भासैं हैं अर जिनकी देहका प्रभामंडलको चक्र बँध रह्या जाकरि समवसरणमैं रात्रिदिनको भेद नाहीं रहै है सदा दिवस ही प्रवर्तै है अर महासुगंध त्रैलोक्यमैं ऐसा सुगंध और नाहीं ऐसी गंधकुटीके ऊपर देवनिकरि रच्या अशोकवृक्षकूं देखते ही समस्तलोकनिका शोक नष्ट होय जाय है अर कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वर्षा आकाशतैं होय है अर आकाशमैं साढाबारकोटि जातिके वादित्रनिकी ऐसी मधुर ध्वनि होय है जिनके श्रवणमात्रतैं क्षुधातृष्णादिक समस्तरोग वेदना नष्ट हो जाय है अर रत्नजडित सिंहासन सूर्यकी कांतिकूं जीते है। बहुरि जिनेंद्रकी दिव्यध्वनिकी अद्भुत महिमा त्रैलोक्यवर्ती जीवनिकै परम उपकार करनेवाली मोहअंधकारका नाश करै है अर समस्त जीव अपनी अपनी भाषामैं शब्द अर्थ ग्रहण करै हैं अर समस्तजीवनिके संशय नाहीं रहै है स्वर्गमोक्षका मार्गकूं प्रगट करै है दिव्यध्वनिकी महिमा वचन द्वारै गणधर इंद्रादिक कहनेकूं समर्थ नाहीं है जिनके समवसरणमैं जातिविरोधी जीवनिकै वैर विरोध नाहीं रहै है समवसरणमैं सिंह अर गज, व्याघ्र अर गौ मार्जारी अर हंस

वीतरागताकी अद्भुत
इत्यादिक जातिविरोधी जीव वैरबुद्धि छांडि परस्पर मित्रताकूं प्राप्त होय हैं। जिनके निकटताकूं पायकरिकै देवनिकरि
महिमा है जिनके असंख्यात देव जयजयकार शब्द करै हैं अचेतन द्रव्यहू लोकमैं मंगलताकूं प्राप्त होय
रचे कलश झारी दर्पण ध्वजा ठोंणो छत्र चमर बीजणा ये चारों तरफ सौ सौ योजन सुभिक्षता,
हैं। अर केवलज्ञान उत्पन्न भये पीछै दश अतिशय प्रगट होय हैं अर कोऊ प्राणीका बध नाहीं होय, अर भोजनका अभाव
अर आकाशगमन भूमिका स्पर्श नाहीं करै, अर समस्त विद्याका ईश्वरपना, छायारहितपणा अर नेत्र
अर उपसर्गका अभाव, अर चतुर्मुख दीखै, घातियाकर्मका नाशतैं स्वयं प्रगट होय हैं।
टिमकारै नाहीं, अर केश नख बधैं नाहीं ऐ दश अतिशय देवनिकरि किये होय हैं। अर्द्धमागधी भाषा, समस्त
अर तीर्थंकर प्रकृतिका प्रभावतैं चौदह अतिशय वृक्ष होय हैं पृथ्वी दर्पणसमान रत्नमयी
जनसमूहमैं मैत्रीभाव, समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिकसहित समस्त जनोंके आनंद प्रगट होय है,
तृण-कंटक-रज-रहित होय है, शीतल मंद सुगंध पवन चलै है, चरण धरैं तहां सात आगे सात पाछे एक
अनुकूल पवन सुगंध जलकी वृष्टिकरि भूमि रजरहित होय है, आकाश निर्मल, दिशा निर्मल, च्यार
बीच ऐसे पंदरा पंदराकरि दोयसै पच्चीस कमल देव रचैं हैं, किरणनिका धारक अपना उद्योतकरि
निकायके देवनिकरि जयजय शब्द, एक हजार आरांकरिसहित चौदह देवकृत अतिशय प्रगट
सूर्यमंडलकूं तिरस्कार करता धर्मचक्र आगे चालै, अष्ट मंगलद्रव्य ये राग द्वेष मोह अरति चिंता
होय हैं। क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण रोग शोक भय विस्मय वंदना स्तवन ध्यान करो।
स्वेद खेद मद निद्रा इन अष्टादश दोषनिकरि रहित अरहंत तिनको सुखका करनेवाला अरहंत
या अरहंतभक्ति संसारसमुद्रका तारनेवाली निरंतर चिंतवन करो। भक्तिका भरया इंद्र भगवानका
ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो अनंत नाम हैं। अर धारक हैं ते हू अपनी शक्ति-
एक हजारआठ नामकरि स्तवन किया है अर जे अल्पसामर्थ्यके

प्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहंतभक्ति संसारसमुद्रको तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमैं अरहंतभक्तिमें नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है । अरहंतभक्ति नरकादिगतिकूं हरनेवाली है या भक्तिकौ पूजन स्तवनकरि अर्घ उतार करैं हैं सो देवांका सुख फिर मनुष्यका सुख भोगि अविनाशी सुखका धारक अक्षय अविनाशीसुखकूं प्राप्त होय है ऐसे अरहंतभक्ति नाम दशमी भावना वर्णन करी ॥ १० ॥

अब आचार्य भक्ति नाम ग्यारमीभावना वर्णन करैं हैं । सोही गुरुभक्ति है धन्यभाग जिनका होय तिनके वीतराग गुरुनिके गुणनिमैं अनुराग होय है धन्यपुरुषानिके मस्तकऊपरि गुरुनिकी आज्ञा प्रवर्तै है आचार्य हैं सो अनेकगुणनिकी खानि हैं श्रेष्ठतपका धारक हैं यातैं इनका गुण मनविषै धारणकरि पूजिए अर्घ उतराण करिए पुष्पांजलि अग्रभागमैं क्षेपिए जो मेरे ऐसे गुरुनिका चरणनिका शरण ही होहू कैसेक हैं आचार्य जिनके अनशनादिक बारहप्रकारका उज्ज्वल तपनिमैं निरंतर उद्यम है अर छह आवश्यकक्रियामैं सावधान हैं अर पंचाचारके धारक हैं अर दशलक्षणधर्मरूप है परणति जिनकी अर मनवचनकायकी गुप्तिकरि सहित हैं ऐसे छत्तीसगुणनिकरि युक्त आचार्य होय हैं अर सम्यग्दर्शनाचारकूं निर्दोष धारै हैं अर सम्यग्ज्ञानकी शुद्धताकरि युक्त हैं अर त्रयोदशप्रकार चारित्रकी शुद्धताके धारक अर तपश्चरणमैं उत्साहयुक्त अर अपने वीर्यकूं नाहीं छिपावतें बाईसपरिषहनिके जीतनेमैं समर्थ ऐसे निरंतर पंचआचारके धारक हैं अंतरंग बहिरंग ग्रंथकरि रहित निर्ग्रंथ मार्गके गमन करनेमैं तत्पर हैं अर उपवास वेला तेला पंचोपवास पक्षोपवास मासोपवास करनेमैं तत्पर हैं अर निर्जनवनमैं अर पर्वतानिके दराडे अर गुफानिके स्थानमैं निश्चल शुभध्यानमैं निरंतर मनकूं धारै हैं अर शिष्यनिकी योग्यताकूं आछीरीति सूं जानि दीक्षा देनेमैं अर शिक्षाकरनेमैं निपुण हैं अर युक्तितैं नव प्रकार नयके जाननेवाले हैं अर अपने कायसूं ममत्व छांडि रात्रिदिन तिष्ठै हैं संसारकूपमैं पतन हो जानेतैं भयवान हैं मनवचनकायकी शुद्धतायुक्त नासिकाका

अग्रमैं स्थापित करिये है नेत्रयुगल जिनूंने ऐसे आचार्यनिकूं समस्त अंगनिकूं नमाय पृथ्वीमैं मस्तकधारि
बंदना करिये है तिन आचार्यनिका चरणनिकरि स्पर्शनभई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरि पूजिए सो
संसारपरिभ्रमणका क्लेश पीडाकूं नष्ट करनेवाली आचार्यभक्ति है अब यहां ऐसा विशेष जानना जो
आचार्य हैं सो समस्तधर्मके नायक हैं आचार्यनिके आधार समस्त धर्म है यातैं एते गुणनिके धारक ही
आचार्य होय बडा राजानिका वा राजाके मन्त्रीनिका वा महान श्रेष्ठीनिका कुलमैं उपज्या होय अर
जाके स्वरूपकूं देखतेही शांतपरिणाम हो जांय ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार
जगतमैं प्रसिद्ध होय पूर्वं गृहचारामैं भी कदे हीणआचार निंद्यव्यवहार नाहीं किया होय अर वर्तमान
भोगसंपदा छांडि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धि
की प्रबलता अर तपकी प्रबलताका धारक होय अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सकै
तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वच-
नका अतिशयसहित होय जिनका वचन श्रवण करतैं ही धर्ममैं दृढता अर संशयका अभाव अर संसार
देहभोगनितैं विरागता जाकै निश्चल होय सिद्धांतसूत्रके अर्थका पारगामी होय इंद्रियनिका दमनकरि
इसलोक परलोकसंबन्धी भोगविलासरहित देहादिकमैं निर्ममत्व होय महाधीर होय उपसर्गपरीषहनि-
करि कदाचित् जाका चित्त चलायमान नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट होजाय
धर्मका लोप होजाय स्वमत परमतका ज्ञाता होय अनेकांतविद्यामैं क्रीडा करनेवाला होय अन्यके प्रश्ना-
दिकतैं कायरतारहित तत्काल उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षकूं खंडनकरि सत्यार्थधर्मकूं स्थापन करने-
का जाका सामर्थ्य होय धर्मकी प्रभावना करनेमैं उद्यमी होय गुरुनिके निकट प्रायश्चित्तादिकसूत्र पढि
छत्तीस गुणनिका धारक होय है सो समस्त संघकी साखिसूं गुरुनिकरि दिया आचार्य पद प्राप्त होय एते
गुणनिका धारक होय तिसहीकूं आचार्यपना होय है एते गुणनि विना आचार्य होय तो धर्म तीर्थका

लोप होजाय उन्मार्गकी प्रवृत्ति होजाय समस्तसंघ स्वेच्छाचारी होजाय सूत्रकी परिपाटी अर आचारकी परिपाटी टूटि जाय। बहुरि आचार्यपनाके अन्य अष्ट गुण हैं तिनका धारक होय। आचारवान, आधारवान, व्यवहारवान, प्रकर्ता, अपायोपायविदर्शी, अवपीडक, अपरिश्रावी, निर्यापक ए आठ गुण हैं। तिनमैं पंचप्रकारका आचार धारण करै ताकूं आचारवान कहिये है जीवादिकतत्त्व भगवान सर्वज्ञ वीतराग दिव्य निरावरणज्ञानकरि प्रत्यक्ष देखि कह्या तिनमैं श्रद्धानरूप परणति सो दर्शनाचार है स्वपरतत्त्वनिकूं निर्बाध आगम अर आत्मानुभव करि जाननारूप प्रवृत्ति सो ज्ञानाचार है हिंसादिक पंच पापनिका अभावरूप प्रवृत्ति सो चारित्राचार है अंतरंग बहिरंग तपमैं प्रवृत्ति सो तपाचार है परीषहादिक आए अपनी शक्तिकूं नहीं छिपाय धीरतारूपप्रवृत्ति सो वीर्याचार है तथा औरहू दश प्रकार स्थित कल्पादिक आचारमैं तथा समितिगुप्त्यादिकनिका कथन करिए तो बहुत कथन बधि जाय। पंचप्रकारआचार आप निर्दोष आचरै अर अन्य शिष्यादिकनिकूं आचरण करावनेमैं उद्यमी होय सो आचार्य है आप हीणाचारी होय सो शिष्यनिकूं शुद्धआचरण नाहीं कराय सकै हीणाचारी होय सो आहार विहार उपकरण वस्तिका अशुद्ध ग्रहण कराय दे अर आपही आचारहीण होय सो शुद्ध उपदेश नाहीं करि सकै तातैं आचार्य आचारवान ही होय ॥ १ ॥ बहुरि जाके जिनेन्द्रका प्ररूप्या च्यार अनुयोगका आधार होय स्याद्वादविद्याका पारगामी होय शब्दविद्या न्यायविद्या सिद्धांतविद्याका पारगामी होय प्रमाणनय निक्षेपणिकरि स्वानुभवकरि भले प्रकार तत्त्वनिका निर्णय किया होय सो आधारवान है जाके श्रुतका आधार नाहीं सो अन्य शिष्यनिका संशय तथा एकांतरूप हठ तथा मिथ्याचरणकूं निराकरण नाहीं करि सकै। बहुरि अनंतानंतकालतैं परिभ्रमण करता जीवके अतिदुर्लभ मनुष्यजन्मका पावना तामैं हू उत्तम देश जाति कुल इंद्रियपूर्णता दीर्घायु सत्संगति श्रद्धान ज्ञान आचरण ए उत्तरोत्तर दुर्लभ संयोग पाय तो अल्पज्ञानी गुरुके निकट वसनेवाला शिष्य सो सत्यार्थ उपदेश नाहीं पावनेतैं यथार्थ आपका स्वरूप

नाहीं पाय संशयरूप होजाय तथा मोक्षमार्गकूं अतिदूर अतिकठिन जानि रत्नत्रयमार्गसूं चालि जाय तथा सत्यार्थ उपदेशविना विषयकषायनिमैं उरझा मनकूं निकासनेमैं समर्थ नाहीं होय तथा रोगकृत वेदनामैं तथा घोरउपसर्गपरीषहनितैं चल्या हुआ परिणामकूं श्रुतका अतिशयरूप उपदेशविना थांभनेकूं समर्थ नाहीं होय है। बहुरि मरण आजाय तदि संन्यासका अवसरमैं आहारपानका त्यागका यथाअवसर देशकाल सहाय सामर्थ्यका क्रमकूं समझेविना शिष्यका परिणाम चालि जाय वा आर्त्तध्यान होजाय तो सुगति विगडि जाय धर्मका अपवाद हो जाय अन्य मुनि धर्ममैं शिथिल हो जाय तो बडा अनर्थ है तथा यो मनुष्य आहारमय है आहारतैं जीवै है आहारहीकी निरंतर वांछा करै है अर जब रोगके वशतैं तथा त्याग करनेतैं आहार छूटि जाय तदि दुःखकरि ज्ञानचारित्रमैं शिथिल होय धर्मध्यानरहित हो जाय तो बहुश्रुत गुरु ऐसा उपदेश करै जाकरि क्षुधातृषाकी वेदनारहित होय उपदेशरूप अमृतकरि सींचा हुआ समस्त क्लेशरहित भया धर्मध्यानमैं लीन हो जाय है क्षुधातृषारोगादिककी वेदनासहित शिष्यकूं धर्मका उपदेशरूप अमृतका पान अर शिक्षारूप भोजनकरि ज्ञानसहित गुरुही वेदनारहित करै बहुश्रुतीका आधारविना धर्म रहै नाहीं तातैं आधारवान आचार्य होय ताहीका शरण ग्रहण करना योग्य है बहुरि जो शिष्य वेदनाकरि दुःखित होय ताके हस्त पाद मस्तकका दावना स्पर्शनादि करना मिष्टवचन कहना इत्यादिककरि दुःख दूर करै तथा पूर्वै जे अनेकसाधु घोरपरीषह सहकरि आत्मकल्याण किया तिनकी कथाके कहनेकरि तथा देहतैं भिन्न आत्माका अनुभव करावनेकरि वेदनारहित करै तथा भो मुने! अब दुःखमैं धैर्य धारण करो संसारमैं कौन कौन दुःख नाहीं भोगे अर वीतरागताका शरण ग्रहण करोगे तो दुःखनिका नाशकरि कल्याणकूं प्राप्त होवोगे इत्यादिक बहुत प्रकार कहि मार्गसूं नाहीं चलने देवै तातैं आधारवान गुरुनिहीका शरण योग्य है ॥ २ ॥

बहुरि जो व्यवहार प्रायश्चितसूत्रनिका ज्ञाता होय जातैं प्रायश्चितसूत्र आचार्य होनेयोग्य होय तिसहीकूं

पढावै है औरनिके पढने योग्य नाहीं जो जिनआगमका ज्ञाता अर महाधैर्यवान प्रबलबुद्धिका धारक होय सो प्रायश्चित देवै है अर द्रव्य क्षेत्र काल भाव क्रिया भाव परिणाम उत्साह संहनन पर्याय जो दीक्षाका काल अर शास्त्रज्ञान पुरुषार्थादिक आछी रीति जाणि रागद्वेषरहित होय प्रायश्चित देवै है भावार्थ जामैं ऐसी प्रवीणता होय जो याकूं ऐसा प्रायश्चित दिये याका परिणाम उज्वल होयगा अर दोषका अभाव होयगा व्रतनिमैं दृढता होयगी ऐसा ज्ञाता होय जाके आहारकी योग्यता अयोग्यताका ज्ञान होय तथा या क्षेत्रमैं ऐसा प्रायश्चितका निर्वाह होयगा वा या क्षेत्रमैं निर्वाह नाहीं होयगा तथा इसक्षेत्रमैं बात पित्त कफ शीत उष्णताकी अधिकता है कि हीनता है कि समपना है अथवा इसक्षेत्रमैं मिथ्यादृष्टिनिकी अधिकता है कि मंदता है तथा धर्मात्मानिकी हीनता अधिकताकूं जांणि प्रायश्चितका निर्वाह देखै बहुरि शीत उष्ण वर्षा कालकूं तथा अवसर्पिणीउत्सर्पिणीका तृतीय चतुर्थ पंचम कालादिकके आधीन प्रायश्चितका निर्वाह देखै बहुरि परिणाम देखै तथा तपश्चरणमैं याके तीव्र उत्साह है कि मंद है ताकूं देखै। बहुरि संहननकी हीनता अधिकता तथा बलकी मंदता तीव्रता देखै तथा ये बहुतकालका दीक्षित है कि नवीन दीक्षित है तथा सहनशील है कि कायर है सो देखै तथा बाल युवा वृद्ध अवस्थाकूं देखै बहुरि आगमका ज्ञाता है कि मंदज्ञानी है सो देखै तथा पुरुषार्थी है कि निरुद्यमी है इत्यादिकका ज्ञाता होय प्रायश्चित देवै जैसे दोषरूप फिर आचार्य नाहीं करै पूर्वकृत दोष दूरि होय तैसे सूत्रके अनुकूल प्रायश्चित देवै जो गुरुनिके निकट प्रायश्चितसूत्र शब्दतैं अर्थतैं पढ्या नाहीं अर औरनिकूं प्रायश्चित देवै है सो संसाररूप कर्दममैं डूबै है अर अपयशकूं उपार्जन करै है तथा उन्मार्गका उपदेशकरि सम्यक् मार्गका नाशकरि मिथ्यादृष्टि होय है जो एते गुणका धारक होय ताकूं प्रायश्चितसूत्र पढाय गुरु अपना आचार्यपद दे है जो महाकुलमैं उपज्या व्यवहारपरमार्थका ज्ञाता होय कोऊ कालमैंहू अपने मूलगुणनिमैं अतीचार नाहीं लगाया होय च्यारि अनुयोगसमुद्रका पारगामी होय धैर्य-

वान होय कुलवान होय परीषह जीतनेमैं समर्थ होय देवनिकरि कीया उपसर्गतैंहू जो चलायमान नाहीं होय वक्तापनाकी शक्तिका धारक होय वादीप्रतिवादीनिकें जीतनेमैं समर्थ होय विषयनितैं अत्यंत विरक्त होय बहुतकाल गुरुकुल सेया होय सर्वसंघके मान्य होय पहिलो ही समस्त संघ जाकूं आचार्यपनाकी योग्यता जाणै सोही गुरुनिका दिया प्रायश्चितसूत्रका ज्ञाता होय आचार्यपना पावै सो प्रायश्चित देवै है एते गुणनिविना जैसैं मूढ वैद्य देश काल प्रकृत्यादिक नाहीं जानै तो रोगीकूं मारै है तैसैं व्यवहार सूत्ररहित मूढ गुणसंयुक्त होय है संघमैं कोऊ रोगी होय वा वृद्ध होय अशक्त होय कोऊ बाल होय कोऊ सन्यास धारण किया होय तिनकी वैयावृत्यमैं युक्त किये जे मुनि ते तो टहल करैं ही परंतु आप आचार्यहू संघके मुनीश्वरनिमैं जो अशक्त हो जाय ताका उठावना बैठावना शयन करावना तथा मलमूत्रकफादिक तथा रुधिरराधिरादिक शरीरतैं दूरि करना धोवना उठाय प्राशुकभूमिमैं स्थापना धर्मोपदेश देना धर्म ग्रहण करावना इत्यादिक आदरपूर्वक भक्तितैं वैयावृत्य करैं तिनकूं देखि समस्तसंघके मुनि वैयावृत्यमैं सावधान होय विचारै हैं अहो धन्य है ये गुरु भगवान परमेष्ठी करुणानिधान जिनके धर्मात्मामैं ऐसा वात्सल्य है हम महानिंद्य हैं आलसी होय रहे हैं हमकूं होतेहू सेवा करैं हैं यह हमारा प्रमादीपना धिकार योग्य है बंधका कारण है ऐसा विचार समस्त संघ वैयावृत्यमैं उद्यमी होय है जो आचार्य आप प्रमादी होय तो सकल संघ वात्सल्यरहित हो जाय यातैं आचार्यका कर्तृत्वगुण मुख्य है समस्तसंघका वैयावृत्य करनेका जाका सामर्थ्य होय सो आचार्य होय है कोऊ हीणाचारी ताकूं शुद्ध आचरण ग्रहण करावै कोऊ मंदज्ञानी होय तिनकूं समझाय चारित्रमैं लगावै केईनिकूं प्रायश्चित देय शुद्ध करै कोऊकूं धर्मोपदेश देय दृढता करै। धन्य है आचार्य जिनके शरणे प्राप्त हो गया तिनकूं मोक्षमार्गमैं लगाय उद्धार करै हैं यातैं आचार्यका प्रकर्ता नामा गुण प्रधान है ॥४॥ बहुरि अपायोपायविदर्शी नाम पांचमो गुण है कोऊ साधु क्षुधा तृषा रोगवेदनाकरि पीडित हुआ क्लेशित परिणामरूप हो जाय तथा तीव्र राग-

द्वेषरूप हो जाय तथा लज्जाकरि भयकरि यथावत आलोचना नाहीं करै तथा रत्नत्रयमैं उत्साहरहित हो जाय धर्मतैं सिथिल हो जाय तो ताकूं अपाय मानि रत्नत्रयका नाश अर उपाय रत्नत्रयकी रक्षानिका प्रगट गुण दोष ऐसा दिखावै जो रत्नत्रयका नाश होनेतैं कंपायमान हो जाय अर रत्नत्रयका नाशतैं अपना नाश अर नरकादि कुगतिमैं पतन.साक्षात दिखावै अर रत्नत्रयकी रक्षातैं संसारतैं उद्धार होय अनंत सुखकी प्राप्ति उपदेशकरि साक्षात दिखाय देय ऐसा उपदेशका सामर्थ्य जामैं होय सो अपयोपायविदर्शी नाम गुणका धारक आचार्य होय है इहां उपदेश दिखाये कथन बहुत हो जाय तातैं नाहीं लिख्या ॥ ५ ॥ अब अवपीडक नाम छठा गुण कहिये है कोऊ मुनि रत्नत्रय धारण करकै हू लज्जाकरि भयकरि अभिमानगौरवादिकरि अपना आलोचना यथावत शुद्ध नाहीं करै तो आचार्य ताकूं स्नेहकी भरी कर्णनिकूं मिष्ट अर हृदयमैं प्रवेश करनेवाली शिक्षा करै जो हे मुने! बहुत दुर्लभ रत्नत्रयका लाभ ताकूं मायाचारकरि नष्ट मति करो माता पिता समान गुरुनिके निकट अपने दोष प्रगट करनेमैं कहा लज्जा है अर वात्सल्यके धारक गुरु हू अपने शिष्यके दोष प्रगटकरि शिष्यका अर धर्मका अपवाद नाहीं करावै हैं तातैं शल्य दूरिकरि आलोचना करो जैसैं रत्नत्रयकी शुद्धता अर तपश्चरणका निर्वाह होयगा तैसैं द्रव्य क्षेत्र काल भावके अनुसार प्रायाश्चित तुमकूं दिया जायगा तातैं भय त्यागि आलोचना निर्दोष करहू ऐसे स्नेहरूप वचन करिकेहू जो माया शल्य नाहीं त्यागै तो तेजका धारक आचार्य शिष्यकी शल्यकूं जबरीतैं निकासै जिस काल आचार्य शिष्यकूं पूछैं हैं जो हे मुने ए दोष ऐसैं ही हैं सत्यार्थ कहो तदि उनके तेजतपके प्रभावतैं जैसैं सिंहकूं देखते ही स्याल खाया हुआ मांसकूं तत्काल उगलै है तथा जैसैं महान प्रचंडतेजस्वी राजा अपराधीकूं पूछै तदि तत्काल सत्य कहता ही वणै तैसैं शिष्यहू माया शल्यकूं निकासै है अर मायाचार नाहीं छांडै तो गुरु तिरस्कारके वचन हू कहैं है हे मुने हमारे संघतैं निकस जाहु हमकरि तुम्हारे कहा प्रयोजन है जो अपना शरीरादिकका मेल धोया चाहैगा सो निर्मल

जलके भरे सरोवरकूं प्राप्त होयगा जो अपना महान रोगकूं दूरि किया चाहैगा सो प्रवीण वैद्यकूं प्राप्त होयगा तैसें जो रत्नत्रयरूप परमधर्मका अतीचार दूरिकरि उज्वलता किया चाहैगा सो गुरुनिका आश्रय करैगा तुम्हारे रत्नत्रयकी शुद्धता करनेमैं आदर नाहीं तातैं ये मुनिपणा व्रत धारण नग्न होय क्षुधादि परीषह सहनेकी विडंबनाकरि कहा साध्य है संवर निर्जरा तो कषायनिके जीतनेतैं है मायाकषायका ही त्याग नाहीं किया तदि व्रत संयम मौन धारण वृथा है नग्नता अर परिषह सहनता मायाचारीका वृथा है तिर्यंच हू परिग्रहरहित नग्न रहै ही है यातैं तुम दूरभव्य हो हमारे वंदने योग्य नाहीं हो अर तुम्हारे परिणाम ऐसे हैं जो हमारा दोष प्रगट होय तो हम निंद्य होय जावैं हमारा उच्चपणा घटि जाय सो मानना बंधका कारण है श्रमण तो स्तुति निंदामैं समानपरिणामी होय है ऐसे गुरु कठोरवचन कहि-करिके हू मायाचारादिका अभाव करावैं कैसा होय अवपीडक आचार्य जो बलवान होय उपसर्ग परिषह आये कायर नाहीं होय प्रतापवान होय जाका वचन कोऊ उलंघन करने समर्थ नाहीं होय अर प्रभाव-वान होय जाकूं देखतप्रमाण दोषका धारक साधू कांपने लगि जाय जाकूं बडे बडे विद्याके धारक नम्री-भूत होय बंदना करैं जाकी उज्ज्वलकीर्त्ति विख्यात होय जाकी कीर्ति सुनता ही जाके गुणनिमैं दृढ श्रद्धा हो जाय जाका वचन जगतमैं देख्या विना ही दूरदेशनिमैं प्रमाण करै सिंहकी ज्यों निर्भय होय ऐसा अवपीडक गुणका धारक गुरु होय सो जैसैं शिष्यका हित होय तैसे उपकार करै है जैसैं बालकका हितने चिंतवन करती माता रुदन करताहू बालककूं दाबकरि मुखफाडि जबरीतैं घृत दुग्धादि पान करावै है। ऐसे शिष्यका हितकूं चिंतवन करता आचार्य हू मायाशल्यसहित क्षपकका बलात्कारकरि दोष दूरि करै है अथवा कटुक औषधि ज्यों पश्चात् हित करै है जो जिह्वाकरिके मिष्ट बोले अर शिष्यकूं दोषतैं नाहीं छुडावै सो गुरु भला नाहीं अर जो आचरणकरि ताडनाहूकरि दोषनितैं भिन्न करै है सो गुरु पूजने योग्य है यातैं अवपीडकगुणका धारक ही आचार्य होय है ॥ ६ ॥ अब अपरश्रावीगुणकूं कहैं

हैं जो शिष्य गुरुनिकूं दोष आलोचना करै सो दोष अन्यकूं गुरु प्रकाश नाहीं करै जैसे तप्तायमानलोह-करि पीया जल सो बाह्य प्रगट नाहीं होय तैसैं शिष्यकरि श्रवणकिया दोष आचार्य हू किसकूं नाहीं जणावे है सो ही अपरश्रावी नाम गुण है शिष्य तो गुरुका विश्वासकरके कहै अर गुरु जो शिष्यका दोष प्रगट करै अन्यकूं जनावै तो वा गुरु नाहीं अधम है विश्वासघाती है कोउ शिष्य अपना दोषकी प्रकटता जानि दुखित होय आत्मघात करै है वा क्रोधी होय रत्नत्रयका त्याग करै है तथा गुरुकी दुष्टता जानि अन्य संघमैं जाय तथा जैसैं हमारी अवज्ञा करी तैसैं तुमारी हू अवज्ञा करैगा ऐसैं समस्तसंघमैं घोषणा प्रगट होय समस्तसंघ आचार्यनिका प्रतीतिरहित होजाय आचार्य सबके त्याज्य होजांय इत्यादिक बहुत दोष आवैं बहुत कहे कथनी बधि जाय तातैं अपरश्रावी गुणका धारक ही आचार्य योग्य है ॥ ७ ॥ अब आचार्य निर्यापक होय जैसैं नावकूं खेवटिया समस्त उपद्रवनिकूं टालि नावकूं पार उतारि ले जाय तैसैं आचार्य हू शिष्यकूं अनेक विघ्नसूं बचाय संसारसमुद्रके पार करै सो निर्यापक है ॥ ८ ॥ ऐसे आचारवान ॥ १ ॥ आधारवान ॥ २ ॥ व्यवहारवान ॥ ३ ॥ प्रकर्ता ॥ ४ ॥ अपायोपायविदर्शी ॥ ५ ॥ अवपीडक ॥ ६ ॥ अपरश्रावी ॥ ७ निर्यापक ॥ ८ ॥ यह आचार्यनिके अष्टगुणकूं धारणकरतेनिके गुणनिमैं अनुराग सो आचार्यभक्ति है ऐसैं आचार्यनिके गुणनिकूं स्मरण करके आचार्यनिका स्तवन वंदना करता जो पुरुष अर्घ उतारण करै है सो पापरूप संसारकी परिपाटीकूं नष्टकरि अक्षयसुखकूं प्राप्त होय है ऐसैं वीतराग गुरु कहै हैं। ऐसे आचार्यभक्ति वर्णन करी ॥ ११ ॥

अब बहुश्रुतभक्ति नाम बारमीभावनाकूं कहै हैं ॥ जो अंगपूर्वादिकका ज्ञाता तथा च्यार अनुयोगनिका पारगामी जो निरंतर आप परमागमकूं पढै अन्य शिष्यानिकूं पढावै ते बहुश्रुती हैं तथा जिनके श्रुतज्ञान ही दिव्यनेत्र है अर अपना अर परका हित करनेमैं प्रवर्तै ते अर अपने जिनसिद्धांत अर अन्य एकांतीनिके सिद्धांतनिका विस्तारतैं जाननेवाले स्याद्वादरूप परमाविद्याके धारक तिनकी जो

भक्ति सो बहुश्रुतभक्ति है बहुश्रुतीकी महिमा कौन कहनेकूं समर्थ है जे निरंतर श्रुतज्ञानका दान करें हैं ऐसे उपाध्याय तिनकी भक्ति विनयकरि सहित करें हैं ते शास्त्ररूप समुद्रका पारगामी होय हैं जे अंगपूर्व प्रकीर्णक जिनेंद्र वर्णन किये तिन समस्त जिनागमकूं निरंतर पढै पढावैं ते बहुश्रुती हैं इहां प्रथम आचारांग तामैं अठारहहजार पदनिमैं मुनिधर्मका वर्णन है ॥ १ ॥ सूत्रकृतांगका छत्तीसहजार पद हैं तिनमैं जिनेंद्रके श्रुतके आराधन करनेके विनयक्रियाका वर्णन है ॥ २ ॥ स्थानांगका ब्यालीसहजार पद तिनमैं षट्द्रव्यनिका एकादि अनेक स्थानका वर्णन है ॥ ३ ॥ समवायांग एकलाख चौसठिहजार पदनिमैं है तिनमैं जीवादिक पदार्थनिका द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रित समानता वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्ति अंगके दोयलक्ष अट्ठाईस हजार पदनिमैं जीवका अस्तिनास्ति इत्यादिक गणधरनिकरि कीये साठिहजार पदनिका वर्णन है ॥ ५ ॥ ज्ञातृधर्मकथांगके पांचलक्ष छप्पनहजार पदनिमैं गणधरनि करि कीये प्रश्ननिके अनुसार जीवादिकनिका स्वभावका वर्णन है ॥ ६ ॥ उपासकाध्ययन नाम अंगके ग्यारहलक्ष सत्तर हजार पदनिमैं श्रावकके व्रत शील आचार क्रियाका तथा याका मंत्रनिका उपदेशका वर्णन है ॥ ७ ॥ अंतकृतदशांगके तेईसलक्ष अट्ठाइसहजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर उपसर्गसहित निर्वाण प्राप्त भये तिनका कथन है ॥ ८ ॥ अनुत्तरोपपादकदशांगके बाणवै लक्ष चौवालीस हजार पदनिमै एक एक तीर्थंकरकें तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर महाभयंकर घोरउपसर्गसहित देवनितैं पूजापाय विजयादिक अनुत्तर विमाननिमैं उपजे तिनका वर्णन है ॥ ९ ॥ प्रश्नव्याकरण नाम अंगके त्र्यानवेलक्ष षोडससहस्र पदनिमैं नष्ट मुष्टि लाभ अलाभ सुख दुःख जीवित मरणादिकके प्रश्नका वर्णन है ॥ १० ॥ विपाकसूत्रांगके एककोटि चौरासीलक्ष पदनिमैं कर्मनिका उदय उदीर्णा सत्ताका वर्णन है ॥ ११ ॥ अर दृष्टिवाद नाम बारमअंगका पांच भेद है परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व, चूलिका तिनमैं परिकर्मकाहू पांच भेद है तिनमैं चंद्रप्रज्ञप्तिके छह लक्ष पांचहजार पदनिमैं चंद्रमाका आयु गति



अर कलाकी हानिवृद्धि अर देवीविभव परिवारादिकका वर्णन है ॥ १ ॥ अर सूर्यप्रज्ञप्तिके पांचलक्ष तीनहजार पदनिमैं सूर्यका आयु गति विभवादिकका वर्णन है ॥ २ ॥ जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिके तीनलक्ष पचीसहजार पदनिमैं जंबूद्वीपसंबंधी क्षेत्र कुलाचल द्रह नदी इत्यादिकनिका निरूपण है ॥३॥ द्वीपसागरप्रज्ञप्तिके बावनलक्ष छत्तीसहजार पदनिमैं असंख्यातद्वीप समुद्रनिका अर मध्यलोकके जिनभवननिका अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क देवनिके निवासनिका वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्तिके चौरासीलक्ष छप्पनहजार पदनिमैं जीव पुद्गलादि द्रव्यका निरूपण है ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार परिकर्म कह्या अब दृष्टिवाद अंगका दूजा भेद सूत्रके अट्ठासीलक्ष पदनिमैं जीव अस्तिरूप ही है नास्तिरूप ही है कर्ता ही है भोक्ता ही है इत्यादि एकांतवादिकरि कल्पित जीवका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ बहुरि प्रथमानुयोगके पांचहजार पदनिमें त्रेसठि महापुरुषनिके चरित्रका वर्णन है ॥ ३ ॥ अब दृष्टवादअंगका चतुर्थभेदमें चौदहपूर्व हैं तिनमें उत्पादपूर्वके एककोटि पदनिमें जीवादिक द्रव्यनिका उत्पादादि स्वभावका निरूपण है ॥ १ ॥ अग्रायणीपूर्वके छिनवैकोटि पदनिमैं द्वादशांगका सारभूत सप्ततत्त्व नवपदार्थ षट् द्रव्य सातसै सुनय दुर्नयादिकका स्वरूपका वर्णन है ॥२॥ वीर्यानुवादके सप्तलक्ष पदनिमैं आत्मवीर्य परवीर्य कामवीर्य कालवीर्य भाववीर्य तपोवीर्यादि समस्त द्रव्यगुण पर्यायकनिका वीर्यका निरूपण है ॥३॥ अस्तिनास्तिप्रवाद नाम पूर्वके साठिलक्ष पदनिमैं जीवादि द्रव्यनिका स्वद्रव्यादिचतुष्टयकी अपेक्षा आस्ति और परद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति इत्यादिक सप्तभंगादिक तथा नित्यअनित्य एक अनेकादिकनिका विरोधरहित वर्णन है ॥४॥ ज्ञानप्रवाद पूर्वके एक घाटि कोटि पदनिमें मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ये पांच ज्ञान अर कुमति कुश्रुति विभंग ये तीन अज्ञान इनका स्वरूप संख्या विषयफलनिके आश्रय प्रमाणपना अप्रमाणपनाका वर्णन है ॥ ५ ॥ सत्यप्रवादपूर्वके छह अधिक एककोटि पदनिमैं वचनगुप्ति अर वचनके संस्कारका कारण अर द्वादश भाषा अर वक्तानिके भेद अर बहुत प्रकार असत्य अर दशप्रकारके सत्यका वर्णन है ॥ ६ ॥